स्व० पुण्यश्लोका माता मूर्तिदेवीकी पवित्र स्मृतिमें तत्सुपुत्र साहू शान्तिप्रसादजी द्वारा

संस्थापित

भारतीय ज्ञानपीठ मूर्तिदेवी जैन-ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमालामें प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, हिन्दी, कन्नड, तामिल आदि प्राचीन भाषाओंमें उपलब्ध आगमिक, दार्शनिक, पौराणिक, साहित्यिक और ऐतिहासिक आदि विविध-विषयक जैन साहित्यका अनुसन्धानपूर्ण सम्पादन और उसका मूल और यथासम्भव अनुवाद आदिके साथ प्रकाशन होगा। जैन भण्डारोंकी सूचियाँ, शिलालेख-संग्रह, विशिष्ट विद्वानोंके अध्ययन-ग्रन्थ और लोकहितकारी जैन-साहित्य ग्रन्थ भी इसी ग्रन्थमालामें प्रकाशित होंगे।

ग्रन्थमाला सम्पादक

डॉ. हीरालाल जैन,
एम० ए०, डी० लिट्०

डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये,
एम० ए०, डी० लिट्०

प्रकाशक

अयोध्याप्रसाद गोयलीय
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

मुद्रक :—बाबूलाल जैन फागुल्ल, सन्मति मुद्रणालय, दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी

स्थापनाब्द
फाल्गुन कृष्ण ९
वीर नि० २४७०

विक्रम सं० २०००
१८ फरवरी सन् १९४४

भारतीय ज्ञानपीठ, काशी

स्वर्गीय मूर्तिदेवी, मातेश्वरी सेठ शान्तिप्रसाद जैन
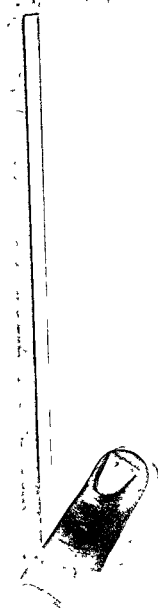
JÑĀNAPĪTHA MURTIDEVĪ JAINA GRANTHAMĀLĀ
SANSKRIT GRANTHA, No 25

BHADRABĀHU SAṀHITĀ

WITH

HINDI TRANSLATĪON

EDITOR
Jyotishacharya, Sahity Ratn
NEMICHANDRA SHASTRY, M. A. (Sanskrit & Hindi)
Proffecer, SANSKRIT AND PRAKRIT SECTION,
HARPRASAD DAS JAIN COLLEGE ARRA

Published by

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA KĀSHĪ

First Edition
1100 Copies

MAGHA VIRA SAMVAT 2485
V. S. 2015
FEBRUARY 1959

Price
Rs. 8/-

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA Kashī

FOUNDED BY

SAHU SHĀNTI PRASĀD JAIN

IN MEMORY OF HIS LATE BENEVOLENT MOTHER

SHRĪ MŪRTI DEVĪ

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA MŪRTI DEVĪ
JAIN GRANTHAMĀLĀ

IN THIS GRANTHAMĀLĀ CRITICALLY EDITED JAIN ĀGAMIC PHILOSOPHICAL, PAURANĪC, LITERARY, HISTORICAL AND OTHER ORIGINAL TEXTS AVAILABLE IN PRĀKRIT, SANSKRIT, APABHRANSHA, HINDI, KANNADA, TAMIL ETC., WILL BE PUBLISHED IN THEIR RESPECTIVE LANGUAGES WITH THEIR TRANSLATIONS IN MODERN LANGUAGES

AND

CATALOGUES OF JAIN BHANDARĀS, INSCRIPTIONS, STUDIES OF COMPETENT SCHOLARS & POPULAR JAIN LITERATURE WILL ALSO BE PUBLISHED

General Editors
Dr Hiralal Jain, M A, D. Litt
Dr. A. N. Upadhye, M. A, D. Litt.

Publisher
Āyodhya Prasad Goyaliya
Secy, Bharatiya Jnanapitha
Durgakund Road, Varanasi

Founded on
Phalguna krishna 9.
Vira Sam. 2470

Vikrama Samvat 2000
18 Febr. 1944.

जिनके स्नेह-सरिता-सीकर प्रत्येक सम्पर्कीको
शीतलता, शान्ति और उल्लास प्रदान
करनेके लिए पूर्ण सक्षम हैं; उन
वीणा - पाणिके वरद पुत्र
प्रो० श्री राममोहनदासजीके
करकमलोंमें यह प्रयास
सादर समर्पित

—नेमिचन्द्र शास्त्री
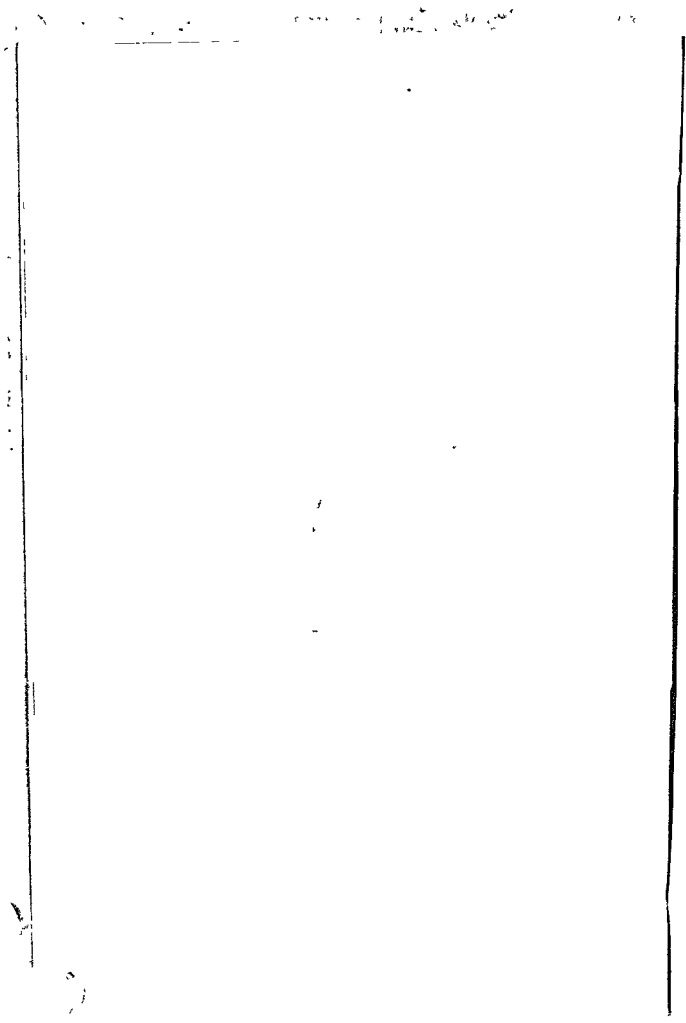
प्राथमिक

मनुष्यमें जो सोचने-समझनेकी योग्यता है उसके फलस्वरूप उसे अपने विषयकी चिन्ताने अनादिकालसे सताया है। वर्तमानकी चिन्ताओंके अतिरिक्त उसे इस बातकी भी बड़ी जिज्ञासा रही है कि भविष्यमें उसका क्या होनेवाला है? कलकी बात आज जान लेनेके लिए वह इतना आतुर हुआ है कि उसने नाना प्रकारके आधारोंसे भविष्यका अनुमान करनेका प्रयत्न किया है। मनुष्यके रूप रंग, शरीर व अंग-प्रत्यंगकी गठन आदि परसे तो उसके भविष्यका अनुमान करना स्वाभाविक ही है। किन्तु उसकी बाहरी परिस्थितियों, यहाँ तक कि तारों और नक्षत्रोंकी स्थिति परसे एक एक प्राणीके भविष्यका अनुमान लगाना भी बहुत प्राचीनकालसे प्रचलित पाया जाता है। फलित ज्योतिषमें लोगोंका विश्वास सभी देशोंमें रहा है। इसी कारण इस विषयका साहित्य बहुत विपुल पाया जाता है। ज्योतिष शास्त्रके ज्ञानके आधारसे अपनी जीविका अर्जन करनेवाले लोगोंकी कभी किसी देशमें कमी नहीं हुई।

भारतवर्षका ज्योतिष शास्त्र भी बहुत प्राचीन है। संस्कृत और प्राकृतमें इस विषयके अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। ज्योतिष शास्त्रके मुख्य भेद हैं गणित और फलित। गणित ज्योतिष विज्ञानात्मक है जिसके द्वारा ग्रहोंकी गति और स्थितिका ज्ञान प्राप्तकर काल गणनामें उसका उपयोग किया जाता है। ग्रहोंकी स्थिति व गति परसे जो शुभ अशुभ फलका निरूपण किया जाता है उसे फलित ज्योतिष कहते हैं। इसका आधार लोक-श्रद्धाके सिवाय और कुछ प्रतीत नहीं होता। तथापि उसकी लोकप्रियतामें कोई सन्देह नहीं। यति, मुनि, साधु-सन्त व विद्वानोंसे बहुधा लोग आशा करते हैं कि वे उनके व उनके बालबच्चोंके भावी जीवन व सुख दुःखकी बात बतला दें। किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि ये भविष्यवाणियाँ सदैव सत्य नहीं निकलतीं। यों 'हाँ' और 'ना' के बीच प्रत्येक पक्षकी पचास प्रतिशत सम्भावना अवश्यम्भावी है। इस प्रसंगमें यूनानके इतिहासकी एक बात याद आती है। उस देशमें 'डेल्फी' नामक देवताके मन्दिरके पुजारीका काम था कि वह लोगोंको बतलावे कि वे अमुक कार्यमें सफल होंगे या नहीं। एक वैज्ञानिक ने उसकी भविष्यवाणीकी प्रामाणिकतामें सन्देह प्रकट किया। भविष्यवक्ताने उनका ध्यान मन्दिरकी उस विपुल धनराशिकी ओर आकर्षित किया जो वहाँकी सफल भविष्यवाणीके पुरस्कारों द्वारा सचित हुई थी। "यदि समुद्र-यात्राको जानेवाले व्यापारियोंको बतलाया गया शुभमुहूर्त्त सच न निकला, तो वे क्यों यह सब भेंट वहाँ लौटकर अर्पित करते।" भविष्यवक्ताके इस प्रश्नके उत्तरमें वैज्ञानिकने कहा—"यह एक पक्षका इतिहास तो आपका ठीक है। किन्तु क्या आपके पास उन व्यापारियोंका भी कोई लेखा-जोखा है, जो आपके बतलाये शुभमुहूर्त्तमें यात्राको निकले, किन्तु फिर लौटकर घर न आ सके?"

फलित ज्योतिषके मर्मस्थल पर यह वज्राघात सहस्रों वर्ष पूर्व हो चुका है। हिन्दू, बौद्ध व जैन-शास्त्रोंमें भी साधुओंको ज्योतिष फल कहनेका निषेध किया गया है, जो उसकी सन्देहात्मकताका ही परिचायक है। तथापि यह कला आज भी जीवित है और कुछ वर्गोंमें लोकप्रिय भी है।

फलित ज्योतिषका एक अंग है—'अष्टांगनिमित्त'। इसमें शरीरके तिल, मसा आदि व्यंजनों, हाथ-पैर आदि अंगों, ध्वनियों व स्वरों, भूमिके रंग रूप, वस्त्र-शस्त्रादिके छिद्रों, ग्रह नक्षत्रोंके उदय-अस्त, शंख, चक्र, कलश आदि लक्षणों, तथा स्वप्नमें देखी गई वस्तुओं व घटनाओंका विचार कर शुभाशुभरूप भविष्य फल कहा जाता है। एक जैनश्रुतिके अनुसार इस निमित्त शास्त्रके महान् ज्ञाता भद्रबाहु थे। कोई इन्हें श्रुतकेवली भद्रबाहु ही मानता है जिन्होंने इसी ज्ञानके बलसे उत्तर भारतमें आनेवाले द्वादशवर्षीय दुर्भिक्षकी बात जानकर अपने संघ सहित दक्षिणकी ओर गमन किया था। कोई इन्हें प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य वराहमिहिरका समकालीन व उनका भ्राता ही कहते हैं। प्रस्तुत भद्रबाहु-संहिताका विषय निमित्तशास्त्रका

प्रतिपादन करना है। यह ग्रन्थ पहले भी छप चुका है, तथा इसके कर्तृत्वके सम्बन्धमें बहुत कुछ विचार भी किया जा चुका है। पं० जुगलकिशोरजी मुख्तारके मतानुसार यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवलीकी रचना न होकर कुछ "इधर उधरके प्रकरणोंका बेढंगा संग्रह" है और उसका रचनाकाल वि० स० १६५७के पश्चात् का है। किन्तु मुनि जिनविजयजी को इस ग्रन्थकी एक प्रति वि० स० १४८० के आसपासकी मिली थी, जिसके आधारसे उन्होंने इस ग्रन्थको वि० सं० की ११ वीं, १२ वीं शताब्दीसे भी प्राचीन अनुमान किया है। प्रस्तुत संस्करणके सम्पादकका मत है कि इस रचनाका संकलन वि० की आठवीं, नौवीं शताब्दीमें हुआ होगा।

पं० नेमिचन्द्र शास्त्रीने अपने इस प्रस्तुत संस्करणमें पूर्व मुद्रित ग्रन्थके अतिरिक्त 'जैन सिद्धान्त भवन आरा' की दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतियोंका भी उपयोग किया है। उन्होंने मूलके संस्कृत पद्योंका पूरा अनुवाद भी किया है व प्रत्येक अध्यायके अन्तमें 'बृहत्संहिता' आदि कोई बीस बाईस अन्य ग्रन्थोंके आधारसे विषय विवेचन भी किया है। उन्होंने अपनी ५८ पृष्ठोंकी प्रस्तावनामें विषय व ग्रन्थकी रचना आदि विषयोंपर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। इस सफल प्रयासके लिए हम विद्वान् सम्पादकका अभिनन्दन करते हैं और उसके उत्तम रीतिसे प्रकाशनके लिए 'भारतीय ज्ञानपीठ' के संचालकोंको बधाई देते हैं।

हीं० ला० जैन
आ० ने० उपाध्ये
ग्रन्थमाला सम्पादक

प्रस्तावना

अत्यन्त प्राचीन कालसे ही आकाशमण्डल मानवके लिए कौतूहलका विषय बना हुआ है। सूर्य और चन्द्रमासे परिचित हो जानेके पश्चात् ताराओंके सम्बन्धमें मानवको जिज्ञासा उत्पन्न हुई और उसने ग्रह एवं उपग्रहोंके वास्तविक स्वरूपको अवगत किया। जैन परम्परा बतलाती है कि आजसे लाखों वर्ष पूर्व कर्मभूमिके प्रारम्भमें प्रथम कुलकर प्रतिश्रुतिके समयमें, जब मनुष्योंको सर्व प्रथम सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी पड़े तो वे इनसे सशङ्कित हुए और अपनी उत्कण्ठा शान्त करनेके लिए उक्त प्रतिश्रुति नामक कुलकर मनुके पास गये। उक्त मनुने ही सौर जगत् सम्बन्धी सारी जानकारी बतलायी और ये ही सौर-जगत्की ज्ञातव्य बातें ज्योतिष शास्त्रके नामसे प्रसिद्ध हुईं। आगमिक परम्परा अनवच्छिन्न रूपसे अनादि होने पर भी इस युगमें ज्योतिषशास्त्रकी नींवका इतिहास यहींसे आरम्भ होता है। मूलभूत सौर जगत्के सिद्धान्तोंके आधार पर गणित और फलित ज्योतिषका विकास प्रतिश्रुति मनुके सहस्रों वर्षके बाद हुआ तथा ग्रह-नक्षत्रोंकी स्थितिके आधार पर भावी फलाफलोंका निरूपण भी उसी समयसे होने लगा। कतिपय भारतीय पुरातत्त्वविदोंकी यह मान्यता है कि गणित ज्योतिषकी अपेक्षा फलित ज्योतिषका विकास पहले हुआ है; क्योंकि आदि मानवको अपने कार्योंकी सफलताके लिए समय शुद्धिकी आवश्यकता होती थी। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यही है कि ऋक्, यजुष और साम ज्योतिषमें नक्षत्र और तिथि-शुद्धिका ही निरूपण मिलता है। ग्रह-गणितकी चर्चा सर्व प्रथम सूर्यसिद्धान्त और पञ्चसिद्धान्तिकामें मिलती है। वेदाङ्ग ज्योतिष प्रमुख रूपसे समय-शुद्धिका ही विधान करता है।

ज्योतिषके तीन भेद हैं--सिद्धान्त, संहिता और होरा। सिद्धान्तके भी तीन भेद किये गये हैं—सिद्धान्त, तन्त्र और करण। जिन ग्रन्थोंमें सृष्ट्यादिसे इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण बनाकर ग्रहगणितकी प्रक्रिया निरूपित की गयी है, वे तन्त्र ग्रन्थ और जिनमें कल्पित इष्ट वर्षका युग मानकर उस युगके भीतर ही किसी अभीष्ट दिनका अहर्गण लाकर ग्रहानयनकी प्रक्रिया निरूपित की जाय, उन्हें करण ग्रन्थ कहते हैं।

संहिता ग्रन्थोंमें भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, गृहोपकरण, इष्टिका-द्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयनिर्माण, मांगलिक कार्योंके मुहूर्त्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहोंके उदयास्तका फल, ग्रहचारका फल, शकुन-विचार, कृषि सम्बन्धी विभिन्न समस्याएँ, निमित्त एवं ग्रहण फल आदि बातोंका विचार किया जाता है।

होराका दूसरा नाम जातक भी है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्दसे है। आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र' का लोप कर देनेसे होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहोंकी स्थितिके अनुसार व्यक्तिके लिए फलाफलका निरूपण किया जाता है। इसमें जातककी उत्पत्तिके समयके नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदिका फल विस्तारके साथ बताया गया है। ग्रह एवं राशियोंके वर्ण, स्वभाव, गुण, आकार, प्रकार आदि बातोंका प्रतिपादन बड़ी सफलता-पूर्वक किया गया है। जन्मकुण्डलीका फलादेश कहना तो इस शास्त्रका मुख्य उद्देश्य है तथा इस शास्त्रमें यह भी बताया गया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहोंके बिम्बोंमें स्वाभाविक शुभ और अशुभपना विद्यमान है, किन्तु उनमें परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्धसे फल विशेष शुभाशुभ रूपमें परिणत हो जाता है, जिसका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियों पर भी पूर्ण रूपसे पड़ता है। इस शास्त्रमें देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावोंका वर्णन रहता है। जन्म-नक्षत्र और जन्म-लग्न परसे फलादेशका वर्णन होराशास्त्रमें पाया जाता है।

संहिता ग्रन्थोंका विकास

सहिताग्रन्थोंका विकास जीवनके व्यावहारिक क्षेत्रमें ज्योतिषविषयक तत्त्वोंको स्थान प्रदान करने के लिए ही हुआ है। कृषिकी उन्नति एवं प्रगति ही संहिताग्रन्थोंका प्रधान प्रतिपाद्य विषय है। वेदोंमें भी फलित ज्योतिषके अनेक सिद्धान्त आये हैं। कृषिके सम्बन्धमें नाना प्रकारकी जानकारी और विभिन्न प्रकारके निमित्तोंका वर्णन अथर्व वेदमें आया है। जय-पराजय विषयक निमित्त तथा विभिन्न प्रकारके शकुन भी इस ग्रन्थमें वर्णित हैं। ऋग्वेदके ऋतु, अयन, वर्ष, दिन, संवत्सर आदि भी संहिताओंके मूलभूत सिद्धान्तोंमें परिगणित हैं। संस्कृत साहित्यके उत्पत्तिकालीन साहित्यमें भी सहिताओंके तत्त्व उपलब्ध होते है। यद्यपि यह सत्य है कि वराहमिहिरके पूर्ववर्ती सहिता ग्रन्थोंका अभाव है, पर इनके द्वारा उल्लिखित मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य जैसे अनेक ज्योतिर्विदोंके ग्रन्थ वर्तमान थे, यह सहजमें जाना जा सकता है। सहिताग्रन्थोंमें निमित्त, वास्तुशास्त्र, मुहूर्त्तशास्त्र, अरिष्ट एवं शकुन आदिका वर्णन रहता है। जीवनोपयोगी प्रायः सभी व्यावहारिक विषय सहिताके अन्तर्गत आ जाते हैं।

व्यापक रूपसे संहिता शास्त्रके बीजसूत्र अथर्ववेदके अतिरिक्त आश्वलायन गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशीसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, सांख्यायन गृह्यसूत्र, पाणिनीय व्याकरण, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, स्वप्नवासवदत्त नाटक एवं हर्षचरित प्रभृति ग्रन्थोंमें विद्यमान है। आश्वलायन गृह्यसूत्रमें--"श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणकर्माणि" "सीमन्तोन्नयनं···यदा पुष्यनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात्"। इन वाक्योंमें मुहूर्त्तके साथ विभिन्न संस्कारोंकी समय शुद्धि एवं विविध विधानों का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थमें ३,७–८ में जंगली कबूतरोंका घरमें घोंसला बनाना अशुभ कहा गया है। यह शकुन प्रक्रिया संहिता ग्रन्थोंका प्राण है। पारस्कर गृह्यसूत्रमें--"त्रिषु त्रिषु उत्तरादिषु स्वातौ मृगशिरसि रोहिण्यां।" इत्यादि सूत्रमें उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी नक्षत्रको विवाह नक्षत्र कहा है। इतना ही नहीं इस सूत्रग्रन्थमें आकाशका वर्ण एव कई ताराओंकी विभिन्न आकृतियां और उनके फल भी लिखे गये हैं। यह प्रकार सहिता विषयसे अति सम्बद्ध है। सांख्यायन गृह्यसूत्र (५–१०) के अनुसार मधुमक्खीका घरमें छत्ता लगाना तथा कौओंका आधी रातमें बोलना अशुभ कहा है। बौधायन सूत्रमें--"मीन मेषयोर्मेषवृषभयोर्वसन्तः" इस प्रकारका उल्लेख मिलता है। सूर्य संक्रान्तिके आधारपर ऋतुओंकी कल्पनाएँ हो चुकी थीं तथा कृषिके ऊपर इन ऋतुओंका कैसा प्रभाव पड़ता है इसका भी विचार आरम्भ हो गया था।

निरुक्तमें दिन, रात, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, उत्तरायण, दक्षिणायन आदिकी व्युत्पत्तिमात्र शाब्दिक ही नहीं है, बल्कि परिभाषात्मक है। ये परिभाषाएँ ही आगे संहिता ग्रन्थोंमें स्पष्ट हुई है। पाणिनिने अपनी अष्टाध्यायीमें संवत्सर, हायन, चैत्रादिमास, दिवस विभागात्मक मुहूर्त्त शब्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदिकी व्युत्पत्तियाँ दी है। 'वाताय कपिला विद्युत्' उदाहरण द्वारा निमित्तशास्त्रके प्रधान विषय 'विद्युत् निमित्त' पर प्रकाश डाला है तथा कपिला विद्युत्को वायु चलनेका सूचक कहा है। पाणिनिने 'विभाषा ग्रहः'—३।१।१४३ में ग्रह शब्दका भी उल्लेख किया है। उत्तरकालीन पाणिनि तन्त्रके विवेचकों ने उक्त सूत्रके ग्रहशब्दको नवग्रहका द्योतक अनुमान किया है। अष्टाध्यायीमें प्रतिघ्नी रेखाका भी जिक्र आया है, अतः इस ग्रन्थमें सहिता शास्त्रके अनेक बीजसूत्र विद्यमान हैं।

मनुस्मृतिमें सिद्धान्त ग्रन्थोंके समान युग और कल्पमानका वर्णन मिलता है। तीसरे अध्यायके ८वें श्लोकमें आया है कि कपिल भूरेवर्णवाली, अधिक या कम अंगोंवाली, अधिक रोमवाली या सर्वथा निर्लोम कन्याके साथ विवाह नहीं करना चाहिए। इस कथनसे लक्षण और व्यंजन दोनों ही निमित्तोंका

स्पष्ट संकेत मिलता है। इसी अध्यायके ६-१० श्लोक भी लक्षणशास्त्रपर प्रकाश डालते हैं। 'लोष्ठमर्दी तृणच्छेदी' (४,७१) में शकुनोंकी ओर संकेत किया गया है। आकालिक अनध्यायोंका विवेचन करते हुए 'विद्युत्-स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च सम्प्लवे' (४, १०३) 'निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषां चोपसर्जने" (४, १०५), "नीहारे बाणशब्दे" (४, ११३) एवं "पांसुवर्षे दिशां दाहे" (४,११५) का उल्लेख किया है। ये सभी श्लोक शकुनोंसे सम्बन्ध रखते हैं। अतः अनध्याय प्रकरण संहिताका विकसित रूप है। "न चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्राङ्गविद्यया" (६,५०) में उत्पात, निमित्त, नक्षत्र और अंगविद्याका वर्णन आया है। अतएव मनुस्मृतिमें संहिताशास्त्रके बीजसूत्र प्रचुर परिमाणमें विद्यमान हैं।

याज्ञवल्क्य स्मृतिमें नवग्रहोंका स्पष्ट उल्लेख वर्तमान है। क्रान्तिवृत्तके द्वादश भागोंका भी निरूपण किया गया है, इस कथनसे मेषादि द्वादश राशियोंकी सिद्धि होती है। श्राद्धकाल अध्यायमें वृद्धियोगका भी कथन है, इससे संहिता शास्त्रके २७ योगोंका समर्थन होता है। याज्ञवल्क्य स्मृतिके प्रायश्चित्त अध्यायमें—"ग्रहसंयोगजैः फलैः" इत्यादि वाक्यों द्वारा ग्रहोंके संयोगजन्य फलोंका भी कथन किया गया है। किस नक्षत्रमें किस कार्यको करना चाहिए, इसका वर्णन भी इस ग्रन्थमें विद्यमान है। आचाराध्यायका निम्न श्लोक, जिसपरसे सातों वारोंका अनुमान विद्वानोंने किया है, बहुत प्रसिद्ध है।

सूर्यः सोमो महीपुत्रः सोमपुत्रो बृहस्पतिः।
शुक्रः शनैश्चरो राहुः केतुश्चैते ग्रहाः स्मृताः॥

महाभारतमें संहिता शास्त्रकी अनेक बातोंका वर्णन मिलता है। इसमें युग पद्धति मनुस्मृति जैसी ही है। सत युगादिके नाम, उनमें विधेय कृत्य कई जगह आये हैं। कल्पकाल का निरूपण शान्तिपर्वके १८३ वें अध्यायमें विस्तारसे किया गया है। पञ्चवर्षात्मक युगका कथन भी उपलब्ध है। संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर एवं इद्वत्सर इन पाँच युगसम्बन्धी पाँच वर्षोंमें क्रमशः पाँचों पाण्डवोंकी उत्पत्तिका वर्णन किया गया है—

अनुसंवत्सरं जाता अपि ते कुरुसत्तमाः।
पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसंवत्सरा इव॥
—आ० प०, अ० १२४-२४

पाण्डवोंको वनवास जानेके उपरान्त कितना समय हुआ, इसके सम्बन्धमें भीष्म दुर्योधनसे कहते हैं—

तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात्।
पञ्चमे पञ्चमे वर्षे द्वौ मासावुपजायतः॥
एषामभ्यधिका मासाः पञ्च च द्वादश क्षपाः।
त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मतिः॥ —वि० प० अ० ५२।३-४।

इन श्लोकोंमें पाँच वर्षोंमें दो अधिमासका जिक्र किया गया है। सिद्धान्त ज्योतिषके ग्रन्थोंके प्रणयनके पूर्व संहिताग्रन्थोंमें अधिमासका निरूपण होने लगा था। गणितागत अधिमास अधिशेष और अधिशुद्धिका विचार होनेके पूर्व पाँच वर्षोंमें दो अधिमासोंकी कल्पना संहिताके विषयके अन्तर्गत है।

महाभारतके अनुशासन पर्वके ६४ वें अध्यायमें समस्त नक्षत्रोंकी सूची देकर बतलाया गया है कि किस नक्षत्रमें दान देनेसे किस प्रकारका पुण्य होता है। महाभारतकालमें प्रत्येक मुहूर्तका नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्तका सम्बन्ध भिन्न भिन्न धार्मिक कार्योंसे शुभाशुभके रूपमें माना जाता था। इस ग्रन्थमें २७ नक्षत्रोंके देवताओंके स्वभावानुसार विधेय नक्षत्रके भावी शुभ एवं अशुभका निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रोंमें ही विवाह, युद्ध एवं यात्रा करनेकी प्रथा थी। युधिष्ठिरके जन्म समयका वर्णन करते हुए कहा गया है—

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्तेऽभिजिदष्टमे।
दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते॥

अर्थात् आश्विन शुक्ला पञ्चमीके दोपहरको अष्टम अभिजित मुहूर्त्तमें, सोमवारके दिन ज्येष्ठा नक्षत्रमें जन्म हुआ। महाभारतमें कुछ ग्रह अधिक अरिष्टकारक बतलाये गये हैं; विशेषतः शनि और मंगलको अधिक दुष्ट कहा है। मंगल लाल रंगका समस्त प्राणियोंको अशान्ति देनेवाला और रक्तपात करनेवाला समझा जाता था। केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियोंको सुख शान्ति देनेवाला बताया गया है। ग्रहोंका शुभ नक्षत्रोंके साथ योग होना प्राणियोंके लिए कल्याणदायक माना गया है। उद्योगपर्वके १४ वें अध्यायके अन्तमें ग्रह और नक्षत्रोंके अशुभ योगोंका विस्तारसे वर्णन किया गया है। श्रीकृष्णने जब कर्णसे भेंट की, तब कर्णने इस प्रकार ग्रह-स्थितिका वर्णन किया—"शनैश्चर रोहिणी नक्षत्रमें मंगलको पीड़ा दे रहा है, ज्येष्ठा नक्षत्रमें मंगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्रसे योग कर रहा है। महापात संज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्रको पीड़ा दे रहा है। चन्द्रमाके चिह्न विपरीत दिखाई पड़ते हैं और राहु सूर्यको ग्रसित करना चाहता है"।

शल्यवधके समय प्रातःकालका वर्णन निम्न प्रकार किया गया है—

भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ॥ —श० प० अ० ११-१८

अर्थात्—शुक्र, मंगल और बुध इनका योग शनिके साथ अत्यन्त अशुभकारक है। वर्तमान संहिताग्रन्थोंमें भी बुध और शनिका योग अत्यन्त अशुभ माना जाता है। महाभारतमें १३ दिनका पक्ष अशुभकारक कहा गया है—

चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां तु षोडशीम्।
इमां तु नाभिजानेऽहममावस्यां त्रयोदशीम्॥
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीम्।

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहोंकी स्थितिका वर्णन करते हुए कहते हैं कि १४, १५ एवं १६ दिनोंके पक्ष होते थे; पर १३ दिनोंका पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मासमें सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहणका होना है और यह ग्रहणयोग भी त्रयोदशीके दिन पड़ रहा है, अतः समस्त प्राणियोंके लिए भयोत्पादक है। महाभारतसे यह भी ज्ञात होता है कि उस समय व्यक्तिके सुख दुख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रोंकी गतिसे सम्बद्ध माने जाते थे।

कौटिल्यके अर्थशास्त्रके दशवें प्रकरणमें युद्धविषयक शकुन, जय-पराजय द्योतक निमित्तोंका वर्णन है। यात्रा सम्बन्धी शकुनोंका सविस्तर विवेचन भी मिलता है।

हर्षचरितमें बाणने काव्य शैलीका आश्रय लेकर हर्षके प्रयाणके फलस्वरूप शत्रुओंमें होनेवाले दुर्निमित्तोंकी एक लम्बी सूची दी है। इस सूचीसे स्पष्ट है कि बाणके समयमें संहिताशास्त्रका पूर्णतया विकास हो गया था। बताया गया है—

१. यमराजके दूतोंकी दृष्टिकी तरह काले हिरण इधर-उधर दौड़ने लगे।
२. आँगनमें मधुमक्खियोंके छत्तोंसे उड़कर मधुमक्खियाँ भर गईं।
३. दिनमें शृगाली मुँह उठाकर रोने लगी।
४. जंगली कबूतर घरोंमें आने लगे।
५. उपवनवृक्षोंमें असमयमें पुष्प फल दिखलाई पड़ने लगे।
६. सभास्थानके खम्भोंपर बनी हुई शालभञ्जिकाओंके आँसू बहने लगे।
७. योद्धाओंको दर्पणमें अपने ही सिर धड़से अलग होते हुए दिखलाई पड़े।
८. राजमहिषियोंकी चूड़ामणियोंमें पैरोंके निशान प्रकट हो गये।
९. चेटियोंके हाथके चमर छूटकर गिर गये।
१०. हाथियोंके गण्डस्थल भौंरोंसे शून्य हो गये।
११. घोड़ोंने मानो यमराजकी गन्धसे डरे घासका खाना छोड़ दिया।

१२. झन-झन कंकण पहने हुए बालिकाओंके ताल देकर नचानेपर भी मन्दिर-मयूरोंने नाचना छोड़ दिया।

१३. रातमें कुत्ते मुँह उठाकर रोने लगे।

१४. रास्तोंमें कोटवी—मुक्तकेशी नग्न स्त्रियाँ घूमती हुई दिखलाई पड़ीं।

१५. महलोंके फर्शोंमें घास निकल आई।

१६. योद्धाओंकी स्त्रियोंके मुखका जो प्रतिबिम्ब मधुपात्रमें पड़ता था उसमें विधवाओं जैसी एक वेणी दिखाई पड़ने लगी।

१७. भूमि काँपने लगी।

१८. शूरोंके शरीर पर रक्तकी बूँदें दिखाई पड़ीं, जैसे वधदण्ड प्राप्त व्यक्तिका शरीर लालचन्दनसे सजाया जाता है।

१९. दिशाओंमें चारों ओर उल्कापात होने लगा।

२०. भयंकर झंझावातने प्रत्येक घरको झकझोर डाला।

बाणने १६ महोत्पात, ३ दुर्निमित्त और २० उपलिङ्गोंका वर्णन किया है। यह वर्णन संहिताशास्त्रका विकसित विषय है।

उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि संहिताशास्त्रके विषयोंका विकास अथर्ववेदसे आरम्भ होकर सूत्रकालमें विशेष रूपसे हुआ। ऐतिहासिक महाकाव्य ग्रन्थों तथा अन्य संस्कृत साहित्यमें भी इस विषयके अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं। इस शास्त्रमें सूर्यादि ग्रहोंकी चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, संस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, वक्र, अतिवक्र, अनवक्र, नक्षत्रविभाग और कूर्मका सब देशोंमें फल, अगस्त्यकी चाल, सप्तर्षियोंकी चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहशृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिघ, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अंगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमालक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बलक्षण, खड्गलक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुटलक्षण, कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुष लक्षण, यात्रा शकुन, रणयात्रा शकुन, एवं साधारण, असाधारण सभी प्रकारके शुभाशुभोंका विवेचन अन्तर्भूत होता था। स्वप्न और विभिन्न प्रकारके शकुनोंको भी संहिता शास्त्रमें स्थान दिया गया था। फलित ज्योतिषका यह अंग केवल पंचाङ्ग ज्ञान तक ही सीमित नहीं था, किन्तु समस्त सांस्कृतिक विषयोंकी आलोचना और निरूपणकाल भी इसमें शामिल हो गया था। संहिताशास्त्रका सबसे पहला ग्रन्थ सन् ५०५ ई० के वराहमिहिरका बृहत् संहिता नामका ग्रन्थ मिलता है। इसके पश्चात् नारद संहिता, रावणसंहिता, वशिष्ठ संहिता, वसन्तराजशाकुन, अद्भुतसागर आदि ग्रन्थोंकी रचना हुई।

जैन ज्योतिषका विकास

जैनागमकी दृष्टिसे ज्योतिषशास्त्रका विकास विद्यानुवादाङ्ग और परिकर्मोंसे हुआ है। समस्त गणित-सिद्धान्त ज्योतिष परिकर्मोंमें अंकित है और अष्टाङ्ग निमित्तका विवेचन विद्यानुवादाङ्गमें किया गया है। षट्खण्डागम धवलाटीकोंमें रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट, दैत्य, वैरोचन, वैश्वदेव, अभिजित्, रोहण, बल, विजय, नैर्ऋत्य, वरुण, अर्यमन् और भाग्य ये पन्द्रह मुहूर्त्त आये हैं।[1] मुहूर्तोंकी नामावली वीरसेन स्वामीकी अपनी नहीं है, किन्तु पूर्व परम्परासे श्लोकोंको उन्होंने उद्धृत किया है। अतः मुहूर्त्त चर्चा पर्याप्त प्राचीन है। प्रश्नव्याकरणमें नक्षत्रोंके फलोंका विशेष ढंगसे निरूपण करनेके लिए इनका कुल, उपकुल और कुलोपकुलोंमें विभाजन कर वर्णन किया है। यह वर्णन-प्रणाली संहिताशास्त्रके विकासमें

१—देखें—धवला टीका ४ जिल्द, ३१८ पृ०।

अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। बताया गया है कि—"धनिष्ठा उत्तराभाद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा, पुष्य, मघा, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढ़ा ये नक्षत्र कुल संज्ञक; श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एवं पूर्वाषाढ़ा ये नक्षत्र उपकुल संज्ञक और अभिजित्, शतभिषा, आर्द्रा एवं अनुराधा कुलोपकुल संज्ञक हैं।" यह कुलोपकुलका विभाजन पूर्णमासीको होनेवाले नक्षत्रोंके आधार पर किया गया है। अभिप्राय यह है कि श्रावण मासके धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्; भाद्रपद मासके उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिषा; आश्विन मासके अश्विनी और रेवती; कार्त्तिक मासके कृत्तिका और भरणी; अगहन या मार्गशीर्ष मासके मृगशिरा और रोहिणी; पौष मासके पुष्य, पुनर्वसु और आर्द्रा; माघ मासके मघा और आश्लेषा; फाल्गुनी मासके उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी, चैत्र मासके चित्रा और हस्त; वैशाख मासके विशाखा और स्वाति; ज्येष्ठ मासके ज्येष्ठा, मूल और अनुराधा एवं आषाढ़ मासके उत्तराषाढ़ा और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र बताये गये है। प्रत्येक मासकी पूर्णमासीको उस मासका प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। इस वर्णनका प्रयोजन उस महीनेके फलादेशसे सम्बन्ध रखता है। इस ग्रन्थमें ऋतु, अयन, मास, पक्ष, नक्षत्र और तिथि सम्बन्धी चर्चाएँ भी उपलब्ध हैं।

समवायाङ्गमें नक्षत्रोंकी ताराएँ, उनके दिशाद्वार आदिका वर्णन है। कहा गया है—"कत्तिआइया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइया सत्तणक्खत्ता दाहिण दारिआ। अणुराहाइआ सत्त णक्खत्ता अवदारिया। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ।"—सं० अं० सं० ७ सू० ५

अर्थात् कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्व द्वार, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा दक्षिण द्वार; अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्र पश्चिम द्वार एवं धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र, उत्तर द्वार वाले हैं। समवायाङ्ग १।६, २।४, ३।२, ४।३, ५।६, और ६।७ में आई हुई ज्योतिष चर्चा भी महत्त्वपूर्ण है।

ठाणाङ्गमें चन्द्रमाके साथ स्पर्शयोग करनेवाले नक्षत्रोंका कथन किया है। बताया गया है[2]—"कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्श योग करनेवाले है।" इस योगका फल तिथिके अनुसार बतलाया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रोंकी अन्य संज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशाकी ओरसे चन्द्रमाके साथ योग करनेवाले नक्षत्रोंके नाम और उनके फल विस्तार पूर्वक बतलाये गये हैं। अष्टांग निमित्तज्ञानकी चर्चाएँ भी आगम ग्रन्थोंमें मिलती हैं। गणित और फलित ज्योतिषकी अनेक मौलिक बातोंका संग्रह आगम ग्रन्थोमे है।

फुटकर ज्योतिषचर्चाके अलावा सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, ज्योतिषकरण्डक, अंगविज्जा, गणिविज्जा, मण्डलप्रवेश, गणितसारसंग्रह, गणितसूत्र, गणितशास्त्र, जोइसार, पञ्चाङ्गनयन विधि, इष्टतिथि सारणी,

---

१—ता कहँते कुला उवकुला कुलावकुला अहितेति वदेज्जा। तत्थ खलु इमा बारसकुला बारस उपकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णत्ता। बारसकुला तं जहा—धणिठा कुलं, उत्तराभद्दवयाकुल, असिणी कुल, कत्तियाकुल, मिगसिरकुल, पुस्सोकुल, महाकुल, उत्तराफग्गुणीकुल, चित्ताकुलं, विसाहाकुल, मूलोकुलं, उत्तरासाणकुल ॥ बारस उवकुला पण्णत्ता त जहा सवणो उवकुलं, पुव्वभद्दवया उवकुलं रेवति उवकुल, भरणि उवकुल, रोहिणी उवकुल, पुणवसु उवकुलं, असलेसा उवकुल, पुव्वफग्गुणी उवकुलं, हत्थो उवकुल, साति उवकुल, जेट्ठा उवकुल, पुव्वासाढा उवकुल ॥ चत्तारि कुलावकुल पण्णत्ता त जहा—अभिजिति कुलावसतभिसया कुलावकुलं, कुलं, अद्दाकुलावकुल अणुराहा कुलावकुलं ॥—पु० का० १०, ५

२—अट्ठ नक्खत्ताणं चंदेण सद्धि पमद्द जोगं जोएइ त० कत्तिया, रोहिणी, पुणवसु, महा, चित्ति, विसाहा, अणुराहा जिट्ठा—ठा० ८, सू १००

गये हैं। प्रधान नौ ग्रह इन्हीं कर्मोंके फलोंकी सूचना देते हैं। ग्रहोंके आधारपर व्यक्तिके बन्ध, उदय और सत्त्वकी कर्मप्रवृतियोंका विवेचन भी किया जा सकता है। किसी भी जातककी जन्मकुण्डलीकी ग्रहस्थितिके साथ गोचर ग्रहकी स्थितिका समन्वयकर उक्त बातें सहजमें कही जा सकती हैं। अतः ज्योतिषशास्त्रमें अव्यभिचारी सूचक निमित्तोंका विवेचन किया गया है। इन्हीं सूचक निमित्तोंके संहिताग्रन्थोंमें आठ भेद किये गये हैं--व्यञ्जन, अंग, स्वर, भौम, छिन्न, अन्तरिक्ष, लक्षण एवं स्वप्न।

व्यञ्जन--तिल, मस्सा, चट्टा आदिको देखकर शुभाशुभका निरूपण करना व्यञ्जन निमित्तज्ञान है। साधारणतः पुरुषके शरीरमें दाहिनी ओर तिल, मस्सा, चट्टा शुभ समझा जाता है और नारीके शरीरमें इन्ही व्यंजनोंका बाईं ओर होना शुभ है। पुरुषकी हथेलीमें तिल होनेसे उसके भाग्यकी वृद्धि होती है। पदतलमें होनेसे राजा होता है, पितृरेखापर तिलके होनेसे विष द्वारा कष्ट पाता है। कपालके दक्षिण-पार्श्वमें तिल होनेसे धनवान् और सम्भ्रान्त होता है। वामपार्श्व या भौंहमें तिलके होनेसे कार्यनाश और आशा भग होती है। दाहिनी ओर की भोंहमें तिल होनेसे प्रथम उम्रमें विवाह होता है और गुणवती पत्नी प्राप्त होती है। नेत्रके कोनेमें तिल होनेसे व्यक्ति शान्त, विनीत और अध्यवसायी होता है। गण्ड-स्थल या कपोलसे तिल होनेसे व्यक्ति मध्यमवित्तवाला होता है। परिश्रम करने पर ही जीवनमें सफलता मिलती है। इस प्रकारके व्यक्ति प्रायः स्वनिर्मित ही होते हैं। गलेमें तिलका रहना दुःख सूचक है। कण्ठमें तिलके होनेसे विवाह द्वारा भाग्योदय होता है, सुसरालसे हर प्रकारकी सहायता प्राप्त होती है। वक्षस्थलके दक्षिण भागमें तिल होनेसे कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती हैं और व्यक्ति प्रायः यशस्वी होता है। दक्षिण पञ्जरमें तिलके होनेसे व्यक्ति कायर होता है। समय पडने पर मित्र और हितैषियोंको धोखा देता है। उदरमें तिल होनेसे व्यक्ति दीर्घसूत्री और स्वार्थी होता है। नासिकाके वामपार्श्वमें तिल रहनेसे पुरुष धनहीन, मद्यपायी और मूर्ख होता है। वायी ओरके कपोल पर तिल हो तो अटूट दाम्पत्य प्रेम होता है और सौभाग्यकी वृद्धि होती है। कानमें तिल होनेसे भाग्य और यशकी वृद्धि होती है। नितम्बमें तिल होनेसे अधिक सन्तान प्राप्त होती हैं, किन्तु सभी जीवित नहीं रहतीं। दाहिनी जाँघका तिल धनी होनेका सूचक है। बायीं जाँघका तिल दरिद्र और रोगी होनेकी सूचना देता है। दाहिने पैरमें तिल होनेसे व्यक्ति ज्ञानी होता है, आधी अवस्थाके पश्चात् संन्यासीका जीवन व्यतीत करता है। दाहिनी बाहुमें तिल होनेसे दृढ शरीर, धैर्यशाली एवं बायीं बाहुमें तिल होनेसे व्यक्ति कठोर प्रकृति क्रोधी और विश्वास-घातक होता है। इस प्रकारके तिलवाले व्यक्ति प्रायः डाकू या हत्यारे होते हैं।

यदि नारियोंके बायें कान, बायें कपोल, बायें कण्ठ अथवा बायें हाथमें तिल हो तो वे प्रथम प्रसवमें पुत्र प्रसव करती हैं। दाहिनी भौंहमें तिल रहनेसे गुणवान् पति लाभ करती हैं। बायीं छातीके स्तनके नीचे तिल रहनेसे बुद्धिमती, प्रेमवती और सुखप्रसविनी होती हैं। हृदयमें तिल होनेमें नारी सौभाग्यवती होती है। दक्षिण स्तनमें लोहितवर्णका तिल हो तो चार कन्याएँ और तीन पुत्र उत्पन्न होते हैं। बायें स्तनमें तिल या लाल कोई चिह्न हो तो वह स्त्री एक पुत्र प्रसव कर विधवा हो जाती है। बगलमें सुदीर्घ तिल होनेसे नारी पतिप्रिया और पौत्रवती होती है। नखमें श्वेत बिन्दु हो, तो उसके स्वेच्छाचारिणी तथा कुलटा होनेकी संभावना है। जिस स्त्रीकी नाककी नोकपर तिल या मस्सा हो; दन्त और जिह्वा काली हो तो वह स्त्री विवाहके दशवें दिन विधवा होती है। दक्षिण घुटने पर तिल होनेसे मनोहर पति लाभ होता है। दाहिनी बाहुमें हो तो पतिको सौभाग्यदायिनी तथा पीठमें तिल होनेसे सुलक्षण और पतिपरायण होती है। बायीं भुजामें तिल या मस्सा होनेसे स्त्री मुखरा, कलहकारिणी और कटुभाषिणी होती है। बायें कंधे पर तिल रहनेसे चञ्चला, व्यभि-चारिणी और असत्यभाषिणी होती है। नाभिके बायें भागमें तिल रहनेसे चञ्चलता और नाभिके दाहिने भागमें तिल होनेसे सुलक्षणा होती है। मस्सा और चट्टा—लहसुनोंका शुभाशुभ फल भी तिलोंके समान ही समझना चाहिए। निमित्त शास्त्रमें व्यजनोंका विचार विस्तारपूर्वक किया है।

अंगनिमित्तज्ञान—हाथ, पाँव, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल आदि शरीरके अंगोंको देखकर शुभाशुभ फलका निरूपण करना अंगनिमित्त है। नासिका, नेत्र, दन्त, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल ये छः अवयव उन्नत होनेसे मनुष्य सुलक्षणयुक्त होता है। करतल, पदतल, नयनप्रान्त, नख, तालु, अधर और जिह्वा ये सात अंग लाल हों तो शुभप्रद है। जिसकी कमर विशाल हो, वह बहुत पुत्रवान् होता है। जिसकी भुजाएँ लम्बी होती हैं, वह व्यक्ति श्रेष्ठ होता है। जिसका हृदय विस्तीर्ण है, वह धन-धान्यशाली और जिसका मस्तक विशाल है, वह मनुष्योंमें पूजनीय होता है। जिस व्यक्तिका नयनप्रान्त लाल है, लक्ष्मी कभी उसका परित्याग नहीं कर सकती। जिसका शरीर तप्तकांचनके समान गौरवर्ण है, वह कभी भी निर्धन नहीं होता। जिसके दाँत बड़े होते हैं, वह कदाचित् ही मूर्ख होता है तथा अधिक लोमवाला व्यक्ति संसारमें सुखी नहीं हो सकता। जिसकी हथेली चिकनी और मुलायम हो, वह ऐश्वर्य भोग करता है। जिसके पैरका तलवा लाल होता है, वह सवारीका उपभोग सदा करता है। पैरके तलवोंका चिकना और अरुणवर्णका होना शुभ माना गया है।

जिस व्यक्तिके केश ताम्रवर्ण और लम्बे तथा घने हों वह पचीस वर्षकी अवस्थामें पागल या उन्मत्त हो जाता है। इस प्रकारके व्यक्तिको चालीस वर्षकी अवस्था तक अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। जिस व्यक्तिकी जिह्वा इतनी लम्बी हो, जो नाकका अग्रभाग स्पर्श कर ले, तो वह योगी या मुमुक्षु होता है। जिसके दाँत विरल अर्थात् अलग-अलग हों और हँसनेपर गर्तचिह्न दिखाई दे, उस व्यक्तिको अन्य किसीका धन प्राप्त होता है और वह व्यक्ति व्यभिचारी भी होता है। जिस व्यक्तिके चिबुक—ठोड़ीपर बाल न हों अर्थात् जिसे दाढ़ी नहीं हो तथा जिसकी छातीपर भी बाल न हो, ऐसा व्यक्ति धूर्त, कपटी और मायाचारी होता है। वह व्यक्ति अपने स्वार्थ-साधनमें बड़ा प्रवीण होता है। हाँ, बुद्धि और लक्ष्मी दोनों ही उसके पास रहती हैं।

मस्तकपर विचार करते समय बताया गया है कि मस्तकके सम्बन्धमें चार बातें विचारणीय हैं—बनावट, नसजाल, विस्तार और आभा। बनावटसे विचार, विद्या और धार्मिकताके मापका पता चलता है। मस्तककी हड्डियाँ यदि दृढ़, स्निग्ध और सुडौल हैं तो उपर्युक्त गुणोंकी मात्रा और प्रकारमें विशेषता रहती है। बेढंगी बनावट होनेपर उत्तम गुणोंका अभाव और दुर्गुणोंकी प्रधानता होती है।

नस जाल—मस्तकके नसजालसे विद्या, विचार और प्रतिभाका परिज्ञान होता है। विचारशील व्यक्तियोंके माथेपर सिकुड़न और ग्रन्थियाँ देखी जाती हैं। रेखाविहीन चिकना मस्तक प्रमाद, अज्ञान और लापरवाहीका सूचक है।

विस्तारमें मस्तककी लम्बाई चौड़ाई, ऊँचाई और गहराई सम्मिलित है। मस्तक नीचेकी ओर चौड़ा हो और ऊपरकी ओर छोटा हो तो व्यक्ति झक्की होता है। नीचे चपटे और चौड़े माथेमें विचार कार्यशक्ति और कल्पनाकी कमी तथा उदारताका अभाव रहता है। ऐसा व्यक्ति उत्साही होता है, परन्तु उसके कार्य बे सिर-पैरके होते हैं। चौड़ा और ढालू मस्तक होनेपर व्यक्ति चालाक, चतुर और पेटके प्रायः मलिन होते हैं। उन्नत और चौड़े ललाटवाले व्यक्ति विद्वान् होते हैं। यदि सीधे और चौकोर मस्तकके ऊपरी भागमें कोण (Angles) बन रहे हों और गोलाई लिये हो तो व्यक्ति हठीला और दृढ़ होता है। यदि गोलाई न हो और सीधा हो तो विचार और कर्ममें अकर्मण्य होता है। ऊँचा, सीधा और आभापूर्ण ललाट लेखकों और कवियों और अर्थशास्त्रियोंका होता है। चौड़ा मस्तक होनेसे व्यक्ति जीवनमें दुःखी नहीं होता।

आभा—मस्तककी आभाका वही महत्त्व है, जो किसी सुन्दर बने मकानमें रंगाई और पुताईका होता है। आभा रहनेसे व्यक्तिके व्यक्तित्वका विकास दृष्टिगोचर होता है। जिस व्यक्तिका मस्तक आभारहित होता है, वह दरिद्र, दुःखी और अनेक प्रकारके रोगोंसे पीड़ित रहता है।

ओठोंपर विचार करते समय कहा गया है कि मोटे ओठोंवाला व्यक्ति मूर्ख, दुराग्रही और दुराचारी होता है। आर्थिक दृष्टिसे भी वह व्यक्ति कष्ट उठाता है। छोटे मुँहमें अधिक पतले ओठ कंजूसी, दरिद्रता

और चिन्ताके सूचक हैं। सरस, सुन्दर और आभायुक्त पतले ओठ होनेपर व्यक्ति विद्वान्, धनी, सुखी और प्रिय होता है। गोलमुखमें गर्दन गोल और दृष्टि निक्षेप चुभता हुआ होनेपर व्यक्तिको अविचारी और स्वेच्छाचारी समझना चाहिए। ओठोंमें ढिलाव, लटकाव और मुड़ाव अनाचार और अविचारके द्योतक हैं। ढीले और लटके ओठ होनेसे व्यक्तिका शिथिलाचारी, निर्धन और चंचल प्रकृतिका होना व्यक्त होता है। सरस ओठ होनेसे दयालुता, परोपकारवृत्ति, सहृदयता एवं स्निग्धता व्यक्त होती है। रूक्ष ओठ अजीर्ण, ज्वर, रोग एवं दारिद्र्यको प्रकट करते हैं।

दाँतोंके सम्बन्धमें विचार करते हुए बताया गया है कि चमकीले दाँतवाला व्यक्ति कार्यशील और उत्साही होता है। छोटे होनेपर भी पंक्तिबद्ध और स्वच्छ दाँत व्यक्तिके विचारवान और उत्साही होनेकी सूचना देते हैं। ऊपरके दाँतोंमें बीचके दो दाँत जो अपेक्षाकृत बड़े होते हैं—अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। जिस मुखमें ये दाँत स्वभावतः खुले रहते हों, स्वच्छ और आभायुक्त हों एवं मुखाभा मनोज्ञ हो तो उस व्यक्तिमें शील, सौजन्य और नम्रताका गुण अवश्य होता है। उक्त प्रकारके दाँतवाला व्यक्ति व्यापारमें प्रभूत धनार्जन करता है।

गर्दनके पिछले भागको पिछला मस्तक और अगले भागको कण्ठ कहते हैं। पिछले मस्तकमें सुन्दर भराव और गठाव हो तो व्यक्तिका स्वावलम्बन और स्वाभिमान प्रकट होता है। इस प्रकारका व्यक्ति अन्तिम जीवनमें अधिक धनी बनता है और गार्हस्थिक सुखका आनन्द लेता है। यदि सिरका पिछला भाग चिकना और शिखा भागके सम स्तरपर हो, बीचमें गहराई न हो तो ऐसा व्यक्ति विषयी, गार्हस्थिक-कार्योंमें अनुरक्त एव निर्धन होकर वृद्धावस्थामें कष्ट प्राप्त करता है। गर्दन सीधी, गठी, दृढ़ और भरी होनेसे व्यक्ति विचारशील, श्रेष्ठ राजकर्मचारी एवं श्रेष्ठ न्यायाधीश होता है। इस प्रकारके व्यक्ति जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें अधिक सफल होते हैं।

स्त्रियोंके अंगोंका शुभाशुभत्व बतलाते हुए कहा है कि जिस स्त्रीकी मध्यमाङ्गुली दूसरी अँगुलियोंसे मिली हो, वह सदा उत्तम भोग भोगती है, उसका एक भी दिन दुःखसे नहीं बीतता। जिसका अँगुष्ठ गोल और मांसल हो तथा अग्रभाग उन्नत हो, वह अतुल सुख और सौभाग्यका सम्भोग करती है। जिसकी अँगुलियाँ लम्बी होती हैं, वह प्रायः कुलटा और जिसकी अँगुलियाँ पतली होती हैं, वह प्रायः निर्धन होती है।

जिस स्त्रीके पैरके नख स्निग्ध, समुन्नत, ताम्रवर्ण, गोलाकार और सुन्दर होते हैं तथा जिसके पैरके तलवे उन्नत होते हैं, वह राजमहिषी या राजमहिषीके तुल्य सुख भोगनेवाली होती है। जिसके घुटने मांसल तथा गोल हैं, वह सौभाग्यशालिनी होती है। जिसके जानु या घुटनेमें मांस नहीं, वह दुश्चरित्रा और दरिद्रा होती है। जिसके हृदयमें लोम नहीं, जिसका वक्षःस्थल नीचा नहीं, किन्तु समतल है, वह स्त्री ऐश्वर्यशालिनी और सौभाग्यवती होती है। जिस स्त्रीके स्तन द्वयका मूल भाग मोटा है और उपरि-भाग क्रमशः पतला होता गया है, वह बाल्यकालमें सुख भोगती है, पर अन्तमें दुःखी होती है। जिस स्त्रीके नीचेकी पंक्तिमें अधिक दाँत हों तो उसकी माताकी मृत्यु असमयमें ही हो जाती है। किसी भी स्त्रीकी नासिकाके अग्रभागका स्थूल होना, मध्य भागका नीचा होना या उन्नत होना अशुभ कहा गया है। ऐसी स्त्री असमयमें विधवा होती है।

जिस स्त्रीकी आँखें गायकी आँखोंकी तरह पिंगलवर्णकी हों, वह स्त्री गर्विता होती है। जिसकी आँखें कबूतरकी तरह हैं, वह दुश्शीला होती है और जिसकी आँखें रक्तवर्णकी हैं, वह पतिघातिनी होती है। जिस स्त्रीकी बायीं आँख कानी हो, वह दुश्चरित्रा और जिसकी दाहिनी आँख कानी हो, वह वन्ध्या होती है। सुन्दर और सुडौल आँखवाली नारी सुखी रहती है।

जिस स्त्रीका शरीर रूखा हो तथा उसमें लोम और शिरा—नसें दिखलाई दें, वह रोगिणी होती है। जिसके भौंह या ललाटमें तिल हो, वह पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करती है। श्यामवर्णकी नारीके विगत्देश अत्यन्त अशुभ माने गये हैं। ऐसी नारी पति और सन्तान दोनोंके लिए कष्टदायक होती है।

चौड़े वक्षस्थलवाली नारी प्रायः विधवा होती है। जिसके पैरकी तर्जनी, मध्यमा अथवा अनामिका भूमिका स्पर्श नहीं करतीं, वह सुखी और सौभाग्यशालिनी होती है।

जिस नारीकी ठोढ़ी मोटी, लम्बी या छोटी होती है, वह नारी निर्लज्ज, तुच्छ विचारवाली, भावुक और संकीर्ण हृदयकी होती है। गहरी ठोढ़ीवाली नारियोंमें अधिक कामुकता रहती है, घरमें नारियाँ मिलनसार, यशस्विनी और परिवारमें सभीकी प्रिय होती हैं। गठी ठोढ़ीवाली नारियाँ कार्यकुशल, सुखी और सन्तानसे युक्त होती हैं। इस प्रकारकी नारियाँ जीवनमें सुखका ही अनुभव करती हैं, इन्हें किसी भी प्रकारकी कठिनाई प्राप्त नहीं होती है। ठोढ़ीकी आकृति सीधी, टेढ़ी, उठी, नुकीली, चौकोर, लम्बी, छोटी, चपटी, गहरी, गठी, फूली और मोटी इस प्रकार बारह तरहकी बतलाई गई है। मस्तक, नाक और आँख आदिके सुन्दर होने पर भी ठोढ़ीकी भद्दी आकृति होने से नर या नारी दोनोंको जीवनमें कष्ट उठाने पड़ते हैं। भद्दी आकृतिवाला व्यक्ति शूरवीर होता है। नारी भयंकर आकृतिकी हो तो वह भी पुरुषके कार्योंको बड़ी तत्परतासे करती है।

अंगनिमित्त शास्त्रमें शरीरके समस्त अंगोंकी बनावट, रूप-रंग तथा उनके स्पर्शका भी विवेचन किया गया है। बताया गया है कि जिस पुरुष या नारीके पैर भद्दे और मोटे होते हैं, उसे मजदूरी सदा करनी पड़ती है। इस प्रकारके पैरवाला व्यक्ति सदा शासित रहता है। जिसका ललाट विस्तृत हो, पैर पतले और सुन्दर हों, हाथकी हथेली लाल हो, चेहरा गोल हो, वक्षःस्थल चौड़ा हो और नेत्र गोल हों, वह व्यक्ति स्त्री या पुरुष कोई भी हो, शासकका काम करता है। आर्थिक अभाव उसे जीवनमें कभी भी कष्ट नहीं दे सकता है।

स्वरनिमित्त—चेतन प्राणियोंके और अचेतन वस्तुओंके शब्द सुनकर शुभाशुभका निरूपण करना स्वरनिमित्त कहलाता है। पोदकीका 'चिलिचिलि' इस प्रकारका शब्द सुनाई पड़े तो लाभकी सूचना समझनी चाहिये 'चिकुचिकु' इस प्रकारका शब्द सुनाई पड़े तो बुलानेके लिए सूचना समझनी चाहिए। पोदकीका 'कोतुकोतु' शब्द कामनासिद्धिका सूचक, 'चिरिचिरि' शब्द कष्टसूचक, और 'चच' शब्द विनाश का सूचक होता है।

इस निमित्तमें काक, उल्लू, बिल्ली, कुत्ता आदिके शब्दोंका विशेष रूपसे विचार किया जाता है। कौवेका कठोर शब्द कष्टदायक और मधुर शब्द शुभ देनेवाला होता है। दीप्त दिशामें स्थित होकर कठोर शब्द करे तो कार्यका विनाश होता है; रात्रिमें दीप्त दिशामें मुख कर शान्त शब्द करे तो कार्य-सिद्धिका सूचक, सूर्योदयके समय पूर्व दिशामें सुन्दर स्थानमें बैठ कर काक मधुर शब्द करे तो वैरीका नाश, चिन्तित कार्यसिद्धि एवं स्त्री-रत्नलाभ होता है। प्रभातकालमें काक अग्निकोणमें सुन्दर देशमें स्थित हो शब्द करता है, तो विजय, धनलाभ, स्त्री रत्नकी प्राप्ति; दक्षिणमें शब्द करे तो अत्यन्त कष्ट; इसी दिशामें स्थित काक कठोर शब्द करे तो रोगीकी मृत्यु, मधुर शब्द करे तो इष्ट जन समागम, धन-प्राप्ति, अनेकके सम्मान; प्रभातकालमें पश्चिम दिशामें शब्द करे तो निश्चय वर्षा, सुन्दर वस्तुओंकी प्राप्ति, किसी उत्तम राजकर्मचारी का समागम; वायव्यकोणमें काक बोले तो अन्न-वस्त्रकी प्राप्ति, प्रियव्यक्तिका आगमन; उत्तर दिशामें शब्द करे तो अनिकष्ट, सर्पभय, दरिद्रता; ईशान दिशामें काक बोले तो व्याधि, रोगीका मरण एवं आकाशमें स्थित होकर काक मधुर शब्द करे तो अभीष्ट फलकी प्राप्ति होती है। पूर्व दिशामें स्थित काक प्रथम प्रहरमें सुन्दर शब्द बोले तो चिन्तित कार्यकी सिद्धि, प्रचुर धन-लाभ; अग्निकोणमें स्थित होकर काक बोले तो स्त्रीलाभ, मित्रताकी प्राप्ति एवं दक्षिण दिशामें बोले तो स्त्रीलाभ, सौख्यप्राप्ति, नैऋत्यकोणमें बोले तो मिष्टान्नप्राप्ति एवं पश्चिम दिशामें बोले तो जलकी वर्षा, अतिथि आगमन एवं कार्यसिद्धिकी सूचना मिलती है।

दूसरे प्रहरमें काक पूर्वदिशामें बोले तो पथिक आगमन, चौरभय और आकुलता; अग्निकोणमें बोले तो निश्चय कलह, प्रिय आगमनका श्रवण, स्त्रीप्राप्ति और सम्मानलाभ; नैऋत्य कोणमें बोले तो प्राणभय, स्त्री-भोजनलाभ, सर्वरोग विनाश और जन समागम; पश्चिममें बोले तो अभ्युदयका सूचक; वायव्य कोणमें

बोले तो चोरीका भय; उत्तर दिशामें बोले तो धन-लाभ और इष्ट-जन-समागम; ईशान दिशामें बोले तो ग्राम एवं आकाशमें बोले तो मिष्टान्न-लाभ, राजानुग्रह-लाभ और कार्यसिद्धि होती है।

उल्लूका दिनमें बोलना अत्यन्त अशुभ माना जाता है। रात्रिमें कठोर शब्द उल्लू करे तो भय-प्राप्ति, अनिष्टसूचक, आधि-व्याधि सूचक तथा मधुर शब्द करे तो कार्यसिद्धि, सम्मानलाभ और एक वर्षके भीतर धनप्राप्तिकी सूचना समझनी चाहिए।

मुर्गा, हाथी, मोर और शृगाल क्रूर शब्द करें तो अनेक प्रकारके भय, मधुर शब्द करनेसे इष्टलाभ तथा अति मधुर शब्द करनेसे धनादिका शीघ्र लाभ होता है। शृगालका दिनमें बोलना अशुभ माना गया है। दिनमें शृगाल कर्कश ध्वनि करे तो आधि व्याधिकी सूचना समझनी चाहिए। कबूतर और तोतेका रुदन शब्द सर्वदा अशुभकारक माना गया है। बिल्लीका पश्चिम दिशामें स्थित होकर रुदन करना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। पूर्व दिशामें बिल्लीका बोलना साधारणतया शुभ समझा जाता है। वास्तविक फलादेश कर्कश, मधुर और मध्यम ध्वनिके अनुसार शुभाशुभ फलके रूपमें समझना चाहिए। बिल्लीका तीन बार जोरसे बोलना या रोना और चौथी बार धीरेसे बोलकर या रोकर चुप हो जाना श्रोताके अत्यधिक अनिष्टसूचक है। गाय, बैल, भैंस, बकरी इनकी मधुर, कोमल, कर्कश एवं मध्यम ध्वनियोंके अनुसार फलादेशोंका निरूपण किया गया है। रोनेकी ध्वनि तथा हँसनेकी ध्वनि सभी पशु पक्षियोंकी अशुभ मानी गयी है। मधुर और सद्य ध्वनि, जो कर्णकटु न हो, शुभ होती है। फलोंसे युक्त हरेभरे वृक्षपर स्थित होकर पक्षियोंका बोलना शुभ और सूखे वृक्ष या काठके ढेर पर स्थित होकर बोलना अशुभ होता है।

भौम निमित्त—भूमिके रंग, चिकनाहट, रूखेपन आदिके द्वारा शुभाशुभत्व अवगत करना भौम निमित्त कहलाता है। इस निमित्तसे गृहनिर्माण योग्य भूमि, देवालय निर्माण योग्य भूमि, जलाशय निर्माण योग्य भूमि आदि बातोंकी जानकारी प्राप्त की जाती है। भूमिके रूप, रस, गन्ध और स्पर्श द्वारा उसके शुभाशुभत्वको जाना जाता है।

भूमिके नीचेके जलका विचार करते समय बताया गया है कि जिस स्थानकी मिट्टी पाण्डु और पीतवर्णकी हो तथा उसमेंसे शहद जैसी गन्ध निकलती हो तो वहाँ जल निकलता है अर्थात् सवा तीन पुरुष नीचे खोदनेसे जलका स्रोत मिल जाता है। नीलकमलके रंगकी मिट्टी हो तो उसके नीचे खारा जल समझना चाहिए। कपोतवर्णके समान मृत्तिका होनेसे भी खारे जलका स्रोत मिलता है। पीतवर्णकी मृत्तिकासे दूधके समान गन्ध निकले तो निश्चयतः मीठे जलका स्रोत समझना चाहिए। परन्तु यहाँ इस बातका भी ध्यान रखना आवश्यक है कि मिट्टी चिकनी होनी चाहिए; रूक्षवर्णकी मिट्टी होनेसे जलका अभाव या अल्पजल निकलता है। धूम्रवर्णकी मिट्टी रहनेसे भी उसके नीचे जलका स्रोत रहता है।

घर बनानेके लिए श्वेत, रक्त, पीत और कृष्णवर्णकी भूमि, जिसमेंसे घी, रक्त, अन्न और मद्यके समान गन्ध निकलती हो, शुभ होती है। मधुर, कषायली, आम्ल और कटु रसवाली भूमि घर बनानेके लिए शुभ होती है। दुर्गन्ध युक्त भूमिमें घर बनानेसे अनिष्ट होता है, शत्रुभय, धन विनाश एवं नाना प्रकारके सक्लेश होते हैं। मजीठके समान रक्तवर्णकी भूमि अशुभ है। मूँगके समान हरितवर्णकी भूमिमें भी घर बनाना अशुभ होता है। जिस स्थानकी मृत्तिकासे पुष्पके समान गन्ध निकले या धूपके समान गन्ध आती हो और श्वेत या पीतवर्णकी मृत्तिका हो, उस स्थान पर घर बनवाना शुभ होता है। अग्निके समान लालवर्णकी भूमिमें घर बनवाना निषिद्ध है। यदि इस भूमिका स्पर्श घृतके समान चिकना हो और महुवेके समान गन्ध निकलती हो तो यह भूमि भी घर बनानेके लिए शुभ होती है। मटमैले वर्णकी भूमिमें यदि गुड़ जैसी गन्ध आवे तो कभी भी उस भूमिमें घर नहीं बनवाना चाहिए। वर्णकी दृष्टिसे श्वेत और पीत वर्णकी भूमि तथा गन्धकी दृष्टिसे मधु, घृत, दुग्ध और भातकी गन्धवाली भूमि तथा घृत, दही और शहदके समान स्पर्शवाली भूमि घर बनानेके लिए शुभ मानी जाती है। किस प्रकारकी भूमिके नीचे कौन-कौन पदार्थ हैं यह भी भूमिके गणितसे निकाला जाता है।

किसी भी मकानमें कहाँ अस्थि है और कहाँ पर धन-धान्यादि हैं, इसकी जानकारी भी भूमि गणितके अनुसार की जाती है। ज्योतिष शास्त्रके विषयोंमें ऐसे कई प्रकारके गणित हैं, जो भूमिके नीचेकी वस्तुओं पर प्रकाश डालते हैं। बताया गया है कि जिस स्थानकी मिट्टी हाथीके मदके समान गन्धवाली हो, या कमलके समान गन्धवाली हो और जहाँ प्रायः कोयल आया जाया करती है और गोहदने अपना निवास बनाया हो, इस प्रकारकी भूमिमें नीचे स्वर्णादि द्रव्य रहते हैं। दूधके समान गन्धवाली भूमिके नीचे रजत, मधु और पृथिवीके समान गन्धवाली भूमिके नीचे रजत और ताम्र, कबूतरकी बीटके समान गन्धवाली भूमिके नीचे पत्थर और जलके समान गन्धवाली भूमिके नीचे अस्थियाँ निकलती हैं। जिस भूमिका वर्ण सदा एक तरहका नहीं रहे, निरन्तर बदलता रहे और मट्ठाके समान गन्ध निकले उस भूमिके नीचे सोना या रत्न अवश्य रहते हैं। कदली वृक्षके क्षारके समान जहाँसे गन्ध निकलती हो तथा मधुर रस हो, उस भूमिके नीचे रजत—चाँदी या चाँदीके सिक्के निकलते हैं।

छिन्ननिमित्त—वस्त्र, शस्त्र, आसन और छत्रादिको छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्तज्ञानके अन्तर्गत है। बताया गया है कि नये वस्त्र, आसन, शय्या, शस्त्र, जूता आदिके नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्रके कोणोंके चार भागोंमें देवता, पाशान्त—मूलभागके दो भागोंमें मनुष्य और मध्यके तीन भागोंमें राक्षस बसते हैं। नया वस्त्र या उपर्युक्त नयी वस्तुओंमें स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लग जाय, उपर्युक्त वस्तुएँ जल जायँ, फट जायँ, कट जायँ तो अशुभ फल समझना चाहिए। कुछ पुराना वस्त्र पहनने पर जल या कट जाय तो सामान्यतया अशुभ होता है। राक्षसके भागोंमें वस्त्रमें छेद हो जाय तो वस्त्रके स्वामीको रोग या मृत्यु होती है, मनुष्यभागोंमें छेद हो जाने पर पुत्र-जन्म होता है तथा वैभवशाली पदार्थोंकी प्राप्ति होती है। देवताओंके भागोंमें छेद होने पर धन, ऐश्वर्य, वैभव, सम्मान एवं भोगोंकी प्राप्ति होती है। देवता, मनुष्य और राक्षस इन तीनोंके भागोंमें छेद हो जाने पर अत्यन्त अनिष्ट होता है।

कंकपक्षी, मेढक, उल्लू, कपोत, काक, मांसभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्पके आकारका छेद देवताभागमें होने पर भी वस्त्रभोक्ताको मृत्युतुल्य कष्ट भोगना पड़ता है। इस प्रकारके छेद होनेसे धनका विनाश भी होता है। देवताभागके अतिरिक्त अन्य भागोंमें छेद होने पर तो वस्त्रभोक्ताको नाना प्रकारकी आधि-व्याधियाँ होनेकी सूचना मिलती है। अपमान और तिरस्कार भी अनेक प्रकारके सहन करने पड़ते हैं। छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, बिल्वफल—बेल, कलश, कमल और तोरणादिके आकारका छेद राक्षसभागमें होनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति, पद-वृद्धि, सम्मान और अन्य सभी प्रकारके अभीष्ट फल प्राप्त होते हैं।

वस्त्र धारण करते समय उसका दाहिना भाग जल जाय या फट जाय तो वस्त्रभोक्ताको एक महीनेके भीतर अनेक प्रकारकी बीमारियोंका सामना करना पड़ता है। बायें कोनेके जलने या कटनेसे बीस दिनमें घरमें कोई न कोई आत्मीय व्यक्ति रोगसे पीड़ित होता है तथा वस्त्रभोक्ताको अत्यधिक मानसिक ताप उठाना पड़ता है। ठीक मध्यमें वस्त्रके जलने या कटनेसे व्यक्तिको शारीरिक कष्ट, धननाश और पद पद पर अपमानित होना पड़ता है। वस्त्रका वस्त्रके मूल भागमें जलना या कटना साधारणतः शुभ है। अग्रभागमें वस्त्रका छिन्न भिन्न होना साधारणतः ठीक समझना चाहिए। वस्त्रको धारण करनेके दिनसे लेकर दो दिनों तक छिन्न-भिन्न होनेके शुभाशुभत्वका विचार करना आवश्यक माना गया है। धारण करनेके तत्क्षण ही वस्त्र जल या कट जाय तो उसका फल तत्काल और अवश्य प्राप्त होता है। धारण करनेके एकाध दिन बाद यदि वस्त्र जले, कटे या फटे तो उसका फल अत्यल्प होता है। गर्ग आदि आचार्योंका मत है कि वस्त्रके शुभाशुभत्वका विचार वस्त्र धारण करनेके एक प्रहर तक ही करना ज्यादा अच्छा होता है। एक प्रहरके पश्चात् वस्त्र पुरातन हो जाता है, अतः उसके शुभाशुभत्वका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वस्त्रमें किसी पदार्थका दाग लगना भी अशुभ माना गया है। गोदुग्ध या मधुके दागको शुभ बताया है।

बुधका क्रूर नक्षत्रोंमें अस्त होना तथा क्रूर ग्रहों के साथ अस्त होना अशुभ कहा गया है। मंगलका शनि क्षेत्रकी राशियोंमें अस्त होना अशुभसूचक है। जब मंगल अपनी राशिके दीप्तांशमें अस्त या उदय को प्राप्त करता है तो शुभफल प्राप्त होता है।

ग्रहोंके अस्तोदयके समान मार्गी और वक्रीका भी विचार करना चाहिए। इस निमित्तज्ञानमें समस्त ग्रहोंके चार प्रकरण गर्भित हैं। ग्रहोंकी विभिन्न जातियोंके अनुसार शुभाशुभ फलका निरूपण भी इसी निमित्तज्ञानके अन्तर्गत किया गया है। शनिका क्रूर नक्षत्र पर वक्री होना और मृदुल नक्षत्र पर उदय हो जाना अशुभ है। कोई भी ग्रह अपनी स्वाभाविक गतिसे चलते समय एकाएक वक्री हो जाय तो अशुभ फल होता है।

लक्षणनिमित्त—स्वस्तिक, कलश, शंख, चक्र आदि चिह्नोंके द्वारा एवं हस्त, मस्तक और पद-तलकी रेखाओं द्वारा शुभाशुभका निरूपण करना लक्षणनिमित्त है। करलक्षणमें बताया गया है कि मनुष्य लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन मरण, जय-पराजय एवं स्वास्थ्य-अस्वास्थ्य रेखाओंके बलसे प्राप्त करता है। पुरुषोंके लक्षण दाहिने हाथसे और स्त्रियोंके बायें हाथकी रेखाओंसे अवगत करने चाहिए। यदि प्रदेशिनी और मध्यमा अंगुलियोंका अन्तर सघन हो—वे एक दूसरेसे मिली हों और मिलनेसे उनके बीचमें कोई अन्तर न रहे, तो बचपनमें सुख होता है। यदि मध्यमा और अनामिकाके बीच सघन अन्तर हो तो जवानीमें सुख होता है। लम्बी अँगुलियाँ दीर्घजीवियोंकी, सीधी अगुलियाँ सुन्दरोंकी, पतली बुद्धिमानोंकी और चपटी दूसरोंकी सेवा करनेवालोंकी होती है। मोटी अंगुलियोंवाले निर्धन और बाहरकी ओर झुकी अगुलियोंवाले आत्मघाती होते हैं। कनिष्ठा और अनामिकामें सघन अन्तर हो तो बुढ़ापेमें सुख प्राप्त होता है। सभी अँगुलियाँ जिसकी सघन होती हैं वह धन-धान्ययुक्त सुखी और कर्त्तव्यशील होता है। जिनकी अँगुलियोंके पर्व लम्बे होते हैं, वे सौभाग्यवान् और दीर्घजीवी होते हैं।

स्पर्श करनेमें उष्ण, अरुणवर्ण, पसीनारहित, सघन (छिद्र रहित) अँगुलियोंवाला, चिकना, चमकदार, मांसल, छोटा, लम्बी अंगुलियोंवाला, चौड़ा एवं ताम्र नखवाला हाथ प्रशसनीय माना गया है। इस प्रकारके हाथवाला व्यक्ति जीवनमें धनी, सुखी, ज्ञानी और नाना प्रकारके सम्मानोंसे युक्त होता हैं। जिनके हाथकी आकृति बन्दरके हाथकी आकृतिके समान कोमल, लम्बी, पतली, नुकीली हथेलीवाली होती है वे धनिक होते हैं। व्याघ्रके पंजेकी आकृतिके समान हाथवाले मनुष्य पापी होते हैं। जिसके हाथ कुछ भी काम नहीं करते हुए भी कठोर प्रतीत हों और जिसके पाँव बहुत चलने-फिरने पर भी कोमल दीख पड़ें, वह मनुष्य सुखी होता है तथा जीवनमें सर्वदा सुखका अनुभव करता है।

हाथ तीन प्रकारके बताये गये हैं—नुकीला, समकोण—चौकोर और गोल पतली चपटी अंगुलियां के अग्रकी आकृतिवाला। जो देखनेमें नुकीला—लम्बी-लम्बी नुकीली अंगुलियाँ, करतल भाग उन्नत, मांसल-युक्त, ताम्रवर्णका हो, वह व्यक्तिके धनी, सुखी और ज्ञानी होनेकी सूचना देता है। नुकीला हाथ उत्तम मनुष्योंका होता है। यह सत्य है कि हस्तरेखाके विचारके पहले हाथकी आकृतिका विचार अवश्य करना चाहिए। सबसे पहिले हाथकी आकृतिका विचार कर लेना आवश्यक है। समकोण हाथकी अंगुलियाँ साधारण लम्बी होती हैं। करतलस्थ रेखाएँ पीले रगकी चौड़ी दीख पड़ती हैं। अगुलियोंके अग्रभाग चौड़े-चौकोर होते हैं। अगुलियाँ लम्बी करके एक दूसरीसे मिलाकर देखनेसे उनके बीचकी सन्धिमें प्रकाश दीख पड़ता है। अगुलियोंके नीचेके उच्चप्रदेश साधारण ऊँचे उठे हुए और देखनेमें स्पष्ट देख पड़ते हैं। हाथका स्पर्श करनेसे हाथ कठिन प्रतीत होता है। अगुलियाँ मोटी होती हैं, हाथका रंग पीला दिखलाई पड़ता है। उत्तम रेखाएँ उठी हुई रहती है। इस प्रकारके लक्षणोंसे युक्त हाथवाला व्यक्ति परिश्रमी, दृढ़ अध्यवसायी, कर्मठ, निष्कपट, लोकप्रिय, परोपकारी, तर्कणाप्रधान, और शोधकार्यमें भाग लेनेवाला होता है। यह हाथ मध्यम दर्जेका माना जाता है। इस प्रकारके हाथवाला व्यक्ति बहुत बड़ा धनिक नहीं हो सकता है।

गोल, पतले और चपटे ढंगका हाथ निकृष्ट माना जाता है। इस प्रकारके हाथमें करतलका मध्य भाग गहरा, रेखाएँ चौड़ी और फैली हुई अँगुलियाँ छोटी या टेढ़ी, अँगूठा छोटा होता है। जिस हाथकी अँगुलियाँ मोटी, हथेलीका रंग काला और अल्प रेखाएँ हों, वह हाथ साधारण कोटिका होता है। इस प्रकारके हाथवाले व्यक्ति परिश्रमी, अल्प सन्तोषी, मन्दबुद्धि और विशेष भोजन करनेवाले होते हैं। जिस हाथमें टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ रहती हैं, देखनेमें बदसूरत होता है और अँगुलियाँ भद्दी होती हैं, वह हाथ अशुभ माना जाता है। इस हाथवाला व्यक्ति सर्वदा जीवनमें कष्ट उठाता है।

जिस व्यक्तिके हाथका पिछला भाग मांसल, पुष्ट, कछुएकी पीठके समान उन्नत, नसोंसे रहित और रोम रहित होता है, वह व्यक्ति संसारमें पर्याप्त यश, विद्या, धन और भोगको प्राप्त करता है। रूक्ष सिकुड़ा कड़ा पृष्ठभाग अशुभ समझा जाता है। जिस पृष्ठभागकी नसें दिखलाई दें, केश हों वह जीवनमें कष्टोंकी सूचना देता है। हाथके पृष्ठ भागमें छः बातें विचारणीय मानी गयी हैं—उन्नत होना, अवनत होना, नसोंका दिखलाई पड़ना, नसोंका नहीं दिखलाई पड़ना, विस्तीर्ण होना और संकुचित या संकीर्ण होना।

हथेलीका विचार करते समय कहा गया है कि जिसकी हथेली स्निग्ध, उन्नत, मांसल, उभड़ी हुई नसोंसे युक्त न हो, वह शुभ मानी जाती है। इस प्रकारकी हथेलीवाला व्यक्ति जीवनमें नानाप्रकारकी उन्नतियोंको प्राप्त करता है। जिनके हाथका या पाँवका तलवा मृदु होता है, वे लोग स्थिरकार्य करनेवाले होते हैं। कमलके गर्भके समान सुन्दर वर्ण और अत्यन्त सुकोमल दोनों हाथोंका होना उत्तम माना गया है। इस प्रकारके हाथवाला मनुष्य कठोरसे कठोर कार्य करनेमें समर्थ होता है। जिस मनुष्यके हाथमें प्राकृतिक रूपसे विकृति मालूम पड़े तो वह व्यक्ति अपने पदोंका अभ्युदय करता है। ऐसे लोगोंको वाहन सौख्य भी मिलता है। जिसकी हथेली पीतवर्णकी हो, वह आगमाभ्यासी, श्वेतवर्णकी हथेलीवाला दरिद्री तथा काले और नीले वर्णकी हथेलीवाला व्यक्ति दुराचारी होता है। जिस व्यक्तिकी हथेली सिकुड़ी, पतली और सल पड़ी हुई हों तो वह व्यक्ति मानसिक दुर्बलतावाला, डरपोक, बुद्धिहीन, अन्यायाचरण करनेवाला और चंचलस्वभाववाला होता है। बड़ा और लम्बा करतलभाग महत्त्वाकांक्षी, असफल और नीरस व्यक्तिका होता है। दृढ़ करतल भाग हो तो चंचल तथा योग्य प्रकृतिवाला होता है। हथेलीका गहरा होना असफलताओंका सूचक है।

जिसके नखोंका वर्ण तुष—भूसेके समान हो, वे पुरुषार्थहीन, विवर्णनखवाले परमुखापेक्षी, चपटे और फटे नखवाले धनहीन, नीले रंगके नखवाले पापकार्यमें प्रवृत्त, दुराचारी, जिनके नख शिथिल हों वे दरिद्री होते हैं। छोटी अँगुलियोंवाले मनुष्य चालाक, साहसी, संकुचित स्वभावके और मनमाने कार्य करनेवाले होते हैं। इस प्रकारके व्यक्ति कवि, लेखक और प्रशासक भी होते हैं। लम्बी अँगुलियोंवाले मनुष्य दीर्घसूत्री, प्रमादी और अस्थिर विचारके होते हैं। लम्बी अँगुलियाँ यदि नुकीली हों तो व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी, परिश्रमी यशस्वी और धनी होता है। लट्टके समान पुष्ट अँगुलियोंवाले व्यक्ति ऐश-आराम भोगनेवाले, दृढ़ परिश्रमी, मिलनसार और सुख प्राप्त करनेकी चेष्टा करनेवाले होते हैं। लचीली अँगुलियों-वाले समझदार, अधिक खर्च करनेवाले, ऋण ग्रस्त और सम्मान प्राप्त करनेवाले होते हैं।

जिसका अँगूठा हथेलीकी ओर झुका हुआ हो, अन्य अँगुलियाँ पशुके पंजेके समान हों, हथेली संकुचित और चपटी हो तो ऐसा मनुष्य अधिक तृष्णावाला होता है। जिसका अँगूठा पीछेकी ओर झुका हुआ हो, वह व्यक्ति कार्यकुशल होता है। अँगूठेको इच्छाशक्ति, निग्रहशक्ति, कीर्ति, सुख और समृद्धिका द्योतक माना गया है। अँगूठेके निमित्त द्वारा जीवनके भावी शुभाशुभका विचार किया जाता है।

हस्तरेखाओंका विचार करते हुए कहा गया है कि आयु या भोगरेखा, मातृरेखा, पितृरेखा, ऊर्ध्व-रेखा, मणिबन्धरेखा, शुक्रग्रन्थिनीरेखा आदि रेखाएँ प्रधान हैं। जो रेखा कनिष्ठा अँगुलीसे आरम्भ कर तर्जनीके मूलाभिमुख गमन करती है, उसका नाम आयुरेखा है। कुछ आचार्य इसे भोगरेखा भी कहते हैं। आयुरेखा यदि छिन्न भिन्न न हो, तो वह व्यक्ति १२० वर्ष तक जीवित रहता है। यदि यह रेखा

कनिष्ठा अँगुलीके मूलसे अनामिकाके मूल तक विस्तृत हो तो ५०-६० वर्षकी आयु होती है। इस आयु-रेखाको जितनी क्षुद्र रेखाएँ छिन्न-भिन्न करती हैं, उतनी ही आयु कम हो जाती है। इस रेखाके छोटी और मोटी होने पर भी व्यक्ति अल्पायु होता है। इस रेखाके शृंखलाकार होनेसे व्यक्ति लम्पट और उत्साहहीन होता है। यह रेखा जब छोटी-छोटी रेखाओंसे कटी हुई हो, तो व्यक्ति प्रेममें असफल रहता है। इस रेखाके मूलमें बुध स्थानमें शाखा न रहनेसे सन्तान नहीं होती। शनि स्थानके निम्नदेशमें मातृरेखाके साथ इस रेखाके मिल जाने पर हठात् मृत्यु होती है। यदि यह रेखा शृङ्खलाकार होकर शनिके स्थानमें जाय तो व्यक्ति स्त्री प्रेमी होता है।

आयु रेखाकी बगलमें जो दूसरी रेखा तर्जनीके निम्न देशमें गई है, उसका नाम मातृरेखा है। यह रेखा शनि स्थान या शनि स्थानके नीचे तक लम्बी हो तो अकाल मृत्यु होती है। जिस व्यक्तिकी मातृ और पितृ रेखा मिलती नहीं, वह विशेष विचार नहीं करता और कार्यमें शीघ्र ही प्रवृत्त हो जाता है। इस प्रकारकी रेखावाला व्यक्ति आत्माभिमानी, अभिनेता और व्याख्यान झाड़नेमें पटु होता है। दो मातृरेखा रहनेसे सौभाग्यशाली, सत्परामर्शदाता और धनिक होता है तथा इस प्रकारके व्यक्तिको पैतृक सम्पत्ति भी प्राप्त होती है। यदि यह रेखा टूट जाय तो मस्तकमें चोट लगती है तथा व्यक्ति अंगहीन होता है। यह रेखा लम्बी हो और हाथमें अन्य बहुत सी रेखाएँ हों तो यह व्यक्ति विपत्ति कालमें आत्म-दमन करनेवाला होता है। इस रेखाके मूलमें कुछ अन्तर पर यदि पितृ रेखा हो, तो वह मनुष्य परमुखा-पेक्षी और डरपोक होता है। मातृरेखा हाथमें सरल भावसे न जाकर बुधके स्थानाभिमुखी हो तो वाणिज्य व्यवसायमें लाभ होता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा और अनामिकाके बीचकी ओर आवे तो शिल्प द्वारा उन्नति लाभ होता है। यह रेखा रविके स्थानमें जाय, तो शिल्पविद्यानुरागी और यशःप्रिय व्यक्ति होता है। यह रेखा भाग्य रेखाको छेदकर शनि स्थानमें जाय तो मस्तकमें चोट लगनेसे मृत्यु होती है। आयु रेखाके समीप इसके होनेसे श्वास रोग होता है। इस रेखामें सादे बिन्दु होनेसे व्यक्ति वैज्ञानिक आविष्कर्त्ता होता है। मातृ रेखाके ऊपर यवचिह्न होनेसे व्यक्ति वायुरोगग्रस्त होता है। मातृ और पितृ दोनों रेखाओंके अत्यन्त छोटे होनेसे शीघ्र मृत्यु होती है।

जो रेखा करतल मूलके मध्यस्थलसे उठकर साधारणतः मातृरेखाका ऊर्ध्वदेश स्पर्श करती है, अथवा उसके निकट पहुँचती है, उसका नाम पितृरेखा है। कुछ लोग इसे आयुरेखा भी कहते हैं। यह रेखा चौड़ी और विवर्ण हो, तो मनुष्य रुग्ण, नीच स्वभाव, दुर्बल और ईर्ष्यान्वित होता है। दोनों हाथमें पितृरेखाके छोटी होनेसे व्यक्ति अल्पायु होता है। पितृरेखाके शृङ्खलाकृति होनेसे व्यक्ति रुग्ण और दुर्बल होता है। दो पितृरेखा होनेसे व्यक्ति दीर्घायु, विलासी, सुखी और किसी स्त्रीके धनका उत्तराधिकारी होता है। यह रेखा शाखा विशिष्ट हो तो नसें कमजोर होती हैं। पितृरेखासे कोई शाखा चन्द्रके स्थानमें जानेसे मूर्खतावश अपव्यय कर व्यक्ति कष्टमें पड़ता है। यह रेखा टेढ़ी होकर चन्द्र स्थानमें जाये, तो दीर्घजीवी और इस रेखाकी कोई शाखा बुधके क्षेत्रमें प्रविष्ट हो तो व्यवसायमें उन्नति एवं शास्त्रानुशीलन में सुख्यातिलाभ होता है। पितृरेखामें दो रेखाएँ निकल कर एक चन्द्र और दूसरी शुक्रके स्थानमें जाये, तो वह मनुष्य स्वदेशका त्याग कर विदेश जाता है। चन्द्रस्थानसे कोई रेखा आकर पितृरेखाको काटे, तो वह वातरोगी होता है। जिस व्यक्तिके दोनों हाथोंमें मातृ, पितृ और आयु रेखाएँ मिल गई हों, वह व्यक्ति अकस्मात् दुरवस्थाको प्राप्त करता है और उसकी मृत्यु भी किसी दुर्घटनासे होती है। पितृरेखा मध्यांगुलिके निकट जाये तो व्यक्तिकी सन्तान नहीं होती। पितृरेखामें छोटी-छोटी रेखाएँ आकर चतुष्कोण उत्पन्न करें तो स्वजनोंसे विरोध होता है। तथा जीवनमें अनेक स्थानों पर असफलताएँ उपलब्ध होती हैं।

जो सीधी रेखा पितृरेखाके मूलके समीप आरम्भ होकर मध्यमांगुलिकी ओर गमन करती है, उसे ऊर्ध्व रेखा कहते हैं। जिसकी ऊर्ध्वरेखा पितृरेखासे उठे, वह अपनी चेष्टासे सुख और सौभाग्य लाभ करता है। ऊर्ध्वरेखा हस्ततलके बीचसे उठकर बुध स्थान तक जाय तो वाणिज्य व्यवसायमें, वक्तृतामें या विज्ञान-

शास्त्रमें उन्नति होती है। यह रेखा मणिबन्धका भेदन करे तो दुःख और शोक उपस्थित होता है। इस रेखाके हाथके बीचसे निकलकर रविके स्थानमें जानेसे साहित्य और शिल्प विद्यामें उन्नति होती है। यह रेखा मध्यमा अंगुलिसे जितनी ऊपर उठेगी, उतना ही शुभ फल होगा। ऊर्ध्वरेखा जिस स्थानमें टेढ़ी होकर जायगी, उस व्यक्तिको उसी उम्रमें कष्ट होगा। इस रेखाके भग्न या छिन्न भिन्न होनेसे नाना प्रकारकी घटनाएँ घटित होती हैं। इस रेखाके सरल और सुन्दर होनेसे व्यक्ति सुखी और दीर्घजीवी जीवन व्यतीत करता है। शुक्र स्थानसे कई एक छोटी रेखा निकल कर पितृरेखा और ऊर्ध्वरेखाके काटनेसे स्त्री वियोग होता है।

जिसके हाथमें ऊर्ध्वरेखा न रहे, वह व्यक्ति दुर्भाग्यशाली, उद्यम रहित और शिथिलाचारी होता है। इस रेखाके अस्पष्ट होनेसे उद्यम व्यर्थ होता है। इस रेखाके स्पष्ट और सरलभावसे शनिके स्थानमें जानेसे व्यक्ति दीर्घजीवी होता है। स्त्रियोंके करतलमें और पादतलमें ऊर्ध्व रेखा होनेसे, वे चिर सधवा, सौभाग्यवती और पुत्र पौत्रवती होती हैं। जिस व्यक्तिके हाथमें यह रेखा होती है, वह ऐश्वर्यशाली और सुखी होता है। जिसकी तर्जनीसे लेकर मूल तक ऊर्ध्व रेखा स्पष्ट हो, वह राजदूत होता है। मध्यमा अंगुलीके मूलतक जिसकी ऊर्ध्व रेखा दिखाई दे, वह सुखी, विभवशाली और पुत्र-पौत्रादि समन्वित होता है।

जिस व्यक्तिके मणिबन्धमें तीन सुस्पष्ट सरल रेखा हों, वह दीर्घजीवी, सुस्थ शरीरी और सौभाग्यशाली होता है। रेखात्रय जितनी ही साफ और स्वच्छ होंगी, स्वास्थ्य उतना ही उत्तम होगा। मणिबन्ध रेखात्रयके बीचमें कुश चिह्न रहनेसे व्यक्ति कठिन परिश्रमी और सौभाग्यशाली होता है। मणिबन्धमें यदि एक तारिका चिह्न हो तो उत्तराधिकारीके रूपमें धनलाभ होता है, किन्तु यह चिह्न अस्पष्ट हो तो व्यक्ति परदाराभिलाषी होता है। मणिबन्धके चन्द्रस्थानके ऊपरकी ओर जानेवाली रेखा हो तो समुद्र यात्राका योग अधिक होता है। मणिबन्धसे कोई रेखा गुरुस्थानकी ओर जाय तो धनलाभ होता है। इस रेखाके सरल होनेसे आयुवृद्धि होती है। पर यह रेखा इस बातकी भी सूचना देती है कि व्यक्तिकी मृत्यु जलमें डूबनेसे न हो जाय। करलक्खणमें मणिबन्ध रेखाके सम्बन्धमें बताया गया है कि जिसके मणिबन्ध-कलाईपर तीन रेखाएँ हों, उसे धान्य, सुवर्ण और रत्नोंकी प्राप्ति होती है। उसे नाना प्रकारके आभूषणोंका उपभोग करनेका अवसर प्राप्त होता है। जिस व्यक्तिकी मणिबन्ध रेखाएँ मधुके समान पिंगल लालवर्णकी हों, तो वह पुरुष सुखी होता है। जिनका मणिबन्ध गठा हुआ और दृढ़ हो वे राजा होते हैं, ढीला होनेसे हाथ काटा जाता है। जिसके मणिबन्धमें जवमालाकी तीन धाराएँ हों वह व्यक्ति एम० एल० ए० या मिनिस्टर होता है। प्रशासकके कार्योंमें उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त होती है। जिसके मणिबन्धमें यवमालाकी दो धाराएँ प्राप्त होती हैं, वह व्यक्ति अत्यन्त धर्मात्मा, चतुर, कार्यपटु और सुखी होता है। जज या मजिस्ट्रेटका पद उसे मिलता है। जिसके मणिबन्धमें यवमालाकी एक ही धारा दिखाई पड़े वह पुरुष धनी होता है। सभी लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। जिस व्यक्तिके हाथकी तीनों मणिबन्ध रेखाएँ स्पष्ट और सरल हों, वह व्यक्ति जगन्मान्य, पूज्य और प्रतिष्ठित होता है।

तर्जनी और मध्यमांगुलीके बीचसे निकलकर अनामिका और कनिष्ठाके मध्यस्थलतक जानेवाली रेखा शुक्रबन्धिनी कहलाती है। इस रेखाके भग्न या बहुशाखा विशिष्ट होनेपर मूर्च्छा रोग होता है। इस रेखा के स्थान-स्थानमें भग्न होनेसे मनुष्य लम्पट होता है। शुक्रबन्धिनी रेखाके होनेसे मनुष्य कभी विषादमें मग्न रहता है और कभी आनन्दमें। इस रेखाके बृहस्पति स्थानसे अर्द्धचन्द्राकार दो सीधी तरहसे बुधके स्थान तक जानेसे व्यक्ति ऐन्द्रजालिक होता है और साहित्यिक भी होता है।

रेखाओंके रक्तवर्ण होनेसे मनुष्य आमोदप्रिय, उग्रस्वभाव, रक्तवर्णमें कुछ कालिमा हो अर्थात् रक्तवर्ण रक्ताभ हो तो प्रतिहिंसापरायण, शठ, क्रोधी होता है। जिसकी रेखा पीली होती है, वह उच्चाभिलाषी, प्रतिहिंसापरायण तथा कर्मठ होता है। पाण्डुवर्णकी रेखाएँ होनेसे स्त्री स्वभावका व्यक्ति होता है।

ग्रहोंके स्थानोंका वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि तर्जनी मूलमें गुरुका स्थान, मध्यमा अंगुलिके मूलमें शनिका स्थान, अनामिका मूलदेशमें रविस्थान, कनिष्ठाके मूलमें बुधस्थान तथा अंगूठेके मूलदेशमें शुक्रस्थान है। मंगलके दो स्थान हैं—एक तर्जनी और अंगूठेके बीचमें पितृरेखाके समाप्ति स्थानके नीचे और दूसरा बुध स्थानके नीचे और चन्द्रस्थानके ऊपर ऊर्ध्वरेखा और मातृरेखाके नीचे वाले स्थानमें। मंगल स्थानके नीचेसे मणिबन्धके ऊपर तक करतलके पार्श्वभागके स्थानको चन्द्रस्थान कहते हैं।

सूर्यके स्थानके ऊँचा होनेसे व्यक्ति चंचल होता है, संगीत तथा अन्यान्य कलाविशारद और नये विषयोंका आविष्कारक होता है। रवि और बुधका स्थान उच्च होनेसे व्यक्ति विज्ञ, शास्त्रविशारद और सुवक्ता होता है। अत्युच्च होनेसे वह अपव्ययी, विलासी, अर्थलोभी और तार्किक होता है। रविका स्थान ऊँचा होनेसे व्यक्ति मध्यमाकृति, लम्बे केश, बड़े-बड़े नेत्र, किञ्चित् लम्बा मुखमंडल, सुन्दर शरीर और अंगुलियाँ लम्बी होती हैं। रविके स्थानमें कोई रेखा न होने पर व्यक्तिको नाना दुर्घटनाओंका सामना करना पड़ता है। जिसके हाथका उच्च सूर्यक्षेत्र बुधक्षेत्रकी ओर झुक रहा हो, तो उसका स्वभाव नम्र होता है। व्यापारमें उन्नति करनेवाला, अर्थशास्त्रका अपूर्व विद्वान् एवं कलाप्रिय होता है। जिसके हाथका उच्च सूर्यक्षेत्र शनिक्षेत्रकी ओर झुका हुआ हो, तो वह धनाढ्य और अनेक प्रकारके भोग विलासोंमें रत रहता है। सूर्यक्षेत्र यदि गुरुक्षेत्रकी ओर झुका हुआ हो तो व्यक्ति दयालु, गुणी, न्यायप्रिय, सत्यवादी, परोपकारी, गुरुजनोंका भक्त, सुन्दर आकृतिवाला, बुद्धिमान, मधुरभाषी, कलाकौशलमें अभिरुचि रखनेवाला, धार्मिक और सन्तानवाला होता है। मंगलक्षेत्रकी ओर झुके रहनेसे व्यक्ति सदाचारी, ज्ञानी, साहित्यकार, शिल्पकला विशारद, वैज्ञानिक और कुशल डाक्टर होता है।

चन्द्रस्थान उच्च होनेसे मनुष्य संगीतप्रिय, भगवद्भक्त, विषण्ण और चिन्तायुक्त होता है। इस प्रकारका व्यक्ति प्रायः संसारसे विरक्त होता है और संन्यासीका जीवन व्यतीत करता है।

पितृरेखाके सन्निकटस्थ मंगलका स्थान उच्च हो तो वह व्यक्ति असीम साहसी, विवादप्रिय और विशिष्ट बुद्धिमान होता है। हस्त पार्श्वस्थ मंगलस्थान उच्च होनेसे वह व्यक्ति अन्याय कार्यमें प्रवृत्त नहीं होता तथा धीर, नम्र, धार्मिक, साहसी और दृढ़प्रतिज्ञ होता है। दोनों स्थान समान उच्च होनेसे वह व्यक्ति उग्र स्वभाव सम्पन्न, कामातुर, निष्ठुर और अत्याचारी होता है। मंगलस्थानके नीचे होनेसे व्यक्ति भीरु, मन्दबुद्धि और पुरुषार्थहीन होता है। मंगलका स्थान कठिन होनेसे स्थावर सम्पत्तिकी वृद्धि होती है। मंगल उच्चका सर्वाङ्ग सुन्दर रूपमें हो तो व्यक्ति मिल या अन्य बड़े-बड़े उद्योग धन्धोंको करता है। मंगल मनुष्यकी कार्य-क्षमताकी सूचना देता है।

बुधका स्थान उच्च होनेसे शास्त्रज्ञानमें परायण, भाषणमें पटु, साहसी, परिश्रमी, पर्यटनशील और कम अवस्थामें ही विवाह करनेवाला होता है। बुध जिसका उच्चका हो और साथ ही चन्द्रमा भी उच्चका हो तो व्यक्ति लेखक, कवि या साहित्यकार बनता है। सफल नेता भी इस प्रकारकी रेखावाला व्यक्ति होता है। कन्या सन्तान इस प्रकारके व्यक्तिको अधिक उत्पन्न होती हैं। कुछ आचार्योंका अभिमत है कि जिसके हाथमें बुध उच्चका हो, वह व्यक्ति डाक्टर या अन्य प्रकारका वैज्ञानिक होता है। ऐसे व्यक्तियोंको नयी नयी वस्तुओंके गुण दोष आविष्कारमें अधिक सफलता मिलती है। बुधका पर्वत नीचेकी ओर झुका हो और मंगलका पर्वत उन्नत हो तो व्यक्ति नेता होता है।

गुरुका स्थान अत्युच्च होनेसे व्यक्ति अधार्मिक और अहंकारी होता है। इस व्यक्तिमें शासन करनेकी अपूर्व क्षमता होती है। न्याय और व्याकरण शास्त्रके ज्ञाता उच्च स्थानीय व्यक्ति होता है। गुरुके पर्वतके निम्न होनेसे व्यक्ति दुराचारी, दुःखी और लम्पट होता है।

शुक्रका स्थान अत्युच्च होनेसे व्यक्ति लम्पट, लज्जाहीन और व्यभिचारी होता है। उच्च होनेसे सौन्दर्य प्रिय, नृत्य गीतानुरक्त, कलाविज्ञ, धनी और शिल्प विद्यामें पटु होता है। शुक्रके स्थानके निम्न होनेसे व्यक्ति स्वार्थी, आलसी और रिपुदमनकारी होता है। एक मोटी रेखा शुक्रके स्थानसे निकलकर पितृ रेखाके ऊपर होता हुई मंगल स्थानमें आये तो व्यक्तिको दमा और खाँसीका रोग होता है। शुक्र-

स्थानसे शनिस्थान तक यदि रेखा जाय तथा यह रेखा शृंखलायुक्त हो तो व्यक्तिका विवाह बड़ी कठिनाईसे होगा। शुक्र और गुरु दोनोंके स्थानोंके उन्नत होनेसे संसारमें प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

शनिके स्थानके उच्च होनेसे व्यक्ति अल्पभाषी, कलाप्रिय, एकान्तप्रिय, विचारक, दार्शनिक और भाग्यशाली होता है। शनि स्थानके नीचे होनेसे व्यक्ति भावुक, कमजोर और दुर्भाग्यशाली होता है। शनि और बुध दोनों स्थानोंके उच्च होनेसे व्यक्ति क्रोधी, चोर और अधार्मिक होता है।

इस निमित्तमें योगोंका विचार करते हुए बताया गया है कि जिस पुरुषकी नाभि गहरी हो, नासिकाका अग्रभाग सीधा हो, वक्षःस्थल रक्तवर्ण और पैरके तलवे कोमल तथा रक्तवर्णके हों, वह सम्राट् के तुल्य प्रभावशाली होता है। ऐसा व्यक्ति अनेक प्रकारके सुख भोगता है तथा मन्त्री, नेता या किसी संस्थाका निर्देशक होता है। जिसकी हथेलीके मध्य कड़ा, अश्व, मृदंग, वृक्ष, स्तम्भ या दण्डका चिह्न हो तो वह व्यक्ति समृद्धिशाली, धनी, सुखी और अद्भुत प्रभावशाली होता है। जिसका ललाट चौड़ा और विशाल, नेत्र कमलदलके समान, मस्तक गोल, और भुजाएँ जानुपर्यन्त हों, वह व्यक्ति नेता, राजमान्य, पूज्य, शक्तिशाली और सुखी होता है। जिसके हाथमें फूलकी माला, घोड़ा, कमलपुष्प, धनुष, चक्र, ध्वजा, रथ और आसनका चिह्न हो वह जीवनमें सदा आनन्द भोगता है, उसके घरमें लक्ष्मीका निवास सदा रहता है।

जिसके हाथकी सूर्य रेखा, मस्तकरेखासे मिली हो और मस्तकरेखासे स्पष्ट, सीधी होकर ऊपर गुरुकी ओर झुकनेसे वहाँ चतुष्कोण बन जाय वह प्रधानमन्त्री या मुख्य नेता होता है, जिसके हाथके सूर्य गुरु पर्वत उच्च हों और शनि एवं बुध रेखा पुष्ट, स्पष्ट और सीधी हो वह राज्यपाल या गवर्नर होता है। जिसके हाथके शनिपर्वत पर त्रिशूल चिह्न हो, चन्द्ररेखाका भाग्यरेखासे शुद्ध सम्बन्ध हो या भाग्यरेखा हथेलीके मध्यसे प्रारम्भ होकर उसकी एक शाखा गुरुपर्वत पर और दूसरी सूर्यपर्वत पर जाय वह उच्च राज्याधिकारी और गुणग्राही होता है। जिसके हाथके गुरु और मंगलपर्वत उच्च हों तथा मस्तकरेखामें सर्पका चिह्न हो या बुधांगुली नुकीली और लम्बी हो एवं नख चमकदार हों, वह राजदूत बनता है। जिसके बायें हाथकी तर्जनी और कनिष्ठिकाकी अपेक्षा दाहिने हाथकी वे ही अंगुलियाँ मोटी और बड़ी हों, मंगल पर्वत अधिक ऊँचा उठा हो और सूर्य रेखा प्रबल हो वह जिलाधीश या कमिश्नर होता है। जिसके हाथके गुरु, शनि, सूर्य और बुध पर्वत उच्च हो, अंगुलियाँ लम्बी होकर उनके ऊपरी भाग मोटे हों, सूर्यरेखा प्रबल हो और मध्यमांगुलीका दूसरा पर्व लम्बा हो, वह शिक्षाविभागका उच्चपदाधिकारी होता है।

जिसके हाथकी हृदयरेखा और मस्तकरेखाके बीच एक चौड़ा चतुष्कोण हो, मस्तकरेखा सीधी और स्वच्छ हो, बुधांगुलीका प्रथम पर्व लम्बा हो, गुरुकी अंगुली सीधी हो तथा सूर्य पर्वत उठा हो वह दयालु न्यायाधीश होता है। जिसकी अंगुलियाँ लम्बी और आस पास सटी हों, अंगूठा लम्बा और सीधा हो, मस्तकरेखा सीधी और सर्पाकृतिकी हो तथा हथेली चपटी हो तो व्यक्ति बैरिस्टर या वकील होता है।

जिसके हाथका गुरुपर्वत और तर्जनी लम्बी हो, चन्द्रपर्वत उच्च हो तथा बुधांगुली नुकीली हो, साथ ही मस्तकरेखा लम्बी और नीचे झुकी हो तो वह व्यक्ति दर्शनशास्त्रका विद्वान् होता है। जिसके शनि और गुरुक्षेत्र उच्च हों, शनि पर्वत पर त्रिकोण चिह्न हो और सूर्यरेखा शुद्ध हो तो वह व्यक्ति योगी या साधु होकर पूर्ण गौरव पाता है। जिसका अंगूठा मोटा और टेढ़ा हो, उसकी इच्छा शक्ति प्रबल होती है। जिसके हाथमें बड़ा चतुष्कोण या पुष्करणी रेखा हो, वह सब मनुष्योंमें श्रेष्ठ और सबका स्वामी होता है। हथेलीके मध्यमें कलश, स्वस्तिक, मृग, गज, मत्स्य आदिके चिह्न शुभ माने जाते हैं।

अंगूठेके मूलमें जितनी स्थूल रेखाएँ हों उतने भाई और जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हों उतनी बहिन होती हैं। अंगूठेके अधोभागमें जिसके जितनी रेखाएँ हो, उसके उतने ही पुत्र होते हैं। जितनी रेखाएँ सूक्ष्म होती हैं उतनी ही कन्याएँ होती हैं। जितनी रेखाएँ छिन्न-भिन्न होती हैं, उतनी सन्तानें मृत और जितनी रेखाएँ अखण्ड और सम्पूर्ण होती हैं उतने बालक जीवित रहते हैं।

स्वप्ननिमित्त—स्वप्न द्वारा शुभाशुभका वर्णन करना इस निमित्तज्ञानका विषय है। दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, कल्पित, भाविक और दोषज इन सात प्रकारके स्वप्नोंमेंसे भाविक स्वप्नका फल यथार्थ निकलता है। स्वप्न भी कर्मफलका सूचक है, आगामी शुभाशुभ कर्मफलकी सूचना देता है। सूचक निमित्तोंमें स्वप्नका भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वप्नोंका फलादेश इस ग्रन्थके २६ वें अध्यायमें तथा परिशिष्ट-रूपमें अङ्कित ३० वें अध्यायमें विस्तारके साथ लिखा गया है। अतः यहाँ स्वप्नोंका फलादेश नहीं लिखा जा रहा है।

निमित्तज्ञानका अङ्गभूत प्रश्नशास्त्र—प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञानका एक प्रधान अंग रहा है। इसमें धातु, मूल, जीव, नष्ट, मुष्टि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन, जन्म, कर्म, शल्यानयन, सेनागमन, नदियोंकी बाढ़, अवृष्टि, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, फसल, जय पराजय, लाभालाभ, विद्यासिद्धि, विवाह, सन्तान लाभ, यशप्राप्ति एवं जीवनके विभिन्न आवश्यक प्रश्नोंका उत्तर दिया गया है। जैनाचार्योंने अष्टांग निमित्तपर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। प्रस्तुत प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञानका वह अंग है जिसमें बिना किसी गणित क्रियाके त्रिकालकी बातें बतलायी जाती हैं। ज्ञानदीपिकाके प्रारम्भमें कहा है—

भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम्।
पञ्चप्रकारमार्गं च चतुष्केन्द्रबलाबलम्॥
आरूढछत्रवर्गं चाभ्युदयादिबलाबलम्।
क्षेत्र दृष्टि नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम्॥
मृगादिनररूपाणि किरणान्योजनानि च।
आयूरसोदयाद्यञ्च परीक्ष्य कथयेद् बुधः॥

अर्थ—भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभदृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, आरूढ़, छत्र, वर्ण, उदयबल, अस्तबल, क्षेत्रदृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मृग तथा मनुष्यादिकके रूप, किरण, योजन, आयु, रस एवं उदय आदिकी परीक्षा करके फलका निरूपण करना चाहिए।

प्रश्ननिमित्तका विचार तीन प्रकारसे किया गया है—प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और स्वरविज्ञान सिद्धान्त। प्रश्नाक्षर सिद्धान्तका आधार मनोविज्ञान है; यतः बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकारकी विभिन्न परिस्थितियोंके आधीन मानवमनकी भीतरी तहमें जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं, वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते हैं। अतः प्रश्नाक्षरोंके निमित्तको लेकर फलादेशका विचार किया गया है।

प्रश्न करनेवाला आते ही जिस वाक्यका उच्चारण करे, उसके अक्षरोंका विश्लेषणकर प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पञ्चम वर्गके अक्षरोंमें विभक्त कर लेना चाहिए, पश्चात् संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिङ्गित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नाक्षरोंके अनुसार उनका फलादेश समझना चाहिए। प्रश्नप्रणालीके वर्गोंका विवेचन करते हुए कहा है कि अ क च ट त प य श अथवा आ ए क च ट त प य श इन अक्षरोंका प्रथमवर्ग, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरोंका द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरोंका तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ ध भ व ह इन अक्षरोंका चतुर्थ वर्ग और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरोंका पञ्चम वर्ग बताया गया है।

प्रथम और तृतीयवर्गके संयुक्त अक्षर प्रश्नवाक्यमें हों तो वह प्रश्नवाक्य संयुक्त कहलाता है। प्रश्नवर्णोंमें अ इ ए ओ ये स्वर हों तथा क च ट त प य श ग ज ड द ब ल स ये व्यंजन हों तो प्रश्न संयुक्त संज्ञक होता है। संयुक्त प्रश्न होनेपर पृच्छकका कार्य सिद्ध होता है। यदि पृच्छक लाभ, जय, स्वास्थ्य, सुख और शान्तिके सम्बन्धमें प्रश्न पूछने आया है तो संयुक्त प्रश्न होनेपर उसके सभी कार्य सिद्ध होते हैं। यदि प्रश्न वर्णोंमें कई वर्गोंके अक्षर हैं अथवा प्रथम, तृतीय वर्गके अक्षरोंकी बहुलता होने पर भी संयुक्त ही प्रश्न माना जाता है। जैसे पृच्छकके मुखसे प्रथम वाक्य कार्य निकला, इस प्रश्नवाक्य, का विश्लेषण क्रियासे क + आ + र + य + अ यह स्वरूप हुआ। इस विश्लेषणमें क् + य् + अ ये अक्षर

प्रथम वर्गके हैं तथा आ और र् द्वितीय वर्गके हैं। यहाँ प्रथम वर्गके तीन वर्ण और द्वितीय वर्गके दो वर्ण हैं, अतः प्रथम और द्वितीय वर्गका संयोग होनेसे यह प्रश्न संयुक्त नहीं कहलायेगा।

यदि प्रश्नवाक्यमें संयुक्त वर्णोंकी अधिकता हो—प्रथम और तृतीय वर्गके वर्ण अधिक हों अथवा प्रश्नवाक्यका आरम्भ कि टि ति पि यि शि को चो टो तो यो शो ग ज ड द ब ल स गे जे डे दे से अथवा क्+ग्, क्+ज्, क्+ड्, क्+द्, क्+ब्, क्+ल्, क्+स्, च्+ज्, च्+ड्, च्+द्, च्+ब् च्+ल्, च्+स्, च्+रू, ट्+ग्, ट्+ज्, ट्+ड्, ट्+द्, ट्+ब्, ट्+ल्, ट्+स्, त्+ग्, त्+ज्, त्+ड्, त्+द्, त्+ब्, त्+ल्, त्+स्, द्+ग्, प्+ज्, द्+ड्, प्+ब्, प्+ल्, द्+स्, य्+ग्, य्+ज्, य्+ड्, य्+द्, य्+ब्, य्+ल्, य्+स्, श्+ग्, श्+ज्, श्+ड्, श्+द्, श्+ब्, श्+ल्, श्+स्, ग्+क्, ग्+च्, ग्+ट्, ग्+त्, ग्+प्, ग्+य्, ग्+श्, ज्+क्, ज्+च्, ज्+ट्, ज्+प्, ज्+य्, ज्+थ्, ड्+क्, ड्+च्, ड्+ट्, ड्+त्, ड्+प्, ड्+प्, ड्+श्, द्+क्, द्+च्, द्+ट्, द्+प्, द्+य्, द्+श्, ब्+क्, ब्+च्, ब्+ट्, ब्+त्, ब्+प्, ब्+य्, ब्+श्, ल्+क्, ल्+च्, ल्+ट्, ल्+त्, ल्+प्, ल्+य्, ल्+श, स्+क्, स्+च्, स्+ट्, स्+त्, स्+प्, स्+य्, स्+श् से होता हो तो संयुक्त प्रश्नका फल शुभ होता है।

प्रथम और द्वितीय वर्ग, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग, तृतीय और चतुर्थ वर्ग एवं चतुर्थ और पंचम वर्गके वर्णोंके मिलनेसे असंयुक्त प्रश्न कहलाता है। प्रथम और द्वितीय वर्गाक्षरोंके संयोगसे—क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, य र इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—खघ, छझ, ठढ, थध, फभ और र व इत्यादि; तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे—गघ, जझ, डढ, दध, बभ, बल इत्यादि एवं चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरोंके संयोगसे घङ, झञ, ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते हैं। असंयुक्त प्रश्न होनेसे फलकी प्राप्ति बहुत दिनोंके बाद होती है। यदि प्रथम और द्वितीय वर्गोंके अक्षरोंके मिलनेसे असंयुक्त प्रश्न हो तो धनलाभ, कार्यसफलता और राजसम्मान अथवा जिस सम्बन्धमें प्रश्न पूछा गया हो, उस फलकी प्राप्ति तीन महीनोंके पश्चात् होती है। द्वितीय, चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो, तो मित्रप्राप्ति, उत्सववृद्धि, कार्यसाफल्यकी प्राप्ति छः महीनेमें होती है। तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो, तो अल्प लाभ, पुत्रप्राप्ति, मांगल्यवृद्धि और प्रियजनोंसे झगड़ा एक महीनेके अन्दर होता है। चतुर्थ और पचम वर्गाक्षरोंके संयोगसे असंयुक्त प्रश्न हो, तो घरमें विवाह आदि मांगलिक उत्सवोंकी वृद्धि, स्वजनप्रेम, यशःप्राप्ति, महान् कार्योंमें लाभ और वैभवकी वृद्धि इत्यादि फलोंकी प्राप्ति शीघ्र होती है।

यदि पृच्छक रास्तेमें हो, शयनागारमें हो, पालकीपर सवार हो, मोटर, साइकिल, घोड़े, हाथी आदि किसी भी सवारीपर सवार हो तथा हाथमें कुछ भी चीज न लिये हो, तो असंयुक्त प्रश्न होता है। यदि पृच्छक पश्चिम दिशाकी ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न करते समय कुर्सी, टेबुल, बेंच अथवा अन्य लकड़ीकी वस्तुओंको छूता हुआ या नोंचता हुआ प्रश्न करे तो उस प्रश्नको भी असंयुक्त समझना चाहिए। असयुक्त प्रश्नका फल प्रायः अनिष्टकर ही होता है।

यदि प्रश्नवाक्यका आद्याक्षर गा, जा, डा, दा, बा, ला, सा, गै, जै, डै, बै, लै, सै, घि, झि, पि, धि, भि, वि, हि, को, झो, ढो, वो, हो मेंसे कोई हो तो असयुक्त प्रश्न होता है। इस प्रकारके असंयुक्त प्रश्नका फल अशुभ होता है।

प्रश्नकर्त्ताके प्रश्नाक्षरोंमें कख, खग, गघ, घङ, चछ, जझ, झञ, टठ, डढ, ढण, तथ, थद, दध, धन, पफ, बभ, भम, यर, रल, लव, वश, शष, और सह इन वर्णोंके क्रमशः विपर्यय होने पर परस्परमें पूर्व और उत्तरवर्ती हो जाने पर अर्थात् खक, गख, घग, ङघ, छच, झज, ञझ, ठट, ढड, णढ, थत, दथ, धद, नध, फप, भब, मभ, रय, लर, वल, शव, षश और हस होने पर अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकारके प्रश्नाक्षरोंके होनेसे कार्यसिद्धि नहीं होती। प्रश्नवाक्यके विश्लेषण करने पर पंचमवर्गके

वर्णोंकी संख्या अधिक हो तो भी अभिहित प्रश्न होता है। प्रश्नवाक्यका आरम्भ उपर्युक्त अक्षरोंके संयोगसे निष्पन्न वर्णोंसे हो तो अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकारके प्रश्नका फल भी अशुभ है।

अकार स्वर सहित और अन्य स्वरोंसे रहित अ क च त प य श ङ ञ ण न म ये प्रश्नाक्षर या प्रश्नवाक्यके आद्याक्षर हों तो अनभिहित प्रश्न होता है। अनभिहित प्रश्नाक्षर स्ववर्गाक्षरोंमें हों, तो व्याधि-पीडा और अन्य वर्गाक्षरोंमें हों तो शोक, सन्ताप, दुःख भय और पीड़ा फल होता है। जैसे किसी व्यक्ति-का प्रश्नवाक्य 'चमेली' है। इस वाक्यमें आद्याक्षरमें अ स्वर और च व्यंजनका संयोग है, द्वितीय वर्ण 'मे' में ए स्वर और म व्यजनका संयोग है तथा तृतीय वर्ण ली में ई स्वर और ल् व्यंजनका संयोग है। अतः च्+अ+म्+ए+ल्+ई इस विश्लेषणमें अ+च्+म् ये तीन वर्ण अनभिहित, ई अभिधूमित, ए आलिंगित और ल अभिहत संज्ञक है। "परस्परं शोधयित्वा योऽधिकः स एव प्रश्नः" इस नियमके अनुसार यह प्रश्न अनभिहत हुआ; क्योंकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहत प्रश्नके हैं। अथवा सुविधाके लिए प्रथम वर्ण जिस प्रश्नका जिस संज्ञकहो उस प्रश्नको उसी संज्ञक मान लेना चाहिए, किन्तु वास्तविक फल जाननेके लिए प्रश्न वाक्यमें सबसे अधिक प्रश्नाक्षर जिस संज्ञक प्रश्नके हों, उसे उसी संज्ञक प्रश्न समझना चाहिए।

प्रश्नश्रेणीके सभी वर्ण चतुर्थवर्ग और प्रथमवर्गके हों अथवा पञ्चमवर्ग और द्वितीयवर्गके हों तो अभिघातित प्रश्न होता है। इस प्रश्नका फल अत्यन्त अनिष्टकर बताया गया है। यदि पृच्छक कमर, हाथ, पैर और छाती खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिघातित प्रश्न होता है।

प्रश्नवाक्यके प्रारम्भमें या समस्त प्रश्नवाक्यमें अधिकांश स्वर अ इ ए ओ ये चार होंतो आलिङ्गित प्रश्न; आ ई ऐ औ ये चार हों तो अभिधूमित प्रश्न और उ ऊ अं अः ये चार हों तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिङ्गित प्रश्न होने पर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होने पर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्रागमन एवं यशलाभ और दग्ध प्रश्न होने पर दुःख, शोक, चिन्ता, पीड़ा एवं धनहानि होती है। जब पृच्छक दाहिने हाथसे दाहिने अंगको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिङ्गित; दाहिने या बायें हाथसे समस्त शरीरको खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूमित प्रश्न एवं रोते हुए नीचेकी ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। प्रश्नाक्षरोंके साथ-साथ उपयुक्त चर्या-चेष्टाका भी विचार करना अत्यावश्यक है। यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित हो और पृच्छककी चेष्टा दग्ध प्रश्नकी हो ऐसी अवस्थामें फल मिश्रित कहना चाहिए। प्रश्न-वाक्य या प्रश्नवाक्यके आद्यवर्णका स्वर आलिंगित हो और चर्या-चेष्टा अभिधूमित या दग्ध प्रश्नकी हो तो मिश्रित फल समझना चाहिए।

उपर्युक्त आठ नियमों द्वारा प्रश्नोंका विचार करते समय उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, अधरोत्तर, वर्गोत्तर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर इन भेदोंका भी विचार करना चाहिए। अ और कवर्ग उत्तरोत्तर, चवर्ग और टवर्ग उत्तराधर, तवर्ग और पवर्ग अधरोत्तर एवं यवर्ग और शवर्ग अधराधर होते हैं। प्रथम और तृतीय वर्गवाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्गवाले अक्षर अधरोत्तर एवं पञ्चम वर्गवाले अक्षर दोनों—प्रथम और तृतीय मिला देनेसे क्रमशः वर्गोत्तर और वर्णाधर होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये उन्नीस वर्ण उत्तरसज्ञक, ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ये चौदह वर्ण अधर संज्ञक, अ इ उ ए ओ अं ये वर्ण स्वरोत्तर संज्ञक, अ च त य उ ज द ल ये आठ वर्ण गुणोत्तर सज्ञक और क ट प श ग ड ब ह ये आठ वर्ण गुणाधर संज्ञक हैं।

प्रश्नकर्त्ताके प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानके वाक्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ स्थानके वाक्याक्षर अधर कह सकते हैं। यदि प्रश्नमें दीर्घाक्षर प्रथम, तृतीय और पंचम स्थानमें दोनो लाभ करने वाले होते हैं। शेष स्थानोंमें रहनेवाले ह्रस्व और प्लुताक्षर दर्शन करनेवाले होते हैं। साधक इन प्रश्ना-क्षरों परसे जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदिको अवगत करता है।

प्रश्नशास्त्रमें प्रश्न दो प्रकारके बताये जाते हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्नमें प्रश्नकर्त्ता जिस बातको पूछना चाहता है, उसे ज्योतिषीके सामने प्रकट कर उसका फल ज्ञात करता है। परन्तु

मानसिक प्रश्नमें पृच्छक अपने मनकी बात नहीं बतलाता है, केवल प्रतीकों—फल, पुष्प, नदी, पहाड़, देव आदिके नाम द्वारा ही पृच्छकके मनकी बात ज्ञात करनी पड़ती है।

साधारणतः तीन प्रकारके पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी उक्त तीन ही प्रकारके हो सकते हैं। प्रश्नशास्त्रके चिन्तकोंने इनका नाम जीवयोनि, धातुयोनि और मूलयोनि रखा है। अ आ इ ए ओ अः ये छः स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये पन्द्रह व्यंजन इस प्रकार कुल २१ वर्ण जीव संज्ञक, उ ऊ अं ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ ब भ व स ये दस व्यंजन इस प्रकार कुल १३ वर्ण धातु संज्ञक और ई ऐ औ ये तीन स्वर तथा ङ ञ ण न म ल र ष ये आठ व्यंजन इस प्रकार कुल ११ वर्ण मूलसंज्ञक हैं।

जीवयोनिमें अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पद संज्ञक, इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद संज्ञक और ई औ घ झ ढ ध फ व ह ये अक्षर पादसंकुल संज्ञक होते हैं। द्विपद योनिके देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद हैं। अ क ख ग घ ङ प्रश्नवर्णोंके होने पर देव योनि; च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण प्रश्नवर्णोंके होने पर मनुष्य योनि; त थ द ध न प फ ब भ म के होने पर पशु योनि या पक्षियोनि और य र ल व श ष स ह प्रश्नवर्णोंके होने पर राक्षस योनि होती है। देवयोनिके चार भेद हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी। देवयोनिके वर्णोंमें आकारकी मात्रा होनेपर कल्पवासी, इकार मात्रा होने पर भवनवासी, एकार मात्रा होने पर व्यन्तर और ओकार मात्रा होने पर ज्योतिष्क देवयोनि होती है।

मनुष्ययोनिके ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पाँच भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण ब्राह्मणयोनि संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण क्षत्रिय योनि संज्ञक; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वर्ण वैश्ययोनि संज्ञक; ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये वर्ण शूद्रयोनि संज्ञक एवं उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये वर्ण अन्त्यजयोनि संज्ञक होते हैं। इन पाँचो योनियोंके वर्णोंमें यदि अ इ ए ओ ये मात्राएँ हों तो पुरुष और आ ई ऐ मात्राएँ हों तो स्त्री एवं उ ऊ अं अः ये मात्राएँ हों तो नपुंसक संज्ञक होते हैं। पुरुष, स्त्री और नपुसकमें भी आलिङ्गित होने पर गौर वर्ण, अभिधूमित होने पर श्याम और दग्ध होने पर कृष्ण वर्ण होता है। आलिङ्गित प्रश्न होने पर बाल्यावस्था, अभिधूमित होने पर युवावस्था और दग्ध प्रश्न होने पर वृद्धावस्था होती है। आलिङ्गित प्रश्न होने पर सम—न कद अधिक बड़ा और न अधिक छोटा, अभिधूमित होने पर लम्बा और दग्धप्रश्न होनेपर कुब्जा या बौना होता है।

त थ द ध न प्रश्नाक्षरोंके होने पर जलचर पक्षी और प फ ब भ म प्रश्नाक्षरोंके होने पर थलचर पक्षियोंकी चिन्ता समझनी चाहिए। राक्षस योनिके दो भेद हैं—कर्मज और योनिज। भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहलाते हैं और असुरादिको योनिज कहते हैं। त थ द ध न प्रश्नाक्षरोंके होने पर कर्मज और श ष स ह प्रश्नाक्षरोंके होनेपर योनिज राक्षसों की चिन्ता समझनी चाहिए।

चतुष्पद योनिके खुरी, नखी, दन्ती और शृंगी ये चार भेद हैं। यदि प्रश्नाक्षरोंमें आ और ऐ स्वर हों तो खुरी; छ और ठ प्रश्नाक्षरोंमें हों तो नखी, थ और फ प्रश्नाक्षरोंमें हों तो दन्ती एवं र और ष प्रश्नाक्षरोंमें हों तो शृंगीयोनि होती है। खुरी योनिके ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। आ ऐ प्रश्नाक्षरोंमें हों, तो ग्रामचर—घोड़ा, गधा, ऊँट आदि मवेशोंकी चिन्ता और ख प्रश्नाक्षरोंमें हों तो वन-चारी पशु—हरिण, खरगोश आदि पशुओंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

अपदयोनिके जलचर और थलचर ये दो भेद हैं—प्रश्नवाक्यमें इ ओ ग ज ड अक्षर हों तो जलचर—मछली, शंख, मकर आदिकी चिन्ता और द ब ल स ये अक्षर हों तो साँप, मेढक आदि थलचर अपदोंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

पादसंकुल योनिके दो भेद हैं—अण्डज और स्वेदज। ई औ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर अण्डज संज्ञक भ्रमर, पतंग इत्यादि एवं ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदज संज्ञक—जूँ, खटमल आदि हैं।

धातुयोनिके भी दो भेद हैं—धाम्य और अधाम्य। त द प ब अं स इन प्रश्नाक्षरोंके होने पर अधाम्य धातु योनि होती है। धाम्ययोनिके आठ भेद हैं—सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, काँसा, लोहा, सीसा, पित्तल। धाम्ययोनिके प्रकारान्तरसे दो भेद हैं—घटित और अघटित। उत्तराक्षर प्रश्नवर्णोंमें रहने पर घटित और अधराक्षर रहने पर अघटित धातुयोनि होती है। घटित धातुयोनिके तीन भेद हैं—जीवाभरण-आभूषण, गृहाभरण-बर्तन और नाणक—सिक्के, नोट आदि। अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हों तो द्विपदाभरण—दो पैरवाले जीवोंके आभूषण होते हैं। इसके तीन भेद हैं—देवताभूषण, पक्षि आभूषण और मनुष्याभूषण। मनुष्याभरणके शिरपाभरण, कर्णाभरण, नासिकाभरण, ग्रीवाभरण, हस्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं। इन आभूषणोंमें मुकुट, खौर, सीसफूल आदि शिरपाभरण; कानोंमें पहने जानेवाले कुण्डल, एरिंग आदि कर्णाभरण; नाकमें पहने जानेवाली लौंग, बाली, नथ आदि नासिकाभरण; कण्ठमें पहने जानेवाली हँसुली, हार, कण्ठी आदि ग्रीवाभरण; हाथोंमें पहने जानेवाले कंकण, अँगूठी, मुदरी, छल्ला, छाप आदि हस्ताभरण; जांघोंमें बाँधे जानेवाले घुघरू, क्षुद्रघण्टिका आदि जघाभरण और पैरोंमें पहने जानेवाले बिछुए, छल्ला, पाजेब आदि पादाभरण होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्नाक्षरोंके होने पर मनुष्याभरणकी चिन्ता एवं ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह प्रश्नाक्षरोंके होनेपर स्त्रियोंके आभूषणोंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

उत्तराक्षरवर्णोंके प्रश्नाक्षर होने पर दक्षिण अंगका आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णोंके होनेपर वाम अंगका आभूषण समझना चाहिए। अ क ख ग घ ङ प्रश्नाक्षरोंके होने पर या प्रश्नवर्णोंमें उक्त प्रश्नाक्षरोंकी बहुलता होनेपर देवोंके उपकरण छत्र, चमर आदि आभूषण और त थ द ध न प फ ब भ म इन प्रश्नवर्णोंके होनेपर पक्षियोंके आभूषणोंकी चिन्ता समझनी चाहिए।

यदि प्रश्नवाक्यका आद्यवर्ण क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन अक्षरोंमें से कोई हो तो हीरा, माणिक्य, मरकत, पद्मराग और मूँगाकी चिन्ता; ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह इन अक्षरोंमें से कोई हो तो हरिताल, शिला, पत्थर, आदिकी चिन्ता एवं उ ऊ अं अः स्वरोंसे युक्त व्यंजन प्रश्नके आदिमें हो तो शर्करा, लवण, बालू आदिकी चिन्ता समझनी चाहिए। यदि प्रश्नवाक्यके आदिमें अ इ ए ओ इन चार मात्राओंमें से कोई हो तो हीरा, मोती, माणिक्य आदि जवाहरातकी चिन्ता; आ ई ऐ औ इन मात्राओंमें से कोई हो तो शिला, पत्थर, सीमेन्ट, चूना, संगमरमर आदिकी चिन्ता एवं उ ऊ अं अः इन मात्राओंमें से कोई मात्रा हो तो चीनी, बालू आदिकी चिन्ता कहनी चाहिए। मुष्टिका प्रश्नमें मुट्ठीके अन्दर भी इन्हीं प्रश्नविचारोंके अनुसार योनिका निर्णयकर वस्तु बतलानी चाहिए।

मूलयोनिके चार भेद हैं—वृक्ष, गुल्म, लता और वल्ली। यदि प्रश्नवाक्यके आद्यवर्णकी मात्रा आ हो तो वृक्ष, ई हो तो गुल्म, ऐ हो तो लता और औ हो तो वल्ली समझनी चाहिए। पुनः मूलयोनिके चार भेद हैं—वल्कल, पत्ते, पुष्प और फल। प्रश्नवाक्यके आदिमें क च ट त वर्णोंके होने पर फलकी चिन्ता करनी चाहिए।

जीव योनिसे मानसिक चिन्ता और मुष्टिगत प्रश्नोंके उत्तरोंके साथ चोरकी जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एवं बालक आदिका पता लगाया जा सकता है। धातु योनिमें चोरी गई वस्तुका स्वरूप और नाम बताया जा सकता है। धातु योनिके विश्लेषणसे कहा जा सकता है कि अमुक प्रकारकी वस्तु चोरी गई है या नष्ट हुई है। इन योनियोंके विचार द्वारा किसी भी व्यक्तिकी मनःस्थिति का सहजमें पता लगाया जा सकता है। प्रश्नशास्त्रका विवेचन करनेवाले व्यक्तिको उपर्युक्त सभी प्रश्न संज्ञाओंका परिज्ञान रहना चाहिए।

लाभालाभ सम्बन्धी प्रश्नोंका विचार करते हुए कहा है कि प्रश्नाक्षरोंमें आलिङ्गित अ इ ए ओ मात्राओंके होनेपर शीघ्र अधिक लाभ, अभिधूमित आ ई ऐ औ मात्राओंके होने पर अल्प लाभ एवं दग्ध

उ ऊ अं अः मात्राओंके होनेपर अलाभ एवं हानि होती है। उ ऊ अं अः इन चार मात्राओंसे संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब भ य ल श स ये प्रश्नाक्षर हों तो बहुत लाभ होता है। आ ई ऐ औ मात्राओंसे संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब भ य ल श स इन प्रश्नाक्षरोंके होनेपर अल्प लाभ होता है। अ आ इ ए ओ मात्राओंसे संयुक्त उपर्युक्त प्रश्नाक्षरोंके होनेपर जीवलाभ और रुपया, पैसा, सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य आदिका लाभ होता है। ई ए औ ङ ञ ण न म ल र प प्रश्नाक्षर हों तो लकड़ी, वृक्ष, कुर्सी, टेबुल, पलंग आदि वस्तुओंका लाभ होता है।

शुभाशुभ प्रकरणमें प्रधानतया रोगीके स्वास्थ्य लाभ एवं उसकी आयुका विचार किया जाता है। प्रश्नवाक्यमें आद्यवर्ण आलिङ्गित मात्रासे युक्त हों तो रोगीका रोग यत्नसाध्य, अभिधूमित मात्रासे युक्त हो तो कष्ट साध्य और दग्ध मात्रासे संयुक्त संयुक्ताक्षर हों तो मृत्यु फल समझना चाहिए। पृच्छकके प्रश्नाक्षरों में आद्यवर्ण आ ई ऐ औ मात्राओंसे युक्त संयुक्ताक्षर हो तो पृच्छक जिसके सम्बन्धमें पूछता है उसकी दीर्घायु होती है। आ ई ऐ औ इन मात्राओंसे युक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब भ य ल श स वर्णों में से कोई भी वर्ण प्रश्नवाक्यका आद्याक्षर हो तो लम्बी बीमारी भोगनेके बाद रोगी स्वास्थ्यलाभ करता है।

पृच्छकसे किसी फलका नाम पूछना तथा कोई एक अंक संख्या पूछनेके पश्चात् अंकसंख्याको द्विगुणा कर फल और नामके अक्षरोंकी संख्या जोड़ देनी चाहिए। जोड़नेके पश्चात् जो योग आवे, उसमें १३ जोड़कर ९ का भाग देना चाहिए। १ शेषमें धनवृद्धि, २ में धनक्षय, ३ में आरोग्य, ४ में व्याधि, ५ में स्त्री लाभ, ६ में बन्धु नाश, ७ में कार्यसिद्धि, ८ में मरण और ९ शेषमें राज्यप्राप्ति होती है।

कार्यसिद्धि-असिद्धिका प्रश्न होनेपर पृच्छकका मुख जिस दिशामें हो उस दिशाकी अंकसंख्या (पूर्व १, पश्चिम २, उत्तर ३, दक्षिण ४,) प्रहर संख्या (जिस प्रहरमें प्रश्न किया गया है, उसकी संख्या प्रातःकाल सूर्योदयसे तीन घंटेतक प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टेपर एक-एक प्रहरकी गणना करनी चाहिए), वार संख्या (रविवार १, सोम २, मङ्गल ३, बुध ४, बृहस्पति ५, शुक्र ६, शनि ७। और नक्षत्र संख्या (अश्विनी १, भरणी २, कृत्तिका ३ इत्यादि गणना) को जोड़कर योगफलमें आठका भाग देना चाहिए। एक अथवा पाँच शेष रहे तो शीघ्र कार्यसिद्धि, छः अथवा चार शेषमें तीन दिनमें कार्यसिद्धि, तीन अथवा सात शेषमें विलम्बसे कार्यसिद्धि एवं एक अथवा आठ शेषमें कार्य असिद्धि होती है। हँसते हुए प्रश्न करनेसे कार्य सिद्ध होता है और उदासीनरूपसे प्रश्न करने पर कार्य असिद्ध रहता है। पृच्छक से एकसे लेकर एकसौ आठ अंकके बीचकी एक अंक संख्या पूछनी चाहिए। इस अंक संख्यामें १२ का भाग देने पर १।७।९ शेषमें विलम्बसे कार्य सिद्धि; ८।४।१०।५ शेषमें कार्य नाश एवं २।६।११।० शेषमें शीघ्र कार्यसिद्धि होती है। पृच्छकसे किसी फलका नाम पूछकर उसकी स्वर संख्याको व्यञ्जन संख्यासे गुणा कर दे; गुणनफलमें पृच्छकके नामके अक्षरोंकी संख्या जोड़कर योगफलमें ९ का भाग दे। एक शेषमें शीघ्र कार्य सिद्धि; ३।५।० में विलम्बसे कार्यसिद्धि और ४।६।८ शेष में कार्यनाश तथा अवशिष्ट शेषमें कार्य मन्दगतिसे होता है पृच्छकके नामके अक्षरोंको दोसे गुणाकर गुणनफलमें ७ जोड़ दे। उस योगमें ३ का भाग देने पर सम शेषमें कार्यनाश और विषम शेषमें कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

पृच्छकके तिथि, वार, नक्षत्र संख्यामें गर्भिणीके नाम अक्षरोंको जोड़कर सातका भाग देनेमें एकाधिक शेषमें रविवार आदि होते हैं। रवि, भौम और गुरुवारमें पुत्र तथा सोम बुध और शुक्रवारमें कन्या उत्पन्न होती है। शनिवार उपद्रवकारक है।

इस प्रकार अष्टाङ्ग निमित्तका विचार हमारे देशमें प्राचीन कालसे होता आ रहा है। इस निमित्त ज्ञान द्वारा वर्षण, अवर्षण, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष, सुख, दुःख, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि बातोंका पहले से ही पता लगाकर व्यक्ति अपने लौकिक और पारलौकिक जीवनमें सफलता प्राप्त कर लेता है।

अष्टाङ्ग निमित्त और ग्रीस तथा रोमके सिद्धान्त

जैनाचार्योंने अष्टाङ्ग निमित्तका विकास स्वतन्त्र रूपसे किया है। इनकी विचारधारा पर ग्रीस या रोमका प्रभाव नहीं है। ज्योतिषकरण्डकमें (ई० पू० ३००-३५०) लग्नका जो निरूपण किया गया है, उससे इस बातपर प्रकाश पड़ता है कि जैनाचार्योंके ग्रीक सम्पर्कके पहले ही अष्टाङ्ग निमित्तका प्रतिपादन हुआ था। बताया गया है—

> लग्गं च दक्खिणायविसुवे सुवि अस्स उत्तरं अयणे।
> लग्गं साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे॥

इस पद्यमें अस्स यानी अश्विनी और साई अर्थात् स्वाति ये विषुवके लग्न बताये गये हैं। ज्योतिष-करण्डकमें विशेष अवस्थाके नक्षत्रोंको भी लग्न कहा है। यवनोंके आगमनके पूर्व भारतमें यही जैन लग्नप्रणाली प्रचलित थी। प्राचीन भारतमें विशिष्ट अवस्थाकी राशिके समान विशिष्ट अवस्थाके नक्षत्रोंको भी लग्न कहा जाता था। ज्योतिषकरण्डकमें व्यतीपात आनयन की जिस प्रक्रियाका वर्णन है वह इस बातकी साक्षी है कि ग्रीक सम्पर्कसे पूर्व ज्योतिषका प्रचार राशि, ग्रह, लग्न आदिके रूपमें भारतमें वर्तमान था। कहा गया है—

> अयणाणं संबंधे रविसोमाणं तु वे हि य जुगम्मि।
> जं हवइ भागलद्धं वइहया तत्तिया होन्ति॥
> वावत्तपरीयमाणे फलरासी इच्छितेउ जुगभे ए।
> इच्छियवइवायंपि य इदं आऊण आणे हि॥[1]

इन गाथाओंकी व्याख्या करते हुए मलयगिरिने लिखा है—"इह सूर्यचन्द्रमसौ स्वकीयेऽयने वर्तमानौ यत्र परस्परं व्यतिपततः स कालो व्यतिपातः, तत्र रविसमयोः युगे युगमध्ये यानि अयनानि तेषां परस्पर सम्बन्धे एकत्र मेलने कृते द्वाभ्यां भागो ह्रियते। हृते च भागे यद् भवति भागलब्धं तावन्तः तावत्प्रमाणाः युगे व्यतिपाताः भवन्ति।"

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टरने लिखा है—"आठवीं शतीमें अरब विद्वानोंने भारतसे ज्योतिषविद्या सीखी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तोंका 'सिंद हिंद' के नामसे अरबीमें अनुवाद किया।"[2] अरबी भाषामें लिखी गयी "आइन-उल अबा फितल कालुली अतूबा" नामक पुस्तकमें लिखा है कि "भारतीय विद्वानोंने अरबके अन्तर्गत बगदादकी राजसभामें आकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रोंकी शिक्षा दी थी। कर्क नामके एक विद्वान् शक संवत् ६९४ में बादशाह अलमसूरके दरबारमें ज्योतिष और चिकित्साके ज्ञानदानके निमित्त गये थे"।[3]

मैक्समूलरने लिखा है कि "भारतीयोंको आकाशका रहस्य जाननेकी भावना विदेशीय प्रभाववश उद्भूत नहीं हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूपसे उत्पन्न हुई है।[4] अतएव स्पष्ट है कि अष्टाङ्ग निमित्त ज्ञानमें फलित ज्योतिषकी प्रायः सभी बातें परिगणित हैं। अष्टांग निमित्तने फलित सिद्धान्तोंको विकसित और पल्लवित किया है। भारतमें इसका प्रचार ई० सन्से पूर्वकी शताब्दियोंमें ही हो चुका था। फ्रान्सीसी पर्यटक फ्रान्सीस बर्नियर भी इस बातका समर्थन करता है कि भारतमें इस विद्याका विकास स्वतन्त्ररूपसे हुआ है।

यह सत्य है कि अष्टांगनिमित्त विद्या भारतमें जन्मी, विकसित हुई और समृद्धिशाली हुई; पर ज्ञानकी धारा सभी देशोंमें प्रवाहित होती है। अतः ईस्वी सन्की आरम्भिक शताब्दियोंमें ग्रीस और

१. देखें—ज्योतिषकरण्डक पृ० २००–२०५। २. हंटर इण्डियनगैजेटियर-इंडिया पृ० २१७। ३. ज्योतिष रत्नाकर प्रथम भाग भूमिका; ४. Vol. XIII Lecture in objections PP 130

रोममें भी निमित्तका विचार किया जाता था। यहाँ ग्रीस और रोमका निमित्त विचार तुलनाके लिए उद्धृत किया जायगा।

ग्रीस-इतिहासमें ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिनमें बताया गया है कि भूकम्प और ग्रहण पेलोपोनेसियन लड़ाईके पहले हुए थे। इसके सिवा एक्सरसेस ग्रीससे होकर अपनी सेना ले जा रहा था, तब उसे हारका अनागत कथन पहलेसे ही ज्ञात हो गया था। ग्रीक लोगोंमें विचित्र बातोंको यथा घोड़ीसे खरगोशका जन्म होना, स्त्रीको साँपके बच्चेका जन्म होना, मुरझाये फूलोंका सम्मुख आना, विभिन्न प्रकारके पक्षियोंके शब्दोंका सुनना तथा उनका दिशा परिवर्तन कर दायें या बायें आना प्रभृति बातें युद्धमें पराजयकी सूचक मानी जाती थीं। इस साहित्यमें शकुन और अपशकुनके सम्बन्धमें सुन्दर रचनाएँ हैं। फलित ज्योतिषके अंग राशि और ग्रहोंके बारेमें ग्रीकोंने आजसे कमसे कम दो हजार वर्ष पहले पर्याप्त विचार किया था। भारतवर्षमें जब अष्टाङ्ग निमित्तका विचार आरम्भ हुआ, ग्रीसमें भी स्वप्न, प्रश्न, दिक्शुद्धि, कालशुद्धि और देशशुद्धि पर विचार किया जाता था। इनके साहित्यमें सन्ध्या, उषा तथा आकाशमण्डलके विभिन्न परिवर्तनसे घटित होनेवाली घटनाओंका जिक्र किया गया है।

ग्रीकोंका प्रभाव रोमन सभ्यतापर भी पूरा पड़ा। इन्होंने भी अपने शकुन शास्त्रमें ग्रीकोंकी तरह प्रकृति परिवर्तन, विशिष्ट विशिष्ट ताराओंका उदय, ताराओंका टूटना, चन्द्रमाका परिवर्तित अस्वाभाविक रूपका दिखलाई पड़ना, ताराओंका लालवर्णका होकर सूर्यके चारों ओर एकत्र हो जाना, आगकी बड़ी-बड़ी चिनगारियोंका आकाशमें फैल जाना, इत्यादि विचित्र बातोंको देशके लिए हानिकारक बतलाया है। रोमके लोगोंने जितना ग्रीस से सीखा, उससे कहीं अधिक भारतवर्षसे।

वराहमिहिरकी पञ्चसिद्धान्तिकामें रोम और पौलस्त्य नामके सिद्धान्त आये हैं, जिनसे पता चलता है कि भारतवर्षमें भी रोम सिद्धान्तका प्रचार था। रोमके कई छात्र भारतवर्षमें आये और वर्षों यहाँके आचार्योंके पास रहकर निमित्त और ज्योतिषका अध्ययन करते रहे। वराहमिहिरके समयमें भारतमें अष्टांग-निमित्तका अधिक प्रचार था। ज्योतिषका उद्देश्य जीवनके समस्त आवश्यक विषयोंका विवेचन करना था। अतः अध्ययनार्थ आये हुए विदेशी विद्वान् छात्र अष्टांगनिमित्त और संहिताशास्त्रका अध्ययन करते थे। उस युगमें संहितामें आयुर्वेदका भी अन्तर्भाव होता था, राजनीतिके युद्ध सम्बन्धी दाव-पेंच भी इसी शास्त्रके अन्तर्गत थे। अतः रोममें निमित्तोंका प्रचार विशेष रूपसे हुआ। गणित प्रक्रियाके बिना केवल प्रकृति परिवर्तन या आकाशकी स्थितिके अवलोकनसे ही फल निरूपण रोममें हुआ है। शकुन और अपशकुनका विषय भी इसीके अन्तर्गत आता है। रोमके इतिहासमें ऐसी अनेक घटनाओंका निरूपण है जिनसे सिद्ध होता है कि वहाँ शकुन और अपशकुनका फल राष्ट्रको भोगना पड़ा था।

इस प्रकार ग्रीस, रोम आदि देशोंमें भारतके समान ही निमित्तोंका विचार होता था। इन दोनों देशोंके ज्योतिष सिद्धान्त निमित्तों पर आश्रित थे। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय एवं यात्राके शकुनोंके सम्बन्धमें वैसा ही लिखा मिलता है, जैसा हमारे यहाँ है। प्राकृतिक और शारीरिक दोनों प्रकारके अरिष्टोंका विवेचन ग्रीस और रोम सिद्धान्तोंमें मिलता है। पञ्चसिद्धान्तिकामें जो रोमक सिद्धान्त उपलब्ध है, उससे ग्रहगणितकी मान्यताओं पर भी प्रकाश पड़ता है।

भद्रबाहु संहिताका वर्ण्य विषय

अष्टांग निमित्तोंका इस एक ही ग्रन्थमें वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ द्वादशांग वाणीके वेत्ता श्रुतकेवली भद्रबाहुके नामपर रचित है। इस ग्रन्थके प्रारम्भमें बतलाया गया है कि प्राचीन कालमें मगध देशमें नाना प्रकारके वैभवसे युक्त राजगृह नामका सुन्दर नगर था। इस नगरमें राजगुणोंसे परिपूर्ण, नाना गुणसम्पन्न सेनजित (प्रसेनजित सम्भवतः बिम्बसारका पिता) नामका राजा राज्य करता था। इस नगरके बाहरी भागमें नाना प्रकारके वृक्षोंसे युक्त पाण्डुगिरि नामका पर्वत था। इस पर्वतके वृक्ष फल-फूलोंसे

युक्त समृद्धिशाली थे तथा इन पर पक्षिगण सर्वथा मनोरम कलरव किया करते थे। एक समय श्रीभद्रबाहु आचार्य इसी पाण्डुगिरिपर एक वृक्षके नीचे अनेक शिष्य प्रशिष्योंसे युक्त स्थित थे, राजा सेनजितने नम्रीभूत होकर आचार्यसे प्रश्न किया—

पार्थिवानां हितार्थाय भिक्षूणां हितकाम्यया।
श्रावकाणां हितार्थाय दिव्यं ज्ञानं ब्रवीहि नः॥
शुभाशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः।
विजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं याति महीं सदा॥
राजभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः।
विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजाभियोजिताः॥
सुखग्राह्यं लघुग्रन्थं स्पष्टं शिष्यहितावहम्।
सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि नः॥

इस ग्रन्थमें उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भलक्षण, यात्रा, उत्पात, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, इन्द्रसम्पदा, लक्षण, व्यञ्जन, चिह्न, लग्न, विद्या, औषध प्रभृति सभी निमित्तोंके बलाबल, विरोध और पराजय आदि विषयोंके निरूपण करनेकी प्रतिज्ञा की है। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थमें जितने अध्याय प्राप्त हैं, उनमें मुहूर्त तक ही वर्णन मिलता है। अवशेष विषयोंका प्रतिपादन २७ वें अध्यायसे आगे आनेवाले अध्यायोंमें हुआ होगा।

श्रद्धेय पं० जुगलकिशोरजी मुख्तार द्वारा लिखित ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भागसे ज्ञात होता है कि इस ग्रन्थमें पाँच खण्ड और बारह हजार श्लोक हैं। बताया गया है—

प्रथमो व्यवहाराख्यो ज्योतिराख्यो द्वितीयकः।
तृतीयोऽपि निमित्ताख्यश्चतुर्थोऽपि शरीरजः॥१॥
पञ्चमोऽपि स्वराख्यश्च पञ्चखण्डैरियं मता।
द्वादशसहस्रं प्रमिता संहितेयं जिनोदिता॥२॥

व्यवहार, ज्योतिष, निमित्त, शरीर एवं स्वर ये पाँच खण्ड भद्रबाहु संहितामें हैं। इस ग्रन्थमें एक विलक्षण बात यह है कि पाँच खण्डोंके होनेपर दूसरे खण्डको मध्यम और तीसरे खण्डको उत्तर खण्ड कहा गया है।

इस संस्करणमें हम केवल २७ अध्याय ही दे रहे हैं। ३०वाँ अध्याय परिशिष्ट रूपसे दिया जा रहा है। अतः २७ अध्यायोंके वर्ण्य विषय पर विचार करना आवश्यक है।

प्रथम अध्याय में ग्रन्थके वर्ण्य विषयोंकी तालिका प्रस्तुत की गयी है। आरम्भमें बताया गया है कि यह देश कृषिप्रधान है, अत कृषिकी जानकारी—किस वर्ष किस प्रकारकी फसल होगी प्राप्त करना श्रावक और मुनि दोनोंके लिए आवश्यक था। यद्यपि मुनिका कार्य ज्ञान-ध्यानमें रत रहना है, पर आहार आदि क्रियाओंको सम्पन्न करनेके लिए उन्हें श्रावकोंके अधीन रहना पड़ता था, अतः सुभिक्ष, दुर्भिक्षकी जानकारी प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक है। निमित्तशास्त्रका ज्ञान ऐहिक जीवनके व्यवहारको चलानेके लिए आवश्यक है। अतः इस अध्यायमें निमित्तोंके वर्णन करने की प्रतिज्ञा की गई है और वर्ण्य विषयोंकी तालिका दी गई है।

द्वितीय अध्यायमें उल्का-निमित्तका वर्णन किया गया है। बताया गया है कि प्रकृतिका अन्यथा भाव विकार कहा जाता है; इस विकारको देखकर शुभाशुभके सम्बन्धमें जान लेना चाहिए। रातको जो तारे टूटकर गिरते हुए ज्ञात पड़ते हैं, वे उल्काएँ हैं। इस ग्रन्थमें उल्काके धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा ये पाँच भेद हैं। उल्का फल १५ दिनोंमें, धिष्ण्या और अशनिका ४५ दिनोंमें एवं तारा

और विद्युत्का छः दिनोंमें प्राप्त होता है। ताराका जितना प्रमाण है, उससे लम्बाईमें दूना धिष्ण्याका है। विद्युत् नामवाली उल्का बड़ी कुटिल—टेढ़ी-मेढ़ी और शीघ्रगामिनी होती है। अशनि नामकी उल्का चक्राकार होती है, पौरुषी नामकी उल्का स्वभावतः लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है। ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंसके समान दिखाई पड़नेवाली उल्का शुभ मानी जाती है। श्रीवत्स, वज्र, शंख और स्वस्तिकरूप प्रकाशित होनेवाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। जिन उल्काओंके सिरका भाग मकरके समान और पूँछ गायके समान हो, वे उल्काएँ अनिष्ट सूचक तथा संसारके लिए भयप्रद होती हैं। इस अध्यायमें संक्षेपमें उल्काओंकी बनावट, रूप-रंग आदिके आधारपर फलादेशका वर्णन किया है।

तृतीय अध्यायमें—६१ श्लोक हैं, इसमें विस्तारपूर्वक उल्कापातका फलादेश बताया गया है। ७ से ११ श्लोकोंमें उल्काओंके आकार-प्रकारका विवेचन है। १६ वें श्लोकसे १८ श्लोकतक वर्णके अनुसार उल्काका फलादेश वर्णित है। बताया गया है कि अग्निकी प्रभावाली उल्का अग्निमय, मंजिष्ठके समान रंगवाली उल्का व्याधि और कृष्णवर्णकी उल्का दुर्भिक्षकी सूचना देती है। १९ वें श्लोकसे २१ वें श्लोक तक दिशाके अनुसार उल्काका फलादेश बतलाया गया है। अवशेष श्लोकोंमें विभिन्न दृष्टिकोणोंसे उल्काका फलादेश वर्णित है। सुभिक्ष, दुर्भिक्ष, जय, पराजय, हानि, लाभ, जीवन, मरण, सुख, दुःख आदि बातोंकी जानकारी उल्का निमित्तसे की जा सकती है। पापरूप उल्काएँ और पुण्यरूप उल्काएँ अपने-अपने स्वभाव-गुणानुसार इष्टानिष्टकी सूचना देती हैं। उल्काओंकी विशेष पहचान भी इस अध्यायमें बतलायी गयी है।

चौथे अध्यायमें परिवेष—का वर्णन किया गया है। परिवेष दो प्रकारके होते हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त। इस अध्यायमें ३१ श्लोक हैं। आरम्भिक श्लोकोंमें परिवेष होनेके कारण, परिवेषका स्वरूप और आकृतिका वर्णन है। वर्षा ऋतुमें सूर्य या चन्द्रमाके चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकारमें एक मण्डल सा बनता है, यही परिवेष कहलाता है। चाँदी या कबूतरके रंगके समान आभा वाला चन्द्रमाका परिवेष हो तो जलकी वर्षा, इन्द्रधनुषके समान वर्णवाला परिवेष हो तो संग्राम या विग्रह की सूचना, काले और नीले वर्णका चक्र परिवेष हो तो वर्षाकी सूचना, पीत वर्णका परिवेष हो तो व्याधिकी सूचना एवं भस्मके समान आकृति और रंगका चन्द्र परिवेष हो तो किसी महाभयकी सूचना समझनी चाहिए। उदयकालीन चन्द्रमाके चारों ओर सुन्दर परिवेष हो तो वर्षा तथा उदयकालमें चन्द्रमाके चारों ओर रूक्ष और श्वेत वर्णका परिवेष हो तो चोरोंके उपद्रवकी सूचना देता है। सूर्यका परिवेष साधारणतः अशुभ होता है और आधि-व्याधिको सूचित करता है। जो परिवेष नीलकंठ, मोर, रजत, दुग्ध और जलकी आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मंगल करने वाला होता है। जो परिवेष समस्त आकाशमें गमन करे, अनेक प्रकारकी आभा वाला हो, रुधिरके समान लाल हो, रूखा और खण्डित हो तथा धनुष और शृंगाटकके समान हो तो वह पापकारी भयप्रद और रोग सूचक होता है। चन्द्रमाके परिवेषसे प्रायः वर्षा आताप का विचार किया जाता है और सूर्यके परिवेष से महत्त्वपूर्ण घटित होनेवाली घटनाएँ सूचित होती हैं।

पाँचवें अध्यायमें विद्युत्—का वर्णन किया है। इस अध्यायमें २५ श्लोक हैं। आरम्भमें सौदामिनी और बिजलीके स्वरूपोंका कथन किया गया है। बिजली-निमित्तोंका प्रधान उद्देश्य वर्षाके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त करना है। यह निमित्त फसलके भविष्यको अवगत करनेके लिए भी उपयोगी है। बताया गया है कि जब आकाशमें घने बादल छाये हों, उस समय पूर्व दिशामें बिजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयतः वर्षा होती है और यह फल दूसरे ही दिन प्राप्त होता है। ऋतु, दिशा, मास और दिन या रातमें बिजलीके चमकनेका फलादेश इस अध्यायमें बताया गया है। विद्युत्के रूप, और मार्गका विवेचन भी इस अध्यायमें है तथा इसी विवेचनके आधार पर फलादेशका वर्णन किया गया है।

छठवें अध्यायमें अभ्रलक्षण—का निरूपण है। इसमें ३१ श्लोक हैं, आरम्भमें मेघोंके स्वरूपका कथन है। इस अध्यायका प्रधान उद्देश्य भी वर्षाके सम्बन्धमें जानकारी उपस्थित करना है। आकाशमें विभिन्न आकृति और विभिन्न वर्णोंके मेघ छाये रहते हैं। तिथि, मास, ऋतुके अनुसार विभिन्न आकृतिके मेघोंका फलादेश बतलाया गया है। वर्षाकी सूचनाके अलावा मेघ अपनी आकृति और वर्णके अनुसार राजाके जय, पराजय, युद्ध, सन्धि, विग्रह आदिकी भी सूचना देते हैं। इस अध्यायमें मेघोंकी चाल-ढालका वर्णन है, इससे भविष्यत्कालकी अनेक बातोंकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मेघोंकी गर्जन-तर्जन ध्वनिके परिज्ञानसे अनेक प्रकारकी बातोंकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सातवाँ अध्याय सन्ध्या लक्षण—है। इसमें २६ श्लोक हैं। इस अध्यायमें प्रातः और सायं सन्ध्याका लक्षण विशेष रूपसे बतलाया गया है तथा इन सन्ध्याओंका रूप आकृति और समयके अनुसार फलादेश बतलाया गया है। प्रतिदिन सूर्यके अर्धास्त हो जानेके समयसे जबतक आकाशमें नक्षत्र भली-भाँति दिखलायी न दें तबतक सन्ध्याकाल रहता है; इसी प्रकार अर्धोदित सूर्यसे पहले तारा दर्शनतक उदय सन्ध्याकाल माना जाता है। सूर्योदयके समयकी सन्ध्या यदि श्वेतवर्णकी हो और वह उत्तर दिशामें स्थित हो तो ब्राह्मणोंको भय देनेवाली होती है। सूर्योदयके समय लालवर्णकी सन्ध्या क्षत्रियोंको, पीतवर्णकी सन्ध्या वैश्योंको और कृष्णवर्णकी सन्ध्या शूद्रोंको जय देती है। सन्ध्याका फल दिशाओंके अनुसार भी कहा गया है। अस्तकालकी सन्ध्याकी अपेक्षा उदयकालकी सन्ध्या अधिक महत्त्व रखती है। उदयकाल नानाप्रकारकी भावी घटनाओंकी सूचना देता है। प्रस्तुत अध्यायमें उदयकालीन सन्ध्याका विस्तृत फलादेश बतलाया गया है। सन्ध्याके स्पर्श और रंगको पहचाननेके लिए कुछ दिन अभ्यास आवश्यक है।

आठवें अध्यायमें मेघोंका लक्षण—बतलाया गया है। इसमें २७ श्लोक हैं। इस अध्यायमें मेघोंकी आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा एवं गर्जन-ध्वनिके अनुसार फलादेशका वर्णन है। बताया गया है कि शरद्ऋतुके मेघोंसे अनेक प्रकारके शुभाशुभ फलकी सूचना, ग्रीष्मऋतुके मेघोंसे वर्षाकी सूचना एवं वर्षाऋतुके मेघोंसे केवल वर्षाकी सूचना मिलती है। मेघोंकी गर्जनाको मेघोंकी भाषा कहा गया है। मेघोंकी भाषासे वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवनकी अनेक महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञातकी जा सकती हैं। पशु, पक्षी और मनुष्योंकी बोलीके समान मेघोंकी भाषा—गर्जना भी अनेक प्रकारकी होती है। जब मेघ सिंहके समान गर्जना करें तो राष्ट्रमें विप्लव, मृगके समान गर्जना करें तो शस्यवृद्धि एवं हाथीके समान गर्जना करें तो राष्ट्रके सम्मानकी वृद्धि होती है। जनतामें भयका संचार, राष्ट्रकी आर्थिक क्षति एवं राष्ट्रमें नानाप्रकारकी व्याधियाँ उस समय उत्पन्न होती हैं, जब मेघ पक्षियोंके समान गर्जना करते हों। खरगोश, सियार और बिल्लीके समान मेघोंकी गर्जना अशुभ मानी गई है। नारियोंके समान कोमल और मधुर गर्जना कलाकी उन्नति एवं देशकी समृद्धिमें विशेष सहायक होती है। रोते हुए मनुष्यकी ध्वनिके समान जब मेघ गर्जना करें तो निश्चयतः महामारीकी सूचना समझनी चाहिए। मधुर और कोमल गर्जना शुभ-फलदायक माना जाता है।

नौवें अध्यायमें वायुका वर्णन है। इस अध्यायमें ६५ श्लोक हैं। इस अध्यायके आरम्भमें वायुकी विशेषता, उपयोगिता एवं स्वरूपका कथन किया गया है। वायुके परिज्ञान द्वारा भावी शुभाशुभ फलका विचार किया गया है। इसके लिए तीन तिथियाँ विशेष महत्त्वकी मानी गयी हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा, आषाढ़ी प्रतिपदा और आषाढ़ी पूर्णिमा। इन तीन तिथियोंमें वायुके परीक्षण द्वारा वर्षा, कृषि, वाणिज्य, रोग आदिकी जानकारी प्राप्तकी जाती है। आषाढ़ी प्रतिपदाके दिन सूर्यास्तके समयमें पूर्व दिशामें वायु चले तो आश्विन महीनेमें अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकारके वायुसे श्रावण मासमें भी अच्छी वर्षा होनेकी सूचना समझनी चाहिए। रात्रिके समय जब आकाशमें मेघ छाये हों और धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व दिशामें वायु चले तो भाद्रपद मासमें अच्छी वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। श्रावण मासमें पश्चिमोत्तर हवा, भाद्रपद मासमें पूर्वीय और आश्विनमें ईशान कोणकी हवा चले तो अच्छी वर्षाका योग समझना चाहिए तथा फसल भी उत्तम होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमाको निरभ्र आकाश रहे और दक्षिण

वायु चले तो उस वर्ष अच्छी वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ पूर्णिमाको प्रातःकाल सूर्योदयके समयमें पूर्वीय वायुके चलनेसे फसल खराब होती है, पश्चिमीयके चलनेसे अच्छी, दक्षिणीयसे दुष्काल और उत्तरीय वायुसे सामान्य फसलकी सूचना समझनी चाहिए।

दशवें अध्यायमें प्रवर्षण का वर्णन है। इस अध्यायमें ५५ श्लोक हैं। इस अध्यायमें विभिन्न निमित्तों द्वारा वर्षाका परिमाण निश्चित किया गया है। वर्षा ऋतुमें प्रथम दिन वर्षा जिस दिन होती है, उसीके फलादेशानुसार समस्त वर्षकी वर्षाका परिमाण ज्ञात किया जा सकता है। अश्विनी, भरणी आदि २७ नक्षत्रोंमें प्रथम वर्षा होनेसे समस्त वर्षमें कुल कितनी वर्षा होगी, इसकी जानकारी भी इस अध्यायमें बतलायी गयी है। प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्रमें हो तो ४१ आढ़क जल, भरणीमें हो तो ११ आढ़क जल, कृत्तिकामें हो तो ५१ आढक, रोहिणीमें हो तो ६१ आढक, मृगशिर नक्षत्रमें हो तो ६१ आढक, आर्द्रामें हो तो ३२ आढक, पुनर्वसुमें ६१ आढक, पुष्यमें हो तो ४२ आढक, आश्लेषामें हो तो ६४ आढ़क, मघामें हो तो १६ द्रोण, पूर्वा फाल्गुनीमें हो तो १६ द्रोण, उत्तराफाल्गुनीमें हो तो ६७ आढक, हस्तमें हो तो २५ आढक, चित्रामें हो तो २२ आढक, स्वातिमें हो तो ३२ आढक, विशाखामें हो तो १६ द्रोण, अनुराधामें हो तो १६ द्रोण, ज्येष्ठामें हो तो १८ आढक और मूलमें हो तो १६ द्रोण जलकी वर्षा होती है। इस अध्यायमें पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण; धनिष्ठा, शतभिषा; पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्रमें वर्षा होनेका फलादेश पहले कहा गया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पूर्वाषाढासे नक्षत्रकी गणना की गयी है।

ग्यारहवें अध्यायमें गन्धर्व नगरका वर्णन किया गया है। इस अध्यायमें ३१ श्लोक हैं। इस अध्यायमें बताया गया है कि सूर्योदयकालमें पूर्व दिशामें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नागरिकोंका वध होता है। सूर्यके अस्तकालमें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो आक्रमणकारियोंके लिए घोर भयकी सूचना समझनी चाहिए। रक्तवर्णका गन्धर्वनगर पूर्व दिशामें दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात, पीतवर्णका दिखलाई पड़े तो मृत्यु तुल्य कष्ट, कृष्णवर्णका दिखलाई पड़े तो मारकाट, श्वेतवर्णका दिखलाई पड़े तो विजय, कपिलवर्णका दिखलाई पड़े तो क्षोभ, मांजिष्ठ वर्णका दिखलाई पड़े तो सेनामें क्षोभ एवं इन्द्रधनुषके वर्णके समान वर्णवाला दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है। गन्धर्वनगर अपनी आकृति, वर्ण, रचनासन्निवेश एवं दिशाओंके अनुसार व्यक्ति, समाज और राष्ट्रके शुभाशुभ भविष्यकी सूचना देते हैं। शुभ्रवर्ण और सौम्य आकृतिके गन्धर्वनगर प्रायः शुभ होते हैं। विकृत आकृतिवाले, कृष्ण और नीलवर्णके गन्धर्वनगर व्यक्ति, राष्ट्र और समाजके लिए अशुभ सूचक हैं। शान्ति, अशान्ति, आन्तरिक उपद्रव एवं राष्ट्रोंके सन्धिविग्रहके सम्बन्धमें भी गन्धर्वनगरोंसे सूचना मिलती है।

बारहवें अध्यायमें ३८ श्लोकोंमें गर्भधारणका वर्णन किया गया है। मेघगर्भकी परीक्षा द्वारा वर्षाका निश्चय किया जाता है। पूर्व दिशाके मेघ जब पश्चिम दिशाकी ओर दौड़ते हैं और पश्चिम दिशाके मेघ पूर्व दिशामें आते हैं, इसी प्रकार चारों दिशाओंमें मेघ पवनके कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघका गर्भकाल जानना चाहिए। जब उत्तर ईशानकोण और पूर्व दिशाकी वायु द्वारा आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहु घेरेदार होता है, उस समय भी मेघोंके गर्भधारणका समय रहता है। मेघोंके गर्भधारणका समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन है। इन्हीं महीनोंमें मेघ गर्भधारण करते हैं। जो व्यक्ति मेघोंके गर्भधारणको पहचान लेता है, वह सरलतापूर्वक वर्षाका समय जान सकता है। यह गणितका सिद्धान्त है कि गर्भधारणके १९५ दिनके उपरान्त वर्षा होती है। अगहनके महीनेमें जिस तिथिको मेघ गर्भ धारण करते हैं, उस तिथिसे ठीक १९५वें दिनमें अवश्य वर्षा होती है। इस अध्यायमें गर्भधारणकी तिथिका परिज्ञान कराया गया है। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं; उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियोंका कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहनके महीनेमें जिस तिथिको मेघ सन्ध्याकी अरुणिमासे अनुरक्त और मण्डलाकार

होते हैं, उसी तिथिको उनकी गर्भधारण क्रिया समझनी चाहिए। इस अध्यायमें गर्भधारणकी परिस्थिति और उस परिस्थितिके अनुसार घटित होनेवाले फलादेशका निरूपण किया गया है।

तेरहवें अध्यायमें यात्राके शकुनोंका वर्णन है। इस अध्यायमें १८६ श्लोक हैं। इसमें प्रधान रूपसे राजाकी विजययात्राका वर्णन है, पर यह विजय यात्रा सर्वसाधारणकी यात्राके रूपमें भी वर्णित है। यात्राके शकुनोंका विचार सर्व साधारणको भी करना चाहिए। सर्वप्रथम यात्राके लिए शुभमुहूर्तका विचार करना चाहिए। ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यञ्जन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तों का विचार यात्राकालमें अवश्य करना चाहिए। यात्रामें तीन प्रकारके निमित्तों—आकाशसे पतित, भूमिपर दिखाई देनेवाले और शरीरसे उत्पन्न चेष्टाओंका विचार करना होता है। सर्वप्रथम पुरोहित तथा हवन क्रिया द्वारा शकुनोंका विचार करना चाहिए। कौआ, मूषक और शूकर आदि पीछे की ओर आते हुए दिखाई पड़ें अथवा बाईं ओर चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो यात्रामें कष्टकी सूचना समझनी चाहिए। ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, आम, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, पपैया, नौला, बँधा हुआ पशु, ऊख, जलपूर्ण कलश, बैल, कन्या, रत्न, मछली, मन्दिर एव पुत्रवती नारी का दर्शन यात्रारम्भमें हो तो यात्रा सफल होती है। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, धोनेके लिए वस्त्र ले जाते हुए धोबी, घृत, मछली, सिंहासन, मुर्गा, ध्वजा, शहद, मेवा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाजपक्षी, पालकी, वेदध्वनि, मांगलिक गायन ये पदार्थ सम्मुख आवें तथा बिना जल—खाली घड़ा लिये कोई व्यक्ति पीछेकी ओर जाता दिखाई पड़े तो यह शकुन अत्युत्तम है। बाँझ स्त्री, चमड़ा, धानका भूसा, पुआल, सूखी लकड़ी, अंगार, हिजड़ा, विष्ठाके लिए पुरुष या स्त्री, तैल, पागलव्यक्ति, जटावाला संन्यासी व्यक्ति, तृण, संन्यासी, तैल मालिश किये बिना स्नानके व्यक्ति, नाक या कान कटा व्यक्ति, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, बिल्लीका लड़ना या रास्ता काटकर निकल जाना, कीचड़, कोयला, राख, दुर्भग व्यक्ति आदि शकुन यात्राके आरम्भमें अशुभ समझे जाते हैं। इन शकुनोंसे यात्रामें नाना प्रकारके कष्ट होते हैं और कार्य भी सफल नहीं होता है। यात्राके समयमें दधि, मछली और जलपूर्ण कलश आना अत्यन्त शुभ माना गया है। इस अध्यायमें यात्राके विभिन्न शकुनोंका विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। यात्रा करनेके पूर्व शुभ शकुन और मुहूर्त का विचार अवश्य करना चाहिए। शुभ समयका प्रभाव यात्रापर अवश्य पड़ता है। अतः दिशाशूलका ध्यान कर शुभ समयमें यात्रा करनी चाहिए।

चौदहवें अध्यायमें उत्पातोंका वर्णन किया गया है। इस अध्यायमें १८२ श्लोक हैं। आरम्भमें बताया गया है कि प्रत्येक जनपदको शुभाशुभकी सूचना उत्पातोंसे मिलती है। प्रकृतिके विपर्ययकार्य होनेको उत्पात कहते हैं। यदि शीतऋतुमें गर्मी पड़े और ग्रीष्मऋतुमें कड़ाकेकी सर्दी पड़े तो उक्त घटनाके नौ या दश महीनेके उपरान्त महान् भय होता है। पशु, पक्षी और मनुष्योंका अपने स्वभाव विपरीत आचरण दिखलायी पड़े अर्थात् पशुओंके पक्षी या मानव सन्तान हो और स्त्रियोंके पशु-पक्षी सन्तान हो तो भय और विपत्तिकी सूचना समझनी चाहिए। देवप्रतिमाओं द्वारा जिन उत्पातोंकी सूचना मिलती है, वे दिव्य उत्पात, नक्षत्र, उल्का, निर्घात, पवन, विद्युत्पात, इन्द्रधनुष आदिके द्वारा जो उत्पात दिखलायी पड़ते हैं, वे अन्तरिक्ष; पार्थिव विकारों द्वारा जो विशेषताएँ दिखलायी पड़ती है, वे भौमोत्पात कहलाते हैं। तीर्थंकर प्रतिमासे पसीना निकलना, प्रतिमाका हँसना, रोना, अपने स्थानसे हटकर दूसरी जगह पहुँच जाना, छत्रभग होना, छत्रका स्वयमेव हिलना, चलना, काँपना आदि उत्पातोंको अत्यधिक अशुभ समझना चाहिए। ये उत्पात, व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इन तीनोंके लिए अशुभ है। इन उत्पातोंसे राष्ट्रमें अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। घरेलू संघर्ष भी इन उत्पातोंके कारण होते हैं। इस अध्यायमें दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीनों प्रकारके उत्पातोंका विस्तृत वर्णन किया गया है।

पन्द्रहवे अध्यायमें शुक्राचार्यका वर्णन है। इसमें २३० श्लोक हैं। इसमें शुक्रके गमन, उदय, अस्त, वक्री, मार्गी आदिके द्वारा भूत भविष्यत्का फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय,

रोग, धन, सम्पत्ति, आदि फलोंका विवेचन किया गया है। शुक्रके छहो मण्डलोंमें भ्रमण करनेके फलका कथन किया है। शुक्रका नागवीथि; गजवीथि, ऐरावतवीथि, वृषवीथि, गोवीथि, जरद्गववीथि, अजवीथि, मृगवीथि और वैश्वानरवीथिमें भ्रमण करनेका फलादेश बताया गया है। दक्षिण, उत्तर, पश्चिम और पूर्व दिशाकी ओरसे शुक्रके उदय होनेका तथा अस्त होनेका फलादेश कहा गया है। अश्विनी, भरणी आदि नक्षत्रोंमें शुक्रके अस्तोदयका फल भी विस्तार पूर्वक बताया गया है। शुक्रकी आरूढ़, दीप्त, अस्तंगत आदि अवस्थाओंका विवेचन भी किया गया है। शुक्रके प्रतिलोम, अनुलोम, उदयास्त, प्रवास आदिका प्रतिपादन भी किया गया है। इस अध्यायमें गणित क्रियाके विना केवल शुक्रके उदयास्तको देखनेसे ही राष्ट्रका शुभाशुभ ज्ञान किया जा सकता है।

सोलहवें अध्यायमें शनिचारका कथन है। इसमें ३२ श्लोक हैं। शनिके उदय, अस्त, आरूढ़, छन्न, दीप्त आदि अवस्थाओंका कथन किया गया है। कहा गया है कि श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें शनि स्थित हो, तो पृथ्वीपर जलकी वर्षा होती है, सुभिक्ष, समर्घता-वस्तुओंके भावोंमें समता और प्रजाका विकास होता है। अश्विनी नक्षत्रमें शनिके विचरण करनेसे अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियोंको हानि उठानी पड़ती है। शनि और चन्द्रमाके परस्पर वेध, परिवेष आदिका वर्णन भी इस अध्यायमें है। शनिके वक्री और मार्गी होनेका फलादेश भी इस अध्यायमें कहा गया है।

सत्रहवें अध्यायमें गुरुके वर्ण, गति, आधार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदिका फलादेश वर्णित है। इस अध्यायमें ४६ श्लोक हैं। बृहस्पतिका कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रोंमें उत्तर मार्ग; उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा इन नौ नक्षत्रोंमें मध्यम मार्ग एवं उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रोंमें दक्षिण मार्ग होता है। इन मार्गोंका फलादेश इस अध्यायमें विस्तारपूर्वक निरूपित है। संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर इन पाँचों संवत्सरोंके नक्षत्रोंका वर्णन फलादेशके साथ किया गया है। गुरुकी विभिन्न दशाओंका फलादेश भी बतलाया गया है।

अठारहवें अध्यायमे बुधके अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग आदिका विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस अध्यायमें ३७ श्लोक हैं। बुध की सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और माया इन सात प्रकारकी गतियोंका वर्णन किया गया है। बुधकी सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं। शेष सभी गतियाँ पाप गतियाँ हैं। यदि बुध समानरूपसे गमन करता हुआ शकटवाहकके द्वारा स्वाभाविक गतिसे नक्षत्रका लाभ करे तो यह बुधका नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करनेसे भय होता है। बुधकी चारों दिशाओंकी वीथियोंका भी वर्णन किया गया है। विभिन्न ग्रहोंके साथ बुधका फलादेश बताया गया है।

उन्नीसवें अध्यायमें ३६ श्लोक हैं। इसमें मंगलके चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्रका विवेचन किया गया है। मंगलका चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीनेका होता है। वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित , धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायीं ओर गमन करने वाला मंगल सदा अशुभ होता है। मंगलके पाँच प्रकारके वक्र बताये गये हैं—उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर। ये पाँच प्रधान वक्र हैं। मंगलका उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्रपर हुआ हो और वह लौटकर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं। इस उष्णवक्रमें मंगलके रहनेसे वर्षा अच्छी होती है, पिर कीट और अग्निकी वृद्धि होती है। जनताको साधारणतया कष्ट होता है। जब मंगल दशवें ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्रसे लौटता है तो शोषमुख वक्र कहलाता है। इस वक्रमें आकाशसे जलकी वर्षा होती है। जब मंगल राशि परिवर्तन करता है, उस समय वर्षा होती है। यदि

मंगल चौदहवें अथवा तेरहवें नक्षत्रसे लौट आवे तो यह उसका व्याल चक्र होता है, इसका फलादेश अच्छा नहीं होता। जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्रसे लौटता है; तब लोहित वक्र कहलाता है। इसका फलादेश जलका अभाव होता है। जब मंगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्रसे लौटता है, तब लोहमुद्गर कहलाता है। इस वक्रका फलादेश भी राष्ट्र और समाजको अहितकर होता है। इसी प्रकार मंगलके नक्षत्रभोगका भी वर्णन किया गया है।

बीसवें अध्यायमें ६३ श्लोक हैं। इस अध्यायमें राहुके गमन, रंग आदिका वर्णन किया गया है। इस अध्यायमें राहुकी दिशा, वर्णन, गमन और नक्षत्रोंके संयोग आदिका फलादेश वर्णित है। चन्द्रग्रहण तथा ग्रहण की दिशा, नक्षत्र आदिका फल भी बतलाया गया है। नक्षत्रोंके अनुसार ग्रहणोंका फलादेश भी इस अध्यायमें आया है।

इक्कीसवें अध्यायमें ५८ श्लोक हैं। इसमें केतुके नानाभेद, प्रभेद, उनके स्वरूप, फल आदि का विस्तार सहित वर्णन किया गया है। बताया गया है कि १२० वर्षमें पापके उदयसे विषम केतु उत्पन्न होता है, इस केतुका फल संसारको उथल-पुथल करनेवाला होता है। जब विषम केतुका उदय होता है, तब विश्वमें युद्ध, रक्तपात, महामारी आदि उपद्रव अवश्य होते हैं। केतुके विभिन्न स्वरूपोंका वर्णन भी इस अध्यायमें फल सहित वर्णन किया है। अश्विनी आदि नक्षत्रोंमें उत्पन्न होनेपर केतुका फल विभिन्न प्रकारका होता है। क्रूर नक्षत्रोंमें उत्पन्न होनेपर केतु भय और पीड़ा का सूचक होता है और सौम्य नक्षत्रोंमें केतुके उदय होनेसे राष्ट्रमें शान्ति और सुख रहता है। देशमें धन-धान्यकी वृद्धि होती है।

बाईसवें अध्यायमें २१ श्लोक हैं। इस अध्यायमें सूर्यकी विशेष अवस्थाओंका फलादेश वर्णित है। सूर्यके प्रवास, उदय और चारका फलादेश बतलाया गया है। लालवर्णका सूर्य अस्त्र प्रकोप करनेवाला, पीत और लोहित वर्णका सूर्य व्याधि-मृत्यु देनेवाला और धूम्रवर्णका सूर्य भुखमरी तथा अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। सूर्यकी उदयकालीन आकृतिके अनुसार भारतके विभिन्न देशोंके सुभिक्ष और दुर्भिक्षका वर्णन किया गया है। स्वर्णके समान सूर्यका रंग सुखदायी होता है तथा इस प्रकारके सूर्यके दर्शन करनेसे व्यक्तिको सुख और आनन्द प्राप्त होता है।

तेईसवें अध्यायमें ५८ श्लोक हैं। इसमें चन्द्रमाके वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदिका प्रतिपादन किया गया है। स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा शुभ समझा जाता है। चन्द्रमाका शृंग—किनारा कुछ उत्तरकी ओर उठा हुआ रहे तो दस्युओंका घात होता है। उत्तर शृंगवाला चन्द्रमा अश्मक, कलिंग, मालव, दक्षिण द्वीप आदिके लिए अशुभ तथा दक्षिण शृंगोन्नतिवाला चन्द्र यवनदेश, हिमाचल, पांचाल, आदि देशोंके लिए अशुभ होता है। चन्द्रमाकी विभिन्न आकृतिका फलादेश भी इस अध्यायमें बतलाया गया है। चन्द्रमाकी गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मंडल, वीथि, चार, नक्षत्र आदिके अनुसार चन्द्रमाका विशेष फलादेश भी इस अध्यायमें वर्णित है।

चौबीसवें अध्यायमें ४१ श्लोक हैं। इसमें ग्रह युद्धका वर्णन है। ग्रहयुद्धके चार भेद हैं—भेद, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य। ग्रहभेदमें वर्षाका नाश, सुहृद् और कुलीनोंमें भेद होता है। उल्लेख युद्धमें शस्त्रभय, मन्त्रि विरोध और दुर्भिक्ष होता है। अंशुमर्दन युद्धमें राष्ट्रोंमें संघर्ष, अन्नाभाव एवं अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। अपसव्य युद्धमें पृथ्वीके राष्ट्रोंमें आन्तरिक संघर्ष होता है तथा राष्ट्रोंमें वैमनस्य भी बढ़ता है। इस अध्यायमें ग्रहोंके नक्षत्रोंका कथन तथा ग्रहोंके वर्णोंके अनुसार उनके फलादेशोंका निरूपण किया गया है। ग्रहोंका आपसमें टकराना भी उनके लिए अशुभ सूचक होता है।

पचीसवें अध्यायमें ५० श्लोक हैं। इसमें ग्रह, नक्षत्रोंके दर्शन द्वारा शुभाशुभ फलका कथन किया गया है। इस अध्यायमें ग्रहोंके पदार्थोंका निरूपण किया गया है। ग्रहोंके वर्ण और आकृतिके अनुसार पदार्थोंके तेज, मन्द और समर्घका परिज्ञान किया गया है। यह अध्याय व्यापारियोंके लिए अधिक उपयोगी है।

छब्बीसवें अध्यायमें स्वप्नका फलादेश बतलाया है। इस अध्यायमें ८६ श्लोक हैं। स्वप्न निमित्तका वर्णन विस्तारके साथ किया गया है। धनागम, विवाह, मंगल, कार्यसिद्धि, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि विभिन्न फलादेशोंकी सूचना देनेवाले स्वप्नोंका वर्णन किया गया है। इस अध्यायमें दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, कल्पित और भाविक इन सात प्रकारके स्वप्नोंमेंसे केवल भाविक स्वप्नोंका विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है।

सत्ताईसवें अध्यायमें कुल १९ श्लोक हैं। इस अध्यायमें वस्त्र, आसन, पादुका आदिके छिन्न होनेका फलादेश कहा गया है। यह छिन्न निमित्तका विषय है। नवीन वस्त्र धारण करनेमें नक्षत्रोंका फलादेश भी बताया गया है। शुभ मुहूर्तमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे उपभोक्ताका कल्याण होता है। मुहूर्तका उपयोग तो सभी कार्योंमें करना चाहिए।

परिशिष्टमें दिये गये ३० वें अध्यायमें अरिष्टोंका वर्णन किया गया है। मृत्युके पूर्व प्रकट होनेवाले अरिष्टोंका कथन विस्तार पूर्वक किया है। पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ तीनों प्रकारके अरिष्टोंका कथन इस अध्यायमें किया है। शरीरमें जितने प्रकारके विकार उत्पन्न होते हैं, उन्हें पिण्डस्थ अरिष्ट कहा गया है। यदि कोई अशुभ लक्षणके रूपमें चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तुको देखता है तो ये सब अरिष्ट मुनियोंके द्वारा पदस्थ—बाह्य वस्तुओंसे सम्बन्धित कहलाते हैं। आकाशीय दिव्य पदार्थोंका शुभाशुभ रूपमें दर्शन करना, कुत्ते, बिल्ली, कौआ आदि प्राणियोंकी इष्टानिष्ट सूचक आवाजका सुनना या उनकी अन्य किसी प्रकारकी चेष्टाओंको देखना पदस्थ रिष्ट कहा गया है। पदस्थ रिष्टमें मृत्युकी सूचना दो-तीन वर्ष पूर्व भी मिल जाती है। जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ रिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट छायापुरुष, स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रश्नके द्वारा अवगत किया जाता है। छायादर्शन द्वारा आयुका ज्ञान करना चाहिए। उक्त तीनों प्रकारके अरिष्ट व्यक्तिकी आयुकी सूचना देते हैं।

भद्रबाहुसंहिताकी बृहत्संहितासे तुलना तथा ज्योतिष शास्त्रमें उसका स्थान

भद्रबाहु संहिताके कई अध्याय विषयकी दृष्टिसे बृहत्संहितासे मिलते हैं। भद्रबाहु संहिताके दूसरे और तीसरे अध्याय बृहत्संहिताके ३३ वें अध्यायसे मिलते हैं। दूसरे अध्यायमें उल्काओंका स्वरूप वर्णित है और तीसरे अध्यायमें उल्काओंका फल वर्णित है। उल्काकी परिभाषा वर्णन करते हुए कहा है—

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह।
संभवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता॥
तत्र तारा तथा धिष्ण्यं विद्युच्चाशनिभिः सह।
उल्काविकारा बोद्धव्या ते पतन्ति निमित्ततः॥ अ० २ श्लो० ५-६

इसी आशयको वराहमिहिरने निम्न श्लोकोंमें प्रकट किया है—

दिवि भुक्तशुभफलानां पततां रूपाणि यानि तान्युल्काः।
धिष्ण्योल्काशनिविद्युत्ताराः इति पञ्चधा भिन्नाः॥ अ० ३० श्लो० १

भद्रबाहु संहिताके दूसरे अध्यायके ८, ९ श्लोक वाराही संहिताके ३३ वें अध्यायके ३, ४ और ८ वें श्लोकके समान हैं। भाव साम्यके साथ अक्षर साम्य भी प्रायः मिलता है। भद्रबाहु संहिताके तीसरे अध्यायके ५, ९, १६, १८, १९ श्लोक वाराही संहिताके ३३ वें अध्यायके ९, १०, १२, १५, १६, १८ और १९ वें श्लोकसे प्रायः मिलते हैं। भावकी दृष्टिसे दोनों ग्रन्थोंमें आश्चर्यजनक समता है।

अन्तर इतना है कि वाराही संहितामें जहाँ विषय वर्णनमें संक्षेप किया है, वहाँ भद्रबाहु संहितामें विषयका विस्तार है। प्रत्येक विषयको विस्तारके साथ समझानेकी चेष्टा की है। फलादेशोंमें भी कहीं कहीं अन्तर है, एक बात या परिस्थितिका फलादेश वाराही संहितासे भद्रबाहु संहितामें पृथक् है। कहीं कहीं तो यह पृथकता इतनी बढ़ गयी है कि फल विपरीत दिशाको ही दिखलाता है।

परिवेषका वर्णन भद्रबाहु संहिताके चौथे अध्यायमें और वाराही संहिताके ३४ वें अध्यायमें है। भद्रबाहु संहिताके इस अध्यायके ३ रे और सोलहवें श्लोकमें खण्डित परिवेषोंको अनिष्टकारी कहा गया है। चाँदी और तेलके समान वर्णवाले परिवेष सुभिक्ष करनेवाले कहे गये हैं। यह कथन वाराही संहिताके ३४ वें अध्यायके ४ और ५ श्लोकसे प्रायः मिलता जुलता है। परिवेष प्रकरणके ८, १४, २०, २८, २६, ३७, ३८ वें श्लोक वाराही संहिताके ३४ वें अध्यायके ६, ६, १०, ११, १२, १३, १४, १५ एवं ३७ वें श्लोकसे मिलते हैं। भावमें पर्याप्त साम्य है, दोनों ग्रन्थोंका फलादेश तुल्य है। परिवेषके नक्षत्र तिथियों एवं वर्णोंका फलकथन भद्रबाहु संहितामें नहीं है, किन्तु वाराही संहितामें ये विषय कुछ विस्तृत और व्यवस्थित रूपमें वर्णित हैं। प्रकरणोंमें केवल विस्तार ही नहीं है, किन्तु विषयका गाम्भीर्य भी है। भद्रबाहु संहिताके परिवेष अध्यायमें विस्तारके साथ पुनरुक्ति भी विद्यमान है।

भद्रबाहु संहिताका १२ वाँ अध्याय गर्भ लक्षणाध्याय है। इसके चौथे और सातवें श्लोकमें बताया गया है कि सात-सात महीने और सात सात दिनमें गर्भ पूर्ण परिपक्व अवस्थाको प्राप्त होता है। वाराही संहितामें (अ० २२ श्लो० ७) में १६५ दिन कहा गया है। अतः स्थूल रूपसे दोनों कथनोंमें अन्तर मालूम पड़ता है, पर वास्तविकमें दोनों कथन एक हैं। भद्रबाहु संहितामें नाक्षत्र मास ग्रहीत है, जो २७ दिनका होता है, अतः यहाँ १६६ दिन आते हैं। वाराहमिहिर गत १६५ दिन तथा वर्तमान १६६ वाँ दिन ही माना है, जो भद्रबाहु संहिताके नाक्षत्र मासके तुल्य है। गर्भका धारण और वर्षण प्रभाव सामान्यतया एक हैं, परन्तु भद्रबाहु संहिताके कथनमें विशेषता है। भद्रबाहु संहितामें गर्भधारणका वर्णन महीनों के अनुसार किया है। वाराही संहितामें यह कथन नहीं है।

उत्पात प्रकरण दोनों ही संहिताओंमें है। भद्रबाहु संहिताके चौदहवें अध्यायमें और वाराही संहिताके छियालीसवें अध्यायमें यह प्रकरण है। भद्रबाहुसंहितामें उत्पातोंके दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम ये तीन भेद किये हैं तथा इनका वर्णन बिना किसी क्रमके मनमाने ढंगसे किया है। इस ग्रन्थके वर्णनमें किसी भी प्रकारका क्रम नहीं है। दिव्य उत्पातोंके साथ भौम उत्पातोंका वर्णन भी किया गया है। पर वाराही संहितामें अशुभ, अनिष्टकारी, भयकारी, राजभयोत्पादक, नगरभयोत्पादक, सुभिक्षदायक आदि का वर्णन सुव्यवस्थित ढंगसे किया है। लिंगवैकृत, अग्निवैकृत, वृक्षवैकृत, सस्यवैकृत, जलवैकृत, प्रसववैकृत, चतुष्पादवैकृत, वायव्यवैकृत, मृगपक्षी विकार एवं शक्रध्वजेन्द्रकीलवैकृत इत्यादि विभागोंका वर्णन किया है। वाराहमिहिरका यह उत्पात प्रकरण भद्रबाहुसंहिताके उत्पात प्रकरणकी अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यवस्थित है। यद्यपि वाराहमिहिरने केवल ६६ श्लोकोंमें उत्पातका वर्णन किया है, किन्तु भद्रबाहुसंहितामें १८२ श्लोकोंमें उत्पातोंका कथन किया गया है। उत्पातका लक्षण प्रायः दोनोंका समान है। "प्रकृतेर्यो विपर्यासः स उत्पातः प्रकीर्तितः' (भ० सं० १४,२) तथा वाराहने 'प्रकृतेरन्यत्वमुत्पातः' (वा० सं० ४६,१) इन दोनो लक्षणोंका तात्पर्य एक ही है। राजमन्त्री, राष्ट्रसम्बन्धी, फलादेश प्रायः दोनों ग्रन्थोंमें समान है।

शुक्रचार दोनों ही ग्रन्थोंमें है। भद्रबाहु संहिताके पन्द्रहवें अध्यायमें और वाराही संहिताके नौवें अध्यायमें यह प्रकरण आया है। उल्का, सन्ध्या, वात, गन्धर्वनगर आदि तो आकस्मिक घटनाएँ हैं, अतः दैनन्दिन शुभाशुभको अवगत करनेके लिए ग्रहाचारका निरूपण करना अत्यावश्यक है। यही कारण है कि संहिताकारोंने ग्रहोंके वर्णनोंको भी अपने ग्रन्थोंमें स्थान दिया है। राष्ट्रविप्लव, राजभय, नगरभय, संग्राम, महामारी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदिका विवेचन ग्रहोंकी गतिके अनुसार करना ही अधिक युक्ति संगत है। अतएव संहिताकारोंने ग्रहोंके चारको स्थान दिया है। शुक्रचारको अन्य ग्रहोंकी अपेक्षा अधिक उपयोगी और बलवान कहा गया है।

शुक्रके गमन मार्गको जो कि २७ नक्षत्रात्मक है और वीथियोंमें विभक्त किया गया है। नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, अज, मृग और वैश्वानर ये वीथियाँ भद्रबाहुसंहितामें आई हैं।

(१५ अ० ४४-४८ श्लो०) और नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग, और दहन ये वीथियाँ वाराही संहिता (९ अ० १ श्लो०) में आई हैं। इन वीथियोंमें भद्रबाहुसंहितामें अज नामकी वीथि एक नयी है तथा ऐरावतके स्थानपर ऐरावण और दहनके स्थानपर वैश्वानर वीथियाँ आई हैं। इस निरूपणमें केवल शब्दोंका अन्तर है, भावमें कोई अन्तर नहीं है। भद्रबाहुसंहितामें भरणीसे लेकर चार-चार नक्षत्रोंका एक-एक मंडल बताया गया है। कहा है—

भरण्यादीनी चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत्॥
चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च।
पञ्चकं षट्कविज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गवः॥ —भ० सं० १५ अ० ७,९ श्लो०

वाराही संहिताके ९ वें अध्यायके १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७, १८, १९, २० श्लोकमें उपर्युक्त बातको ही कहा गया है। भद्रबाहुसंहिताके अगले श्लोकोंमें फलादेशका भी वर्णन किया गया है, जब कि वाराही संहितामें मंडलके नक्षत्र और फलादेश साथ-साथ वर्णित हैं। शुक्रके नक्षत्र भेदन का फल दोनों ग्रन्थोंमें रूपान्तर है। भद्रबाहुसंहितामें कहा गया है कि शुक्र यदि रोहिणी नक्षत्रमें आरोहण करे तो भय होता हैं। पाण्ड्य, केरल, चोल, करनाटक, चेदी, चेर और विदर्भ आदि देशोंमें पीड़ा और उपद्रव होता है। वाराही संहितामें मृगशिर नक्षत्रका भेदन या आरोहण अशुभ माना गया है। वाराही संहिताके शुक्रचारमें केवल ४५ श्लोक हैं, जब कि भद्रबाहुसंहितामें २३१ श्लोक हैं। इसमें विस्तार पूर्वक शुक्रके गमन, उदय और अस्त आदि का वर्णन किया है। वाराही संहिताकी अपेक्षा कई नई बातें हैं।

भद्रबाहु संहिता और वाराही संहितामें शनैश्चर चार नामक अध्याय आया है। यह भद्रबाहु संहिता का १६वाँ अध्याय और वाराही संहिताका दसवाँ अध्याय है। वाराही संहिताका यह वर्णन भद्रबाहु संहिताके वर्णनकी अपेक्षा अधिक विस्तृत और ज्ञानवर्धक है। वाराही संहिता में प्रत्येक नक्षत्रके भोगानुसार फलादेश कहा गया है, इस प्रकारके वर्णनका भद्रबाहु संहितामें अभाव है। भद्रबाहु संहितामें कहा गया है कि कृत्तिकामें शनि और विशाखामें गुरु हो तो चारों ओर दारुणता व्याप्त हो जाती है तथा वर्षा खूब होती है। शनिके रंगका फलादेश लगभग समान है। भद्रबाहु संहितामें बताया गया है—

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम्।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपञ्च दारुणम्॥
कृष्णो शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति।
स्नेहवानत्र गृह्णाति रूक्षः शोषयते प्रजाः॥ भं०सं०अ० १६। श्लो० २६-२७

वाराही संहितामें शनिके वर्णका फलादेश निम्न प्रकार बताया है—

अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुद्भयकृद्यदि पीतमयूखः।
शस्त्रभयाय च रक्तवर्णो भस्मनिभो बहुवैरकरश्च॥
वैदूर्यकान्तिरमलः शुभदः प्रजानां बाणातसीकुसुमवर्णनिभश्च शस्तः।
यच्चापि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णान् सूर्यात्मजः क्षपयतीति मुनिप्रवादः॥
वा० सं० अ० १०, श्लो० २०-२१

भं० सं० में कहा है कि श्वेत शनिका रंग हो तो सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रंगका होने पर भय एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोप होता है। शनिके कृष्ण वर्ण होने पर नदियाँ सूख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होने पर प्रजामें सहयोग और रूक्ष होने पर प्रजाका शोषण होता है।

वाराही संहितामें यदि शनि अनेक रंगवाला दिखाई दे तो अंडज प्राणियोंका नाश होता है। पीतवर्ण होनेसे क्षुधा और भय होता है। समवर्ण होनेसे शस्त्रभय और भस्मके समान रंग होनेसे अत्यन्त अशुभ होता है। यदि शनि वैदूर्यमणिके समान कान्तिमान् और निर्मल हो तो प्रजाका अत्यन्त अशुभ होता है। श्वेत, रक्त, पीत, कृष्ण और नानावर्ण हो तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यजोंका नाश करता है। तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करने पर दोनों ग्रन्थोंके शनिवर्ण फलमें पर्याप्त अन्तर है।

भद्रबाहु संहितामें (१८, २०, २१, श्लो०)में चन्द्र और शनिके योगका फलादेश बतलाया गया है, जो वाराही संहितामें नहीं है। संयोग फल भ० सं० का महत्त्वपूर्ण है और यह एक नवीन प्रकरण है।

बृहस्पति चारका कथन भ० सं० के १७ वें अध्यायमें और वा० सं० के ८ वें अध्यायमें आया है। निस्सन्देह भद्रबाहु संहिताका यह प्रकरण फलादेशकी दृष्टिसे वाराही संहिताकी अपेक्षा महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि विस्तारकी दृष्टिसे वाराही संहिताका यह प्रकरण भ० सं० की अपेक्षा बड़ा है। एकसे निमित्तोंका भी फलादेश समान नहीं है। उदाहरणके लिए कतिपय बार्हस्पति संवत्सरोंका फलादेश दोनों ग्रन्थोंसे उद्धृत किया जाता है।

माघमल्पोदकं विद्यात् फाल्गुने दुर्भगाः स्त्रियः।
चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपाः॥
विशाखा नृपभेदश्च पूर्णतोयं विनिर्दिशेत्।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते॥
आषाढे तोयसङ्कीर्णं सरीसृपसमाकुलम्।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चोरा व्यालाश्च प्रबलाः स्मृताः॥ भ० सं० १७ अ० २९-३१

अर्थ—माघ नामका वर्ष हो तो अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नामका वर्ष हो तो स्त्रियोंका कुभाग्य बढ़ता है, चैत नामके वर्षमें धान्य और जलकी वर्षा विचित्र रूपमें होती है तथा सरीसृपोंकी वृद्धि होती है। वैशाख नामक सवत्सरमें राजाओंमें मतभेद होता है और जलकी अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ नामक वर्षमें अच्छी वर्षा होती है और मित्रोंमें मतभेद बढ़ता है। आषाढ़ नामक वर्षमें जलकी कमी होती है, पर कहीं कहीं अच्छी वर्षा भी होती है। श्रावण नामक वर्षमें दाँतवाले जन्तु प्रबल होते हैं। भाद्र नामक संवत्सरमें शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सरमें सरीसृपोंका अधिक भय रहता है।

वाराही संहितामें यही प्रकरण निम्न प्रकार मिलता है—

शुभकृज्जगतः पौषो निवृत्तवैराः परस्परं क्षितिपाः।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घः पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च॥
पितृपूजापरिवृद्धिर्माघे हार्दिञ्च सर्वभूतानाम्।
आरोग्यवृष्टिधान्यार्घसम्पदो मित्रलाभश्च॥
फाल्गुने वर्षं विद्यात् क्वचित् क्वचित् क्षेमवृद्धिसस्यानि।
दौर्भाग्यं प्रमदानां प्रबलाश्चौरा नृपाश्चोग्राः॥
चैत्रे मन्दा वृष्टिः प्रियमन्नक्षेममवनिपा मृदवः।
वृद्धिस्तु कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम्॥
वैशाखे धर्मपरा विगतभयाः प्रमुदिताः प्रजाः सनृपाः।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिर्निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम्॥—वा० सं० ८ अ० ५-९ श्लो०

अर्थ—पौष नामक वर्षमें जगत्का शुभ होता है, राजा आपसमें वैर भावका त्याग कर देते हैं। अनाजकी कीमत दूनी या तिगुनी हो जाती है और पौष्टिक कार्यकी वृद्धि होती है। माघ नामके वर्षमें पितृ लोगोंकी पूजा बढ़ती है, सर्व प्राणियोंका मङ्गल होता है, आरोग्य, सुवृद्धि और धान्यका मोल सम

रहता है। फाल्गुन नामवाले वर्षमें किसी स्थानके बीच मंगल होता है, अन्नकी वृद्धि होती है, स्त्रियोंका कुभाग्य, चोरोंकी प्रबलता और राजाओंमें उग्रता होती है। चैत्र नामके वर्षमें साधारण वृष्टि होती है, राजाओंमें सन्धि, कोप और धान्यकी वृद्धि और रूपवान् व्यक्तियोंको पीड़ा होती है। वैशाख नामक वर्षमें राजा-प्रजा दोनों ही धर्ममें तत्पर रहते हैं, भयशून्य और हर्षित होते हैं, यज्ञ करते हैं और समस्त धान्य भली भाँति उत्पन्न होते हैं। ज्येष्ठ नामक वर्षमें राजा लोग धर्मज्ञ और मेल-मिलापसे रहते हैं। आषाढ नामक वर्षमें समस्त धान्य पैदा होते हैं, पर कहीं-कहीं अनावृष्टि भी होती है। श्रावण नामक वर्षमें अच्छी फसल पैदा होती है। भाद्रपद नामक वर्षमें लताजातीय समस्त पूर्व धान्य अच्छी तरह पैदा होते हैं और आश्विन नामक वर्षमें अत्यन्त वर्षा होती है।

तुलनात्मक दृष्टिसे विचार करनेपर दोनों वर्णनोंमें बहुत अन्तर है। विषय एक होने पर भी फल कथन करनेकी शैली भिन्न है। इस अध्यायमें गुरुकी विभिन्न गतियोंका फलादेश भी कहा गया है।

बुधाचार भ० सं० के १८ वें अध्याय और वा० सं० के ७ वें अध्यायमें आया है। भ० सं० के १८ वें अध्यायके द्वितीय श्लोकमें बुधकी सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकारकी गतियाँ बतलायी गयी हैं। वा० सं० के ७ वें अध्यायके ८ वें श्लोकमें बुधकी प्राकृता, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीक्ष्णा, योगान्ता, घोरा और पापा इन गतियोंका उल्लेख किया है। तुलना करनेसे ज्ञात होता है कि भ० सं० में जिसे सौम्या कहा है, उसीको वा० सं० में प्रकृता; जिसे भ० सं० में तीव्रा कहा है, उसे वा० सं० में तीक्ष्णा; भ० सं० में जिसे दुर्गा कहा है, उसे वा० सं० में योगान्ता कहा है। इन गतियोंके फलादेशोंमें भी अन्तर है। वाराहमिहिरने सभी प्रकारकी गतियोंकी दिन संख्या भी बतलायी है, जब कि भ० सं० इस विषयपर मौन है। अस्तु, उदय और वक्री आदिका कथन भ० सं० में कुछ अधिक है, जब कि वा० सं० में नाम मात्रको है।

अंगारकचार, राहुचार, केतुचार, सूर्यचार और चन्द्रचारमें भी दोनों ग्रन्थोंमें वर्णनोंकी बहुत कुछ समता है। कतिपय श्लोकोंके भाव ज्यों-के-त्यों मिलते हैं।

भद्रबाहुसंहिताका अंगारकचार विस्तृत है, वाराहीसंहिताका संक्षिप्त। वर्णन प्रक्रियामें भी दोनोंमें अन्तर है। भद्रबाहुसंहितामें (अ० १६; श्लोक ११) मंगलके वक्रीका कथन करते हुए कहा है कि मंगलके उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर ये पाँच प्रधान वक्र हैं। ये वक्र मंगलके उदय नक्षत्रोंकी अपेक्षासे बताये गये हैं। वाराही संहितामें (अ० ६ श्लो० १-५) उष्ण, अश्रुमुख, व्याल, रुधिरानन और असिमुसल इन वक्रोंका उल्लेख किया है। इन वक्रोंमें पहले और तीसरे वक्रके नाम दोनोंमें एक हैं, शेष नाम भिन्न हैं। दूसरी बात यह है कि भ० सं० में सभी वक्र उदय नक्षत्रोंके अनुसार वर्णित हैं, किन्तु वाराही संहितामें व्याल, रुधिरानन और असिमुशलको अस्त नक्षत्रोंके अनुसार बताया गया है। भ० सं०में (१६; २५-३४) कहा गया है कि कृत्तिकादि सात नक्षत्रोंमें गमन करे तो कष्ट; माघादि सात नक्षत्रोंमें मंगल विचरण करे तो भय, अनुराधादि सात नक्षत्रोंमें विचरण करे तो अनीति; धनिष्ठादि सात नक्षत्रोंमें विचरण करे तो निन्दित फल होता है। वा० सं० (६; ११-१२) में बताया गया है कि रोहिणी, श्रवण, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद या ज्येष्ठा नक्षत्रमें मंगलका विचरण हो तो मेघोंका नाश एवं श्रवण, मघा, पुनर्वसु, मूल, हस्त, पूर्वाभाद्रपद, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्रमें विचरण करता है तो शुभ होता है। इस प्रकार वाराही संहितामें समस्त नक्षत्रों पर मंगलके विचरणका फल नहीं, जब कि भद्रबाहु संहितामें है। भ० सं० (१६, १) में प्रतिज्ञानुसार मंगलके चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठा, गति, फल, वक्र और अनुवक्रका फलादेश बताया गया है।

राहुचारका निरूपण भद्रबाहु संहिताके २० वें अध्यायमें और वाराही संहिताके पाँचवें अध्यायमें आया है। वाराही संहितामें यह प्रकरण खूब विस्तारके साथ दिया गया है, पर भद्रबाहु संहितामें संक्षिप्त रूपसे आया है। भद्रबाहु संहिता (२०; २, ५७) में राहुका श्वेत, सम, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके लिए शुभाशुभ निमित्तक माना गया है, पर वाराही संहिता (५;

५३–५७) में हरे रंगका राहु रोगसूचक; कपिल वर्णका राहु म्लेच्छोंका नाश एवं दुर्भिक्षसूचक; अरुण वर्णका राहु दुर्भिक्षसूचक; कपोत; अरुण, कपिल वर्णका राहु भयसूचक, पीत वर्णका वैश्योंका नाशसूचक, दूर्वादल या हल्दीके समान वर्णवाला राहु मरीसूचक एवं धूलि या लाल वर्णका राहु क्षत्रियनाशक होता है। इस विवेचनसे स्पष्ट है कि राहुके वर्णका फल वाराही संहिताका अधिक व्यापक होता है। वाराही संहिताके आरम्भिक २६–२७ श्लोकोंमें जहाँ ग्रहणका ही कथन है, वहाँ भद्रबाहु संहितामें आरम्भसे ही राहुनिमित्तों पर विचार आरम्भ कर दिया है। वाराही संहिता (५; ४२–५२) ग्रहणके ग्रासके सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन, निरोध, अवमर्द, आरोह, आघ्रात, मध्यतम और तमोन्त्य ये दस भेद बताये हैं तथा इनका लक्षण और फलादेश भी कहा गया है। भद्रबाहु संहितामें ग्रहणका फल साधारण रूपसे कहा गया है, विशेष रूपसे तो राहु और चन्द्रमाकी आकृति, रूप-रंग, चक्र-भंग आदि निमित्तोंका ही वर्णन किया है। निमित्तोंकी दृष्टिसे यह अध्याय वाराही संहिताके पाँचवें अध्यायकी अपेक्षा अधिक उपयोगी है।

भद्रबाहु संहिताके २१ वें अध्यायमें और वाराही संहिताके ११ वें अध्यायमें केतुचारका वर्णन आया है। वाराही संहितामें केतुओंका वर्णन दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम इन तीन स्थूल भेदोंके अनुसार किया गया है। केतुओंकी विभिन्न संख्यायें इसमें आयी हैं। भद्रबाहु संहितामें इस प्रकारका विस्तृत वर्णन नहीं आया है। भद्रबाहु संहिता (२१; ६–७–१८) में केतुकी आकृति और वर्णके अनुसार फलादेश बताया गया है। केतुका गमन कृत्तिकासे लेकर भरणी तक दक्षिण, और उत्तर इन तीन दिशाओंमें जानना चाहिए। नौ-नौ नक्षत्र तक केतु एक दिशामें गमन करता है। वाराही संहिता (११; ५३–५६) में बताया है कि केतु अश्विनी नक्षत्रका स्पर्श करे तो अश्मक देशका विनाश, भरणीमें किरातपति, कृत्तिकामें कलिंगराज, रोहिणीमें शूरसेन, मृगशिरामें उशीनरराज, आर्द्रामें मत्स्यराज, पुनर्वसुमें अश्मकनाथ, पुष्यमें मगधाधिपति, आश्लेषामें असिकेश्वर, मघा नक्षत्रमें अंगराज, पूर्वाफाल्गुनीमें पाण्ड्यनरपति, उत्तराफाल्गुनी में उज्जयिनी स्वामी, हस्तमें दण्डाधिपति, चित्रामें कुरुक्षेत्रराज, स्वातिमें काश्मीर, विशाखामें इक्ष्वाकु, अनुराधामें पुण्ड्रदेश, ज्येष्ठामें चक्रवर्तीका विनाश, मूलमें मद्रराज, एवं पूर्वाषाढ़ामें काशीपतिका विनाश होता है। इस प्रकार प्रत्येक नक्षत्रका फलादेश पृथक्-पृथक् रूपसे बताया गया है। केतुओंमें श्वेतकेतु और धूमकेतुका फल प्रायः दोनों ग्रन्थोंमें समान है।

भद्रबाहु संहिताके २२ वें अध्यायमें सूर्यचारका कथन है तथा यह प्रकरण वाराही संहिताके तीसरे अध्यायमें आया है। भद्रबाहु संहिता (२२; २) में बताया गया है कि अच्छी किरणोंवाला, रजतके समान कान्तिवाला, स्फटिकके समान निर्मल, महान् कान्तिवाला सूर्य राजकल्याण और सुभिक्ष प्रदान करता है। वाराही संहिता (३; ४०) में आया है कि निर्मल, गोलमण्डलाकार, दीर्घ निर्मल किरणवाला, विकाररहित शरीरवाला, चिह्नरहित मण्डलवाला जगत्का कल्याण करता है। दोनोंकी तुलना करनेसे दोनोंमें बहुत साम्य प्रतीत होता है। सूर्यके वर्णका कथन करते समय कहा गया है कि अमुक वर्णका सूर्य इष्ट या अनिष्ट करता है। इस प्रकरणमें भद्रबाहु संहिता (२२; ३–४, १६–१७) और वाराही संहिता (३; २५, २६, ३०) में बहुत कुछ साम्य है। अन्तर इतना ही है कि वाराही संहितामें इस प्रकरणका विस्तार किया गया है, पर भद्रबाहु संहितामें संक्षेप रूपसे ही कथन किया गया है।

चन्द्रचारका कथन भद्रबाहु संहिताके २३ वें अध्यायमें और वाराही संहिताके चौथे अध्यायमें आया है। भद्रबाहु संहिता (२३; ३, ४) में चन्द्र शृङ्गोन्नतिका जैसा विवेचन किया गया है, लगभग वैसा ही विवेचन वाराही संहिता (४; १६) में भी मिलता है। भद्रबाहु संहिता (२३; १५–१६) में ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्रमा भयोत्पादक तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक माना गया है। श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण वर्णका चन्द्रमा क्रमशः ब्राह्मणादि चारों वर्णोंके लिए सुखद माना गया है। सुन्दर चन्द्र सभीके लिए सुखदायक होता है। वाराही संहिता (४; २९–३०) में बताया गया है कि भस्मतुल्य रूक्ष, अरुण वर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण चन्द्रमा भयकारक एवं संग्राम-सूचक होता है। हिमकण, कुन्दपुष्प, स्फटिकमणिके समान चन्द्रमा जगत्का कल्याण करनेवाला होता है।

उपर्युक्त दोनों वर्णन तुल्य हैं। भद्रबाहु संहितामें चन्द्र शृंगोन्नतिका उतना विस्तार नहीं है, जितना विस्तार वाराही संहितामें है। तिथियोंके अनुसार विकृत वर्णके चन्द्रमाका जितना विस्तृत फलादेश भद्रबाहु संहिता (२३; ६-१४) में आया है, उतना वाराही संहितामें नहीं। इसी प्रकार चन्द्रमामें अन्य ग्रहोंके प्रवेशका कथन भद्रबाहु संहिता (२३; १७-१९) में अपने ढंगका है। चन्द्रमाकी वीथियोंका कथन भ० सं० (२२; २५-३०) में है, यह कथन वाराहके कथनसे भिन्न है।

गृहयुद्धकी चर्चा भ० सं० के २४ वें अध्यायमें और वाराही संहिताके १७ वें अध्यायमें आयी है। इस विषयका निरूपण जितना विस्तारके साथ वाराही संहितामें आया है, उतना भद्रबाहु संहितामें नहीं। यद्यपि भद्रबाहु संहिताके इस प्रकरणमें ४३ श्लोक हैं और वाराही संहितामें २७ श्लोक; पर विषयका प्रतिपादन जितना जमकर वाराही संहितामें हुआ है, उतना भद्रबाहु संहितामें नहीं।

उपर्युक्त विवेचनसे यह स्पष्ट है कि भद्रबाहु संहिता विषय एवं भाषाशैलीकी दृष्टिसे उतनी व्यवस्थित नहीं है, जितनी वाराही संहिता। भद्रबाहु संहिताके दो चार स्थल विस्तृत अवश्य हैं, पर एकाध स्थल ऐसे भी हैं, जो स्पष्ट नहीं हुए हैं, जहाँ कुछ और कहनेकी आवश्यकता रह गयी है। एक बात यह भी है कि भद्रबाहु संहितामें कथनकी पुनरुक्ति भी पायी जाती है। छन्दोभंग, व्याकरणदोष, शिथिलता एवं विषय विवेचनमें अक्रमता आदि दोष प्रचुर मात्रामें वर्तमान हैं। फिर भी इतना सत्य है कि निमित्तोंका यह संकलन किन्हीं दृष्टियोंसे वाराही संहिताकी अपेक्षा उत्कृष्ट है। स्वप्न निमित्त एवं यात्रा निमित्तोंका वर्णन वाराही संहिताकी अपेक्षा अच्छा है। इन निमित्तोंमें विषय सामग्री भी प्रचुर परिमाणमें दी गयी है।

भद्रबाहु संहिताका ज्योतिष शास्त्रमें महत्त्वपूर्ण स्थान माना जायगा। वसन्तराज शाकुन और अद्भुतसागर जैसे संकलित ग्रन्थ विषय विवेचनकी दृष्टिसे आज महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। इन ग्रन्थोंमें निमित्तोंका साङ्गोपाङ्ग विवेचन वर्तमान है। प्रस्तुत भद्रबाहु संहिता भी जितने अधिक विषयोंसे एक साथ परिचय उपस्थित करती है, उतने अधिक विषयोंसे परिचित करानेवाले ग्रन्थ ज्योतिषशास्त्रमें भरे पड़े हैं। वाराही संहिताके अतिरिक्त ऐसा एक भी ग्रन्थ नहीं है, जिसे हम भद्रबाहु संहिताकी तुलनाके लिए ले सकें। जैनज्योतिषके ग्रन्थ तो अभी बहुत ही कम उपलब्ध हैं और जो उपलब्ध भी हैं उनका भी प्रकाशन अभी शेष है। अतः जैनज्योतिष-साहित्यमें इस ग्रन्थकी समता करनेवाला कोई ग्रन्थ नहीं है। प्रश्नाङ्ग पर जैनाचार्योंने बहुत कुछ लिखा है, पर अष्टाङ्ग निमित्तके सम्बन्धमें एक ही ग्रन्थमें बहुत लिखा गया है।

अष्टाङ्ग निमित्तका साङ्गोपाङ्ग वर्णन इसी अकेले ग्रन्थमें है। अभी इस ग्रन्थका जितना भाग प्रकाशित किया जा रहा है, उतनेमें सभी निमित्त नहीं आते हैं। लक्षण और व्यञ्जन बिलकुल छूटे हुए हैं। परन्तु इस ग्रन्थके आद्योपान्त अवलोकनसे ऐसा लगता है कि इसके अन्तर्गत ये दो निमित्त भी अवश्य रहे होंगे तथा वास्तु—प्रासाद, मूर्त्ति आदिके सम्बन्धमें भी प्रकाश डाला गया होगा। संक्षेपमें हम इतना ही कह सकते हैं कि जैनेतर ज्योतिषमें वाराही संहिताका जो स्थान है, वही स्थान जैन-ज्योतिषमें भद्रबाहु संहिताका है। निमित्तज्ञानके विषयको इतने विस्तारके साथ उपस्थित करना इसी ग्रन्थका कार्य है।

भद्रबाहु संहिताके रचयिता और उनका समय

इस ग्रन्थका रचयिता कौन है और इसकी रचना कब हुई है, यह अत्यन्त विचारणीय है। यह ग्रन्थ भद्रबाहुके नाम पर लिखा गया है, क्या सचमुचमें द्वादशाङ्गवाणीके ज्ञाता श्रुतकेवली भद्रबाहु इसके रचयिता हैं या उनके नाम पर यह रचना किसी दूसरेके द्वारा लिखी गयी है। परम्परासे यह बात प्रसिद्ध चली आ रही है कि भगवान् वीतरागी, सर्वज्ञ भाषित निमित्तानुसार श्रुतकेवली भद्रबाहुने किसी निमित्त-शास्त्रकी रचना की थी; किन्तु आज वह निमित्तशास्त्र उपलब्ध नहीं है। श्रुतकेवली भद्रबाहु वी० नि० सं० १५५ में स्वर्गस्थ हुए, इनके ही शिष्य सम्राट् गुप्त थे। मगधमें बारह वर्षके पड़नेवाले दुष्कालको अपने निमित्तज्ञानसे जानकर वे संघको दक्षिण भारतकी ओर ले गये थे और वहीं इन्होंने समाधि ग्रहण की थी।

अतः दिगम्बर जैन साधुओंकी स्थिति बहुत समय तक दक्षिण भारतमें रही। कुछ साधु उत्तर भारतमें ही रह गये, समयदोषके कारण जब उनकी चर्यामें बाधा आने लगी तो उन्होंने वस्त्र धारण कर लिये तथा अपने अनुकूल नियमोंका भी निर्माण किया। दुष्कालके समाप्त होने पर जब मुनिसंघ दक्षिणसे वापस लौटा, तो उसने यहाँ रहनेवाले मुनियोंकी चर्याकी भर्त्सना की तथा उन लोगोंने अपने आचरणके अनुकूल जिन ग्रन्थोंकी रचना की थी, उन्हें अमान्य घोषित किया। इसी समयसे श्वेताम्बर सम्प्रदायका विकास हुआ। वे शिथिलाचारी मुनि ही वस्त्र धारण करनेके कारण श्वेताम्बर सम्प्रदायके प्रवर्तक हुए। भगवान् महावीरके समयमें जैन सम्प्रदाय एक था; किन्तु भद्रबाहुके अनन्तर यह सम्प्रदाय दो टुकड़ोंमें विभक्त हो गया। उक्त भद्रबाहु श्रुतकेवलीको ही निमित्त शास्त्रका ज्ञाता माना जाता है, क्या यही श्रुतकेवली इस ग्रन्थके रचयिता हैं? इस ग्रन्थको देखनेसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भद्रबाहु स्वामी इसके रचयिता नहीं हैं।

यद्यपि इस ग्रन्थके आरम्भमें कहा गया है कि पाण्डुगिरि पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञानके समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्त्ति, रोगरहित, द्वादशाङ्ग श्रुतके वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्तिसे विभूषित, शिष्य प्रशिष्योंसे युक्त और तत्त्ववेदियोंमें निपुण आचार्य भद्रबाहुको सिरसे नमस्कार कर निमित्त शास्त्रके उपदेश देनेकी प्रार्थना की।

तत्रासीनं महात्मानं ज्ञानविज्ञानसागरम्।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम्॥
द्वादशाङ्गस्य वेत्तारं नैर्ग्रन्थं च महाद्युतिम्।
वृत्तं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्॥
प्रणम्य शिरसाऽऽचार्यमूचुः शिष्यास्तदा गिरम्।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यज्ञानं बुभुत्सवः॥ भ० सं० अ० १ श्लो० ५-७

द्वितीय अध्यायके आरम्भमें बताया गया है कि शिष्योंके प्रश्नके पश्चात् भगवान् भद्रबाहु कहने लगे—

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्वासाः श्रमणोत्तमः।
यथावस्थासु विन्यासं द्वादशाङ्गविशारदः॥
भवद्भिर्यदहं पृष्टो निमित्तं जिनभाषितम्।
समासव्यासतः सर्वं तन्निबोध यथाविधि॥

इस कथनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है, कि इसकी रचना श्रुतकेवली भद्रबाहुने की होगी। परन्तु ग्रन्थके आगेके हिस्सेको देखनेसे निराशा होती है। इस ग्रन्थके अनेक स्थानों पर 'भद्रबाहुवचो यथा' (अ० ३ श्लो० ६४; अ० ६ श्लो० १७; अ० ७ श्लो० १६, अ० ९ श्लो० २६; अ० १० श्लो० १६, ४५, ५३; अ० ११ श्लो० २६, ३०; अ० १२ श्लो० ३७; अ० १३ श्लो० ७४, १००, १७८; अ० १४ श्लो० ५४, १३६; अ० १५ श्लो० ३७, ७३, १२८) लिखा मिलता है। इससे सहजमें अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना भद्रबाहुके वचनोंके आधार पर किसी अन्य विद्वान्ने लिखी है। इस ग्रन्थके पुष्पिका वाक्योंमें 'भद्रबाहुके निमित्ते', 'भद्रबाहुसंहितायां', 'भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे' लिखा मिलता है। ग्रन्थकी उत्थानिकामें जो श्लोक आये हैं, उनसे निम्न प्रकाश पड़ता है—

१—इस ग्रन्थकी रचना मगधदेशके राजगृह नामक नगरके निकटवर्ती पाण्डुगिरि पर राजा सेनजित्के राज्यकालमें हुई होगी।

२—यह ग्रन्थ सर्वज्ञकथित वचनोंके आधार पर भद्रबाहु स्वामीने अपने दिव्य ज्ञानके बलसे लिखा।

३—राजा, भिक्षु, श्रावक एवं जन-साधारणके कल्याणके लिए इस ग्रन्थकी रचना की गयी।

४—इस ग्रन्थके रचयिता भद्रबाहु स्वामी दिगम्बर आम्नायके अनुयायी थे।

जिस प्रकार मनुस्मृतिकी रचना स्वयं मनुने नहीं की है, बल्कि मनुके वचनोंके आधारपर की गयी है; फिर भी वह मनुके नामसे प्रसिद्ध है तथा मनुके ही विचारोंका प्रतिनिधित्व करती है। इस रचनामें भी मनुके वचनोंका कथन मिलता है। इसी प्रकार भद्रबाहु संहिता भद्रबाहुके वचनोंका प्रतिनिधित्व करती है?

ग्रन्थकी उत्थानिकामें आये हुए सिद्धान्तों पर विचार करनेसे ज्ञात होता है कि उत्थानिकाके कथनमें ऐतिहासिक दृष्टिसे विरोध आता है। भद्रबाहु स्वामी चन्द्रगुप्त मौर्यके समयमें हुए, जब कि मगधकी राजधानी पाटलिपुत्रमें थी। सेनजित् या प्रसेनजित् महाराज श्रेणिक या बिम्बसारके पिता थे। इनके समयमें और चन्द्रगुप्तके समयमें लगभग १५० वर्षोंका अन्तराल है, अतः श्रुतकेवली भद्रबाहु तो इस ग्रन्थके रचयिता नहीं हो सकते हैं। हाँ, उनके वचनोंके अनुसार किसी अन्य विद्वान्ने इस ग्रन्थकी रचना की होगी।

"जैन साहित्यका संक्षिप्त इतिहास" में देसाईने इस ग्रन्थका रचयिता वराहमिहिरके भाई भद्रबाहु को माना है। जिस प्रकार वराहमिहिरने बृहत्संहिता या वाराही संहिताकी रचना की, उसी प्रकार भद्रबाहु ने भद्रबाहुसंहिताकी रचना की होगी। वराहमिहिर और भद्रबाहुका सम्बन्ध राजशेखरकृत प्रबन्धकोष (चतुर्विंशति प्रबन्ध) से भी सिद्ध होता है। यह अनुमान स्वाभाविक रूपसे संभव है कि प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिरके भाई भद्रबाहु भी ज्योतिर्ज्ञानी रहे होंगे। कहा जाता है कि वराहमिहिरके पिता भी अच्छे ज्योतिषी थे। बृहज्जातकमें स्वयं वराहमिहिरने बताया है कि कालपी नगरमें सूर्यसे वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदाससे ज्योतिषशास्त्रकी शिक्षा प्राप्त की। इससे सिद्ध है कि इनके वंशमें ज्योतिषशास्त्रके पठन-पाठनका प्रचार था और यह विद्या इनके वंशगत थी। अतः इनके भाई भद्रबाहु द्वारा रचित कोई ज्योतिष ग्रन्थ हो सकता है। पर यह सत्य है कि यह भद्रबाहु श्रुतकेवली भद्रबाहुसे भिन्न हैं। इनका समय भी श्रुतकेवली भद्रबाहुसे सैकड़ों वर्ष बाद है।

श्री पं० जुगलकिशोर मुख्तारने ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भागमें इस ग्रन्थके अनेक उद्धरण उद्धृत कर तथा उन उद्धरणोंकी पारस्परिक असम्बद्धता दिखला कर यह सिद्ध किया है कि यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवलीका बनाया हुआ न होकर इधर-उधरके प्रकरणोंका बेढंगा संग्रह है। उन्होंने अपने वक्तव्यका निष्कर्ष निकालते हुए लिखा—"यह खण्डत्रयात्मक ग्रन्थ (भद्रबाहुसंहिता) भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ नहीं है, न उनके किसी शिष्य प्रशिष्यका बनाया हुआ है और न विक्रम सं० १६५७ के पहलेका बनाया हुआ है, बल्कि उक्त संवत्‌के पीछेका बनाया हुआ है।" मुख्तार साहबका अनुमान है कि ग्वालियरके भट्टारक धर्मभूषणजीकी कृपाका यह एकमात्र फल है। उनका अभिमत है—"वही उस समय इस ग्रन्थके सर्व सत्त्वाधिकारी थे। उन्होंने वामदेव सरीखे अपने किसी कृपापात्र या आत्मीयजनके द्वारा इसे तय्यार कराया है अथवा उसकी सहायतासे स्वयं तय्यार किया है। तय्यार हो जानेपर जब इसके दो चार अध्याय किसीको पढ़नेके लिए दिये गये और वे किसी कारण वापस न मिल सके तब वामदेवजीको फिरसे दुबारा उनके लिए परिश्रम करना पड़ा। जिसके लिए प्रशस्तिका यह वाक्य 'यदि वामदेवजी फेर शुद्ध करि लिखी तय्यार करी' खासतौर से ध्यान देने योग्य है और इस बातको सूचित करता है कि उक्त अध्यायोंको पहले भी वामदेव जीने ही तय्यार किया था। मालूम होता है कि लेखक ज्ञानभूषणजी धर्मभूषण भट्टारकके परिचित व्यक्तियोंमेंसे थे और आश्चर्य नहीं कि वे उनके शिष्योंमें भी थे। उनके द्वारा खास तौरसे यह प्रति लिखवायी गई है।"

श्रद्धेय मुख्तार साहबके उपर्युक्त कथनसे यह स्पष्ट है कि उनकी दृष्टिमें यह ग्रन्थ १७ वीं शताब्दी का है तथा इसके लेखक ग्वालियरके भट्टारक धर्मभूषण या उनके कोई शिष्य हैं। मुख्तार साहब अपने कथन की पुष्टिके लिए इस ग्रन्थके जितने भी उद्धरण लिये हैं, वे सभी उद्धरण इस ग्रन्थके प्रस्तुत २७

अध्यायोंके बादके हैं। ३० वाँ अध्याय जो परिशिष्टमें दिया गया है, इससे उस अध्यायकी रचना तिथि पर प्रकाश पड़ता है। इस अध्यायके आरम्भमें १० वें श्लोकमें बताया गया है।

पूर्वाचार्यैर्यथा प्रोक्तं दुर्गाद्यैलादिभिर्यथा।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाम्यहम् ॥

इस श्लोकमें दुर्गाचार्य और एलाचार्यके कथनके अनुसार अरिष्टोंके वर्णनकी बात कही गयी है। दुर्गाचार्य का 'रिष्ट समुच्चय' नामक एक ग्रन्थ उपलब्ध है। इस ग्रन्थकी रचना लक्ष्मीनिवास राजाके राज्यमें कुम्भ नगर नामक पहाड़ी नगरके शान्तिनाथ चैत्यालयमें की गई है। इसका रचनाकाल २१ जुलाई शुक्रवार ईस्वी सन् १०३२ में माना गया है। इस ग्रन्थमें २६१ गाथायें हैं, जिनका भाव इस तीसवें अध्यायमें ज्यों-का त्यों दिया गया है। अन्तर इतना ही है कि रिष्टसमुच्चयका कथन व्यवस्थित, क्रमबद्ध और प्रभावक है, किन्तु इस अध्यायकी निरूपणशैली शिथिल, अक्रमिक और अव्यवस्थित है। विषय दोनोंका समान है। इस अध्यायके अन्तमें कतिपय श्लोक वाराही संहिताके वज्रच्छेद नामक ७१ वें अध्यायसे ज्यों-के-त्यों उद्धृत हैं। केवल श्लोकोंके क्रममें व्यतिक्रम कर दिया गया है। अतः यह सत्य है कि भद्रबाहुसंहिताके सभी प्रकरण एक साथ नहीं लिखे गये।

समग्र भद्रबाहु संहितामें तीन खण्ड हैं। प्रथम खण्डमें दस अध्याय हैं, जिनके नाम हैं—चतुर्वर्ण नित्य क्रिया, क्षत्रिय नित्यकर्म, क्षत्रियधर्म, कृति संग्रह, सीमानिर्णय, दण्डपारुष्य, स्तैन्यकर्म, स्त्रीसंग्रहण, दायभाग और प्रायश्चित्त। इन दशों अध्यायके विषय मनुस्मृति आदि ग्रन्थोंके आधारसे लिखे गये हैं। कतिपय पद्य तो ज्योंके त्यों मिल जाते हैं और कतिपय कुछ परिवर्तन करके ले लिये गये हैं। यह समस्त खण्ड नकल किया गया-सा मालूम होता है।

दूसरे खण्डको ज्योतिष और तीसरेको निमित्त कहा गया है। परन्तु इन दोनों अध्यायोंके विषय आपसमें इतने अधिक सम्बद्ध हैं कि उनका यह भेद उचित प्रतीत नहीं होता है। दूसरे खण्डके २५ अध्याय, जिनमें उल्का, विद्युत्, गन्धर्वनगर आदि निमित्तोंका वर्णन किया गया है, निश्चयतः प्राचीन हैं। छब्बीसवें अध्यायमें स्वप्नोंका निरूपण किया गया है। इस अध्यायके आरम्भमें मंगलाचरण भी किया गया है।

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुरजनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम् ॥

देव और दानवोंके द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीरको नमस्कार कर शुभाशुभसे युक्त स्वप्नाध्यायका वर्णन करता हूँ।

इससे ज्ञात होता है कि यह अध्याय पूर्वके २५ अध्यायों की रचनाके बाद लिखा गया है और इसका रचनाकाल पूर्व अध्यायके रचनाकालके बादका होगा।

मुख्तार साहबने तृतीय खण्डके श्लोकोंकी समता मुहूर्त चिन्तामणि, पाराशरी, नीलकण्ठी आदि ग्रन्थोंसे दिखलायी है और सिद्ध किया है कि इस खण्डका विषय नया नहीं है, संग्रहकर्त्ताने उक्त ग्रन्थोंसे श्लोक लेकर तथा उन श्लोकोंमें जहाँ तहाँ शुद्ध या अशुद्ध रूपमें परिवर्तन करके अव्यवस्थित रूपमें संकलन किया है। अतः मुख्तार साहबने इस ग्रन्थका रचनाकाल १७ वीं शताब्दी माना है।

इस ग्रन्थके रचनाकालके सम्बन्धमें मुनि जिनविजयजीने सिंधी जैन ग्रन्थमालासे प्रकाशित भद्रबाहु संहिताके किञ्चित् प्रास्ताविकमें लिखा है—"ते विषे म्हारो अभिप्राय जरा जुदो छे हुं एने पंदरमी सदीनी पछीनी रचना नथी समजतो ओछामां ओछी १२ मी सदी जेटली जूनी तो ए कृति छे ज, एवो म्हारो साधार अभिमत थाय छे, म्हारा अनुमाननो आधार ए प्रमाणे छे—पाटणना वाडी पार्श्वनाथ भण्डारमांथी जे प्रति म्हने मली छे ते जिनभद्र सूरिना समयमां—एटलेके वि० सं० १४७५-८१ ना अरसामां लखाएली छे, एम हुं मानुं छुं कारणके ए प्रतिमा आकार-प्रकार, लखाण, पत्रांक आदि बधा संकेतो जिनभद्रसूरिए लखावेला सेंकडो ग्रन्थतो तद्दन मलता अनेतेज स्वरूपता

छे, जेम म्हें 'विज्ञप्ति त्रिवेणि' नी म्हारी प्रस्तावनामाँ जणाव्युं छे तेम जिनभद्रसूरिए खंभात, पाटण, जैसलमेर आदि स्थानोमाँ म्होटा ग्रन्थ-भण्डारो स्थापन कर्या हतां अने तेनां, तेमणे नष्ट थतां जूनां एवां सेंकडो ताडपत्रीय पुस्तकोनी प्रतिलिपिओ कागल उपर उतरावी उतरावीने नूतन पुस्तकोनो संग्रह कर्यो हतो, ए भंडारमाँथी मलेली भद्रबाहु संहितानी उक्त प्रति पण एज रीते कोई प्राचीन ताडपत्रनी प्रतिलिपि रूपे उतारेली छे, कारणके ए प्रतिमाँ ठेकठेकाणे एवी केटलीय पंक्तिओ दृष्टिगोचर थाय छे, जेमाँ लहियाए पोताने मलली आदर्श प्रतिमाँ उपलब्ध थता खंडितके त्रुटित शब्दो अने वाक्यो माटे, पाछलथी कोई तेनी पूर्त्ति करी शके ते सारूँ..........आ जातनी अक्षरविहीन मात्र शिरोरेखाओ दोरी मुकेली छे, एनो अर्थ ए छे के ए प्रतिना लहियाने जे ताड-पत्रीय प्रति मलीहती ते विशेष जीर्ण थएली होवी जोईए अने तेमां ते ते स्थलना लखाणना अक्षरो, ताडपत्रोनो किनारो खरी पडवाथी जता रहेला के भुंसाई गएला होवा जोईए-ए उपरथी एवुं अनुमान सहेजे करी शकाय के ते जूनी तडपत्रीय प्रति पण ठीक-ठीक अवस्थाए पहोंची गएली होवी जोईए, आ रीते जिनभद्रसूरिना समयमाँ जो ए प्रति ३००-४०० वर्षो जेटली जूनी होय—अने ते होवानो विशेष संभव छेज—तो सहेजे ते मूलं प्रति विक्रमना ११ मा १२ मा सैका जेटली जूनी होई शके। पाटण अने जेसलमेरना जूना भंडारोमाँ आवी जातनी जीर्ण-शीर्ण थएली ताड-पत्रीय प्रतियो तेमज तेमना उपरथी उतारवामाँ आवेली कागलनी सेंकडो प्रतियो म्हारा जोवामाँ आवीछे।"

इस लम्बे कथनसे आपने यह निष्कर्ष निकाला है कि भद्रबाहु संहिताका रचनाकाल ११-१२ शताब्दीसे अर्वाचीन नहीं है। यह ग्रन्थ इससे प्राचीन ही होगा। मुनिजीका अनुमान है कि इस ग्रन्थका प्रचार जैन साधुओं और गृहस्थोंमें अधिक रहा है, इसी कारण इसके पाठान्तर अधिक मिलते हैं। इसके रचयिता कोई प्राचीन जैनाचार्य हैं, जो भद्रबाहुसे भिन्न हैं। मूलग्रन्थ प्राकृत भाषामें लिखा गया था, पर किसी कारणवश आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। यत्र तत्र प्राप्त मौखिक या लिपिबद्ध रूपमें प्राचीन गाथाओंको लेकर उनका संस्कृत रूपान्तर कर दिया गया है। जिन विषयोंके प्राचीन उद्धरण नहीं मिल सके, उन्हें वाराही संहिता, मुहूर्त्त चिन्तामणि आदि ग्रन्थोंसे लेकर किसी भट्टारक या यति ने संकलित कर दिया।

श्री मुख्तार साहब, मुनि श्री जिनविजयजी तथा श्री प्रो० अमृतलाल सावचंद गोपाणी आदि महानुभावोंके कथनों पर विचार करने तथा उपलब्ध ग्रन्थके अवलोकनसे हमारा अपना मत यह है कि इस ग्रन्थका विषय, रचनाशैली और वर्णनक्रम वाराही संहितासे प्राचीन है। उसका प्रकरणमें वाराही संहिताकी अपेक्षा नवीनता है और यह नवीनता ही प्राचीनताका संकेत करती है। अतः इसका संकलन, कमसे कम आरम्भके २५ अध्यायोंका, किसी व्यक्तिने प्राचीन गाथाओंके आधार पर किया होगा। बहुत संभव है कि भद्रबाहु स्वामीकी कोई रचना इस प्रकारकी रही होगी, जिसका प्रतिपाद्य विषय निमित्तशास्त्र है। अतएव मनुस्मृतिके समान भद्रबाहु संहिताका संकलन भी किसी भाषा तथा विषयकी दृष्टिसे अव्युत्पन्न व्यक्तिने किया है। निमित्त शास्त्रके महाविद्वान् भद्रबाहुकी मूल कृति आज उपलब्ध नहीं है, पर उनके वचनोंका कुछ सार अवश्य विद्यमान है। इस रचनाका संकलन ८-९ वीं शतीमें अवश्य हुआ होगा।

हाँ, यह सत्य है कि इस ग्रन्थमें प्रक्षिप्त अंश अधिक बढ़ते गये हैं। इसका प्रथम खण्ड भी पीछेसे जोड़ा गया है तथा इसमें उत्तरोत्तर परिवर्द्धन और संवर्द्धन किया जाता रहा है। द्वितीय खण्डका स्वप्नाध्याय भी अर्वाचीन है तथा इसमें २८,२९ और ३० वें अध्याय तो और भी अर्वाचीन हैं। अतएव यह स्वीकार करनेमें किसी भी प्रकारका संकोच नहीं है कि इस ग्रन्थका प्रणयन एक समयपर नहीं हुआ है, विभिन्न समयपर विभिन्न विद्वानोंने इस ग्रन्थके कलेवरको बढ़ानेकी चेष्टा की है। "भद्रबाहुवचो यथा" का प्रयोग प्रमुख रूपसे १५ वें अध्याय तक ही मिलता है। इसके आगे इस वाक्यका प्रयोग बहुत कम हुआ है, इससे भी पता चलता है कि संभवतः १५ अध्याय प्राचीन भद्रबाहु संहिताके आधारपर लिखे गये

होंगे। और आगेवाले अध्याय संहिता ग्रन्थोंकी परम्परामें रखनेके लिए या इसे वाराही संहिताके समान उपयोगी और ग्राह्य बनानेके लिए, इसका कलेवर बढ़ाया जाता रहा है। श्री मुख्तार साहबने जो अनुमान लगाया है कि ग्वालियरके भट्टारक धर्मभूषण श्री कृष्णका यह फल है तथा वामदेवने या उनके अन्य किसी शिष्यने यह ग्रन्थ बनाया है, वह पूर्णतया सही तो नहीं है। हाँ इस अनुमानमें इतना अंश तथ्य है कि कुछ अध्याय उन लोगोंकी कृपासे जोड़े गये होंगे या परिवर्द्धित हुए होंगे। इस ग्रन्थके १५ अध्याय तो निश्चयतः प्राचीन हैं और ये भद्रबाहुके वचनोंके आधारपर ही लिखे गये हैं। शैली और क्रम २५ अध्यायों तक एक-सा है, अतः २५ अध्यायोंको प्राचीन माना जा सकता है।

भद्रबाहु संहिताका प्रचार जैन सम्प्रदायमें इतना अधिक था, जिससे यह श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायोंमें समान रूपसे समादृत थी। इसकी प्रतियाँ पूना, पाटण, बम्बई, हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञानमन्दिर पाटण, जैन सिद्धान्त भवन आरा आदि विभिन्न स्थानोंपर पायी जाती हैं। पूनाकी प्रतिमें २६ वें अध्यायके अन्तमें वि० सं० १५०४ लिखा हुआ है और समस्त उपलब्ध प्रतियोंमें यही प्रति प्राचीन है। अतः इस सत्यसे कोई इन्कार नहीं कर सकता है कि इसकी रचना वि० सं० १५०४ से पहले हो चुकी थी। श्री मुख्तार साहबका अनुमान इस लिपिकालसे खंडित हो जाता है और इन २६ अध्यायोंकी रचना ईस्वी सन् की पन्द्रहवीं शतीके पहले हो चुका थी। इस ग्रन्थके अत्यधिक प्रचारका एक सबल प्रमाण यह भी है कि इसके पाठान्तर इतने अधिक मिलते हैं, जिससे इसके निश्चित स्वरूपके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जैन सिद्धान्त भवन आरा की दोनों प्रतियोंमें भी पर्याप्त पाठभेद मिलता है। अतः इस ग्रन्थको सर्वथा भ्रष्ट या कल्पित मानना अनुचित होगा। इसका प्रचार इतना अधिक रहा है, जिससे रामायण और महाभारतके समान इसमें प्रक्षिप्त अंशोंकी भी बहुलता है। इन्हीं प्रक्षिप्त अंशोंने इस ग्रन्थकी मौलिकताको तिरोहित कर दिया है। अतः यह भद्रबाहुके वचनोंके अनुसार उनके किसी शिष्य या प्रशिष्य अथवा परम्पराके किसी अन्य दिगम्बर विद्वान् द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है। इसके आरम्भ के २५ अध्याय और विशेषतः १५ अध्याय पर्याप्त प्राचीन हैं। यह भी सम्भव है कि इनकी रचना वराह-मिहिरके पहले भी हुई हो।

भाषाकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ अत्यन्त सरल है। व्याकरण सम्मत भाषाके प्रयोगोंकी अवहेलना की गई है। छन्दोभंग तो लगभग ३०० श्लोकोंमें है। प्रत्येक अध्यायमें कुछ पद्य ऐसे अवश्य हैं जिनमें छन्दो-भंग दोष है। व्याकरण दोष लगभग १२५ पद्योंमें विद्यमान है। इन दोषोंका प्रधान कारण यह है कि ज्योतिष और वैद्यक विषयके ग्रन्थोंमें प्रायः भाषा सम्बन्धी शिथिलता रह जाती है। वाराही संहिता जैसे श्रेष्ठ ग्रन्थमें व्याकरण और छन्द दोष हैं, पर भद्रबाहु संहिता की अपेक्षा कम।

सम्पादन और अनुवाद

इस ग्रन्थका सम्पादन 'सिंघी जैन ग्रन्थमाला' में मुद्रित प्रति तथा जैन सिद्धान्तभवन आराकी दो हस्तलिखित प्रतियोंके आधार पर हुआ है। एक प्रति पूज्य आचार्य महावीरकीर्त्तिजीसे भी प्राप्त हुई थी। मुद्रित प्रतिमें और जैन सिद्धान्तभवनकी प्रतियोंमें बहुत अन्तर था। कई श्लोक भवनकी प्रतियोंमें मुद्रित प्रतिकी अपेक्षा अधिक निकले। भवनकी दोनों प्रतियाँ भी आपसमें भिन्न थीं तथा आचार्य महावीर-कीर्त्तिजीकी हस्तलिखित प्रति भवनकी प्रतियोंकी अपेक्षा कुछ भिन्न तथा मुद्रित प्रतिमें उल्लिखित बम्बईकी प्रतिसे बहुत कुछ अशोंमें समान थी। प्रस्तुत सस्करणमें भवनकी ख/१७४ प्रतिका पाठ ही रखा गया है। अवशेष प्रतियोंके पाठान्तरोंको पादटिप्पणीमें रखा गया है। प्रस्तुत प्रतिमें मुद्रित प्रतिकी अपेक्षा अनेक विशेषताएँ हैं। कुछ पाठान्तर तो इतने अच्छे हैं, जिससे प्रकरणगत अर्थ स्पष्ट होता है और विषयका विवेचन भी स्पष्ट हो जाता है। हमने मु० के द्वारा मुद्रित प्रतिके पाठको सूचित किया है। मु० A से हमारा सकेत यह है कि आचार्य महावीरकीर्त्तिजीकी प्रतिमें यह पाठ मिलता है। आचार्य महावीर-कीर्तिकी प्रति उनके हाथसे स्वय कहींसे प्रतिलिपि की गयी थी और उसमें अनेक स्थलों पर बगलमें

पाठान्तर भी दिये गये थे। यह प्रति हमें १५ अध्याय तक मिली तथा इसके आगे एक दूसरे रजिस्टरमें ३० वाँ अध्याय और एक पृथक् रजिस्टरमें कुछ फुटकर शकुन और निमित्त सम्बन्धी श्लोक लिखे थे। फुटकर श्लोकोंमें अध्यायका संकेत नहीं किया गया था, अतः हमने उन श्लोकोंको इस ग्रन्थमें स्थान नहीं दिया। ३० वें अध्यायको परिशिष्टके रूपमें दिया गया है। उपयोगी विषय होनेके कारण इस अध्यायको भी अनुवाद सहित दिया जा रहा है।

जिस प्रतिका पाठ इस ग्रन्थमें रखा गया है, उसके मात्र २७ अध्याय ही हमें उपलब्ध हुए हैं। भवनकी दूसरी प्रतिमें २६ अध्याय हैं। दोनों ही प्रतियोंके देखनेसे ऐसा लगता है कि इनकी प्रतिलिपि विभिन्न प्रतियोंसे की गयी है। ग्रन्थ समाप्ति सूचक कोई चिह्न या पुष्पिका नहीं दी गयी है, अतः प्रतिलिपिकालकी जानकारी नहीं हो सकी।

अनुवादके पश्चात् प्रत्येक अध्यायके अन्तमें विवेचन लिखा गया है। विवेचनमें वाराही संहिता, अद्भुतसागर, वसन्तराजशाकुन, मुहूर्त्तगणपति, वर्षप्रबोध, बृहत्पाराशरी, रिष्टसमुच्चय, केवलज्ञानप्रश्न-चूड़ामणि, नरपतिजयचर्या, भविष्यज्ञान ज्योतिष, एवरोडे एस्ट्रोलाजी, केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, ज्योतिषसिद्धान्तसारसंग्रह, जातकखेटपत्र, चन्द्रोन्मीलन प्रश्न, ज्ञानप्रदीपिका, दैवज्ञकामधेनु, ऋषिपुत्र-निमित्तशास्त्र, बृहद्ज्योतिषार्णव, भुवनदीपक एवं विद्यामाधवीयका आधार लिया गया है। विवेचनमें उद्धरण कहींसे भी उद्धृत नहीं किये हैं। अध्ययनके बलसे विषयको पचाकर तत् तत् प्रकरणमें विषयसे सम्बद्ध विवेचन लिखा गया है। विषयके स्पष्टीकरणकी दृष्टिसे ही यह विवेचन उपयोगी नहीं होगा, बल्कि विषयका साङ्गोपाङ्ग अध्ययन करनेके लिए उपयोगी होगा। प्रत्येक प्रकरण पर उपलब्ध ज्योतिष ग्रन्थोंके आधार पर निचोड़ रूपमें विवेचन लिखा गया है। यद्यपि इस विवेचनको ग्रन्थ बढ़ जानेके भयसे संक्षिप्त करनेकी पूरी चेष्टा की गयी है; फिर भी सैकड़ों ग्रन्थोंका सार एक ही जगह प्रत्येक प्रकरणके अन्तमें मिल जायगा। अन्य ज्योतिर्वेत्ताओंका उस प्रकरणके सम्बन्धमें जो नया विचार मिला है उसे विवेचनमें रख दिया गया है। पाठक एक ही ग्रन्थमें उपलब्ध समस्त संहिता शास्त्रका सार भाव प्राप्त कर सकेगा, ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है।

अनुवाद तथा विवेचनमें समस्त पारिभाषिक शब्दोंको स्पष्ट कर दिया गया है। पारिभाषिक शब्दों पर विवेचन भी लिखा गया है। अतः पृथक् पारिभाषिक शब्द सूची नहीं दी जा रही है। यतः शब्द-सूची पुनरावृत्ति ही होगी।

अनुवादमें शब्दार्थकी अपेक्षा भावको स्पष्ट करनेकी अधिक चेष्टा की है। सम्बद्ध श्लोकोंका अर्थ एक साथ लिखा गया है। इस ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद अभी तक नहीं हुआ तथा विषयकी दृष्टिसे इसका अनुवाद करना आवश्यक था। ज्योतिष विषयक निमित्तोंकी जानकारीके लिए इसका हिन्दी अनुवाद अधिक उपयोगी होगा। संहिता शास्त्रके समग्र विषयोंकी जानकारी इस एक ही ग्रन्थसे हो सकती है।

आत्म-निवेदन

भद्रबाहु संहिताका अनुवाद करनेकी बलवती इच्छा केवलज्ञानप्रश्न-चूड़ामणिके अनुवादके अनन्तर ही उत्पन्न हुई। सन् १९५९ में इस कार्यको हाथमें लिया। जैन सिद्धान्त भवन, आराकी दोनों हस्त-लिखित प्रतियोंका मिलान मुद्रित प्रतिसे करनेके पश्चात् यह निश्चय किया कि स। १०४ प्रतिका पाठ अधिक उपयोगी है, अतः इसे ही मूल पाठ मानकर अनुवाद कार्य किया जाय। इधर-उधरके अनेक व्यासंगोंके कारण कार्य मन्थरगतिसे चलता रहा। हाँ, सदाकी प्रवृत्तिके अनुसार ग्रन्थका कार्य समाप्त करके भारतीय ज्ञानपीठके मन्त्री श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीयकी सेवामें इसे अवलोकनार्थ भेज दिया। उन्होंने अपनी कार्य प्रणालीके अनुसार ग्रन्थमालाके संपादक श्री डा० हीरालालजी जैन, निर्देशक प्राकृतिक जैन विद्यापीठ, मुजफ्फरपुर तथा श्री डा० ए० एन० उपाध्ये कोल्हापुरके यहाँ इस ग्रन्थकी पाण्डुलिपिको भेज

दिया। कुछ समयके पश्चात् श्री डा० हीरालालजी साहबका एक सूचना पत्र मिला और उनकी सूचनाओंके अनुसार संशोधन, परिवर्तन कर पुनः ग्रन्थको ज्ञानपीठ भेज दिया।

मैं ग्रन्थमालाके संपादक उपर्युक्त डाक्टर द्वयका अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थके प्रकाशन का अवसर तथा अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। श्री अयोध्याप्रसादजी गोयलीय, मन्त्री भारतीय ज्ञानपीठ, काशीका भी कृतज्ञ हूँ, जिनकी उत्साह वर्धक प्रेरणाएँ सर्वदा साहित्य सेवाके लिए मिलती रहती हैं। परामर्श रूपमें सहायता देनेवाले विद्वानोंमें आचार्य श्री राममोहनदासजी एम० ए० संस्कृत और प्राकृत विभागाध्यक्ष हरप्रसाद जैन कालेज, आरा; श्री पं० लक्ष्मणजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य, राजकीय संस्कृत विद्यालय आरा, श्री प्रेमचन्द जैन साहित्याचार्य, बी० ए० ह० दा० जैन स्कूल आरा एवं श्री अमरचन्द तिवारी आगरा प्रभृति विद्वानोंका आभारी हूँ। प्रूफसंशोधन श्री पं० महादेवजी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्यने किया है मैं आपका भी अत्यन्त आभारी हूँ।

श्री जैनसिद्धान्तभवन आराके विशाल ग्रन्थागारसे विवेचन लिखनेके लिए सैकड़ों ग्रन्थोंका उपयोग किया, अतः भवनका आभार स्वीकार करना परमावश्यक है।

प्रूफमें कई गलतियाँ छूट गई हैं, विज्ञ पाठक संशोधन कर लाभ उठायेंगे। इसमें प्रूफ संशोधकका दोष नहीं है; दोष मेरा है, यतः मेरी लिपि कुछ अस्पष्ट और अवाच्य होती है, जिससे प्रूफ सम्बन्धी त्रुटियोंका रह जाना आवश्यक है। सम्पादन, अनुवाद और विवेचनमें प्रमाद एवं अज्ञानतावश अनेक त्रुटियाँ रह गई होंगी, कृपालु पाठक उनके लिए क्षमा करेंगे। यह भद्रबाहु संहिताका प्रथम भाग ही है। अवशेष मिल जाने पर इसका द्वितीय भाग सानुवाद और सविवेचन प्रकाशित किया जायगा। क्योंकि ज्योतिष और निमित्तशास्त्रकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ उपयोगी है। जिन कृपालु पाठकोंके पास या उनकी जानकारीमें इसके अवशेष अध्याय हों, वे सूचित करनेका कष्ट करेंगे।

हरप्रसाददास जैन कालेज, आरा
संस्कृत एवं प्राकृत विभाग
११–१०–५८

नेमिचन्द्र शास्त्री

विषय-सूची

चतुर्थ अध्याय ३४-४७

एकादश अध्याय १११–१२६

द्वादश अध्याय १२७–१३६

त्रयोदश अध्याय १३७–१७३

चतुर्दश अध्याय १७४–२०६

छब्बीसवाँ अध्याय ३४४-३६२

सत्ताईसवाँ अध्याय ३६४-३६८

तीसवाँ अध्याय [परिशिष्टाध्याय] ३६९-३९५

भद्रबाहुसंहिता

प्रथमोऽध्यायः

नमस्कृत्य जिनं वीरं सुरासुरनतक्रमम् ।
यस्य ज्ञानाम्बुधेः प्राप्य किञ्चिद् वक्ष्ये निमित्तकम्[1] ॥१॥

जिनके चरणोंमें सुर और असुर नम्रित हुए हैं, ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको नमस्कार कर, उनके ज्ञानरूपी समुद्रके आश्रयसे मैं निमित्तोंका किञ्चित् वर्णन करता हूँ ॥१॥

मागधेषु पुरं ख्यातं नाम्ना राजगृहं शुभम् ।
नानाजनसमाकीर्णं[2] नानागुणविभूषितम् ॥२॥

मगधदेशके नगरोंमें प्रसिद्ध राजगृह नामका एक श्रेष्ठ नगर है, जो नानाप्रकारके मनुष्योंसे व्याप्त और अनेक गुणोंसे युक्त है ॥२॥

तत्रास्ति सेनजिद् राजा युक्तो राजगुणैः शुभैः ।
तस्मिन् शैले सुविख्यातो नाम्ना पाण्डुगिरिः शुभः[3] ॥३॥

राजगृह नगरीमें राजाओंके उपयुक्त शुभ गुणोंसे सम्पन्न सेनजित् नामका राजा है । तथा इस नगरीमें पाँच पर्वतोंमें विख्यात पाण्डुगिरि नामका श्रेष्ठ पर्वत है ॥३॥

नानावृक्षसमाकीर्णो नानाविहगसेवितः ।
चतुष्पदैः सरोभिश्च साधुभिश्चोपसेवितः[4] ॥४॥

यह पर्वत अनेक प्रकारके वृक्षोंसे व्याप्त है । अनेक पक्षियोंका क्रीडास्थल है, नाना प्रकारके पशुओंकी विहारभूमि है, तालाबोंसे युक्त है और साधुओंसे उपसेवित है ॥४॥

तत्रासीनं महात्मानं[5] ज्ञानविज्ञानसागरम् ।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम्[6] ॥५॥
द्वादशाङ्गस्य वेत्तारं निर्ग्रन्थं च महाद्युतिम् ।
वृत्तं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्[7] ॥६॥
प्रणम्य शिरसाऽऽचार्यमूचुः[8] शिष्यास्तदा गिरम्[9] ।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यं ज्ञानं बुभुत्सवः ॥७॥

उस पाण्डुगिरि पर्वत पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञानके समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्त्ति, रोगरहित, द्वादशाङ्ग श्रुतके वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्तिसे विभूषित, शिष्य-प्रशिष्योंसे युक्त और

---

१. यह श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है । २. पदाकीर्णं मु० । ३. शुभम् य० । ४. शोभितः आ० । ५. महाज्ञानं आ० । ६. निरामयम् मु० । ७. वादिनम् मु० A. । ८. आचार्यम् मु० । ९. वाचस्पतिम् मु० ।

इक्कीसवाँ अध्याय　२८९-३०१

बाईसवाँ अध्याय　३०२-३०६

तेईसवाँ अध्याय　३०७-३१६

छब्बीसवाँ अध्याय ३४४-३६२

सत्ताईसवाँ अध्याय ३६४-३६८

तीसवाँ अध्याय [परिशिष्टाध्याय] ३६९-३९५

भद्रबाहुसंहिता

प्रथमोऽध्यायः

नमस्कृत्य जिनं वीरं सुरासुरनतक्रमम् ।
यस्य ज्ञानाम्बुधेः प्राप्य किञ्चिद् वक्ष्ये निमित्तकम्[1] ॥१॥

जिनके चरणोंमें सुर और असुर नम्रित हुए हैं, ऐसे श्रीमहावीर स्वामीको नमस्कार कर, उनके ज्ञानरूपी समुद्रके आश्रयसे मैं निमित्तोंका किञ्चित् वर्णन करता हूँ ॥१॥

मागधेषु पुरं ख्यातं नाम्ना राजगृहं शुभम् ।
नानाजनसमाकीर्णं[2] नानागुणविभूषितम् ॥२॥

मगधदेशके नगरोंमें प्रसिद्ध राजगृह नामका एक श्रेष्ठ नगर है, जो नानाप्रकारके मनुष्योंसे व्याप्त और अनेक गुणोंसे युक्त है ॥२॥

तत्रास्ति सेनजिद् राजा युक्तो राजगुणैः शुभैः ।
तस्मिन् शैले सुविख्यातो नाम्ना पाण्डुगिरिः शुभः[3] ॥३॥

राजगृह नगरीमें राजाओंके उपयुक्त शुभ गुणोंसे सम्पन्न सेनजित् नामका राजा है । तथा इस नगरीमें पाँच पर्वतोंमें विख्यात पाण्डुगिरि नामका श्रेष्ठ पर्वत है ॥३॥

नानावृक्षसमाकीर्णो नानाविहगसेवितः ।
चतुष्पदैः सरोभिश्च साधुभिश्चोपसेवितः[4] ॥४॥

यह पर्वत अनेक प्रकारके वृक्षोंसे व्याप्त है । अनेक पक्षियोंका क्रीडास्थल है, नाना प्रकारके पशुओंकी विहारभूमि है, तालाबोंसे युक्त है और साधुओंसे उपसेवित है ॥४॥

तत्रासीनं महात्मानं[5] ज्ञानविज्ञानसागरम् ।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम्[6] ॥५॥
द्वादशाङ्गस्य वेत्तारं निर्ग्रन्थं च महाद्युतिम् ।
वृत्तं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्[7] ॥६॥
प्रणम्य शिरसाऽऽचार्यमूचुः[8] शिष्यास्तदा गिरम्[9] ।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यं ज्ञानं बुभुत्सवः ॥७॥

उस पाण्डुगिरि पर्वत पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञानके समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्त्ति, रोगरहित, द्वादशाङ्ग श्रुतके वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्तिसे विभूषित, शिष्य-प्रशिष्योंसे युक्त और

---

१. यह श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है । २. पदाकीर्णं मु० । ३. शुभम् ब० । ४. शोभितः आ० । ५. महाज्ञानं आ० । ६. निरामयम् मु० । ७. वादिनम् मु० A. । ८. आचार्यम् मु० । ९. वाचस्पतिम् मु० ।

सत्त्ववेदियोंमें निपुण आचार्य भद्रबाहुको सिरसे नमस्कार कर सब जीवों पर प्रीति करनेवाले और दिव्यज्ञानके इच्छुक शिष्योंने उनसे प्रार्थना की ॥५-७॥

पार्थिवानां हितार्थाय शिष्याणां[1] हितकाम्यया ।
श्रावकाणां हितार्थाय दिव्यं ज्ञानं ब्रवीहि नः ॥८॥

राजाओं, भिक्षुओं और श्रावकोंके हितके लिए आप हमें दिव्यज्ञान—निमित्तज्ञानका उपदेश दीजिए ॥५-८॥

शुभाऽशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः
विजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं पाति महीं सदा ॥९॥

यतः शत्रुओंको जीतनेका इच्छुक राजा निमित्तके बलसे अपने शुभाशुभको सुनकर स्थिरमति हो सुखपूर्वक सदा पृथ्वीका पालन करता है ॥९॥

राजाभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः ।
विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजाभियोजिताः[2] ॥१०॥

धर्मपालक सभी भिक्षु राजाओं द्वारा पूजित होते हुए और उनकी सेवादिको प्राप्त करते हुए निराकुलता पूर्वक लोकमें विचरण करते हैं । ॥१०॥

पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा ययुर्देशांश्च भिक्षवः ।
स्फीतान् जनपदांश्चैव संश्रयेयुः प्रचोदिताः[3] ॥११॥

भिक्षु आश्रित देशको भविष्यत्कालमें पापयुक्त अथवा उपद्रवयुक्त अवगत कर वहाँसे देशान्तरको चले जाते हैं तथा स्वतन्त्रतापूर्वक धन धान्यादि सम्पन्न देशोंमें निवास करते हैं ॥११॥

श्रावकाः स्थिरसङ्कल्पा दिव्यज्ञानेन हेतुना ।
नाश्रयेयुः[4] परं तीर्थं यथा[5] सर्वज्ञभाषितम् ॥१२॥

श्रावक इस दिव्य निमित्तज्ञानको पाकर दृढ़संकल्पी होते हैं और सर्वज्ञकथित तीर्थ-धर्मको छोड़कर अन्य तीर्थका आश्रय नहीं लेते ॥१२॥

सर्वेषामेव सत्त्वानां[6] दिव्यज्ञानं[7] सुखावहम् ।
भिक्षुकानां विशेषेण परपिण्डोपजीविनाम् ॥१३॥

यह दिव्यज्ञान—अष्टाङ्गनिमित्तज्ञान सब जीवोंको सुख देनेवाला है और परपिण्डोपजीवी साधुओंको विशेषरूपसे सुख देनेवाला है ॥१३॥

विस्तीर्णं द्वादशाङ्गं तु [8]भिक्षवश्चाल्पमेधसः ।
भविष्यन्ति हि बहवस्तेषां चैवेदमुच्यताम् ॥१४॥

द्वादशाङ्ग श्रुत तो बहुत विस्तृत है और आगामी कालमें भिक्षु अल्पबुद्धिके धारक होंगे, [illegible] ॥१४॥

१ [illegible] मु० । २ [illegible] मु० । ३. [illegible] मु० । ४ [illegible] मु० A । ५. [illegible] मु० । ६ [illegible] मु० । ७ [illegible] मु० । ८ [illegible] मु० A ।

सुखग्राह्यं[1] लघुग्रन्थं स्पष्टं शिष्यहितावहम् ।
सर्वज्ञभाषितम् तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि नः ॥१५॥

जो सरलतासे ग्रहण किया जा सके, संक्षिप्त हो, स्पष्ट हो, शिष्योंका हित करनेवाला हो और यथार्थ हो, उस निमित्तशास्त्रका हम लोगोंके लिए उपदेश कीजिए ॥१५॥

उल्का समासतो व्यासात् परिवेषांस्तथैव च ।
विद्युतोऽभ्राणि सन्ध्याश्च मेघान् वातान् प्रवर्षणम् ॥१६॥
गन्धर्वनगरं गर्भान् यात्रोत्पा[2]तांस्तथैव च ।
ग्रहचारं पृथक्त्वेन ग्रहयुद्धं च कृत्स्नतः ॥१७॥
वातिकं चाथ स्वप्नांश्च[3] मुहूर्तांश्च तिथींस्तथा ।
करणानि निमित्तं[4] च शकुनं[5] पाकमेव च ॥१८॥
ज्योतिषं केवलं कालं वास्तुदिव्येन्द्र[6]सम्पदा ।
लक्षणं[7] व्यञ्जनं चिह्नं तथा[8] दिव्यौषधानि च ॥१९॥
बलाऽबलं च सर्वेषां विरोधं च पराजयम् ।
तत्सर्वमानुपूर्वेण प्रब्रवीहि महामते[9] ! ॥२०॥
सर्वानेतान् यथोद्दिष्टान् भगवन् वक्तुमर्हसि ।
प्रश्नं शुश्रूषवः सर्वे वयमन्ये च साधवः ॥२१॥

हे महामते ! संक्षेप और विस्तारसे उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भ, यात्रा, उत्पात, पृथक्-पृथक् ग्रहाचार, ग्रहयुद्ध, वातिक-तेजी-मन्दी, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, निमित्त, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, दिव्येन्द्रसंपदा, लक्षण, व्यञ्जन, चिह्न, दिव्यौषध, बलाबल, विरोध और जय-पराजय इन समस्त विषयोंका क्रमशः वर्णन कीजिए। हे भगवन् ! जिस क्रमसे इनका निर्देश किया है, उसी क्रमसे इनका उत्तर दीजिए। हम सभी तथा अन्य साधुजन इन प्रश्नोंका उत्तर सुननेके लिए उत्कण्ठित हैं ॥१६-२१॥

इति श्रीमहामुनिनिर्ग्रन्थ[10]भद्रबाहुसंहितायां[11]ग्रन्थाङ्गसञ्चयो नाम प्रथमोऽध्यायः ।

विवेचन—इस ग्रन्थमें श्रावक और मुनि दोनोंके लिए उपयोगी निमित्तका विवेचन आचार्य भद्रबाहु स्वामीने किया है। इसके प्रथम अध्यायमें ग्रन्थमें विवेच्य विषयका निर्देश किया गया है। इस ग्रन्थमें उन निमित्तोंका निरूपण किया है, जिनके अवलोकन मात्रसे कोई भी व्यक्ति अपने शुभाशुभको अवगत कर सकता है। अष्टाङ्ग निमित्त ज्ञानको आचार्योंने विज्ञानके अन्तर्गत रखा है; यतः "मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः" अर्थात्—निर्वाण प्राप्ति सम्बन्धी ज्ञानको ज्ञान और शिल्प तथा अन्य शास्त्र सम्बन्धी जानकारीको विज्ञान कहते हैं। यह उभय लोककी सिद्धिमें प्रयोजक है, इसलिए गृहस्थोंके समान मुनियोंके लिए भी उपयोगी माना गया है। किसी एक निमित्तसे यथार्थसे निर्णय नहीं हो सकता। निर्णय करना निमित्तोंके स्वभाव, परिमाण, गुण एवं प्रकारों पर भी बहुत अंशोंमें

१. ग्राह्य ब० । २. यात्रामुत्पातकाम् मु० A. । ३. स्वप्नश्च मु० A. । ४. निमित्तानि मु० A. । ५. शाकुनं पाकमेव च मु० A. । ६. वसु दिव्येन्द्रसम्पच्च मु० A., वासुदेवेन्द्र आ० । ७. लग्नं मु० । ८. विद्यौषधानि च मु० । ९. निबोधय आ० । १०. भद्रबाहुके निमित्ते । ११. ग्रन्थसञ्चयो आ० ।

निर्भर है। यहाँ प्रथम अध्यायमें निरूपित वर्ण्य विषयोंका संक्षिप्त परिभाषात्मक परिचय दे देना भी अप्रासंगिक न होगा।

उल्का—"ओषति, उष पकारस्य लत्वं क ततः टाप्"—अर्थात् उष् धातुके पकार का'ल' हो जानेसे क प्रत्यय कर देने पर स्त्रीलिंगमें उल्का शब्द बनता है। इसका शाब्दिक अर्थ है तेजःपुञ्ज, ज्वाला या लपट। तात्पर्यार्थ लिया जाता है, आकाशसे पतित अग्नि। कुछ मनीषी आकाशसे पतित होनेवाले उल्काकाण्डोंको टूटा ताराके नामसे कहते हैं। ज्योतिष शास्त्रमें बताया गया है कि उल्का एक उपग्रह है। इसके आनयनका प्रकार यह है कि सूर्याक्रान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युन्मुख, अष्टम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंशति उल्का, द्वाविंशति कल्प, त्रयोविंशति वज्र और चतुर्विंशति निघात संज्ञक होता है। विद्युन्मुख, शून्य, सन्निपात, केतु, उल्का, कल्प, वज्र और निघात ये आठ उपग्रह माने जाते हैं। इनका आनयन पूर्ववत् सूर्य नक्षत्रसे किया जाता है। उदाहरण—

वर्तमानमें सूर्य कृत्तिका नक्षत्र पर है। यहाँ कृत्तिकासे गणना की तो पंचम पुनर्वसु नक्षत्र विद्युन्मुख संज्ञक, अष्टम मघा शून्य संज्ञक, चतुर्दश विशाखा नक्षत्र सन्निपात संज्ञक, अष्टादश पूर्वाषाढ़ केतु संज्ञक, एकविंशति धनिष्ठा उल्का संज्ञक, द्वाविंशति शतभिषा कल्प संज्ञक, त्रयोविंशति पूर्वाभाद्रपद वज्रसंज्ञक और चतुर्विंशति उत्तराभाद्रपद निघात संज्ञक माना जायगा। इन उपग्रहोंका फलादेश नामानुसार है तथा विशेष आगे बतलाया जायगा।

निमित्तज्ञानमें उपग्रह सम्बन्धी उल्काका विचार नहीं होता है। इसमें आकाशसे पतित होनेवाले तारोंका विचार किया जाता है। आधुनिक वैज्ञानिकोंने उल्काके रहस्यको पूर्णतया अवगत करनेकी चेष्टा की है। कुछ लोग इसे Shooting stars टूटनेवाला नक्षत्र, कुछ Fire-bells अग्नि-गोलक और कुछ इसे Asteroids उपनक्षत्र मानते हैं। प्राचीन ज्योतिषियोंका मत है कि वायुमण्डलके ऊर्ध्वभागमें नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान पदार्थ समय-समय पर देख पड़ते हैं और गगनमार्गमें द्रुतवेगसे चलते हैं तथा अन्धकारमें लुप्त हो जाते हैं। कभी-कभी कतिपय वृहदाकार दीप्तिमान पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं; पर वायुकी गतिसे विपर्यय हो जानेके कारण उनके कई खण्ड हो जाते हैं और गम्भीर गर्जनके साथ भूमितल पर पतित हो जाते हैं। उल्काएँ पृथ्वी पर नाना प्रकारके आकारमें गिरती हुई दिखलाई पड़ती हैं। कभी-कभी निरभ्र आकाशमें गम्भीर गर्जनके साथ उल्कापात होता है। कभी निर्मल आकाशमें झटिति मेघोंके एकत्रित होते ही अन्धकारमें भीषण शब्दके साथ उल्कापात होते देखा जाता है। योरोपीय विद्वानोंकी उल्कापातके सम्बन्धमें निम्न सम्मति है—

(१) तरल पदार्थसे जैसे धूम उठता है, वैसे ही उल्का सम्बन्धी द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकारमें पृथ्वीसे वायुमण्डलके उच्चस्थ मेघ पर जा जुटता है और रासायनिक क्रियासे मिलकर अपने गुरुत्वके अनुसार नीचे गिरता है।

(२) उल्काके समस्त प्रस्तर पहले आग्नेय गिरिसे निकल अपनी गतिके अनुसार आकाश मण्डल पर बहुत दूर पर्यन्त चढ़ते हैं और अवशेषमें पुनः प्रबल वेगसे पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं।

(३) किसी-किसी समय चन्द्रमण्डलके आग्नेय गिरिसे इतने वेगमें धातु निकलता है कि पृथ्वीके निकट आ लगता है और पृथ्वीकी शक्तिसे खिंचकर नीचे गिर पड़ता है।

(४) समस्त उल्काएँ उपग्रह हैं। ये सूर्यके चारो ओर अपने-अपने कक्षमें घूमती हैं। इनमें सूर्य जैसा आलोक रहता है। पवनसे अभिभूत होकर उल्काएँ पृथ्वीपर पतित होती हैं। उल्काएँ अनेक आकार-प्रकारकी होती हैं।

आचार्यने यहाँ पर देदीप्यमान नक्षत्र-पुञ्जोंकी उल्का संज्ञा दी है, ये नक्षत्रपुञ्ज निमित्त सूचक हैं। इनके पतनके आकार-प्रकार, दीप्ति, दिशा आदिसे शुभाशुभका विचार किया जाता है। द्वितीय अध्यायमें इसके फलादेशका निरूपण किया जायगा।

परिवेष—"परितो विष्यते व्याप्यतेऽनेन" अर्थात् चारो ओरसे व्याप्त होकर मण्डलाकार हो जाना परिवेष है। यह शब्द विष धातुसे घञ् प्रत्यय कर देने पर निष्पन्न होता है। इस शब्दका तात्पर्यार्थ यह है कि सूर्य या चन्द्रकी किरणें जब वायु द्वारा मण्डलीभूत हो जाती हैं तब आकाशमें नानावर्ण आकृति विशिष्ट मण्डल बन जाता है, इसीको परिवेष कहते हैं। यह परिवेष रक्त, नील, पीत, कृष्ण, हरित आदि विभिन्न रङ्गोंका होता है और इसका फलादेश भी इन्हीं रङ्गोंके अनुसार होता है।

विद्युत—"विशेषेण द्योतते इति विद्युत्"। द्युत् धातुसे क्विप् प्रत्यय करनेपर विद्युत् शब्द बनता है। इसका अर्थ है बिजली, तडित्, शम्पा, सौदामिनी आदि। विद्युतके वर्णकी अपेक्षासे चार भेद माने गये हैं—कपिला, अतिलोहिता, सिता और पीता। कपिल वर्णकी विद्युत् होनेसे वायु, लोहितवर्णकी होनेसे आतप, पीतवर्णकी होनेसे वर्षण और सित वर्णकी होनेसे दुर्भिक्ष होता है। विद्युदुत्पत्तिका एक मात्र कारण मेघ है। समुद्र और स्थल भागकी ऊपरवाली वायु तडित् उत्पन्न करनेमें असमर्थ है, किन्तु जलके वाष्पीभूत होते ही उसमें विद्युत् उत्पन्न हो जाती है। आचार्यने इस ग्रन्थमें विद्युत द्वारा विशेष फलादेशका निरूपण किया है।

अभ्र—आकाशके रूप रङ्ग, आकृति आदिके द्वारा फलाफलका निरूपण करना अभ्रके अन्तर्गत है। अभ्र शब्दका अर्थ गगन है। दिग्दाह-दिशाओंकी आकृति भी अभ्रके अन्तर्गत आ जाती है।

सन्ध्या—दिवा और रात्रिका जो सन्धिकाल है उसीको सन्ध्या कहते हैं। अर्द्ध अस्तमित और अर्द्ध उदित सूर्य जिस समय होता है, वही प्रकृत सन्ध्या काल है। यह काल प्रकृत सन्ध्या होनेपर भी दिवा और रात्रि एक-एक दण्ड सन्ध्याकाल माना गया है। प्रातः और सायंको छोड़-कर और भी एक सन्ध्या है, जिसे मध्याह्न कहते हैं। जिस समय सूर्य आकाशमण्डलके मध्यमें पहुँचता है, उस समय मध्याह्न सन्ध्या होती है। यह सन्ध्याकाल सप्तम मुहूर्तके बाद अष्टम मुहूर्त्तमें होता है। प्रत्येक सन्ध्याका काल २४ मिनट या १ घटी प्रमाण है। सन्ध्याके रूप-रङ्ग, आकृति आदिके अनुसार शुभाशुभ फलका निरूपण इस ग्रन्थमें किया जायगा।

मेघ—मिह् धातुसे अच् प्रत्यय कर देनेसे मेघ शब्द बनता है। इसका अर्थ है बादल। आकाशमें हमें कृष्ण, श्वेत आदिवर्णकी वायवीय जलराशिकी रेखा वाष्पाकारमें चलती हुई दिखलाई पड़ती है, इसीको मेघ (Cloud) कहते हैं। पर्वतके ऊपर कुहासे की तरह गहन अन्धकार दिखाई देता है, वह मेघका रूपान्तर मात्र है। यह आकाशमें संचित घनीभूत जल-वाष्पसे बहुत कुछ तरल होता है। यही तरल कुहरे की जैसी वाष्पराशि पीछे घनीभूत होकर स्थानीय शीतलताके कारण अपने गर्भस्थ उत्तापको नष्टकर शिशिर बिन्दुकी तरह वर्षा करती है। मेघ और कुहासेकी उत्पत्ति एक ही है, अन्तर इतनो ही है कि मेघ आकाशमें चलता है और कुहासा पृथ्वीपर। मेघ अनेक वर्ण और अनेक आकारके होते हैं। फलादेश इनके आकार और वर्णके अनुसार वर्णित किया जाता है। मेघोंके अनेक भेद हैं, इनमें चार प्रधान हैं—आवर्त, संवर्त्त, पुष्कर और द्रोण। आवर्त मेघ निर्मल, संवर्त्त मेघ बहुजल विशिष्ट, पुष्कर दुष्कर-जल और द्रोण शस्यपूरक होते हैं।

वात—वायुके गमन, दिशा और चक्रद्वारा शुभाशुभ फल वात अध्यायमें निरूपित किया गया है। वायुका संचार अनेक प्रकारके निमित्तोंको प्रकट करनेवाला है।

प्रवर्षण—वर्षा विचार प्रकरणको प्रवर्षणमें रखा गया है। ज्येष्ठ पूर्णिमा के बाद यदि पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें वृष्टि हो तो जलके परिमाण और शुभाशुभ सम्बन्धमें विद्वानोंका मत है कि एक हाथ गहरा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा गड्ढा खोदकर रखे। यदि यह गड्ढा वर्षाके जलसे भर जावे तो एक आढ़क जल होता है। किसी-किसीका मत है कि जहाँ तक दृष्टि जाय, वहाँ तक जल ही जल दिखलाई दे तो अतिवृष्टि समझनी चाहिए। वर्षाका विचार ज्येष्ठकी पूर्णिमाके अनन्तर आषाढ़की प्रतिपदा और द्वितीया तिथिकी वर्षासे ही किया जाता है।

गन्धर्वनगर—गगन-मण्डलमें उदित अनिष्टसूचक पुरविशेषको गन्धर्वनगर कहा जाता है। पुद्गलके आकारविशेष नगरके रूपमें आकाशमें निर्मित हो जाते हैं। इन्हीं नगरों द्वारा फलादेशका निरूपण करना गन्धर्व नगर सम्बन्धी निमित्त कहलाता है।

गर्भ—बताया जाता है कि ज्येष्ठ महीनेकी शुक्ला अष्टमीसे चार दिन तक मेघ वायुसे गर्भ धारण करता है। उन दिनों यदि मन्द वायु चले तथा आकाशमें सरस मेघ दीख पड़ें तो शुभ जानना चाहिए और उन दिनोंमें यदि स्वाती आदि चार नक्षत्रोंमें क्रमानुसार वृष्टि हो तो श्रावण आदि महीनोंमें वैसा ही वृष्टियोग समझना चाहिए। किसी-किसीका मत है कि कार्तिक मासके शुक्लपक्षके उपरान्त गर्भदिवस आता है। गर्गादिके मतसे अगहनके शुक्लपक्षकी प्रतिपदाके उपरान्त जिस दिन चन्द्रमा और पूर्वाषाढ़ाका संयोग होता है, उसी दिन गर्भलक्षण समझना चाहिए। चन्द्रमाके जिस नक्षत्रको प्राप्त होने पर मेघके गर्भ रहता है, चन्द्रविचारसे १९५ दिनोंमें उस गर्भका प्रसवकाल आता है। शुक्लपक्षका गर्भ कृष्णपक्षमें, कृष्णपक्षका शुक्लपक्षमें, दिवस-जात गर्भ रातमें, रातका गर्भ दिनमें एवं सन्ध्याका गर्भ प्रातःऔर प्रातःका गर्भ सन्ध्याको प्रसव—वर्षा करता है। मृगशिरा और पौष शुक्लपक्षका गर्भ मन्द फल देनेवाला होता है। पौष कृष्णपक्षके गर्भका प्रसवकाल श्रावण शुक्लपक्ष, माघ शुक्लपक्षके मेघका श्रावण कृष्णपक्ष, माघ कृष्णपक्षके मेघका श्रावण शुक्लपक्ष, फाल्गुन शुक्लपक्षके मेघका भाद्रपद कृष्णपक्ष, फाल्गुन कृष्ण पक्षके मेघका आश्विन शुक्लपक्ष, चैत्र शुक्लपक्षके मेघका आश्विन कृष्णपक्ष एवं चैत्र कृष्णपक्षके मेघका कार्तिक शुक्लपक्ष वर्षाकाल है। पूर्वका मेघ पश्चिममें और पश्चिमका मेघ पूर्वमें बरसता है। गर्भसे वृष्टिका परिज्ञान तथा मेघोंका विचार किया जाता है। मेघ गर्भके समय वायुके योगका विचार कर लेना भी आवश्यक है।

यात्रा—इस प्रकरणमें मुख्यरूपसे राजाकी यात्राका निरूपण किया है। यात्राके समयमें होनेवाले शकुन-अशकुनों द्वारा शुभाशुभ फल निरूपित है। यात्राके लिए शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ वार, शुभ योग और शुभ करणका होना परमावश्यक है। शुभ समयमें यात्रा करनेसे शीघ्र और अनायास ही कार्यसिद्धि होती है।

उत्पात—स्वभावके विपरीत घटित होना ही उत्पात है। उत्पात तीन प्रकारके होते हैं दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। नक्षत्रोंका विकार, उल्का, निर्घात, पवन और घेरा दिव्य उत्पात हैं, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुषादि अन्तरिक्ष उत्पात हैं और चर एवं स्थिर आदि पदार्थोंसे उत्पन्न हुए उत्पात भौम कहे जाते हैं।

ग्रहचार—सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन ग्रहोंके गमन द्वारा शुभाशुभ फल अवगत करना ग्रहचार कहलाता है। समस्त नक्षत्रों और राशियोंमें ग्रहोंकी उदय, अस्त, वक्री, मार्गी इत्यादि अवस्थाओं द्वारा फलका निरूपण करना ग्रहचार है।

ग्रहयुद्ध—मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन ग्रहोंमें से किन्हीं दो ग्रहोंकी अर्थोपरि स्थिति होनेसे [illegible] उसे ग्रहयुद्ध कहते हैं। बृहत्संहिताके अनुसार ऊर्ध्वा-धर अपनी-अपनी कक्षामें अवस्थित ग्रहोंमें अतिदूरत्वनिबन्धन दृष्टिके विषयमें जो समता

होती है, उसे ही ग्रहयुद्ध कहते हैं। ग्रहयुति और ग्रहयुद्धमें पर्याप्त अन्तर है। ग्रहयुतिमें मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पाँच ग्रहोंमें से कोई भी ग्रह जब सूर्य या चन्द्रके साथ समरूप में स्थित होते हैं, तो ग्रहयुक्ति कहलाती है और जब मंगलादि पाँचों ग्रह आपसमें ही समसूत्रमें स्थित होते हैं तो ग्रह युद्ध कहा जाता है स्थितिके अनुसार ग्रहयुद्धके चार भेद हैं—उल्लेख, भेद, अंशुविमर्द और अपसव्य। छायामात्रसे ग्रहोंके स्पर्श हो जानेको उल्लेख; दोनों ग्रहोंका परिमाण यदि योगफलके आधेसे ग्रहद्वयका अन्तर अधिक हो तो उस युद्धको भेद; दो ग्रहोंकी किरणोंका संघट्ट होना अंशुविमर्द एवं दोनों ग्रहोंके अन्तर साठ कलासे न्यून हो तो उसको अपसव्य कहते हैं।

घातिक या अर्घकाण्ड—ग्रहोंके स्वरूप, गमन, अवस्था एवं विभिन्न प्रकारके बाह्य निमित्तोंके द्वारा वस्तुओंकी तेजी मन्दी अवगत करना अर्घकाण्ड है।

स्वप्न—चिन्ताधारा दिन और रात दोनोंमें समानरूपसे चलती है, लेकिन जागृतावस्थाकी चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण रहता है, पर सुषुप्तावस्थाकी चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण नहीं रहता है, इसीलिए स्वप्न भी नाना अलंकारमयी प्रतिरूपोंमें दिखलाई पड़ते हैं। स्वप्नमें दर्शन और प्रत्यभिज्ञानुभूतिके अतिरिक्त शेषानुभूतियोंका अभाव होने पर भी सुख, दुःख, क्रोध, आनन्द, भय, ईर्ष्या आदि सभी प्रकारके मनोभाव पाये जाते हैं। इन भावोंके पाये जानेका प्रधान कारण हमारी अज्ञात इच्छा है। स्वप्न द्वारा भविष्यमें घटित होनेवाली शुभाशुभ घटनाओंकी सूचना अलंकृत भाषामें मिलती है, अतः उस अलंकृत भाषाका विश्लेषण करना ही स्वप्न विज्ञानका कार्य है। अरस्तू (Aristotle) ने स्वप्नके कारणोंका विश्लेषण करते हुए लिखा है कि जागृत अवस्थामें जिन प्रवृत्तियोंकी ओर व्यक्तिका ध्यान नहीं जाता, वे ही प्रवृत्तियाँ अर्द्धनिद्रित अवस्थामें उत्तेजित होकर मानसिक जगत्में जागरूक हो जाती हैं। अतः स्वप्नमें भावी घटनाओंकी सूचनाके साथ हमारी छिपी हुई प्रवृत्तियोंका ही दर्शन होता है। एक दूसरे पश्चिमीय दार्शनिकने मनोवैज्ञानिक कारणोंकी खोज करते हुए बतलाया है कि स्वप्नमें मानसिक जगत्के साथ बाह्य जगत्का सम्बन्ध रहता है, इसलिए हमें भविष्यमें घटनेवाली घटनाओंकी सूचना स्वप्नकी प्रवृत्तियोंसे मिलती है। डाक्टर सी० जे० ह्विटबे (Dr. C. J. Whitbey) ने मनोवैज्ञानिक ढंगसे स्वप्नके कारणोंकी खोज करते हुए लिखा है कि गर्मीके कारण हृदयकी जो क्रियाएँ जागृत अवस्थामें सुषुप्त रहती हैं, वे ही स्वप्नावस्थामें उत्तेजित होकर सामने आ जाती हैं। जागृत अवस्थामें कार्य संलग्नताके कारण जिन विचारोंकी ओर हमारा ध्यान नहीं जाता है, निद्रित अवस्थामें वे ही विचार स्वप्नरूपसे सामने आते हैं। पृथगूगोरियन सिद्धान्तमें माना गया है कि शरीर आत्माकी कब्र है। निद्रित अवस्थामें आत्मा स्वतन्त्ररूपसे असल जीवनकी ओर प्रवृत्त होता है और अनन्त जीवनकी घटनाओंको ला उपस्थित करती है। अतः स्वप्नका सम्बन्ध भविष्यत्कालके साथ भी है। विवलोनियन (Bablylonian) कहते हैं कि स्वप्नमें देव और देवियाँ आती हैं तथा स्वप्नमें हमें उनके द्वारा भावी जीवनकी सूचनाएँ मिलती हैं, अतः स्वप्नकी बातों द्वारा भविष्यत्कालीन घटनाएँ सूचित की जाती हैं। गिलजेम्स (Giljames) नामक महाकाव्यमें लिखा है कि वीरोंको रातमें स्वप्न द्वारा उनके भविष्यकी सूचना दी जाती थी। स्वप्नका सम्बन्ध देवी-देवताओंसे है, मनुष्योंसे नहीं। देवी-देवता स्वभावतः व्यक्तिसे प्रसन्न होकर उसके शुभाशुभकी सूचना देते हैं।

उपर्युक्त विचार धाराओंका समन्वय करनेसे यह स्पष्ट है कि स्वप्न केवल अवदमित इच्छाओंका प्रकाशन नहीं, बल्कि भावी शुभाशुभका सूचक है। फ्राइडने स्वप्नका सम्बन्ध भविष्यत्में घटनेवाली घटनाओंसे कुछ भी नहीं स्थापित किया है; पर वास्तविकता इससे दूर है। स्वप्न भविष्यका सूचक है! क्योंकि सुषुप्तावस्थामें भी आत्मा तो जागृत ही रहती है,

केवल इन्द्रियाँ और मनकी शक्ति विश्राम करनेके लिए सुषुप्त-सी हो जाती हैं। अतः ज्ञानकी मात्राकी उज्ज्वलतासे निद्रित अवस्थामें जो कुछ देखते हैं, उसका सम्बन्ध हमारे भूत, वर्तमान और भावी जीवनसे है। इसी कारण आचार्योंने स्वप्नको भूत, भविष्य और वर्तमानका सूचक बताया है।

मुहूर्त—माङ्गलिक कार्योंके लिए शुभ समयका विचार करना मुहूर्त है। यतः समयका प्रभाव प्रत्येक जड़ एवं चेतन सभी प्रकारके पदार्थों पर पड़ता है। अतः गर्भाधानादि षोडश संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा प्रभृति शुभ कार्योंके लिए मुहूर्तका आश्रय लेना परम आवश्यक है।

तिथि—चन्द्र और सूर्यके अन्तरांशोंपरसे तिथिका मान निकाला जाता है। प्रतिदिन १२ अंशोंका अन्तर सूर्य और चन्द्रमाके भ्रमणमें होता है, यही अन्तरांशका मध्यम मान है। अमावास्याके बाद प्रतिपदासे लेकर पूर्णिमा तककी तिथियाँ, शुक्लपक्षकी और पूर्णिमाके बाद प्रतिपदासे लेकर अमावास्या तककी तिथियाँ कृष्णपक्षकी होती हैं। ज्योतिष शास्त्रमें तिथियोंकी गणना शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे आरम्भ होती है।

तिथियोंकी संज्ञाएँ—१।६।११ नन्दा, २।७।१२ भद्रा, ३।८।१३ जया, ४।९।१४ रिक्ता और ५।१०।१५ पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्षरन्ध्र—४।६।८।९।१२।१४ तिथियाँ पक्षरन्ध्र हैं। ये विशिष्ट कार्योंमें त्याज्य हैं।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्रमें दोनों पक्षोंकी अष्टमी और नवमी; वैशाखके दोनों पक्षोंकी द्वादशी, ज्येष्ठमें कृष्णपक्षकी चतुर्दशी और शुक्लपक्षकी त्रयोदशी; आषाढ़में कृष्णपक्षकी षष्ठी और शुक्लपक्षकी सप्तमी; श्रावणमें दोनों पक्षोंकी द्वितीया और तृतीया; भाद्रपदमें दोनों पक्षोंकी प्रतिपदा और द्वितीया; आश्विनमें दोनों पक्षोंकी दशमी और एकादशी; कार्तिकमें कृष्णपक्षकी पञ्चमी और शुक्लपक्षकी चतुर्दशी; मार्गशीर्षमें दोनों पक्षोंकी सप्तमी और अष्टमी; पौषमें दोनों पक्षोंकी चतुर्थी और पंचमी; माघमें कृष्णपक्षकी पंचमी और शुक्लपक्षकी षष्ठी एवं फाल्गुनमें कृष्णपक्षकी चतुर्थी और शुक्लपक्षकी तृतीया मास शून्य संज्ञक हैं।

सिद्धा तिथियाँ—मंगलवारको ३।८।१३, बुधवारको २।७।१२, गुरुवारको ५।१०।१५, शुक्रवारको १।६।११ एवं शनिवारको ४।९।१४ तिथियाँ सिद्धि देनेवाली सिद्धा संज्ञक हैं।

दग्ध, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ—रविवारको द्वादशी, सोमवारको एकादशी, मंगलवारको पंचमी, बुधवारको तृतीया, गुरुवारको षष्ठी, शुक्रको अष्टमी, शनिवारको नवमी दग्धा संज्ञक; रविवारको चतुर्थी, सोमवारको षष्ठी, मंगलवारको सप्तमी; बुधवारको द्वितीया; गुरुवारको अष्टमी, शुक्रवारको नवमी और शनिवारको सप्तमी विषसंज्ञक एवं रविवारको द्वादशी, सोमवारको षष्ठी, मंगलवारको सप्तमी; बुधवारको अष्टमी, बृहस्पतिवारको नवमी, शुक्रवारको दशमी और शनिवारको एकादशी हुताशनसंज्ञक है। ये तिथियाँ नामके अनुसार फल देती हैं।

करण—तिथिके आधे भागको करण कहते हैं अर्थात् एक तिथिमें दो करण होते हैं। करण ११ होते हैं—(१) बव (२) बालव (३) कौलव (४) तैतिल (५) गर (६) वणिज (७) विष्टि (८) शकुनि (९) चतुष्पद (१०) नाग और (११) किंस्तुघ्न। इन करणोंमे पहलेके ७ करण चर संज्ञक और अन्तिम ४ करण स्थिरसंज्ञक हैं।

करणोंके स्वामी—बवका इन्द्र, बालवका ब्रह्मा, कौलवका सूर्य, तैतिलका सूर्य, गरकी पृथ्वी, वणिजकी लक्ष्मी, विष्टिका यम, शकुनिका कलि, चतुष्पादका रुद्र, नागका सर्प एवं किंस्तुघ्नका वायु है। विष्टि करणका नाम भद्रा है, प्रत्येक पञ्चांगमे भद्राके आरम्भ और अन्तका समय दिया रहता है।

निमित्त—जिन लक्षणोंको देखकर भूत और भविष्यमें घटित हुई और होनेवाली घटनाओंका निरूपण किया जाता है, उन्हें निमित्त कहते हैं। निमित्तके आठ भेद हैं—(१) व्यंजन—तिल, मस्सा, चट्टा आदिको देखकर शुभाशुभका निरूपण करना, व्यंजन निमित्तज्ञान है। (२) मस्तक, हाथ, पाँव आदि अंगोंको देखकर शुभाशुभ कहना अंगनिमित्तज्ञान है। (३) चेतन और अचेतनके शब्द सुनकर शुभाशुभका वर्णन करना स्वर निमित्तज्ञान है। (४) पृथ्वीकी चिकनाई और रूखेपनेको देखकर फलादेश निरूपण करना भौम निमित्तज्ञान है। (५) वस्त्र, शस्त्र, आसन, छत्रादिको छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्त ज्ञान है। (६) ग्रह, नक्षत्रोंके उदयास्त द्वारा फल निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्तज्ञान है। (७) स्वस्तिक, कलश, शंख, चक्र आदि चिह्नों द्वारा एवं हस्तरेखाको परीक्षाकर फलादेश बतलाना लक्षण निमित्त ज्ञान है। (८) स्वप्न द्वारा शुभाशुभ फल कहना स्वप्न निमित्तज्ञान है। ऋषिपुत्र निमित्त शास्त्रमें निमित्तोंके तीन ही भेद किये हैं—

जो दिट्ठ भुविरसण्ण जे दिट्ठा कुहमेण कत्ताणं।
सदसंकुलेन दिट्ठा वउसट्ठिय येण णाणधिया॥

अर्थात्—पृथ्वीपर दिखलाई देनेवाले निमित्त, आकाशमें दिखलाई देनेवाले निमित्त और शब्द श्रवण द्वारा सूचित होनेवाले निमित्त, इस प्रकार निमित्तके तीन भेद हैं।

शकुन—जिससे शुभाशुभका ज्ञान किया जाय, वह शकुन है। वसन्तराज शाकुनमें बताया गया है कि जिन चिह्नोंके देखनेसे शुभाशुभ जाना जाय, उन्हें शकुन कहते हैं। जिस निमित्त द्वारा शुभ विषय जाना जाय उसे शुभ शकुन और जिसके द्वारा अशुभ जाना जाय उसे अशुभ शकुन कहते हैं। दधि, घृत, दूर्वा, आतप, तण्डुल, पूर्णकुम्भ, सिद्धान्त, श्वेत सर्षप, चन्दन, शंख, मृत्तिका, गोरोचन, देवमूर्त्ति, वीणा, फल, पुष्प, अलंकार, अस्त्र, ताम्बूल, मान, आसन, ध्वज, छत्र, व्यञ्जन, वस्त्र, रत्न, सुवर्ण, पद्म, भृङ्गार, प्रज्वलित वह्नि, हस्ती, छाग, कुश, रूप्य, ताम्र, वंग, औषध, पल्लव इन वस्तुओंकी गणना शुभ शकुनोंमें की गई है। यात्राके समय इनका दर्शन और स्पर्शन शुभ माना गया है। यात्रा कालमें संगीत सुनना, वाद्य सुनना भी शुभ माना गया है। गमन कालमें यदि कोई खाली घड़ा लेकर पथिकके साथ जाय और घड़ा भर कर लौट आवे तो पथिक भी कृतकार्य होकर निर्विघ्न लौटता है। यात्रा कालमें चुल्लू भर जलसे कुल्ली करनेपर यदि अकस्मात् कुछ जल गलेके भीतर चला जाय तो अभीष्ट कार्यकी सिद्धि होती है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु, कर्दम-कीचड़, कपास, तुष, अस्थि, विष्ठा, मलिन व्यक्ति, लौह, कृष्णधान्य, प्रस्तर, केश, सर्प, तेल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तिनका, तक्र, शृंखला आदिका दर्शन और स्पर्शन यात्रा कालमें अशुभ माना जाता है। यदि यात्रा करते समय गाड़ी पर चढ़ते हुए पैर फिसल जाय अथवा गाड़ी छूट जाय तो यात्रामें विघ्न होता है। मार्जारयुद्ध, मार्जारशब्द, कुटुम्बका परस्पर विवाद दिखलायी पड़े तो यात्राकालमें अनिष्ट होता है। यात्रा करना वर्जित है। नये घरमें प्रवेश करते समय शव दर्शन होनेसे मृत्यु अथवा बड़ा रोग होता है।

जाते अथवा आते समय यदि अत्यन्त सुन्दर शुक्लवस्त्र और शुक्ल मालाधारी पुरुष या स्त्रीके दर्शन हों तो कार्य सिद्ध होता है। राजा, प्रसन्न व्यक्ति, कुमारी कन्या, गजारूढ़ या अश्वारूढ़ व्यक्ति दिखलाई पड़े तो यात्रामें शुभ होता है। श्वेत वस्त्रधारिणी, श्वेतचन्दनलिप्ता और सिर पर श्वेत माला धारण किये हुए गौरांग नारी मिल जाय तो सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

यात्राकालमें अपमानित, अंगहीन, नग्न, तैललिप्त, रजस्वला, गर्भवती, रोदनकारिणी, मलिनवेशधारिणी, उन्मत्त, मुक्तकेशी नारी दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट होता है। जाते समय

पीछेसे या सामने खड़े हो दूसरा व्यक्ति कहे—'जाओ, मंगल होगा' तो पथिकको सब प्रकारसे विजय मिलती है। यात्राकालमें शब्दहीन शृगाल दिखलाई पड़े तो अनिष्ट होता है। यदि शृगाल पहले 'हुआ-हुआ' शब्द करके पीछे 'टटा' ऐसा शब्द करे तो शुभ और अन्य प्रकारका शब्द करनेसे अशुभ होता है। रात्रिमें जिस घरके पश्चिम ओर शृगाल शब्द करे, उसके मालिकका उच्चाटन, पूर्व ओर शब्द होनेसे भय, उत्तर और दक्षिण ओर शब्द करनेसे शुभ होता है।

यदि भ्रमर बाईं ओर गुन-गुन शब्द कर किसी स्थानमें ठहर जायँ अथवा भ्रमण करते रहें तो यात्रामें लाभ, हर्ष होता है। यात्राकालमें पैरमें काँटा लगनेसे विघ्न होता है।

अंगका दक्षिण भाग फड़कनेसे शुभ तथा पृष्ठ और हृदयके वामभागका स्फुरण होनेसे अशुभ होता है। मस्तक स्पन्दन होनेसे स्थान वृद्धि तथा भ्रू और नासा स्पन्दनसे प्रियसंगम होता है। चक्षुःस्पन्दनसे भृत्यलाभ, चक्षुके उपान्त देशका स्पन्दन होनेसे अर्थलाभ और मध्य देशके फड़कनेसे उद्वेग और मृत्यु होती है। अपाङ्ग देशके फड़कनेसे स्त्रीलाभ, कर्णके फड़कनेसे प्रियसंवाद, नासिकाके फड़कनेसे प्रणय, अधर ओष्ठके फड़कनेसे अभीष्ट विषयलाभ, कण्ठदेशके फड़कनेसे सुख, बाहुके फड़कनेसे मित्रस्नेह, स्कन्धप्रदेशके फड़कनेसे सुख, हाथके फड़कनेसे धन-लाभ, पीठके फड़कनेसे पराजय, और वक्षस्थलके फड़कनेसे जयलाभ होता है। स्त्रियोंकी कुक्षि और स्तन फड़कनेसे सन्तान लाभ, नाभि फड़कनेसे कष्ट और स्थान च्युति फल होता है। स्त्रीका वामांग और पुरुषका दक्षिणाङ्ग ही फल निरूपणके लिए ग्रहण किया जाता है।

पाक—सूर्यादि ग्रहोंका फल कितने समयमें मिलता है, इसका निरूपण करना ही इस अध्यायका विषय है।

ज्योतिष—सूर्यादि ग्रहोंके गमन, संचार आदिके द्वारा फलका निरूपण किया जाता है। इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु आदि ज्योति पदार्थोंका स्वरूप, संचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओंका निरूपण एवं ग्रह, नक्षत्रोंकी गति, स्थिति और संचारानुसार शुभाशुभ फलोंका कथन किया जाता है। कतिपय मनीषियोंका अभिमत है कि नभोमंडलमें स्थित ज्योतिःसम्बन्धी विविध विषयक विद्याको ज्योतिर्विद्या कहते हैं, जिस शास्त्रमें इस विद्याका साङ्गोपाङ्ग वर्णन रहता है, वह ज्योतिषशास्त्र कहलाता है।

वास्तु—वासस्थानको वास्तु कहा जाता है। वास करनेके पहले वास्तुका शुभाशुभ स्थिर करके वास करना होता है। लक्षणादि द्वारा इस बातका निर्णय करना होता है कि कौन वास्तु शुभकारक है और कौन अशुभकारक। इस प्रकरणमें गृहोंकी लम्बाई, चौड़ाई तथा प्रकार आदिका निरूपण किया जाता है।

दिव्येन्द्र संपदा—आकाशकी दिव्य विभूति द्वारा फलादेशका वर्णन करना ही इस अध्यायके अन्तर्गत है।

लक्षण—इस विषयमें दीपक, दन्त, काष्ठ, श्वान, गो, कुक्कुट, कूर्म, छाग, अश्व, गज, पुरुष, स्त्री, चमर, छत्र, प्रतिमा, शय्यासन, प्रासाद प्रभृतिका स्वरूप गुण आदिका विवेचन किया जाता है। स्त्री और पुरुषके लक्षणोंके अन्तर्गत सामुद्रिक शास्त्र भी आ जाता है। अंगोपाङ्गोंकी बनावट एवं आकृति द्वारा भी शुभाशुभ लक्षणोंका निरूपण इस अध्यायमें किया जाता है।

चिह्न—विभिन्न प्रकारके शरीर बाह्य एवं शरीरान्तर्गत चिह्नों द्वारा शुभाशुभ फल निर्णय करना चिह्नके अन्तर्गत आता है। इसमें तिल, मस्सा आदि चिह्नोंका विचार विशेष रूपसे होता है।

लग्न—जिस समयमें क्रान्तिवृत्तका जो प्रदेश स्थान क्षितिज वृत्तमें लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दोंमें यह भी कहा जा सकता है कि दिनका उतना अंश जितनेमें किसी एक राशिका उदय होता है, लग्न कहलाता है। अहोरात्रमें बारह राशियोंका उदय होता है, इसलिए एक दिन-रातमें बारह लग्न मानी जाती हैं। लग्न निकालनेकी क्रिया गणित द्वारा की जाती है। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन ये लग्न राशियाँ हैं।

मेष—पुरुष जाति, चर संज्ञक, अग्नितत्त्व, रक्तपीतवर्ण, पित्तप्रकृति, पूर्वदिशाकी स्वामिनी और पृष्ठोदयी है।

वृष—स्त्रीराशि, स्थिरसंज्ञक, भूमितत्त्व, शीतलस्वभाव, वातप्रकृति, श्वेतवर्ण, विषमोदयी और दक्षिणकी स्वामिनी है।

मिथुन—पश्चिमकी स्वामिनी, वायुतत्त्व, हरितवर्ण, पुरुषराशि, द्विस्वभाव, उष्ण और दिनबली है।

कर्क—चर, स्त्री जाति, सौम्य, कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिबली और उत्तर दिशाकी स्वामिनी है।

सिंह—पुरुषजाति, स्थिरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनबली, पित्तप्रकृति, पुष्टशरीर, भ्रमणप्रिय और पूर्वकी स्वामिनी है।

कन्या—पिंगलवर्ण, स्त्रीजाति, द्विस्वभाव, दक्षिणकी स्वामिनी, रात्रिबली, वायु-पित्त प्रकृति और पृथ्वीतत्त्व है।

तुला—पुरुष, चर, वायुतत्त्व, पश्चिमकी स्वामिनी, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, दिनबली और क्रूर स्वभाव है।

वृश्चिक—स्थिर, शुभ्रवर्ण, स्त्रीजाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशाकी स्वामिनी, कफ प्रकृति, रात्रिबली और हठी है।

धनु—पुरुष, कांचनवर्ण, द्विस्वभाव, क्रूर, पित्त प्रकृति, दिनबली, अग्नितत्त्व और पूर्वकी स्वामिनी है।

मकर—चर, स्त्री, पृथ्वीतत्त्व, वातप्रकृति, पिंगलवर्ण, रात्रिबली, उच्चाभिलाषी और दक्षिणकी स्वामिनी है।

कुम्भ—पुरुष, स्थिर, वायुतत्त्व, विचित्रवर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, त्रिदोष प्रकृति और दिनबली है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्रीजाति, कफप्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिबली, पिंगलवर्ण और उत्तरकी स्वामिनी है।

इन लग्नोंका जैसा स्वरूप बतलाया गया है, उन लग्नोंमें उत्पन्न हुए व्यक्तियोंका वैसा ही स्वभाव होता है।

द्वितीयोऽध्यायः

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्वासाः श्रमणोत्तमः ।
यथावस्थासु[1] विन्यासं द्वादशाङ्गविशारदः ॥१॥

शिष्योंके उक्त प्रश्नोंके किये जाने पर द्वादशाङ्गके पारगामी दिगम्बर श्रमणोत्तम भगवान् भद्रबाहु आगममें जिस प्रकारसे उक्त प्रश्नोंका वर्णन निहित है उसी प्रकारसे अथवा प्रश्नक्रमसे उत्तर देनेके लिए उद्यत हुए ॥१॥

भवद्भिर्यदहं पृष्टो निमित्तं जिनभाषितम् ।
समासव्यासतः सर्वं तन्निबोध यथाविधिः ॥२॥

आप सबने मुझसे यह पूछा कि "शुभाशुभ जाननेके लिए जिनेन्द्र भगवान्ने जिन निमित्तोंका वर्णन किया है, उन्हें बतलाओ।" अतः मैं संक्षेप और विस्तारसे उन सबका यथाविधि वर्णन करता हूँ, अवगत करो ॥२॥

प्रकृतेर्योऽन्यथाभावो विकारः सर्व उच्यते ।
एवं विकारे[2] विज्ञेयं भयं तत्प्रकृतेः[3] सदा ॥३॥

प्रकृतिका अन्यथाभाव विकार कहा जाता है। जब कभी तुमको प्रकृतिका विकार दिखलाई पड़े तो उस परसे ज्ञात करना कि यहाँ पर भय होनेवाला है ॥३॥

यः[4] प्रकृतेर्विपर्यासः प्रायः संक्षेपत उत्पातः ।
क्षितिगगनदिव्यजातो यथोत्तरं गुरुतरं भवति ॥४॥

प्रकृतिके विपरीत घटना घटित होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकारके होते हैं—भौमिक, अन्तरिक्ष और दिव्य। क्रमशः उत्तरोत्तर ये दुःखदायक तथा कठिन होते हैं ॥४॥

उल्कानां प्रभवं रूपं प्रमाणं फलमाकृतिः ।
यथावत्[5] संप्रवक्ष्यामि तन्निबोधाय[6] तत्त्वतः ॥५॥

उल्काओंकी उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृतिका यथार्थ वर्णन करता हूँ। आपलोग यथार्थ रूपसे इसे अवगत करें ॥५॥

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह ।
सम्भवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता ॥६॥

भौतिक—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पाँच भूतोंसे निष्पन्न शरीरोंको धारण किये हुए देव जब स्वर्गसे इस लोकमें आते हैं, तब उनके शरीर आकाशमें विचित्र ज्योतिरूपको धारण करते हैं; इसी ज्योतिका नाम विद्वानोंने उल्का कहा है ॥६॥

तत्र तारा तथा धिष्ण्यं विद्युच्चाशनिभिः सह ।
उल्का विकारा बोद्धव्या[7]निपतन्ति निमित्ततः ॥७॥

तारा, धिष्ण्य, विद्युत् और अशनि ये सब उल्काके विकार हैं और ये निमित्त पाकर गिरते हैं ॥७॥

---

१. शास्त्रविन्यास मु० । २. विकारो विज्ञेयः मु० A. । ३. स प्रकृतेरन्यथागमः मु० A. । ४. यह श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है । ५. यथावस्थं म० । ६. तन्निबोधत, मु० । ७. ते पतन्ति मु० ।

ताराणां[1] च प्रमाणं च[2] धिष्ण्यं तद्द्विगुणं भवेत् ।
विद्युद्विशालकुटिला रूपतः क्षिप्रकारिणी[3] ॥८॥

ताराका जो प्रमाण है उससे लम्बाईमें दूना धिष्ण्य होता है। विद्युत् नाम वाली उल्का बड़ी, कुटिल—टेढ़ी-मेढ़ी और शीघ्रगामिनी होती है ॥८॥

अशनिश्चक्रसंस्थाना दीर्घा भवति रूपतः ।
पौरुषी तु भवेदुल्का प्रपतन्ती विवर्द्धते ॥९॥

अशनि नामकी उल्का चक्राकार होती है। पौरुषी नामकी उल्का स्वभावसे लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है ॥९॥

चतुर्भागफला तारा धिष्ण्यमर्धफलं भवेत् ।
पूजिताः[4] पद्मसंस्थाना माङ्गल्या ताश्च पूजिताः ॥१०॥

तारा नामकी उल्काका फल चतुर्थांश होता है, धिष्ण्य संज्ञक उल्काका फल आधा होता है और जो उल्का कमलाकार होती है, वह पूजने योग्य तथा मंगलकारी होती है ॥१०॥

पापाः घोरफलं[5] दद्युः शिवाश्चापि शिवं फलम् ।
व्यामिश्राश्चापि व्यामिश्रं येषां तैः प्रतिपुद्गलाः ॥११॥

पापरूप उल्काएँ घोर अशुभ फल देती हैं तथा शुभरूप उल्काएँ शुभ फल देती हैं। शुभ और अशुभ मिश्रित उल्काएँ मिश्रित उभय रूप फल प्रदान करती हैं। इन पुद्गलोंका ऐसा ही स्वभाव है ॥११॥

इत्येतावत् समासेन प्रोक्तमुल्कासुलक्षणम् ।
पृथक्त्वेन प्रवक्ष्यामि लक्षणं व्यासतः पुनः ॥१२॥

यहाँ तक उल्काओंके संक्षेपमें लक्षण कहे, अब पृथक्-पृथक् पुनः विस्तारसे वर्णन करता हूँ ॥१२॥

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायामुल्कालक्षणो द्वितीयोऽध्यायः ।

विवेचन—प्रकृतिका विपरीत परिणमन होते ही अनिष्ट घटनाओंके घटनेकी संभावना समझ लेनी चाहिए। जब तक प्रकृति अपने स्वभावरूपमें परिणमन करती है, तब तक अनिष्ट होनेकी आशंका नहीं। संहिता ग्रन्थोंमें प्रकृतिको इष्टानिष्ट सूचक निमित्त माना गया है। दिशाएँ, आकाश, आतप, वर्षा, चाँदनी, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, उषा, सन्ध्या आदि सभी निमित्त सूचक हैं। ज्योतिष शास्त्रमें इन सभी निमित्तों द्वारा भावी इष्टानिष्टोंकी विवेचना की गई है। इस द्वितीय अध्यायमें उल्काओंके स्वरूपका विवेचन किया गया है और इनका फलादेश तृतीय अध्यायमें वर्णित है। यद्यपि प्रथम अध्यायके विवेचनमें उल्काओंके स्वरूपका संक्षिप्त और सामान्य परिचय दिया गया है, तो भी यहाँ संक्षिप्त विवेचन करना अभीष्ट है।

रातको प्रायः जो तारे टूटकर गिरते हुए जान पड़ते हैं, ये ही उल्काएँ हैं। अधिकांश उल्काएँ हमारे वायुमण्डलमें ही भस्म हो जाती हैं और उनका कोई अंश पृथ्वी तक नहीं आ

१. तारातारा मु० । २. तु मु० । ३. क्षिप्रचारिणी मु० । ४. रक्ता पीतास्तु मध्यास्तु श्वेताः स्निग्धास्तु पूजिताः मु० । ५. पापफलं मु० ।

पाता, परन्तु कुछ उल्काएँ बड़ी होती हैं। जब वे भूमि पर गिरती हैं, तो उनसे प्रचण्ड ज्वाला सी निकलती है और सारी भूमि उस ज्वालासे प्रकाशित हो जाती है। वायुको चीरते हुए भयानक वेगसे उनके चलनेका शब्द कोसों तक सुनाई पड़ता है और पृथ्वीपर गिरनेकी धमक भूकम्प-सी जान पड़ती है। कहा जाता है कि आरम्भमें उल्कापिण्ड एक सामान्य ठण्डे प्रस्तर-पिण्डके रूपमें रहता है। यदि यह वायुमण्डलमें प्रविष्ट हो जाता है तो घर्षणके कारण उसमें भयंकर ताप और प्रकाश उत्पन्न होता है, जिससे वह जल उठता है और भीषण गतिसे दौड़ता हुआ अन्तमें राख हो जाता है और जब यह वायुमण्डलमें राख नहीं होता, तब पृथ्वी पर गिरकर भयानक दृश्य उत्पन्न कर देता है।

उल्काओंके गमनका मार्ग नक्षत्रकक्षाके आधारपर निश्चित किया जाय तो प्रतीत होगा कि बहुतेरी उल्काएँ एक ही बिन्दुसे चलती हैं, पर आरम्भमें अदृश्य रहनेके कारण वे हमें एक बिन्दु से आती हुई नहीं जान पड़तीं। केवल उल्का-झड़ियोंके समान ही उनके एक बिन्दुसे चलने का आभास हमें मिलता है। उस बिन्दुको जहाँसे उल्काएँ चलती हुई मालूम पड़ती हैं, संपात मूल कहते हैं। आधुनिक ज्योतिष उल्काओंको केतुओंके रोड़े, टुकड़े या अङ्ग मानता है। अनुमान किया जाता है कि केतुओंके मार्गमें असंख्य रोड़े और ढोके बिखर जाते हैं। सूर्य गमन करते-करते जब इन रोड़ोंके निकटसे जाता है तो ये रोड़े टकरा जाते हैं और उल्काके रूपमें भूमिमें पतित हो जाते हैं। उल्काओं की ऊँचाई पृथ्वीसे ५०-६० मीलके लगभग होती है। ज्योतिष-शास्त्रमें इन उल्काओंका बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके पतन द्वारा शुभाशुभका परिज्ञान किया जाता है।

उल्काके ज्योतिषमें पाँच भेद हैं—धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा। उल्काका फल १५ दिनोंमें, धिष्ण्या और अशनिका ४५ दिनोंमें एवं तारा और विद्युत्का छः दिनोंमें फल प्राप्त होता है। अशनिका आकार चक्रके समान है, यह बड़े शब्दके साथ पृथ्वी फाड़ती हुई मनुष्य, गज, अश्व, मृग, पत्थर, गृह, वृक्ष और पशुओंके ऊपर गिरती है। तड़-तड़ शब्द करती हुई विद्युत् अचानक प्राणियोंको त्रास उत्पन्न करती हुई कुटिल और विशाल रूपमें जीवों और ईंधनके ढेर पर गिरती है। पतली छोटी पूँछवाली धिष्ण्या जलते हुए अंगारेके समान चालीस हाथ तक दिखलाई देती है। इसकी लम्बाई दो हाथकी होती है। तारा ताँबा, कमल, ताररूप और शुक्ल होती है, इसकी चौड़ाई एक हाथ और खिचती हुई-सी आकाशमें तिरछी या आधी उठी हुई गमन करती है। प्रतनुपुच्छा विशाला उल्का गिरते-गिरते बढ़ती है, परन्तु इसकी पूँछ छोटी होती जाती है, इसकी दीर्घता पुरुषके समान होती है, इसके अनेक भेद हैं। कभी यह प्रेत, शास्त्र, खर, करभ, नाक्र, बन्दर, तीक्ष्ण दंतवाले जीव और मृगके समान आकारवाली हो जाती है। कभी गोह, साँप और धूम्ररूपवाली हो जाती है। कभी यह दो सिरवाली दिखलाई पड़ती है। यह उल्का पापमय मानी गई है।

कभी ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंसके समान दिखलायी पड़ती है, यह उल्का शुभकारक पुण्यमयी है। श्रीवत्स, वज्र, शंख और स्वस्तिक रूपमें प्रकाशित होनेवाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। अनेक वर्णवाली उल्काएँ आकाशमें निरन्तर भ्रमण करती रहती हैं।

जिन उल्काओंके सिरका भाग मकरके समान और पूँछ गायके समान हो, वे उल्काएँ अनिष्ट सूचक तथा मनुष्य जातिके लिए भयप्रद होती हैं। चमक या प्रकाशवाली छोटी-छोटी उल्काएँ—जिनका स्वरूप धिष्ण्याके समान है, किसी महत्त्वपूर्ण घटनाकी सूचना देती हैं। तारके समान लम्बी उल्काएँ, जिनका गमन सम्पात बिन्दुसे भूमण्डल तक एक-सा हो रहा है,

बीचमें किसी भी प्रकारका विराम नहीं है, वे व्यक्ति जीवनकी गुप्त और महत्त्वपूर्ण बातोंको प्रकट करती हैं। तार या लड़ीरूपमें रहना उसका व्यक्ति और समाजके जीवनकी शृंखलाकी सूचक है। सूचीरूपमें पड़नेवाली उल्का देश और राष्ट्रके उत्थानकी सूचिका है।

इधर-उधर उठी हुई और विशृंखलित उल्काएँ आन्तरिक उपद्रवकी सूचिका हैं। जब देशमें महान् अशान्ति उत्पन्न होती है, उस समय इस प्रकारकी छिट-फुट गिरती पड़ती उल्काएँ दिखलायी पड़ती हैं। उल्काओंका पतन प्रायः प्रतिदिन होता है। पर उनसे इष्टानिष्टकी सूचना अवसर-विशेषों पर ही मिलती है।

उल्काओंका फलादेश उनकी बनावट और रूप-रंगपर निर्भर करता है। यदि उल्का फीकी, केवल तारेकी तरह जान पड़ती है तो उसे छोटी उल्का या टूटता तारा कहते हैं। यदि उल्का इतनी बड़ी हुई कि उसका अंश पृथ्वी तक पहुँच जाय तो उसे उसका प्रस्तर कहते हैं और यदि उल्का बड़ी होनेपर भी आकाश ही में फटकर चूर-चूर हो जाय तो उसे साधारणतः अग्निपिण्ड कहते हैं। छोटी उल्काएँ महत्त्वपूर्ण नहीं होती हैं इनके द्वारा किसी खास घटनाकी सूचना नहीं मिलती है। ये केवल दर्शक व्यक्तिके जीवनके लिए ही उपयोगी सूचना देती हैं। बड़ी-बड़ी उल्काओंका सम्बन्ध राष्ट्रसे है, ये राष्ट्र और देशके लिए उपयोगी सूचनाएँ देती हैं। यद्यपि आधुनिक विज्ञान उल्का पतनको मात्र प्रकृतिलीला मानता है, किन्तु प्राचीन ज्योतिषियोंने इनका सम्बन्ध वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवनके उत्थान-पतनके साथ जोड़ा है।

तृतीयोऽध्यायः

नक्षत्रं यस्य यत्पुंसः पूर्णमुल्का प्रताडयेत् ।
भयं तस्य भवेद् घोरं यतस्तत् कम्पते हतम् ॥१॥

जिस पुरुषके जन्मनक्षत्रको अथवा नामनक्षत्रको उल्का शीघ्रतासे ताड़ित करे उस पुरुषको घोर भय होता है। यदि जन्मनक्षत्रको कम्पायमान करे तो उसका घात होता है ॥१॥

अनेकवर्णनक्षत्रमुल्का हन्युर्यदा समाः ।
तस्य देशस्य तावन्ति भयान्युग्राणि निर्दिशेत् ॥२॥

जिस वर्ष जिस देशके नक्षत्रको अनेक वर्णकी उल्का आघात करे तो उस देश या ग्रामको उग्र भय होता है ॥२॥

येषां वर्णेन संयुक्तं सूर्यादुल्का प्रवर्तते ।
तेभ्यः सञ्जायते तेषां भयं येषां दिशं पतेत् ॥३॥

सूर्यसे मिलती हुई उल्का जिस वर्णसे युक्त होकर जिस दिशामें गिरे तो उस दिशामें उस वर्णवालेको वह घोर भय करनेवाली होती है ॥३॥

नीला पतन्ति या उल्काः सस्यं सर्वं विनाशयेत् ।
त्रिवर्णा त्रीणि घोराणि भयान्युल्का निवेदयेत् ॥४॥

यदि नीलवर्णकी उल्का गिरे तो वह सर्व प्रकारके धान्योंको नाश करती है अर्थात् उनके नाशकी सूचना देती है और यदि तीन वर्णकी उल्का गिरे तो तीन प्रकारके घोर भयोंको प्रकट करती है ॥४॥

विकीर्यमाणा कपिला विशेषं वामसंस्थिता[1] ।
खण्डा भ्रमन्त्यो[2] विकृताः[3] सर्वा उल्काः भयावहा ॥५॥

बिखरी हुई कपिलवर्णकी विशेषकर वामभागमें गमन करनेवाली, घूमती हुई, खण्डरूप एवं विकृत उल्काएँ दिखाई दें तो ये सब भय होने की सूचना करती हैं ॥५॥

उल्काऽशनिश्च धिष्ण्यं च प्रपतन्ति यतो मुखाः ।
तस्यां दिशि विजानीयात् ततो भयमुपस्थितम् ॥६॥

उल्का, अशनि और धिष्ण्या जिस दिशामें मुखसे गिरे तो उस दिशामें भयकी उपस्थिति अवगत करनी चाहिए ॥६॥

सिंह-व्याघ्र-वराहोष्ट्र-श्वानद्वीपि[4]-खरोपमाः ।
शूलपट्टिशसंस्थाना धनुर्बाण-गदा[5]मयाः ॥७॥
पाशवज्रासिसदृशाः परश्वर्धेन्दुसंन्निभाः ।
गो[6]धा-सर्प-शृङ्गालानां सदृशाः शल्यकस्य च ॥८॥

---

१. वामकसंस्थिता मु० B. C.। २. भ्रमन्तः मु० C.। ३. विभिन्नाः मु० C.। ४. द्वीपिश्वान मु०। ५. गदानिभाः मु०। ६. शशमार्जारसदृशाः पद्मकोद्मससन्निभाः, मु०।

मेषाजमहिषाकाराः काकाऽकृतिवृकोपमाः ।
शशमार्जार[1]-सदृशाः पक्ष्यकोद्‌ग्रसन्निभाः ॥९॥
ऋक्ष-वानरसंस्थानाः कबन्धसदृशाश्च याः ।
अलात[2]चक्रसदृशा वक्रा[3]ग्रप्रतिमाश्च[4] याः[5] ॥१०॥
शक्तिलाङ्गूलसंस्थाना[6] यस्याश्चोभयतः शिरः ।
स्रास्तन्यमाना नागाभाः प्रपतन्ति[7] स्वभावतः ॥११॥

सिंह, व्याघ्र, चीता, शूकर, ऊँट, कुत्ता, तेंदुआ, गदहा, त्रिशूल, पट्टिश—एक प्रकारका आयुध, धनुष, बाण, गदा, फरसा, वज्र, तलवार, फरसा-अर्द्धचन्द्राकार कुल्हाड़ी, गोह, सर्प, शृगाल, भाला, मेढ़ा, बकरा, भैंसा, कौआ, भेड़िया, खरगोश, बिल्ली, अत्यन्त ऊँचे उड़नेवाले पक्षी—गृद्ध आदि, रीछ, बन्दर, सिर कटे हुए धड़, कुम्हारका चाक, टेढ़ी आँखवाला, शक्ति–आयुध विशेष, हल इन सबके आकारवाली और दो सिरवाली तथा हाथीके आकारवाली उल्काएँ स्वभावसे गिरती हैं ॥७–११॥

उल्काऽशनिश्च विद्युच्च सम्पूर्णं कुरुते फलम् ।
पतन्ती जनपदान् त्रीणि उल्का तीव्रं [8]प्रबाधते ॥१२॥

उल्का, अशनि और विद्युत् ये तीनों पूर्ण फल देती हैं और इन तीनोंके गिरनेसे देशवासियोंको पूर्ण बाधा होती है ॥१२॥

यथावदनुपूर्व्येण तत् प्रवक्ष्यामि तत्त्वतः ।
अग्रतो देशमार्गेण मध्येनानन्तरं ततः ॥१३॥
पुच्छेन पृष्ठतो देशं पतन्त्युल्का विनाशयेत् ।
मध्यमा न प्रशस्यन्ते नभस्युल्काः पतन्ति याः ॥१४॥

पूर्व परम्पराके अनुसार फलादेशका निरूपण करता हूँ। यदि उल्का अग्रभागसे गिरे तो देशके मार्गका नाश करती है। यदि मध्यभागसे गिरे तो देशके मध्यभाग का और पूँछ भागसे गिरे तो देशके पृष्ठ भागके विनाशकी सूचना देती है। मध्यम–समान साधारण अवस्थावाली उल्काका पतन भी प्रशस्त नहीं होता है ॥१३–१४॥

[9]स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो प्रशस्ताः स्युः प्रदक्षिणाः ।
उल्का यदि पतेच्चित्रा [10]पक्षिणामहिताय[11] सा ॥१५॥

मध्यम उल्का स्नेहयुक्त होती हुई दक्षिण मार्गसे गमन करे तो वह प्रशस्त है और चित्र-विचित्र रंगकी मध्यम उल्काएँ वाम मार्गसे गमन करें तो पक्षियोंके लिए अहित कारक होती हैं ॥१५॥

श्याम-लोहितवर्णा च सद्यः कुर्याद् महद् भयम् ।
उल्कायां भस्मवर्णायां परचक्राऽऽगमो भवेत् ॥१६॥

१. गोधामर्कशृगालाख्याम् मु० । २. आलान मु० A. । ३. वक्त्रादा मु० C. D. । ४. मदशा: मु० C. । ५. भु याः मु० C. । ६. महाशा भा० । ७. प्रपतन्ति मु० । ८. प्रबोधते मु० A. B. । ९. स्नेहवन्तो भा० । १०. दक्षिणा मु० A. D. । ११. महताय मु० C. ।

काली और लाल वर्णकी उल्का गिरे तो वह शीघ्र ही महाभयकी सूचना देती है। तथा भस्मवर्णकी उल्का परचक्रका आना सूचित करती है ॥१६॥

अग्निमग्निप्रभा कुर्याद् व्याधिमञ्जिष्ठसन्निभा ।
नीला कृष्णा च धूम्रा च शुक्ला वाऽसिसमद्युतिः[1] ॥१७॥
उल्का नीचैः समा स्निग्धा पतन्ति भयमादिशेत् ॥१७३॥
शुक्ला रक्ता च पीता च कृष्णा चापि यथाक्रमम् ।
चातुर्वर्णा विभक्तव्या साधुनोक्ता यथाक्रमम् ॥१८॥

अग्निकी प्रभावाली उल्का अग्निका भय करती है। मंजिष्ठके समान रंगवाली उल्का व्याधि की सूचना देती है। नील, कृष्ण, धूम्र और तलवारके समान द्युतिवाली उल्का नीच प्रकृति-अधम होती है। स्निग्ध उल्का सम प्रकृतिवाली होती है। शुक्ल, रक्त, पीत और कृष्ण इन वर्णोंवाली उल्का क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णमें विभाजित समझनी चाहिए। ये चारो वर्णवाली उल्काएँ क्रमशः ब्राह्मणादि चारो वर्णोंको भयकी सूचना देती हैं, ऐसा पूर्वाचार्योंने कहा है। अभिप्राय यह है कि श्वेत वर्णकी उल्का ब्राह्मण संज्ञक है, इसका फलादेश ब्राह्मण वर्णके लिए विशेषरूप से और सामान्यतः अन्य वर्णवालोंको भी फल प्राप्त होता है। इसी प्रकार रक्तसे क्षत्रिय, पीतसे वैश्य और कृष्णसे शूद्रवर्णके लिए प्रधानतः फल और गौणरूपसे अन्य वर्णवालोंको भी फलादेश प्राप्त होता है ॥१७-१८॥

उदीच्यां ब्राह्मणान् हन्ति प्राच्यामपि च क्षत्रियान् ।
वैश्यान् निहन्ति याम्यायां प्रतीच्यां शूद्रघातिनी ॥१९॥

यदि उल्का उत्तर दिशामें गिरे तो ब्राह्मणोंका घात करती है, पूर्व दिशामें गिरे तो क्षत्रियोंका, दक्षिण दिशामें गिरे तो वैश्योंका और पश्चिम दिशामें गिरे तो शूद्रोंका घात करती है ॥१९॥

उल्का [2]रूक्षेण वर्णेन स्वं स्वं वर्णं प्रबाधते ।
स्निग्धा चैवानुलोमा च प्रसन्ना च न बाधते ॥२०॥

उल्का रूक्ष वर्णसे अपने-अपने वर्णको बाधा देती है—श्वेत वर्णकी होकर रूक्ष हो तो ब्राह्मणोंके लिए बाधासूचक, रक्तवर्णकी होकर रूक्ष हो तो क्षत्रियोंको बाधासूचक, पीत वर्णकी होकर रूक्ष हो तो वैश्योंको बाधासूचक और कृष्णवर्ण की होकर रूक्ष हो तो शूद्रोंको बाधासूचक होती है। स्निग्ध और अनुलोम—सव्यमार्ग तथा प्रसन्न उल्का हो तो शुभ होनेसे अपने-अपने वर्णको बाधा नहीं देती है ॥२०॥

या चादित्यात्[3] पतेदुल्का वर्णतो वा दिशोऽपि वा ।
तं तं वर्णं निहन्त्याशु वैश्वानर इवार्चिभिः ॥२१॥

जो उल्का सूर्यसे निकलकर जिस वर्णकी होकर जिस दिशामें गिरे उस वर्ण और दिशा परसे उसी-उसी वर्णवालेको अग्निकी ज्वालाके समान शीघ्र नाश करती है ॥२१॥

१. पुनद्वर्णं तदादिशेत् मु०, B पतेत् वर्णं तदाऽऽदिशेत्, मु० D. । २. रूपेण वर्णेन मु० ।
३. या स्यादिष्यात् आ० ।

अनन्तरां दिशं दीप्ता येषामुल्काऽग्रतः पतेत् ।
तेषां स्त्रियश्च गर्भाश्च भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥२२॥

यदि उल्का अव्यवहित दिशाको दीप्त करती हुई अग्रभागसे गिरे तो स्त्रियां और गर्भोंको भयानक भय करती है अर्थात् गर्भपातकी सूचिका है ॥२२॥

कृष्णा नीला च रूक्षाश्च प्रतिलोमाश्च[1] गर्हिताः[2] ।
पशुपक्षिसुसंस्थाना भैरवाश्च भयावहाः ॥२३॥

कृष्ण अथवा नील वर्णकी रूक्ष उल्का प्रतिलोम—उलटे मार्गसे अर्थात् अपसव्यमार्ग—बायेंमें गिरे तो निन्दित है। यदि पशु-पक्षीकी आकारवाली हो तो भयोत्पादक होती है ॥२३॥

अनुगच्छन्ति याश्चोल्का बाह्यास्तूल्का समन्ततः
[3]वत्सानुसारिणी नाम सा तु राष्ट्रं विनाशयेत् ॥२४॥

जो उल्का मार्गमें गमन करती हुई आस-पासमें दूसरी उल्काओंसे भिड़ जाय, वह वत्सानुसारिणी-बच्चेकी आकारवाली उल्का कही जाती है और ऐसी उल्का राष्ट्रका नाश सूचित करती है ॥२४॥

रक्ता पीता नभस्युल्काश्चेभ-नक्रेण[4] सन्निभाः ।[5]
अन्येषां गर्हितानां च सत्त्वानां सदृशास्तु[6] याः[7] ॥२५॥
उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते निपतन्त्यः सुदारुणाः ।
यासु प्रपतमानासु[8] मृगा विविधमानुषाः ॥२६॥

आकाशमें उत्पन्न होती हुई जो उल्का हाथी और नक्र-मगरके आकार तथा निन्दित प्राणियोंके आकारवाली होती है, वह जहाँ गिरे वहाँ दारुण अशुभ फलकी सूचना करती है और मृगों तथा विविध मनुष्योंको घोर कष्ट देती है ॥२५–२६॥

शब्दं मुञ्चन्ति दीप्तासु दिक्षु चासन्नकाम्यया ।
क्रव्यादाश्चाऽशु दृश्यन्ते[9] या खरा विकृताश्च याः ॥२७॥
सधूम्रा या सनिर्घाता उल्कायाभ्रमवाप्नुयुः[10] ।
सभूमिकम्पा परुषा रजस्विन्योऽपसव्यगाः[11] ॥२८॥
गृहानादित्यचन्द्रौ च याः स्पृशन्ति दहन्ति वा ।
परचक्रभयं[12] घोरं क्षुधाव्याधिजनक्षयम् ॥२९॥

जो उल्का अपने द्वारा प्रदीप्त दिशाओंमें निकटकामनासे शब्द करती—गड़गड़ाती हुई मांसभक्षी जीवोंके समान शीघ्रतासे दिखाई पड़े अथवा जो उल्का रूक्ष विकृतरूप धारण करती हुई धूमवाली, शब्दसहित, अभ्रके समान वेगवाली, भूमिको कँपाती हुई, कठोर, धूल उड़ाती हुई, बायें मार्गसे गति करती हुई, ग्रहों तथा सूर्य और चन्द्रमाको स्पर्श करती हुई या जलाती हुई दीख पड़े—गिरे तो वह परचक्रका घोर भय उपस्थित करती है तथा क्षुधा रोग—अकाल, महामारी और मनुष्योंके नाश होने की सूचना देती है ॥२७–२९॥

१–२. सुगर्भिता मु० C. । ३. वत्सानुसारिणी मु० । ४. श्येनगात्रेण मु० । ५–६. यथा: मु० A. । ७. पतन् भा० । ८. दिक्षुमासन्न० मु० । ९. भासन्ते भा० । १०. उल्काभासमवाप्नुयुः मु० । ११. गमनदगाः मु० C. । १२ नृपभय भा० ।

एवं लक्षणसंयुक्ताः कुर्वन्त्युल्का महाभयम् ।
अष्टापदवदुल्काभिर्दिशं[1] पश्येद् [2]यदाऽद्भुतम् ॥३०॥

युगान्त इति विख्यातः[3] षड्मासेनोपलभ्यते[4] ।
पद्मश्रीवृक्षचन्द्रार्कनंद्यावर्तघटोपमाः ॥३१॥

वर्द्धमानध्वजाकाराः पताकामत्स्यकूर्मवत् ।
वाजिवारणरूपाश्च शङ्खवादित्रछत्रवत् ॥३२॥

[5]सिंहासनरथाकारा रूपपिण्डव्यवस्थिताः ।
रूपैरेतैः प्रशस्यन्ते[6] सुखमुल्काः[7] समाहिताः ॥३३॥

उपर्युक्त लक्षणयुक्त उल्का महान् भय उत्पन्न करती है। यदि अष्टापदके समान उल्का दृष्टिगोचर हो तो छह मासमें युगान्तकी सूचिका समझनी चाहिए। यदि पद्म, श्रीवृक्ष, चन्द्र, सूर्य, नन्द्यावर्त, कलश, वृद्धिगत होनेवाले ध्वजा, पताका, मछली, कच्छप, अश्व, हस्ती, शंख, वादित्र, छत्र, सिंहासन, रथ और चांदीके पिण्ड गोलाकार रूप और आकारोंमें उल्का गिरे तो उसे उत्तम अवगत करना चाहिए। यह उल्का सभीको सुख देनेवाली है ॥३०-३३॥

नक्षत्राणि [8]विमुञ्चन्त्यः स्निग्धाः प्रत्युत्तमाः[9] शुभाः ।
सुवृष्टिं क्षेममारोग्यं शस्यसम्पत्तिरुत्तमाः ॥३४॥

यदि उल्का नक्षत्रोंको छोड़कर गमन करनेवाली स्निग्ध और उत्तम शुभ लक्षणवाली दिखलाई दे तो सुवृष्टि, क्षेम, आरोग्य और धान्यकी उत्पत्ति उत्तम होती है ॥३४॥

सोमो राहुश्च शुक्रश्च केतुर्भौमश्च [10]यायिनः ।
बृहस्पतिर्बुधः सूर्यः [11]सौरिश्चाऽपीह[12] नागराः[13] ॥३५॥

यायी—युद्धके लिए अन्य देश या नृपतिपर आक्रमण करनेवाले व्यक्तिके लिए चन्द्र, राहु, शुक्र, केतु और मंगलका बल आवश्यक होता है और स्थावर-आक्रमण किया गया देश, नृपति या अन्य व्यक्ति आक्रमितके लिए बृहस्पति, बुध, सूर्य और शनिका बल आवश्यक होता है। इन ग्रहोंके बलाबलपरसे यायी और स्थायीके बलका विचार करना चाहिए ॥३५॥

हन्युर्मध्येन या[14] उल्का ग्रहाणां नाम विद्युता ।
सनिर्घाता सधूम्रा वा तत्र विन्द्यादिदं फलम् ॥३६॥

जो उल्का मध्य भागसे ग्रहको हने—प्रताडित करे, वह विद्युत संज्ञक है। यह उल्का निर्घात सहित और धूम सहित हो तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥३६॥

---

१. दिन आ० । २. यदाद्भुताम् मु० । ३. विन्ध्यात् मु० । ४. भद्रबाहुवचो यथा मु० । ५. स्वस्थासन० मु० A. स्वस्थासन् मु. B. D. । ६. प्रकाश्यन्ते मु० । ७. स्वं स्वं मु० A, सम्यक् मु० C. । ८. विमुच्यन्ते आ० । ९. प्रत्युन्नता मु० D. । १०. योऽपि नः मु० A. योगिनः मु० C. । ११. शौरि मु० A. सौर मु० D. । १२–१३. श्चाचलथावराः मु० A । १४. सा० मु० ।

नगरेषूपसृष्टेषु नागराणां महद्भयम् ।
यायिषु चोपसृष्टेषु[1] यायिनां तद्भयं भवेत् ॥३७॥

स्थायीके नगरकी व्यूह रचनापर पूर्वोक्त प्रकारकी उल्का गिरे तो उस स्थायीके नगरवासियोंको महान् भय होता है। यदि यायीके सैन्य-शिविर पर गिरे तो यायी पक्षवालोंको महान् भय होता है ॥३७॥

सन्ध्यानां रोहिणी पौष्णं चित्रा त्रीण्युत्तराणि च ।
मैत्रं चोल्का[2] यदा हन्यात् तदा स्यात् पार्थिवं[3] भयम् ॥३८॥

यदि सन्ध्या कालीन उल्का रोहिणी, रेवती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा और अनुराधा नक्षत्रोंको हने—प्रताड़ित करे तो राजाको भय होता है अर्थात् सन्ध्याकालीन उल्का इन नक्षत्रोंसे टकराकर गिरे तो देश और नृपति पर विपत्ति आती है ॥३८॥

वायव्यं वैष्णवं पुष्यं यद्युल्काभिः प्रताडयेत् ।
ब्रह्मक्षत्रभयं विन्द्याद् राज्ञश्च भयमादिशेत् ॥३९॥

स्वाती, श्रवण और पुष्य नक्षत्रोंको यदि उल्का प्रताड़ित करे तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और राजाको भयकी सूचना देती है ॥३९॥

यथा गृहं तथा ऋक्षं चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि सेनासूल्का यथाविधि ॥४०॥

जैसे ग्रह अथवा नक्षत्र हों, उन्हींके अनुसार चारों वर्णोंके लिए शुभाशुभ अवगत करना चाहिए। अब इससे आगे सेनाके सम्बन्धमें उल्काका शुभाशुभ फल निरूपित करते हैं ॥४०॥

सेनायास्तु समुद्योगे राज्ञो[4] विविध[5]मानवाः ।
उल्का यदा पतन्तीति तदा वक्ष्यामि लक्षणम् ॥४१॥

युद्धके उद्योगके समय सेनाके समक्ष जो उल्का गिरती है, उसका लक्षण, फलादि राजाओं और विविध मनुष्योंके लिए वर्णित किया जाता है ॥४१॥

[6]उद्गच्छन् सोममर्कं वा यद्युल्का संविदारयेत् ।
स्थावराणां विपर्यासं तस्मिन्नुत्पातदर्शने[7] ॥४२॥

यदि ऊपरको गमन करती हुई उल्का चन्द्र और सूर्यको विदारण करे तो स्थावर—स्थायी नगरवासियोंके लिए विपरीत उत्पातोंकी सूचना देती है ॥४२॥

अस्तं यातमथादित्यं सोममुल्का लिखेद् यदा ।
आगन्तुर्वध्यते सेनां यथा चौर्श[8] यथागमम् ॥४३॥

सूर्य और चन्द्रमाके अस्त होनेपर यदि उल्का दिखलाई दे तो आनेवाले यायीकी दिशामें आगन्तुक सेनाके वधका निर्देश करती है ॥४३॥

---

१. याम्येष्वनुपसृष्टेषु मु०। २. वोल्का मु०। ३. पार्थिवाद् मु०। ४. राज्ञा मु०। ५. विवद्मानया मु०। ६. उद्गच्छेत मु०। ७. अस्मिन्नुत्पातेऽदर्शने मु०। ८. यथादेशं मु०, निर्ग्रन्थवचनं यथा, मु० C.।

उद्गच्छेत् सोममर्कं वा यद्युल्का प्रतिलोमतः ।
प्रविशेन्नागराणां स्याद् विपर्यासस्तथागते[1] ॥४४॥

प्रतिलोम मार्गसे गमन करती हुई उल्का उदय होते हुए सूर्य और चन्द्र-मण्डलमें प्रवेश करे तो स्थायी और यायी दोनोंके लिए विपरीत फलदायक-अशुभ होती है ॥४४॥

एवैवास्तगते[2] उल्का आगन्तूनां भयं भवेत् ।
प्रतिलोमा भयं कुर्याद् यथास्तं चन्द्रसूर्ययोः ॥४५॥

उपर्युक्त योगमें सूर्य-चन्द्रके अस्त समय प्रतिलोम मार्गसे गमन करती हुई सूर्य-चन्द्रके मण्डलमें आकर उल्का अस्त हो जाय तो स्थायी और यायी दोनोंके लिए भयोत्पादक है ॥४५॥

उदये भास्करस्योल्का याऽतोऽभिप्रसर्पति[3] ।
सोमस्यापि जयं कुर्यादेषां पुरस्सरा[4] वृत्तिः ॥४६॥

यदि उल्का सूर्योदय होते हुए सूर्यके आगे और चन्द्रके उदय होते हुए चन्द्रमाके आगे गमन करे तथा बाणोंकी आवृत्ति रूप हो तो उसे जयसूचक समझना चाहिए ॥४६॥

सेनामभिमुखी भूत्वा यद्युल्का प्रतिग्रस्यते[5] ।
प्रतिसेनावधं विन्द्यात् तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥४७॥

यदि उल्का सेनाके सामने होकर गिरती हुई दिखलायी पड़े तो प्रतिसेना-प्रतिद्वन्द्वी सेनाके वधकी सूचिका समझनी चाहिए ॥४७॥

अथ यद्युभयां[6] सेनामेकैकं प्रतिलोमतः ।
उल्का तूर्णं प्रपद्येत उभयत्र भयं भवेत् ॥४८॥

यदि दोनों सेनाओंकी ओर एक-एक सेनामें प्रतिलोम-अपसव्य मार्गसे उल्का शीघ्रतासे गिरे तो दोनों सेनाओंको भय होता है ॥४८॥

येषां सेनासु निपतेदुल्का नीलमहाप्रभा[7] ।
सेनापतिवधस्तेषामचिरात् सम्प्रजायते ॥४९॥

यदि नीले रंगकी महाप्रभावशाली उल्का जिस सेनामें गिरे उस सेनाका सेनापति शीघ्र ही मरणको प्राप्त होता है ॥४९॥

उल्कास्तु लोहिताः सूक्ष्माः पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
यस्य राज्ञः प्रपद्यन्तं कुमारो हन्ति तं नृपम् ॥५०॥

लोहित वर्णकी सूक्ष्म उल्का जिस राजाकी सेनाके प्रति गिरे, उस सेनाके राजाको राजकुमार मारता है ॥५०॥

उल्कास्तु बहवः पीताः पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
पृतनां व्याधितां प्राहुस्तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥५१॥

पीत वर्णकी बहुत उल्काएँ सेनाके समय या सेनामें गिरें तो इस उत्पातका फल सेनामें रोग फैलना है ॥५१॥

---

१. तदागते मु० । २. यथैवास्तमने मु० A., एवैवास्तमन मु० C । ३. योऽग्रतोऽभिसर्पति मु० । ४. पुरस्सरावृत्ति आ० । ५. प्रतिदृश्यते मु० । ६. उभय आ० । ७. महाप्रभा मु० ।

सङ्घशास्त्रोनुपद्येत् (?) उल्काः श्वेताः समन्ततः ।
ब्राह्मणेभ्यो भयं घोरं तस्य सैन्यस्य निर्दिशेत् ॥५२॥

यदि श्वेत रंगकी उल्का सेनामें चारों तरफ गिरे तो वह उस सेनाको और ब्राह्मणोंको घोर भयकी सूचना देती है ॥५२॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु या पतेत्तिर्यमागता[3] ।
न तदा जायते युद्धं परिघा नाम सा भवेत् ॥५३॥

बाण या खड्गरूप तिरछी उल्का सेनाकी व्यूह रचनामें गिरे तो कुटिल युद्ध नहीं होता है, इसको परिघा नामसे स्मरण करते हैं—कहते हैं ॥५३॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु पृष्ठतोऽपि[4] पतन्ति[5] याः ।
क्षयव्ययेन पीड्येरन्नुभयोः सेनयोर्नृपान्[6] ॥५४॥

सेनाकी व्यूह रचनाके पीछेके भागमें उल्का गिरे तो दोनों सेनाओंके राजाओंको वह नाश और खर्च द्वारा कष्टकी सूचना करती है ॥५४॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु प्रतिलोमाः पतन्ति याः ।
संग्रामेषु निपतन्ति[7] जायन्ते किंशुका वनाः ॥५५॥

सेनाकी व्यूह रचनामें अपसव्य मार्गमें उल्का गिरे तो संग्राममें योद्धा गिर पड़ते हैं—मारे जाते हैं, जिससे रणभूमि रक्तरंजित हो जाती है ॥५५॥

उल्का यत्र समायान्ति यथामार्गे[8]तथासु च[9] ।
येषां मध्यान्तिकं यान्ति तेषां स्याद्विजयो ध्रुवम् ॥५६॥

जहाँ उल्का जिस रूपमें और जब गिरती है तथा जिनके बीचसे या निकटसे निकलती है, उनकी निश्चय ही विजय होती है ॥५६॥

चतुर्दिक्षु यदा पृतना उल्का गच्छन्ति सन्ततम् ।
चतुर्दिशं तदा यान्ति भयातुरमसंघशः[10] ॥५७॥

यदि उल्का गिरती हुई निरन्तर चारों दिशाओंमें गमन करे तो लोग या सेनाका समूह भयातुर होकर चारों दिशाओंमें तितर-बितर हो जाता है ॥५७॥

अग्रतो या पतेदुल्का सा सेना[11] तु प्रशस्यते ।
तिर्यगाचरते[12] मार्गे प्रतिलोमा भयावहा ॥५८॥

सेनाके आगे मार्गमें यदि उल्का गिरे तो अच्छी है । यदि तिरछी होकर प्रतिलोम गतिसे गिरे तो सेनाको भय देनेवाली अवगत करनी चाहिए ॥५८॥

१. बहुशस्त्र प्रपद्येरन् मु० । २. पतन्ति भा० । ३. न मागता भा० । ४. पृष्ठतः भा० । ५. निपतन्ति भा० । ६. नृपाः भा० । ७. निपतन्ता भा० । ८.-९. मनुष्या मनुसंगा, मु० । १०. भयाल्पुमानि संघशः मु० । ११. सेना मु० । १२. तिर्यक् मपाने मु० ।

यतः सेनामभिपतेत् तस्य सेनां प्रबाधयेत्[1] ।
तं विजयं कुर्यात् येषां पतेत्सोल्का यदा पुरा ॥५९॥

जिस राजाकी सेनामें उल्का बीचो-बीच गिरे तो उस सेनाको कष्ट होता है और आगे गिरे तो विजय होती है ॥५९॥

डिम्भरूपा नृपतये बन्धमुल्का प्रताडयेत्[2] ।
प्रतिलोमा विलोमा च[3] प्रतिराज्ञो भयं सृजेत् ॥६०॥

डिम्भ रूप उल्का गिरनेसे राजाके बन्दी होनेकी सूचना मिलती है और प्रतिलोम तथा अनुलोम उल्का शत्रुराजाओंको भयोत्पादिका है ॥६०॥

यस्यापि जन्मनक्षत्रं उल्का गच्छेच्छरोपमा ।
विदारणा तस्य वाच्या व्याधिना वर्णसङ्करैः ॥६१॥

जिसके जन्म-नक्षत्रमें बाणसदृश उल्का गिरे तो उस व्यक्तिके लिए विदारण—घाव लगने, चीरे जानेका फल मिलता है और नाना वर्णरूप हो तो व्याधि प्राप्त होनेकी सूचना समझनी चाहिए ॥६१॥

उल्का येषां यथारूपा दृश्यते प्रतिलोमतः ।
तेषां ततो भयं विन्द्यादनुलोमा शुभागमम् ॥६२॥

विलोम मार्गसे जैसे रूपकी उल्का जिसे दिखलायी दे तो उसको भय होगा, ऐसा जानना चाहिए और अनुलोम गतिसे दिखाई दे तो शुभरूप जानना चाहिए ॥६२॥

उल्का यत्र प्रसर्पन्ति भ्राजमाना दिशो दिशम् ।
सप्तरात्रान्तरं[4] वर्षं दशाहादुत्तरं भयम् ॥६३॥

जिस स्थानपर उल्का फैलती हुई दिखाई दे तो वहाँ भी जनताको दसों दिशाओंमें भागना पड़ता है—उपद्रवके कारण दुःखी हो इधर-उधर जाना पड़ता है। यदि सात रात्रिके मध्यमें वर्षा हो जाय तो इस दोषका उपशम हो जाता है, अन्यथा दस दिनके पश्चात् उपर्युक्त फलादेश घटित होता है ॥६३॥

पापासूल्कासु यद्यस्तु यदा देवः प्रवर्षति ।
प्रशान्तं तद्भयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥६४॥

पापरूप उल्कापातके पश्चात् मेघ वर्षा जावे—वर्षा हो जाय तो भयको शान्त हुआ समझना चाहिए, इस प्रकार भद्रबाहु स्वामीका कथन है ॥६४॥

[5]यथाभिवृष्याः स्निग्धा यदि शान्ता निपतन्ति याः ।
उल्कास्त्वाशु भवेत् क्षेमं सुभिक्षं मन्दरोगवान् ॥६५॥

दुष्ट, स्निग्ध और शान्त उल्का जिस दिशामें गिरती है, उस दिशामें वह शीघ्र क्षेम-कुशल सुभिक्ष करती है, परन्तु थोड़ा-सा रोग अवश्य होता है ॥६५॥

---

१. विजयं तु समाख्याति, येषां सोल्का पुरस्सराः मु० । २. प्रदापयेत मु० । ३. यह पाठ मु० प्रतिमें नहीं है । ४ सप्ताहाभ्यन्तरे मु० C. । ५ यथाभिवृष्टिः स्निग्धा च दिशि शान्ता पतन्ति या मु० ।

यथामार्गं यथावृद्धि यथाद्वारं यथाऽऽगमम् ।
यथाविकारं विज्ञेयं ततो ब्रूयाच्छुभाऽशुभम् ॥६६॥

जिस मार्ग, वृद्धि, द्वार, आगमन प्रकार और विकारके अनुसार शुभाशुभ रूप उल्कापात हो उसीके समान शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥६६॥

तिथिश्च करणं चैव नक्षत्राश्च मुहूर्ततः ।
ग्रहाश्च शकुनञ्चैव दिशो वर्णाः प्रमाणतः ॥६७॥

उल्कापातका शुभाशुभ फल तिथि, करण, नक्षत्र, मुहुर्त्त, ग्रह, शकुन, दिशा, वर्ण, प्रमाण—लम्बाई-चौड़ाई परसे बतलाना चाहिए ॥६७॥

[2]निमित्तादनुपूर्वाच्च पुरुषः कालतो बलात् ।
[3]प्रभावाच्च गतेश्चैवमुल्काया फलमादिशेत् ॥६८॥

निमित्तानुसार क्रम पूर्वक उपर्युक्त प्रकारसे निरूपित चाल, बल, प्रभाव और गति परसे उल्काके फलको अवगत करना चाहिए ॥६८॥

एतावदुक्तमुल्कानां लक्षणं जिनभाषितम् ।
परिवेषान् प्रवक्ष्यामि तान्निबोधत तत्त्वतः ॥६९॥

जिस प्रकार जिनेन्द्र भगवान्ने उल्काओंका लक्षण और फल निरूपित किया है, उसी प्रकार यहाँ वर्णित किया गया है। अब परिवेषके सम्बन्धमें वर्णन किया जाता है, उसे यथार्थरूपसे अवगत करना चाहिए ॥६९॥

इति भद्रबाहुसंहितायां (भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे) तृतीयोऽध्यायः ।

विवेचन—उल्कापातका फलादेश संहिता ग्रन्थोंमें विस्तारपूर्वक वर्णित है। यहाँ सवसाधारणकी जानकारीके लिए थोड़ा-सा फलादेश निरूपित किया जाता है। उल्कापातसे व्यक्ति, समाज, देश, राष्ट्र आदिका फलादेश ज्ञात किया जाता है। सर्वप्रथम व्यक्तिके लिए, हानि, लाभ, जीवन, मरण, सन्तान-सुख, हर्ष-विषाद एवं विशेष अवसरोंपर घटित होनेवाली विभिन्न घटनाओंका निरूपण किया जाता है। आकाशका निरीक्षण कर टूटते हुए ताराओंको देखनेसे व्यक्ति अपने सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी जानकारी प्राप्त कर सकता है।

रक्त वर्णकी टेढ़ी, टूटी हुई उल्काओंको पतित होते देखनेसे व्यक्तिको भय, पाँच महीनेमें परिवारके व्यक्तिकी मृत्यु, धन-हानि और दो महीने के बाद किये गये व्यापारमें लाभ, राज्यसे झगड़ा, मुकदमा एवं अनेक प्रकारकी चिन्ताओंके कारण परेशानी होती है। कृष्णवर्णकी टूटी हुई, छिन्न-भिन्न उल्काओंका पतन होते देखनेसे व्यक्तिके आत्मीयकी सात महीनेमें मृत्यु, हानि, झगड़ा, अशान्ति और परेशानी उठानी पड़ती है। कृष्ण वर्णकी उल्काका पात सन्ध्या समय देखनेसे भय, विद्रोह और अशान्ति; सन्ध्याके तीन घटी उपरान्त देखनेसे विवाद, कलह, परिवारमें झगड़ा एवं किसी आत्मीय व्यक्तिको कष्ट; मध्यरात्रिके समय उक्त प्रकारकी उल्काका पतन देखनेसे स्वयंको महाकष्ट, अपनी या किसी आत्मीयकी मृत्यु, आर्थिक कष्ट एवं नाना प्रकारकी

१. शकुनाश्चैव मु० । २. निमित्तादनुपूर्वाच्च, पुरुषो कालतो बलात् मु० । ३. प्रभावाच्च गतिश्चैव-मुल्कानां मु० ।

अशान्ति प्राप्त होती है। श्वेतवर्णकी उल्काका पतन सन्ध्या समयमें दिखलायी पड़े तो धनलाभ, आत्मसन्तोष, सुख और मित्रोंसे मिलाप होता है। यह उल्का दण्डाकार हो तो सामान्य लाभ, मुसलाकार हो तो अत्यल्प लाभ और शकटाकार—गाड़ीके आकार या हाथीके आकार हो तो पुष्कल लाभ एवं अश्वके आकार प्रकाशमान हो तो विशेष लाभ होता है। मध्यरात्रिमें उक्त प्रकारकी उल्का दिखलायी पड़े तो पुत्रलाभ, स्त्रीलाभ, धनलाभ एवं अभीष्ट कार्यकी सिद्धि होती है। उपर्युक्त प्रकारकी उल्का रोहिणी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और तीनों उत्तराओंमें पतित होती हुई दिखलायी पड़े तो व्यक्तिको पूर्णफलादेश मिलता है तथा सभी प्रकारसे धन धान्यादिकी प्राप्ति के साथ, पुत्र-स्त्रीलाभ भी होता है। आश्लेषा, भरणी, तीनों पूर्वा—पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाभाद्रपद—और रेवती इन नक्षत्रोंमें उपर्युक्त प्रकारका उल्कापतन दिखलाई पड़े तो सामान्य लाभ ही होता है। इन नक्षत्रोंमें उल्कापतन देखनेपर विशेष लाभ या पुष्कल लाभकी आशा नहीं करनी चाहिए, लाभ होते-होते क्षीण हो जाता है। आर्द्रा, पुष्य, मघा, धनिष्ठा, श्रवण और हस्त इन नक्षत्रोंमें उपर्युक्त प्रकार—श्वेतवर्णकी प्रकाशमान उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो प्रायः पुष्कल लाभ होता है। मघा, रोहिणी, तीनों उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तरा-भाद्रपद, मूल, मृगशिर और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें उक्त प्रकारका उल्कापात दिखलाई पड़े तो स्त्रीलाभ और सन्तानलाभ समझना चाहिए। कार्यसिद्धिके लिए चिकनी, प्रकाशमान, श्वेतवर्णकी उल्काका रात्रिके मध्यभागमें पुनर्वसु और रोहिणी नक्षत्रमें पतन होना आवश्यक माना गया है। इस प्रकारके उल्कापतनको देखनेसे अभीष्ट कार्योंकी सिद्धि होती है। अल्प आभाससे भी कार्य सफल हो जाते हैं। पीतवर्णकी उल्का सामान्यतया शुभप्रद है। सन्ध्या होनेके तीन घटी पीछे कृत्तिका नक्षत्रमें पीतवर्णका उल्कापात दिखलाई पड़े तो मुकदमेमें विजय, बड़ी-बड़ी परीक्षाओंमें उत्तीर्णता एवं राज्यकर्मचारियोंसे मैत्री बढ़ती है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और श्रवण में पीतवर्णकी उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो स्वजाति और स्वदेशमें सम्मान बढ़ता है। मध्यरात्रिके समय उक्त प्रकारकी उल्का दिखलाई पड़े तो हर्ष, मध्यरात्रिके पश्चात् एक बजे रातमें उक्त प्रकारका उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्य पीड़ा, आर्थिक लाभ और प्रतिष्ठित व्यक्तियोंसे प्रशंसा प्राप्त होती है। प्रायः सभी प्रकारकी उल्काओंका फल सन्ध्याकालमें चतुर्थांश, दस बजे षष्ठांश, ग्यारह बजे तृतीयांश, बारह बजे अर्ध, एक बजे अर्धाधिक और दो बजेसे चार बजे रात तक किञ्चित् न्यून उपलब्ध होता है। सम्पूर्ण फलादेश बारह बजेके उपरान्त और एक बजेके पहलेके समयमें ही घटित होता है। उल्कापात भद्रा—विष्टिकालमें हो तो विपरीत फलादेश मिलता है।

प्रतनुपुच्छा उल्का सिरभागसे गिरनेपर व्यक्तिके लिए अग्निसूचक, मध्यभागसे गिरनेपर विपत्ति सूचक और पुच्छ भागसे गिरनेपर रोगसूचक मानी गई है। साँपके आकारका उल्कापात व्यक्तिके जीवनमें भय, आतङ्क, रोग, शोक आदि उत्पन्न करता है। इस प्रकारका उल्कापात भरणी और आश्लेषा नक्षत्रोंका घात करता हुआ दिखलाई पड़े तो महान् विपत्ति और अशान्ति मिलती है। पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रके योग तारेको उल्का हनन करे तो युवतियोंको कष्ट होता है। नारी जातिके लिए इस प्रकारका उल्कापात अनिष्टका सूचक है। शूकर और चमगीदड़के समान आकारकी उल्का कृत्तिका, विशाखा, अभिजित, भरणी और आश्लेषा नक्षत्रको प्रताड़ित करती हुई पतित हो तो युवक-युवतियोंके लिए रोगकी सूचना देती है। इन्द्रध्वजके आकारकी उल्का आकाशमें प्रकाशमान होकर पतित हो तथा पृथ्वीपर आते-आते चिनगारियाँ बढ़ने लगें तो इस प्रकारकी उल्काएँ कारागार जानेकी सूचना व्यक्तिको देती हैं। सिरके ऊपर पतित हुई उल्का चन्द्रमा या नक्षत्रोंका घात करती हुई दिखलायी पड़े तो आगामी एक महीनेमें किसी आत्मीयकी मृत्यु या परदेशगमन होता है। सामने कृष्णवर्णकी

उल्का गिरनेसे महान् कष्ट, धनक्षय, विवाद, कलह और झगड़े होनेकी सूचना मिलती है। अश्विनी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रोंसे पूर्वोक्त प्रकारकी उल्काका अभिघात हो तो व्यक्तिके भावी जीवनके लिए महान् कष्ट होता है। पीछेकी ओर कृष्णवर्णकी उल्का व्यक्तिको असाध्य रोगकी सूचना देती है। विचित्र वर्णकी उल्का मध्यरात्रिमें च्युत होती हुई दिखलाई पड़े तो निश्चयतः अर्थहानि होती है। धूम्रवर्णकी उल्काओंका पतन व्यक्तिगत जीवनमें हानिका सूचक है। अग्निके समान प्रभावशाली, वृषभाकार उल्कापात व्यक्तिकी उन्नतिका सूचक है। तलवारकी द्युति समान उल्काएँ व्यक्तिकी अवनति सूचित करती हैं। सूक्ष्म आकारवाली उल्काएँ अच्छा फल देती हैं और स्थूल आकारवाली उल्काओंका फलादेश अशुभ होता है। हाथी, घोड़ा, बैल आदि शुभ्रोंके आकारवाली उल्काएँ शान्ति और सुखकी सूचिकाएँ हैं। ग्रहोंका स्पर्श कर पतित होनेवाली उल्काएँ भयप्रद हैं और स्वतन्त्र रूपसे पतित होनेवाली उल्काएँ सामान्य फलवाली होती हैं। उत्तर और पूर्व दिशाकी ओर पतित होनेवाली उल्काएँ सभी प्रकारका सुख देती हैं; किन्तु इस फलकी प्राप्ति रातके मध्य समयमें दर्शन करनेसे ही होती है।

कमल, वृक्ष, चन्द्र, सूर्य, स्वस्तिक, कलश, ध्वजा, शंख, वाद्य—ढोल, मंजीरा, तानपूरा और गोलाकार रूपमें उल्काएँ रविवार, भौमवार और गुरुवारको पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो व्यक्तिको अपार लाभ, अकल्पित धनकी प्राप्ति, घरमें सन्तान लाभ एवं आगामी मांगलिकोंकी सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकारका उल्कापतन उक्त दिनोंकी सन्ध्यामें हो तो अर्धफल, नौ-दस बजे रातमें हो तो तृतीयांश फल और ठीक मध्यरात्रिमें हो तो पूर्ण फल प्राप्त होता है। मध्य रात्रिके पश्चात् पतन दिखलाई पड़े तो षष्ठांश फल और ब्राह्ममुहूर्तमें दिखलाई पड़े तो चतुर्थांश फल प्राप्त होता है। दिनमें उल्काओंका पतन देखनेवालेको असाधारण लाभ या असाधारण हानि होती है। उक्त प्रकारकी उल्काएँ सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्रोंका भेदन करें तो साधारण लाभ और भविष्यमें घटित होनेवाली असाधारण घटनाओंकी सूचना समझनी चाहिए। रोहिणी, मृगशिरा और श्रवण नक्षत्रके साथ योग करानेवाली उल्काएँ उत्तम भविष्यकी सूचिका हैं। कच्छप और मछलीके आकारकी उल्काएँ व्यक्तिके जीवनमें शुभ फलोंकी सूचना देती हैं। उक्त प्रकारकी उल्काओंका पतन मध्यरात्रिके उपरान्त और एक बजेके भीतर दिखलाई पड़े तो व्यक्तिको धरतीके नीचे रखी हुई निधि मिलती है। इस निधिके लिए प्रयास नहीं करना पड़ता, कोई भी व्यक्ति उक्त प्रकार की उल्काओंका पतन देखकर चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्वामीकी पूजाकर तीन महीनेमें स्वयं ही निधि प्राप्त करता है। व्यन्तर देव उसे स्वप्नमें निधिके स्थानकी सूचना देते हैं और वह अनायास इस स्वप्नके अनुसार निधि प्राप्त करता है। उक्त प्रकारकी उल्काओंका पतन सन्ध्याकाल अथवा रातमें आठ या नौ बजे हो तो व्यक्तिके जीवनमें विषम प्रकारकी स्थिति होती है। सफलता मिल जाने पर भी असफलता ही दिखलाई पड़ती है। नौ-दस बजेका उल्कापात सभीके लिए अनिष्टकर होता है।

सन्ध्याकालमें गोलाकार उल्का दिखलाई पड़े और यह उल्का पतनसमयमें छिन्न-भिन्न होती हुई दृष्टिगोचर हो तो व्यक्तिके लिए रोग-शोकको सूचक है। आपसमें टकराती हुई उल्काएँ व्यक्तिके लिए गुप्त रोगोंकी सूचना देती हैं। जिन उल्काओंको शुभ बतलाया गया है, उनका पतन भी शनि, बुध और शुक्रको दिखलाई पड़े तो जीवनमें आनेवाले अनेक कष्टोंकी सूचना समझनी चाहिए। शनि, राहु और केतुसे टकराकर उल्काओंका पतन दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्टकर है, इससे जीवनमें अनेक प्रकारकी विपत्तियोंकी सूचना समझनी चाहिए। खोई हुई, भूली हुई या चोरी गई वस्तुके समयमें गुरुवारकी मध्यरात्रिमें दण्डाकार उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो उस वस्तुकी प्राप्तिकी तीन मासके भीतरकी सूचना समझनी चाहिए। मंगलवार,

सोमवार और शनिवार उल्कापात दर्शनके लिए अशुभ हैं; इन दिनोंकी सन्ध्याका उल्कापात दर्शन अधिक अनिष्टकर समझा जाता है। मंगलवार और आश्लेषा नक्षत्रमें शुभ उल्कापात भी अशुभ होता है, इससे आगामी छः मासोंमें कष्टोंकी सूचना समझनी चाहिए। अनिष्ट उल्कापातके दर्शनके पश्चात् चिन्तामणि पार्श्वनाथका पूजन करनेसे आगामी अशुभकी शान्ति होती है।

राष्ट्रघातक उल्कापात—जब उल्काएँ चन्द्र और सूर्य का स्पर्श कर भ्रमण करती हुई पतित हों, और उस समय पृथ्वी कम्पायमान हो तो राष्ट्र दूसरे देशके अधीन होता है। सूर्य और चन्द्रमाके दाहिनी ओर उल्कापात हो तो राष्ट्रमें रोग फैलते हैं तथा राष्ट्रकी वनसम्पत्ति विशेषरूपसे नष्ट होती है। चन्द्रमासे मिलकर उल्का सामने आवे तो राष्ट्रके लिए विजय और लाभकी सूचना देती है। श्याम, अरुण, नील, रक्त, दहन, असित और भस्मके समान रूक्ष उल्का देशके शत्रुओंके लिए बाधक होती है। रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपद, मृगशिरा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्रको उल्का घातित करे तो राष्ट्रको पीड़ा होती है। मंगल और रविवारको अनेक व्यक्ति मध्यरात्रिमें उल्कापात देखें तो राष्ट्रके लिए भयसूचक समझना चाहिए। पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वा भाद्रपद, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रको उल्का ताडित करे तो देशके व्यापारी वर्गको कष्ट होता है तथा अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, कृत्तिका और विशाखा नक्षत्रको उल्का ताडित करे तो कलाविदोंको कष्ट होता है। देवमन्दिर या देवमूर्तिको उल्कापात हो तो राष्ट्रमें बड़े-बड़े परिवर्त्तन होते हैं, आन्तरिक संघर्षोंके साथ विदेशीय शक्तिका भी मुकाबिला करना पड़ता है। इस प्रकार उल्कापतन देशके लिए महान् अनिष्टकारक है। श्मशान भूमिमें पतित उल्का प्रशासकोंमें भयका संचार करती है तथा देश या राज्यमें नवीन परिवर्तन उत्पन्न करती है। न्यायालयोंपर उल्कापात हो तो किसी बड़े नेताकी मृत्युकी सूचना अवगत करनी चाहिए। वृक्ष, धर्मशाला, तालाब और अन्य पवित्र भूमियोंपर उल्कापात हो तो राज्यमें आन्तरिक विद्रोह, वस्तुओंकी मँहगाई एवं देशके नेताओंमें फूट होती है। संगठनके अभाव होनेसे देश या राष्ट्रको महान् क्षति होती है। श्वेत और पीत वर्णकी सूच्याकार अनेक उल्काएँ किसी रिक्त स्थानपर पतित हों तो देश या राष्ट्रके लिए शुभकारक समझना चाहिए। राष्ट्रके नेताओंके बीच मेल-मिलाप की सूचना भी उक्त प्रकारके उल्कापातमें ही समझनी चाहिए। मन्दिरके निकटवर्ती वृक्ष पर उल्कापात हो तो प्रशासकोंके बीच मतभेद होता है, जिससे देश या राष्ट्रमें अनेक प्रकारकी अशान्ति फैलती है। पुष्य नक्षत्रमें श्वेतवर्णकी चमकती हुई उल्का राजप्रासाद या देवप्रासादके किनारेपर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो देश या राष्ट्रकी शक्तिका विकास होता है, अन्य देशोंसे व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है तथा देशकी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। इस प्रकारका उल्कापात राष्ट्र या देशके लिए शुभकारक है। मघा और श्रवण नक्षत्रमें पूर्वोक्त प्रकारका उल्कापात हो तो भी देश या राष्ट्रकी उन्नति होती है। खलिहान और बगीचेमें मध्यरात्रिके समय उक्त प्रकारकी उल्का पतित हो तो निश्चय ही देशमें अन्नाभाव होता है तथा अन्नका भाव द्विगुणित हो जाता है।

शनिवार और मंगलवारको कृष्णवर्णकी मन्द प्रकाशवाली उल्काएँ श्मशान भूमि या निर्जन वन-भूमिमें पतित होती हुई देखी जायँ तो देशमें कलह होता है। पारस्परिक अशान्तिके कारण देशकी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था बिगड़ जाती है। राष्ट्रके लिए इस प्रकारकी उल्काएँ भयोत्पादक एवं घातक होती हैं। आश्लेषा नक्षत्रमें कृष्णवर्णकी उल्का पतित हो तो निश्चय ही देशके किसी उच्चकोटिके नेताकी मृत्यु होती है। राष्ट्रकी शक्ति और बलको बढ़ानेवाली श्वेत, पीत और रक्तवर्ण की उल्काएँ शुक्रवार और गुरुवारको पतित होती हैं।

कृषिफलादेश सम्बन्धी उल्कापात—प्रकाशित होकर चमक उत्पन्न करती हुई उल्का यदि पतनके पहले ही आकाशमें विलीन हो जाय तो कृषिके लिए हानिकारक है। मोर पूँछके समान आकारवाली उल्का मंगलवारकी मध्यरात्रिमें पतित हो तो कृषिमें एक प्रकारका रोग उत्पन्न होता है, जिससे फसल नष्ट हो जाती है। मण्डलाकार होती हुई उल्का शुक्रवारकी सन्ध्याको गर्जनके साथ पतित हो तो कृषिमें वृद्धि होती है। फसल ठीक उत्पन्न होती है और कृषिमें कीड़े नहीं लगते। इन्द्रध्वजके रूपमें आश्लेषा, विशाखा, भरणी और रेवती नक्षत्रमें तथा रवि, गुरु, सोम और शनि इन वारोंमें उल्कापात हो तो कृषिमें फसल पकनेके समय रोग लगता है। इस प्रकारके उल्कापातमें गेहूँ, जौ, धान और चनेकी फसल अच्छी होती है तथा अवशेष धान्य की फसल बिगड़ती है। वृष्टिका भी अभाव रहता है। शनिवारको दक्षिणकी ओर बिजली चमके तथा तत्काल ही पश्चिम दिशाकी ओर उल्का पतित हो तो देशके पूर्वीय भागमें बाढ़, तूफान, अतिवृष्टि आदिके कारण फसलको हानि पहुँचती है तथा इसी दिन पश्चिमकी ओर बिजली चमके और दक्षिण दिशाकी ओर उल्कापात हो तो देशके पश्चिमीय भागमें सुभिक्ष होता है। इस प्रकारका उल्कापात कृषिके लिए अनिष्टकर ही होता है। संहिताकारोंने कृषिके सम्बन्धमें विचार करते समय समय-समयपर पतित होनेवाली उल्काओंके शुभाशुभत्वका विचार किया है। वराहमिहिरके मतानुसार पुष्य, मघा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रोंमें गुरुवारकी सन्ध्या या इस दिनकी मध्यरात्रिमें चनेके खेतपर उल्कापात हो तो आगामी वर्षकी कृषिके लिए शुभदायक है। ज्येष्ठ महीनेकी पूर्णमासीके दिन रातको होनेवाले उल्कापातसे आगामी वर्षके शुभाशुभ फलको ज्ञात करना चाहिए। इस दिन अश्विनी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा नक्षत्रको प्रताड़ित करता हुआ उल्कापात हो तो फसलके लिए खराबी होती है। यह उल्कापात कृषिके लिए अनिष्टका सूचक है। शुक्रवारको अनुराधा नक्षत्रमें मध्यरात्रिमें प्रकाशमान उल्कापात हो तो कृषिके लिए उत्तम होता है। इस प्रकारके उल्कापात द्वारा श्रेष्ठ फसलकी सूचना समझनी चाहिए। श्रवण नक्षत्रका स्पर्श करता हुआ उल्कापात सोमवारकी मध्यरात्रिमें हो तो गेहूँ और धानकी फसल उत्तम होती है। श्रवण नक्षत्रमें मंगलवारको उल्कापात हो तो गन्ना अच्छा उत्पन्न होता है, और चनेकी फसलमें रोग लगता है। सोमवार, गुरुवार और शुक्रवारको मध्यरात्रिमें कड़कके साथ उल्कापात हो तथा इस उल्काका आकार ध्वजाके समान चौकोर हो तो आगामी वर्षमें कृषि अच्छी होती है; विशेषतः चावल और गेहूँकी फसल उत्तम होती है। ज्येष्ठ मासकी शुक्लपक्षकी एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशीको पश्चिम दिशाकी ओर उल्कापात हो तो फसलके लिए अशुभ समझना चाहिए। यहाँ इतनी विशेषता है कि उल्काका आकार त्रिकोण होनेसे यह फल यथार्थ घटित होता है। यदि इन दिनोंका उल्कापात दण्डेके समान हो तो आरम्भमें सूखा पश्चात् समयानुकूल वर्षा होती है। दक्षिण दिशामें अनिष्ट फल घटता है। शुक्लपक्षकी चतुर्दशीकी समाप्ति और पूर्णिमाके आरम्भ कालमें उल्कापात हो तो आगामी वर्षके लिए साधारणतः अनिष्ट होता है। पूर्णिमाविद्ध प्रतिपदामें उल्कापात हो तो फसल कई गुनी अधिक होती है। पशुओंमें एक प्रकारका रोग फैलता है, जिससे पशुओंकी हानि होती है।

आषाढ़ महीनेके आरम्भमें निरभ्र आकाशमें काली और लाल रंगकी उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो आगामी तथा वर्तमान दोनों वर्षमें कृषि अच्छी नहीं होती। वर्षा भी समय पर नहीं होती है। अतिवृष्टि और अनावृष्टिका योग रहता है। आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा शनिवार और मंगलवारको हो और इस दिन गोलाकार काले रंगकी उल्काएँ टूटती हुई दिखलाई पड़ें तो महान् भय होता है और कृषि अच्छी नहीं होती। इन दिनोंमें मध्यरात्रिके बाद श्वेत रंगकी उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो फसल बहुत अच्छी होती है। यदि इन पतित

होनेवाली उल्काओंका आकार मगर और सिंहके समान हो तथा पतित होते समय शब्द हो रहा हो तो फसलमें रोग लगता है और अच्छी होने पर भी कम ही अनाज उत्पन्न होता है। आषाढ़ कृष्ण तृतीया, पञ्चमी, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी और चतुर्दशीको मध्यरात्रिके बाद उल्कापात हो तो निश्चयसे फसल खराब होती है। इस वर्षमें ओले गिरते हैं तथा पाला पड़नेका भी भय रहता है। कृष्णपक्षकी दशमी और अष्टमीको मध्यरात्रिके पूर्व ही उल्कापात दिखलाई पड़े तो उस प्रदेशमें कृषि अच्छी होती है। इन्हीं दिनोंमे मध्यरात्रिके बाद उल्कापात दिखलाई पड़े तो गुड़, गेहूँकी फसल अच्छी और अन्य वस्तुओंकी फसलमें कमी आती है। सन्ध्या समय चन्द्रोदयके पूर्व या चन्द्रास्तके उपरान्त उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी नहीं होती। अन्य समयमें सुन्दर और शुभ आकारका उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी होती है। शुक्लपक्षमें तृतीया, दशमी और त्रयोदशीको आकाश गर्जनके साथ पश्चिम दिशाकी ओर उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसलमें कुछ कमी रहती है। तिल, तिलहन और दालवाले अनाजकी फसल अच्छी होती है। केवल चावल और गेहूँकी फसलमें कुछ त्रुटि रहती है।

फसलकी अच्छाई और बुराईके लिए कार्त्तिक, पौष और माघ इन तीन महीनोंके उल्कापातका विचार करना चाहिए। चैत्र और वैशाखका उल्कापात केवल वृष्टिकी सूचना देता है। कार्तिक मासके कृष्णपक्षकी प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी और चतुर्दशीको धूम्रवर्णका उल्कापात दक्षिण और पश्चिम दिशाकी ओर दिखलाई पड़े तो आगामी फसलके लिए अत्यन्त अनिष्टकारक और पशुओंकी महँगीका सूचक है। चौपायोंमें मरीके रोगकी सूचना भी इसी उल्कापातसे समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथियाँ शनिवार, मंगलवार और रविवारको पड़े तो समस्त फल और सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवारको पड़ें तो अनिष्ट चतुर्थांश ही मिलता है। कार्तिककी पूर्णिमाको उल्कापातका विशेष निरीक्षण करना चाहिए। इस दिन सूर्यास्तके उपरान्त ही उल्कापात हो तो आगामी वर्षकी फसलकी बरबादी प्रकट करता है। मध्यरात्रिके पहले उल्कापात हो तो श्रेष्ठ फसलका सूचक है, मध्यरात्रिके उपरान्त उल्कापात हो तो फसलमें साधारण गड़बड़ी रहनेपर भी अच्छी ही होती है। मोटा धान्य खूब उत्पन्न होता है। पौष मासमें पूर्णिमाको उल्कापात हो तो फसल अच्छी, अमावास्याको हो तो खराब, शुक्ल या कृष्ण पक्षकी त्रयोदशीको हो तो श्रेष्ठ, द्वादशीको हो तो साधारण अनिष्ट, एकादशीको हो तो धान्यकी फसल बहुत अच्छी और गेहूँकी साधारण, दशमीको हो तो साधारण एवं तृतीया, चतुर्थी और सप्तमीको हो तो फसलमें रोग लगने पर भी अच्छी ही होती है। पौष मासमें कृष्णपक्षकी प्रतिपदाको यदि मंगलवार हो और उस दिन उल्कापात हो तो निश्चय ही फसल चौपट हो जाती है। वराहमिहिरने इस योगको अत्यन्त अनिष्टकारक माना है।

द्वितीया विद्ध माघ मासकी कृष्ण प्रतिपदाको उल्कापात हो तो आगामी वर्ष फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है और अनाजका भाव भी सस्ता हो जाता है। तृतीया विद्ध द्वितीयाको रात्रिके पूर्वभागमें उल्कापात हो तो सुभिक्ष और अन्नकी उत्पत्ति प्रचुर मात्रामें होती है। चतुर्थी विद्ध तृतीयाको कभी भी उल्कापात हो तो कृषिमें अनेक रोग, अवृष्टि और अनावर्षणसे भी फसलको क्षति पहुँचती है। पञ्चमी विद्ध चतुर्थीको उल्कापात हो तो साधारणतया फसल अच्छी होती है। दालोंकी उपज कम होती है, अवशेष अनाज अधिक उत्पन्न होते हैं। तिलहन, गुड़का भाव भी कुछ महँगा रहता है। इन वस्तुओंकी फसल भी कमजोर ही रहती है। षष्ठी विद्ध पञ्चमीको उल्कापात हो तो फसल अच्छी उत्पन्न होती है। सप्तमी विद्ध षष्ठीको मध्यरात्रिके कुछ ही बाद उल्कापात हो तो फसल हल्की होती है। दाल, गेहूँ, बाजरा, और ज्वारकी उपज कम ही होती है। अष्टमी विद्ध सप्तमीको रात्रिके प्रथम प्रहरमें उल्कापात हो तो अतिवृष्टिसे

फसलको हानि, द्वितीय प्रहरमें उल्कापात हो तो साधारणतया अच्छी वर्षा, तृतीय प्रहरमें उल्कापात हो तो फसलमें कमी, और चतुर्थ प्रहरमें उल्कापात हो तो गेहूँ, गुड़, तिलहनकी खूब उत्पत्ति होती है। नवमी विद्ध अष्टमीको शनिवार या रविवार हो और इस दिन उल्कापात दिखलाई पड़े तो निश्चयतः चनेकी फसलमें क्षति होती है। दशमी, एकादशी और द्वादशी तिथियाँ शुक्रवार या गुरुवारको हों और इनमें उल्कापात दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल उत्पन्न होती है। पूर्णमासीको लाल रंग या काले रंगका उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसलकी हानि; पीत और श्वेत रंगका उल्कापात दिखलाई पड़े तो श्रेष्ठ फसल एवं चित्र-विचित्र वर्णका उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्यरूपसे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। होलीके दिन होलिकादाहसे पूर्व उल्कापात दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष फसलकी कमी और होलिकादाहके पश्चात् उल्कापात नीले रंगका या विचित्र वर्णका दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकारसे फसलको हानि पहुँचती है।

वैयक्तिक फलादेश—सर्प और शूकरके समान आकारयुक्त शब्द सहित उल्कापात दिखलाई पड़े तो दर्शकको तीन महीनेके भीतर मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है। इस प्रकारका उल्कापात आर्थिक हानि भी सूचित करता है। इन्द्रधनुषके आकार समान उल्कापात किसी भी व्यक्तिको सोमवारकी रात्रिमें दिखलाई पड़े तो धन हानि, रोग वृद्धि, सम्मानकी वृद्धि तथा मित्रों द्वारा किसी प्रकारकी सहायताकी सूचक; बुधवारकी रात्रिमें उल्कापात दिखलाई पड़े तो वस्त्राभूषणोंका लाभ, व्यापारमें लाभ और मन प्रसन्न होता है; गुरुवारकी रात्रिमें उल्कापात इन्द्रधनुषके आकारका दिखलाई पड़े तो व्यक्तिको तीन मासमें आर्थिक लाभ, किसी स्वजनको कष्ट, सन्तानकी वृद्धि एवं कुटुम्बियों द्वारा यशकी प्राप्ति होती है; शुक्रवारको उल्कापात उस आकारका दिखलाई पड़े तो राज सम्मान, यश, धन एवं मधुर पदार्थ भोजनके लिए प्राप्त होते हैं तथा शनिकी रात्रिमें उस प्रकारके आकारका उल्कापात दिखलाई पड़े तो आर्थिक संकट, धनकी क्षति तथा आत्मीयोंमें भी संघर्ष होता है। रविवारकी रात्रिमें इन्द्रधनुषके आकारकी उल्काका पतन देखना अनिष्टकारक बताया गया है। रोहिणी, तीनों उत्तरा—उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपदा, चित्रा, अनुराधा और रेवती नक्षत्रमें इन्हीं नक्षत्रोंमें उत्पन्न हुए व्यक्तियोंको उल्कापात दिखलाई पड़े तो वैयक्तिक दृष्टिसे अभ्युदय सूचक और इन नक्षत्रोंसे भिन्न नक्षत्रोंमें जन्मे व्यक्तियोंको उल्कापात दिखलाई पड़े तो कष्ट सूचक होता है। तीनों पूर्वा—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपदा, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा और मूलनक्षत्रमें जन्मे व्यक्तियोंको इन्हीं नक्षत्रोंमें शब्द करता हुआ उल्कापात दिखलाई पड़े तो मृत्यु सूचक और भिन्न नक्षत्रोंमें जन्मे व्यक्तियोंको इन्हीं नक्षत्रोंमें उल्कापात सशब्द दिखलाई पड़े तो किसी आत्मीयकी मृत्यु और शब्द रहित दिखलाई पड़े तो आरोग्यलाभ प्राप्त होता है। विपरीत आकारवाली उल्का दिखलाई पड़े—जहाँसे निकली हो, पुनः उसी स्थानकी ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो भय कारक, विपत्ति सूचक तथा किसी भयंकर रोगको सूचक अवगत करना चाहिए। पवनकी प्रतिकूल दिशामें उल्का कुटिल भावसे गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो दर्शनकी पत्नीको भय, रोग और विपत्तिकी सूचक समझना चाहिए।

व्यापारिक फल—श्याम और असितवर्णकी उल्का रविवारकी रात्रिके पूर्वार्धमें दिखलाई पड़े तो काले रंगकी वस्तुओंकी महँगाई, पीतवर्णकी उल्का इसी रात्रिमें दिखलाई पड़े तो गेहूँ और चनेके व्यापारमें अधिक घटा बढ़ी, श्वेतवर्णकी उल्का इसी रात्रिमें दिखलाई पड़े तो चाँदीके भावमें गिरावट और लालवर्णकी उल्का दिखलाई पड़े तो सुवर्णके व्यापारमें गिरावट रहती है। मङ्गलवार शनिवार और रविवारकी रात्रिमें सट्टेबाज व्यक्ति पूर्व दिशामें गिरती हुई उल्का देखें तो उन्हें माल बेचनेमें लाभ होता है, बाजारका भाव गिरता है और खरीदनेवालेको हानि होती है। यदि इन्हीं रात्रियोंमें पश्चिम दिशाकी ओरसे गिरती हुई उल्का उन्हें दिखलाई पड़े तो भाव

कुछ ऊँचे उठते हैं और सट्टेवालोंको खरीदनेमे लाभ होता है। दक्षिणसे उत्तरकी ओर गमन करती हुई उल्का दिखलाई पड़े तो मोती, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदिके व्यापारमें लाभ होता है। इन रत्नोंके मूल्यमें आठ महीने तक घटा-बढ़ी होती रहती है। जवाहरातका बाजार स्थिर नहीं रहता है। यदि सूर्यास्त या चन्द्रास्त कालमें उल्कापात हरे और लाल रङ्गका वृत्ताकार दिखलाई पड़े तो सुवर्ण और चाँदीके भाव स्थिर नहीं रहते। तीन महीनों तक लगातार घटा-बढ़ी चलती रहती है। कृष्ण सर्पके आकार और रङ्ग वाली उल्का उत्तर दिशासे निकलती हुई दिखलाई पड़े तो लोहा, उड़द और तिलहनका भाव ऊँचा उठता है। व्यापारियोंको खरीदनेसे लाभ होता है। पतली और छोटी पूँछवाली उल्का मङ्गलवारकी रात्रिमें चमकती हुई दिखलाई पड़े तो गेहूँ, लाल कपड़ा एवं अन्य लाल रङ्गकी वस्तुओंके भावमें घटा-बढ़ी होती है। मनुष्य, गज और अश्वके आकारकी उल्का यदि रात्रिके मध्यभागमें शब्द सहित गिरे तो तिलहनके भावमें अस्थिरता रहती है। मृग, अश्व और वृक्षके आकारकी उल्का मन्द-मन्द चमकती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी वृक्ष या घरके ऊपर हो तो पशुओंके भाव ऊँचे उठते हैं साथ ही साथ तृणके दाम भी मँहगे हो जाते हैं। चन्द्रमा या सूर्यके दाहिनी ओर उल्का गिरे तो सभी वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होती है। यह स्थिति तीन महीने तक रहती है, पश्चात् मूल्य पुनः नीचे गिर जाता है। वन या श्मशान भूमिमें उल्कापात हो तो दाल वाले अनाज महँगे होते हैं और अवशेष अनाज सस्ते होते हैं। पिण्डाकार, चिनगारी फूटती हुई उल्का आकाशमें भ्रमण करती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी नदी या तालाबके किनारे पर हो तो कपड़ेका भाव सस्ता होता है। रूई, कपास, सूत आदिके भावमें भी गिरावट आ जाती है। चित्रा, मृगशिर, रेवती, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा इन नक्षत्रोंमें पश्चिम दिशासे चलकर पूर्व या दक्षिणकी ओर उल्कापात हो तो सभी वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होती है तथा विशेष रूपसे अनाजका मूल्य बढ़ता है। रोहिणी, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, श्रवण और पुष्य इन नक्षत्रोंमें दक्षिणकी ओर जाज्वल्यमान उल्कापात हो तो अन्नका भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदीके भावमें भी गिरावट, जवाहरातके भावमें कुछ महँगी, तृण और लकड़ीके मूल्यमें वृद्धि एवं लोहा, इस्पात आदिके मूल्यमें भी गिरावट होती है। अन्य धातुओंके मूल्यमें वृद्धि होती है।

दहन और भस्मके समान रङ्ग और आकारवाली उल्काएँ आकाशमें गमन करती हुई रविवार, भौमवार और शनिवारकी रात्रिको अकस्मात् किसी कुँए पर पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो प्रायः अन्नका भाव आगामी आठ महीनोंसे महँगा होता है और इस प्रकार उल्कापात दुर्भिक्षका सूचक भी है। अन्न संग्रह करनेवालोंको विशेष लाभ होता है। शुक्रवार और गुरुवार को पुष्य या पुनर्वसु नक्षत्र हों और इन दोनों की रात्रिके पूर्वार्धमें श्वेत या पीत वर्णका उल्कापात दिखलाई पड़े तो साधारणतया भाव सम रहते हैं। माणिक्य, मूँगा, मोती, हीरा, पद्मराग आदि रत्नोंकी कीमतमें वृद्धि होती है। सुवर्ण और चाँदीका भाव भी कुछ ऊँचा रहता है। गुरु-पुष्य योगमें उल्कापात दिखलाई पड़े तो यह सोने, चाँदीके भावोंमें विशेष घटा-बढ़ीका सूचक है। जूट, बादाम, घृत और तैलके भाव भी इस प्रकारके उल्कापातमें घटा-बढ़ीको प्राप्त करते हैं। रवि-पुष्य योगमें दक्षिणोत्तर आकाशमें जाज्वल्यमान उल्कापात दिखलाई पड़े तो सोनेका भाव प्रथम तीन महीने तक नीचे गिरता है फिर ऊँचा चढ़ता है। घी और तैलके भावमें भी पहले गिरावट, पश्चात् तेजी आती है। यह योग व्यापारके लिए भी उत्तम है। नये व्यापारियोंको इस प्रकारके उल्कापातके पश्चात् अपने व्यापारिक कार्योंमें अधिक प्रगति करनी चाहिए। रोहिणी नक्षत्र यदि सोमवारको हो और उस दिन सुन्दर और श्रेष्ठ आकारमें उल्का पूर्व दिशासे गमन करती हुई किसी हरे-भरे खेत या वृक्षके ऊपर गिरे तो समस्त वस्तुओंके मूल्यमें घटा-बढ़ी

रहती है व्यापारियोंके लिए यह समय विशेष महत्त्वपूर्ण है, जो व्यापारी इस समयका सदुपयोग करते हैं, वे शीघ्र ही धनिक हो जाते हैं।

रोग और स्वास्थ्य सम्बन्धी फलादेश—सछिद्र, कृष्णवर्ण या नीलवर्णकी उल्काएँ ताराओं का स्पर्श करती हुई पश्चिम दिशामें गिरें तो मनुष्य और पशुओंमें संक्रामक रोग फैलते हैं तथा इन रोगोंके कारण सहस्रों प्राणियों को मृत्यु होती है। आश्लेषा नक्षत्रमें मगर या सर्पकी आकृति की उल्का नील या रक्तवर्णकी भ्रमण करती हुई गिरे तो जिस स्थानपर उल्कापात होता है, उस स्थानके चारों ओर पचास कोस की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल उल्कापातसे तीन महीनेके अन्दर ही उपलब्ध हो जाता है। श्वेतवर्णकी दण्डाकार उल्का रोहिणी नक्षत्रमें पतित हो तो पतन स्थानके चारों ओर सौ कोश तक सुभिक्ष, सुख, शान्ति और स्वास्थ्य लाभ होता है। जिस स्थानपर यह उल्कापात होता है, उससे दक्षिण दिशामें दो सौ कोशकी दूरीपर रोग, कष्ट एवं नाना प्रकारकी शारीरिक बीमारियाँ प्राप्त होती हैं। इस प्रकारके प्रदेशका त्याग कर देना ही श्रेयस्कर होता है। गोपुच्छके आकारकी उल्का मंगलवारको आश्लेषा नक्षत्रमें पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो यह नाना प्रकारके रोगोंकी सूचना देती है। हैजा, चेचक आदि रोगोंका प्रकोप विशेप रहता है। बच्चों और स्त्रियोंके स्वास्थ्यके लिए विशेष हानिकारक है। किसी भी दिन प्रातःकालके समय उल्कापात किसी भी वर्ण और किसी भी आकृतिका हो तो भी यह रोगों की सूचना देता है। इस समयका उल्कापात प्रकृति विपरीत है, अतः इसके द्वारा अनेक रोगोंकी सूचना समझ लेनी चाहिये। इन्द्रधनुप या इन्द्र की ध्वजाके आकारमें उल्कापात पूर्वकी ओर दिखलाई पड़े तो उस दिशामें रोगकी सूचना समझनी चाहिए। किवाड़, बन्दूक और तलवारके आकारकी उल्का धूमिल वर्णकी पश्चिम दिशामें दिखलाई पड़े तो अनिष्टकारक समझना चाहिये। इस प्रकारका उल्कापात व्यापी रोग और महामारियोंका सूचक है। स्निग्ध, श्वेत, प्रकाशमान और सीधे आकारका उल्कापात शान्ति, सुख और नीरोगताका सूचक है। उल्कापात द्वारपर हो तो विशेप बीमारियाँ सामूहिकरूपसे होती हैं।

चतुर्थोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि परिवेषान् यथाक्रमम् ।
प्रशस्तानप्रशस्तांश्च यथावदनुपूर्वतः[1] ॥१॥

उल्काध्यायके पश्चात् अब परिवेषोंका पूर्व परम्परानुसार यथाक्रमसे कथन करता हूँ। परिवेष दो प्रकारके होते हैं—प्रशस्त-शुभ और अप्रशस्त-अशुभ ॥१॥

पञ्च प्रकारा विज्ञेयाः पञ्चवर्णाश्च भौतिकाः ।
ग्रहनक्षत्रयोः कालं परिवेषाः समुत्थिताः[2] ॥२॥

पाँच वर्ण और पाँच भूतों—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—की अपेक्षासे परिवेष पाँच प्रकार के जानने चाहिये। ये परिवेष ग्रह और नक्षत्रोंके कालको पाकर होते हैं ॥२॥

रूक्षाः खण्डाश्च वामाश्च क्रव्यादायुधसन्निभाः ।
अप्रशस्ताः[3] प्रकीर्त्यन्ते[4] वि[5]परीतगुणान्विताः ॥३॥

जो चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह और नक्षत्रोंके परिवेष—मण्डल-कुण्डल रूक्ष, खण्डित—अपूर्ण, टेढ़े, क्रव्याद्—मांसभक्षी जीव अथवा चिताकी अग्नि और आयुध—तलवार, धनुष आदि अस्त्रोंके समान होते हैं, वे अशुभ और इनसे विपरीत लक्षणवाले शुभ माने गये हैं ॥३॥

रात्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि प्रथमं तेषु लक्षणम् ।
ततः पश्चाद्दिवा भूयो तन्निबोध[6] यथाक्रमम्[7] ॥४॥

आगे हम रात्रिमें होनेवाले परिवेषोंके लक्षण और फलको कहेंगे; पश्चात् दिनमें होनेवाले परिवेषोंके लक्षण और फलका निरूपण करेंगे। क्रमशः उन्हें अवगत करना चाहिए ॥४॥

क्षीरशङ्खनिभश्चन्द्रे परिवेषो[8] यदा[9] भवेत् ।
तदा क्षेमं सुभिक्षं च राज्ञो विजयमादिशेत् ॥५॥

चन्द्रमाके इर्द-गिर्द दूध अथवा शङ्खके सदृश परिवेष हो तो क्षेम-कुशल और सुभिक्ष होता है तथा राजाकी विजय होती है ॥५॥

सर्पिस्तैलनिकाशस्तु परिवेषो यदा भवेत् ।
न चाऽऽ[10]कृष्टोऽतिमात्रं च महामेघस्तदा भवेत् ॥६॥

यदि घृत और तैलके वर्णका चन्द्रमाका मण्डल हो और वह अत्यन्त श्वेत न होकर किञ्चित् मन्द हो तो अत्यन्त वर्षा होती है ॥६॥

---

१. अनुपूर्वशः मु० । २ समुपस्थिताः आ० । ३. प्रशस्ता मु० C. । ४. न प्रशस्यन्ते मु० C. । ५. विपरीता आ० । ६ तन्निबोधत मु० C. । ७. यन्नत: मु० D. । ८. परिवेषे आ० । ९. यथा आ० । १०. आकृष्ट मु० ।

रूप्यपारापताभश्च परिवेषो यदा भवेत् ।
महामेघास्तदाभीक्ष्णं तर्पयन्ति जलैर्महीम् ॥७॥

चाँदी और कबूतरके समान आभावाला चन्द्रमाका परिवेष हो तो निरन्तर जल-वर्षा द्वारा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है। अर्थात् कई दिनों तक झड़ी लगी रहती है ॥७॥

इन्द्रायुध सवर्णस्तु परिवेषो यदा भवेत् ।
सङ्ग्रामं तत्र जानीयाद् वर्षं चापि जलागमम् ॥८॥

यदि पूर्वादि दिशाओंमें इन्द्रधनुषके समान वर्णवाला चन्द्रमाका परिवेष हो तो उस दिशा में संग्रामका होना और जलका बरसना जानना चाहिए ॥८॥

कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षं पीते तु व्याधिमादिशेत् ।
रूक्षे भस्मनिभे चापि दुर्वृष्टिभयमादिशेत् ॥९॥

काले और नीले वर्णका चन्द्रमण्डल हो तो निश्चय ही वर्षा होती है। यदि पीले रंगका हो तो व्याधिका प्रकोप होता है। चन्द्रमण्डलके रूक्ष और भस्म सदृश होने पर वर्षाका अभाव रहता है और उससे भय होता है। तात्पर्य यह है कि जलकी वर्षा न होकर वायु तेज चलती है, जिससे धूलकी वर्षा दिखलाई पड़ती है ॥९॥

यदा तु सोममुदितं परिवेषो रुणद्धि हि ।
जीमूतवर्णस्निग्धश्च महामेघस्तदा भवेत् ॥१०॥

यदि चन्द्रमाका परिवेष उदयप्राप्त चन्द्रमाको अवरुद्ध करता है—ढक लेता है और वह मेघके समान तथा स्निग्ध हो तो उत्तम वृष्टि होती है ॥१०॥

अभ्युन्नतो यदा श्वेतो रूक्षः सन्ध्यानिशाकरः ।
अचिरेणैव कालेन राष्ट्रं चौरैर्विलुप्यते ॥११॥

उदय होता हुआ सन्ध्याके समयका चन्द्रमा यदि श्वेत और रूक्ष वर्णके परिवेषसे युक्त हो तो देशको चोरोंके उपद्रवका भय होता है ॥११॥

चन्द्रस्य परिवेषस्तु सर्वरात्रं यदा भवेत् ।
शस्त्रं जनक्षयं चैव तस्मिन् देशे विनिर्दिशेत् ॥१२॥

यदि सारी रात—उदयसे अस्त तक चन्द्रमाका परिवेष रहे तो उस प्रदेशमें परस्पर कलह-मारपीट और जनताका नाश सूचित होता है ॥१२॥

भास्करं तु यदा रूक्षः परिवेषो रुणद्धि हि ।
तदा मरणमाख्याति नागरस्य महीपतेः ॥१३॥

यदि सूर्यका परिवेष रूक्ष हो और वह उसे ढक ले तो उसके द्वारा नागरिक एवं प्रशासकों की मृत्यु की सूचना मिलती है ॥१३॥

---

१. धारा मु० C. । २. प्रभावस्तु मु० C. । ३. मेघः A. B. C. मु० । ४. भीक्ष्णं मु० C. । ५. सुवर्ण आ० । ६. वर्षं आ० । ७. जलागमे आ० । ८. पीतके आ० । ९. मुद्रित C में इसके पूर्व 'नक्षत्रप्रतिमानस्तु महामेघस्तदा भवेत्' यह पाठ भी मिलता है । १० नागरस्य आ० ।

आदित्यपरिवेषस्तु यदा सर्वदिनं भवेत् ।
क्षुद्भयं जनमारिश्च शस्त्रकोपं च निर्दिशेत् ॥१४॥

सूर्यका परिवेष सारे दिन उदयसे अस्त तक बना रहे तो क्षुधाका भय, मनुष्योंका महामारी द्वारा मरण एवं युद्धका प्रकोप होता है ॥१४॥

हरते सर्वसस्यानामीतिर्भवति दारुणा ।
वृक्षगुल्मलतानां च वर्त्तनीनां[1] तथैव च ॥१५॥

उक्त प्रकारके परिवेषसे सभी प्रकारके धान्योंका नाश, घोर ईति-भीति और वृक्षों, गुल्मों-झुरमुटों, लताओं तथा पथिकोंको हानि पहुँचाती है ॥१५॥

यतः खण्डस्तु दृश्येत ततः प्रविशते परः ।
ततः प्रयत्नं[2] कुर्वीत रक्षणे पुरराष्ट्रयोः ॥१६॥

उपर्युक्त समस्त दिनव्यापी सूर्य परिवेषका जिस ओरका भाग खण्डित दिखाई दे, उस दिशासे परचक्र का प्रवेश होता है, अतः नगर और देशकी रक्षाके लिए उस दिशामें प्रबन्ध करना चाहिए ॥१६॥

रक्तो[3] वा यथाभ्युदितं[4] कृष्णपर्यन्त एव च[5] ।
परिवेषो रविं[6] रुन्ध्याद्[7] [8]राजव्यसनमादिशेत् ॥१७॥

रक्त अथवा कृष्णवर्ण पर्यन्त चार वर्णवाला सूर्यका परिवेष हो और वह उदित सूर्यको आच्छादित करे तो कष्ट सूचित होता है ॥१७॥

यदा त्रिवर्णपर्यन्तं परिवेषो दिवाकरम् ।
तद्राष्ट्रमचिरात् कालाद् दस्युभिः परिलुप्यते[9] ॥१८॥

यदि तीन वर्णवाला परिवेष सूर्यमण्डलको ढक ले तो डाकुओं द्वारा देशमें उपद्रव होता है तथा दस्युवर्णकी उन्नति होती है ॥१८॥

हरितो नीलपर्यन्तः परिवेषो यदा भवेत् ।
आदित्ये यदि वा सोमे राजव्यसनमादिशेत् ॥१९॥

यदि हरे रंग से लेकर नीलेरंग पर्यन्त परिवेष सूर्य अथवा चन्द्रमाका हो तो प्रशासक वर्गको कष्ट होता है ॥१९॥

दिवाकरं बहुविधः परिवेषो रुणद्धि हि ।
[10]म्रियते बहुधा वापि गवां मरणमादिशेत् ॥२०॥

यदि अनेक वर्णवाला परिवेष सूर्यमण्डलको अवरुद्ध कर ले अथवा खण्ड-खण्ड अनेक प्रकारका हो तथा सूर्यको ढक ले तो गायोंका मरण सूचित होता है ॥२०॥

१. तस्मिन्नुपरागदर्शने मु० C. । २. प्रयत्नं तत्र मु० । ३. रक्तं मु० A. । ४. अभ्युदयेन् मु० C. । ५ मे मु० D. । ६. रवि मु० D. । ७. दिग्याद् भा० । ८. राजा मु० A., राज्ञा मु० C. । ९ विलुप्यते, और परिताप्यते, ये दोनों ही पाठ मिलते हैं । भा० । १०. राष्ट्रमो भवेद् तस्य, मु० ।

[1]यदाऽतिमुच्यते शीघ्रं [2]दिशश्चैवाभिवर्धते ।
गवां विलोपमपि च तस्य राष्ट्रस्य निर्दिशेत् ॥२१॥

जिस दिशामें सूर्यका परिवेप शीघ्र हटे और जिस दिशामें बढ़ता जाय उस दिशामें राष्ट्रकी गायोंका लोप होता है—गायोंका नाश होता है ॥२१॥

अंशुमाली[3] यदा तु स्यात् परिवेषः समन्ततः ।
तदा सपुरराष्ट्रस्य देशस्य रुजमादिशेत् ॥२२॥

सूर्यका परिवेप यदि सूर्यके चारों ओर हो तो नगर, राष्ट्र और देशके मनुष्य महामारीसे पीड़ित होते हैं ॥२२॥

ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां परिवेषः प्रगृह्यते ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तेत[4] तं देशं परिवर्जयेत् ॥२३॥

ग्रह—सूर्यादि सात ग्रह, नक्षत्र—अश्विनी, भरणी आदि २८ नक्षत्र और चन्द्रमाका परिवेप निरन्तर बना रहे और वह उस रूपमें ग्रहण किया जाय तो उस देशका परित्याग कर देना चाहिए, यतः वहाँ शीघ्र ही भय उपस्थित होता है ॥२३॥

परिवेषो विरुद्धेषु नक्षत्रेषु गृहेषु च ।
कालेषु वृष्टिर्विज्ञेया भयमन्यत्र निर्दिशेत्[5] ॥२४॥

वर्षाकालमें यदि ग्रहों और नक्षत्रोंके जिस दिशामें परिवेप हों तो उस दिशामें वृष्टि होती है और अन्य प्रकारका भय होता है ॥२४॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशं त्वभियोजयेत् ।
रिक्ता[6] वा विपुला[7] चाग्रे जयं कुर्वति[8] शाश्वतम् ॥२५॥

जलसे रिक्त अथवा जलसे परिपूर्ण बादलोंकी पंक्ति जिस दिशाकी ओर गमन करे तो उस दिशामें शाश्वत जय होता है ॥२५॥

यदाऽभ्रशक्तिर्दृश्येत परिवेषसमन्विता[9] ।
नागरान् यायिनो[10] हन्युस्तदा यत्नेन संयुगे ॥२६॥

यदि परिवेप सहित अभ्रशक्ति—बादल दिखलाई पड़ें तो आक्रमण करनेवाले शत्रु द्वारा नगरवासियोंका युद्धमें विनाश होता है, अतः यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए ॥२६॥

नानारूपो यदा दण्डः परिवेषं प्रमर्दति ।
नागरास्तत्र [11]वध्यन्ते यायिनो नात्र संशयः ॥२७॥

यदि अनेक वर्णवाला दण्ड परिवेपको मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो आक्रमणकारियों द्वारा नागरिकोंका नाश होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥२७॥

---

१. यथाभिमुच्यते मु० । २. दिग्मरर्धयाभिवर्धते मु० । ३. अर्यमाला आ० । ४. वर्तेत् मु० । ५. आदिशेत् मु० B. D. । ६. रक्ता मु० । ७. विपुलां मु० । ८. कुर्वीत मु० । ९. समुन्विता मु० C. । १०. गायिनो, यायिनः मु० A. D. यायिनं मु० C. । ११. बाध्यन्ते मु० ।

त्रिकोटि[1] यदि दृश्येत परिवेषः कथञ्चन ।
त्रिभागशस्त्रवध्योऽसाविति निर्ग्रन्थशासने ॥२८॥

कदाचित् तीन कोनेवाला परिवेष देखनेमें आवे तो युद्धमें तीन भाग सेना मारी जाती है, ऐसा निर्ग्रन्थ शासनमें बतलाया गया है ॥२८॥

चतुरस्रो यदा चापि परिवेषः प्रकाशते ।
क्षुधया व्याधिभिश्चापि चतुर्भागोऽवशिष्यते[2] ॥२९॥

यदि चार कोनेवाला परिवेष दिखलाई दे तो क्षुधा—भूख और रोगोंसे पीड़ित होकर विनाशको प्राप्त हो जाती है, जिससे जन-संख्या चतुर्थांश रह जाती है ॥२९॥

अर्द्धचन्द्रनिकाशस्तु परिवेषो रुणद्धि हि ।
आदित्यं[3] यदि वा सोमं[4] राष्ट्रं सङ्कुलतां व्रजेत् ॥३०॥

अर्ध चन्द्राकार परिवेष चन्द्रमा अथवा सूर्यको आच्छादित करे तो देशमें व्याकुलता होती है ॥३०॥

प्राकाराट्टालिकाप्रख्यः परिवेषो रुणद्धि हि ।
आदित्यं यदि वा सोमं पुररोधं निवेदयेत् ॥३१॥

यदि कोट और अट्टालिकाके सदृश होकर परिवेष सूर्य और चन्द्रमाको अवरुद्ध करे तो नगरमें शत्रुके घेरे पड़ जाते हैं, ऐसा कहना चाहिए ॥३१॥

समन्ताद् बध्यते यस्तु मुच्यते च मुहुर्मुहुः ।
सङ्ग्रामं तत्र जानीयाद् दारुणं पर्युपस्थितम्[5] ॥३२॥

सूर्य अथवा चन्द्रमाके चारों ओर परिवेष हो और वह बार-बार होवे और बिखर जाये तो वहाँ पर कलह एवं संग्राम होता है ॥३२॥

यदा गृहमवच्छाद्य परिवेषः प्रकाशते ।
अचिरेणैव कालेन सङ्कुलं[6] तत्र जायते ॥३३॥

यदि परिवेष ग्रहको आच्छादित करके दिखाई दे तो वहाँ शीघ्र ही सब आकुलतासे व्याप्त हो जाते हैं ॥३३॥

[7]यदि राहुमपि प्राप्तं परिवेषो रुणद्धि चेत् ।
तदा सुवृष्टिर्जानीयाद् व्याधिस्तत्र भयं भवेत् ॥३४॥

यदि परिवेष राहुको भी ढक ले—घेरेके भीतर राहु ग्रह भी आ जाय—तो अच्छी वर्षा होती है, परन्तु वहाँ व्याधिका भय बना रहता है ॥३४॥

पूर्वमन्घ्यां नागराणामागतानां[8] च पश्चिमा ।
अर्द्धरात्रेषु[9] राष्ट्रस्य मध्याह्ने राज्ञ उच्यते ॥३५॥

१. त्रिकोणो मु० । २. विशिष्यते मु० । ३. आदित्ये मु० । ४. सोमे मु० । ५. भयमात्यपाति दारुणम् मु० C. । ६. सग्राम । ७. राहुणा वै यदा सार्द्धं परिवेषो रुणद्धि हि । तदा प्रदं विजानीयात् व्याधिस्तत्र भयं भवेत् ॥३४॥ मु० C. । ८. आगन्तूनां मु० । ९. रात्रेषु मु० ।

पूर्वकी सन्ध्याका फल स्थायी—नगरवासियोंको होता है और पश्चिमकी सन्ध्याका फल आगन्तुक—यायीको होता है, अर्धरात्रिका फल देशभरको और मध्याह्नका फल राजाको प्राप्त होता है ॥३५॥

धूमकेतुं च सोमं च नक्षत्रं च रुणद्धि हि।
परिवेषो यदा राहुं तदा यात्रा न सिध्यति ॥३६॥

यदि परिवेष धूमकेतु—पुच्छलतारा, चन्द्रमा, नक्षत्र और राहुको आच्छादित करे तो यायी—आक्रमण करनेवाले राजाकी यात्राकी सिद्धि नहीं होती ॥३६॥

यदा तु ग्रहनक्षत्रे परिवेषो रुणद्धि हि।
अभावस्तस्य देशस्य विज्ञेयः पर्युपस्थितः ॥३७॥

यदि परिवेष ग्रह और नक्षत्रोंको रोके तो उस देशका अभाव हो जाता है—उस देशमें सङ्कट होता है ॥३७॥

त्रीणि यात्रावरुद्ध्यन्ते[1] नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः।
त्र्यहाद् वा जायते वर्षं मासाद् वा जायते भयम् ॥३८॥

नक्षत्र, चन्द्रमा और मंगल, बुध, गुरु और शुक्र इन पाँच ग्रहोंमें से किसी एकको एक साथ परिवेष अवरुद्ध करे तो तीन दिन में वर्षा होती है अथवा एक मासमें भय उत्पन्न होता है ॥३८॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं परिवेषेषु तत्त्वतः।
लक्षणं सम्प्रवक्ष्यामि विद्युतां तन्निबोधत[2] ॥३९॥

परिवेषोंका फल उल्काके फलके समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे विद्युत्के लक्षणादि निरूपण करते हैं ॥३९॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे परिवेषवर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः।

विवेचन—परिवेषोंके द्वारा शुभाशुभ अवगत करने की परम्परा निमित्तशास्त्रके अन्तर्गत है। परिवेषोंका विचार ऋग्वेदमें भी आया है। सूर्य अथवा चन्द्रमाकी किरणें पर्वतके ऊपर प्रतिबिम्बित और पवनके द्वारा मंडलाकार होकर थोड़ेसे मेघवाले आकाशमें अनेक रंग और आकार की दिखलाई पड़ती हैं, इन्हींको परिवेष करते हैं। वर्षाऋतुमें सूर्य या चन्द्रमाके चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकारमें एक मंडल सा बनता है, इसीको परिवेष कहा जाता है।

परिवेषोंका साधारण फलादेश—जो परिवेष नीलकंठ, मोर, चाँदी, तेल, दूध और जलके समान आभावाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मंगल करनेवाला होता है। जो परिवेष समस्त आकाशमें गमन करे, अनेक प्रकार की आभावाला हो, रुधिरके समान हो, रूखा हो, खण्डित हो तथा धनुष और शृङ्गाटकके समान हो तो यह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है। मोरकी गर्दनके समान परिवेष हो तो अत्यन्त वर्षा, बहुत रंगोंवाला हो तो राजाका वध, धूमवर्णका होनेसे भय और इन्द्रधनुषके

1. त्रीणि यत्र विरुध्यन्ते, नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः। मु०। 2. तन्निबोधतः मु०।

समान या अशोकके फूलके समान कान्तिवाला हो तो युद्ध होता है। किसी भी ऋतुमें यदि परिवेष एक ही वर्णका हो, स्निग्ध हो तथा छोटे-छोटे मेघोंसे व्याप्त हो और सूर्यकी किरणें पीत वर्णकी हों तो इस प्रकारका परिवेष शीघ्र ही वर्षाका सूचक है। यदि तीनों कालोंकी सन्ध्यामें परिवेष दिखलाई पड़े तथा परिवेषकी ओर मुख करके मृग या पक्षी शब्द करते हों तो इस प्रकारका परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारक होता है। यदि परिवेषका भेदन उल्का या विद्युत द्वारा हो तो इस प्रकारके परिवेष द्वारा किसी बड़े नेताकी मृत्युकी सूचना समझनी चाहिए। रक्तवर्णका परिवेष भी किसी नेताकी मृत्युका सूचक है। उदयकाल, अस्तकाल और मध्याह्न या मध्यरात्रिकालमें लगातार परिवेष दिखलाई पड़े तो किसी नेताकी मृत्यु समझनी चाहिए। दो मण्डलका परिवेष सेनापतिके लिए आतङ्ककारी, तीन मंडलवाला परिवेष शस्त्रकोपका सूचक, चार मंडलका परिवेष देशमें उपद्रव तथा महत्त्वपूर्ण युद्धका सूचक एवं पाँच मण्डलका परिवेष देश या राष्ट्रके लिए अत्यन्त अशुभ सूचक है। मंगल परिवेषमें हो तो सेना एवं सेनापतिको भय, बुध परिवेषमें हो तो कलाकार, कवि, लेखक एवं मन्त्रीको भय, बृहस्पति परिवेषमें हो तो पुरोहित, मन्त्री और राजाको भय, शुक्र परिवेषमें हो तो क्षत्रियोंको कष्ट एवं देशमें अशान्ति और शनि परिवेषमें हो तो देशमें चोर, डाकुओंका उपद्रव वृद्धिंगत हो तथा साधु, संन्यासियोंको अनेक प्रकारके कष्ट हों। केतु परिवेषमें हो तो अग्निका प्रकोप तथा शस्त्रादिका भय होता है। परिवेषमें दो ग्रह हों तो कृषिके लिए हानि, वर्षाका अभाव, अशान्ति और साधारण जनताको कष्ट; तीन ग्रह परिवेषमें हों तो दुर्भिक्ष, अन्नका भाव महँगा और धनिकवर्गको विशेष कष्ट; चार ग्रह परिवेषमें हों तो मन्त्री, नेता एवं किसी धर्मात्माकी मृत्यु और पाँच ग्रह परिवेषमें हों तो प्रलयतुल्य कष्ट होता है। यदि मंगल बुधादि पाँच ग्रह परिवेषमें हों तो किसी बड़े भारी राष्ट्रनायककी मृत्यु तथा जगत्‌में अशान्ति होती है। शासन परिवर्तनका योग भी इसीके द्वारा बनता है। यदि प्रतिपदासे लेकर चतुर्थी तक परिवेष हो तो क्रमानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंको कष्टसूचक होता है। पञ्चमीसे लेकर सप्तमी तक परिवेष हो तो नगर, कोष एवं धान्यके लिए अशुभकारक होता है। अष्टमीको परिवेष हो तो युवक, मन्त्री या किसी बड़े शासनाधिकारी की मृत्यु होती है। इस दिनका परिवेष गाँव और नगरोंकी उन्नतिमें रुकावटकी भी सूचना देता है। नवमी, दशमी और एकादशीमें होनेवाला परिवेष नागरिक जीवनमें अशान्ति और प्रशासक या मंडलाधिकारी की मृत्युकी सूचना देता है। द्वादशी तिथिमें परिवेष हो तो देश या नगरमें घरेलू उपद्रव; त्रयोदशीमें परिवेष हो तो शस्त्रका क्षोभ, चतुर्दशीमें परिवेष हो तो नारियोंमें भयानक रोग, प्रशासनाधिकारीकी रमणीको कष्ट एवं पूर्णमासीमें परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, समृद्धि एवं सुखकी सूचना मिलती है। यदि परिवेषके भीतर रेखा दिखलाई पड़े तो नगरवासियोंको कष्ट और परिवेषके बाहर रेखा दिखलाई पड़े तो देशमें शान्ति और सुखका विस्तार होता है। स्निग्ध, श्वेत और दीप्तिशाली परिवेष विजय, लक्ष्मी, सुख और शान्तिकी सूचना देता है।

रोहिणी, धनिष्ठा और श्रवण नक्षत्रमें परिवेष हो तो देशमें सुभिक्ष, शान्ति, वर्षा एवं हर्षकी वृद्धि होती है। अश्विनी, कृत्तिका और मृगशिरामें परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, देशमें शान्ति, धन-धान्यकी वृद्धि एवं व्यापारियोंको लाभ; भरणी और आश्लेषामें परिवेष हो तो जनताको अनेक प्रकारका कष्ट, किसी महापुरुषकी मृत्यु, देशमें उपद्रव, अन्न कष्ट एवं महामारीका प्रकोप; आर्द्रा नक्षत्रमें परिवेष हो तो सुख-शान्ति कारक; पुनर्वसु नक्षत्रमें परिवेष हो तो देशका प्रभाव बढ़े, अन्तर्राष्ट्रिय ख्याति मिले, नेताओंको सभी प्रकारके सुख प्राप्त हों तथा देशकी उपज वृद्धिंगत हो; पुष्य नक्षत्रमें परिवेष हो तो कल-कारखानोंकी वृद्धि हो; आश्लेषा नक्षत्रमें परिवेष हो तो सब प्रकारसे भय, आतंक एवं महामारीकी सूचना, मघा नक्षत्रमें परिवेष हो तो श्रेष्ठ वर्षाकी सूचना तथा अनाज सस्ते होनेकी सूचना; तीनों पूर्वाओंमें परिवेष हो तो व्यापारियोंको भय,

साधारण जनताको भी कष्ट और कृपक वर्गको चिन्ताकी सूचना; तीनों उत्तराओंमें परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, चेचकका प्रकोप, फसलकी श्रेष्ठता और पर शासनसे भय; हस्त नक्षत्रमें परिवेष हो तो सुभिक्ष, धान्यकी अच्छी उपज और देशमें समृद्धि; चित्रा नक्षत्रमें परिवेष हो तो प्रशासकोंमें मतभेद, परस्पर कलह और देशको हानि; स्वाती नक्षत्रमें परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, प्रशासकोंको विजय और शान्ति; विशाखा नक्षत्रमें परिवेष हो तो अग्निभय, शस्त्रभय और रोगभय; अनुराधा नक्षत्रमें परिवेष हो तो व्यापारियोंको कष्ट, देशकी आर्थिक क्षति और नगरमें उपद्रव; ज्येष्ठा नक्षत्रमें परिवेष हो तो अशान्ति, उपद्रव और अग्निभय; मूल नक्षत्रमें परिवेष हो तो देशमें घरेलू कलह, नेताओंमें मतभेद और अन्नकी क्षति; पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें परिवेष हो तो कृपकोंको लाभ, पशुओंकी वृद्धि और धन-धान्यकी वृद्धि; उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें परिवेष हो तो जनतामें प्रेम, नेताओंमें सहयोग, देशकी उन्नति और व्यापारमें लाभ; शतभिषामें परिवेष हो तो शत्रुभय, अग्निका विशेष प्रकोप और अन्नकी कमी; पूर्वाभाद्रपदमें परिवेष हो तो बाढ़से कष्ट, कलाकारोंका सम्मान और प्रायः शान्ति; उत्तराभाद्रपदनक्षत्रमें परिवेष हो तो जनतामें सहयोग, देशमें कलकारखानोंकी वृद्धि और शासनमें तरक्की एवं रेवती नक्षत्रमें परिवेष हो तो सर्वत्र शान्तिकी सूचना समझनी चाहिए। परिवेषके रंग, आकृति और मण्डलोंकी संख्याके अनुसार फलादेशमें न्यूनता या अधिकता हो जाती है। किसी भी नक्षत्रमें एक मंडलका परिवेष साधारणतः प्रतिपादित फलकी ही सूचना देता है, दो मंडलका परिवेष निरूपित फलसे प्रायः डेढ़ गुने फलकी सूचना, तीन मंडलका परिवेष द्विगुणित फलकी सूचना, चार मंडलका परिवेष त्रिगुणित फलकी सूचना और पाँच मंडलका परिवेष चौगुने फलकी सूचना देता है। परिवेषमें पाँच से अधिक मंडल नहीं होते हैं। साधारणतः एक मंडलका परिवेष शुभ ही माना जाता है। मंडलोंमें उनकी आकृति की स्पष्टताका भी विचार कर लेना उचित ही होगा।

वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेषका फलादेश—वर्षाका विचार प्रधान रूपसे चन्द्रमाके परिवेषसे किया जाता है और कृषि सम्बन्धी विचारके लिए सूर्य परिवेषका अवलम्बन लिया जाता है। यद्यपि दोनों ही परिवेष उभय प्रकारके फलकी सूचना देते हैं, फिर भी विशेष विचारके लिए पृथक् परिवेषको ही लेना चाहिए।

चन्द्रमाका परिवेष कपोत रंगका हो और उसमें अधिकसे अधिक दो मण्डल हों तो लगातार सात दिनों तक वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकारका परिवेष फसलकी उत्तमता की सूचना भी देता है। वर्षा ऋतुमें समय पर वर्षा होती है। आश्विन और कार्त्तिकमें भी वर्षा होनेसे धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है। यदि उक्त प्रकारके परिवेषके समय चन्द्रमाका रंग श्वेतवर्ण हो तो माघ मासमें भी वर्षा होनेकी सूचना समझ लेनी चाहिए। कदाचित् चन्द्रमाका रंग नीला या काला दिखलाई पड़े तो निश्चयसे अच्छी वर्षा होनेकी सूचना समझनी चाहिए। चन्द्रमाके नीले या काले होनेसे सुभिक्ष भी होता है। गेहूँ, धान और गुड़की फसल अच्छी उत्पन्न होती है। काले रंगके चन्द्रमाके होनेसे आश्विन मासमें वर्षाका दस दिनोंतक अवरोध रहता है, जिससे धानकी फसलमें कमी आती है। चन्द्रमा हरित वर्णका मालूम हो और परिवेष दो मंडलोंके घेरेमें हो तो वर्षा सामान्य ही होती है, पर फसल अच्छी ही उत्पन्न होती है। चन्द्रमा जिस समय रोहिणी नक्षत्रके मध्यमें स्थित हो, उसी समय विचित्र वर्णका परिवेष रात्रिके मध्य भागमें दिखलाई पड़े तो इस प्रकारके परिवेषके द्वारा देशकी उन्नतिकी सूचना समझनी चाहिए। देशमें धन-धान्यकी उत्पत्ति प्रचुर रूपमें होती है, वर्षा भी समय पर होती है तथा देशमें सर्वत्र सुभिक्ष व्याप्त रहता है। चन्द्रमाका परिवेष रक्तवर्णका दिखलाई पड़े और चन्द्रमाका रंग श्वेत या कापोत हो तथा एक ही मंडल वाला परिवेष हो तो वर्षा आषाढ़ में नहीं होती, श्रावण,

भाद्रपदमें अच्छी वर्षा और आश्विनमें वर्षाका अभाव ही रहता है। फसल भी उत्पन्न नहीं होती। यदि आषाढ़ मासमें चन्द्रमाका परिवेष सन्ध्या समय ही दिखलाई पड़े तो श्रावणमें धूप होती है, वर्षाका अभाव रहता है। आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदाको सन्ध्याकालमें चन्द्रमाका परिवेष दो मंडलोंमे दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव, एक मंडलमें रक्तवर्णका परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा, एक मंडलमें ही श्वेतवर्ण और हरित वर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई दे तो प्रचुर वर्षा, तीन मंडलमें परिवेष दिखलाई दे तो दुष्काल, वर्षाका अभाव और चार मंडलमें परिवेष दिखलाई पड़े तो फसलमें कमी और दुर्भिक्ष, वर्षा ऋतुके चारों महीनोंमे अल्पवृष्टि और अन्नकी कमी होती है। आषाढ़ कृष्ण द्वितीयाको चन्द्रोदय होते हरित और रक्तवर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई प तोड़े पूरी वर्षा होती है। तृतीयाको चन्द्रोदयके तीन घड़ी बाद यदि लाल वर्णका एक मंडलवाला परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयतः अधिक वर्षा होती है। नदी-नाले जलसे भर जाते हैं। श्रावणके महीनोंमें वर्षाकी कुछ कमी रहती है, फिर भी फसल उत्तम होती है। यदि इसी तिथिको मध्य रात्रिके उपरान्त परिवेष दो मंडलवाला दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव, कृषिमें गड़बड़ी और सभी प्रकारकी फसलोंमें रोगादि लग जाते हैं। चतुर्थी तिथिको चन्द्रोदयके साथ ही परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल उत्तम होती है और वर्षा भी समयानुकूल होती है, यदि इसी दिन चन्द्रोदयके चार-पाँच घड़ी उपरान्त परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षाका भादों मास में अभाव ही समझना चाहिए। उपर्युक्त प्रकारका परिवेष फसलके लिए भी अनिष्टकारक होता है।

आषाढ़ कृष्ण पंचमी, षष्ठी और सप्तमीको चन्द्रास्त कालमें विचित्र वर्णका परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयतः अल्पवर्षा होती है। अष्टमी तिथिको चन्द्रोदय कालमें ही परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा प्रचुर परिमाणमें तथा फसल उत्तम होती है। अष्टमीके उपरान्त कृष्ण पक्षकी अन्य तिथियोंमें अस्त या उदय कालमें चन्द्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षाकी कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी सामान्य ही होती है।

आषाढ़ शुक्ला द्वितीयाको चन्द्रोदय होते ही परिवेष घेर ले तो अगले दिन नियमतः वर्षा होती है। इस परिवेषका फल तीन दिनों तक लगातार वर्षा होना भी है। आषाढ़ शुक्ला तृतीयाको चन्द्रोदयके तीन घड़ी भीतर ही विचित्र वर्णका परिवेष चन्द्रमाको घेर ले तो नियमतः अगले पाँच दिनों तक तेज धूप पड़ती है, पश्चात् हल्की वर्षा होती है। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थीको चन्द्रोदय कालमें ही परिवेष रक्तवर्णका हो तो आषाढ़ मासमें सूखा पड़ता है और श्रावणमें वर्षा होती है। आषाढ़ी पूर्णिमाको लालवर्णका परिवेष दिखलाई पड़े तो यह सुभिक्षका सूचक है, इस वर्ष वर्षा विशेष रूपसे होती है। फसल भी अच्छी होती है। अन्नका भाव भी सस्ता रहता है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदाको मध्य रात्रिमें चन्द्रमाका परिवेष दिखलाई पड़े तो अगले आठ दिनोंमें वर्षाका अभाव समझना चाहिए। यदि यह परिवेष श्वेत वर्णका हो तो श्रावण भर वर्षा नहीं होती। कड़ाकेकी धूप पड़ती है, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी फैलती हैं। उदयकालीन चन्द्रमाको श्रावण कृष्ण द्वितीयाके दिन परिवेष वेष्टित करे तो वर्षा अच्छी होती है। किन्तु गुर्जर, द्राविड़ और महाराष्ट्रमें वर्षाका अभाव सूचित होता है। वर्षा ऋतुमें ग्रहों और नक्षत्रोंकी जिस दिशामें परिवेष हो उस दिशामें वर्षा अधिक होती है, फसल भी अच्छी होती है। श्रावण कृष्णा सप्तमीको उदय कालमें चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा सामान्यतः अल्प समझनी चाहिए। यदि प्रातःकाल चन्द्रास्तके समय ही इस दिन परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा अगले पाँच दिनोंमे खूब होती है। यदि त्रिकोण परिवेष श्रावण कृष्णा तृतीयाको दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव, दुर्भिक्ष और उपद्रव समझना चाहिए। नक्षत्रोंका परिवेष भी होता है। श्रावणमासमें नक्षत्रोंका परिवेष हो तो वर्षाका अभाव उस देशमें अवगत करना चाहिए। यदि

श्रावण मासकी किसी भी तिथिमें चन्द्र परिवेष चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक बना रहे तो श्रावण और भाद्रपद इन दोनों ही महीनोंमें वर्षाका अभाव रहता है। आश्विन मासमें किसी भी तिथिको चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त कालमें चक्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो वह फसल के लिए अच्छाईकी सूचना देता है। वर्षा कम होनेपर भी फसल अच्छी उत्पन्न होती है। ज्येष्ठ, वैशाख और चैत्र महीनेका परिवेष घोर दुर्भिक्ष की सूचना देता है। इन तीनों महीनों में चन्द्रोदयकालमें या चन्द्रास्तकालमें परिवेष दिखलाई पड़े तो फसलके लिए अत्यन्त अनिष्टकारक समझना चाहिए। उक्त महीनोंकी प्रतिपदाविद्ध पूर्णिमाको परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षाके लिए उस वर्ष हाहाकार होता रहता है। बादल आकाशमें व्याप्त रहते हैं, पर वर्षा नहीं होती। तृण और घासकी भी कमी होती है जिससे पशुओंको भी कष्ट होता है। द्वितीयाविद्ध प्रतिपदाको परिवेष हो तो साधारण वर्षा होती है। द्वितीयाविद्ध पूर्णिमामें चन्द्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो उस वर्ष निश्चयतः सूखा पड़ता है। कुँओंका पानी भी सूख जाता है। फसलका अभाव ही उस वर्ष रहता है।

सूर्य परिवेषका फल—यदि सूर्योदय कालमें ही सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारणतः वर्षा होनेकी सूचना देता है। मध्याह्नमें परिवेष सूर्यको घेरकर मंडलाकार हो जाय तो आगामी चार दिनोंमें घोर वर्षाकी सूचना देता है। इस प्रकारके परिवेषसे फसल भी अच्छी होती है। सूर्यके परिवेष द्वारा प्रधान रूपसे फसलका विचार किया जाता है। यदि किसी भी दिन सूर्योदयसे लेकर सूर्यास्त तक परिवेष बना रह जाय तो घोर दुर्भिक्षका सूचक समझना चाहिए। दिनभर परिवेषका बना रह जाना वर्षाका अवरोधन भी करता है तथा अनेक प्रकार की विपत्तियोंकी भी सूचना देता है। वर्षा ऋतुमें सूर्यका परिवेष प्रायः वर्षा सूचक समझा जाता है। वैशाख और ज्येष्ठ इन महीनोंमें यदि सूर्यका परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयतः फसल की बरबादीका सूचक होता है। उस वर्ष वर्षा भी नहीं होती और यदि वर्षा होती है तो इतनी अधिक और असामयिक होती है, जिससे फसल मारी जाती है। इन दोनों महीनोंका सूर्यका परिवेष मंगलवार, शनिवार और रविवार इन तीन दिनोंमें से किसी दिन हो तो संसार के लिए महान् भयकारक, उपद्रवसूचक और दुर्भिक्षकी सूचना समझनी चाहिए। सूर्यका परिवेष यदि आश्लेषा, विशाखा और भरणी इन नक्षत्रोंमें हो तथा सूर्य भी इन नक्षत्रोंमें से किसी एक पर स्थित हो तो इस परिवेषका फल फसलके लिए अत्यन्त अशुभसूचक होता है। अनेक प्रकारके उपाय करने पर भी फसल अच्छी नहीं हो पाती। नाना वर्णका परिवेष सूर्यमण्डलको अवरुद्ध करे अथवा अनेक टुकड़ोंमें विभक्त होकर सूर्यको आच्छादित करे तो उस वर्ष में वर्षाका अभाव एवं फसलकी बरबादी समझनी चाहिए। रक्त अथवा कृष्णवर्णका परिवेष उदय होते हुए सूर्यको आच्छादित कर ले तो फसलका अभाव और वर्षाकी कमी सूचित होती है। मध्याह्नमें सूर्यको कृष्णवर्णका परिवेष आच्छादित करे तो दालवाले अनाजोंकी उत्पत्ति अधिक तथा अन्य प्रकारके अनाज कम उत्पन्न होते हैं। मवेशीको कष्ट भी इस प्रकारके परिवेष से समझना चाहिए। यदि रक्तवर्णका परिवेष सूर्यको आच्छादित करे और सूर्यमंडल श्वेतवर्णका हो जाय तो इस प्रकारका परिवेष श्रेष्ठ फसल होनेकी सूचना देता है। आषाढ़, श्रावण और भाद्रपद मासमें होनेवाले परिवेषोंका फलादेश विशेष रूपसे घटित होता है। यदि आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदाको सन्ध्या समय सूर्यास्त कालमें परिवेष दिखलाई पड़े तो फसलका अभाव, प्रातः सूर्योदय कालमें परिवेष दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल एवं मध्याह्न समयमें परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारण फसल उत्पन्न होती है। इस तिथिको सोमवार पड़े तो पूर्णफल, मंगलवार पड़े तो प्रतिपादित फलसे कुछ अधिक फल, बुधवार हो तो अल्प फल, गुरुवार को तो पूर्णफल, शुक्रवार हो तो सामान्यफल एवं शनिवार हो तो अधिक फल ही प्राप्त होता है। यदि आषाढ़

शुक्ला द्वितीया तिथिको पीतवर्णका मंडलाकार परिवेष सूर्य के चारों ओर दिखलाई पड़े तो समयपर वर्षा, श्रेष्ठ फसलकी उत्पत्ति, मनुष्य और पशुओंको सब प्रकारसे आनन्दकी प्राप्ति होती है। इस तिथिको त्रिकोणाकार, चौकोर या अनेक कोणाकार टेढ़ा-मेढ़ा परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल मे बहुत कमी रहती है। वर्षा भी समय पर नहीं होती तथा अनेक प्रकारके रोग भी फसलमें लग जाते हैं। सूर्य मंडलको दो या तीन वलयोंमें वेष्टित करनेवाला परिवेष मध्यम फलका सूचक है। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी या पंचमीको कृष्णवर्णका परिवेष सूर्यको चार घड़ी तक वेष्टित किये रहे तो आगामी ग्यारह दिनों तक सूखा पड़ता है, तेज धूप होती है, जिससे फसल के सभी पौधे सूख जाते हैं। इस प्रकारका परिवेष केवल बारह दिनों तक अपना फल देता है, इसके पश्चात् उसका फल क्षीण हो जाता है।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी, अष्टमी और दशमीको सूर्योदय होते ही पीतवर्णका त्रिगुणाकार परिवेष वेष्टित करे तो उस वर्ष फसल अच्छी नहीं होती; वृत्ताकार आच्छादित करे तो फसल साधारणतः अच्छी; दीर्घ वृत्ताकार—अण्डाकार या ढोलकके आकार आच्छादित करे तो फसल बहुत अच्छी, चावलकी उत्पत्ति विशेष रूपमें; चौकोर रूपमें आच्छादित करे तो तिलहनकी फसल और अन्य प्रकारकी फसलोंमें गड़बड़ी एवं पंच भुजाकार आच्छादित करे तो गन्ना, घी, मधु आदि की उत्पत्ति प्रचुर परिमाणमें तथा रूईकी फसलको विशेष क्षति होती है। दशमीको सूर्यास्त कालमें कृष्ण वर्णका परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव, फसलकी क्षति और पशुओंमें रोग फैलता है। षष्ठी और अष्टमीका फल जो उदयकालका है, वही अस्तकालका भी है। विशेषता इतनी ही है कि उक्त तिथियोंमें अस्तकालीन परिवेष द्वारा प्रत्येक वस्तुकी उपज अवगत की जा सकती है। आषाढ़ शुक्ला त्रयोदशी और पूर्णिमाको दोपहरके पश्चात् सूर्यके चारों ओर परिवेष दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, धान्य और तृणकी विशेष उत्पत्ति होती है। श्रावण मासका सूर्य परिवेष फसलके लिए हानिकारक माना गया है। भौमादि कोई ग्रह और सूर्य नक्षत्र यदि एक ही परिवेषमें हों तो तीन दिनमें वर्षा होती है। यदि शनि परिवेष मंडलमें हो तो छोटे धान्यको नष्ट करता है और कृषकोंके लिए अत्यन्त अनिष्टकारी होता है, तीव्र पवन चलता है। श्रावणी पूर्णिमाको मेघाच्छन्न आकाशमें सूर्यका परिवेष दृष्टिगोचर हो तो अत्यन्त अनिष्टकारक होता है।

भाद्रपद मासमें सूर्यके परिवेष का फल केवल कृष्णपक्षकी ३।६।७।१०।११ और १३ तथा शुक्ल पक्षमें २।५।७।८।१३।१४।१५ तिथियोंमें मिलता है। कृष्णपक्षमें परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षाकी सूचनाके साथ कृषिके जघन्य फलको सूचित करता है। विशेषतः कृष्णपक्षकी एकादशीको सूर्यपरिवेष दिखलाई पड़े तो नाना प्रकारके धान्योंकी समृद्धि होती है, वर्षा समयपर होती है। अनाजका भाव भी सस्ता रहता है और जनतामें सुख शान्ति रहती है। शुक्लपक्षकी द्वितीया और पंचमी तिथिका परिवेष सूर्योदय या मध्याह्न कालमें दिखलाई पड़े तो साधारणतः फसल अच्छी और अपराह्न कालमें दिखलाई पड़े तो फसलमें कमी ही समझनी चाहिए। सप्तमी और अष्टमीको अपराह्नकालमें परिवेष दिखलाई पड़े तो वायुकी अधिकता समझनी चाहिए। वर्षाके साथ वायुका प्राबल्य रहनेसे वर्षाकी कमी रह जाती है और फसलमें भी न्यूनता रह जाती है। यदि चार कोनोंवाला परिवेष इसी महीनेमें सूर्यके चारों ओर दिखलाई पड़े तो संसारमें अपकीर्तिके साथ फसलमें भी कमी रहती है। आश्विन मासका सूर्य परिवेष केवल फसलमें ही कमी नहीं करता, बल्कि इसका प्रभाव अनेक व्यक्तियों पर भी पड़ता है। सूर्यका परिवेष यदि उदयकालमें हो और परिवेषके निकट बुध या शुक्र कोई ग्रह हो तो शुभ फसलकी सूचना समझनी चाहिए। रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका और मृगशिरके नक्षत्र परिवेषकी परिधिमें आते हों तो पूर्णतया वर्षाका अभाव, धान्यकी कमी, पशुओंको कष्ट एवं विश्वके समस्त प्राणियोंको भयका संचार होता है। कार्तिक मासका परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी

और माघ मासका परिवेष समस्त आगामी वर्षका फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमाको आकाशमें बादल छा जाने पर विचित्र वर्णका परिवेष सूर्यके चारों ओर वृत्ताकारमें दिखलाई पड़े तो पूर्णतया सुभिक्ष आगामी वर्षमें होता है। इस दिनका परिवेष प्रायः शुभ होता है।

परिवेषोंका राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश—चन्द्रमाका परिवेष मंगल, शनि और रविवारको आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा नक्षत्रमें काले वर्णका दिखलाई पड़े तो राष्ट्रके लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकारके परिवेषका फल राष्ट्रमें उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओंमें मतभेद तथा झगड़ोंके होनेसे राष्ट्रकी क्षति आदि समझना चाहिए। तीन मंडल और पाँच मंडलका परिवेष सभी प्रकारसे राष्ट्रकी क्षति करता है। यदि अनेक वर्णवाला दण्डाकार चन्द्र परिवेष मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो राष्ट्रके लिए अशुभ समझना चाहिए। इस प्रकारके परिवेषसे राष्ट्रके निवासियोंमें आपसी कलह एवं किसी विशेष प्रकारकी विपत्तिकी सूचना मिलती है। जिन देशोंमें पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकारके परिवेषसे भंग हो जाते हैं अतः परराष्ट्रका भय और आतङ्क व्याप्त हो जाता है। आर्थिक क्षति भी देशकी होती है। देशमें चोर, डाकुओंका अधिक आतंक बढ़ता है और देश की व्यापारिक स्थिति असन्तुलित हो जाती है। रात्रिमें शुक्लपक्षके दिनोंमें जब मेघाच्छन्न आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशाकी ओरसे बढ़ता हुआ चन्द्रपरिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेषका दक्षिणका कोण अधिक बड़ा और उत्तरवाला कोण अधिक छोटा भी मालूम पड़े तो इस परिवेषका फल भी राष्ट्रके लिए घातक समझना चाहिए। इस प्रकारके परिवेषसे राष्ट्रकी प्रतिष्ठामें भी कमी आती है तथा राष्ट्रकी सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हितके लिए नहीं हो पाते हैं, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते हैं, जिनसे राष्ट्रमें अशान्ति होती है। राष्ट्रके किसी अच्छे कर्णधारकी मृत्यु होती है, जिससे राष्ट्रमें महान् अशान्ति छा जाती है। प्रशासकोंमें भी मतभेद होता है, देशके प्रमुख-प्रमुख शासक अपने अपने अहंभावकी पुष्टिके लिए विरोध करते हैं, जिससे राष्ट्रमें अशान्ति होती है। मध्यरात्रिमें निरभ्र आकाशमें दक्षिण दिशाकी ओरसे विचित्र वर्णका परिवेष उत्पन्न होकर चन्द्रमाको वेष्टित करे तथा इस मंडलमें चन्द्रमाका उस दिनका नक्षत्र भी वेष्टित हो तो इस प्रकारका परिवेष राष्ट्र उत्थानका सूचक होता है। कलाकारोंके लिए यह परिवेष उन्नतिसूचक है। देशमें कल-कारखानोंकी उन्नति होती है। नदियों पर पुल बाँधनेका कार्य विशेष रूपसे होता है। धन-धान्यकी उत्पत्ति विपुल परिमाणमें होती है और राष्ट्रमें चारों ओर समृद्धि और शान्ति व्याप्त हो जाती है।

सूर्य परिवेष द्वारा भी राष्ट्रके भविष्यका विचार किया जाता है। चैत्र और वैशाखमें बिना बादलोंके आकाशमें सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और यह कमसे कम डेढ़ घण्टेतक बना रहे तो राष्ट्रके लिए अत्यन्त अशुभकी सूचना देता है। इस परिवेषका फल तीन वर्षोंतक राष्ट्रको प्राप्त होता है। वर्षाका अभाव होनेसे तथा राष्ट्रके किसी हिस्सेमें अतिवृष्टिसे बाढ़, महामारी आदिका प्रकोप होता है। इस प्रकारका परिवेष राष्ट्रमें महान् उपद्रवका सूचक है। ऐसा परिवेष तभी दिखलाई पड़ेगा, जब देशके ऊपर महान् विपत्ति आयेगी। सिकन्दरके आक्रमणके समय भारतमें इस प्रकारका परिवेष देखा गया था। सूर्यके अस्तकालमें, जब नैर्ऋत्य दिशासे वायु बह रहा हो, इसी दिशासे वायुके साथ बढ़ता हुआ परिवेष सूर्यको आच्छादित कर ले तो राष्ट्रके लिए अत्यन्त शुभकारक होता है। देशमें धन-धान्यकी वृद्धि होती है। सभी निवासियोंको सुख-शान्ति मिलती है। अच्छे व्यक्तियोंका जन्म होता है। परराष्ट्रोंसे सन्धियाँ होती हैं तथा राष्ट्रकी आर्थिक स्थिति दृढ़ होती है। देशमें कला-कौशलका प्रचार होता है, नैतिकता, ईमानदारी और सचाईकी वृद्धि होती है।

परिवेषोंका व्यापारिक फलादेश—रविवारको चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो रूई, गुड़, कपास और चाँदीका भाव महँगा, तिल, तिलहन, घी और तैलका भाव सस्ता होता है। सोनेके भावमें अधिक घटा-बढ़ी रहती है तथा अनाजका भाव सम दिखलाई पड़ता है। फल और तरकारियोंके भाव ऊँचे रहते हैं। रविवारके चन्द्रपरिवेषका फल अगले दिनसे ही आरम्भ हो जाता है और दो महीनों तक प्राप्त होता है। जूट, मशाले एवं रत्नोंकी कीमत घटती है तथा इन वस्तुओंके मूल्योंमें निरन्तर घटा-बढ़ी होती रहती है। उक्त दिनको सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक वस्तुकी मंहगाई होती है तथा विशेष रूपसे तृण, पशु, सोना, चाँदी और मशीनों के कल पुर्जोंके मूल्यमें वृद्धि होती है। व्यापारियोंके लिए रविवारका सूर्य और चन्द्र-परिवेष विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। इस परिवेष द्वारा सभी प्रकारके छोटे-बड़े व्यापारी लाभान्वित होते हैं। ऊन एवं ऊनी वस्त्रोंके व्यापारमें विशेष लाभ होता है। इनका मूल्य स्थिर नहीं रहता, उत्तरोत्तर मूल्यमें वृद्धि होती जाती है। सोमवारको सुन्दर आकार वाला चन्द्र-परिवेष निरभ्र आकाशमें दिखलाई पड़े तो प्रत्येक प्रकारकी वस्तु सस्ती होती है। विशेष रूपसे घृत, दुग्ध, तैल, तिलहन और अन्नका मूल्य सस्ता हो जाता है। व्यापारिक दृष्टिसे इस प्रकारका परिवेष घाटे की ही सूचना देता है, सट्टेबाजोंको यह परिवेष विशेष हानिसूचक है। जो लोग चाँदी, सोना, रूई, सूत, कपास, जूट आदिका सट्टा करते हैं, उन्हें विशेष रूपसे घाटा लगता है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो गेहूँ, गुड़, लाल वस्त्र, लाख, लाल रंग तथा लाल रंग की सभी वस्तुएँ मंहगी होती हैं और इस प्रकारके परिवेषसे उक्त प्रकारकी वस्तुओंके खरीददारों-को दुगुना लाभ होता है। यह परिवेष व्यापारिक जगत्के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, सीमेन्ट, चूना, रंग, पत्थर आदिके व्यापारमें भी विशेष लाभकी संभावना रहती है। सोमवारको सूर्य परिवेष देखनेवाले व्यापारियोंको सभी प्रकारकी वस्तुओंमें लाभ होता है। ईंट, कोयला और अल्प प्रकारके इमारती सामानके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। मंगलवारको चन्द्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो लाल रंगकी वस्तुओंका मूल्य गिरता है और श्वेत रंगके पदार्थोंका मूल्य बढ़ता है। धातुओंके मूल्यमें प्रायः समता रहती है। सुवर्णके मूल्यमें परिवेषके एक महीने तक वृद्धि पश्चात कमी होती है। चाँदीका मूल्य आरम्भमें गिरता है पश्चात् ऊँचा हो जाता है। श्वेत रंग का कपड़ा, सूत, कपास, रूई आदिका मूल्य तीन महीनों तक सस्ता होता रहता है। जवाहरातका मूल्य भी गिरता है। मंगलवारका चन्द्र-परिवेष तीन महीनों तक व्यापारिक स्थितिके क्षेत्रमें सस्ते भावों की सूचना ही देता है। यदि मंगलवारको ही सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक वस्तुका मूल्य सवाया बढ़ जाता है, यह स्थिति आरम्भसे एक महीने तक रहती है पश्चात् सोना, चाँदी, जवाहरात, रूई, चीनी, गुड़ आदि वस्तुओंके मूल्यमें गिरावट आ जाती है और बाजारकी स्थिति बिगड़ने लगती है। मशाला, फल एवं मेवोंके मूल्यमें भी गिरावट आ जाती है। दो महीनेके पश्चात् कपड़ा तथा श्वेत रंगकी अन्य वस्तुओंकी स्थिति सुधर जाती है। अनाजका भाव कुछ सस्ता होता है, पर कालान्तरमें उसमें भी मंहगाई आ जाती है। यदि मंगलवारको पुष्य नक्षत्र हो और उस दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़ा हो तथा वह कमसे कम दो घण्टेतक बना रहा हो तो सभी प्रकारकी वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होती है। व्यापारियोंके लिए यह परिवेष कई गुने लाभकी सूचना देती है। प्रत्येक वस्तुके व्यापारमें लाभ होता है। लगभग चार महीने तक इस प्रकारकी व्यापारिक स्थिति अवस्थित रहती है। उक्त प्रकारके परिवेषसे सट्टेके व्यापारियोंको अपने लिए घाटेकी ही सूचना समझनी चाहिए।

बुधवारको चन्द्र-परिवेष स्वच्छ रूपमें दिखलाई पड़े और इस परिवेषकी स्थिति कमसे कम आध घण्टे तक रहे तो मशाला, तैल, घी, तिलहन, अनाज, सोना, चाँदी, रूई, जूट, वस्त्र, मेवा, फल, गुड़ आदिका मूल्य गिरता है और यह मूल्यकी गिरावट कमसे कम तीन महीनों

तक बनी रहती है। केवल रेशमी वस्त्रका मूल्य बढ़ता है और इसके व्यापारियोंको अच्छा लाभ होता है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और यह एक घण्टे तक स्थित रहे तो सभी प्रकारकी वस्तुओंके मूल्यकी स्थिरताका सूचक समझना चाहिए। बुधवारको सूर्य-परिवेष सूर्योदय कालमें ही दिखलाई पड़े तो श्वेत, लाल और काले रङ्गकी वस्तुओंके भाव बढ़ते हैं। यदि परिवेष कालमें आकाशका रंग गायकी ऑखके समान हो जाय तो इस परिवेषका फल लाल रंगकी वस्तुओंके व्यापारमें लाभ एवं अन्य रंगकी वस्तुओंके व्यापारमें हानिकी सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकारकी व्यापारिक स्थिति एक महीने तक ही रहती है। गुरुवारको चन्द्र-परिवेष चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्तकालमें दिखलाई पड़े तो इसका फल महर्घता होता है। रसादि पदार्थोंमें विशेषरूपसे महँगी आती है। औषधियोंके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थोंका मूल्य अनुपाततः ही बढ़ता है। गुरुवारको सूर्य-परिवेष मंडलाकारमें दिखलाई पड़े तो लाल, पीले और हरे रंगकी वस्तुएँ सस्ती होती हैं, अनाजका मूल्य भी घटता है। वस्त्र, चीनी, गुड़ आदि उपभोगकी वस्तुओंमें भी सामान्यतः कमी आती है। सट्टेवाजोंके लिए यह परिवेष अनिष्टसूचक है; यतः उन्हें हानि ही होती है, लाभ होनेकी संभावना बिल्कुल नहीं। यदि उक्त प्रकारका सूर्य-परिवेष दो घण्टेसे अधिक समय तक ठहर जाय तो पशुओंके व्यापारियोंको विशेष लाभ होता है। श्वेत रंगके सभी पदार्थ महँगे होते हैं और उपभोगकी वस्तुओंका मूल्य बढ़ता है। बाजारमें यह स्थिति चार महीनों तक रह सकती है। शुक्रवारको चन्द्र-परिवेष लाल या पीले रंगका दिखलाई पड़े तो दूसरे दिनसे ही सोना, पीतल आदि पीतवर्णकी धातुओंकी कीमत बढ़ जाती है। चाँदीके भावमें थोड़ी गिरावटके पश्चात् बढ़ती होती है। मशाला, फल और तरकारियोंके मूल्यमें वृद्धि होती है। हरे रंगकी सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पर तीन महीनोंके पश्चात् हरे रंगकी वस्तुओंके भावमें भी महँगी आ जाती है। रूई, कपास और सूतके व्यापारमें सामान्य लाभ होता है। काले रंगकी वस्तुओंमें अधिक लाभकी संभावना है। यदि शुक्रवारको सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो आरम्भमें वस्तुओंके भाव तटस्थ रहते हैं, परन्तु औषधियां, विदेशसे आनेवाली वस्तुएँ और पशुओंकी कीमतमें वृद्धि हो जाती है। श्वेत रंगकी वस्तुओंका मूल्य सम रहता है, लाल और नीले रंगके पदार्थोंका मूल्य बढ़ जाता है। शनिवारको चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो काले रंगके सभी पदार्थ तीन महीनों तक सस्ते रहते हैं। लाल और श्वेत रंगके पदार्थ तीन महीनों तक महँगे रहते हैं। जवाहरात विशेषरूपसे महँगे होते हैं। सोना, चाँदी आदि खनिज पदार्थोंके मूल्यमें असाधारणरूपसे वृद्धि होती है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो सभी प्रकारकी वस्तुओंके मूल्यमें वृद्धि होती है। विशेषरूपसे जूट, सीमेन्ट, कागज एवं विदेशसे आनेवाली वस्तुएँ अधिक महँगी होती हैं। चीनी, गुड़, शहद आदि मिष्ट पदार्थोंके मूल्य गिरते हैं। यदि उक्त प्रकारका सूर्यपरिवेष दिन भर रह जाय तो इसका फल व्यापारके लिए अत्यन्त लाभप्रद है। वस्तुओंके मूल्य चौगुने बढ़ जाते हैं और व्यापारियोंको अपरिमित लाभ होता है। बाजारमें यह स्थिति अधिकसे अधिक पाँच महीनों तक रह सकती है। आरम्भके तीन माह विशेष महँगाईके और अवशेष दो महीने साधारण महँगाईके होते हैं।

रक्तारक्तेषु चाभ्रेषु हरिताहरितेषु च ।
नीलानीलेषु वा स्निग्धा वर्षन्तेऽनिष्टयोनिषु ॥१४॥

रक्त-अरक्त, हरित-अहरित और नील-अनील बादलोंमें यदि स्निग्धा बिजली चमकती है, तो उक्त प्रकारके बादलोंके अनिष्टसूचक होने पर भी जल की वर्षा अवश्य होती है ॥१४॥

अथ नीलाश्च पीताश्च रक्ताः श्वेताश्च विद्युतः ।
एतां श्वेतां पतत्यूर्ध्वं विद्युदुदकसंप्लवम् ॥१५॥

अब बिजलीके वर्णोंका निरूपण करते हैं—नील, पीत, रक्त और श्वेतवर्णकी बिजलियोंमेंसे श्वेत रंगकी बिजली ऊपर गिरे तो पृथ्वीपर जल ही जल बरसता है—पृथ्वी जलसे प्लावित हो जाती है ॥१५॥

वैश्वानरपथे विद्युत् श्वेता रूक्षा चरेद् यतः ।
विन्द्यात् तदाऽशनिवर्षं रक्तायामग्नितो भयम् ॥१६॥

वैश्वानर पथ—अग्निकोणमें उत्पन्न हुई श्वेता और रूक्षा नामकी बिजलियाँ विद्युत् कही जाती हैं। ये अशनि वृष्टि करती हैं। रक्तवर्णकी बिजली अग्निका भय करती है ॥१६॥

यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य विद्युच्छिरसि संचरेत् ।
अथ वा गृहयोर्मध्ये वातवर्षं सृजेन्महत् ॥१७॥

यदि श्वेत रंगकी बिजली वृक्षके ऊपर गिरे अथवा दो गृहोंके मध्यसे होकर गिरे तो बहुत वायु सहित जलकी वर्षा होती है ॥१७॥

अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य विद्युन्मंडलसंस्थिता ।
श्वेताऽभ्रा प्रविशेदर्कं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥१८॥

यदि चन्द्रमण्डलसे निकलकर श्वेत मेघ युक्त बिजली सूर्यमण्डलमें प्रवेश करे तो उसे अधिक वर्षासूचिका समझनी चाहिए ॥१८॥

अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य रक्ता समलिना[1] भवेत्[2] ।
प्रविश्य सोमं वा तस्य[3] तत्र[4] वृष्टिर्भयङ्करा ॥१९॥

यदि सूर्यमण्डलसे निकलकर रक्त वर्णकी मलिन विद्युत् चन्द्रमण्डलमें प्रवेश करे तो वहाँ पर भयंकर वायु चलती है ॥१९॥

विद्युतं[5] तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा ।
अन्योन्यं [6]वा लिंगपातां वर्षं विन्द्यात् तदाऽशुभम् ॥२०॥

बिजली बिजलीसे ही ताड़ित होकर एक दूसरेमें प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए—वर्षा यथोचित रूपमें होती है ॥२०॥

राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः[7] ।
सूर्यात् विद्युत् यदा भाति तदा सस्यं न रोहति ॥२१॥

राहु द्वारा चन्द्रमा और केतु द्वारा सूर्य अपसव्य मार्गसे ग्रहण किया गया हो और ये बादलोंसे आच्छादित हों और उस समय उनसे बिजली निकले तो धान्य नहीं उगते ॥२१॥

१. सदा मु० C । २. समलिना आ० । ३ भवेत् मु० C. । ४. सानु मु० C. । ५ विद्युद्दिग्वत्ता भुवा आ० । ६. वा मु० A. । ७ सर्वतो, मु० A, सेवनः मु० B. ।

नीला ताम्रा च गौरा[1] च श्वेता [2]चाऽभ्रान्तरं चरेत् ।
सघोषा मन्दघोषा वा विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥२२॥

नील, ताम्र, गौर और श्वेत बादलोंसे बिजलीका संचार हो और वह भारी गर्जना अथवा थोड़ी गर्जना युक्त हो तो अच्छी वर्षा होती है ॥२२॥

मध्यमे मध्यमं वर्षं अधमे अधमं दिशेत् ।
उत्तमं चोत्तमे मार्गे चरन्तीनां च विद्युताम् ॥२३॥

आकाशके मध्य मार्गसे गमन करनेवाली बिजली मध्यम वर्षा, जघन्यमार्गसे गमन करनेवाली जघन्य वर्षा और उत्तम मार्गसे गमन करनेवाली उत्तम वर्षाकी सूचिका है ॥२३॥

वीथ्यन्तरेषु या विद्युच्चरतामफलं[3] विदुः ।
अभीक्ष्णं दर्शयेच्चापि तत्र दूरगतं फलम् ॥२४॥

यदि बिजली वीथी—चन्द्रादिके मार्गके अन्तरालमें सञ्चार करे तो उसका कोई फल नहीं होता। यदि बार-बार दिखलाई पड़े तो उसका फल कुछ दूर जाकर होता है ॥२४॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं विद्युतामपि तत्त्वतः ।
अथाभ्राणां [4]प्रवक्ष्यामि [5]लक्षणं तन्निबोधत ॥२५॥

बिजलियोंके निमित्तोंको उल्काके निमित्तोंके समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे बादलोंके लक्षण और फलको बतलाते हैं ॥२५॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे विद्युल्लक्षणं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।

विवेचन—बिजलीके निमित्तों द्वारा प्रधानतः वर्षाका विचार किया जाता है। रात्रिमें चमकनेसे वर्षाके सम्बन्धमें शुभाशुभ अवगत करनेके साथ फसलका भविष्य भी ज्ञात किया जा सकता है। जब आकाशमें घने बादल छाये हुए हों, उस समय पूर्व दिशामें बिजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयतः वर्षा होती है। यह फल बिजली कड़कनेके दूसरे दिन ही प्राप्त होता है। विशेषता यहाँ यह भी है कि यह फलादेश उसी स्थान पर प्राप्त होता है, जिस स्थान पर बिजली चमकती है। इस बातका सदा ध्यान रखना होता है कि बिजली चमकनेका फल तत्काल और तद्देशमें प्राप्त होता है। अत्यन्त इष्ट या अनिष्टसूचक यह निमित्त नहीं है और न इस निमित्त द्वारा वर्ष भरका फलादेश ही निकाला जा सकता है। सामान्यरूपसे दो-चार दिन या अधिकसे अधिक दस-पन्द्रह दिनोंका फलादेश निकालना ही इस निमित्तका उद्देश्य है। जब पूर्वदिशामें रक्तवर्णकी बिजली जोर-जोरसे कड़क कर चमके तो वायु चलती है तथा अल्प वर्षा होती है। मन्द-मन्द चमकके साथ जोर-जोरसे कड़कनेका शब्द सुनाई दे तथा एकाएक आकाशसे बादल हट जावे तो अच्छी वर्षा होती है और साथ ही ओले भी बरसते हैं। पूर्व दिशामें केशरिया रंगकी बिजली तेज प्रकाशके साथ चमके तो अगले दिन तेज धूप पड़ती है, पश्चात् मध्याह्नोत्तर जलकी वर्षा होती है। जल भी इतना अधिक बरसता है, जिससे पृथ्वी जलमयी दिखलाई पड़ती है। यदि पश्चिम दिशामें साधारण रूपसे मध्य रात्रिमें बिजली चमके तो तेज धूप पड़ती है। स्निग्ध विद्युत् पश्चिम दिशामें कड़ाकेके शब्दके साथ चमके

१. गौरी मु० । २ वा, मु० । ३. चामफलं, मु० A, त्वां फल मु० B. । मफलं मु० C. । ४. संप्रवक्ष्यामि, मु० C. । ५. लक्षणानि मु० C. ।

पञ्चमोऽध्यायः

अथातः संप्रवक्ष्यामि विद्युतां नामविस्तरम् ।
प्रशस्ता वाऽप्रशस्ता च यथावदनुपूर्वतः[1] ॥१॥

अब पूर्वाचार्यानुसार विद्युत्—बिजलीका विस्तारसे निरूपण करते हैं। विद्युत्-बिजली दो प्रकारकी होती है—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥१॥

सौदामिनी च पूर्वा च कुसुमोत्पलनिभा[2] शुभा ।
निरभ्रा मिश्रकेशी च क्षिप्रगा चाशनिस्तथा ॥२॥
एतासां नामभिर्वर्षं ज्ञेयं [3]कर्मनिरुक्तिता ।
भूयो व्यासेन वक्ष्यामि प्राणिनां पुण्यपापजाम्[4] ॥३॥

सौदामिनी और पूर्वा बिजली यदि कमलके पुष्पके समान हो तो वह शुभ-अशुभ फल देनेवाली होती है। वह बिजली निरभ्रा—बादलोंसे रहित, देवाङ्गनाके समान मिश्रकेशी, शीघ्र गमन करनेवाली और वज्रके समान हो तो अशनि नामसे कही जाती है। वर्षाका कारण है, अतः यह वर्ष भी कही जाती है। इस बिजलीके नाम इसकी क्रिया निरुक्तिसे अवगत कर लेना चाहिए। अब पुनः बिजलीका विस्तारपूर्वक फल, लक्षण आदिका वर्णन किया जाता है, जो जीवोंके पुण्य-पापके निमित्तसे होते हैं ॥२-३॥

स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु विद्युत् प्राच्या जलावहा ।
कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था [5]वातवर्षावहा भवेत् ॥४॥

स्निग्ध बादलसे उत्पन्न बिजली स्निग्धा कही जाती है। यदि यह पूर्व दिशाकी हो तो अवश्य वर्षा करती है। यदि काले बादलसे उत्पन्न हो तो कृष्णा कही जाती है और यह वायुकी वर्षा करती है—पवन चलता है। यहाँ पर 'कृष्ण' शब्द अग्निवाचक है, अतः अग्निकोणके मार्गमें स्थित विद्युत् कृष्णा नामसे कही जाती है। इसका फल तीव्र पवनका चलना है ॥४॥

अथ रश्मिगतो[6]ऽस्निग्धा हरिता हरितप्रभा ।
दक्षिणा दक्षिणावर्ता कुर्यादुदकसंभवम्[7] ॥५॥

जिस बिजलीमें रश्मियाँ नहीं हैं, वह अस्निग्धा कही जाती है और हरित प्रभावाली बिजली हरिता कही जाती है, दक्षिणमें गमन करनेवाली दक्षिणा कहलाती है। इस प्रकारकी विद्युत् जल बरसनेकी सूचना देती है ॥५॥

रश्मिवती[8] मेदिनी[9] भाति विद्युदपरदक्षिणे ।
हरिता [10]भाति रोमाञ्चं सोदकं पातयेद् बहुम् ॥६॥

पृथ्वी पर प्रकाश करनेवाली विद्युत् रश्मिवती, नैर्ऋत्यकोणमें गमन करनेवाली हरिता और बहुत रोमवाली बिजली बहुत जलकी वृष्टि करनेवाली होती है ॥६॥

१. अनुपूर्वशः मु० । २. कुम्भहंसोपमा, मु० । ३. कर्मभिरभिहितः मु० । ४. पुण्यशालिनाम् मु० । ५. वातवर्षावहा मु० D. । ६. गता मु० । ७. सप्तमम् मु० । ८. गता, मु० । ९. मोदिनी मु० । १०. हरितो वा प्रभामेन मु० C. ।

अपरेण[1] तु या विद्युच्चरते चोत्तरामुखी ।
कृष्णाभ्रसंश्रिता[2] स्निग्धा साऽपि कुर्याज्जलागमम्[3] ॥७॥

पश्चिम दिशामें प्रकट होनेवाली, उत्तर मुख करके गमन करनेवाली, कृष्ण रंगके बादलोंसे निकलनेवाली और स्निग्धा ये चारों प्रकारकी बिजलियाँ जलके आनेकी सूचना देती हैं ॥७॥

अपरोत्तरा तु या विद्युन्मन्दतोया हि सा स्मृता ।
उदीच्यां सर्ववर्णस्था[4] रूक्षा[5] तु सा तु वर्षति ॥८॥

वायव्यकोणकी बिजली थोड़ी वर्षा करनेवाली और उत्तर दिशाकी बिजली चाहे किसी भी वर्णकी क्यों न हो; अथवा रूक्ष भी हो तो भी जलवृष्टि करनेवाली होती है ॥८॥

या तु पूर्वोत्तरा विद्युत् दक्षिणा[6] च पलायते ।
चरत्यूर्ध्वं च तिर्यक्स्था[7] साऽपि श्वेता जलावहा ॥९॥

ईशानकोणकी बिजली तिरछी होकर पूर्वमें गमन करे और दक्षिणमें जाकर विलीन हो जाय तथा श्वेत रंगकी हो तो वह जलकी वृष्टि करनेवाली होती है ॥९॥

तथैवोर्ध्वमधो[8] याऽपि स्निग्धा रश्मिमती भृशम् ।
सघोषा चाप्यघोषा वा[9] दिक्षु सर्वासु वर्षति ॥१०॥

इसी प्रकार ऊपर-नीचे जानेवाली, स्निग्धा और बहुत रश्मिवाली शब्द करती हुई अथवा शब्द न भी करनेवाली बिजली सर्वत्र वर्षा करनेवाली होती है ॥१०॥

शिशिरे चापि वर्षन्ति रक्ताः पीताश्च विद्युतः ।
नीलाः श्वेता वसन्तेषु न वर्षन्ति कथञ्चन ॥११॥

यदि शिशिर—माघ, फाल्गुनमें नीले और पीले रंगकी बिजली हो तो वर्षा होती है तथा वसन्त—चैत्र, वैशाखमें नील और श्वेत रंगकी बिजली हो तो कदापि वर्षा नहीं होती ॥११॥

हरिता मधुवर्णाश्च ग्रीष्मे रूक्षाश्च निश्चलाः ।
भवन्ति ताम्रगौराश्च वर्षास्वपि निरोधकाः ॥१२॥

हरे और मधु रंगकी रूक्ष और स्थिर बिजली ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ, आषाढ़में चमके तो वर्षा नहीं होती तथा इसी प्रकार वर्षा ऋतु—श्रावण, भाद्रपदमें ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो वर्षाका अवरोध होता है ॥१२॥

शारद्यो नाभिवर्षन्ति नीला वर्षाश्च विद्युतः ।
हेमन्ते श्यामताम्रास्तु तडितो निर्जलाः स्मृताः ॥१३॥

शरद् ऋतु—आश्विन, कार्त्तिकमें नील वर्णकी बिजली चमके तो वर्षा नहीं होती और हेमन्त—मार्गशीर्ष, पौषमें यदि श्याम और ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो जलकी वर्षा नहीं होती ॥१३॥

१. अरुणोदये मु० A. C. । २. संश्रिता मु० । ३. जलागमः आ० । ४. श्यामवर्णस्था मु० । ५. सक्षाम् मु० । ६. दक्षिणं मु० । ७. तिर्यग् मा, मु० । ८. वार्धमधाऽप्यापि मु० A. । ९. वा मु०ऽऽहेमन्ते ताम्रवर्णास्तु तडितो निर्जला स्मृताः मु० C. ।

रक्तारक्तेषु चाभ्रेषु हरिताहरितेषु च ।
नीलानीलेषु वा स्निग्धा वर्षन्तेऽनिष्टयोनिषु ॥१४॥

रक्त-अरक्त, हरित-अहरित और नील-अनील बादलोंमें यदि स्निग्धा बिजली चमकती है, तो उक्त प्रकारके बादलोंके अनिष्टसूचक होने पर भी जल की वर्षा अवश्य होती है ॥१४॥

अथ नीलाश्च पीताश्च रक्ताः श्वेताश्च विद्युतः ।
एतां श्वेतां पतत्यूर्ध्वं विद्युदुदकसंप्लवम् ॥१५॥

अब बिजलीके वर्णोंका निरूपण करते हैं—नील, पीत, रक्त और श्वेतवर्णकी बिजलियोंमेंसे श्वेत रंगकी बिजली ऊपर गिरे तो पृथ्वीपर जल ही जल बरसता है—पृथ्वी जलसे प्लावित हो जाती है ॥१५॥

वैश्वानरपथे विद्युत् श्वेता रूक्षा चरेद् यतः ।
विन्द्यात् तदाऽशनिवर्षं रक्तायामग्नितो भयम् ॥१६॥

वैश्वानर पथ—अग्निकोणमें उत्पन्न हुई श्वेता और रूक्षा नामकी बिजलियाँ विद्युत् कही जाती हैं। ये अशनि वृष्टि करती हैं। रक्तवर्णकी बिजली अग्निका भय करती हैं ॥१६॥

यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य विद्युच्छिरसि संचरेत् ।
अथ वा गृहयोर्मध्ये वातवर्षं सृजेन्महत् ॥१७॥

यदि श्वेत रंगकी बिजली वृक्षके ऊपर गिरे अथवा दो गृहोंके मध्यसे होकर गिरे तो बहुत वायु सहित जलकी वर्षा होती है ॥१७॥

अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य विद्युन्मंडलसंस्थिता ।
श्वेताऽऽभा प्रविशेदर्कं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥१८॥

यदि चन्द्रमण्डलसे निकलकर श्वेत मेघ युक्त बिजली सूर्यमण्डलमें प्रवेश करे तो उसे अधिक वर्षासूचिका समझनी चाहिए ॥१८॥

[1]अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य रक्ता समलिना[2] भवेत् ।
प्रविश्य सोमं वा तस्य[3] तत्र[4] वृष्टिर्भयङ्करा ॥१९॥

यदि सूर्यमण्डलसे निकलकर रक्त वर्णकी मलिन विद्युत् चन्द्रमण्डलमें प्रवेश करे तो वहाँ पर भयंकर वायु चलती है ॥१९॥

विद्युतं[5] तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा ।
अन्योऽन्यं [6]वा लिखेयातां वर्षं विन्द्यात् तदाऽशुभम् ॥२०॥

बिजली बिजलीसे ही ताडित होकर एक दूसरेमें प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए—वर्षा यथोचित रूपमें होती है ॥२०॥

राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः[7] ।
कुर्यात् विद्युत् यदा साभ्रा तदा सस्यं न रोहति ॥२१॥

राहु द्वारा चन्द्रमा और केतु द्वारा सूर्य अपसव्य मार्गसे ग्रहण किया गया हो और ये बादलमें आच्छादित हों और उस समय उनमें बिजली निकले तो धान्य नहीं उगते ॥२१॥

१. यदा मु० C. । २. समलिना आ० । ३. सरवेत् मु० C. । ४. मा तु मु० C. । ५. विद्युद्विद्युदा भूषा आ० । ६. वा मु० A. । ७. मध्यते, मु० A. मेघ्यतः मु० B. ।

नीला ताम्रा च गौरा[1] च श्वेता [2]चाऽभ्रान्तरं चरेत् ।
सघोषा मन्दघोषा वा विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥२२॥

नील, ताम्र, गौर और श्वेत बादलोंसे बिजलीका संचार हो और वह भारी गर्जना अथवा थोड़ी गर्जना युक्त हो तो अच्छी वर्षा होती है ॥२२॥

मध्यमे मध्यमं वर्षं अधमे अधमं दिशेत् ।
उत्तमं चोत्तमे मार्गे चरन्तीनां च विद्युताम् ॥२३॥

आकाशके मध्य मार्गसे गमन करनेवाली बिजली मध्यम वर्षा, जघन्यमार्गसे गमन करनेवाली जघन्य वर्षा और उत्तम मार्गसे गमन करनेवाली उत्तम वर्षाकी सूचिका है ॥२३॥

वीथ्यन्तरेषु या विद्युच्चरतामफलं[3] विदुः ।
अभीक्ष्णं दर्शयेच्चापि तत्र दूरगतं फलम् ॥२४॥

यदि बिजली वीथी—चन्द्रादिके मार्गके अन्तरालमें सञ्चार करे तो उसका कोई फल नहीं होता। यदि बार-बार दिखलाई पड़े तो उसका फल कुछ दूर जाकर होता है ॥२४॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं विद्युतामपि तत्त्वतः ।
अथाभ्राणां [4]प्रवक्ष्यामि [5]लक्षणं तन्निबोधत ॥२५॥

बिजलियोंके निमित्तोंको उल्काके निमित्तोंके समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे बादलोंके लक्षण और फलको बतलाते हैं ॥२५॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे विद्युल्लक्षणं नाम पञ्चमोऽध्यायः ।

विवेचन—बिजलीके निमित्तों द्वारा प्रधानतः वर्षाका विचार किया जाता है। रात्रिमें चमकनेसे वर्षाके सम्बन्धमें शुभाशुभ अवगत करनेके साथ फसलका भविष्य भी ज्ञात किया जा सकता है। जब आकाशमें घने बादल छाये हुए हों, उस समय पूर्व दिशामें बिजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयतः वर्षा होती है। यह फल बिजली कड़कनेके दूसरे दिन ही प्राप्त होता है। विशेषता यहाँ यह भी है कि यह फलादेश उसी स्थान पर प्राप्त होता है, जिस स्थान पर बिजली चमकती है। इस बातका सदा ध्यान रखना होता है कि बिजली चमकनेका फल तत्काल और तद्देशमें प्राप्त होता है। अत्यन्त इष्ट या अनिष्टसूचक यह निमित्त नहीं है और न इस निमित्त द्वारा वर्ष भरका फलादेश ही निकाला जा सकता है। सामान्यरूपसे दो-चार दिन या अधिकसे अधिक दस पन्द्रह दिनोंका फलादेश निकालना ही इस निमित्तका उद्देश्य है। जब पूर्वदिशामें रक्तवर्णकी बिजली जोर-जोरसे कड़क कर चमके तो वायु चलती है तथा अल्प वर्षा होती है। मन्द-मन्द चमकके साथ जोर-जोरसे कड़कनेका शब्द सुनाई दे तथा एकाएक आकाशसे बादल हट जावें तो अच्छी वर्षा होती है और साथ ही ओले भी बरसते हैं। पूर्व दिशामें केशरिया रंगकी बिजली तेज प्रकाशके साथ चमके तो अगले दिन तेज धूप पड़ती है, पश्चात् मध्याह्नोत्तर जलकी वर्षा होती है। जल भी इतना अधिक बरसता है, जिससे पृथ्वी जलमयी दिखलाई पड़ती है। यदि पश्चिम दिशामें साधारण रूपमें मध्य रात्रिमें बिजली चमके तो तेज धूप पड़ती है। स्निग्ध विद्युत् पश्चिम दिशामें कड़ाकेके शब्दके साथ चमके

१. गौरो मु० । २ वा, मु० । ३. चामफलं, मु० A, च्चां फलं मु० B. । मफलं मु० C. । ४. संप्रवक्ष्यामि, मु० C. । ५. लक्षणानि मु० C. ।

वसन्त ऋतु—चैत्र और वैशाखमें बिजलीका चमकना प्राय: निरर्थक होता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदाको आकाशमें मेघ व्याप्त हों और बूँदा-बूँदीके साथ बिजली चमके तो आगामी वर्षके लिए अत्यन्त अशुभ होता है। फसल तो नष्ट होती ही है, साथ ही मोती, माणिक्य आदि जवाहरात भी नष्ट होते हैं। दिनमें इस दिन मेघ छा जायें और वर्षाके साथ बिजली चमके तो अत्यन्त अशुभ होता है। आगामी वर्षके लिए यह निमित्त विशेष अशुभकी सूचना देता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तृतीया विद्ध हो तथा इस दिन भरणी नक्षत्र हो तो इस दिन चमकनेवाली बिजली आगामी वर्षमें मनुष्य और पशुओंके लिए नाना प्रकारके अरिष्टोंकी सूचना देती है। पशुओंमें आगामी आश्विन, कार्तिक, माघ और चैत्रमें भयानक रोग फैलता है तथा मनुष्योंमें भी इन्हीं महीनोंमें बीमारियाँ फैलती हैं। भूकम्प होनेकी सूचना भी उक्त प्रकारकी बिजलीसे ही अवगत करनी चाहिए। चैत्री पूर्णिमाको अचानक आकाशमें बादल छा जायें और पूर्व-पश्चिम बिजली कड़के तो आगामी वर्ष उत्तम रहता है और वर्षा भी अच्छी होती है। फसलके लिए यह निमित्त बहुत अच्छा है। इस प्रकारके निमित्तसे सभी वस्तुओंकी सस्ताई प्रकट होती है। वैशाखी पूर्णिमाको दिनमें तेज धूप हो और रातमें बिजली चमके तो आगामी वर्षमें वर्षा अच्छी होती है।

ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ और आषाढ़में साधारणत: बिजली चमके तो वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ मासमें बिजली चमकनेका फल केवल तीन दिन घटित होता है, अवशेष दिनोंमें कुछ भी फल नहीं मिलता। ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या और पूर्णिमा इन तीन दिनोंमें बिजली चमकनेका विशेष फल प्राप्त होता है। यदि प्रतिपदाको मध्यरात्रिके उपरान्त निरभ्र आकाशमें दक्षिण-उत्तरकी ओर गमन करती हुई बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षके लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सन्ध्याकालके दो घण्टे बाद तड़-तड़ करती हुई बिजली इसी दिन दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और शब्दरहित बिजली दिखलाई पड़े तो समयानुकूल वर्षा होती है। अमावस्याके दिन बूँदा-बूँदीके साथ बिजली चमके तो जङ्गली जानवरोंको कष्ट, धातुओंकी उत्पत्तिमें कमी एवं नागरिकोंमें परस्पर कलह होती है। ज्येष्ठ-पूर्णिमाको आकाशमें बिजली तड़-तड़ शब्दके साथ चमके तो आगामी वर्षके लिए शुभ, समयानुकूल वर्षा और धन-धान्यकी उत्पत्ति प्रचुर परिमाणमें होती है। वर्षाऋतु—श्रावण और भाद्रपदमें ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो वर्षाका अवरोध होता है। श्रावण मासमें कृष्ण द्वितीया, प्रतिपदा, सप्तमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावास्या, शुक्ला प्रतिपदा, पञ्चमी, अष्टमी, द्वादशी और पूर्णिमा तिथियाँ विद्युत् निमित्तको अवगत करनेके लिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं, अवशेष तिथियोंमें रक्त और श्वेत वर्णकी बिजली चमकनेमें वर्षा और अन्य वर्णकी बिजली चमकनेमें वर्षाका अभाव होता है। कृष्ण प्रतिपदाको रात्रिमें लगातार दो घण्टे तक बिजली चमके तो श्रावणके महीनेमें वर्षाकी कमी; द्वितीयाको रह-रहकर बिजली चमके तथा गर्जन तर्जन भी हो तो भादोंमें अल्पवर्षा और श्रावणके महीनेमें साधारण वर्षा; सप्तमीको पीले रंगकी बिजली चमके तथा आकाशमें बादल चित्र विचित्र रंगके एकत्रित हों तो सामान्यतया वर्षा होती है। एकादशीको निरभ्र आकाशमें बिजली चमके तो फसलमें कमी और अनेक प्रकारसे अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। चतुर्दशीको दिनमें बिजली चमके तो उत्तम वर्षा और रातमें बिजली चमके तो साधारण वर्षा होती है। अमावास्याको हरित, नील और ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो वर्षाका अवरोध होता है। भाद्रपद मासमें कृष्णपक्ष और शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको निरभ्र आकाशमें बिजली चमके तो अशान्तिकी सूचना और मेघाच्छादित आकाशमें बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो सुकालकी सूचना समझनी चाहिए। कृष्ण पक्षकी सप्तमी और एकादशीको गर्जन-तर्जनके साथ स्निग्ध और शीतयुक्त बिजली चमके तो परम सुकाल, समयानुकूल वर्षा, सब प्रकारसे नागरिकोंमें सन्तोष

एवं सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पूर्णिमा और अमावास्याको बूँदा-बूँदीके साथ बिजली शब्द करती हुई चमके और उसकी एक धारा-सी बन जाय तो वर्षा अच्छी होती है तथा फसल भी अच्छी ही होती है। शरद्ऋतु--आश्विन और कार्तिकमें बिजलीका चमकना प्रायः निरर्थक है। केवल विजयादशमीके दिन बिजली चमके तो आगामी वर्षके लिए अशुभसूचक समझना चाहिए। कार्त्तिक मासमें भी बिजली चमकनेका फल अमावास्या और पूर्णिमाके अतिरिक्त अन्य तिथियोंमें नहीं होता है। अमावास्याको बिजली चमकनेसे खाद्य पदार्थ महँगे और पूर्णिमाको बिजली चमकनेसे रासायनिक पदार्थ महँगे होते हैं। हेमन्तऋतु--मार्गशीर्ष और पौषमें श्याम और ताम्रवर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षाभाव तथा रक्त, हरित, पीत और चित्र-विचित्र वर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षा होती है।

तो धूप होनेके पश्चात् जल की वर्षा होती है। यहाँ इतनी बात और अवगत करनी चाहिए कि जलकी वर्षाके साथ तूफान भी रहता है। अनेक वृक्ष धराशायी हो जाते हैं, पशु और पक्षियोंको अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। जिस समय आकाश काले-काले बादलोंसे आच्छादित हो, चारों ओर अन्धकार-ही-अन्धकार हो, उस समय नील प्रकाश करती हुई बिजली चमके, साथ ही भयंकर जोरका शब्द भी हो तो अगले दिन तीव्र वायु बहनेकी सूचना समझनी चाहिए। वर्षा तीन दिनोंके बाद होती है यह भी इसी निमित्तका फलादेश है। फसलके लिए इस प्रकारकी बिजली विनाशकारी ही मानी गई है। पश्चिम दिशासे निकलकर विचित्रवर्ण की बिजली चारों ओर घूमती हुई चमके तो अगले तीन दिनोंमें वर्षा होनेकी सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकारकी बिजली फसलको भी समृद्धिशाली बनानेवाली होती है। गेहूँ, जौ, धान और ईखकी वृद्धि विशेषरूपसे होती है। पश्चिम दिशामें रक्तवर्णकी प्रभावशाली बिजली मन्द-मन्द शब्दके साथ उत्तरकी ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो अगले दिन तेज हवा चलती है और कड़ाकेकी धूप पड़ती है। इस प्रकारकी बिजली दो दिनोंमें वर्षा होनेकी सूचना देती है। जिस बिजलीमें रश्मियाँ निकलती हों, ऐसी बिजली पश्चिम दिशामें गड़गड़ाहटके साथ चमके तो निश्चयतः अगले तीन दिनों तक वर्षाका अवरोध होता है। आकाशमें बादल छाये रहते हैं, फिर भी जलकी वर्षा नहीं होती। कृष्णवर्णके बादलोंमें पश्चिम दिशासे पीतवर्णकी विद्युत् धारा प्रवाहित हो और यह अपने तेज प्रकाशके द्वारा आँखोंमें चकाचौंध उत्पन्न कर दे तो वर्षाकी कमी समझनी चाहिए। वायुके साथ बूँदा-बूँदी होकर ही रह जाती है। धूप भी इतनी तेज पड़ती है, जिससे इस बूँदा-बूँदीका भी कुछ प्रभाव नहीं होता। पश्चिमसे बिजली निकल कर पूर्वकी ओर जाय तो प्रातःकाल कुछ वर्षा होती है और इस वर्षाका जल फसलके लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। फसलके लिए इस प्रकारकी बिजली उत्तम समझी गई है।

उत्तर दिशामें बिजली चमके तो नियमतः वर्षा होती है। उत्तरमें जोर-जोरसे कड़कके साथ बिजली चमके और आकाश मेघाच्छन्न हो तो प्रातःकाल घनघोर वर्षा होती है। जब आकाशमें नीलवर्णके बादल छाये हों और इनमें पीतवर्णकी बिजली चमकती हो तो साधारण वर्षाके साथ वायुका भी प्रकोप समझना चाहिए। जब उत्तरमें केवल मन्द-मन्द शब्द करती हुई बिजली कड़कती है, उस समय वायु चलनेकी ही सूचना समझनी चाहिए। हरे और पीले रंगके बादल आकाशमें हों तथा उत्तर दिशामें रह-रहकर बार-बार बिजली चमकती हो तो जल वर्षाका योग विशेषरूपसे समझना चाहिए। यह वृष्टि उस स्थानसे सौ कोशकी दूरी तक होती है तथा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है। लालवर्णके बादल जब आकाशमें हों, उस समय दिनमें बिजलीका प्रकाश दिखलाई पड़े तो वर्षाके अभावकी सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकारकी बिजली दुष्काल पड़नेकी सूचना भी देती है। यदि उक्त प्रकारकी बिजली आषाढ़ मासके आरम्भमें दिखलाई पड़े तो उस वर्ष दुष्काल समझ लेना चाहिए। वायव्य कोणमें बिजली कड़ाकेके शब्दके साथ चमके तो अल्प जलकी वर्षा समझनी चाहिए। वर्षाकालमें ही उक्त प्रकारकी बिजलीका निमित्त घटित होता है। ईशान कोणमें तिरछी चमकती हुई बिजली पूर्व दिशाकी ओर गमन करे तो जलकी वर्षा होती है। यदि इस कोणकी बिजली गर्जन-तर्जनके साथ चमके तो तूफानकी सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़मास और श्रावणमासमें उत्तम प्रकारकी विद्युत्का फल घटित होता है।

दक्षिण दिशामें बिजलीकी चकाचौंध उत्पन्न हो और श्वेत रंगकी चमक दिखलाई पड़े तो सात दिनों तक लगातार जलकी वर्षा होती है। यदि दक्षिण दिशामें केवल बिजलीकी चमक ही दिखलाई पड़े तो धूप होनेकी सूचना अवगत करनी चाहिए। जब लाल और काले वर्णके मेघ आकाशमें आच्छादित हों और बार-बार तेजीसे बिजली चमकती हो तो, साधारणतया दिन भर

धूप रहनेके पश्चात् रातमें वर्षा होती है। दक्षिण दिशासे पूर्वोत्तर गमन करती हुई बिजली चमके और उत्तर दिशामें इसका तेज प्रकाश भर जाय तो तीन दिनों तक लगातार जलकी वर्षा होती है। यहाँ इतना विशेष और है कि वर्षाके साथ ओले भी पड़ते हैं। यदि इस प्रकारकी बिजली शरद् ऋतुमें चमकती है तो निश्चयतः ओले ही पड़ते हैं, जलकी वर्षा नहीं होती। ग्रीष्म ऋतुमें उक्त प्रकारकी बिजली चमकती है तो वायुके साथ तेज धूप पड़ती है, वृष्टि नहीं होती। गोलाकार रूपमें दक्षिण दिशामें बिजली चमके तो आगामी ग्यारह दिनों तक जलकी अखण्ड वर्षा होती है। इस प्रकारकी बिजली अतिवृष्टिकी सूचना देती है। आषाढ़ वदी प्रतिपदाको दक्षिण दिशामें शब्द रहित बिजली चमके तो आगामी वर्षमें फसल निकृष्ट, उत्तर दिशामें शब्द रहित बिजली चमके तो फसल साधारण; पश्चिम दिशामें शब्दरहित बिजली चमके तो फसलके लिए मध्यम और पूर्व दिशामें शब्दरहित बिजली चमके तो बहुत अच्छी फसल उपजती है। यदि इन्हीं दिशाओंमें शब्दसहित बिजली चमके तो क्रमशः आधी, तिहाई, साधारणतः पूर्व और सवाई फसल उत्पन्न होती है। यदि आषाढ़ वदी द्वितीया चतुर्थीसे विद्ध हो और उसमें दक्षिण दिशासे निकलती हुई बिजली उत्तरकी ओर जावे तथा इसकी चमक बहुत तेज हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचना मिलती है। वर्षा भी इस प्रकारकी बिजलीसे अवरुद्ध ही होती है। चटचटाहट करती हुई बिजली चमके तो वर्षाभाव एवं घोरोपद्रवकी सूचना देती है।

ऋतुओंके अनुसार विद्युत् निमित्तका फल—शिशिर—माघ और फाल्गुन मासमें नीले और पीले रंगकी बिजली चमके तथा आकाश श्वेतरंगका दिखलाई पड़े तो ओलोंके साथ जलवर्षा एवं कृषिके लिए हानि होती है। माघ कृष्ण प्रतिपदाको बिजली चमके तो गुड़, चीनी, मिश्री आदि वस्तुएँ महँगी होती हैं तथा कपड़ा, सूत, कपास, रूई आदि वस्तुएँ सस्ती और शेष वस्तुएँ सम रहती हैं। इस दिन बिजलीका कड़कना बीमारियोंकी सूचना भी देती है। माघ कृष्णा द्वितीया, षष्ठी और अष्टमीको पूर्व दिशामें बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षमें अधिक व्यक्तियोंके अकालमरण होनेकी सूचना समझनी चाहिए। यदि चन्द्रमाके बिम्बके चारों ओर परिवेष होनेपर उस परिवेषके निकट ही बिजली चमकती प्रकाशमान दिखलाई पड़े तो आगामी आषाढ़में अच्छी वर्षा होती है। माघ कृष्ण द्वितीयाको गर्जन-तर्जनके साथ बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षमें फसल साधारण तथा वर्षा की कमी होती है। माघी पूर्णिमाको मध्य रात्रिमें उत्तर-दक्षिण चमकती हुई बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष राष्ट्रके लिए उत्तम होता है। व्यापारियोंको सभी वस्तुओंके व्यापारमें लाभ होता है। यदि दूसरी रातमें चन्द्रोदय के समयमें ही लगातार एक मुहूर्त—४८ मिनट तक बिजली चमके तो आगामी वर्षमें राष्ट्रके लिए अनेक प्रकारसे विपत्ति आती है। फाल्गुन मासकी कृष्णपक्षको प्रतिपदा, द्वितीया और तृतीयाको मेघाच्छन्न आकाश हो और उसमें पश्चिम दिशाकी ओर बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षमें फसल अच्छी होती है और तत्काल ओलोंके साथ जलकी वर्षा होती है। यदि होलीकी रात्रिमें पूर्व दिशामें बिजली चमके तो आगामी वर्षमें अकाल, वर्षाभाव, बीमारियाँ एवं धन-धान्यकी हानि और दक्षिण दिशामें बिजली चमके तो आगामी वर्षमें साधारण वर्षा, चेचकका विशेष प्रकोप, अन्नकी महँगी एवं खनिज पदार्थ सामान्यतया महँगे होते हैं। पश्चिम दिशाकी ओर बिजली चमके तो उपद्रव, झगड़े, मार-पीट, हत्याएँ, चोरी एवं आगामी वर्षमें अनेक प्रकारकी विपत्ति और उत्तर दिशामें बिजली चमके तो अग्निभय, आपसी विरोध, नेताओंमें मतभेद, आरम्भमें वस्तुएँ सस्ती पश्चात् महँगी एवं आकस्मिक दुर्घटनाएँ घटित होती हैं। होलीके दिन आकाशमें बादलोंका छाना और बिजलीका चमकना अशुभ है।

वसन्त ऋतु—चैत्र और वैशाखमें बिजलीका चमकना प्राय: निरर्थक होता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदाको आकाशमें मेघ व्याप्त हों और बूँदा-बूँदीके साथ बिजली चमके तो आगामी वर्षके लिए अत्यन्त अशुभ होता है। फसल तो नष्ट होती ही है, साथ ही मोती, माणिक्य आदि जवाहरात भी नष्ट होते हैं। दिनमें इस दिन मेघ छा जायें और वर्षाके साथ बिजली चमके तो अत्यन्त अशुभ होता है। आगामी वर्षके लिए यह निमित्त विशेष अशुभकी सूचना देता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तृतीया विद्ध हो तथा इस दिन भरणी नक्षत्र हो तो इस दिन चमकनेवाली बिजली आगामी वर्षमें मनुष्य और पशुओंके लिए नाना प्रकारके अरिष्टोंकी सूचना देती है। पशुओंमें आगामी आश्विन, कार्तिक, माघ और चैत्रमें भयानक रोग फैलता है तथा मनुष्योंमें भी इन्हीं महीनोंमें बीमारियाँ फैलती हैं। भूकम्प होनेकी सूचना भी उक्त प्रकारकी बिजलीसे ही अवगत करनी चाहिए। चैत्री पूर्णिमाको अचानक आकाशमें बादल छा जायें और पूर्व-पश्चिम बिजली कड़के तो आगामी वर्ष उत्तम रहता है और वर्षा भी अच्छी होती है। फसलके लिए यह निमित्त बहुत अच्छा है। इस प्रकारके निमित्तसे सभी वस्तुओंकी सस्ताई प्रकट होती है। वैशाखी पूर्णिमाको दिनमें तेज धूप हो और रातमें बिजली चमके तो आगामी वर्षमें वर्षा अच्छी होती है।

ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ और आषाढ़में साधारणत: बिजली चमके तो वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ मासमें बिजली चमकनेका फल केवल तीन दिन घटित होता है, अवशेष दिनोंमें कुछ भी फल नहीं मिलता। ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या और पूर्णिमा इन तीन दिनोंमें बिजली चमकनेका विशेष फल प्राप्त होता है। यदि प्रतिपदाको मध्यरात्रिके उपरान्त निरभ्र आकाशमें दक्षिण-उत्तरकी ओर गमन करती हुई बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षके लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सन्ध्याकालके दो घण्टे बाद तड़्-तड़् करती हुई बिजली इसी दिन दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और शब्दरहित बिजली दिखलाई पड़े तो समयानुकूल वर्षा होती है। अमावस्याके दिन बूँदा-बूँदीके साथ बिजली चमके तो जङ्गली जानवरोंको कष्ट, धातुओंकी उत्पत्तिमें कमी एवं नागरिकोंमें परस्पर कलह होती है। ज्येष्ठ-पूर्णिमाको आकाशमें बिजली तड़्-तड़् शब्दके साथ चमके तो आगामी वर्षके लिए शुभ, समयानुकूल वर्षा और धन-धान्यकी उत्पत्ति प्रचुर परिमाणमें होती है। वर्षाऋतु—श्रावण और भाद्रपदमें ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो वर्षाका अवरोध होता है। श्रावण मासमें कृष्ण द्वितीया, प्रतिपदा, सप्तमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावास्या, शुक्ला प्रतिपदा, पञ्चमी, अष्टमी, द्वादशी और पूर्णिमा तिथियाँ विद्युत् निमित्तको अवगत करनेके लिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं, अवशेष तिथियोंमें रक्त और श्वेत वर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षा और अन्य वर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षाका अभाव होता है। कृष्ण प्रतिपदाको रात्रिमें लगातार दो घण्टे तक बिजली चमके तो श्रावणके महीनेमें वर्षाकी कमी; द्वितीयाको रह-रहकर बिजली चमके तथा गर्जन तर्जन भी हो तो भादोंमें अल्पवर्षा और श्रावणके महीनेमें साधारण वर्षा; सप्तमीको पीले रंगकी बिजली चमके तथा आकाशमें बादल चित्र-विचित्र रंगके एकत्रित हों तो सामान्यतया वर्षा होती है। एकादशीको निरभ्र आकाशमें बिजली चमके तो फसलमें कमी और अनेक प्रकारसे अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। चतुर्दशीको दिनमें बिजली चमके तो उत्तम वर्षा और रातमें बिजली चमके तो साधारण वर्षा होती है। अमावास्याको हरित, नील और ताम्रवर्णकी बिजली चमके तो वर्षाका अवरोध होता है। भाद्रपद मासमें कृष्णपक्ष और शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको निरभ्र आकाशमें बिजली चमके तो अकालकी सूचना और मेघाच्छादित आकाशमें बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो सुकालकी सूचना समझनी चाहिए। कृष्ण पक्षकी सप्तमी और एकादशीको गर्जन-तर्जनके साथ स्निग्ध और रश्मियुक्त बिजली चमके तो परम सुकाल, समयानुकूल वर्षा, सब प्रकारके नागरिकोंमें सन्तोष

एवं सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पूर्णिमा और अमावास्याको बूँदा-बूँदीके साथ बिजली शब्द करती हुई चमके और उसकी एक धारा-सी बन जाय तो वर्षा अच्छी होती है तथा फसल भी अच्छी ही होती है। शरद्ऋतु—आश्विन और कार्तिकमें बिजलीका चमकना प्रायः निरर्थक है। केवल विजयादशमीके दिन बिजली चमके तो आगामी वर्षके लिए अशुभसूचक समझना चाहिए। कार्तिक मासमें भी बिजली चमकनेका फल अमावास्या और पूर्णिमाके अतिरिक्त अन्य तिथियोंमें नहीं होता है। अमावास्याको बिजली चमकनेसे खाद्य पदार्थ महँगे और पूर्णिमाको बिजली चमकनेसे रासायनिक पदार्थ महँगे होते हैं। हेमन्तऋतु—मार्गशीर्ष और पौषमें श्याम और ताम्रवर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षाभाव तथा रक्त, हरित, पीत और चित्र-विचित्र वर्णकी बिजली चमकनेसे वर्षा होती है।

षष्ठोऽध्यायः

अभ्राणां लक्षणं कृत्स्नं प्रवक्ष्यामि यथाक्रमम् ।
प्रशस्तम[1]प्रशस्तं[2] च तन्निबोधत तत्त्वतः ॥१॥

बादलोंकी आकृतिके लक्षण यथाक्रमसे वर्णित करता हूँ। ये दो प्रकारके होते हैं—शुभ और अशुभ ॥१॥

स्निग्धान्यभ्राणि यावन्ति वर्षदानि न संशयः ।
उत्तरं मार्गमाश्रित्य तिथौ मुखे यदा भवेत् ॥२॥

चिकने बादल अवश्य बरसते हैं, इसमें कुछ भी संशय नहीं, और उत्तर दिशाके आश्रित बादल प्रातःकाल नियमतः वर्षा करते हैं ॥२॥

उदीच्यान्यथ पूर्वाणि वर्षदानि शिवानि[3] च ।
दक्षिणाण्यपराणि स्युः समूत्राणि[4] न संशयः ॥३॥

उत्तर और पूर्व दिशाके बादल सदा उत्तम वर्षा करते है और दक्षिण तथा पश्चिमके बादल मूत्रके समान थोड़ी-थोड़ी वर्षा करते हैं, इसमें कुछ संशय नहीं ॥३॥

कृष्णानि पीत-ताम्राणि श्वेतानि च यदा भवेत् ।
तयोर्निर्देश[5]मासृत्य वर्षदानि शिवानि च ॥४॥

यदि बादल पीले, ताँबे और श्वेतवर्णके हों तो वे उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं ॥४॥

अप्सराणां[6] च सत्त्वानां सदृशानि चराणि च ।
सुस्निग्धानि च यानि स्युर्वर्षदानि शिवानि[7] च ॥५॥

यदि बादल देवाङ्गनाओं और प्राणियोंके सदृश आचरण करें—विचरण करें और स्निग्ध हों तो वे शुभ होते हैं और उनसे उत्तम वर्षा होती है ॥५॥

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि विद्युच्चित्रघनानि च ।
सद्यो वर्षं समाख्यान्ति तान्यभ्राणि न संशयः ॥६॥

शुक्लवर्णके बादल स्निग्ध, बिन्दु समान विचित्र—कबूतरके समान रंगके हों तो तत्काल वर्षा होती है ॥६॥

शकुनैः कारणैश्चापि सम्भवन्ति शुभैर्यदा ।
तदा वर्षं च क्षेमं च सुभिक्षं च जयं भवेत्[8] ॥७॥

शुभ शकुन और अन्य शुभ-चिह्नों सहित यदि बादल हों तो वे वर्षा करते हैं तथा क्षेम, कुशल, सुभिक्ष और राजाकी विजय सूचित करते हैं ॥७॥

१. प्रशस्तान् मु० A. B. D. । २. अप्रशस्तान् मु० A. B. D. । ३. शुभानि मु० C. । ४. शुभमुहूर्तानि मु० C. भा० । ५. श्वोनिर्दिशम् मु० । ६. अप्सरागां मु० । ७. शुभानि मु० । ८. वदेत् मु० A. भा० ।

पक्षिणां द्विपदानां च सदृशानि यदा भवेत् ।
चतुष्पदानां सौम्यानां तदा विन्द्यान्महज्जलम्[1] ॥८॥

सौम्य पक्षियोंके सदृश, सौम्य द्विपद—मनुष्योंके सदृश और सौम्य चतुष्पद—चौपायों—गाय, भैंस, हाथी, घोड़ा आदिके तुल्य बादल हों तो विजयसूचक समझना चाहिए। इस श्लोकमें सौम्य विशेषणसे तात्पर्य है कि क्रूर प्राणियोंकी आकृति नहीं ग्रहण करनी चाहिए। जो प्राणी सीधे-साधे स्वभावके हैं, उन्हींकी आकृतिके बादल शुभ सूचक होते हैं। सौम्य प्राणियोंमें हाथी, घोड़ा, बैल, हंस, मयूर, सारस, तोता, मैना, कोयल, कबूतर आदि प्राणी संग्रहीत हैं ॥८॥

यदा राज्ञः प्रयाणे तु यान्यभ्राणि शुभानि च ।
अनुमार्गाणि स्निग्धानि तदा राज्ञो जयं वदेत्[2] ॥९॥

राजाके प्रयाणके समय यदि शुभ रूप बादल हों और वे राजाके मार्गके साथ-साथ गमन करें, स्निग्ध हों तो उस यात्रामें राजाकी विजय होती है ॥९॥

[3]रथायुधानामश्वानां हस्तिनां सदृशानि च ।
यान्यग्रतो प्रधावन्ति[4] जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥१०॥

रथ—गाड़ी, मोटर तथा आयुध—तलवार, बन्दूक और हाथी आदि प्राणियोंके सदृश बादल राजाके आगे-आगे गमन करें तो वे उसकी जयकी सूचना देते हैं ॥१०॥

ध्वजानां च पताकानां घण्टानां तोरणस्य च ।
सदृशान्यग्रतो यान्ति जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥११॥

ध्वजा, पताका, घण्टा, तोरण इत्यादिकी आकृतिवाले बादल राजाके प्रयाण समय आगे-आगे चलें तो उनसे राजाकी विजय सूचित होती है ॥११॥

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि पुरतः[5] पृष्ठतोऽपि वा ।
अभ्राणि[6] दीप्तरूपाणि जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥१२॥

श्वेत और चिकने बादल राजाके आगे अथवा पीछे चमकते हुए गमन करें तो विजय लक्ष्मी उसके सामने उपस्थित रहती है—युद्धमें उसे विजय मिलती है ॥१२॥

चतुष्पदानां पक्षिणां क्रव्यादानां च दंष्ट्रिणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि वधमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥१३॥

चौपायों—भैंसा, शूकर, गधा आदि पशुओं और मांसभक्षी क्रूर पक्षियों—गीध, काक, बगुला, बाज, तीतर आदि पक्षियों एवं दाँतवाले सिंहादि हिंसक प्राणियोंके आकारवाले बादल राजाके युद्धार्थ गमन करते समय प्रतिलोम गति—अपसव्यमार्गसे गमन करते हुए दिखाई दें तो राजाका घात अथवा पराजय होती है ॥१३॥

असिशक्तितोमराणां खड्गानां चक्रचर्मणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥१४॥

तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी, खड्ग, चक्र और ढालके समान आकारवाले और प्रतिलोम—विपरीत मार्गसे गमन करनेवाले बादल युद्धकी सूचना देते हैं ॥१४॥

---

१. जयं वदेत् मु० A. B. D. । २. भवेत् मु० C. । ३. स्वायुधानाम्, मु०, यदायुधानाम्, मु० C. । ४. अभिधावन्ति मु० C । ५. पुरस्तात् मु० । ६. अभ्राणां मु० B. ।

धनुषां कवचानां च बालानां सदृशानि च।
खण्डान्यभ्राणि रूक्षाणि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥१५॥

धनुषाकार, कवचाकार, बाल—हाथी, घोड़ोंकी पूँछके बालोंके समान तथा खण्डित और रूक्ष बादल संग्रामकी सूचना देते है ॥१५॥

नानारूपप्रहरणैः सर्वे यान्ति परस्परम्।
सङ्ग्रामं तेषु जानीयादतुलं प्रत्युपस्थितम् ॥१६॥

नाना प्रकारके रूप धारण कर सब बादल परस्परमें आघात-प्रतिघात करें तो घोर संग्राम की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥१६॥

अभ्रवृक्षं समुच्छाय योऽनुलोमसमं व्रजेत्।
यस्य राज्ञो वधस्तस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥१७॥

जड़से उखड़े हुए वृक्षके समान यदि बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो राजाके वध की सूचना ज्ञात करनी चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१७॥

बालाऽभ्रवृक्षमरणं[1] कुमारामात्ययोर्वदेत्।
एवमेवं च विज्ञेयं प्रतिराज्ञां[2] यदा भवेत् ॥१८॥

छोटे-छोटे वृक्षके समान आकृतिवाले बादलोंसे युवराज और मन्त्रीका मरण जानना चाहिए ॥१८॥

तिर्यक्षु[3] यानि गच्छन्ति रूक्षाणि[4] च घनानि च।
निवर्तयन्ति तान्याशु चमूं सर्वां सनायकाम्[5] ॥१९॥

यदि मेघ तिरछे गमन करते हों, रूक्ष हों और सघन हों तो उनसे नायकसहित समस्त सेनाके युद्धसे लौट आने या पराङ्मुख हो जाने की सूचना मिलती है ॥१९॥

अभिद्रवन्ति घोषेण[6] महता यां चमूं पुनः।
सविद्युतानि चा[7]ऽभ्राणि तदा विन्द्याच्चमूवधम् ॥२०॥

जिस सेनाके ऊपर बादल घोर गर्जना करते हुए बरसते हैं तथा बिजली सहित होते हैं तो उस सेनाका नाश सूचित होता है ॥२०॥

रुधिरोदकवर्णानि निम्बगन्धीनि यानि च।
व्रजन्त्यभ्राणि[8] अत्यन्तं सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥२१॥

रुधिरके समान रंगवाले जलकी वर्षा हो और नीम जैसी गन्ध आती हो तथा बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो युद्ध होनेका निर्देश ज्ञात करना चाहिए ॥२१॥

१. -मभ्यङ्ग मु० A. भिमरणं वृषे मु० B. भ्राणिव मु० D.। २. प्रतिन्यानां मु० B., प्रतिराज्ञ मु० C., प्रतिराज्ञा मु० D.। ३. तिर्यञ्च मु० C.। ४. रूपाणि मु० A. D. वृक्षाणि मु० C.। ५. स नायकाम् मु० C. ६. घोरेण मु० C.। ७. चा मु०। ८. व्रजन्ति-अभ्राणतो, मु० A. B. D.।

विस्वरं रवमाणाश्च शकुना यान्ति पृष्ठतः ।
यदा [1]चाभ्राणि धूम्राणि[2] तदा विन्द्यान्महद्[3] भयम्[4] ॥२२॥

पीछेकी ओर शब्दसहित अथवा शब्दरहित शकुनरूप धूम जैसी आकृतिवाले बादल महान् भयकी सूचना देते हैं ॥२२॥

मलिनानि विवर्णानि[5] दीप्तायां दिशि यानि च ।
दीप्तान्येव यदा यान्ति भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥२३॥

मलिन तथा वर्णरहित बादल दीप्ति दिशा—सूर्य जिस दिशा—में हो उस दिशामें स्थित हों तो भयकी सूचना समझनी चाहिए ॥२३॥

[6]सग्रहे [7]चापि नक्षत्रे ग्रहयुद्धे[8] ऽशुभे तिथौ ।
[9]सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥२४॥
मुहूर्ते शकुने वापि निमित्ते वाऽशुभे यदा ।
सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् । ॥२५॥

अशुभ ग्रह, नक्षत्र, ग्रहयुद्ध, तिथि-मुहूर्त-शकुन और निमित्तके सद्भावमें बादलोंका भ्रमण हो तो बहुत भारी भयकी सूचना समझनी चाहिए ॥२४-२५॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशां[10] चाभि[11]योजयेत् ।
विपुला क्षिप्रगा स्निग्धा जयमाख्याति निर्भयम् ॥२६॥

भारी शीघ्रगामी और स्निग्ध बादल जिस दिशामें गमन करें उस दिशामें वे यायी राजाकी विजयकी सूचना करते हैं ॥२६॥

यदा तु धान्यसङ्घानां[12] सदृशानि[13] भवन्ति हि ।
अभ्राणि तोयवर्णानि सस्यं तेषु समृद्धयते[14] ॥२७॥

यदि बादल धान्यके समूहके सदृश अथवा जलके वर्णवाले दिखाई दें तो धान्यकी बहुत पैदावार होती है ॥२७॥

[15]विरागान्यनुलोमानि शुक्लरक्तानि यानि च ।
स्थावराणीति जानीयात् स्थावराणां च संश्रये ॥२८॥

विरागी, अनुलोम गतिवाले तथा श्वेत और रक्तवर्णके बादल स्थिर हों तो स्थायी—उस स्थानके निवासी राजाकी विजय होती है ॥२८॥

क्षिप्रगानि विलोमानि नीलपीतानि यानि च ।
चलानीति[16] [17]विजानीयाच्चलानां[18] च समागमे[19] ॥२९॥

शीघ्रगामी, प्रतिलोम गतिसे चलनेवाले, पीत और नीलवर्णके बादल चल होते हैं और ये यायीके लिए समागमकारक हैं ॥२९॥

१. यानि अभ्राणि मु० C. । २. मधूमानि मु० A. B. D. । ३-४. महाभयम् मु० A., भयम् महत् मु० B. D. । ५. त्रिवर्णानि मु० A. । ६. समाहे मु० A., संग्रहे मु० D. । ७. वा । ८. अभ्रयुद्धे मु० C. । ९. सम्भवन्ति मु० C. । १०. दिश. मु० । ११. स्वाभियाश्रयेत् मु० । १२. धान्यगधानाम् मु० A. । १३. सदृशानां मु० । १४. समृद्ध्यति मु० । १५. विरागानि मु० A. । १६. चलानीति मु० A. चलनानीति मु० D. । १७. जानीयात् मु० D. । १८. चलानां मु० A. । १९. समागमं मु० A. ।

स्थावराणां जयं विन्द्यात् स्थावराणां द्युतिर्यदा ।
यायिनां च जयं विन्द्याचलाभ्राणां द्युतावपि ॥३०॥

जो बादल स्थावरों—निवासियोंके अनुकूल द्युति आदि चिह्नवाले हों तो उस परसे स्थायियोंकी जय जानना और यायीके अनुकूल द्युति आदि हों तो यायीकी विजय जानना चाहिए ॥३०॥

राजा[1] तत्प्रतिरूपैस्तु[2] ज्ञेयान्यभ्राणि सर्वशः[3] ।
तत्[4] सर्वं[6] सफलं[5] विन्द्याच्छुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥३१॥

यदि राजाको बादल अपने प्रतिरूप—सदृश जान पड़ें तो उनसे शुभ और अशुभ दोनों प्रकारका फल अवगत करना चाहिए ॥३१॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे अभ्रलक्षणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥६॥

विवेचन—आकाशमें बादलोंके आच्छादित होनेसे वर्षा, फसल, जय, पराजय, हानि, लाभ आदिके सम्बन्धमें जाना जाता है। यह एक प्रकारका निमित्त है, जो शुभ-अशुभकी सूचना देता है। बादलोंकी आकृतियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। कतिपय आकृतियाँ पशु-पक्षियोंके आकारकी होती हैं और कतिपय मनुष्य, अस्त्र-शस्त्र एवं गेंद, कुर्सी आदिके आकार की भी। इन समस्त आकृतियोंको फलकी दृष्टिसे शुभ और अशुभ इन दो भागोंमें विभक्त किया गया है। जो पशु सरल, सीधे और पालतू होते हैं, उनकी आकृतिके बादलोंका फल शुभ और हिंसक, क्रूर, दुष्ट जंगली जानवरोंकी आकृतिके बादलोंका फल निकृष्ट होता है। इसी प्रकार सौम्य मनुष्य की आकृतिके बादलोंका फल शुभ और क्रूर मनुष्योंकी आकृतिके बादलोंका फल निकृष्ट होता है। अस्त्र-शस्त्रोंकी आकृतिके बादलोंका फल साधारणतया अशुभ होता है। स्निग्ध वर्णके बादलोंका फल उत्तम और रूक्ष वर्णके बादलोंका फल सर्वदा निकृष्ट होता है।

पूर्व दिशामें मेघ गर्जन-तर्जन करते हुए स्थित हों तो उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी उत्तम होती है। उत्तर दिशामें बादल छाये हुए हों तो भी वर्षाकी सूचना देते हैं। दक्षिण और पश्चिम दिशामें बादलोंका एकत्र होना वर्षावरोधक होता है। वर्षाका विचार ज्येष्ठकी पूर्णिमाकी वर्षासे किया जाता है। यदि ज्येष्ठकी पूर्णिमाके दिन पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र हो और उस दिन बादल आकाशमें आच्छादित हों तो साधारण वर्षा आगामी वर्षमें समझनी चाहिए। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र यदि इस दिन हो तो अच्छी वर्षा होनेकी सूचना जाननी चाहिए। आषाढ़ कृष्णपक्षमें रोहिणीके चन्द्रमा योग हो और उस दिन आकाशमें पूर्व दिशाकी ओर मेघ सुन्दर, सौम्य आकृतिमें स्थित हों तो आगामी वर्षमें सभी दिशाएँ शान्त रहती हैं, पक्षीगण या मृगगण मनोहर शब्द करते हुए आनन्दसे निवास करते हैं, भूमि सुन्दर दिखलाई पड़ती है और धन-धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है। यदि आकाशमें कहीं कृष्ण-श्वेत मिश्रित वर्णके मेघ आच्छादित हों, कहीं श्वेत वर्णके ही स्थित हों, कहीं कुण्डली आकारमें स्थित सर्पके समान मेघ स्थित हों, कहीं बिजली चमकती हुई मेघोंमें दिखलाई पड़े, कहीं कुमकुम और टेसूके पुष्पके समान रंगके बादल सामने दिखलाई पड़ें, कहीं मेघोंके इन्द्र-धनुष दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्षमें साधारणतः वर्षा होती है। आचार्योंने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमीके आषाढ़ शुक्ल नवमी तकके मेघोंका फल विशेषरूपसे प्रतिपादित किया है।

१. तज्ज्ञं मु० C. । २. तिप्रति मु० C. । ३. सर्वतः मु० C. । ४. ततः मु० C. । ५. सर्वमलं मु० C. । ६. ब्रूयाद् मु० B. C. ।

विशेष फल—यदि ज्येष्ठ शुक्ला पंचमीको प्रातः निरभ्र आकाश हो और एकाएक मेघ मध्याह्नकालमें छा जायें तो पौष मासमें वर्षाकी सूचना देते हैं तथा इस प्रकारके मेघोंसे गुड़, चीनी आदि मधुर पदार्थोंके महँगे होने की भी सूचना समझनी चाहिए। यदि इसी तिथिको रात्रिमें गर्जन-तर्जनके साथ बूँदा-बूँदी हो और पूर्व दिशामें बिजली भी चमके तो आगामी वर्षमें सामान्यतया अच्छी वर्षा होनेकी सूचना देते हैं। यदि उपर्युक्त स्थितिमें दक्षिण दिशामें बिजली चमकती है तो दुर्भिक्ष सूचक समझना चाहिए। ज्येष्ठ शुक्ला पंचमीको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र हो और इस दिन उत्तर दिशाकी ओरसे मेघ एकत्र होकर आकाशको आच्छादित करें तो वस्त्र और अन्न सस्ते होते हैं और आषाढ़से आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, सर्वत्र सुभिक्ष होनेकी सूचना मिलती है। केवल यह योग चूहों, सर्पों और जंगली जानवरोंके लिए अनिष्टप्रद है। उक्त तिथिको गुरुवार, शुक्रवार और मंगलवारमेंसे कोई भी दिन हो और पूर्व या दक्षिण दिशाकी ओरसे बादलोंका उमड़ना आरम्भ हो रहा हो तो निश्चयतः मानव, पशु, पक्षी और अन्य समस्त प्राणियोंके लिए वर्षा अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठीको आकाशमें मंडलाकार मेघ संचित हों और उनका लाल या काला रंग हो तो आगामी वर्षमें वृष्टिका अभाव अवगत करना चाहिए। यदि इस दिन बुधवार और मघा नक्षत्रका योग हो तथा पूर्व या उत्तरसे मेघ उठ रहे हों तो श्रावण और भाद्रपदमें वर्षा अच्छी होती है, परन्तु अन्नका भाव महँगा रहता है। फसलमें कीड़े लगते हैं तथा सोना, चाँदी आदि खनिज धातुओंके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। यदि ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी रविवारको हो और इस दिन पुष्य नक्षत्रका योग हो तो मेघका आकाशमें छाना बहुत अच्छा होता है। आगामी वर्ष वृष्टि बहुत अच्छी होती है, धन-धान्यकी उत्पत्ति भी श्रेष्ठ होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी शनिवारको हो और इस दिन आश्लेषा नक्षत्रका भी योग हो तो आकाशमें श्वेत रंगके बादलोंका छाजाना उत्तम माना गया है। इस निमित्तसे देशकी उन्नति की सूचना मिलती है। देशका व्यापारिक सम्बन्ध अन्य देशोंसे बढ़ता है तथा उसकी सैन्य और अर्थ शक्तिका पूर्ण विकास होता है। वर्षा भी समय पर होती है, जिससे कृषि बहुत ही उत्तम होती है। यदि उक्त तिथिको गुरुवार और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रका योग हो और दक्षिण से बादल गर्जना करते हुए एकत्र हों तो आगामी आश्विन मासमें जलकी उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी साधारणतः अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमीको रविवार या सोमवार दिन हो और इस दिन पश्चिमकी ओर पर्वताकृति बादल दिखलाई पड़े तो आगामी वर्षके शुभ होनेकी सूचना देते हैं। पुष्य, मघा और पूर्वा फाल्गुनी इन नक्षत्रोंमेंसे कोई भी नक्षत्र उस दिन हो तो लोहा, इस्पात तथा इनसे बनी समस्त वस्तुएँ महँगी होती हैं। जूटका बाजार भाव अस्थिर रहता है। तथा आगामी वर्षमें अन्नकी उपज भी कम ही होती है। देशमें गोधन और पशुधनका विनाश होता है। यदि उक्त नक्षत्रोंके साथ गुरुवारका योग हो तो आगामी वर्ष सब प्रकारसे सुखपूर्वक व्यतीत होता है। वर्षा प्रचुर परिमाणमें होती है। कृषक वर्गको सभी प्रकारसे शान्ति मिलती है।

ज्येष्ठ शुक्ला नवमी शनिवारको यदि आश्लेषा, विशाखा और अनुराधामेंसे कोई भी नक्षत्र हो तो इस दिन मेघोंका आकाशमें व्याप्त होना साधारण वर्षाका सूचक है। साथ ही इन मेघोंसे माघ मासमें जलके बरसनेकी भी सूचना मिलती है। जौ, धान, चना, मूँग और बाजरा की उत्पत्ति अधिक होती है। गेहूँका अभाव रहता है या स्वल्प परिमाणमें गेहूँकी उत्पत्ति होती है। ज्येष्ठ शुक्ला दशमीको रविवार या मंगलवार हो और इस दिन ज्येष्ठा या अनुराधा नक्षत्र हो तो आगामी वर्षमें श्रेष्ठ फसल होनेकी सूचना समझनी चाहिए। तिल, तैल, घी और तिलहनों

का भाव महँगा होता है तथा घृतमें विशेष लाभ होता है। उक्त प्रकारका मेघ व्यापारी वर्गके लिए भयदायक है तथा आगामी वर्षमें उत्पातोंकी सूचना देता है।

ज्येष्ठ शुक्ला एकादशीको उत्तर दिशाकी ओर सिंह, व्याघ्रके आकारमें बादल छा जायें तो आगामी वर्षके लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इस प्रकारकी मेघस्थिति पौष या माघ मासमें देशके किसी नेताकी मृत्यु भी सूचित करती है। वर्षा और कृषिके लिए उक्त प्रकारकी मेघस्थिति अत्यन्त अनिष्टकारक है। अन्न और जूटकी फसल सामान्यरूपसे अच्छी नहीं होती। कपास और गन्नेकी फसल अच्छी ही होती है। यदि उक्त तिथिको गुरुवार हो तो इस प्रकारकी मेघस्थिति द्विज लोगोंमें भय उत्पन्न करती है तथा देशमें अधार्मिक वातावरण उपस्थित करनेका कारण बनती है।

ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशीको बुधवार हो और इस दिन पश्चिम दिशामें सुन्दर और सौम्य आकारमें बादल आकाशमें छा जावें तो आगामी वर्षमें अच्छी वर्षा होती है। यदि इस दिन ज्येष्ठा या मूल नक्षत्रमेंसे कोई नक्षत्र हो तो उक्त प्रकारकी मेघकी स्थितिसे धन-धान्यकी उत्पत्तिमें डेढ़ गुनी वृद्धि हो जाती है। उपयोगकी समस्त वस्तुएँ आगामी वर्षमें सस्ती होती हैं।

ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशीको गुरुवार हो और इस दिन पूर्व दिशाकी ओरसे बादल उमड़ते हुए एकत्र हों तो उत्तम वर्षाकी सूचना देते हैं। अनुराधा नक्षत्र भी हो तो कृषिमें वृद्धि होती है। ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशीकी रात्रिमें वर्षा हो और आकाश मण्डलाकार रूपमें मेघाच्छन्न हो तो आगामी वर्षमें खेती अच्छी होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमाको आकाशमें सघन मेघ आच्छादित हों और इस दिन गुरुवार हो तो आगामी वर्षमें सुभिक्षकी सूचना समझनी चाहिए।

आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदाको हाथी और अश्वके आकारमें कृष्णवर्णके बादल आकाशमें अवस्थित हो जायँ तथा पूर्व दिशासे वायु भी चलती हो और हल्की वर्षा हो रही हो तो आगामी वर्षमें दुष्कालकी सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदाके दिन आकाशमें बादलोंका आच्छादित होना तो उत्तम होता है, पर पानीका बरसना अत्यन्त अनिष्टप्रद समझा जाता है। इस दिन अनेक प्रकारके निमित्तोंका विचार किया जाता है—यदि रातमें उत्तर दिशासे शृगाल मन्द-मन्द शब्द करते हुए बोलें तो आश्विन मासमें वर्षाका अभाव होता है तथा समस्त खाद्य पदार्थ महँगे होते हैं। तेज धूपका पड़ना श्रेष्ठ समझा जाता है और यह लक्षण सुभिक्षका द्योतक होता है। आषाढ़ कृष्णा द्वितीयाको पर्वत, या समुद्रके आकारमें उमड़ते हुए बादल एकत्रित हों और गर्जना करें, पर वर्षा न हो तो साधारणतः अच्छा समझा जाता है। आगामी श्रावण और भाद्रपदमें वर्षा होती है। आषाढ़ कृष्णा द्वितीयाको सुन्दर द्विपदाकार मेघ आकाशमें अवस्थित हों तो उत्तम समझा जाता है। वर्षा भी उत्तम होती है तथा आगामी वर्ष फसल भी अच्छी होती है। यदि आषाढ़ कृष्णा द्वितीयाको सोमवार हो और इस दिन श्रवण नक्षत्र हो तो उक्त प्रकारके मेघका विशेष फल प्राप्त होता है। तिलहनकी उत्पत्ति प्रचुर परिमाणमें होती है तथा पशुधनकी वृद्धि भी होती रहती है। इस तिथिको मेघाच्छन्न आकाश होने पर रात्रिमें शूकर और जंगली जानवरोंका कर्कश शब्द सुनाई पड़े तो जिस नगरके व्यक्ति इस शब्दको सुनते हैं, उसके चारों ओर दस-दस कोशकी दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल कार्तिक मासमें ही प्राप्त होता है, सारा नगर कार्तिकमें वीरान हो जाता है। फसल भी कमजोर होती है और फसलको नष्ट करनेवाले कीड़ोंकी वृद्धि होती है। यदि उक्त तिथिको प्रातःकाल आकाश निरभ्र हो और सन्ध्या समय रंग-बिरंगे वर्णके बादल पूर्वसे पश्चिमकी ओर गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो सात दिनोंके उपरान्त घनघोर वर्षा होती है तथा श्रावण महीनेमें भी खूब वर्षा होनेकी सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथिको दिन भर

मेघाच्छन्न आकाश रहे और सन्ध्या समय निरभ्र हो जाय तो आगामी महीनेमें साधारण जलकी वर्षा होती है तथा भाद्रपदमें सूखा पड़ता है।

आषाढ़ कृष्ण तृतीयाको प्रातःकाल ही आकाश मेघाच्छन्न हो जाय तो आगामी दो महीनोंमें अच्छी वर्षा होती है तथा विश्वमें सुभिक्ष होनेकी सूचना समझनी चाहिए। काले रंगके अनाज महँगे होते हैं और श्वेत रंगकी सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। यदि उक्त तिथिको मंगलवार हो तो विशेष वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। धनिष्ठा नक्षत्र सन्ध्या समयमें स्थित हो और इस तिथिको मंगलवार मेघ स्थित हों तो भाद्रपद मासमें भी वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए।

आषाढ़ कृष्णा चतुर्थीको मंगलवार या शनिवार हो, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रवणमें से कोई भी एक नक्षत्र हो तो उक्त तिथिको प्रातःकाल ही मेघाच्छन्न होनेसे आगामी वर्ष अच्छी वर्षाकी सूचना मिलती है। धन-धान्यकी वृद्धि होती है। जूटकी उपजके लिए उक्त मेघस्थिति अच्छी समझी जाती है। आषाढ़ कृष्णा पञ्चमीको मनुष्यके आकारमें मेघ आकाशमें स्थित हों तो वर्षा और फसल उत्तम होती हैं। देशकी आर्थिक स्थितिमें वृद्धि होती है। विदेशोंसे भी देश का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है। गेहूँ, गुड़ और लाल वस्त्रके व्यापारमें विशेष लाभ होता है। मोती, सोना, रत्न और अन्य प्रकारके बहुमूल्य जवाहरात की महँगी होती है। आषाढ़ कृष्णा षष्ठीको निरभ्र आकाश रहे और पूर्व दिशासे तेज वायु चले तथा सन्ध्या समय पीतवर्णके बादल आकाशमें व्याप्त हो जायँ तो श्रावणमें वर्षाकी कमी, भाद्रपदमें सामान्य वर्षा और आश्विनमें उत्तम वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि रविवार, सोमवार और मंगलवारको हो तो सामान्यतः वर्षा उत्तम होती है तथा तृण और काष्ठका मूल्य बढ़ता है। पशुओंके मूल्यमें भी वृद्धि हो जाती है। यदि उक्त तिथिको अश्विनी नक्षत्र हो तो वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसलमें कमी रहती है। बाढ़ और अतिवृष्टिके कारण फसल नष्ट हो जाती है। माघ मासमें भी वृष्टिकी सूचना उक्त प्रकारके मेघकी स्थितिमें मिलती है। यदि आषाढ़ कृष्ण सप्तमीको रातमें एकाएक मेघ एकत्र हो जायँ तथा वर्षा न हो तो तीन दिनके पश्चात् अच्छी वर्षा होनेकी सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथिको प्रातःकाल ही मेघ एकत्रित हों तथा हल्की वर्षा हो रही हो तो आषाढ़ मासमें अच्छी वर्षा, श्रावणमें कमी और भाद्रपदमें वर्षाका अभाव तथा आश्विन मासमें छिट-पुट वर्षा समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि सोमवारको पड़े तो सूर्यकी मेघस्थिति जगतमें हाहाकार होनेकी सूचना देती है। अर्थात् मनुष्य और पशु सभी प्राणी कष्ट पाते हैं। आश्विन मासमें अनेक प्रकारकी बीमारियाँ भी व्याप्त होती हैं। आषाढ़ कृष्ण अष्टमीको प्रातःकाल सूर्योदय हो न हो अर्थात् सूर्य मेघाच्छन्न हो और मध्याह्नमें तेज धूप हो तो श्रावण मासमें वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। भरणी नक्षत्र हो तो इसका फलादेश अत्यन्त अनिष्टकर होता है। फसलमें अनेक प्रकारके रोग लग जाते हैं तथा व्यापारमें भी हानि होती है। आषाढ़ कृष्णा नवमीको पर्वताकार बादल दिखलाई पड़े तो शुभ, ध्वजा-घण्टा-पताकाके आकारमें बादल दिखलाई पड़े तो प्रचुर वर्षा और व्यापारमें लाभ होता है। यदि इस दिन बादलोंकी आकृति मांसभक्षी पशुओंके समान हो तो राष्ट्रके लिए भय होता है तथा आन्तरिक गृह कलहके साथ अन्य शत्रु राष्ट्रोंकी ओरसे भी भय होता है। यदि तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी आदि अस्त्रोंके रूपमें बादलोंकी आकृति उक्त तिथिको दिखलाई पड़े तो युद्धकी सूचना समझनी चाहिए। यदि आषाढ़ कृष्ण दशमीको उखड़े हुए वृक्षकी आकृतिके समान बादल दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव तथा राष्ट्रमें नाना प्रकारके उपद्रवोंकी सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ कृष्ण एकादशीको रुधिर वर्णके बादल आकाशमें आच्छादित हों तो आगामी वर्ष प्रजाको अनेक प्रकारका कष्ट होता है तथा खाद्य पदार्थोंकी कमी होती है। आषाढ़ कृष्ण द्वादशी और

त्रयोदशीको पूर्व दिशाकी ओरसे बादलोंका एकत्र होना दिखलाई पड़े तो फसलकी क्षति तथा वर्षाका अभाव और चतुर्दशीको गर्जन-तर्जनके साथ बादल आकाशमें व्याप्त हुए दिखलाई पड़ें तो श्रावणमें सूखा पड़ता है। आमावस्याको वर्षा होना शुभ है और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला प्रतिपदाको मेघोंका एकत्र होना शुभ, वर्षा होना सामान्य और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला द्वितीया और तृतीयाको पूर्वमें मेघोंका एकत्रित होना शुभ सूचक है।

सप्तमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सन्ध्यानां लक्षणं ततः[1] ।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथातत्त्वं निबोधत ॥१॥

सन्ध्याओंके लक्षणका निरूपण किया जाता है। ये सन्ध्याएँ दो प्रकारकी होती हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त। निमित्त शास्त्रके तत्त्वोंके अनुसार उनका फल अवगत करना चाहिए ॥१॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[2] यदा सन्ध्या विराजते ।
नागराणां जयं विन्द्यादस्तं गच्छति यायिनाम्[3] ॥२॥

सूर्योदयके समयकी सन्ध्या नगरोंको और सूर्यास्तके समयकी सन्ध्या यायीके लिए जय देनेवाली होती है ॥२॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[4] शुक्ला सन्ध्या यदा भवेत् ।
उत्तरेण गता[5] सौम्या ब्राह्मणानां जयं विदुः ॥३॥

सूर्योदयके समयकी सन्ध्या यदि श्वेतवर्णकी हो और वह उत्तर दिशामें हो तथा सौम्य हो तो ब्राह्मणोंके लिए जयदायक होती है ॥३॥

उद्गच्छमाने चाऽदित्ये रक्ता सन्ध्या यदा भवेत् ।
पूर्वेण च गता सौम्या क्षत्रियाणां जयावहा ॥४॥

सूर्योदयके समय लाल वर्णकी सन्ध्या हो और वह पूर्व दिशामें स्थित हो तथा सौम्य हो तो क्षत्रियोंको जय देनेवाली होती है ॥४॥

उद्गच्छमाने चाऽदित्ये पीता सन्ध्या यदा भवेत् ।
दक्षिणेन गता सौम्या वैश्यानां सा[6] जयावहा[7] ॥५॥

सूर्योदयके समय पीत वर्णकी सन्ध्या यदि हो और यह दक्षिण दिशाका आश्रय करे तथा सौम्य हो तो वैश्योंके लिए जयदायी होती है ॥५॥

उद्गच्छमाने चादित्ये कृष्णसन्ध्या यदा भवेत् ।
अपरेण गता सौम्या शूद्राणां च जयावहा[8] ॥६॥

सूर्योदयके समय कृष्णवर्णकी सन्ध्या यदि हो और वह पश्चिम दिशाका आश्रय करे तथा सौम्य हो तो शूद्रोंके लिए जयकारक होती है ॥६॥

सन्ध्योत्तरा जयं राज्ञः ततः कुर्यात् पराजयम्[9] ।
पूर्वा क्षेमं सुभिक्षं च पश्चिमा च[10] भयङ्करा ॥७॥

उत्तर दिशाकी सन्ध्या राजाके लिए जयसूचक है और दक्षिण दिशाकी सन्ध्या पराजय सूचक होती है। पूर्व दिशाकी सन्ध्या क्षेमकुशल सूचक और पश्चिम दिशाकी सन्ध्या भयङ्कर होती है ॥७॥

---

१. स्त्विह मु० C. । २. चादित्ये मु० । ३. जायिनाम् मु० C. । ४. चादित्ये मु० । ५. गतो मु० । ६. चा मु० C. । ७. यथावहा मु० B. जयंकराः मु० C. । ८. यथावहा मु० B. जयंकरा मु० C. । ९. कुर्यात् दक्षिणा च पराजयम् मु० । १०. तु मु० ।

आग्नेयी अग्निमाख्याति नैर्ऋती राष्ट्रनाशिनी ।
वायव्या प्रावृषं[1] हन्यात् ईशानी च शुभावहा ॥८॥

अग्निकोणकी सन्ध्या अग्निभय कारक, नैर्ऋत्य दिशाकी सन्ध्या देशका नाश करनेवाली, वायुकोणकी सन्ध्या वर्षाकी हानिकारक एवं ईशानकोणकी सन्ध्या शुभ होती है ॥८॥

एवं सम्पत्कराद्येषु[2] नक्षत्रेष्वपि निर्दिशेत् ।
जयं सा कुरुते सन्ध्या साधकेषु समुत्थिता ॥९॥

इसी प्रकार सम्पत्तिका लाभ आदि करानेवाले नक्षत्रोंमें भी निर्देश करना चाहिए, इस प्रकारकी सन्ध्या साधकको जयप्रदा होती है। तात्पर्य यह है कि साधक पुरुषको नक्षत्रोंमें भी शुभ सन्ध्याका दिखाई देना जयप्रद होता है ॥९॥

उदयास्तमनेऽर्कस्य यान्यभ्राण्यग्रतो भवेत् ।
सप्रभाणि सरश्मीनि तानि सन्ध्या विनिर्दिशेत् ॥१०॥

सूर्यके उदयास्तके समय बादलोंपर जो सूर्यकी प्रभा पड़ती है, उस प्रभासे बादलोंमें नाना प्रकारके वर्ण उत्पन्न हो जाते हैं, उसीका नाम सन्ध्या है ॥१०॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सौम्यानि विकृतानि[3] च ।
सर्वाणि तानि सन्ध्यायां[4] तथैव प्रतिवारयेत्[5] ॥११॥

अभ्र अध्यायमें जो उनके अच्छे और बुरे फल निरूपित किये गये हैं, उस सबको इन सन्ध्या अध्यायमें भी लागू कर लेना चाहिए ॥११॥

एवमस्तमने काले या सन्ध्या सर्व उच्यते ।
लक्षणं यत्[6] तु[7] सन्ध्यानां[8] शुभं[9] वा यदि [10]वाऽशुभम् ॥१२॥

उपर्युक्त सूर्योदयकी सन्ध्याके लक्षण और शुभाशुभ फलानुसार अस्तकालकी सन्ध्याका भी शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥१२॥

स्निग्धवर्णमती सन्ध्या वर्षदा सर्वशो भवेत् ।
[11]सर्वा वीथिगता वाऽपि सुनक्षत्रा[12] विशेषतः ॥१३॥

स्निग्ध वर्णकी सन्ध्या वर्षा देनेवाली होती है; वीथियोंमें प्राप्त और विशेषकर शुभ नक्षत्रों-वाली सन्ध्या वर्षाको करती हैं ॥१३॥

[13]पूर्वरात्रपरिवेषा[14] [15]सविद्युत्परिखायुता ।
सरश्मी[16] सर्वतः[17] सन्ध्या[18] सद्यो वर्षं प्रयच्छति ॥१४॥

पूर्व रात्रि—पिछली बीती हुई रात्रिको परिवेष हो और परिखायुक्त बिजली हो तथा सब ओर रश्मि सहित सन्ध्या हो तो तत्काल वर्षा होती है ॥१४॥

१. वर्षणं मु० । २. संयुक्त रागेषु मु० C. । ३. विनतानि मु० C. । ४. सा सन्ध्या मु० C० । ५. प्रतिचारयेत् मु० । ६.-७.-८. उदये चापि मु० C. । ९. स्थावराणां शुभाऽशुभम् मु० C. । १०. च मु० । ११. सर्वं मु० C. । १२. नक्षत्राणि मु० । १३. सर्वरात्रि मु० । १४. सपरिवेषा मु० C. । १५. सविद्युता मु० A. । १६. सुरश्मि मु० C. । १७. सर्वशः मु० । १८. सर्वसन्ध्यायां मु० C. ।

प्रतिसूर्यागमस्तत्र शक्रचापरजस्तथा[1] ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते सद्यो वर्षं प्रयच्छति ॥१५॥

प्रतिसूर्यका आगमन हो, वहाँ पर इन्द्रधनुष रजोयुक्त सन्ध्यामें दिखलाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥१५॥

सन्ध्यायामेकरश्मिस्तु यदा सृजति भास्करः ।
उदितोऽस्तमितो चापि विन्द्याद् वर्षमुपस्थितम् ॥१६॥

सन्ध्यामें सूर्य उदय या अस्तके समयमें एक रश्मिवाला दिखलाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥१६॥

आदित्यपरिवेषस्तु सन्ध्यायां यदि दृश्यते ।
वर्षं महद् विजानीयाद् भयं वाऽथ[2] प्रवर्षणे[3] ॥१७॥

सन्ध्यामें सूर्यके परिवेष दिखलाई दें तो भारी वर्षा होती है अथवा भय होता है। तात्पर्य यह है कि सन्ध्याकालमें सूर्यका परिवेष दिखलाई देना शुभ नहीं माना जाता है। इसका फलादेश अच्छा नहीं होता। वर्षा भी होती है तो अधिक होती है जिससे मनुष्य और पशुओंको कष्ट ही होता है ॥१७॥

त्रिमण्डलपरिक्षिप्तो यदि वा[4] पञ्चमण्डलः ।
सन्ध्यायां दृश्यते सूर्यो महावर्षस्य[5] सम्भवः ॥१८॥

यदि सूर्य सन्ध्यामें तीन मंडल अथवा पाँच मंडलसे घिरा हुआ दिखाई दे तो महा वर्षाका होना संभव होता है ॥१८॥

द्योतयन्ती दिशः सर्वा यदा सन्ध्या प्रदृश्यते ।
महामेघस्तदा[6] विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥१९॥

सब सन्ध्याओंमें प्रकाशमान झलझलाहट युक्त सन्ध्या दिखाई दे तो बड़ी भारी वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहुका वचन है ॥१९॥

सरस्तडागप्रतिमाकूपकुम्भनिभा च या ।
यदा पश्यति[7] सुस्निग्धा सा सन्ध्या वर्षदा स्मृता[8] ॥२०॥

सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप और कुम्भ सदृश स्निग्ध सन्ध्या यदि दिखाई दे तो वर्षा होगी, ऐसा जानना चाहिए ॥२०॥

धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा खण्डपापसमा यदा ।
या सन्ध्या दृश्यते नित्यं सा तु राज्ञो भयङ्करा ॥२१॥

धूम्र वर्णवाली, छिद्रयुक्त, खण्डरूप सन्ध्या यदि नील दिखाई दे तो वह राजाको भयकारक है ॥२१॥

१. सध्रुवं मु० । २.-३. चाऽवर्षणे पुन. मु० A. । ४. अथवा मु० । ५. महावृष्टस्य मु० । ६. महामेघं मु० । ७. दृश्यति मु० । ८. शिवा मु० C. ।

द्विपदाश्चतुष्पदाः क्रूराः पक्षिणश्च[1] भयङ्कराः ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥२२॥

क्रूर स्वभाववाले द्विपद, चतुष्पद और पक्षीगणके सदृश बादल यदि सन्ध्याकालमें दिखलाई दे तो भय उपस्थित होता है ॥२२॥

अनावृष्टिभयं रोगं दुर्भिक्षं राजविद्रवम् ।
रूक्षायां विकृतायां च [2]सन्ध्याममभिनिर्दिशेत् ॥२३॥

सन्ध्यामें बादल रूक्ष और विकृतरूप दिखाई दें तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष और राजाका उपद्रव होता है ॥२३॥

विंशतिर्योजनानि स्युर्विद्युद्भाति च सुप्रभा ।
ततोऽधिकं तु स्तनितं[3] अभ्रं यत्रैव दृश्यते ॥२४॥

पञ्चयोजनिका सन्ध्या वायुवर्षं च दूरतः ।
त्रिरात्रं[4] सप्तरात्रं[5] च सद्यो वा पाकमादिशेत् ॥२५॥

बिजलीकी प्रभा बीस योजन—८० कोश परसे दिखाई दे तथा इससे भी अधिक दूरीसे बादल दिखलाई दें तो वायु और वर्षा भी इतने ही योजनकी दूरी तक दिखलाई देती हैं। यदि सन्ध्या पाँच योजन—बीस कोशसे दिखलाई दे तो वायु और वर्षा भी इतनी ही दूरीसे दिखलाई पड़ती है। उपर्युक्त चिह्नोंका फल तीन या सात रात्रिमें मिलता है। तात्पर्य यह है कि जब बीस कोशकी दूरीसे सन्ध्या और अस्सी कोशकी दूरीसे विद्युत्प्रभा और अभ्र-बादल दिखलाई देते हैं, तब वर्षा भी उस स्थानके चारों ओर अस्सी कोश या बीस कोशकी दूरीमें बरसती है। यह फलादेश तीन या सात दिनोंमें प्राप्त होता है ॥२४-२५॥

उल्कावत् साधनं सर्वं सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघानां तन्निबोधत ॥२६॥

उल्का अध्यायके समान सन्ध्याके सब लक्षण और फल समझना चाहिए। जिस प्रकार अशुभ और दुर्भाग्य आकृतिवाली उल्काएँ देश, समाज, व्यक्ति और राष्ट्रके लिए हानिकारक समझी जाती है, उसी प्रकार सन्ध्याएँ भी। अब आगे मेघका फल और लक्षण निरूपित किया जाता है, उसे अवगत करना चाहिए ॥२६॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते सन्ध्यालक्षणं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

---

१. पक्षिणस्तु मु० । २. सन्ध्यायां विनिर्दिशेत्, मु० । ३. स्वनितम् मु० । ४. त्रिरात्रां मु० । ५. सप्तरात्रां मु० ।

विशेष नोट—मुद्रित प्रतिमें श्लोक-संख्या २२, २३ में व्यतिक्रम मिलता है ।

विवेचन—प्रतिदिन सूर्यके अर्धास्त हो जानेके समयसे जब तक आकाशमें नक्षत्र भली भाँति दिखाई न दें तब तक सन्ध्या काल रहता है, इसी प्रकार अर्धोदित सूर्यसे पहले तारा दर्शन तक सन्ध्याकाल माना जाता है। सन्ध्या समय बार-बार ऊँचा भयंकर शब्द करता हुआ मृग ग्रामके नष्ट होनेकी सूचना करता है। सेनाके दक्षिण भागमें स्थित मृग सूर्यके सम्मुख महान् शब्द करें तो सेनाका नाश समझना चाहिए। यदि पूर्वमें प्रातः सन्ध्याके समय सूर्यकी ओर मुख करके मृग और पक्षियोंके शब्दसे युक्त सन्ध्या दिखलाई पड़े तो देशके नाशकी सूचना मिलती है। दक्षिण दिशामें स्थित मृग सूर्यकी ओर मुख करके शब्द करें तो शत्रुओं द्वारा नगर ग्रहण किया जाता है। गृह, वृक्ष, तोरण मथन और धूलिके साथ मिट्टीके ढेलोंको भी उड़ानेवाला पवन प्रबल वेग और भयंकर रूखे शब्दसे पक्षियोंको आक्रान्त करें तो अशुभकारी सन्ध्या होती है। सन्ध्याकालमें मन्द पवनके प्रवाहसे हिलते हुए पलाश अथवा मधुर शब्द करते हुए विहङ्ग और मृग निनाद करते हों तो सन्ध्या पूज्य होती है। सन्ध्याकालमें दण्ड, तडित, मत्स्य, मंडल, परिवेष, इन्द्रधनुष, ऐरावत और सूर्यकी किरणें इन सबका स्निग्ध होना शीघ्र ही वर्षाको लाता है। टूटी-फूटी, क्षीण, विध्वस्त, विकराल, कुटिल, बाईं ओरको झुकी हुई छोटी-छोटी और मलिन सूर्य किरणें सन्ध्याकालमें हों तो उपद्रव या युद्ध होनेकी सूचना समझनी चाहिए। उक्त प्रकारकी सन्ध्या वर्षावरोधक होती है। अन्धकारविहीन आकाशमें सूर्यकी किरणोंका निर्मल, प्रसन्न, सीधा और प्रदक्षिणके आकारमें भ्रमण करना संसारके मंगलका कारण है। यदि सूर्यरश्मियाँ आदि, मध्य और अन्तगामी होकर चिकनी, सरल, अखण्डित और श्वेत हों तो वर्षा होती है। कृष्ण, पीत, कपिश, रक्त, हरित आदि विभिन्न वर्णोंकी किरणें आकाशमें व्याप्त हो जायँ तो अच्छी वर्षा होती है तथा एक सप्ताह तक भय भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय सूर्यकी किरणें ताम्र रंगकी हों तो सेनापतिकी मृत्यु, पीले और लाल रंगके समान हों तो सेनापतिको दुःख, हरे रंगकी होनेसे पशु और धान्यका नाश, धूम्रवर्णकी होनेसे गायोंका नाश, मंजीठके समान आभा और रंगदार होनेसे शस्त्र व अग्निभय, पीत हों तो पवनके साथ वर्षा, भस्मके समान होनेसे अनावृष्टि और मिश्रित एवं कल्माष रंग होनेसे वृष्टिका क्षीणभाव होता है। सन्ध्याकालीन धूल दुपहरियाके फूल और अंजनके चूर्णके समान काली होकर जब सूर्यके सामने आती है, तब मनुष्य सैकड़ों प्रकारके रोगोंसे पीड़ित होता है। यदि सन्ध्याकालमें सूर्यकी किरणें श्वेत रंगकी हों तो मानवका अभ्युदय और उसकी शान्ति सूचित होती है। यदि सूर्यकी किरणें सन्ध्या समय जल और पवनसे मिलकर दण्डके समान हो जायँ, तो यह दण्ड कहलाता है। जब यह दण्ड विदिशाओंमें स्थित होता है तो राजाओंके लिए और जब दिशाओंमें स्थित होता है तो द्विजातियोंके लिए अनिष्टकारी है। दिन निकलनेसे पहले और मध्य सन्धिमें जो दण्ड दिखलाई दे तो शस्त्रभय और रोगभय करनेवाला होता है, शुक्लादि वर्णका हो तो ब्राह्मणोंको कष्टकारक, भयदायक और अर्थविनाश करनेवाला होता है।

आकाशमें सूर्यके ढकनेवाले दहीके समान किनारेदार नीले मेघको अभ्रतरु कहते हैं। यह पीले रंगका मेघ यदि नीचेकी ओर मुख किये हुए मालूम पड़े तो अधिक वर्षा करता है। अभ्रतरु शत्रुके ऊपर आक्रमण करनेवाले राजाके पीछे-पीछे चलकर अकस्मात् शान्त हो जाय तो युवराज और मन्त्रीका नाश होता है।

नील कमल, वैडूर्य और पद्मकेसरके समान कान्तियुक्त, वायुरहित सूर्यकी किरणोंको प्रकाशित करे तो घोर वर्षा होती है। इस प्रकारकी सन्ध्याका फल तीन दिनोंमें प्राप्त हो जाता है। यदि सन्ध्याके समय गन्धर्वनगर, कुहासा और धूम छाये हुए दिखलाई पड़े तो वर्षाकी कमी होती है। सन्ध्याकालमें शस्त्र धारण किये हुए नर रूपधारीके समान मेघ सूर्यके सम्मुख छिन्न-

भिन्न हों तो शत्रुभय होता है। शुक्लवर्ण और शुक्ल किनारेवाले मेघ सन्ध्या समयमें सूर्यको आच्छादित करें तो वर्षा होनेका योग समझना चाहिए। सूर्यके उदयकालमें शुक्ल वर्णकी परिधि दिखलाई दे तो राजाको विपद् होती है, रक्तवर्णसे सेनाको और कनकवर्णकी हो तो बल और पुरुषार्थकी वृद्धि होती है। यदि प्रातःकालीन सन्ध्याके समय सूर्यके दोनों ओरकी परिधि, यदि शरीरवाली हो जाय तो बहुत सा जल बरसता है और सब परिधि दिशाओंको घेर ले तो जलका कण भी नहीं बरसता। सन्ध्या कालमें मेघ, ध्वज, छत्र, पर्वत, हस्ती और घोड़ेका रूप धारण करें तो जयका कारण हैं और रक्तके समान लाल हों तो युद्धका कारण होते हैं। पलालके धुएँके समान स्निग्ध मूर्तिधारी मेघ राजा लोगोंके बलको बढ़ाते हैं। सन्ध्याकालमें सूर्यका प्रकाश तीक्ष्ण आकार हो या नीचेकी ओर झुके आकारका हो तो मंगल होता है। सूर्यके सम्मुख होकर पक्षी, गीदड़ और मृग सन्ध्याकालमें शब्द करें तो सुभिक्षका नाश होता है, प्रजामें आपसमें संघर्ष होता है और अनेक प्रकारसे देशमें कलह एवं उपद्रव होते हैं।

यदि सूर्योदयकालमें दिशाएँ पीत, हरित और चित्र-विचित्र वर्णकी मालूम हों तो सात दिनमें प्रजामें भयंकर रोग, नील वर्णकी मालूम हो तो समय पर वर्षा और कृष्ण वर्णकी मालूम हो तो बालकोंमें रोग फैलता है। यदि सायंकालीन सन्ध्याके समय दक्षिण दिशासे मेघ आते हुए दिखलाई पड़ें तो आठ दिनों तक वर्षाभाव, पश्चिम दिशासे आते हुए मालूम पड़ें तो पाँच दिनोंका वर्षाभाव, उत्तर दिशासे आते हुए मालूम पड़ें तो खूब वर्षा और पूर्व दिशासे आते हुए मेघ गर्जन सहित दिखलाई पड़ें तो आठ दिनों तक घनघोर वर्षा होने की सूचना मिलती है। प्रातःकालीन और सायंकालीन सन्ध्याओंके वर्ण एक समान हों तो एक महीने तक मसाला और तिलहनका भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदीका भाव महँगा तथा वर्ण परिवर्तन हो तो सभी प्रकारकी वस्तुओंके भाव नीचे गिर जाते हैं।

ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदाको प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेतवर्णकी हो तो आषाढ़में श्रेष्ठ वर्षा, लाल वर्णकी हो तो आषाढ़में वर्षाका अभाव और श्रावणमें स्वल्प वर्षा, पीतवर्णकी हो तो भी आषाढ़ में समयोचित वर्षा एवं विचित्र वर्णकी हो तो आगामी वर्षा ऋतुमें सामान्य रूपसे अच्छी वर्षा होती है। उक्त तिथिको सायंकालीन सन्ध्या श्वेत या रक्त वर्णकी हो तो सात दिनके उपरान्त वर्षा एवं मिश्रित वर्णकी हो तो वर्षा ऋतुमें अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीयाको प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्णकी हो तो वर्षा ऋतुमें अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीयाको प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्णकी हो और पूर्व दिशासे बादल घुमड़कर एकत्र होते हुए दिखलाई पड़ें तो आषाढ़में वर्षाका अभाव और वर्षा ऋतुमें भी अल्प वर्षा तथा सायंकालीन सन्ध्या में बादलोंकी गर्जना सुनाई पड़े या बूँदा-बूँदी हो तो घोर दुर्भिक्षका अनुमान करना चाहिए। उक्त प्रकारकी सन्ध्याएँ व्यापारमें लाभ सूचित करती हैं। सट्टेके व्यापारियोंके लिए उत्तम फल देती हैं। वस्तुओंके भाव प्रतिदिन ऊँचे उठते जाते हैं। सभी चिकने पदार्थ और तिलहन आदि पदार्थोंका भाव कुछ सस्ता होता है। उक्त सन्ध्याका फल एक महीने तक प्राप्त होता है। यह सन्ध्या जनतामें रोगकी उत्पन्नकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण तृतीयाका क्षय हो और इस दिन चतुर्थी पंचमी तिथिसे विद्ध हो तो उक्त तिथिकी प्रातःकालीन सन्ध्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। यदि इस प्रकारकी सन्ध्यामें अर्धोदयके समय सूर्यके चारो ओर नीलवर्णका मंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो माघ और फाल्गुन मासमें भूकम्प होनेकी सूचना समझनी चाहिए। इन दोनों महीनोंमें भूकम्पके साथ और भी प्रकारकी अनिष्ट घटनाएँ घटित होती हैं। अनेक स्थानोंपर जनतामें संघर्ष होता है, गोलियाँ चलती हैं और रेल या विमान दुर्घटनाएँ भी घटित होती हैं। आकाशमें ओले बरसते हैं तथा किसी प्रसिद्ध व्यक्तिकी मृत्यु दुर्घटना द्वारा होती है।

एक बार राज्यमें क्रान्ति होती है तथा ऐसा लगता है कि राज्य-परिवर्तन ही होनेवाला है। चैत्र में जाकर जनतामें आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है तथा सभी लोग प्रेम और श्रद्धाके साथ कार्य करते हैं। यदि उक्त प्रकारकी सन्ध्याका वर्ण रक्त और श्वेत मिश्रित हो तो यह सन्ध्या सुकाल तथा समयानुकूल वर्षा और अमन चैनकी सूचना देती है। यदि उक्त प्रकारकी सन्ध्याको उत्तर दिशासे सुमेरु पर्वतके आकारके बादल उठें और वे सूर्यको आच्छादित कर लें तो विश्वमें शान्ति समझनी चाहिए। सायंकालीन सन्ध्या यदि उस दिन हँसमुख मालूम पड़े तो आषाढ़में खूब वर्षा और रोती हुई मालूम पड़े तो वर्षाभाव जानना चाहिए।

ज्येष्ठ कृष्णा षष्ठीको आश्लेषा नक्षत्र हो और सायंकालीन सन्ध्या रक्तवर्ण भास्वर रूप हो तो आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होनेकी सूचना समझनी चाहिए। इस सन्ध्याके दर्शक मीन, कर्क और मकर राशिवाले व्यक्तियोंको कष्ट होता है और अवशेष राशिवाले व्यक्तियोंका वर्ष आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है। प्रातःकालीन सन्ध्या इस तिथिकी रक्त, श्वेत और पीत वर्णकी उत्तम मानी गई है और अवशेष वर्णकी सन्ध्या हानिकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण सप्तमीको उदयकालीन सन्ध्यामें सिंह आकृतिके बादल दिखलाई पड़ें तो वर्षाभाव और निरभ्र आकाश हो तो यथोचित वर्षा तथा श्रेष्ठ फसल उत्पन्न होती है। सायं सन्ध्यामें अग्निकोणकी ओर रक्त वर्णके बादल तथा उत्तर दिशामें श्वेतवर्णके बादल सूर्यको आच्छादित कर रहे हों तो इसका फल देशके पूर्व भागमें यथोचित जलवृष्टि और पश्चिम भागमें वर्षाकी कमी तथा सुवर्ण, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, पद्मराग, गोमेद आदि रत्नोंकी कीमत तीन दिनोंके पश्चात् ही बढ़ती है। वस्त्र और खाद्यान्नका भाव कुछ नीचे गिरता है। ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमीको भी प्रातःसन्ध्या निरभ्र और निर्मल हो तो आषाढ़ कृष्ण पक्षमें वर्षा होती है। यदि यह सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो वर्षा-भाव रहता है तथा आषाढ़का महीना प्रायः सूखा निकल जाता है। उक्त तिथिको सायं सन्ध्या-मिश्रित वर्ण हो तो फसल उत्तम होती है तथा व्यापारमें लाभ होता है। ज्येष्ठकृष्णा नवमीकी प्रातःसन्ध्या रक्तके समान लालवर्णकी हो तो घोर दुर्भिक्षकी सूचक तथा सेनामें विद्रोह करानेवाली होती है। सायंकालीन सन्ध्या उक्त तिथिको श्वेतवर्णकी हो तो सुभिक्ष और सुकालकी सूचना देती है। यदि उक्त तिथिको विशाखा या शतभिषा नक्षत्र हो तथा उस तिथिका क्षय हो तो इस सन्ध्याकी महत्ता फलादेशके लिए अधिक बढ़ जाती है। क्योंकि इसके रंग, आकृति और सौम्य या दुर्भग रूप द्वारा अनेक प्रकारके स्वभाव-गुणानुसार फलादेश निरूपित किये गये हैं। यदि ज्येष्ठ कृष्ण दशमीकी प्रातःकालीन सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ़में खूब वर्षा एवं श्रावणमें साधारण वर्षा होती है। सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो सुभिक्षकी सूचना देती है। ज्येष्ठकृष्णा एकादशीको प्रातःसन्ध्या धूम्र वर्णकी मालूम हो तो भय, चिन्ता और अनेक प्रकारके रोगोंकी सूचना समझनी चाहिए। इस तिथिकी सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ़में वर्षाकी सूचना समझ लेनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशीकी प्रातःसन्ध्या भास्वर हो और सायं सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो सुभिक्षकी सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशीको प्रातः सन्ध्या निरभ्र हो तथा सायं सन्ध्याकालमें परिवेष दिखलाई पड़े तो श्रावणमें वर्षा, भाद्रपदमें जलकी कमी एवं वर्षा ऋतुमें खाद्यान्नोंकी महँगी समझ लेनी चाहिए। यदि ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशीकी सन्ध्याएँ परिघ या परिधिसे युक्त हों तथा सूर्यका त्रिमंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो महान अनिष्टकी सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा अमावास्या और शुक्ला प्रतिपदा इन दोनों तिथियोंकी दोनों ही सन्ध्याएँ छिद्र युक्त विकृत आकृतिवाली और परिवेष या परिघ युक्त दिखलाई दें तो वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही होती है। इस प्रकारकी सन्ध्या तिलहन, गुड़ और वस्त्रकी विशेष उपजकी सूचना देती है। ज्येष्ठ मासकी अवशेष तिथियोंकी सन्ध्याके वर्ण-आकृतिके अनुसार फलादेश अवगत करना चाहिए।

आषाढ़ मासमें कृष्णप्रतिपदा की सन्ध्या विशेष महत्वपूर्ण है। इस दिन दोनों ही सन्ध्या स्वच्छ, निरभ्र और सौम्य दिखलाई पड़ें तो सुभिक्ष नियमतः होता है। नागरिकोंमें शान्ति और सुख व्याप्त होता है। यदि इस दिनकी किसी भी सन्ध्यामें इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो आपसी उपद्रवोंकी सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ मासकी अवशेष तिथियोंकी सन्ध्याका फल पूर्वोक्त प्रकारसे ही समझना चाहिए। स्वच्छ, सौम्य और श्वेत, रक्त, पीत और नीलवर्णकी सन्ध्या अच्छा फल सूचित करती है और मलिन, विकृत आकृति तथा छिद्र युक्त सन्ध्या अनिष्ट फल सूचित करती है।

अष्टमोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघानामपि लक्षणम् ।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः ॥१॥

सन्ध्याका लक्षण और फल निरूपण करनेके उपरान्त अब मेघोंके लक्षण और फलका प्रतिपादन करते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त—शुभ और अप्रशस्त—अशुभ ॥१॥

यदाञ्जननिभो मेघः[1] शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि तदा विन्द्याद् जलं शुभम् ॥२॥

यदि अंजनके समान गहरे काले मेघ पश्चिम दिशामें दिखलाई पड़ें और ये चिकने तथा मन्द गतिवाले हों तो बहुत जलकी वर्षा होती है ॥२॥

[2]पीतपुष्पनिभो यस्तु यदा मेघः समुत्थितः ।
शान्तायां यदि दृश्येत स्निग्धो वर्षं तदुच्यते ॥३॥

पीले पुष्पके समान स्निग्ध मेघ पश्चिम दिशामें स्थित हों तो जलकी वृष्टि तत्काल कराते हैं। इस प्रकारके मेघ वर्षाके कारण माने जाते हैं ॥३॥

रक्तवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।
स्निग्धो मन्तगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥४॥

लाल वर्णके मेघ स्निग्ध और मन्दगतिवाले पश्चिम दिशामें दिखलाई दें तो बहुत जलकी वर्षा होती है ॥४॥

शुक्लवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते ।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि निवृत्तः[3] स जलावहः[4] ॥५॥

श्वेत वर्णके स्निग्ध और मन्द गतिवाले मेघ पश्चिम दिशामें दिखलाई दें तो जितना जल उनमें रहता है उतनी वर्षा करके वे निवृत्त हो जाते हैं ॥५॥

स्निग्धाः सर्वेषु वर्णेषु स्वां दिशं संसृता यदा ।
[5]स्ववर्णविजयं कुर्युर्दिक्षु शान्तासु ये स्थिताः ॥६॥

यदि पश्चिम दिशामें स्थित मेघ स्निग्ध हों तो सब वर्णोंको विजय करते हैं और अपने-अपने वर्णके अनुसार अपनी-अपनी दिशामें स्निग्ध मेघ स्थित हों तो वर्णके अनुसार जय करते हैं ॥ ६॥

जाति	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
जाति वर्ण	श्वेत	रक्त	पीत	कृष्ण
जाति दिशा	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम

१. देवः मु० । २. ३ और ४ संख्या वाले श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं हैं । ३. विज्ञेयः मु० C. । ४. जयावहः मु० C. । ५. सवर्णं मु० ।

यथास्थितं शुभं [1]मेघमनुपश्यन्ति[2] पक्षिणः[3] ।
जलाशया जलधरास्तदा विन्द्याज्जलं शुभम्[4] ॥७॥

यदि शुभ मेघ पक्षिगण और जलाशय रूप दिखलाई दें तो अच्छी वर्षा होती है और यह वर्षा फसलको अधिक लाभ पहुँचाती है ॥७॥

स्निग्धवर्णाश्च ते(ये) मेघा स्निग्धनादाश्च ते(ये)सदा ।
मन्दगाः सुमुहूर्ताश्च ये(ते) सर्वत्र जलावहाः ॥८॥

यदि स्निग्ध—सौम्य, मृदुल शब्दवाले, मन्द गतिवाले और उत्तम मुहूर्तवाले मेघ दिखाई पड़ें तो सर्वत्र जलकी वर्षा होती है ॥८॥

सुगन्धगन्धा ये मेघाः सुस्वराः[5] स्वादुसंस्थिताः ।
मधुरोदकाश्च[6] ये मेघा[7] जलाय[8] जलदास्तथा ॥९॥

सुगन्ध—केशर और कस्तूरीके समान गन्धवाले, मनोहर गर्जनवाले, स्वादु रसवाले, मीठे जलवाले मेघ समुचित जलकी वर्षा करते हैं ॥९॥

मेघा[9] यदाऽभिवर्षन्ति प्रयाणे पृथिवीपतेः ।
मधुरा[10] मधुरेणैव[11] तदा सन्धिर्भविष्यति ॥१०॥

राजाके आक्रमणके समय मनोहर और मधुर शब्दवाले मेघ वर्षा करें तो युद्ध न होकर परस्पर सन्धि हो जाती है ॥१०॥

पृष्ठतो वर्षतः श्रेष्ठं[12] अग्रतो विजयङ्करम् ।
मेघाः कुर्वन्ति ये दूरे सगर्जित-सविद्युतः ॥११॥

राजाके प्रयाणके समय यदि मेघ दूरी पर गर्जना और बिजली सहित वृष्टि करें और पृष्ठ भाग पर हों तो श्रेष्ठ जानना चाहिए और अग्रभाग पर हों तो विजयप्रद समझना चाहिए ॥११॥

मेघशब्देन महता यदा निर्याति पार्थिवः ।
पृष्ठतो गर्जमानेन[13] तदा जयति दुर्जयम् ॥१२॥

यदि राजाके प्रयाणके समय पीछेके मार्गसे मेघ बड़ी गर्जना करें तो दुर्जय शत्रुको विजय भी संभव हो जाती है ॥१२॥

मेघशब्देन महता यदा तिर्यग् प्रधावति ।
न तत्र जायते सिद्धिरुभयोः[14] परिसैन्ययोः[15] ॥१३॥

यदि आक्रमण कालमें मेघ सम्मुख या पृष्ठ भागमें गर्जना न कर तिर्यक् बायें या दायें भागमें गर्जना करें तो यायी और स्थायी इन दोनों ही सेनाओंको सिद्धि प्राप्त नहीं होती अर्थात् दोनों ही सेनाएँ परस्परमें भिडन्त करती हुई असफल रहती हैं ॥१३॥

१. अभ्र मु० C. । २ पश्यति मु० C. । ३. दक्षिणः मु० C. । ४. शिवम् मु० । ५. सुस्वरा मु० A. सुस्विनाः मु० C. । ६. मधुरतोया मु० C । ७. ज्ञेया मु० C । ८. जलदा मु० C. । ९. सद्यो मु० A. । १० मधुरान् । ११. सुस्वरानेव । १२. श्रेष्ठं मु० A. मेघ मु० C. । १३. गर्जमान मु० A. तद्वा । १४. युद्धमुभयोः मु० । १५. परिसैन्ययोः मु० ।

मेघा यत्राभिवर्षन्ति स्कन्धावार[1]समन्ततः ।
सनायका[2] विद्रवते[3] सा [4]चमूर्नात्र संशयः ॥१४॥

मेघ जिस स्थानपर मूसलाधार पानी वर्षावें वहाँ पर नायक और सेना दोनों ही रक्तरंजित होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं हैं ॥१४॥

रूक्षा वाताः प्रकुर्वन्ति व्याधयो विष्टगन्धितः ।
कुशब्दाश्च विवर्णाश्च मेघो वर्षं न कुर्वते ॥१५॥

रूक्ष वायु विष्टा गन्धके समान गन्धवाली बहती हो तो व्याधि उत्पन्न करती है। कुशब्द-कठोर शब्द और विकृत वर्णवाली हो तो मेघ जलकी वर्षा नहीं करते ॥१५॥

सिंहा[5] शृगालमार्जारा व्याघ्रमेघाः [6]द्रवन्ति ये[7] ।
महता भीम[8]शब्देन रुधिरं वर्षन्ति ते घनाः ॥१६॥

जो मेघ सिंह, सियार, बिल्ली, चीताकी आकृतिवाला होकर बरसें और भारी कठोर गर्जना करें तो इस प्रकारके मेघोंका फल रुधिरकी वर्षा करना है ॥१६॥

पक्षिणश्चापि क्रव्यादा वा पश्यन्ति[9] समुत्थिताः ।
मेघास्तदाऽपि रुधिरं[10] [11]वर्षं वर्षन्ति ते घनाः ॥१७॥

यदि मांसभक्षी पक्षियों—गृद्ध आदि पक्षियोंकी आकृतिवाले मेघ तथा उड़ते हुए पक्षियोंकी आकृतिवाले मेघ दिखलाई पड़ें तो वे रुधिरकी वर्षा करते हैं ॥१७॥

अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं मरणं[12] तथा ।
निवेदयन्ति ते मेघा ये भवन्तीदृशा[13] दिवि[14] ॥१८॥

उपर्युक्त अशुभ आकृतिवाले मेघ अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, मृत्यु आदि फलोंको करनेवाले होते हैं। अर्थात् मांसभक्षी पशु और मांसभक्षी पक्षियोंकी आकृतिवाले मेघ अत्यन्त अशुभ सूचक होते हैं ॥१८॥

तिथौ [15]मुहूर्त्तकरणे नक्षत्रे शकुने[16] शुभे[17] ।
सम्भवन्ति यदा मेघाः पापदास्ते भयङ्कराः ॥१९॥

अशुभ तिथि, मुहूर्त, करण, नक्षत्र और शकुनमें यदि मेघ आकाशमें आच्छादित हों तो भयंकर पापका फल देनेवाले होते हैं ॥१९॥

एवं लक्षणसंयुक्ताश्चमूं वर्षन्ति ये घनाः ।
चमूं सनायकां सर्वां हन्तुमाख्यान्ति सर्वशः ॥२०॥

यदि उपर्युक्त आकृति और लक्षणवाले मेघ युद्धस्थलमें स्थित सेनापर बहुत वर्षा करें तो सेना और उसके नायक सभी मारे जाते हैं ॥२०॥

---

१. न्धासारे मु० A. । २. काऽपि मु० C. । ३. दृश्यम् मु० C. । ४. चमूं मु० C. । ५. सिंघ मु० A. । ६. स्वन्ति मु० A । ७. यत् मु० A. । ८. मेघ मु० A. B. D. । ९. परयन्तेः मु० B. वारयन्ते मु० C. वारयन्ते मु० D. । १०. रुधिरं मु० B. । ११. वर्षन्ते तत्र दर्शने मु० । १२. मरई मु० A. । १३. भवन्ति दृशा मु० B. D. । १४. भुवि मु० A । १५. मुहूर्ते मु० A. D. । १६. करणे मु० C. । १७. तथा मु० A. ।

रक्तः पांशुः सधूमं वा चौद्रं[1] केशाऽस्थिशर्करा:[2] ।
मेघाः वर्षन्ति विषये यस्य राज्ञो हतस्तु सः ॥२१॥

धूलि, धूम्र, मधु, केश, अस्थि और खांडके समान लालवर्णके मेघ वर्षा करें तो देशका राजा मारा जाता है ॥२१॥

क्षारं वा कटुकं वाऽथ [3]दुर्गन्धं सस्यनाशनम्[4] ।
यस्मिन् देशेऽभिवर्षन्ति मेघा[5] देशो विनश्यति[6] ॥२२॥

जिस देशमें धान्यको नाश करनेवाले क्षार—लवणयुक्तरस, कटुक—चरपरा रस और दुर्गन्धित रसकी मेघ वर्षा करें तो उस देशका नाश होता है ॥२२॥

प्रयातं[7] पार्थिवं यत्र मेघो वित्रास्य वर्षति ।
वित्रस्यो बध्यते राजा विपरीतस्तदाऽपरे ॥२३॥

राजाके प्रयाणके समय त्रासयुक्त मेघ बरसे तो राजाका त्रासयुक्त वध होता है। यदि त्रास युक्त वर्षा न हो तो ऐसा नहीं होता ॥ २३ ॥

सर्वत्र[8] च प्रयाणेन नृपो येनाभिषिच्यते ।
रुधिरादि[9] विशेषेण सर्वघाताय निर्दिशेत् ॥२४॥

राजाके आक्रमणके समय वर्षासे देशका सिंचन हो तो सबोंके घातकी संभावना समझनी चाहिए ॥२४॥

मेघाः सविद्युतश्चैव[10] सुगन्धाः सुस्वराश्च[11] ये ।
सुवेषाश्च[12] सुवाताश्च[13] सुधियाश्च सुभिक्षदाः ॥२५॥

बिजली सहित, सुगन्धित, मधुर स्वरवाले, सुन्दर वर्ण और आकृतिवाले शुभ घोषणावाले और अमृत समान वर्षा करनेवाले मेघोंको सुभिक्षका सूचक समझना चाहिए ॥२५॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सन्ध्यायामपि यानि च ।
मेघेषु[14] तानि सर्वाणि समासव्यासतो विदुः ॥२६॥

बादल, उल्का और सन्ध्याका जैसा निरूपण किया गया है, उसी प्रकारका संक्षेप और विस्तारसे मेघोंका भी समझना चाहिए ॥२६॥

उल्कावत् साधनं[15] ज्ञेयं मेघेष्वपि[16] तदादिशेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि[17] वातानामपि लक्षणम् ॥२७॥

इस मेघवर्णन अध्यायका भी उल्काकी तरह ही फलादेश अवगत कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् अब वायु अध्यायका निरूपण किया जायगा ॥ २७ ॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते मेघकाण्डं नामाष्टमोऽध्यायः ॥

---

१. रौद्रं मु० B. । २. स्तर्करा मु० B. । ३. दूरं मु० B. । ४. यस्या मु० A. । ५. मेघादेशे । ६. विनश्यन्ति मु० C. । ७. प्रयान्तं मु० । ८. नृप सरुधिराज्यं च मु० A. B. D. । ६. सौक्या मु० C. । १०. सुरभा मु० C. । ११. अवेषा मु० C. । १२. सुवेषा मु० C. । . । १३. सुधि पाश्च मु० B. सुधाया मु० D. स्वसना मु० C. । १४. अमेघे मु० C. । १५. सर्वं मु० C. । १६. समा मु० C. । १७. वात० मु० B.D. ।

विवेचन—मेघोंकी आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा प्रभृतिके द्वारा शुभाशुभ फलका निरूपण मेघ अध्यायमें किया गया है। यहाँ एक विशेष बात यह है कि मेघ जिस स्थानमें दिखलाई पड़ते हैं उसी स्थानपर यह फल विशेषरूपसे घटित होता है। इस अध्यायका महत्त्व भी वर्षा, सुकाल, फसलकी उत्पत्ति इत्यादिके सम्बन्धमें ही विशेषरूपसे फल बतलाना है। यों तो पहलेके अध्यायों द्वारा भी वर्षा और सुभिक्ष सम्बन्धी फलादेश निरूपित किया गया है, पर इस अध्यायमें भी यही फल प्रतिपादित है। मेघोंकी आकृतियाँ चारों वर्णके व्यक्तियोंके लिए भी शुभाशुभ बतलाती हैं। अतः सामाजिक और वैयक्तिक इन दोनों ही दृष्टिकोणोंसे मेघोंके फलादेशका विवेचन किया जायगा।

मेघोंका विचार ऋतुके क्रमानुसार करना चाहिए। वर्षा ऋतुके मेघ केवल वर्षाकी सूचना देते हैं। शरद् ऋतुके मेघ शुभाशुभ अनेक प्रकारका फल सूचित करते हैं। ग्रीष्म ऋतुके मेघोंसे वर्षाकी सूचना तो मिलती ही है, पर ये विजय, यात्रा, लाभ, अलाभ, इष्ट, अनिष्ट, जीवन, मरण आदिको भी सूचित करते हैं। मेघोंकी भी भाषा होती है। जो व्यक्ति मेघोंकी भाषा—गर्जनाको समझ लेते हैं, वे कई प्रकार के महत्त्वपूर्ण फलादेशोंकी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पशु, पक्षी और मनुष्योंके समान मेघोंकी भी भाषा होती है और गर्जन-तर्जन द्वारा अनेक प्रकारका शुभाशुभ प्रकट हो जाता है। यहाँ सर्व प्रथम ग्रीष्म ऋतुके मेघोंका निरूपण किया जायगा। ग्रीष्म ऋतुका समय फाल्गुनसे ज्येष्ठ तक माना जाता है। यदि फाल्गुनके महीनेमें अंजनके समान काले-काले मेघ दिखलाई पड़ें तो इनका फल दर्शकोंके लिए शुभ, यशप्रद और आर्थिक लाभ देनेवाला होता है। जिस स्थान पर उक्त प्रकारके मेघ दिखलाई पड़ते हैं, उस स्थान पर अन्नका भाव सस्ता होता है, व्यापारिक वस्तुओंमें हानि तथा भोगोपभोगकी वस्तुएँ प्रचुर परिमाणमें उपलब्ध होती हैं। वस्त्रके भाव साधारणरूपसे कुछ ऊँचे चढ़ते हैं। स्निग्ध, श्वेत और मनोहर आकृतिवाले मेघ जनतामें शान्ति, सुख, लाभ और हर्ष सूचक होते हैं। व्यापारियोंको वस्तुओंमें साधारणतया लाभ होता है। अवशेष ग्रीष्म ऋतुके महीनोंमें सजल मेघ जहाँ दिखलाई पड़ें उस प्रदेशमें दुर्भिक्ष, अन्नकी फसलकी कमी, जनताको आर्थिक कष्ट एवं आपसमें मनमुटाव उत्पन्न होता है। चैत्र मासके कृष्णपक्षके मेघ साधारणतया जनतामें उल्लास, आगामी खेतीका विकास और सुभिक्षकी सूचना देते हैं। चैत्र कृष्ण प्रतिपदाको वर्षा करनेवाले मेघ जिस क्षेत्रमें दिखलाई पड़ें उस क्षेत्रमें आर्थिक संकट रहता है। हैजा और चेचककी बीमारी विशेष रूपसे फैलती है। यदि इस दिन रक्त वर्णके मेघ आकाशमें संघर्ष करते हुए दिखलाई पड़ें तो वहाँ सामाजिक संघर्ष होता है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदाको भी मेघोंकी स्थितिका विचार किया जाता है। यदि इस दिन गर्जन-तर्जन करते हुए मेघ आकाशमें बूँदा-बूँदी करें तो उस प्रदेशके लिए भयदायक समझना चाहिए। फसलकी उत्पत्ति भी नहीं होती है तथा जनतामें परस्पर संघर्ष होता है। चैत्री पूर्णिमाको पीतवर्णके मेघ आकाशमें घूमते हुए दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष उस प्रदेशमें फसलकी क्षति होती है। तथा पन्द्रह दिनों तक अन्नका भाव महँगा रहता है। सोना और चाँदीके भावमें भी घटा-बढ़ी होती है।

शरद् ऋतुके मेघ वर्षा और सुभिक्षके साथ उस स्थानकी आर्थिक और सामाजिक उन्नति-अवनतिकी भी सूचना देते हैं। यदि कार्तिककी पूर्णिमाको मेघ वर्षा करें तो उस प्रदेशकी आर्थिक स्थिति दृढ़तर होती है, फसल भी उत्तम होती है तथा समाजमें शान्ति रहती है। पशुधनकी वृद्धि होती है, दूध और घीकी उत्पत्ति प्रचुर परिमाणमें होती है। उस प्रदेशके व्यापारियोंको भी अच्छा लाभ होता है। जो व्यक्ति कार्तिकी पूर्णिमाको नील रंगके बादलोंको देखता है, उसके उदरमें भयंकर पीड़ा तीन महीनोंके भीतर होती है। पीत वर्णके मेघ उक्त

दिनको दिखलाई पड़ें तो किसी स्थान विशेषसे आर्थिक लाभ होता है। श्वेतवर्णके मेघके दर्शनसे व्यक्तिको सभी प्रकारके लाभ होते हैं। मार्गशीर्ष मासकी कृष्ण प्रतिपदाको प्रातःकाल वर्षा करनेवाले मेघ गोधूम वर्णके दिखलाई पड़ें तो उस प्रदेशमें महामारीकी सूचना अवगत करनी चाहिए। इस दिन कोई व्यक्ति स्निग्ध और सौम्य मेघोंका दर्शन करे तो अपार लाभ, रूक्ष और विकृत वर्णके मेघोंका दर्शन करे तो आर्थिक क्षति होती है। उक्त प्रकारके मेघ वर्षाकी भी सूचना देते हैं। आगामी वर्षमें उस प्रदेशमें फसल अच्छी होती है। विशेषतः गन्ना, कपास, धान, गेहूँ, चना और तिलहनकी उपज अधिक होती है। व्यापारियोंके लिए उक्त प्रकारके मेघका दर्शन लाभप्रद होता है। मार्गशीर्ष कृष्णा अमावास्याको छिद्र युक्त मेघ बूँदा-बूँदीके साथ प्रातःकालसे सन्ध्याकाल तक अवस्थित रहें तो उस प्रदेशमें वर्तमान वर्षमें फसल अच्छी तथा आगामी वर्षमें अनिष्टकारक होती है। इस महीनेकी पूर्णिमाको सन्ध्या समय रक्त-पीत वर्णके मेघ दिखलाई पड़ें तथा गर्जनके साथ वर्षण भी करें तो निश्चयसे उस प्रदेशमें आगामी आषाढ़ मासमें सम्यक् वर्षा होती है तथा वहाँके निवासियोंको सन्तोष और शान्तिकी प्राप्ति होती है। यदि उक्त दिन प्रातःकाल आकाश निरभ्र रहे तो आगामी वर्ष वर्षा साधारण होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है। जो व्यक्ति उक्त तिथिको अंजनवर्णके समान मेघोंका दर्शन प्रातःकाल ही करता है, उसे राजसम्मान प्राप्त होता है, तथा किसी प्रकारकी उपाधि भी उसे प्राप्त होती है। रक्त वर्णके मेघका दर्शन इस दिन व्यक्तिगत रूपसे अनिष्टकारक माना गया है। यदि कोई व्यक्ति उक्त तिथिको मध्य रात्रिमें सछिद्र आकाशका दर्शन करे तथा दर्शन करनेके कुछ ही समय उपरान्त वर्षा होने लगे तो व्यक्तिगत रूपसे इस प्रकारके मेघका दर्शन बहुत उत्तम होता है। पृथ्वीसे निधि प्राप्त होती है तथा धार्मिक कार्योंके करनेमें विशेष प्रवृत्ति बढ़ती है। संसारमें जिन-जिन स्थानों पर उक्त तिथिको वर्षा करते हुए मेघ देखे जाते हैं, उन-उन स्थानों पर सुभिक्ष होता है तथा वर्तमान और आगामी दोनों ही वर्ष श्रेष्ठ समझे जाते हैं। पौषमासकी अमावास्याको आकाशमें बिजली चमकनेके उपरान्त वर्षा करते हुए मेघ दिखलाई पड़ें तो उत्तम फल होता है। इस दिन श्वेत वर्णके मेघोंका दर्शन बहुत शुभ माना जाता है। पौष मासकी अमावास्याको यदि सोमवार, शुक्रवार और गुरुवार हो और इस दिन मेघ आकाशमें घिरे हुए हों तो जलकी वर्षा आगामी वर्ष अच्छी होती है। फसल भी उत्तम होती है और प्रजा भी सुखी रहती है। यदि यही तिथि शनिवार, रविवार और मंगलवारको हो तथा आकाश निरभ्र हो या सछिद्र विकृत वर्णके मेघ आकाशमें आच्छादित हों तो अनावृष्टि होती है और अन्न मँहगा होता है। डाक कविने हिन्दीमें पौषमासकी तिथियोंके मेघोंका फलादेश निम्न प्रकार बतलाया है:—

पौष इजोडिया सप्तमी अष्टमी नवमी बाज।
डाक जलद देखे प्रजा, पूरण सब विधि काज॥

अर्थात्—पौष शुक्ला प्रतिपदा, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथिको यदि आकाशमें बादल दिखलाई पड़े तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है। धन-धान्यकी उत्पत्ति अधिक होती है और सर्वत्र सुभिक्ष दिखलाई पड़ता है। जो व्यक्ति उन तिथियोंमें प्रातःकाल या सायंकाल मयूर और हंसाकृतिके मेघोंका दर्शन करता है, वह जीवनमें सभी प्रकारकी इच्छाओंको प्राप्त कर लेता है। उक्त प्रकारके मेघका दर्शन व्यक्ति और समाज दोनोंके लिए मंगल करनेवाला होता है।

पौषबदी सतमी तिथि मांही, बिन जल बादल गजत आहीं।
पूनो तिथि सावनके मास, अतिशय वर्षा राखो आस॥
पौषबदी दशमी तिथि मांही, जौ वर्षे मेघा अधिकाहीं।
तो सावन बदि दशमी दरसे, सा मेघा पुहुमी बहु बरसे॥

रवि या रवि सुत औ अंगार, पूस अमावस कहत गोआर।
अपन अपन घर चेतहु जाय, रतनक मोल अन्न बिकाय॥

पौष वदी सप्तमीको बिना जल बरसाये बादल गर्जना करें तो श्रावणमासमें अत्यन्त वर्षा होती है। यदि पौष वदी दशमी तिथिको अधिक वर्षा हो तो श्रावण वदी दशमीको इतना अधिक जल बरसता है कि पानी पृथ्वी पर नहीं समाता। पौष,अमावास्या,शनिवार और रविवार को मंगलवार हो तो अन्नका भाव अत्यन्त मँहगा होता है। वर्षाकी कमी रहती है। पौष मासमें वर्षा होना और मेघोंका छाया रहना अच्छा समझा जाता है। यदि इस महीनेमें आकाश निरभ्र दिखलाई पड़े तो दुष्कालके लक्षण समझने चाहिए। पौषकी पूर्णिमाको प्रातःकाल श्वेत रंगके बादल आकाशमें आच्छादित हों तो आषाढ़ और श्रावण मासमें अच्छी वर्षा होती है और सभी वर्णवाले व्यक्तिको आनन्दकी प्राप्ति होती है। यदि पौष शुक्ला चतुर्दशीको आकाशमें गर्जना करते हुए बादल दिखलाई पड़ें और हल्की वर्षा हो तो भाद्रपदमासमें अच्छी वर्षा होती है। माघमासके मेघोंका फल डाकने निम्न प्रकार बतलाया है—

माघ वदी सप्तमीके ताई, जो विज्जु चमके नभ माई।
मास बारहो बरसे मेह, मत सोचो चिन्ता तजि देह॥
माघ सुदी पड़िवाके मध्य, दमके विज्जु गरजे चन्द्र।
तेल आम सुरही दीनन मार, मँहगो होवे 'डाक' गोआर॥
माघ वदी तिथि अष्टमी, दशमी पूस अन्हार।
'डाक' मेघ देखी दिना, सावन जलद अपार॥
माघ द्वितीया चन्द्रमा, वर्षा विजुली होय।
'डाक' कहथि सुनह नृपति, अन्नक महँगी होय॥
माघ तृतीया सुदिमें, वर्षा विजुली देख।
'डाक' कहथि जौ गहुँम अति, मँहग वर्ष दिन लेख॥
माघ सुदीके चौथमें, जौं लागे घन देख।
मँहगो होवे नारियल, रहे न पालहिं शेष॥
माघ पञ्चमी चन्द्र तिथि, बहय जो उत्तर वाय।
तो जानी भरि भाद्रमें, जलबिन पृथ्वी जाय॥
माघ सुदी षष्ठी तिथि, यदि वर्षा न होय।
'डाक' कपास मँहगो मिले, राखै ता नहिं कोय॥

अर्थ—माघवदी सप्तमीके दिन आकाशमें बिजली चमके और बरसते हुए मेघ दिखलाई पड़ें तो अच्छी फसल होती है और वर्षा भी उत्तम होती है। बारह महीनोंमें ही वृष्टि होती रहती है, फसल उत्तम होती है। माघ सुदी प्रतिपदाके दिन आकाशमें बिजली चमके, बादल गर्जना करें तो तैल, घृत, गुड़ आदि पदार्थ मँहगे होते हैं। इस दिनका मेघदर्शन वस्तुओंकी मँहगाई सूचित करता है। माघ कृष्ण अष्टमीको वर्षा हो तो सुभिक्ष सूचक है। मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृतिके दिखलाई पड़ें तो जनताके लिए सुखदायी होते हैं। माघ वदी अष्टमी और पौष वदी दशमीको आकाशमें बादल हों तथा वर्षा भी हो तो श्रावणके महीनेमें अच्छी वर्षा होती है। माघ शुक्ला द्वितीयाको वर्षा और बिजली दिखलाई पड़े तो जौ और गेहूँ अत्यन्त मँहगे होते हैं। व्यापारियोंको उक्त दोनों प्रकारके अनाजके संग्रहमें विशेष लाभ होता है। यद्यपि सभी प्रकारके अनाज महँगे होते हैं, फिर भी गेहूँ और जौकी तेजी विशेषरूपसे होती है। यदि माघ शुक्ला चतुर्थीके दिन आकाशमें बादल और बिजली दिखलाई पड़े तो नारियल विशेषरूपसे मँहगा होता है। यदि माघ शुक्ला पञ्चमीको वायुके

साथ मेघोंका दर्शन हो तो भाद्रपदमें जलके बिना भूमि रहती है। माघ शुक्ला षष्ठीको आकाश में केवल मेघ दिखलाई पड़ें और वर्षा न हो तो कपास मँहगा होता है। माघ शुक्ला अष्टमी और नवमीको विचित्र वर्णके मेघ आकाशमें दिखलाई पड़ें और हल्की-सी वर्षा हो तो भाद्रपद मासमें खूब वर्षा होती है।

वर्षा ऋतुके मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृतिके हों तो खूब वर्षा होती है। आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदाके दिन मेघ गर्जन हो तो पृथ्वी पर अकाल पड़ता है और युद्ध होते हैं। आषाढ़ कृष्णा एकादशीको आकाशमें वायु, मेघ और बिजली दिखलाई पड़े तो श्रावण और भाद्रपदमें अल्प-वृष्टि होती है। आषाढ़ शुक्ला तृतीया बुधवारको हो और इस दिन आकाशमें मेघ दिखलाई पड़ें तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण शुक्ल सप्तमीके दिन आकाश मेघाच्छन्न हो तो देवोत्थान एकादशीपर्यन्त जल बरसता है। श्रावण कृष्ण चतुर्थीको जल वर्षे तो उस दिनसे ४५ दिन तक खूब वर्षा होती है। उक्त तिथिको आकाशमें केवल मेघ दिखलाई पड़ें तो भी फसल अच्छी होती है। श्रावणबदी पञ्चमीको वर्षा हो और आकाशमें मेघ छाये रहें तो चातुर्मास पर्यन्त वर्षा होती रहती है। श्रावण मासकी अमावास्या सोमवारको हो और इस दिन आकाशमें घने मेघ दिखलाई पड़ें तो दुष्काल समझना चाहिए। इसका फल कहीं वर्षा, कहीं सूखा तथा कहीं पर महामारी और कहीं पर उपद्रव होना समझना चाहिए। भाद्रपद सुदी पञ्चमी स्वाती नक्षत्रमें हो और इस दिन मेघ आकाशमें सघन हों तथा वर्षा हो रही हो तो सर्वत्र सुख-शान्ति व्याप्त होती है और जगत्के सभी दुःख दूर हो जाते हैं तथा सर्वत्र मंगल होता है। इस महीनेमें भरणी नक्षत्रमें वर्षा हो और मेघ आकाशमें व्याप्त हों तो सर्वत्र सुभिक्ष होता है। गेहूँ, चना, जौ, धान, गन्ना, कपास और तिलहनकी फसल खूब उत्पन्न होती है। भाद्रपद मासकी पूर्णिमाको जल बरसे तो जगत्में सुभिक्ष होता है। भाद्रपद मासमें अश्विनी और रोहिणी नक्षत्रमें आकाशमें बादल व्याप्त हों, पर वर्षा न हो तो पशुओंमें भयङ्कर रोग फैलता है। आर्द्रा और पुष्यमें रक्त-वर्णके मेघ संघर्षरत दिखलाई पड़ें तो विद्रोह और अशान्तिकी सूचना समझनी चाहिए। यदि इन नक्षत्रोंमें वर्षा भी हो जाय तो शुभ फल होता है। श्रवण नक्षत्रकी वर्षा उत्तम मानी गयी है। भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदाको श्रवण नक्षत्र हो और आकाशमें मेघ हों तो सुभिक्ष होता है।

नवमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वातलक्षणमुत्तमम्[1] ।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः[2] ॥१॥

अब मैं वायुका उत्तम लक्षण पूर्वाचार्योंके अनुसार कहूँगा। वायुके द्वारा निरूपित फलादेशके भी दो भेद किये जा सकते हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥१॥

वर्षं भयं तथा क्षेमं राज्ञो जय-पराजयम् ।
मारुतः कुरुते लोके जन्तूनां पुण्यपापजम्[3] ॥२॥

वायु संसारी प्राणियोंके पुण्य एवं पापसे उत्पन्न होनेवाले वर्षण, भय, क्षेम और राजाके जय-पराजयको सूचित करता है ॥२॥

[4]आदानाच्चैव पाताच्च पचनाच्च विसर्जनात् ।
मारुतः सर्वगर्भाणां बलवान्नायकश्च सः ॥३॥

आदान, पातन, पचन और विसर्जनका कारण होनेसे मारुत बलवान् होता है और सब गर्भोंका नायक बन जाता है ॥३॥

दक्षिणस्यां दिशि यदा वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।
[5]समुद्रानुशयो[6] नाम स गर्भाणां तु सम्भवः ॥४॥

दक्षिण दिशाका वायु जब दक्षिण दिशामें बहता है, तब वह 'समुद्रानुशय' नामका वायु कहलाता है और गर्भोंको उत्पन्न करनेवाला भी है ॥४॥

तेन सञ्जनितं गर्भं वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।
धारयेत् धारणे मासे पाचयेत् पाचने तथा ॥५॥

उस समुद्रानुशय वायुसे उत्पन्न गर्भको दक्षिण दिशाका वायु धारण मासमें धारण करता है तथा पाचन मासमें पकाता है ॥५॥

धारितं पाचितं गर्भं वायुरुत्तरकाष्ठिकः ।
प्रमुञ्चति यतस्तोयं वर्षं तं मरुतोच्यते ॥६॥

उस धारण किये तथा पाकको प्राप्त हुए मेघ गर्भको चूँकि उत्तर दिशाका वायु विसर्जित करता है अतएव वर्षा करनेवाले उस वायुको 'मरुत' कहते हैं ॥६॥

आषाढीपूर्णिमायां तु पूर्ववातो यदा भवेत् ।
प्रवाति दिवसं सर्वं सुवृष्टिः सुषुमा[9] तदा ॥७॥

आषाढ़ी पूर्णिमाके दिन पूर्व दिशाका वायु यदि सारे दिन चले तो वर्षाकालमें अच्छी वर्षा होती है और यह वर्ष अच्छा व्यतीत होता है ॥७॥

१. संप्रवक्ष्यामि मु० C. । २. पूर्वतः मु० । ३. पापजम् मु० । ४ अथातं चैव पान च पातनश्च विसर्जनः मु० A. D. । ५ धाराधरागमेमेमे मु० A. । ६. नियंतो मु० B. । ७. मरुत मु० C. । ८. वारणे मु० A. । ९ सुवृष्टिस्तु तदा मता मु० ।

वाप्यानि सर्वबीजानि[1] जायन्ते निरुपद्रवम्[2] ।
शूद्राणामुपघाताय सोऽत्र लोके परत्र च ॥८॥

उक्त प्रकारके वायुमें बोये गये सम्पूर्ण बीज उत्तम रीतिसे उत्पन्न होते हैं। परन्तु शूद्रोंके लिए यह वायु इस लोक और परलोकमें उपघातका कारण है ॥८॥

दिवसार्धं यदा वाति पूर्वमासौ[3] तु सोदकौ[4] ।
चतुर्भागेण मासस्तु शेषं[5] ज्ञेयं[6] यथाक्रमम् ॥९॥

यदि आषाढ़ी पूर्णिमाके आधे दिन—दोपहर तक पूर्व दिशाका वायु चले तो पहले दो महीने अच्छी वर्षाके समझने चाहिए और चौथाई दिन—एक प्रहर भर वह वायु चले तो एक महीना अच्छी वर्षा ज्ञात करना चाहिए। इसी क्रमसे वायु और वर्षाका हिसाब जानना चाहिए ॥९॥

पूर्वार्धदिवसौ ज्ञेयौ[7] पूर्वमासौ[8] तु सोदकौ[9] ।
पश्चिमे पश्चिमौ मासौ ज्ञेयौ द्वावपि सोदकौ ॥१०॥

यहाँ इतना विशेष और जानना चाहिए कि उस दिन यदि पूर्वार्धमें पूर्ववायु चले तो पहले दो महीने और उत्तरार्धमें वायु चले तो पिछले दो महीने अच्छी वर्षाके समझने चाहिए॥१०॥

हित्वा पूर्वं तु दिवसं मध्याह्ने यदि वाति चेत् ।
[10]वायुर्मध्यममासात्तु तदा देवो न वर्षति ॥११॥

यदि दिनके पूर्व भागको छोड़कर मध्याह्नमें उस दिन वायु चले तो मध्यम माससे मेघ नहीं बरसेगा, ऐसा जानना चाहिए ॥११॥

आषाढ़ीपूर्णिमायां तु दक्षिणो मारुतो यदि[11] ।
न तदा वापयेत् किञ्चित् ब्रह्मक्षत्रं च पीडयेत् ॥१२॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि दक्षिण दिशाका वायु चले तो उस समय बोनेका कार्य नहीं करना चाहिए। यह वायु ब्राह्मण और क्षत्रियको पीड़ाकारक होता है ॥१२॥

धनधान्यं न[12] विक्रेयं [13]बलवन्तं च संश्रयेत् ।
दुर्भिक्षं मरणं[14] व्याधिस्त्रासं[15] मासं प्रवर्तते ॥१३॥

उक्त प्रकारकी वायु चलने पर धन-धान्यका विक्रय नहीं करना चाहिए एवं बलवान् प्रशासकका आश्रय ग्रहण करना चाहिए; क्योंकि एक मासमें ही दुर्भिक्ष, मरण, व्याधि और त्रास उपस्थित होने लगता है ॥१३॥

१ सर्वजीवानि मु० B. । २. निरुपद्रवः मु C. । ३. -मासे मु० A. श्याम मु० C. । ४. मोदक मु० C । ५. शेषौ मु० A. शेषो मु० B. D । ६. ज्ञेयो मु० A. ज्ञेयौ मु० B. D. । ७. ज्ञेयो मु० C । ८. मासो मु० C. । ९. सोदको मु० C. । १०. पूर्वाह्ने प्रहरे यत्र पश्चिमेन च वाति चेत् मु० C. । ११. यदा मु० । १२. ते मु० A. । १३. विज्ञेयं मु० A. । १४ डामरं मु० C. । १५. तस्कराच्च महद्भयम् मु० ।

आषाढीपूर्णिमायां तु पश्चिमो यदि मारुतः ।
मध्यमं वर्षणं सस्यं धान्यार्घो मध्यमस्तथा ॥१४॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि पश्चिम वायु चले तो मध्यम प्रकारकी वर्षा होती है। तृण और अन्नका मूल्य भी मध्यम—न अधिक मँहगा और न अधिक सस्ता रहता है ॥१४॥

उद्विजन्ति[1] च[2] राजानो[3] वैराणि च[4] प्रकुर्वते ।
[5]परस्परोपघाताय स्वराष्ट्रपरराष्ट्रयोः ॥१५॥

उक्त प्रकारकी वायुके चलनेसे राजा लोग उद्विग्न हो उठते हैं और अपने तथा दूसरोंके राष्ट्रोंको परस्परमें घात करनेके लिए वैर-भाव धारण करने लगते हैं। तात्पर्य यह है कि आषाढ़ी पूर्णिमाको पश्चिम दिशाकी वायु चले तो देश और राष्ट्रमें उपद्रव होता है। प्रशासन और नेताओंमें मतभेद बढ़ता है ॥१५॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरो यदि[6] ।
वापयेत् सर्वबीजानि सस्यं ज्येष्ठं समृद्ध्यति ॥१६॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको उत्तर दिशाकी वायु चले तो सभी प्रकारके बीजोंको बो देना चाहिए; क्योंकि उक्त प्रकारके वायुमें बोये गये बीज बहुतायतसे उत्पन्न होते हैं ॥१६॥

क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं प्रशान्ताः[7] पार्थिवास्तथा ।
बहूदकास्तदा[8] मेघा मही[9] धर्मोत्सवाकुला ॥१७॥

उक्त प्रकारका वायु क्षेम, कुशल, आरोग्यकी वृद्धिका सूचक है, राजा—प्रशासक परस्परमें शान्ति और प्रेमसे निवास करते हैं, प्रजाके साथ प्रशासकोंका व्यवहार उत्तम होता है। मेघ बहुत जल बरसाते हैं और पृथ्वी धर्मोत्सवोंसे युक्त हो जाती है ॥१७॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यात् पूर्वदक्षिणः ।
[10]राजमृत्यु[11]विजानीयचित्रं सस्यं तथा जलम् ॥१८॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि पूर्व और पश्चिमके बीच—अग्निकोणका वायु चले तो प्रशासक अथवा राजाकी मृत्यु होती है। शस्य तथा जलकी स्थिति चित्र-विचित्र होती है ॥१८॥

क्वचिन्निष्पद्यते सस्यं क्वचिच्चापि विपद्यते ।
धान्यार्घो मध्यमो ज्ञेयः तदाऽग्नेश्च भयं नृणाम्[12] ॥१९॥

धान्यकी उत्पत्ति कहीं होती है और कहीं उसपर आपत्ति आ जाती है। मनुष्यको धान्यका लाभ मध्यम होता है और अग्निभय बना रहता है ॥१९॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्याद् दक्षिणापरः ।
सस्यानामुपघाताय चौराणां तु विवृद्धये[13] ॥२०॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि दक्षिण और पश्चिमके बीचकी दिशा—नैर्ऋत्य कोणका वायु चले तो वह धान्यघातक और चोरोंकी वृद्धिकारक होती है ॥२०॥

१. उद्गच्छन्ते मु० A. B. D. । २-३. तथा राज्ञा मु० A. तथा राज्ञो मु० B. यथा राज्ञा मु० D. । ४. च हि कुर्वते मु० C. प्रवर्तते मु० D. । ५. परस्परो वधायोव मु० A. । ६. यदा मु० । ७. बधन्तो मु० A. । ८. बहोदका मु० C. । ९. मही मु० A. D. मही मु० C. । १०. राज्ञो मु० A. । ११. मृत्यु मु० । १२. भवेद् भा० । १३. मन्दवृद्ध मु० A. ।

भस्मपांशुरजस्कीर्णा यदा[1] भवति मेदिनी ।
सर्वत्यागं तदा कृत्वा कर्त्तव्यो धान्यसंग्रहः ॥२१॥

उस समय पृथ्वी भस्म, धूलि एवं रजकणसे व्याप्त हो जाती है—अनावृष्टिके कारण पृथ्वी धूलि-मिट्टीसे व्याप्त हो जाती है। अतः समस्त वस्तुओंको त्यागकर धान्यका संग्रह करना चाहिए ॥२१॥

विद्रवन्ति च राष्ट्राणि क्षीयन्ते नगराणि च ।
श्वेतास्थिमेदिनी ज्ञेया मांसशोणितकर्दमा ॥२२॥

उक्त प्रकारकी वायु चलनेसे रास्तेमें उपद्रव पैदा होते हैं और नगरोंका क्षय होता है। पृथ्वी श्वेत हड्डियोंसे भर जाती है और मांस तथा खूनकी कीचड़से पृथ्वी भर जाती है ॥२२॥

आषाढ़ीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरापरः ।
मक्षिका[2] दंशमशका जायन्ते प्रबलास्तदा ॥२३॥

मध्यमं क्वचिदुत्कृष्टं वर्षं सस्यं च जायते ।
नूनं च मध्यमं किञ्चिद् धान्यार्थं तत्र[3] निर्दिशेत्[4] ॥२४॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि वायु उत्तर और पश्चिमके बीचके कोण—वायव्य कोणकी चले तो मक्खी, डांस और मच्छर प्रबल हो उठते हैं। वर्षा और धान्योत्पत्ति कहीं मध्यम और कहीं उत्तम होती है और कुछ धान्योंका मूल्य अथवा लाभ निश्चित रूपसे मध्यम समझना चाहिए ॥२३–२४॥

आषाढ़ीपूर्णिमायां तु वायुः पूर्वोत्तरा यदा ।
वापयेत् सर्वबीजानि तदा चौरांश्च घातयेत् ॥२५॥

स्थलेष्वपि च यद्बीजमुप्यते तत् समृद्धयति ।
क्षेमं चैव सुभिक्षं च भद्रबाहुवचो यथा ॥२६॥

बहूदका सस्यवती यज्ञोत्सवसमाकुला ।
प्रशान्तडिम्भडमरा शुभा भवति मेदिनी ॥२७॥

आषाढ़ी पूर्णिमाको यदि पूर्व और उत्तर दिशाके बीचका—ईशान कोणका वायु चले तो उससे चोरोंका घात होता है अर्थात् चोरोंका उपद्रव कम होता है। उस समय सभी प्रकारके बीज बोना शुभ होता है। स्थलोंपर—कंकरीली, पथरीली जमीनमें भी बोया हुआ बीज उगता तथा समृद्धिको प्राप्त होता है। सर्वत्र क्षेम और सुभिक्ष होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है। साथ ही पृथ्वी बहुजल और धान्यसे सम्पन्न होती है, पूजा-प्रतिष्ठादि महोत्सवोंसे परिपूर्ण होती है और सब विडम्बनाएँ दूर होकर प्रशान्त वातावरणको लिए मङ्गलमय हो जाती हैं। नगर और देशमें शान्ति व्याप्त हो जाती है ॥२५–२७॥

१. तदा मु० । २. काण्डम् मु० १. । ३–४. नात्र संशयः मु० C. । ऽऽचौराणां समुपद्रवम् मु०C. ।

पूर्वो[1] वातः[2] स्मृतः श्रेष्ठः तथा चाप्युत्तरो भवेत् ।
उत्तमस्तु[3] तथैशानो मध्यमस्त्व परोत्तरः[4] ॥२८॥
अपरस्तु तथा न्यूनः[5] शिष्टो[6] वातः[7] प्रकीर्तितः ।
पापे नक्षत्रकरणे मुहूर्ते च तथा भृशम् ॥२९॥

पूर्व दिशाका वायु श्रेष्ठ होता है, इसी प्रकार उत्तरका वायु भी श्रेष्ठ कहा जाता है। ईशान दिशाका वायु उत्तम होता है। वायव्यकोण तथा पश्चिमका वायु मध्यम होता है। शेष दक्षिण दिशा, अग्निकोण और नैर्ऋत्यकोणका वायु अधम कहा गया है, उस समय नक्षत्र, करण तथा मुहूर्त यदि अशुभ हों तो वायु भी अधिक अधम होता है ॥२८–२९॥

पूर्ववातं यदा हन्यादुदीर्णो दक्षिणोऽनिलः[8] ।
न तत्र वापयेद् धान्यं कुर्यात् सञ्चयमेव च ॥३०॥
दुर्भिक्षं चाप्यवृष्टिं च शस्त्रं रोगं जनक्षयम् ।
कुरुते सोऽनिलो घोरं आषाढाभ्यन्तरं परम् ॥३१॥

आषाढ़ी पूर्णिमाके दिन पूर्वके चलते हुए वायुको यदि दक्षिणका उठा हुआ वायु परास्त करके नष्ट कर दे तो उस समय धान्य नहीं बोना चाहिए। बल्कि धान्यसंचय करना ज्यादा अच्छा होता है; क्योंकि वह वायु दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, शस्त्रसंचार और जनक्षयका कारण होता है ॥३०–३१॥

पापघाते तु[9] वातानां[10] श्रेष्ठं[11] सर्वत्र चादिशेत् ।
[12]श्रेष्ठानपि यदा हन्युः पापाः[13] पापं[14] तदाऽऽदिशेत् ॥३२॥

श्रेष्ठ वायुओंमें से किसीके द्वारा पापवायुका यदि घात हो तो उसका फल सर्वत्र श्रेष्ठ कहना ही चाहिए और पापवायुएँ श्रेष्ठ वायुओंका घात करें तो उसका फल अशुभ ही जानना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकारके वायुकी प्रधानता होती है, उसी प्रकारका शुभाशुभ फल होता है ॥३२॥

यदा तु वाताश्चत्वारो भृशं वान्त्यपसव्यतः[15] ।
अल्पोदकं[16] शस्त्राघातं[17] भयं व्याधिं च कुर्वते ॥३३॥

यदि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर के चारों पवन अपसव्य मार्गसे—दाहिनी ओरसे तेजीके साथ चलें तो वे अल्पवर्षा, धान्यनाश और व्याधि उत्पन्न होनेकी सूचना देते हैं—उक्त बातें उस वर्ष घटित होती हैं ॥३३॥

प्रदक्षिणं यदा वान्ति त एव सुखशीतलाः ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं [18]राज्यवृद्धिर्जयस्तथा ॥३४॥

१–२. पूर्वोत्तर मु० C. । ३. उत्तर मु० A, B, D. । ४. परोत्तर मु० A. परोत्तरा मु० C. । ५. न्यूनं मु० A., न्यूनः मु० B, D. । ६–७. शस्य वाता मु० A. शिष्टतोय मु० C. शिष्टावाता मु० D. । ८. दक्षिणानलः मु० A. दक्षिणोऽनलः मु० B. । ९. -घातेषु मु० A. । १०. नागानां मु० A. । ११. श्रेष्ठः मु० A, D. । १२. श्रेष्ठनापि मु० A. । १३–१४. पयोयुग्म् मु० । १५. अपमर्वतः मु० A. स समन्ततः मु० C. । १६. अल्पोदम् मु० । १७. शस्य संघात मु० । १८. राज्यवृद्धिर्जयस्तथा मु० ।

वे ही चारों पवन यदि प्रदक्षिणा करते हुए चलते हैं तो सुख एवं शीतलताको प्रदान करनेवाले होते हैं तथा लोगोंको क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, राजवृद्धि और विजयकी सूचना देनेवाले होते हैं ॥३४॥

समन्ततो यदा वान्ति परस्परविघातिनः[1] ।
शस्त्रं[2] जनक्षयं[3] रोगं सस्यघातं च कुर्वते ॥३५॥

चारों पवन यदि सब ओरसे एक दूसरेका परस्पर घात करते हुए चलें तो शस्त्रभय, प्रजानाश, रोग और धान्यघात करनेवाले होते हैं ॥३५॥

एवं विज्ञाय वातानां[4] संयता[5] भैक्षवर्तिनः ।
प्रशस्तान्यत्र पश्यन्ति[6] वसेयुस्तत्र निश्चितम्[7] ॥३६॥

इस प्रकार पवनों और उनके शुभाशुभ फलको जानकर भिक्षावृत्तिवाले साधुओंको चाहिए कि वे जहाँ बाधारहित प्रशस्त स्थान देखें वहीं निश्चित रूपसे निवास करें ॥३६॥

आहारस्थितयः सर्वे जङ्गमस्थावरास्तथा ।
जलसम्भवं[8] च सर्वं तस्यापि[9] जनकोऽनिलः ॥३७॥

जंगम—चल और स्थावर समस्त जीवोंकी स्थिति आहार पर निर्भर है—सबका आधार आहार है और खाद्यपदार्थ जलसे उत्पन्न होते हैं तथा जलकी उत्पत्ति वायु पर निर्भर है ॥३७॥

सर्वकालं प्रवक्ष्यामि वातानां लक्षणं[10] परम्[11] ।
आषाढीवत् तत् साध्यं यत् पूर्वं सम्प्रकीर्तितम् ॥३८॥

अब पवनोंका सार्वकालिक उक्त लक्षण कहूँगा, उसे पूर्वमें कहे हुए आषाढ़ी पूर्णिमाके समान सिद्ध करना चाहिए ॥३८॥

पूर्ववातो यदा तूर्णं सप्ताहं वाति कर्कशः ।
स्वस्थाने नाभिवर्षेत् महदुत्पद्यते भयम् ॥३९॥
प्राकारपरिखानाञ्च शस्त्राणां[12] च समन्ततः ।
निवेदयति राष्ट्राणां विनाशं तादृशोऽनिलः ॥४०॥

पूर्व दिशाका पवन यदि कर्कशरूप धारण करके अतिशीघ्र गतिसे चले तो वह स्वस्थानमें वर्षाके न होनेकी सूचना देता है और उससे अत्यन्त भय उत्पन्न होता है, उस प्रकारका पवन कोट, खाइयों, शस्त्रों और राष्ट्रोंका सब ओरसे विनाश सूचित करता है ॥३९-४०॥

सप्तरात्रं दिनार्धं च यः कश्चिद् वाति मारुतः ।
महद्भयं वि विज्ञेयं वर्षं वाऽथ महद् भवेत् ॥४१॥

किसी भी दिशाका वायु यदि साढ़े सात दिन तक लगातार चले तो उसे महान् भयका सूचक जानना चाहिए अथवा इस प्रकारका वायु अतिवृष्टिका सूचक होता है ॥४१॥

१. परिविघातिनः मु० A. । २. सच मु० A. । ३. जनभयं मु० C. । ४. वातमांस्तु मु० C. । ५. स्पष्टजाग्नितम मु० C. । ६. विज्ञाय मु० C. । ७. निश्चिता मु० C. । ८. जलसम्भवं मु० B. । ९. ब्लर मु० । १०–११. महत्गाम्भितम मु० A. B. D. । १२. शस्त्रकोपभयं ततः मु० C. । १३. दिवार्धेऽपि मु० A. दिवावार्धं मु० B. दिवामार्धं मु० D. ।

पूर्वसन्ध्यां यदा [1]वायुरपसव्यं प्रवर्तते ।
पुरावरोधं कुरुते यायिनां तु जयावहः ॥४२॥

यदि वायु अपसव्य मार्गसे पूर्व सन्ध्याको वातान्वित करता है तो वह पुरके अवरोधका-घेरेमें पड़ जानेका सूचक है । इस समय यायियों—आक्रमणकारियोंको विजय होती है ॥४२॥

पूर्वसन्ध्यां यदा वायुः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
नागराणां जयं[2] कुर्याद् सुभिक्षं यायिविद्रवम्[3] ॥४३॥

यदि वह वायु प्रदक्षिणा करता हुआ पूर्वसन्ध्याको व्याप्त करे तो उससे नागरिकोंकी विजय होती है, सुभिक्ष होता है और चढ़कर आनेवाले आक्रमणकारियोंको लेनेके देने पड़ जाते हैं अर्थात् उन्हें भागना पड़ता है ॥४३॥

मध्याह्ने वार्धरात्रे वा[4] तथा वाऽस्तमनोदये ।
वायुस्तूर्णं यदा वाति तदाऽवृष्टिभयं [5]रुजाम् ॥४४॥

यदि वायु मध्याह्नमें, अर्धरात्रिमें तथा सूर्यके अस्त और उदयके समय शीघ्र गतिसे चले तो अनावृष्टि, भय और रोग उत्पन्न होते हैं ॥४४॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य प्रतिलोमोऽनिलो भवेत् ।
अपसव्यो [6]समार्गस्थस्तदा सेनावधं[7] विदुः ॥४५॥

यदि राजाके प्रयाणके समय वायु प्रतिलोम—विपरीत बहे अर्थात् उस दिशाको न चलकर जिधर प्रयाण किया जा रहा है, उससे विपरीत जिधर प्रयाण हो रहा है, चले तो उससे आक्रमणकारी की सेनाका वध समझना चाहिए ॥४५॥

अनुलोमो यदा स्निग्धः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
[8]नागराणां जयं कुर्यात् सुभिक्षं च प्रदीपयेत् ॥४६॥

यदि वायु स्निग्ध हो और प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोमरूपसे बहे—उसी दिशाकी ओर चले जिधर प्रयाण हो रहा है, तो नगरवासियोंकी विजय होती है और सुभिक्षकी सूचना मिलती है ॥४६॥

दशाहं द्वादशाहं वा पापवातो यदा भवेत् ।
अनुबन्धं तदा विन्द्याद् राजमृत्युं जनक्षयम् ॥४७॥

यदि अशुभ वायु दस दिन या बारह दिन तक लगातार चले तो उससे सेनादिकका बन्धन, राजाकी मृत्यु और मनुष्योंका क्षय होता है, ऐसा समझना चाहिए ॥४७॥

यदाभ्रवर्जितो वाति वायुस्तूर्णमकालजः ।
पांशुभस्मसमाकीर्णः सस्यघाती भयावहः ॥४८॥

जब मेघरहित अकालमें उत्पन्न वायु धूलि और भस्मसे भरा हुआ चलता है, तब यह शस्यघातक एवं महाभयङ्कर होता है ॥४८॥

1. स्पसव्यया इवात् पुरः मु० A., परसव्यादवात परम् मु० B. परसव्या प्रवाग्यते मु० D. । 2. भयं मु० D. । 3. विद्रवाम मु० A. । 4. च मु० । 5. रुजा मु० । 6. समार्गस्थ मु० । विमार्गस्थो मु० C. । 7. भयं मु० A. । 8. प्रदीपयत्य पार्थस्तद्य तदा विद्धि जयावहः मु० C. ।

सविद्युत्सरजो वायुरुर्ध्वगो वायुभिः सह ।
[1]प्रवाति पक्षिशब्देन क्रूरेण स भयावहः ॥४९॥

यदि बिजली और धूलसे युक्त वायु अन्य वायुओंके साथ ऊर्ध्वगामी हो और क्रूरपक्षीके समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयङ्कर होता है ॥४९॥

प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुहुर्मुहुः ।
यतो यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते ॥५०॥

यदि पवन सब ओरसे बार-बार शीघ्र गतिसे चले, तो वह जिस देशकी ओर गमन करता है, उस देशको हानि पहुँचाता है ॥५०॥

अनुलोमो यदाऽनीके सुगन्धो वाति मारुतः ।
[2]अयत्नतस्ततो राजा जयमाप्नोति सर्वदा ॥५१॥

यदि राजाकी सेनामें सुगन्धित अनुलोम—प्रयाणकी दिशामें प्रगतिशील पवन चले तो विना यत्नके ही राजा सदा विजयको प्राप्त करता है ॥५१॥

प्रतिलोमो यदाऽनीके दुर्गन्धो वाति मारुतः ।
तदा यत्नेन साध्यन्ते वीरकीर्तिसुलब्धयः ॥५२॥

यदि राजाकी सेनामें दुर्गन्धित प्रतिलोम—प्रयाणकी दिशासे विपरीत दिशामें पवन चले तो उस समय वीर-कीर्तिकी उपलब्धियाँ बड़ी ही प्रयत्नसाध्य होती हैं ॥५२॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पूर्वा वात्यनिलो भृशम् ।
पूर्वस्मिन्नेव दिग्भागे पश्चिमा वध्यते चमूः ॥५३॥

यदि प्रातः अथवा सायंकालकी सन्ध्या परिघसहित हो—सूर्यको लाँघती हुई मेघोंकी पंक्तिसे युक्त हो—और उस समय पूर्वका वायु अतिवेगसे चलता हो तो पूर्व दिशामें ही पश्चिम दिशाकी सेनाका वध होता है ॥५३॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पश्चिमो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे पूर्वा सा वध्यते चमूः ॥५४॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यको लाँघती हुई मेघपंक्तिसे युक्त हो और उस समय पश्चिम पवन चले तो पूर्व दिशामें स्थित सेनाका पश्चिम दिशामें वध होता है ॥५४॥

यदा सपरिघा सन्ध्या दक्षिणो वाति मारुतः ।
अपरस्मिनि दिशो भागे उत्तरा वध्यते चमूः ॥५५॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यको लाँघती हुई मेघ पंक्तिसे युक्त हो—और उस समय दक्षिण का वायु चलता हो तो उत्तरकी सेनाका पश्चिम दिशामें वध होता है ॥५५॥

यदा सपरिघा सन्ध्या उत्तरो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे दक्षिणा वध्यते चमूः ॥५६॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यको लाँघती हुई मेघपंक्तिसे युक्त हो और उस समय उत्तरका पवन चले तो दक्षिणकी सेनाका उत्तर दिशामें वध होता है ॥५६॥

१. मुद्रित प्रतिमें श्लोकोंका व्यतिक्रम है आधा श्लोक पूर्व श्लोकमें है आधा उत्तरके श्लोक में ।
२. आयातस्य ततो मु० ।

प्रशस्तस्तु यदा वातः प्रतिलोमोऽनुपद्रवः ।
तदा यान् प्रार्थयेत् कामांस्तान् प्राप्नोति नराधिपः ॥५७॥

जब प्रतिलोम वायु प्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़ता हो तो राजा जिन कार्योंको चाहता है वे उसे प्राप्त होते हैं—राजाके अभीष्टकी सिद्धि होती है ॥५७॥

अप्रशस्तो यदा वायुर्नाभिपश्यत्युपद्रवम् ।
प्रयातस्य नरेन्द्रस्य चमूर्हारयते सदा ॥५८॥

यदि वायु अप्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़े तो युद्धके लिए प्रयाण करनेवाले राजाकी सेना सदा पराजित होती है ॥५८॥

तिथीनां करणानां च मुहूर्तानां च ज्योतिषाम् ।
मारुतो बलवान् नेता तस्माद् यत्रैव मारुतः ॥५९॥

तिथियों, करणों, मुहूर्तों और ग्रह-नक्षत्रादिकों का बलवान् नेता वायु है, अतः जहाँ वायु है, वहीं उनका बल समझना चाहिए ॥५९॥

वायमानेऽनिले पूर्वे मेघांस्तत्र समादिशेत् ।
उत्तरे वायमाने तु जलं तत्र समादिशेत् ॥६०॥

यदि पूर्व दिशामें पवन चले तो उस दिशामें मेघोंका होना कहना चाहिए और यदि उत्तर दिशामें पवन चले तो उस दिशामें जलका होना कहना चाहिए ॥६०॥

ईशाने वर्षणं ज्ञेयमाग्नेये नैर्ऋतेऽपि च ।
याम्ये च विग्रहं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥६१॥

यदि ईशानकोणमें पवन चले तो वर्षाका होना जानना चाहिए और यदि नैर्ऋत्य तथा दक्षिण दिशामें पवन चले तो युद्धका होना कहना चाहिए ऐसा भद्रबाहुस्वामीका वचन है ॥६१॥

सुगन्धेषु प्रशान्तेषु स्निग्धेषु मार्दवेषु च ।
वायमानेषु[1] वातेषु सुभिक्षं क्षेममेव च ॥६२॥

यदि चलनेवाले पवन सुगन्धित, प्रशान्त, स्निग्ध एवं कोमल हों तो सुभिक्ष और क्षेमका होना ही कहना चाहिए ॥६२॥

महतोऽपि समुद्भूतान् सतडित् साभिगर्जितान् ।
मेघान्निहन्ते वायुर्नैर्ऋतो दक्षिणाग्निजः ॥६३॥

नैऋत्यकोण, अग्निकोण तथा दक्षिण दिशाका पवन उन बड़े मेघोंको भी नष्ट कर देता है—बरसने नहीं देता, जो चमकती बिजली और भारी गर्जनासे युक्त हों और ऐसे दिखाई पड़ते हों कि अभी बरसेंगे ॥६३॥

सर्वलक्षणसम्पन्ना मेघा मुख्या जलावहाः ।
मुहूर्तादुत्थितो वायुर्हन्यात् सर्वोऽपि नैर्ऋतः ॥६४॥

सर्व शुभलक्षणोंसे सम्पन्न जलको धारण करनेवाले जो मुख्य मेघ हैं, उन्हें भी नैऋत्य-दिशाका उठा हुआ पूर्व पवन एक मुहूर्त्तमें नष्ट कर देता है ॥६४॥

---

१. मुद्रित प्रतिमें श्लोकों की संख्यामें व्यतिक्रम होनेसे पूर्वार्ध श्लोक नहीं है ।

सविद्युत्सरजो वायुरुर्ध्वगो वायुभिः सह ।
[1]प्रवाति पक्षिशब्देन क्रूरेण स भयावहः ॥४९॥

यदि बिजली और धूलसे युक्त वायु अन्य वायुओंके साथ ऊर्ध्वगामी हो और क्रूरपक्षीके समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयङ्कर होता है ॥४९॥

प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुहुर्मुहुः ।
यतो यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते ॥५०॥

यदि पवन सब ओरसे बार-बार शीघ्र गतिसे चले, तो वह जिस देशकी ओर गमन करता है, उस देशको हानि पहुँचाता है ॥५०॥

अनुलोमो यदाऽनीके सुगन्धो वाति मारुतः ।
[2]अयत्नतस्ततो राजा जयमाप्नोति सर्वदा ॥५१॥

यदि राजाकी सेनामें सुगन्धित अनुलोम—प्रयाणकी दिशामें प्रगतिशील पवन चले तो बिना यत्नके ही राजा सदा विजयको प्राप्त करता है ॥५१॥

प्रतिलोमो यदाऽनीके दुर्गन्धो वाति मारुतः ।
तदा यत्नेन साध्यन्ते वीरकीर्तिसुलब्धयः ॥५२॥

यदि राजाकी सेनामें दुर्गन्धित प्रतिलोम—प्रयाणकी दिशासे विपरीत दिशामें पवन चले तो उस समय वीर-कीर्तिकी उपलब्धियाँ बड़ी ही प्रयत्नसाध्य होती हैं ॥५२॥

यदा सपरिधा सन्ध्या पूर्वो वात्यनिलो भृशम् ।
पूर्वस्मिन्नेव दिग्भागे पश्चिमा वध्यते चमूः ॥५३॥

यदि प्रातः अथवा सायंकालकी सन्ध्या परिघसहित हो—सूर्यको लाँघती हुई मेघोंकी पंक्तिसे युक्त हो—और उस समय पूर्वका वायु अतिवेगसे चलता हो तो पूर्व दिशामें ही पश्चिम दिशाकी सेनाका वध होता है ॥५३॥

यदा सपरिधा सन्ध्या पश्चिमो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे पूर्वा सा वध्यते चमूः ॥५४॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यकी लाँघती हुई मेघपंक्तिसे युक्त हो और उस समय पश्चिम पवन चले तो पूर्व दिशामें स्थित सेनाका पश्चिम दिशामें वध होता है ॥५४॥

यदा सपरिघा सन्ध्या दक्षिणो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे उत्तरा वध्यते चमूः ॥५५॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यको लाँघती हुई मेघ पंक्तिसे युक्त हो—और उस समय दक्षिण का वायु चलता हो तो उत्तरकी सेनाका पश्चिम दिशामें वध होता है ॥५५॥

यदा सपरिघा सन्ध्या उत्तरो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे दक्षिणा वध्यते चमूः ॥५६॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्यको लाँघती हुई मेघपंक्तिसे युक्त हो और उस समय उत्तरका पवन चले तो दक्षिणकी सेनाका उत्तर दिशामें वध होता है ॥५६॥

---

१. मुद्रित प्रतिमें श्लोकोंका व्यतिक्रम है आधा श्लोक पूर्वके श्लोकमें है आधा उत्तरके श्लोक में ।
२. आयातश्च ततो मु० ।

समझना चाहिए। यदि आधे दिन दक्षिणी पवन और आधे दिन पूर्वीय या उत्तरीय पवन चले तो आरम्भमें वर्षाभाव, अनन्तर उत्तम वर्षा तथा आरम्भमें उत्तम वर्षा, अनन्तर वर्षाभाव अवगत करना चाहिए। वर्षाकी स्थिति पूर्वार्ध और उत्तरार्ध पर अवलम्बित समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथिको पश्चिमीय पवन चले, आकाशमें बिजली तड़के तथा मेघोंकी गर्जना भी हो तो साधारणतः अच्छी वर्षा होती है। इस प्रकारकी स्थिति मध्यम वर्षा होनेकी सूचना देती है। पश्चिमीय पवन यदि सूर्योदयसे लेकर दोपहर तक चलता है तो उत्तम वर्षा और दोपहरके उपरान्त चले तो मध्यम वर्षा होती है।

श्रावण आदि महीनोंके पवनका फलादेश 'डाक' ने निम्न प्रकार बताया है—

साँओन पछ्वा भादव पुरिवा, आसिन बह ईसान।
कातिक कन्ता सिकियोने डोलै, कहाँ तक रखबह धान॥
साँओन पछ्वा बह दिन चारि, चूल्हाक पाछाँ उपजै सारि।
बरिसै रिमझिम निशिदिन वारि, कहिगेल वचन डाक परचारि॥
साँओन पुरिवा भादव पछ्वा आसिन बह नैऋत।
कातिक कन्ता सिकियोने डोले, उपजै नहि भरिबीत॥
साँओन पुरिवा बह रविवार, कोदो मडुआक होय बहार।
खोजत भेटै नहि थोड़ो अहार, कहत वैन यह 'डाक' गोआर॥
जो साँओन पुरवैआ बहै, शाली लागु करीन।
भादव पछ्वा जो बहै होहिं सकल नर दीन॥
साँओन बह जो बडदह्यांसा, बीआ काटि करू गै घासा।
साँओन जो बह पुरवैया, बडद बेचिकैं कीनहु गैया॥

अर्थ—यदि श्रावणमासमें पश्चिमीय हवा, भाद्रपदमासमें पूर्वीय हवा और आश्विन मासमें ईशान कोणकी हवा चले तो अच्छी वर्षा होती है तथा फसल भी बहुत उत्तम उत्पन्न होती है। श्रावणमें यदि चार दिनों तक पश्चिमीय हवा चले तो रात दिन पानी बरसता है तथा अन्नकी उपज भी खूब होती है। यदि श्रावणमें पूर्वीय, भाद्रपदमें पश्चिमीय और आश्विनमें नैऋत कोणीय हवा चले तो वर्षा नहीं होती है तथा फसलकी उत्पत्ति भी नहीं होती। यदि श्रावणमें पूर्वीय, भाद्रपदमें पश्चिमीय हवा चले तथा इस महीनेमें रविवारके दिन पूर्वीय हवा चले तो अनाज उत्पन्न नहीं होता और वर्षाकी भी कमी रहती है। श्रावणमासमें पूर्वीय वायुका चलना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। अतः इस महीनेमें पश्चिमीय हवाके चलनेसे फसल अच्छी उत्पन्न होती है। श्रावणमासमें यदि प्रतिपदा तिथि रविवारको हो, और उस दिन तेज पूर्वीय हवा चलती हो तो वर्षाका अभाव आश्विनमासमें अवश्य रहता है। प्रतिपदा तिथिका रविवार और मंगलवारको पड़ना भी शुभ नहीं है। इससे वर्षाकी कमीकी और फसलकी बरबादीकी सूचना मिलती है। भाद्रपदमासमें पश्चिमीय हवाका चलना अशुभ और पूर्वीय हवाका चलना अधिक शुभ माना गया है। यदि श्रावणी पूर्णिमा शनिवारको हो और इस दिन दक्षिणीय वायु चलता हो तो वर्षाकी कमी आश्विनमासमें रहती है। शनिवारके साथ शतभिषा नक्षत्र भी हो तो और भी अधिक हानिकर होता है। भाद्रपद प्रतिपदाको प्रातःकाल पश्चिमीय हवा चले और यह दिन भर चलती रह जाय, तो खूब वर्षा होती है। आश्विन मासके अतिरिक्त कार्तिक मासमें भी जल बरसता है। गेहूँ और धान दोनोंकी फसलके लिए यह उत्तम होता है। भाद्रपद कृष्णा पञ्चमी शनिवार या मंगलवारको हो और इस दिन पूर्वीय हवा चले तो साधारण वर्षा और साधारण ही फसल तथा दक्षिणीय हवा चले तो फसलके अभावके साथ वर्षाका भी

सर्वथा बलवान् वायुः स्वचक्रे निरभिग्रहः ।
करणादिभिः संयुक्तो विशेषेण शुभाऽशुभः ॥६५॥

अभिग्रहसे रहित वायु स्वचक्रमें सर्वथा बलवान् होता है और करणादिकसे संयुक्त हो तो विशेष रूपसे शुभाशुभ होता है—शुभ करणादिसे युक्त होनेपर शुभ फलसूचक और अशुभ-करणादिकसे युक्त होने पर अशुभसूचक होता है ॥६५॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके नैमित्ते वातलक्षणं नाम नवमोऽध्यायः ।

विवेचन—वायुके चलने पर अनेक बातोंका फलादेश निर्भर है। वायु द्वारा यहाँ पर आचार्यने केवल वर्षा, कृषि और सेना, सेनापति, राजा तथा राष्ट्रके शुभाशुभत्वका निरूपण किया है। वायु विश्वके प्राणियोंके पुण्य और पापके उदयसे शुभ और अशुभ रूपमें चलता है। अतः निमित्तों द्वारा वायु जगत्‌के निवासी प्राणियोंके पुण्य और पापको अभिव्यक्त करता है। जो जानकार व्यक्ति हैं, वे वायुके द्वारा भावी फलको अवगत कर लेते हैं। आषाढ़ी प्रतिपदा और पूर्णिमा ये दो तिथियाँ इस प्रकारकी हैं, जिनके द्वारा वर्षा, कृषि, व्यापार, रोग, उपद्रव इत्यादिके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यहाँ पर प्रत्येक फलादेशका क्रमशः निरूपण किया जाता है।

वर्षा सम्बन्धी फलादेश—आषाढ़ी प्रतिपदाके दिन सूर्यास्तके समयमें पूर्व दिशामें वायु चले तो आश्विन महीनेमें अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकारके वायुसे अगले महीनेमें भी वर्षाका योग अवगत करना चाहिए। रात्रिके समय जब आकाशमें मेघ छाये हुए हों और धीमी-धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्वका वायु चले तो भाद्रपद मासमें अच्छी वर्षाको सूचना समझनी चाहिए। इस तिथिको यदि मेघ प्रातःकालसे ही आकाशमें हों और वर्षा भी हो रही हो, तो पूर्व दिशाका वायु चातुर्मासमें वर्षाका अभाव सूचित करता है। तीव्र धूप दिन भर पड़े और पूर्व दिशाका वायु दिन भर चलता रहे तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षाका योग होता है। आषाढ़ी प्रतिपदाका तपना उत्तम माना गया है, इससे चातुर्मासमें उत्तम वर्षा होनेका योग समझना चाहिए। उपर्युक्त तिथिको सूर्योदय कालमें पूर्वीय वायु चले और साथ ही आकाशमें मेघ हों पर वर्षा न होती हो तो श्रावण महीनेमें उत्तम वर्षाकी सूचना समझनी चाहिए। उक्त तिथिको दक्षिण और पश्चिम दिशाका वायु चले तो वर्षा चातुर्मासमें बहुत कम या उसका बिल्कुल अभाव होता है। पश्चिम दिशाका वायु चलनेसे वर्षाका अभाव नहीं होता, बल्कि श्रावणमें घनघोर वर्षा, भाद्रपदमें अभाव और आश्विनमें अल्प वर्षा होती है। दक्षिण दिशाका वायु वर्षाका अवरोध करता है। उत्तर दिशाका वायु चलनेसे भी वर्षाका अच्छा योग रहता है। आरम्भमें कुछ कमी रहती है, पर अन्त तक समयानुकूल और आवश्यकतानुसार होती जाती है। आषाढ़ी पूर्णिमाको आधे दिन—दोपहर तक पूर्वीय वायु चलता रहे तो श्रावण और भाद्रपदमें अच्छी वर्षा होती है, पूरे दिन पूर्वीय पवन चलता रहे तो चातुर्मास पर्यन्त अच्छी वर्षा होती है और एक प्रहर पूर्वीय पवन चले तो केवल श्रावणके महीनेमें अच्छी वर्षा होती है। यदि उक्त तिथिको दोपहरके उपरान्त पूर्वीय पवन चले और आकाशमें बादल भी हों तो भाद्रपद और आश्विन इन दोनों महीनोंमें उत्तम वर्षा होती है। यदि उक्त तिथिको दिनभर सुगन्धित वायु चलता रहे और थोड़ी-थोड़ी वर्षा भी होती रहे तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा होती है। माघ महीनेका भी इस प्रकारका पवन वर्षा होनेकी सूचना देता है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाको दक्षिण दिशाका वायु चले तो वर्षाका अभाव सूचित होता है। यह पवन सूर्योदयसे लेकर मध्याह्नकाल तक चले तो आरम्भमें वर्षाका अभाव और मध्याह्नोत्तर चले तब अन्तिम महीनोंमें वर्षाका अभाव

वायु चले तो देशमें विद्याका विकास, नये-नये अन्वेषणके कार्य, विज्ञानकी उन्नति एवं नये-नये प्रकारकी विद्याओंका प्रसार होता है। नगरोंमें सभी प्रकारका अमन चैन रहता है। शुक्रवारको पूर्वीय वायु दिनभर चलता रहे तो शान्ति, सुभिक्ष और उन्नतिका सूचक है, इस प्रकारके वायुसे देशकी सर्वाङ्गीण उन्नति होती है।

व्यापारिक फलादेश—आषाढ़ी पूर्णिमाको प्रातःकाल पूर्वीय हवा, मध्याह्नकाल दक्षिणीय हवा, अपराह्नकाल पश्चिमीय हवा और सन्ध्यासमय उत्तरीय हवा चले तो एक महीनेमें स्वर्णके व्यापारमें सवाया लाभ, चाँदीके व्यापारमें डेढ़गुना तथा गुड़के व्यापारमें बहुत लाभ होता है। अन्नका भाव सस्ता होता है तथा कपड़े और सूतके व्यापारमें तीन महीनों तक लाभ होता रहता है। यदि इस दिन प्रातःकालसे सूर्यास्त काल तक दक्षिणीय हवा ही चलती रहे तो सभी वस्तुएँ पन्द्रह दिनके बाद ही मँहगी होती हैं और यह मँहगीका बाजार लगभग छः महीने तक चलता है। इस प्रकारके वायुका फल विशेषतः यह है कि अन्नका भाव बहुत मँहगा होता है तथा अन्नकी कमी भी हो जाती है। यदि आधे दिन दक्षिणीय वायु चले, उपरान्त पूर्वीय या उत्तरीय वायु चलने लगे तो व्यापारिक जगत्में विशेष हलचल रहती है तथा वस्तुओंके भाव स्थिर नहीं रहते हैं। सट्टेके व्यापारियोंके लिए उक्त प्रकारका निमित्त विशेष लाभ सूचक है। यदि पूर्वार्ध भागमें उक्त तिथिको उत्तरीय वायु चले और उत्तरार्धमें अन्य किसी भी दिशाकी वायु चलने लगे तो जिस प्रदेशमें यह निमित्त देखा गया है, उस प्रदेशके दो-दो सौ कोश तक अनाजका भाव सस्ता तथा वस्त्रको छोड़ अवशेष सभी वस्तुओंका भाव भी सस्ता ही रहता है। केवल दो महीने तक वस्त्र तथा श्वेत रंगके पदार्थोंके भाव ऊँचे चढ़ते हैं तथा इन वस्तुओंकी कमी भी रहती है। सोना, चाँदी और अन्य प्रकारकी खनिज धातुओंका मूल्य प्रायः सम रहता है। इस निमित्तके दो महीनेके उपरान्त सोनेके मूल्यमें वृद्धि होती है। यद्यपि कुछ ही दिनोंके पश्चात् पुनः उसका मूल्य गिर जाता है। पशुओंका मूल्य बहुत बढ़ जाता है। गाय, बैल और घोड़ेके मूल्यमें पहलेसे लगभग सवाया अन्तर आ जाता है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाकी रातमें ठीक बारह बजेके समय दक्षिणीय वायु चले तो उस प्रदेशमें छः महीनों तक अनाजकी कमी रहती है और अनाजका मूल्य भी बहुत बढ़ जाता है। यदि उक्त तिथिकी मध्यरात्रिमें उत्तरीय हवा चलने लगे तो मशाला, नारियल, सुपाड़ी आदिका भाव ऊँचा उठता है, अनाज सस्ता होता है। सोना, चाँदीका भाव पूर्ववत् ही रहता है। यदि श्रावण कृष्णा प्रतिपदाको सूर्योदय कालमें पूर्वीय हवा, मध्याह्नमें उत्तरीय, अपराह्नमें पश्चिमीय हवा और सन्ध्याकालमें उत्तरीय हवा चलने लगे तो लगभग एक वर्ष तक अनाज सस्ता रहता है, केवल आश्विन मासमें अनाज महँगा होता है, अवशेष सभी महीनोंमें अनाज सस्ता ही रहता है। सोना, चाँदी और अभ्रकका भाव आश्विनसे माघ तक सस्ता तथा फाल्गुनसे ज्येष्ठ तक मँहगा रहता है। व्यापारियोंको कुछ लाभ ही रहता है। उक्त प्रकारके वायु निमित्तसे व्यापारियोंके लिए शुभ फलादेश ही समझा जाता है। यदि इस दिन सन्ध्याकालमें वर्षाके साथ उत्तरीय हवा चले तो अगले दिनसे ही अनाज मँहगा होने लगता है। उपयोग और विलासकी सभी वस्तुओंके मूल्में वृद्धि हो जाती है, विशेष रूपसे आभूषणोंके मूल्य भी बढ़ जाते हैं। जूट, सन, मूंज आदिका भाव भी बढ़ता है। रेशमकी कीमत पहलेसे डेढ़गुनी हो जाती है। काले रंगकी प्रायः सभी वस्तुओंके भाव सम रहते हैं। हरे, लाल और पीले रंगकी वस्तुओंका मूल्य वृद्धिंगत होता है। श्वेतरंगके पदार्थोंका मूल्य सम रहता है। यदि उक्त तिथिको ठीक दोपहरके समय पश्चिमीय वायु चले तो सभी वस्तुओंका भाव सस्ता रहता है; फिर भी व्यापारियोंके लिए यह निमित्त अशुभ सूचक नहीं; उन्हें लाभ होता है। यदि श्रावणी पूर्णिमाको प्रातःकाल वर्षा हो और दक्षिणीय वायु भी चले

अभाव होता है। पञ्चमी तिथिको भरणी नक्षत्र हो और इस दिन दक्षिणी हवा चले तो वर्षाका अभाव रहता है तथा फसल भी अच्छी नहीं होती। पञ्चमी तिथिको गुरुवार और अश्विनी नक्षत्र हो तो अच्छी फसल होती है। कृत्तिका नक्षत्र हो तो साधारणतया वर्षा अच्छी होती है।

राष्ट्र, नगर सम्बन्धी फलादेश—आषाढ़ी पूर्णिमाको पश्चिमीय वायु जिस प्रदेशमें चलती है, उस प्रदेशमें उपद्रव होता है, अनेक प्रकारके रोग फैलते हैं तथा उस क्षेत्रके प्रशासकोंमें मतभेद होता है। यदि पूर्णिमा शनिवारको हो तो उस प्रदेशके शिल्पी कष्ट पाते हैं, रविवारको हो तो चारों वर्णके व्यक्तियोंके लिए अनिष्टकर होता है। मंगलवारको पूर्णिमा तिथि हो और दिनभर पश्चिमीय वायु चलता रहे तो उस प्रदेशमें चोरोंका उपद्रव बढ़ता है तथा धर्मात्माओंको अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। गुरुवार और शुक्रवारको पूर्णिमा हो और इस दिन सन्ध्या समय तीन घंटे तक पश्चिमीय वायु चलता रहे तो निश्चयतः उस नगर, देश या राष्ट्रका विकास होता है। जनतामें परस्पर प्रेम बढ़ता है, धन-धान्यकी वृद्धि होती है और उस देशका प्रभाव अन्य देशों पर भी पड़ता है। व्यापारिक उन्नति होती है तथा शान्ति और सुखका अनुभव होता है। उक्त तिथिको दक्षिणी वायु चले तो उस क्षेत्रमें अत्यन्त भय, उपद्रव, कलह और महामारीका प्रकोप होता है। आपसी कलहके कारण आन्तरिक झगड़े बढ़ते जाते हैं और सुख-शान्ति दूर होती जाती है। मान्य नेताओंमें मतभेद बढ़ता है, सैनिक शक्ति क्षीण होती है। देशमें नये-नये करोंकी वृद्धि होती है और गुप्त रोगोंकी उत्पत्ति भी होती है। यदि रविवारके दिन अपसव्य मार्गसे दक्षिणीय वायु चले तो घोर उपद्रवोंकी सूचना मिलती है। नगरमें शीतला और हैजेका प्रकोप होता है। जनता अनेक प्रकारका त्रास उठाती है, भयङ्कर भूकम्प होनेकी सूचना भी इसी प्रकारके वायुसे समझनी चाहिए। यदि अर्धरात्रिमें दक्षिणीय वायु शब्द करता हुआ बहे तो इसका फलादेश समस्त राष्ट्रके लिए हानिकारक होता है। राष्ट्रको आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है तथा राष्ट्रके सम्मानका भी ह्रास होता है। देशमें किसी महान् व्यक्तिकी मृत्युसे अपूरणीय क्षति होती है। यदि यही वायु प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोम गतिसे प्रवाहित हो तो राष्ट्रको साधारण क्षति उठानी पड़ती है। स्निग्ध, मन्द, सुगन्ध दक्षिणीय वायु भी अच्छा होता है तथा राष्ट्रमें सुख-शान्ति उत्पन्न कराता है। मंगलवारको दक्षिणीय वायु सायं-सायंका शब्द करता हुआ चले और एक प्रकारकी दुर्गन्धि आती हो तो राष्ट्र और देशके लिए चार महीनों तक अनिष्टसूचक होता है। इस प्रकारके वायुसे राष्ट्रको अनेक प्रकारके संकट सहन करने पड़ते हैं। अनेक स्थानों पर उपद्रव होते हैं, जिससे प्रशासकोंको महती कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। देशके खनिज पदार्थोंकी उपज कम होती है और वनोंमें अग्नि लग जाती है। जिससे देशका धन नष्ट हो जाता है। शनिवारकी आषाढ़ी पूर्णिमाको दक्षिणीय वायु चले तो देशको अनेक प्रकारके कष्ट उठाने पड़ते हैं जिस प्रदेशमें इस प्रकारकी वायु चलता है उस प्रदेशके सौ-सौ कोश चारों ओर अग्नि-प्रकोप होता है। आषाढ़ी पूर्णिमाको पूर्वीय वायु चले तो देशमें सुख-शान्ति होती है तथा सभी प्रकारकी शक्ति बढ़ती है। वन, खनिजपदार्थ, कल-कारखाने आदिकी उन्नति होनेका सुन्दर अवसर आता है। सोमवारको यदि पूर्वीय हवा प्रातःकालसे मध्याह्नकाल तक लगातार चलती रहे और हवामें से सुगन्धि आती हो तो देशका भविष्य उज्ज्वल होता है। सभी प्रकारसे देशकी समृद्धि होती है। नये-नये नेताओंका नाम होता है, राजनैतिक प्रमुख बढ़ता जाता है, सैनिक शक्तिका भी विकास होता है। यदि थोड़ी वर्षाके साथ उक्त प्रकारकी हवा चले तो देशमें एक वर्ष तक आनन्दोत्सव होते रहते हैं, सभी प्रकारका अभ्युदय बढ़ता है। शिक्षा, कला-कौशलकी वृद्धि होती है और नैतिकताका विकास नागरिकोंमें पूर्णतया होता है। नेताओंमें प्रेमभाव बढ़ता है जिससे वे देश या राष्ट्रके कर्मोंको बड़े सुन्दर ढंगसे सम्पादित करते हैं। गुरुवारको पूर्वीय

दशमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रवर्षणं[1] निबोधत ।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वतः[2] ॥१॥

अब प्रवर्षणका वर्णन किया जाता है। यह भी पूर्वकी तरह प्रशस्त—शुभ और अप्रशस्त—अशुभ इस प्रकार दो तरहका होता है ॥१॥

ज्येष्ठे[3] मूलमतिक्रम्य [4]पतन्ति बिन्दवो यदा ।
प्रवर्षणं तदा[5] ज्ञेयं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥२॥

ज्येष्ठ मासमें मूल नक्षत्रको बिताकर यदि वर्षा हो तो उसके शुभाशुभका विचार करना चाहिए ॥२॥

आषाढ़े शुक्लपूर्वासु ग्रीष्मे मासे तु पश्चिमे ।
[6]देवः प्रतिपदायां[7] तु यदा[8] कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥३॥
चतुःषष्टिमाढकानि तदा वर्षति वासवः[9] ।
निष्पद्यन्ते च सस्यानि सर्वाणि निरुपद्रवम् ॥४॥

ग्रीष्म ऋतुमें शुक्ला प्रतिपदाको पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें पश्चिम दिशासे बादल उठकर वर्षा हो तो ६४ आढ़क प्रमाण वर्षा होती है और निरुपद्रव—बिना किसी बाधाके सभी प्रकारके अनाज उत्पन्न होते हैं ॥३-४॥

धर्मकामार्था[10] वर्तन्ते[11] परचक्रं प्रणश्यति[12] ।
क्षेमं सुभि[13]क्षमारोग्यं दशरात्रं[14] त्वपग्रहम् ॥५॥

उक्त प्रकारके प्रवर्षणसे धर्म, काम और धन विद्यमान रहते हैं तथा क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्यकी वृद्धि होती है और परचक्र—परशासनका भय दूर हो जाता है किन्तु दस दिनके बाद पराजय होती है—अशुभ फल घटित होता है ॥५॥

[15]उत्तराभ्यामाषाढाभ्यां यदा देवः प्रवर्षति ।
विज्ञेया[16] द्वादश द्रोणा अतो वर्षं सुभिक्षदम्[17] ॥६॥
तदा निम्नानि वातानि[18] मध्यमं वर्षणं भवेत् ।
सस्यानां चापि निष्पत्तिः सुभिक्षं क्षेममेव च ॥७॥

जब उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें वर्षा होती है, तब १२ द्रोण प्रमाण जलकी वर्षा होती है तथा सुभिक्ष भी होता है। मन्द-मन्द वायु चलता है, मध्यम वर्षा होती है, अनाजोंकी उत्पत्ति होती है, सुभिक्ष और कल्याण-मंगल होते हैं ॥६-७॥

---

१. मेघवर्षं आ०, प्रवर्षन्तं मु० A. D. । २. अनुपूर्वशः मु० । ३. ज्येष्ठो मु० A. D. । ४. पतन्ते मु० B. C. D. । ५. यथा मु० A. B. D. । ६. देवः मु० C. D. । ७. प्रतिपादनेह मु० C. । ८. यद्, मु० A., तदा मु० D. । ९. माधवः आ० । १०. धर्मार्थकामा आ० । ११. प्रवर्तन्ते मु० A. D. । १२. प्रशाम्यन्ति मु० C. । १३. सुभिक्षं मु० । १४. दशराजा मु० । १५. उत्तरां मु० C. । १६. विज्ञेयं मु० C. । १७. सुभिक्षकम् मु० A. । १८. वाप्यानि मु० B. ।

तो अगले दिनसे ही सभी वस्तुओंकी मँहगाई समझ लेनी चाहिए। इस प्रकारके निमित्तका प्रधान फलादेश खाद्य पदार्थोंके मूल्यमें वृद्धि होना है। खनिज धातुओंके मूल्यमें भी कुछ वृद्धि होती है, पर थोड़े दिनोंके उपरान्त उनका भाव भी नीचे उतर आता है। यदि उक्त तिथिको पूरे दिन एक ही प्रकारकी हवा चलती रहे तो वस्तुओंके भाव सस्ते और हवा बदलती रहे तो वस्तुओंके भाव ऊँचे उठते हैं। विशेषतः मध्याह्न और मध्यरात्रिमें जिस प्रकारकी हवा हो, वैसा ही फल समझना चाहिए। पूर्वीय और उत्तरीय हवासे वस्तुएँ सस्ती और पश्चिमीय और दक्षिणीय हवाके चलनेसे वस्तुएँ मँहगी होती हैं।

दशमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रवर्षणं[1] निबोधत ।
[5]प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः[2] ॥१॥

अब प्रवर्षणका वर्णन किया जाता है। यह भी पूर्वकी तरह प्रशस्त—शुभ और अप्रशस्त—अशुभ इस प्रकार दो तरहका होता है ॥१॥

ज्येष्ठे[3] मूलमतिक्रम्य [4]पतन्ति बिन्दवो यदा ।
प्रवर्षणं तदा[8] ज्ञेयं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥२॥

ज्येष्ठ मासमें मूल नक्षत्रको बिताकर यदि वर्षा हो तो उसके शुभाशुभका विचार करना चाहिए ॥२॥

आषाढ़े शुक्लपूर्वासु ग्रीष्मे मासे तु पश्चिमे ।
[6]देवः प्रतिपदायां[7] तु यदा[8] कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥३॥
चतुःषष्टिमाढकानि तदा वर्षति वासवः[9] ।
निष्पद्यन्ते च सस्यानि सर्वाणि निरुपद्रवम् ॥४॥

ग्रीष्म ऋतुमें शुक्ला प्रतिपदाको पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें पश्चिम दिशासे बादल उठकर वर्षा हो तो ६४ आढ़क प्रमाण वर्षा होती है और निरुपद्रव—बिना किसी बाधाके सभी प्रकारके अनाज उत्पन्न होते हैं ॥३-४॥

धर्मकामार्था[10] वर्तन्ते[11] परचक्रं प्रणश्यति[12] ।
क्षेमं सुभि[13]क्षमारोग्यं दशरात्रं[14] त्वपग्रहम् ॥५॥

उक्त प्रकारके प्रवर्षणसे धर्म, काम और धन विद्यमान रहते हैं तथा क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्यकी वृद्धि होती है और परचक्र—परशासनका भय दूर हो जाता है किन्तु दस दिनके बाद पराजय होती है—अशुभ फल घटित होता है ॥५॥

[15]उत्तराभ्यामाषाढाभ्यां यदा देवः प्रवर्षति ।
विज्ञेया[16] द्वादशा द्रोणा अतो वर्षं सुभिक्षदम्[17] ॥६॥
तदा निम्नानि वातानि[18] मध्यमं वर्षणं भवेत् ।
सस्यानां चापि निष्पत्तिः सुभिक्षं क्षेममेव च ॥७॥

जब उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें वर्षा होती है, तब १२ द्रोण प्रमाण जलकी वर्षा होती है तथा सुभिक्ष भी होता है। मन्द-मन्द वायु चलता है, मध्यम वर्षा होती है, अनाजोंकी उत्पत्ति होती है, सुभिक्ष और कल्याण-मंगल होते हैं ॥६-७॥

---

१. मेघवर्षं आ०, प्रवर्षन्तं मु० A. D. । २. अनुपूर्वशः मु० । ३. ज्येष्ठो मु० A. D. । ४. पतन्ते मु० B. C. D. । ५. यथा मु० A. B. D. । ६. देवः मु० C. D. । ७. प्रतिपादनेद्द मु० C. । ८. यद्, मु० A., तदा मु० D. । ९. माधवः आ० । १०. धर्मार्थकामा आ० । ११. प्रवर्तन्ते मु० A. D. । १२. प्रशाम्यन्ति मु० C. । १३. सुभिक्षं मु० । १४. दशराजा मु० । १५. उत्तरां मु० C. । १६. विज्ञेयं मु० C. । १७. सुभिक्षकम् मु० A. । १८. वान्यानि मु० B. ।

श्रवणेन वारि विज्ञेयं श्रेष्ठं सस्यं च निर्दिशेद् ।
चौराश्च प्रबला[1] ज्ञेया व्याधयोऽत्र पृथग्विधाः ॥८॥
क्षेपाण्यत्र प्ररोहन्ति दष्टानां[2] नास्ति जीवितम् ।
अष्टादशाहं जानीयादपग्रहं[3] न संशयः ॥९॥

यदि श्रवण नक्षत्रमें जलकी वर्षा हो तो अन्नकी उपज अच्छी होती है, चोरोंकी शक्ति बढ़ती है और अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। खेतोंमें अन्नके अंकुर अच्छी तरह उत्पन्न होते हैं, दष्टों—चूहोंके लिए तथा डांस, मच्छरोंके लिए यह वर्षा हानिकारक है, उनकी मृत्यु होती है। अठारह दिनोंके पश्चात् अपग्रह-पराजय तथा अशुभ फलकी प्राप्ति होती है, इसमें सन्देह नहीं ॥८-९॥

आढकानि धनिष्ठायां[4] सप्तपञ्च[5] समादिशेत्[6] ।
मही सस्यवती ज्ञेया वाणिज्यं च विनश्यति ॥१०॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सप्तरात्रमपग्रहः ।
प्रबला दंष्ट्रिणो ज्ञेया मूषकाः शलभाः शुकाः ॥११॥

धनिष्ठा नक्षत्रमें वर्षा हो तो उस वर्ष ५७ आढ़क वर्षा होती है, पृथ्वी पर फसल अच्छी उत्पन्न होती है और व्यापारका नाश होता है। इस प्रकारकी वर्षासे क्षेम-कल्याण, सुभिक्ष और आरोग्य होता है तथा सात दिनोंके उपरान्त अपग्रह—अशुभका फल प्राप्त होता है। दन्तधारी प्राणी मूषक, पतंग, तोता आदि प्रबल होते हैं अर्थात् उनके द्वारा फसलको हानि पहुँचती है ॥१०-११॥

खारीस्तु वारिणो [7]विन्द्यात् सस्यानां [8]चाप्युपद्रवम् ।
चौरास्तु प्रबला ज्ञेया न च कश्चिदपग्रहः[9] ॥१२॥

शतभिषा नक्षत्रमें वर्षा हो तो फसल उत्पन्न होनेमें अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। चोरों की शक्ति बढ़ती है, किन्तु अशुभ किसीको नहीं होता ॥१२॥

पूर्वाभाद्रपदायां तु यदा मेघः प्रवर्षति ।
चतुःषष्टिमाढकानि तदा वर्षति सर्वशः ॥१३॥
सर्वधान्यानि जायन्ते बलवन्तश्च तस्कराः ।
[10]नाणकं [11]क्षुभ्यते चापि दशरात्रमपग्रहः ॥१४॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें जब मेघ वर्षता है तो उस समय सर्वत्र ६४ आढ़क प्रमाण वर्षा होती है। सभी प्रकारके अनाज उत्पन्न होते हैं, चोरोंकी शक्ति बढ़ती है तथा नेताओंके मनमें भी क्षोभ उत्पन्न हो जाता है और दस दिनके बाद अनिष्ट या अशुभ होता है ॥१३-१४॥

१. प्रबला भा०। २. नष्टानां मु० C.। ३. भवग्रहं मु० C.। ४. श्रविष्ठायाम् भा०। ५. सप्तपञ्चाशतम् मु० C.। ६. वदेत्। ७. ज्ञेया मु० A. B. D.। ८. अप्युपद्रवम् मु० A.। ९. उपमह मु० A.। १०. नायकं मु० B.। ११. क्षिप्यते भा०।

नवतिराढकानि स्युरुत्तरायां समादिशेत् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं सर्वसस्यं[1] समृद्धयति ॥१५॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं विंशद्रा[2] त्रमपग्रहः ।
दिवसानां विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥१६॥

यदि प्रथम वर्षा उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें हो तो ९० आढ़क प्रमाण जलकी वर्षा होती है। स्थलमें बोया गया बीज भी समृद्धिको प्राप्त होता है, तथा सभी प्रकारके अनाज बढ़ते हैं। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्यकी प्राप्ति होती है तथा २० दिनके पश्चात् अपग्रह—अशुभ होता है, इस प्रकारका भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१५-१६॥

चतुःषष्टिमाढकानीह रेवत्यामभिनिर्दिशेत् ।
सस्यानि च समृद्धयन्ते सर्वाण्येव यथाक्रमम् ॥१७॥
उत्पद्यन्ते[3] च राजानः परस्परविरोधिनः[4] ।
यानयुग्यानि शोभन्ते [5]बलवद्दंष्ट्रिवर्धनम् ॥१८॥

यदि प्रथम वर्षा रेवती नक्षत्रमें हो तो उस वर्ष ६४ आढ़क प्रमाण जलकी वर्षा होती है और क्रमानुसार सभी प्रकारके अनाजकी समृद्धि होती है। राजाओंमें परस्पर विरोध उत्पन्न होता है, सेना और दंष्ट्रधारी—चूहोंकी वृद्धि होती है ॥१७-१८॥

एकोनानि[6] तु पञ्चाशदाढकानि समादिशेत् ।
अश्विन्यां कुरुते यत्र प्रवर्षणमसंशयः ॥१९॥
[7]भवेतामुभये[8] सस्यं पीड्यन्ते यवनाः शकाः ।
गान्धारिकाश्च [9]काम्बोजाः पाञ्चालाश्च चतुष्पदाः ॥२०॥

यदि प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्रमें हो तो ४९ आढ़क जलकी वर्षा होती है, इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। कार्तिकी और वैशाखी दोनों ही प्रकारकी फसल उत्पन्न होती है। यवन, शक, गान्धार, काम्बोज, पाञ्चाल और चतुष्पद—चौपाएँ पीड़ित होते हैं अर्थात् उन्हें नाना प्रकारके कष्ट होते हैं ॥१९-२०॥

एकोनविंशतिर्विन्द्यादाढकानि न संशयः ।
भरण्यां वासवश्चैव यदा कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥२१॥
व्यालाः सरीसृपाश्चैवम[10]रणं व्याधयो रुजः ।
सस्यं कनिष्ठं[11] विज्ञेयं प्रजाः सर्वाश्च दुःखिताः ॥२२॥

जब प्रथम वर्षाका प्रारम्भ भरणी नक्षत्रमें होता है, उस समय वर्ष भरमें निस्सन्देह उन्नीस आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है। सर्प और सरीसृप—दुमुही, विभिन्न जातियोंके सर्पादि, मरण, व्याधि, रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अनाज भी निम्न कोटिका ही उत्पन्न होता है और प्रजाको सभी प्रकारसे कष्ट उठाना पड़ता है ॥२१-२२॥

---

१. सर्वमुक्तं आ० । २. त्रिशरात्रं मु० A. B. D. । ३. उद्विजन्ते मु० A. B. D. । ४. परस्परविरोधिकृत मु० A., परस्परविनाशिनः मु० C. । ५. बल्वद्दाढ्रन्धनम् मु० । ६. एकान्नूनानि मु० C. । ७. भवेत् मु०, भवे मु०, D., भवेतन् मु० C. । ८. चापि मु० C. । ९. शकाम्बोजाः आ० । १०. मृत्युव्याधितो विविधैर्जैः मु० A. । ११. कनिष्टकं ज्ञेयं ।

आढकान्येकपञ्चाशत् कृत्तिकासु समादिशेत् ।
तदा त्वपग्रहो ज्ञेयः सप्तविंशतिरात्रकः ॥२३॥
द्विमासिकस्तदा [1]दैवश्चित्रं सस्यमुपद्रवम् ।
निम्नेषु वापयेद् बीजं भयमग्नेर्विनिर्दिशेत् ॥२४॥

यदि प्रथम वर्षा कृत्तिका नक्षत्रमें हो तो ५१ आढक प्रमाण वर्षा समझनी चाहिए और २७ दिनोंके उपरान्त अनिष्ट समझना चाहिए। उस वर्ष मेघ दो महीने तक ही बरसते हैं, अनाजकी उत्पत्तिमें भी विघ्न आते हैं, अतः निम्न स्थानोंमे बीज बोना अच्छा होता है। इस वर्षमें अग्निका भय भी समझना चाहिए ॥२३–२४॥

आढकान्येकविंशच्च[2] रोहिण्यामभिवर्षति[3] ।
अपग्रहं निजानीयात् सर्वमेकादशाहिकाम् ॥२५॥
[4]सुभिक्षं क्षेममारोग्यं नैर्ऋतीयं बहूदकम् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं राज्ञो विजयमादिशेत् ॥२६॥

यदि प्रथम वर्षा रोहिणी नक्षत्रमें हो तो ६१ आढक प्रमाण उस वर्ष जल बरसता है और ११ दिनोंके बाद अपग्रह—अनिष्ट होता है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य समझना चाहिए। नैऋत्य दिशाकी ओरसे बादल उठकर अधिक जलकी वर्षा करते हैं। स्थलमें बीज बोने पर भी अच्छी फसल उत्पन्न होती है तथा राजाकी विजयकी सूचना भी समझनी चाहिए ॥२५–२६॥

आढकान्येकनवति सौम्ये प्रवर्षते यदा ।
अपग्रहं तदा विन्द्यात् सर्वमेकादशाहिकम् ।
[5]तदाऽप्यपग्रहं विन्द्याद् वासराणि चतुर्दश ॥२७॥
महामात्याश्च पीडयन्ते [6]क्षुधाव्याधिश्च जायते ।
[7]क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं दंष्ट्रिणः प्रबलास्तदा ॥२८॥

यदि प्रथम वर्षा मृगशिरा नक्षत्रमें हो तो ९१ आढक प्रमाण उस वर्ष जलकी वर्षा समझ लेनी चाहिए और चौदह दिनके उपरान्त अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। प्रधानमन्त्रीको पीड़ा, अनेक प्रकारके रोग, सुभिक्ष एवं चूहोंका प्रकोप उस वर्षमें समझना चाहिए ॥२७–२८

आढकानि तु द्वात्रिंशदार्द्रायाश्चापि निर्दिशेत्[8] ।
दुर्भिक्षं व्याधिमरणं सस्यघातमुपद्रवम् ॥२९॥
श्रावणे प्रथमे मासे [9]वर्षं वा न च वर्षति ।
प्रोष्ठपदं च वर्षित्वा शेषकालं न वर्षति ॥३०॥

यदि प्रथम वर्षा आर्द्रामें हो तो ३२ आढक प्रमाण उस वर्ष जलकी वर्षा होती है। उस वर्ष दुर्भिक्ष, नाना प्रकारकी व्याधियाँ, मृत्यु और फसलको बाधा पहुँचानेवाले अनेक प्रकारके

१. मेघः मु० । २. नवति मु० । ३. विनिर्दिशेत् मु० । ४. मुद्रित प्रतिमें 'क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं' पाठ मिलता है। ५. तदाऽप्यपग्रहं विन्द्यात् वासराणि चतुर्दशः मु० । ६. बहून्याधि विनिर्दिशेत् । ७. सुभिक्षं चैव विज्ञेयं दंष्ट्रिणः प्रबलास्तथा । ८. अभिनिर्दिशेत् मु० । ९. वर्षित्वा न च वर्षति, वर्षत्येव पुनः पुनः मु० C. ।

उपद्रव होते हैं। श्रावण मासके प्रथम पक्ष—कृष्ण पक्षमें अनेक बार वर्षा होती है, किन्तु भाद्रपद मासमें एक बार जल बर्षता है, फिर वर्षा नहीं होती ॥२६-३०॥

आढकान्येकनवतिं विन्द्याच्चैव पुनर्वसौ ।
सस्यं निष्पद्यते क्षिप्रं व्याधिश्च प्रबला[1] भवेत् ॥३१॥

यदि पुनर्वसु नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो ९१ आढक प्रमाण उस वर्ष जलकी वर्षा होती है, उस वर्ष धान्य—अनाज शीघ्र ही उत्पन्न होता है। और रोगोंका जोर रहता है ॥३१॥

चत्वारिंशच्च द्वे वाऽपि जानीयादाढकानि च[2] ।
पुष्येण मन्दवृष्टिश्च निम्ने बीजानि वापयेत् ॥३२॥
पक्षमश्वयुजे चापि[3] पक्षं प्रोष्ठपदे तथा ।
अपग्रहं विजानीयात् बहुलेऽपि प्रवर्षति[4] ॥३३॥

पुष्य नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो ४२ आढक प्रमाण जल वर्षता है। वर्षा मन्द-मन्द धीरे-धीरे होती है, अतः निम्न स्थानों पर बीज बोनेसे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। आश्विन और भाद्रपद मासमें कृष्ण पक्षमें अपग्रह—अनिष्ट होता है तथा वर्षा भी इन्हीं पक्षोंमें होती है ॥३२-३३॥

[5]चतुष्षष्टिमाढकानीह तदा वर्षन्ति वासवः ।
यदा श्लेषाश्च कुरुते प्रथमे च प्रवर्षणम् ॥३४॥
सस्यघातं विजानीयात् व्याधिमिश्चोदकेन तु ।
साधवो दुःखिता ज्ञेया प्रोष्ठपदमपग्रहः ॥३५॥

यदि आश्लेषा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो उस वर्ष ६४ आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है। फसलमें रोग अनेक प्रकारके लगते हैं, नाना प्रकारके रोगोंसे जनतामें आतङ्क व्याप्त रहता है, साधुओंको अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं तथा भाद्रपद मासमें अपग्रह—अनिष्ट होता है ॥३४-३५॥

मघासु खारी विज्ञेया सस्यानाञ्च समुद्भवः ।
कुक्षिव्याधिश्च बलवाननीतिश्च तु जायते ॥३६॥

यदि मघा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो मखारी प्रमाण—१६ द्रोण जलकी वर्षा उस वर्ष होती है और अनाजकी उत्पत्ति खूब होती है। पेटके नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं और न्याय-नीतिका प्रचार होता है ॥३६॥

फाल्गुनीषु च पूर्वासु यदा देवः प्रवर्षति ।
खारी तदाऽऽदिशेत् पूर्णां तदा स्त्रीणां सुखानि च[6] ॥३७॥
सस्यानि फलवन्ति स्युर्वाणिज्यानि दिशन्ति च ।
अपग्रहश्चतुस्त्रिंशच्छ्रावणे सप्तरात्रिकः ॥३८॥

१. बलवान् विदुः मु० । २. ऽन्यथ मु० । ३. मासे मु० । ४. प्रवर्षणम् मु० । ५. ३४ सम्पादक श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है । ६. विन्द्यात् मु० । ७. च तत्सुखम् मु० ।

एतद् व्यासेन कथितं [1]समासाच्छ्रूयतां पुनः ।
भद्रबाहुवचः श्रुत्वा मतिमानवधारयेत् ।।५३।।

यह विस्तारसे वर्णन किया है, संक्षेपमें पुन सुनिये । भद्रबाहुके वचनोंको सुनकर बुद्धिमानोंको उनका अवधारण करना चाहिए ।।५३।।

द्वात्रिंशदाढकानि स्युः नक्रमासेषु निर्दिशेत् ।
समक्षेत्रे द्विगुणितं तत् [2]त्रिगुणं वाहिकेषु च ।।५४।।

नक्रमास—श्रावणमासमें ३२ आढक प्रमाण वर्षा हो तो समक्षेत्रमें फसल दुगुनी और निम्न स्थल—आर्द्र स्थलोंमें तिगुनी फसल होती है ।।५४।।

उल्कावत् साधनं चात्र वर्षणं च विनिर्दिशेत् ।
शुभाऽशुभं [3]तदा वाच्यं सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि[4] ।।५५।।

उल्काके समान वर्षणकी सिद्धि भी कर लेनी चाहिए तथा सम्यक् प्रकार जानकरके शुभाशुभ फलका निरूपण करना चाहिए ।।५५।।

इति भद्रबाहुके संहितायां महानैमित्तशास्त्रे सकलसारसमुच्चयवर्षणं नाम दशमोऽध्यायः परिसमाप्तः ।

विवेचन—वर्षाका विचार यद्यपि पूर्वोक्त अध्यायोंमें भी हो चुका है, फिर भी आचार्य विशेष महत्ता दिखलानेके लिए पुनः विचार करते हैं प्रथम वर्षा जिस नक्षत्रमें होती है, उसीके अनुसार वर्षाके प्रमाणका विचार किया गया है । आचार्य ऋषिपुत्रने निम्नप्रकार वर्षाका विचार किया है।

यदि मार्गशीर्ष महीनेमें पानी बरसता है तो ज्येष्ठके महीनेमे वर्षाका अभाव रहता है । यदि पौषमासमें बिजली चमक कर पानी बरसे तो आषाढ़के महीनेमें अच्छी वर्षा होती है । माघ और फाल्गुन महीनोंके शुक्लपक्षमें तीन दिनों तक पानी बरसता रहे तो छठवें और नौवें महीनेमे अवश्य पानी बरसता है । यदि प्रत्येक महीनेमें आकाशमे बादल आच्छादित रहें तो उस प्रदेशमें अनेक प्रकारकी बीमारियाँ होती हैं । वर्षके आरम्भमें यदि कृत्तिका नक्षत्रमें पानी बरसे तो अनाजकी हानि होती है और उस वर्षमें अतिवृष्टि या अनावृष्टिका भी योग रहता है । रोहिणी नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होने पर भी देशकी हानि होती है तथा असमयमें वर्षा होती है, जिससे फसल अच्छी नहीं उत्पन्न होती । अनेक प्रकारकी व्याधियों तथा अनाजकी मँहगी भी इस नक्षत्रमें पानी बरसनेसे होती है । परस्परमें कलह और विसंवाद भी होते हैं । मृगशिर नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे अवश्य सुभिक्ष होता है । फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है । यदि सूर्य नक्षत्र मृगशिर हो तो खण्डवृष्टि होती है तथा कृषिमें अनेक प्रकारके रोग भी लगते हैं । इस नक्षत्रकी वर्षा व्यापारके लिए भी उत्तम नहीं है । राजा या प्रशासकको भी कष्ट होते हैं । मन्त्रीपुत्र या किसी बड़े अधिकारीकी मृत्यु भी दो महीनेमें होती है । आर्द्रा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो खण्डवृष्टिका योग रहता है, फसल साधारणतया आधी उत्पन्न होती है । चीनी, गुड़, और मधुका भाव सस्ता रहता है । श्वेत रंगके पदार्थोंमें कुछ मँहगी आती है । पुनर्वसु नक्षत्रमें प्रथम

१. समासेन पुनः शृणु । २. त्रिगुण वाधिकेषु च मु० । ३. तनो मु० । ४. क्रमम् मु० ।

वर्षा हो तो एक महीने तक लगातार जल बरसता है। फसल अच्छी नहीं होती तथा बोया गया बीज भी मारा जाता है। आश्विन और कार्त्तिकमें वर्षाका अभाव रहता है और सभी वस्तुएँ प्रायः मँहगी होती हैं, लोगोंमें धर्माचरणकी प्रवृत्ति होती है, यद्यपि रोग-व्याधियोंके लिए उक्त प्रकारका वर्ष अत्यन्त अनिष्टकर होता है, सर्वत्र अशान्ति और असन्तोष दिखलाई पड़ता है; फिर साधारण जनताका ध्यान धर्मसाधन की ओर अवश्य जाता है। पुष्य नक्षत्रमें प्रथम जल वर्षा होने पर समयानुकूल जलकी वर्षा एक वर्ष तक होती रहती है, कृषि बहुत उत्तम होती है, खाद्यान्नों के सिवाय फलों और मेवोंकी अधिक उत्पत्ति होती है। प्रायः समस्त वस्तुओंके भाव गिरते हैं। जनतामें पूर्णतया शान्ति रहती है, प्रशासक वर्गकी समृद्धि बढ़ती है। जनसाधारणमें परस्पर विश्वास और सहयोगकी भावनाका विकास होता है। यदि आश्लेषा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो वर्षा उत्तम नहीं होती, फसलकी हानि होती है, जनतामें असन्तोष और अशान्ति फैलती है। सर्वत्र अनाजकी कमी होनेसे हाहाकार व्याप्त हो जाता है। अग्निभय और शास्त्रभयका आतङ्क उस प्रदेशमें अधिक रहता है। चोरी और लूटका व्यापार अधिक बढ़ता है। दैन्यता और निराशाका संचार होनेसे राष्ट्रमें अनेक प्रकारके दोष प्रविष्ट होते हैं। यदि इस नक्षत्रमें वर्षाके साथ ओले भी गिरें तो जिस प्रदेशमें इस प्रकारकी वर्षा हुई है, उस प्रदेशके लिए अत्यन्त भय-कारक समझना चाहिए। उक्त प्रदेशमें प्लेग, हैजा जैसी संक्रामक बीमारियाँ अधिक बढ़ती हैं, जनसंख्या घट जाती है। जनता सब तरहसे कष्ट उठाती है। आश्लेषा नक्षत्रमें तेज वायुके साथ वर्षा हो तो एक वर्ष पर्यन्त उक्त प्रदेशको कष्ट उठाना पड़ता है, धूल और कंकड़ पत्थरोंके साथ वर्षा हो तथा चारों ओर बादल मँडलाकार बन जावें, तो निश्चयतः उस प्रदेशमें अकाल पड़ता है तथा पशुओंकी भी हानि होती है और अनेक प्रकारके कष्ट उठाने पड़ते हैं। प्रशासक वर्गके लिए उक्त प्रकारकी वर्षा भी कष्टकारक होती है।

यदि मघा और पूर्वाफाल्गुनीमें प्रथम वर्षा हो तो समयानुकूल वर्षा होती है, फसल भी उत्तम होती है। जनतामें सब प्रकारका अमन-चैन व्याप्त रहता है। कलाकार और शिल्पियोंके लिए उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा कष्टप्रद है तथा मनोरंजनके साधनोंकी कमी रहती है। राजनैतिक और सामाजिक दृष्टिसे उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा साधारण फल देती है। देशमें सभी प्रकारकी समृद्धि बढ़ती है और नागरिकमें अभ्युदयकी वृद्धि होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा फसलकी वृद्धिके लिए शुभ है, पर आन्तरिक शान्तिमें बाधक होती है। भीतरी आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता और आन्तरिक अशान्ति बनी ही रह जाती है। उत्तराफाल्गुनी और हस्त नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे सुभिक्ष और आनन्द दोनोंकी ही प्राप्ति होती है। वर्षा प्रचुर परिमाणमें होती है, फसलकी उत्पत्ति भी अच्छी होती है। विशेषतः धानकी फसल खूब होती है। पशु पक्षियोंको भी शान्ति और सुख मिलता है। तृण और धान्य दोनोंकी उपज अच्छी होती है। आर्थिक शान्तिके विकासके लिए उक्त नक्षत्रोंके वर्षा होना अत्यन्त शुभ है। गुड़की फसल बहुत अच्छी होती है तथा गुड़का भाव भी सस्ता रहता है। जूटकी फसल साधारण होती है, इसका भाव भी आरम्भमें सस्ता, पर आगे जाकर तेज हो जाता है। व्यापारियोंके लिए भी उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा सुखदायक होती है। साधारणतः व्यापार बहुत ही अच्छा चलता है। देशमें कल-कारखानोंका विकास भी अधिक होता है। चित्रा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो वर्षा अत्यन्त कम होती है, परन्तु भाद्रपद और आश्विनमें वर्षाका योग अच्छा रहता है। स्वाती नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे मामूली वर्षा होती है। श्रावण मासमें अच्छा पानी बरसता है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। कार्तिकी फसल साधारण ही रहती है, पर चैत्री फसल अच्छी हो जाती है; क्योंकि उक्त नक्षत्रकी वर्षा आश्विनमासमें भी जलकी वर्षाका योग उत्पन्न करती है। यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो उस वर्षमें खूब जलकी वर्षा होती है।

यदि पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष खारी प्रमाण—१६ द्रोण जलकी वर्षा होती है। स्त्रियोंको अनेक प्रकारका सुख प्राप्त होता है। कृषि और वाणिज्य दोनों ही फसल होते हैं। २४ दिनोंके पश्चात् अर्थात् श्रावणमासमें ७ दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ॥३७-३८॥

उत्तरायां तु फाल्गुन्यां षष्टिसप्त च निर्दिशेत् ।
आढकानि सुभिक्षं च क्षेममारोग्यमेव च ॥३९॥
बहुजा[1] दीना शीलाश्च धर्मशीलाश्च साश्रवः ।
अपग्रहं विजानीयात् कार्तिके द्वादशाहिकम् ॥४०॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष ६७ आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है तथा सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्यकी प्राप्ति होती है। सभी मनुष्योंमें दानशीलता और साधुओंके धर्मशीलताकी वृद्धि होती है। कार्त्तिक मासमें १२ दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ॥३९-४०॥

पञ्चाशीतिं विजानीयात् हस्ते प्रवर्षणं यदा ।
तदा निम्नानि वाप्यानि पञ्चवर्णं च जायते ॥४१॥
सङ्ग्रामाश्चानुवर्धन्ते शिल्पिकानां सुखोत्तमम् ।
श्रावणाश्वयुजे[2] मासि[3] तथा कार्तिकमेव च ॥४२॥
अपग्रहं विजानीयान्मासि[4] मासि दशाहिकम् ।
चौराश्च बलवन्तः स्युरुत्पद्यन्ते च पार्थिवाः ॥४३॥

हस्त नक्षत्रमें जब प्रथम वर्षा होती है तो २५ आढक प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। निम्न स्थानोंकी वापियाँ—बावड़ियाँ पंचवर्णात्मक हो जाती हैं। इस वर्षमें युद्धकी वृद्धि होती है, शिल्पियोंको उत्तम सुख प्राप्त होता है। श्रावण, आश्विन और कार्त्तिक इन तीनों महीनोंमेंसे प्रत्येक महीनेमें १० दिन तक अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। चोर, सेना—योद्धा और नृपतियोंकी उत्पत्ति होती है अर्थात् उक्त वर्षमें चोरों की, सैनिकोंकी और नृपतियोंकी उत्पत्ति होती है ॥४१-४३॥

द्वात्रिंशमाढकानि स्युश्चित्रायाश्चं[5] प्रवर्षणम् ।
चित्रं विन्द्यात् तदा सस्यं चित्रं वर्षं प्रवर्षति[6] ॥४४
निम्नेषु वापयेद् बीजं स्थलेषु परिवर्जयेत् ।
मध्यमं तं विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥४५॥

चित्रा नक्षत्रमें जिस वर्ष प्रथम वर्षा होती है, उस वर्ष २२ आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है। अनाजकी उत्पत्ति भी विचित्र रूपसे होती है और यह वर्ष भी विचित्र ही होता है। इस वर्ष निम्न स्थानों—आर्द्र स्थानोंमें बीज बोना चाहिए, ऊँचे स्थलोंमें नहीं, क्योंकि यह वर्ष मध्यम होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥४४-४५॥

१. दानशीलाश्च मनुजा मु० । २. युजी मु० । ३. मासौ मु० । ४. मासे मासे मु० । ५. वर्षणं यदा मु० । ६. विनिर्दिशेत् मु० ।

द्वात्रिंशदाढकानि स्युः स्वातौ स्याचेत् प्रवर्षणम् ।
[1]वायुरग्निरनावृष्टिः वर्षमेकं तु वर्षति ॥४६॥

स्वाती नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो ३२ आढक प्रमाण वृष्टि होती है। इस वर्षमें एक ही महीने तक जलकी वर्षा होती है। वायु चलता है तथा अनावृष्टि होती है ॥४६॥

विशाखासु विजानीयात् खारिमेका न[2] संशयः ।
सस्यं निष्पद्यते चापि वाणिज्यं पीड्यते तदा ॥४७॥
अपग्रहं तु विजानीयाद् दशाहं प्रौष्ठपादिकम् ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं तां समा नाऽत्र संशयः ॥४८॥

विशाखामें प्रथम वृष्टि हो तो एक खारीप्रमाण—१६ द्रोण निस्सन्देह जल बरसता है। फसल बहुत अच्छी होती है तथा व्यापार भी निर्बाधरूपसे चलता है। भाद्रपदमासमें दश दिन जाने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है। यों इस वर्षमें निस्सन्देह क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्यकी स्थिति होती है ॥४७-४८॥

जानीयादनुराधायां खारिमेकां[4] प्रवर्षणम् ।
[5]तदा सुभिक्षं सक्षेमं परचक्रं प्रशाम्यति ॥४९॥
दूरं प्रवासिका यान्ति धर्मशीलाश्च मानवाः ।
मैत्री च स्थावरा ज्ञेया शाम्यन्ते चेतयस्तदा ॥५०॥

यदि अनुराधा नक्षत्रमें प्रथम जल वर्षा हो तो एक खारी प्रमाण—१६ द्रोण प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य रहते हैं तथा परशासन भी शान्त रहता है। इस वर्ष दूरके प्रवासी भी वापस लौट आते हैं, सभी व्यक्ति धर्मात्मा रहते हैं। मित्रता स्थिर होती है तथा भय और आतङ्क नष्ट हो जाते हैं ॥४९-५०॥

ज्येष्ठायामाढकानि स्युर्दशश्चाष्टौ[6] विनिर्दिशेत् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं तदा भूदाहविद्रवम्[7] ॥५१॥

ज्येष्ठा नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो १८ आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है। स्थलमें बीज बोने पर भी फसल उत्तम होती है; किन्तु भूकम्प, भूदाह, आदि उपद्रव भी होते हैं। तात्पर्य यह है कि ज्येष्ठा नक्षत्रकी प्रथम वर्षा फसलके लिए उत्तम है ॥५१॥

मूलेन खारी [8]विज्ञेया सस्यं सर्वं समृद्धयते ।
एकमूलानि पीड्यन्ते [9]वर्द्धन्ते तस्करा अपि ॥५२॥

मूल नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो एक खारी प्रमाण जल बरसता है और सभी प्रकारके अनाजोंकी उत्पत्ति खूब होती है। सैनिक—योद्धा पीड़ा प्राप्त करते हैं तथा चोरोंकी वृद्धि होती है ॥५२॥

१. वायुरग्निरनावृष्टिर्मासमेकं च वर्षति मु० । २. खारिरेव न संशयः मु० । ३. सस्य सम्पद्येत् सर्वं वाणिज्य पीड्यते न हि मु० । ४. खारिं प्रवर्षणं यथ मु० । ५. क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं मु० । ६. चतुर्दृष्टि मु० । ७. विद्रवः मु० । ८. विज्ञानीयात् मु० । ९. चौराश्च प्रबलाश्च ये मु० ।

एतद् व्यासेन कथितं [1]समासाच्छ्रूयतां पुनः।
भद्रबाहुवचः श्रुत्वा मतिमानवधारयेत् ॥५३॥

यह विस्तारसे वर्णन किया है, संक्षेपमें पुन सुनिये। भद्रबाहुके वचनोंको सुनकर बुद्धिमानोंको उनका अवधारण करना चाहिए ॥५३॥

द्वात्रिंशदाढकानि स्युः नक्रमासेपु निर्दिशेत्।
समक्षेत्रे द्विगुणितं तत् [2]त्रिगुणं वाहिकेपु च ॥५४॥

नक्रमास—श्रावणमासमें ३२ आढक प्रमाण वर्षा हो तो समक्षेत्रमें फसल दुगुनी और निम्न स्थल—आर्द्र स्थलोंमें तिगुनी फसल होती है ॥५४॥

उल्कावत् साधनं चात्र वर्षणं च विनिर्दिशेत्।
शुभाऽशुभं [3]तदा वाच्यं सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि[4] ॥५५॥

उल्काके समान वर्षणकी सिद्धि भी कर लेनी चाहिए तथा सम्यक् प्रकार जानकरके शुभाशुभ फलका निरूपण करना चाहिए ॥५५॥

इति भद्रबाहुके संहितायां महानैमित्तशास्त्रे सकलमारसमुच्चयवर्षणं नाम दशमोऽध्यायः परिसमाप्तः।

विवेचन—वर्षाका विचार यद्यपि पूर्वोक्त अध्यायोंमें भी हो चुका है, फिर भी आचार्य विशेष महत्ता दिखलानेके लिए पुनः विचार करते हैं प्रथम वर्षा जिस नक्षत्रमें होती है, उसीके अनुसार वर्षाके प्रमाणका विचार किया गया है। आचार्य ऋषिपुत्रने निम्नप्रकार वर्षाका विचार किया है।

यदि मार्गशीर्ष महीनेमें पानी बरसता है तो ज्येष्ठके महीनेमें वर्षाका अभाव रहता है। यदि पौषमासमें बिजली चमक कर पानी बरसे तो आषाढ़के महीनेमें अच्छी वर्षा होती है। माघ और फाल्गुन महीनोंके शुक्लपक्षमें तीन दिनों तक पानी बरसता रहे तो छठवें और नौवें महीनेमें अवश्य पानी बरसता है। यदि प्रत्येक महीनेमें आकाशमें बादल आच्छादित रहें तो उस प्रदेशमें अनेक प्रकारकी बीमारियाँ होती हैं। वर्षके आरम्भमें यदि कृत्तिका नक्षत्रमें पानी बरसे तो अनाजकी हानि होती है और उस वर्षमें अतिवृष्टि या अनावृष्टिका भी योग रहता है। रोहिणी नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होने पर भी देशकी हानि होती है तथा असमयमें वर्षा होती है, जिससे फसल अच्छी नहीं उत्पन्न होती। अनेक प्रकारकी व्याधियाँ तथा अनाजकी मँहगी भी इस नक्षत्रमें पानी बरसनेसे होती है। परस्परमें कलह और विसंवाद भी होते हैं। मृगशिर नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे अवश्य सुभिक्ष होता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। यदि सूर्य नक्षत्र मृगशिर हो तो खण्डवृष्टि होती है तथा कृषिमें अनेक प्रकारके रोग भी लगते हैं। इस नक्षत्रकी वर्षा व्यापारके लिए भी उत्तम नहीं है। राजा या प्रशासकको भी कष्ट होते हैं। मन्त्रीपुत्र या किसी बड़े अधिकारीकी मृत्यु भी दो महीनेमें होती है। आर्द्रा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो खण्डवृष्टिका योग रहता है, फसल साधारणतया आधी उत्पन्न होती है। चीनी, गुड़, और मधुका भाव सस्ता रहता है। श्वेत रंगके पदार्थोंमें कुछ मँहगी आती है। पुनर्वसु नक्षत्रमें प्रथम

१. समासेन पुनः शृणु। २. त्रिगुणं वापितेषु च मु०। ३. ततो मु०। ४. क्रमम् मु०।

वर्षा हो तो एक महीने तक लगातार जल बरसता है। फसल अच्छी नहीं होती तथा बोया गया बीज भी मारा जाता है। आश्विन और कार्तिकमें वर्षाका अभाव रहता है और सभी वस्तुएँ प्रायः मँहगी होती हैं, लोगोंमें धर्माचरणकी प्रवृत्ति होती है, यद्यपि रोग-व्याधियोंके लिए उक्त प्रकारका वर्ष अत्यन्त अनिष्टकर होता है, सर्वत्र अशान्ति और असन्तोष दिखलाई पड़ता है; फिर साधारण जनताका ध्यान धर्मसाधन की ओर अवश्य जाता है। पुष्य नक्षत्रमें प्रथम जल वर्षा होने पर समयानुकूल जलकी वर्षा एक वर्ष तक होती रहती है, कृषि बहुत उत्तम होती है, खाद्यान्नों के सिवाय फलों और मेवोंकी अधिक उत्पत्ति होती है। प्रायः समस्त वस्तुओंके भाव गिरते हैं। जनतामें पूर्णतया शान्ति रहती है, प्रशासक वर्गकी समृद्धि बढ़ती है। जनसाधारणमें परस्पर विश्वास और सहयोगकी भावनाका विकास होता है। यदि आश्लेषा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो वर्षा उत्तम नहीं होती, फसलकी हानि होती है, जनतामें असन्तोष और अशान्ति फैलती है। सर्वत्र अनाजकी कमी होनेसे हाहाकार व्याप्त हो जाता है। अग्निभय और शास्त्रभयका आतङ्क उस प्रदेशमें अधिक रहता है। चोरी और लूटका व्यापार अधिक बढ़ता है। दैन्यता और निराशाका संचार होनेसे राष्ट्रमें अनेक प्रकारके दोष प्रविष्ट होते हैं। यदि इस नक्षत्रमें वर्षाके साथ ओले भी गिरें तो जिस प्रदेशमें इस प्रकारकी वर्षा हुई है, उस प्रदेशके लिए अत्यन्त भय-कारक समझना चाहिए। उक्त प्रदेशमें प्लेग, हैजा जैसी संक्रामक बीमारियाँ अधिक बढ़ती हैं, जनसंख्या घट जाती है। जनता सब तरहसे कष्ट उठाती है। आश्लेषा नक्षत्रमें तेज वायुके साथ वर्षा हो तो एक वर्ष पर्यन्त उक्त प्रदेशको कष्ट उठाना पड़ता है, धूल और कंकड़ पत्थरोंके साथ वर्षा हो तथा चारों ओर बादल मँडलाकार बन जावें, तो निश्चयतः उस प्रदेशमें अकाल पड़ता है तथा पशुओंको भी हानि होती है और अनेक प्रकारके कष्ट उठाने पड़ते हैं। प्रशासक वर्गके लिए उक्त प्रकारकी वर्षा भी कष्टकारक होती है।

यदि मघा और पूर्वाफाल्गुनीमें प्रथम वर्षा हो तो समयानुकूल वर्षा होती है, फसल भी उत्तम होती है। जनतामें सब प्रकारका अमन-चैन व्याप्त रहता है। कलाकार और शिल्पियोंके लिए उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा कष्टप्रद है तथा मनोरंजनके साधनोंकी कमी रहती है। राजनैतिक और सामाजिक दृष्टिसे उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा साधारण फल देती है। देशमें सभी प्रकारकी समृद्धि बढ़ती है और नागरिकमें अभ्युदयकी वृद्धि होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा फसलकी वृद्धिके लिए शुभ है, पर आन्तरिक शान्तिमें बाधक होती है। भीतरी आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता और आन्तरिक अशान्ति बनी ही रह जाती है। उत्तराफाल्गुनी और हस्त नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे सुभिक्ष और आनन्द दोनोंकी ही प्राप्ति होती है। वर्षा प्रचुर परिमाणमें होती है, फसलकी उत्पत्ति भी अच्छी होती है। विशेषतः धानकी फसल खूब होती है। पशु पक्षियोंको भी शान्ति और सुख मिलता है। तृण और धान्य दोनोंकी उपज अच्छी होती है। आर्थिक शान्तिके विकासके लिए उक्त नक्षत्रोंके वर्षा होना अत्यन्त शुभ है। गुड़की फसल बहुत अच्छी होती है तथा गुड़का भाव भी सस्ता रहता है। जूटकी फसल साधारण होती है, इसका भाव भी आरम्भमें सस्ता, पर आगे जाकर तेज हो जाता है। व्यापारियोंके लिए भी उक्त नक्षत्रोंकी वर्षा सुखदायक होती है। साधारणतः व्यापार बहुत ही अच्छा चलता है। देशमें कल-कारखानोंका विकास भी अधिक होता है। चित्रा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो वर्षा अत्यन्त कम होती है, परन्तु भाद्रपद और आश्विनमें वर्षाका योग अच्छा रहता है। स्वाती नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे मामूली वर्षा होती है। श्रावण मासमें अच्छा पानी बरसता है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। कार्तिकी फसल साधारण ही रहती है, पर चैती फसल अच्छी हो जाती है; क्योंकि उक्त नक्षत्रकी वर्षा आश्विनमासमें भी जलकी वर्षाका योग उत्पन्न करती है। यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्रमें प्रथम जलकी वर्षा हो तो उस वर्षमें खूब जलकी वर्षा होती है।

तालाब और पोखरे प्रथम जलकी वर्षासे ही भर जाते हैं। धान, गेहूँ, जूट और तिलहनकी फसल विशेषरूपसे उत्पन्न होती है। व्यापारके लिए यह वर्ष साधारणतया अच्छा होता है। अनुराधामें प्रथम वर्षा होनेसे गेहूँमें एक प्रकारका रोग लगता है जिससे गेहूँकी फसल मारी जाती है। यद्यपि गन्नाकी फसल बहुत ही अच्छी उत्पन्न होती है। व्यापारकी दृष्टिसे अनुराधा नक्षत्रकी वर्षा बहुत उत्तम है। इस नक्षत्रमें वर्षा होनेसे व्यापारमें उन्नति होती है। देशका आर्थिक विकास होता है तथा कला-कौशलकी भी उन्नति होती है। ज्येष्ठ नक्षत्रमें प्रथम वर्षा होनेसे पानी बहुत कम बरसता है, पशुओंको कष्ट होता है। तृणकी उत्पत्ति अनाजकी अपेक्षा कम होती है, जिससे पालतू पशुओंको कष्ट उठाना पड़ता है। मवेशीका माल सस्ता भी रहता है। दूधकी उत्पत्ति भी कम होती है, उक्त प्रकारकी वर्षा देशकी आर्थिक क्षतिकी द्योतिका है। धन-धान्यकी कमी होती है, संक्रामक रोग बढ़ते हैं। चेचकका प्रकोप विशेषरूपसे होता है। समशीतोष्णवाले प्रदेशोंको मौसम बदल जानेसे यह वर्षा विशेष कष्टकी सूचिका है। तिलहन और तेलका भाव मँहगा रहता है, घृतकी भी कमी रहती है तथा प्रशासक और बड़े धनिक व्यक्तियोंको भी कष्ट उठाना पड़ता है। सेनामें परस्पर विरोध और जनतामें अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। साधारण व्यक्तियोंको अनेक प्रकारके कष्ट उठाने पड़ते हैं। आश्विन और भाद्रपदके महीनोंमें केवल सात दिन वर्षा होती है तथा उक्त प्रकारकी वर्षा फाल्गुन मासमें घनघोर वर्षाकी सूचना देती है जिससे फसल और अधिक नष्ट होती है। चैत्रके महीनोंमें जल बरसता है तथा ज्येष्ठमें भयंकर गर्मी पड़ती है जिससे महान् कष्ट होता है।

यदि मूल नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष सभी महीनोंमें अच्छा पानी बरसता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेषरूपसे भाद्रपद और आश्विनमें समय पर उचित वर्षा होती है, जिससे दोनों ही प्रकारकी फसलें बहुत अच्छी उत्पन्न होती हैं। व्यापारके लिए भी उक्त प्रकारकी वर्षा अच्छी होती है। खनिज पदार्थ और वन-सम्पत्तिकी वृद्धिके लिए उक्त प्रकारकी वर्षा बहुत अच्छी होती है। मूल नक्षत्रकी वर्षा यदि गर्जनाके साथ हो तो माघमें भी जलकी वर्षा होती है। बिजुली अधिक कड़के तो फसलमें कमी रहती है। शान्त और सुन्दर मन्द-मन्द वायुके चलते हुए वर्षा हो तो सभी प्रकारकी फसलें अत्युत्तम होती हैं। धानकी उत्पत्ति अत्यधिक होती है। गाय बैल आदि मवेशीको भी चावल खानेको मिलते हैं। चावलका भाव भी सस्ता रहता है। गेहूँ, जौ और चनाकी फसल भी साधारणतः उत्तम होती है। चनेका भाव अन्य अनाजोंकी अपेक्षा मँहगा रहता है तथा दालवाले सभी अनाज महँगे होते हैं। यद्यपि इन अनाजोंकी उत्पत्ति भी अधिक होती है फिर भी इनका मूल्य वृद्धिगत होता है। उत्तराषाढा नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो अच्छी वर्षा होती है तथा हवा भी तेजीसे चलती है। इस नक्षत्रमें वर्षा होनेसे चैत्रवाली फसल बहुत अच्छी होती है, अगहनी धान भी अच्छा होता है; किन्तु कार्त्तिकी अनाज कम उत्पन्न होते हैं। नदियोंमें बाढ आती है, जिससे जनताको अनेक प्रकारके कष्ट सहन करने पड़ते हैं। भाद्रपद और पौषमें हवा चलती है, जिससे फसलको भी क्षति होती है। श्रवण नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो कार्त्तिकमासमें जलका अभाव और अवशेष महीनोंमें जलकी वर्षा अच्छी होती है। भाद्रपदमें अच्छा जल बरसता है, जिससे धान, मकई, ज्वार और बाजराकी फसलें भी अच्छी होती हैं। आश्विनमें जलकी वर्षा शुक्ल पक्षमें होती है जिससे फसल अच्छी हो जाती है। गेहूँमें एक प्रकारका कोड़ा लगता है, जिससे इसकी फसलमें क्षति उठानी पड़ती है। उत्तम प्रकारकी वर्षा आश्विन, कार्त्तिक और चैत्रके महीनोंमें रोगोंकी सूचना भी देती हैं। छोटे बच्चोंको अनेक प्रकारके रोग होते हैं। स्त्रियोंके लिए यह वर्षा उत्तम है, उनका सम्मान बढ़ता है तथा वे सब प्रकारसे शान्ति प्राप्त करती हैं। धनिष्ठा नक्षत्रमें जलकी प्रथम वर्षा होने पर पानी श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्त्तिक, माघ और वैशाखमें

खूब वरसता है। फसल कहीं-कहीं अतिवृष्टिके कारण नष्ट भी हो जाती है। आर्थिक दृष्टिसे उक्त प्रकारकी वर्षा अच्छी होती है। देशके वैभवका भी विकास होता है। यदि गर्जन-तर्जनके साथ उक्त नक्षत्रमें वर्षा हो तो उपर्युक्त फलका चतुर्थांश फल कम समझना चाहिए। व्यापारके लिए भी उक्त प्रकारकी वर्षा मध्यम है। यद्यपि विदेशोंसे व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ता है तथा प्रत्येक वस्तुके व्यापारमें लाभ होता है। धनिष्ठा नक्षत्रके आरम्भमें ही जलकी वर्षा हो तो फसल उत्तम और अन्तिम तीन घटियोंमें जल बरसे तो साधारण फल होता है और वर्षा भी मध्यम ही होती है। शतभिषा नक्षत्रमें जलकी प्रथम वर्षा हो तो बहुत पानी बरसता है। अगहनी फसल मध्यम होती है, पर चैती फसल अच्छी उपजती है। व्यापारमें हानि उठानी पड़ती है, जूट और चीनीके व्यापारमें साधारण लाभ होता है। पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रके आरम्भकी पाँच घटियोंमें जल बरसे तो फसल मध्यम और वर्षा भी मध्यम होती है। माघ मासमें वर्षाका अभाव होनेसे चैती फसलमें कमी आती है। यद्यपि चातुर्मासमें जल खूब बरसता है, फिर भी फसलमें न्यूनता रह जाती है। अन्तिमकी घटियोंमें जलकी वर्षा होनेसे अगहनमें पानीकी वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। धानकी फसलमें रोग लग जाते हैं, फिर भी फसल मध्यम हो ही जाती है। यदि उक्त नक्षत्रके मध्य भागमें वर्षा हो तो अधिक जलकी वर्षा होती है तथा आवश्यकतानुसार जल बरसनेसे फसल बहुत उत्तम होती है। व्यापारियोंके लिए उक्त प्रकारकी वर्षा हानि पहुँचानेवाली होती है। यदि उत्तराभाद्रपद विद्ध पूर्वाभाद्रपदमें वर्षा आरम्भ हो तो शासकोंके लिए अशुभ कारक होती है तथा देशकी समृद्धिमें भी कमी आती है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें प्रथम वर्षा हो तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा होती है। फसल अधिक वृष्टिके कारण कुछ विगड़ जाती है। कार्त्तिक मासमें आनेवाली फसलोंमें कमी होती है। चैती फसल अच्छी होती है। ज्वार और बाजराकी उत्पत्ति बहुत कम होती है। उत्तराभाद्रपदके प्रथम चरणमें वर्षा आरंभ होकर बन्द हो जाय तो कार्तिकमें पानी नहीं बरसता, अवशेष महीनोंमें वर्षा होती है। फसल भी उत्तम होती है। द्वितीय चरणमें वर्षा होकर तृतीय चरणमें समाप्त हो तो वर्षा समयानुकूल होती है और फसल भी उत्तम होती है। यदि उत्तराषाढ़ाके तृतीय चरणमें वर्षा हो तो चातुर्मासमें वर्षा होनेके साथ मार्गशीर्ष और माघमासमें भी पर्याप्त वर्षा होती है। चतुर्थचरणमें वर्षा आरम्भ हो तो भाद्रपद मासमें अत्यल्प पानी बरसता है। आश्विनमासमें साधारण वर्षा होती है। माघमें वर्षा होनेके कारण गेहूँ और चनेकी फसल बहुत अच्छी होती है। रेवती नक्षत्रमें वर्षा आरम्भ हो तो अनाजका भाव ऊँचा जाता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। श्रावणमासके शुक्लपक्षमें केवल पाँच दिन ही वर्षा होनेका योग रहता है। भाद्रपद और आश्विनमें यथेष्ट जल बरसता है। भाद्रपद मासमें वस्त्र और अनाज मँहगे होते हैं। कार्तिक मासके अन्तमें भी जलकी वर्षा होती है। रेवती नक्षत्रके प्रथम चरणमें वर्षा होनेपर चातुर्मासमें यथेष्ट वर्षा होती है तथा पौष और माघमें भी वर्षा होनेका योग रहता है। वस्तुओंके भाव अच्छे रहते हैं। गुड़के व्यापारमें अच्छा लाभ होता है। देशमें सुभिक्ष और सुख-शान्ति रहती है। यदि रेवती नक्षत्र लगते ही वर्षा आरम्भ हो जाय तो फसल के लिए मध्यम है; क्योंकि अतिवृष्टिके कारण फसल खराब हो जाती है। चैती फसल उत्तम होती है, अगहनीमें भी कमी नहीं आती; केवल कार्त्तिकीय फसलमें कमी आती है। मोटे अनाजोंकी उत्पत्ति कम होती है। श्रावणके महीनेमें प्रत्येक वस्तु मँहगी होती है। यदि रेवती नक्षत्रके तृतीय चरणमें वर्षा हो तो भाद्रपद मास सूखा जाता है; केवल हल्की वर्षा होकर रुक जाती है। आश्विनमासमें अच्छी वर्षा होती है, जिससे फसल साधारणतः अच्छी हो जाती है। श्रावणसे आश्विनमास तक सभी प्रकारका अनाज मँहगा रहता है। अन्य वस्तुओंमें साधारण लाभ होता है। घीका भाव इस वर्षमें अधिक ऊँचा रहता है। मवेशीकी भी कमी रहती है, मवेशीमें

एक प्रकारका रोग फैलता है, जिससे मवेशीकी क्षति होती है। द्वितीय चरणके अन्तमें वर्षा आरम्भ होनेपर वर्षके लिए अच्छा फलादेश होता है। गेहूँ, चना और गुड़का भाव प्रायः सस्ता रहता है, केवल मूल्यवान् धातुओंका भाव ऊँचा उठता है। खनिज पदार्थोंकी उत्पत्ति इस वर्षमें अधिक होती है तथा इन पदार्थोंके व्यापारमें भी लाभ रहता है। रेवती नक्षत्रके तृतीय चरणमें वर्षा हो तो प्रायः अनावृष्टिका योग समझना चाहिए। श्रावणके पाँच दिन, भादोंमें तीन दिन और आश्विनमें आठ दिन जलकी वर्षा होती है। फसल निकृष्ट श्रेणीकी उत्पन्न होती है, वस्तुओंके भाव महँगे रहते हैं। देशमें अशान्ति और लूट-पाट अधिक होती है। चतुर्थ चरणमें वर्षा होनेसे समयानुकूल पानी बरसता है, फसल भी अच्छी होती है। व्यापारियोंके लिए भी यह वर्षा उत्तम होती है। यदि रेवती नक्षत्रका क्षय हो और अश्विनीमें वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष अच्छी वर्षा होती है; पर मनुष्य और पशुओंको अधिक शीत पड़नेके कारण महान् कष्ट होता है। फसलको भी पाला मारता है। यदि अश्विनी नक्षत्रके प्रथम चरणमें वर्षा आरम्भ हो तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेषतः चैती फसल बड़े जोरकी उपजती है तथा मनुष्य और पशुओंको सुख-शान्ति प्राप्त होती है। यद्यपि इस वर्ष वायु और अग्निका अधिक प्रकोप रहता है। फिर भी किसी प्रकारकी बड़ी क्षति नहीं होती है। ग्रीष्म ऋतुमें लू अधिक चलती है, तथा इस वर्ष गर्मी भी भीषण पड़ती है। देशके नेताओंमें मतभेद एवं उपद्रव होते हैं। व्यापारियोंके लिए उक्त प्रकारकी वर्षा अधिक लाभदायक होती है। प्रथम चरणके लगते ही वर्षा आरम्भ हो और समस्त नक्षत्रके अन्त तक वर्षा होती रहे तो वर्ष उत्तम नहीं रहता है। चातुर्मासके उपरान्त जल नहीं बरसता, जिससे फसल अच्छी नहीं होती। तृतीय चरणमें वर्षा होने पर पौषमें वर्षाका अभाव तथा फाल्गुनमें वर्षा होती है। इस चरणमें वर्षाका आरम्भ होना साधारण होता है। वस्तुओंके भाव नीचे गिरते हैं। आश्विनमाससे वस्तुओंके भावोंमें उन्नति होती है। व्यापारियोंको अशान्ति रहती है, बाजारभाव प्रायः अस्थिर रहता है। चतुर्थचरणमें वर्षा आरम्भ होने पर इस वर्ष उत्तम वर्षा होती है। सभी प्रकारके अनाज अच्छी तादादमें उत्पन्न होते हैं। भरणीनक्षत्रमें वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष प्रायः वर्षाका अभाव रहता है या अल्प वर्षा होती है। फसलके लिए भी उक्तनक्षत्रमें जलकी वर्षा होना अच्छा नहीं है। अनेक प्रकारकी बीमारियाँ भी उक्तनक्षत्रमें वर्षा होने पर फैलती हैं। यदि भरणीका क्षय हो और कृत्तिका भरणीके स्थान पर चल रहा हो तो प्रथम वर्षाके लिए बहुत उत्तम है। भरणीका प्रथम और तृतीय चरण अच्छे हैं, इनके वर्षा होने पर फसल प्रायः अच्छी होती है तथा जनतामें शान्ति रहती है। यद्यपि उक्त चरणमें वर्षा होने पर भी जलकी कमी ही रहती है, फिर भी फसल हो जाती है। द्वितीय और चतुर्थ चरणमें वर्षा हो तो वर्षाके अभावके साथ फसलका भी अभाव रहता है। प्रायः सभी वस्तुएँ महँगी हो जाती हैं, व्यापारियोंको भी साधारण ही लाभ होता है। नाना प्रकारकी व्याधियाँ भी फैलती हैं।

यहाँ वर्षका आरम्भ श्रावण कृष्ण प्रतिपदाको मानना होगा तथा उसके बाद ही या उसी दिन जो नक्षत्र हो उसके अनुसार उपर्युक्त क्रमसे फलाफल अवगत करना चाहिए। समस्त वर्षका फल श्रावणकृष्ण प्रतिपदासे ही अवगत किया जाता है।

वर्षाका प्रमाण निकालनेका विशेष विचार—जिस समय सूर्य रोहिणी नक्षत्रमें प्रवेश करे, उस समय चार घड़ा सुन्दर स्वच्छ जल मँगावे और चतुष्कोण घरमें गोबर या मिट्टीसे लिप कर पवित्र चौक पर चारों घड़ोंको उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम क्रमसे स्थापित कर दे और उन जलपूरित घड़ोंको उसी स्थान पर रोहिणी नक्षत्र पर्यन्त १५ दिन तक रखे, उन्हें तनिक भी अपने स्थानसे इधर-उधर न उठावे। रोहिणी नक्षत्रके बीत जाने पर उत्तर दिशावाले घड़ेके जलका निरीक्षण करे। यदि उस घड़ेमें पूर्ववत् समान जल मिले तो श्रावणभर खूब वर्षा होगी।

आधा खाली होवे तो आधे महीने वृष्टि और चतुर्थांश जल अवशेष हो तो चौथाई वर्षा एवं जलसे शून्य घड़ा देखा जाय तो श्रावणमें वर्षाका अभाव समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उत्तर दिशाके घड़ेके जलप्रमाणसे ही श्रावणमें वर्षाका अनुमान लगाया जा सकता है। जितना कम जल घड़ेमें रहेगा, उतनी ही कम वर्षा होगी। इसी प्रकार पूर्व दिशाके घड़ेसे भाद्रपद मासकी वर्षा, दक्षिण दिशाके घड़ेसे आश्विन मासकी वर्षा, और पश्चिमके घड़ेके जलसे कार्त्तिककी वर्षाका अनुमान करना चाहिए। यह एक अनुभूत और सत्य वर्षा परिज्ञानका नियम है।

चित्र
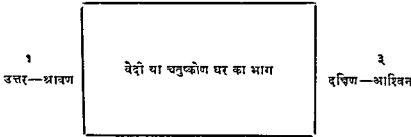
वर्षाका विचार रोहिणी चक्रके अनुसार भी किया जाता है। 'वर्षप्रबोध'में मेघविजय गणिने इस चक्रका उल्लेख निम्न प्रकार किया है।

राशिचक्रं लिखित्वादौ मेषसंक्रान्ति आदिकम्।
अष्टाविंशतिकं तत्र लिखेन्नक्षत्रसङ्कुले॥
सन्धौ द्वयं जलं दद्यादन्यत्रैकैकमेव च।
चत्वारः सागरास्तत्र सन्धयश्चाष्टसंख्यया॥
शृङ्गाणि तत्र चत्वारि तटान्यष्टौ स्मृतानि च।
रोहिणी पतिता यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम्॥
जाता जलप्रदस्यैषा चन्द्रस्य परमप्रिया।
समुद्रेति महावृष्टिस्तटे वृष्टिश्च शोभना॥
पर्वते विन्दुमात्रा च खण्डवृष्टिश्च सन्धिषु।
सन्धौ वणिक् गृहे वासः पर्वते कुम्भकृद्गृहे॥
मालाकारगृहे सिन्धौ रजकस्य गृहे तटे।

अर्थात् सूर्यकी मेष संक्रान्तिके समय जो चन्द्रनक्षत्र हो, उसको आदिकर अट्ठाईस नक्षत्रों को क्रमसे स्थापित करना चाहिए। इनमें दो-दो शृंगमें, एक एक नक्षत्र सन्धिमें, और एक-एक तटमें स्थापित करे। यदि उक्त क्रमसे रोहिणी समुद्रमें पड़े तो अधिक वर्षा, शृङ्गमें पड़े तो थोड़ी वर्षा, सन्धिमें पड़े तो वर्षाभाव और तटमें पड़े तो अच्छी वर्षा होती है। यदि रोहिणी नक्षत्र सन्धिमें हो तो वैश्यके घर, पर्वत पर हो तो कुम्हारके घर, सिन्धुमें हो तो मालीके घर और तटमें हो तो धोबीके घर रोहिणीका वास समझना चाहिए। रोहिणीचक्रमें अश्विनी नक्षत्रके स्थान पर मेष सूर्यसंक्रान्तिका नक्षत्र रखना होगा।

वर्षका विशेष विचार एवं अन्य फलादेश—यदि माघमासमें मेघ आच्छादित रहें और

रोहिणी—चक्र

उत्तरा भाद्रपद सन्धि पूर्वाभाद्रपद शतभिषा सन्धि	तट रेवती	सिन्धु अश्विनी भरणी	तट कृत्तिका	सन्धि रोहिणी मृगशिर सन्धि आर्द्रा
धनिष्ठा तट	शृङ्ग		शृङ्ग	तट पुनर्वसु
सिन्धु अभिजित् श्रवण		२ १२ ३ १ ११ ४ १० ५ ७ ९ ६ ८		सिन्धु पुष्य आश्लेषा
उत्तराषाढ़ा तट	शृङ्ग		शृङ्ग	मघा तट
पूर्वाषाढ़ा सन्धि मूल ज्येष्ठा सन्धि	तट अनु- राधा	सिन्धु स्वाती विशाखा	तट चित्रा	सन्धि हस्त उत्तराफाल्गुनी पूर्वाफाल्गुनी सन्धि

चैत्रमें आकाश निर्मल रहे तो पृथ्वीमें धान्य अधिक उत्पन्न हो और वर्षा अधिक मनोरम होती है। चैत्र शुक्लपक्षमें आकाशमें बादलोंका छाया रहना शुभ समझा जाता है। यदि चैत्र शुक्ला पंचमीको रोहिणी नक्षत्र हो और इस दिन बादल आकाशमें दिखलायी पड़ें तो निश्चयसे आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होती है। सुभिक्ष रहता है तथा प्रजामें सुख-शान्ति रहती है। सूर्य जिस समय या जिस दिन आर्द्रामें प्रवेश करता है, उस समय या उस दिनके अनुसार भी वर्षा और सुभिक्षका फल ज्ञात किया जाता है। आचार्य मेघ महोदय गार्गने लिखा है कि सूर्य रविवारके दिन आर्द्रा नक्षत्रमें प्रवेश करे तो वर्षाका अभाव या अल्पवृष्टि, देशमें उपद्रव, पशुओंका नाश, फसलकी कमी, अन्नका भाव मँहगा एवं देशमें उपद्रव आदि फल घटित होते हैं। सोमवारको आर्द्रामें रविका प्रवेश हो तो समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, शान्ति, परस्पर मेल-मिलापकी वृद्धि, गृहयोगका विकास, देशकी उन्नति, व्यापारियोंको लाभ, तिलहनमें विशेष लाभ, वस्त्रव्यापारका विकास एवं घृत सस्ता होता है। मंगलवारको आर्द्रामें रविका प्रवेश हो तो देशमें धनकी हानि, अग्निभय, कलह-विसंवादोंकी वृद्धि, जनतामें परस्पर संघर्ष, चोर-डकैतोंकी उन्नति, साधारण वर्षा, कपासमें कमी और वन एवं खनिज पदार्थोंकी उत्पत्तिमें कमी होती है।

बुधवारको आर्द्रामें सूर्यका प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, रस भाव मँहगा, खनिज पदार्थोंकी उत्पत्ति अधिक, मोती-माणिक्यकी उत्पत्तिमें वृद्धि, घृतकी कमी, पशुओंमें रोग और देशका आर्थिक विकास होता है। गुरुवारके दिन आर्द्रामें सूर्यका प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अर्थ वृद्धि, देशमें उपद्रव, महामारियोंका प्रकोप, गुड़-गेहूँका भाव मँहगा तथा अन्य प्रकारके अनाजोंका भाव सस्ता; शुक्रवारमें प्रवेश हो तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा, पर माघमें वर्षाका अभाव तथा कार्तिकमें भी वर्षाकी कमी रहती है। इसके अतिरिक्त फसलमें साधारणतः रोग, पशुओंमें व्याधि और अग्निभय एवं शनिवारको प्रवेश हो तो दुष्काल, वर्षाभाव या अल्पवृष्टि, असमय पर अधिक वर्षा, अनावृष्टिके कारण जनतामें अशान्ति, अनेक प्रकारके रोगोंकी वृद्धि, धान्यका अभाव और व्यापारमें भी हानि होती है। वर्षाका परिज्ञान रविका आर्द्रामें प्रवेश होनेमें किया जा सकेगा। पर इस बातका ध्यान रखना होगा कि प्रवेशके समय चन्द्र नक्षत्र कौन सा है? यदि चन्द्र नक्षत्र मृदु और जलसंज्ञक हो तो निश्चयतः अच्छी वर्षा होती है और उग्र तथा अग्नि संज्ञक नक्षत्रोंमें जलकी वर्षा नहीं होती। प्रातःकाल आर्द्रामें प्रवेश होने पर सुभिक्ष और साधारण वर्षा, मध्याह्नकालमें प्रवेश होने पर चातुर्मासके आरम्भमें वर्षा, मध्यमें कमी और अन्तमें अल्पवृष्टि एवं सन्ध्या समय प्रवेश होने पर अतिवृष्टि या अनावृष्टिका योग रहता है। रात्रिमें जब सूर्य आर्द्रामें प्रवेश करता है, तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसल साधारण ही रहती है। अन्नका भाव निरन्तर ऊँचा-नीचा होता रहता है। सबसे उत्तम समय मध्य रात्रिका है, इस समयमें रवि आर्द्रामें प्रवेश करता है तो अच्छी वर्षा और धान्यकी उत्पत्ति उत्तम होती है। जब सूर्यका आर्द्रामें प्रवेश हो उस समय चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोणमें प्रवेश करे अथवा चन्द्रमाकी दृष्टि हो तो पृथ्वी धान्यसे परिपूर्ण हो जाती है। जिस ग्रहके साथ सूर्यका इत्थशाल सम्बन्ध हो, उसके अनुसार भी फलादेश घटित होता है। मंगल, चन्द्रमा और शनिके साथ यदि सूर्य इत्थशाल कर रहा हो तो उस वर्ष घोर दुर्भिक्ष तथा अतिवृष्टि या अनावृष्टिका योग समझना चाहिए। गुरुके साथ यदि सूर्यका इत्थशाल हो तो यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और जनतामें शान्ति रहती है। व्यापारके लिए भी यह योग उत्तम है। देशका आर्थिक विकास होता है। बुधके साथ सूर्यका इत्थशाल हो तो पशुओंके व्यापारमें विशेष लाभ, समयानुकूल वर्षा धान्यकी वृद्धि और सुख-शान्ति रहती है। शुक्रके साथ इत्थशाल होने पर चातुर्मासमें कुल तीस दिन वर्षा होती है।

प्रश्नलग्नानुसार वर्षाका विचार—यदि प्रश्नलग्नके समयमें चौथे स्थानमें राहु और शनि हों तो उस वर्षमें घोर दुर्भिक्ष होता है तथा वर्षाका अभाव रहता है। यदि चौथे स्थानमें मंगल हो तो उस वर्ष वर्षा साधारण ही होती है और फसल भी उत्तम नहीं होती। चौथे स्थानमें गुरु और शुक्रके रहनेसे वर्षा उत्तम होती है। चन्द्रमा चौथे स्थानमें हो तो श्रावण और भाद्रपदमें अच्छी वर्षा होती है; किन्तु कार्तिकमें वर्षाका अभाव और आश्विनमें कुल सात दिन वर्षा होती है। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल भी अच्छी नहीं हो पाती। यदि प्रश्नलग्नमें गुरु हो और एक या दो ग्रह उसके चतुर्थ, सप्तम, दशम भावमें स्थित हों तो वर्ष बहुत ही उत्तम होता है। समयानुसार यथेष्ट वर्षा होती है, गेहूँ, चना, धान, जौ, तिलहन, गन्ना आदि की फसल बहुत अच्छी होती है। जूटका भाव ऊपर उठता है तथा इसकी फसल भी बहुत अच्छी रहती है। व्यापारियोंके लिए वर्ष बहुत ही अच्छा रहता है। यदि प्रश्नलग्नमें कन्याराशि हो तो अच्छी वर्षा, पूर्वीय हवाके साथ होती है। वर्षमें कुल ६० दिन वर्षा होती है, फसल भी अच्छी होती है। मनुष्य और पशुओंको सुख-शान्ति मिलती है। केन्द्र स्थानोंमें शुभ ग्रह हों तो सुभिक्ष और वर्षा होती है। जिस दिशामें क्रूर ग्रह हों अथवा शनि देखें तो उस दिशामें अवश्य दुर्भिक्ष होता है। यदि वर्षाके सम्बन्धमें प्रश्न करनेवाला पाँचों अँगुलियोंको स्पर्श करता

हुआ प्रश्न करे तो अल्पवर्षा, फसलकी क्षति एवं अँगूठेका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा होती है। यदि वर्षाके प्रश्नकालमें पृच्छक सिरका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो आश्विनमें वर्षाभाव तथा अन्य महीनोंमें साधारण वर्षा; कानका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, पर भाद्रपदमें कुल दस दिन वर्षा; आँखोंको मलता हुआ प्रश्न करे तो चातुर्मासके सिवा अन्य महीनोंमें वर्षाका अभाव तथा चातुर्मासमें भी कुल सत्ताईस दिन वर्षा; घुटनोंका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सामान्यतया सभी महीनोंमें वर्षा, फसल उत्तम जनताका आर्थिक विकास, कला-कौशलकी वृद्धि; पेटका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, श्रावण और भाद्रपदमें अच्छी वर्षा, फसल साधारण, देशका आर्थिक विकास, अग्निभय, जलभय, बाढ़ आनेका भय; कमरका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो परिमित वर्षा, धान्यकी सामान्य उत्पत्ति, अनेक प्रकारके रोगोंकी वृद्धि, वस्तुओंके भाव मँहगे; पाँवका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो श्रावणमें वर्षाकी कमी, अन्य महीनोंमें अच्छी वर्षा, फसलकी अच्छी उत्पत्ति, जौ और गेहूँकी विशेष उपज एवं जंघाका स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अनेक प्रकारके धान्योंकी उत्पत्ति, मध्यम वर्षा, देशमें समृद्धि, उत्तम फसल और देशका सर्वाङ्गीण विकास होता है। प्रश्नकालमें यदि मनमें उत्तेजना आवे, या किसी कारणसे क्रोधादि आ जावे तो वर्षाका अभाव समझना चाहिए। यदि किसी व्यक्तिको प्रश्नकालमें रोते हुए देखें तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा होती है, किन्तु फसलमें कमी रहती है। व्यापारियोंके लिए भी यह वर्ष उत्तम नहीं होता। प्रश्नकालमें यदि काना व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित हो और वह अपने हाथसे दाहिने कानको खुजला रहा हो तो घोर दुर्भिक्षकी सूचना समझनी चाहिए। विकृत अंगवाला किसी भी प्रकारका व्यक्ति वहाँ रहे तो वर्षाकी कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी साधारण ही होती है। सौम्य और सुन्दर व्यक्तियोंका वहाँ उपस्थित रहना उत्तम माना जाता है।

एकादशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गन्धर्वनगरं तथा ।
शुभाऽशुभार्थभूतानां [1]निर्ग्रन्थस्य च भाषितम् ॥१॥

अथ गन्धर्वनगरका फलादेश कहता हूँ, जिस प्रकार पूर्वाचार्योंने प्राणियोंके शुभाशुभका निरूपण किया है, उसी प्रकार यहाँ पर भी फल अवगत करना चाहिए ॥१॥

पूर्वद्वारे यदा घोरं गन्धर्वनगरं भवेत् ।
नागराणां वधं विन्द्यात् तदा घोरमसंशयम् ॥२॥

यदि सूर्योदयकालमें पूर्व दिशामें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो नागरिकोंका वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२॥

[2]अस्तमायाति दीप्तांशौ गन्धर्वः नगरं भवेत् ।
यायिनां च तु [3]भयं विन्द्याद् [4]तदा घोरमुपस्थितम् ॥३॥

यदि सूर्यके अस्तकालमें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो यायी—आक्रमणकारीके लिए घोर भयकी उपस्थिति सूचित करता है ॥३॥

रक्तं गन्धर्वनगरं दिशं दीप्तां यदा [5]भवेत् ।
शस्त्रोत्पातं तदा विन्द्याद् दारुणं समुपस्थितम् ॥४॥

यदि रक्त गन्धर्वनगर पूर्व दिशामें दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात—मार-काटका भय समझना चाहिए ॥४॥

पीतं गन्धर्वनगरं दिशं [6]दीप्तां यदा [7]भवेत् ।
व्याधिं तदा विजानीयात् प्राणिनां मृत्युसन्निभम् ॥५॥

यदि पीत—पीला गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्राणियोंके लिए मृत्युके तुल्य कष्टदायक व्याधि उत्पन्न होती है ॥५॥

कृष्णं गन्धर्वनगरमपरां [8]दिशिमास्तृतम् ।
[9]वधं तदा विजानीयाद् भयं वा शूद्रयोनिजम् ॥६॥

यदि कृष्ण वर्ण—काले रंगका गन्धर्वनगर पश्चिम दिशामें दिखलाई पड़े तो वध—मार-काटसे उत्पन्न वध होता है तथा शूद्रोंके लिए भयोत्पादक है ॥६॥

श्वेतं गन्धर्वनगरं दिशं सौम्यां यदा भृशम् ।
राज्ञो विजयमाख्याति [11]नगरञ्च धनान्वितम् ॥७॥

यदि श्वेत गन्धर्वनगर उत्तर दिशामें दिखलाई पड़े तो राजाकी विजय होती है और नगर धन-धान्यसे परिपूर्ण होता है ॥७॥

---

१. नैग्रन्थे निपुणे यथा मु० । २. अस्तं याने यथाऽऽदित्ये मु० । ३. तदा मु० । ४. भयं मु० । ५. भृशम् मु० । ६. याम्यां मु० । ७. भृशम् मु० । ८. अपरस्यां मु० । ९. मृतं दिशि मु० । १०. वर्ग मु० । ११. नगरस्य मु० ।

सर्वास्वपि यदा दिक्षु गन्धर्वनगरं भवेत् ।
सर्वे वर्णा विरुध्यन्ते सर्वदिक्षु परस्परम् ॥८॥

यदि सभी दिशाओंमें गन्धर्वनगर हो तो सभी दिशाओंमें सभी वर्णवाले परस्पर विरोध करते हैं—कलह करते हैं ॥८॥

कपिलं सस्यघाताय माञ्जिष्ठं हरिणं [1]गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते बलक्षोभं [2]न संशयः ॥९॥

कपिल वर्णका गन्धर्वनगर धान्य घातक, माञ्जिष्ठ वर्णका गन्धर्वनगर हरिण, गौ आदि पशुओंका घातक और अव्यक्त वर्णका गन्धर्वनगर सेनामें क्षोभ उत्पन्न करता है ॥९॥

गन्धर्वनगरं स्निग्धं सप्राकारं सतोरणम् ।
शान्तदिशि समाश्रित्य राज्ञस्तद् विजयं [3]वदेत् ॥१०॥

यदि स्निग्ध, परकोटा और तोरण सहित गन्धर्वनगर नीरव दिशामें दिखलाई पड़े तो राजाके लिए विजय देनेवाला होता है ॥१०॥

गन्धर्वनगरं व्योम्नि पुरुषं यदि दृश्यते ।
वाताशनिनिपातांस्तु तत् करोति सुदारुणम् ॥११॥

यदि आकाशमें परुष—कठोर गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वायुके चलने और बिजलीके गिरनेसे महान् भय होता है ॥११॥

इन्द्रायुधसवर्णं च धूमाग्निसदृशं च यत् ।
तदाग्निभयमाख्याति गन्धर्वनगरं नृणाम् ॥१२॥

यदि इन्द्रधनुषके समान वर्णवाला और धूमयुक्त अग्निके समान गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो मनुष्योंको अग्नि-भय होता है ॥१२॥

खण्डं विशीर्णं [4]सच्छिद्रं गन्धर्वनगरं यदा ।
तदा तस्करसङ्घानां [5]भयं सञ्जायते सदा ॥१३॥

यदि खण्डित, विशृङ्खलित और छिद्रयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो पृथ्वी पर चोरों का भय होता है ॥१३॥

यदा गन्धर्वनगरं सप्राकारं सतोरणम् ।
दृश्यते तस्करान् हन्ति तदा [6]चानूपवासिनः ॥१४॥

यदि गन्धर्वनगर परकोटा और तोरणसहित दिखलाई पड़े तो वनवासी तस्करों—चोरों और अनूपदेश निवासियोंका विनाश होता है ॥१४॥

विशेषतापसव्यं तु गन्धर्वनगरं यदा ।
परचक्रेण महता नगरं [7]चाभिभूयते ॥१५॥

यदि विशेषरूपसे अपसव्य—दक्षिणको ओर गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो परशासनके द्वारा नगरका घेरा डाला जाता है—परशासनका आक्रमण होता है ॥१५॥

१. तथा मु० । २. समन्ततः मु० । ३. -ध्रुवम् मु० । ४. छिद्रं वा मु० । ५. स भयो जायते भुवि मु० । ६. तथान्तवासिनः मु० । ७. पारिवार्यते मु० ।

गन्धर्वनगरं क्षिप्रं [1]जायते चाभिदक्षिणम् ।
स्वपक्षागमनं चैव जयं वृद्धिं जलं वहेत् ॥१६॥

यदि शीघ्रतापूर्वक दक्षिणकी ओर गन्धर्वनगर गमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो स्वपक्ष की सिद्धि, जय, वृद्धि और बल—सामर्थ्यकी प्राप्ति होती है ॥१६॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रकटं तु दवाग्निवत् ।
दृश्यते पुररोधाय तद्भवेन्नात्र संशयः ॥१७॥

जब गन्धर्वनगर दावाग्नि—अरण्यमें लगी अग्निके समान दिखलाई पड़े तब नगरका अवरोध अवश्य होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥१७॥

[2]अपसव्यं विशीर्णं तु गन्धर्वनगरं यदा ।
तदा विलुप्यते राष्ट्रं बलक्षोभश्च जायते ॥१८॥

अपसव्य—दक्षिणकी ओर जर्जरित गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राष्ट्रमें विप्लव—उपद्रव और सेनामें क्षोभ होता है ॥१८॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रविशेचाभिदक्षिणम् ।
अपूर्वां लभते राजा तदा स्फीतां वसुन्धराम् ॥१६॥

जब गन्धर्वनगर दक्षिणसे प्रवेश करे—दक्षिणसे चारों दिशाओंकी ओर घूमता हुआ दिखलाई दे तब राजा अपूर्व विशालभूमि प्राप्त करता है ॥१६॥

सध्वजं सपताकं वा सुस्निग्धं सुप्रतिष्ठितम् ।
शान्तां दिशं प्रपद्येत राजवृद्धिं [3]तथा भवेत् ॥२०॥

ध्वजा और पताकाओंसे युक्त स्निग्ध तथा सुव्यवस्थित शान्त दिशा—नीरव दिशामें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजवृद्धिका फलादेश समझना चाहिए ॥२०॥

यदा [4]चाभ्रैर्घनैर्मिश्रं [5]सघनैः सबलाहकम् ।
गन्धर्वनगरं स्निग्धं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥२१॥

यदि शुभ मेघोंसे युक्त विद्युत् सहित स्निग्ध गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जलकी बाढ़ आती है—वर्षा अधिक होती है और नदियोंमें बाढ़ आती है; सर्वत्र जल ही जल दिखलाई पड़ता है ॥२१॥

सध्वजं सपताकं वा गन्धर्वनगरं [6]भवेत् ।
दीप्तां दिशं समाश्रित्य नियतं राजमृत्युदम् ॥२२॥

यदि ध्वजा और पताका सहित गन्धर्वनगर पूर्वदिशामें दिखलाई पड़े तो नियमित रूपसे राजाकी मृत्यु होती है ॥२२॥

विदिक्षु [7]चापि सर्वासु गन्धर्वनगरं यदा ।
सङ्करः सर्ववर्णानां तदा भवति दारुणः ॥२३॥

यदि सभी विदिशाओंमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सभी वर्णोंका अत्यन्त संकर सम्मिश्रण होता है ॥२३॥

---

१. दक्षिणे जायते यदा । २. अपरां दिशि विशीर्येत् मु० । ३. तदाऽऽदिशेत् मु० । ४. शुभैः मु० । ५. सविद्युत् मु० । ६. यदा मु० । ७. चैव मु० ।

द्विवर्णं वा त्रिवर्णं च गन्धर्वनगरं [1]भवेत् ।
चातुर्वर्ण्यमयं भेदं तदाऽत्रापि विनिर्दिशेत् ॥२४॥

यदि दो रंग, तीन रंग या चार रंगका गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी उक्त प्रकारका ही फल घटित होता है ॥२४॥

अनेकवर्णसंस्थानं गन्धर्वनगरं [2]यदा ।
क्षुभ्यन्ते तत्र राष्ट्राणि ग्रामाश्च नगराणि च ॥२५॥
सङ्ग्रामाश्चापि जायन्ते[3] मांसशोणितकर्दमाः ।
[4]एतैश्च लक्षणैर्युक्तं भद्रबाहुवचो यथा ॥२६॥

यदि अनेक वर्ण और आकारका गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर, ग्राम और राष्ट्रमें क्षोभ उत्पन्न होता है युद्ध होते हैं, और मांस तथा रक्तकी कीचड़ उत्पन्न हो जाती है। उक्त प्रकारके निमित्तसे अनेक प्रकारका उत्पात होता है, इस प्रकारका भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥२५-२६॥

रक्तं गन्धर्वनगरं क्षत्रियाणां भयावहम् ।
पीतं वैश्यान् निहन्त्याशु कृष्णं शूद्रान् सितं द्विजान् ॥२७॥

लाल रंगका गन्धर्वनगर क्षत्रियोंके लिए भयोत्पादक, पीतवर्णका गन्धर्वनगर वैश्योंको, कृष्णवर्णका गन्धर्वनगर शूद्रोंको और श्वेतवर्णका गन्धर्वनगर ब्राह्मणोंको भयोत्पादक होनेके साथ शीघ्र ही विनाश करता है ॥२७॥

अरण्यानि तु सर्वाणि गन्धर्वनगरं यदा ।
आरण्यं जायते [5]सर्वं [6]तद्राष्ट्रं नात्र संशयः ॥२८॥

यदि अरण्यमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही राष्ट्र उजड़कर अरण्य—जंगल बन जाता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२८॥

अम्बरेपूदकं विन्याद् भयं प्रहरणेषु च ।
अग्निजेषूपकरणेषु भयमग्नेः समादिशेत् ॥२९॥

यदि स्वच्छ आकाशमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जलकी वृष्टि, अस्त्रोंके बीच गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भय और अग्नि सम्बन्धी उपकरणोंके मध्य गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है ॥२९॥

शुभाऽशुभं विजानीयाच्चातुर्वर्ण्यं यथाक्रमम् ।
दिक्षु सर्वासु नियतं भद्रबाहुवचो यथा ॥३०॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्णको क्रमानुसार पूर्वादि सभी दिशाओंके गन्धर्वनगरके अनुसार भद्रबाहुस्वामीके वचनोंसे शुभाशुभत्व जानना चाहिए ॥३०॥

---

१. यदा मु० । २. भवेत् मु० । ३. अनुवर्तन्ते मु० । ४. एतस्मिल्लक्षणोत्पाते मु० । ५. राष्ट्रं मु० । ६. अचिरात्तत्र संशयः ।

उल्कावत् साधनं दिक्षु जानीयात् पूर्वकीर्तितम् ।
गन्धर्वनगरं सर्वं यथावदनुपूर्वशः ॥३१॥

उल्काके समान पूर्व बताये गये निमित्तोंके अनुसार गन्धर्वनगरोंके फलाफलको अवगत कर लेना चाहिए ॥३१॥

इति भद्रबाहुविरचिते निखिलनिमित्तीयाधिकारद्वादशाङ्गात्—उद्धृत-निमित्तशास्त्रे गन्धर्वनगरं एकादशमं लक्षणम् ।

विवेचन—वराहमिहिरने उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशाके गन्धर्वनगरका फलादेश क्रमशः पुरोहित, राजा, सेनापति और युवराजको विघ्नकारक बताया है। श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्णके गन्धर्वनगरको ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके नाशका कारण मात्र है। उत्तर दिशामें गन्धर्वनगर हो तो राजाओंको जयदायी, ईशान, अग्नि और वायुकोणमें स्थित हो तो नीच जातिका नाश होता है। शान्त दिशामें तोरणयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो प्रशासकोंकी विजय होती है। यदि सभी दिशाओंमें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा और राज्यके लिए समान रूपसे भयदायक होता है। धूम, अनल और इन्द्रधनुषके समान हो तो चोर और वनवासियोंको कष्ट देता है। कुछ पाण्डुरंगका गन्धर्वनगर हो तो वज्रपात होता है, भयंकर पवन भी चलता है। दीप्त दिशामें गन्धर्वनगर हो तो राजाकी मृत्यु, वाम दिशामें हो तो शत्रुभय और दक्षिण भागमें स्थित हो तो जयकी प्राप्ति होती है। नाना रंगकी पताकासे युक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो रणमें हाथी, मनुष्य और घोड़ोंका अधिक रक्तपात होता है।

आचार्य ऋषिपुत्र ने बतलाया है कि पूर्व दिशामें गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो पश्चिम दिशाका नाश अवश्य होता है। पश्चिममें अन्न और वस्त्र की कमी रहती है। अनेक प्रकारके कष्ट पश्चिम निवासियोंको सहन करने पड़ते हैं। दक्षिण दिशामें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजाका नाश होता है, प्रशासक वर्गमें आपसी मनमुटाव भी रहता है, नेताओंमें परस्परिक कलह होती है, जिससे आन्तरिक अशान्ति होती रहती है। पश्चिम दिशाका गन्धर्वनगर पूर्वके वैभवका विनाश करता है। पूर्वमें हैजा, प्लेग जैसी संक्रामक बीमारियाँ फैलती हैं और मलेरिया का प्रकोप भी अधिक रहेगा। उक्त दिशाका गन्धर्वनगर पूर्व दिशाके निवासियोंको अनेक प्रकारका कष्ट देता है। उत्तर दिशाका गन्धर्वनगर उत्तर निवासियोंके लिए ही कष्टकारक होता है। यह धन, जन और वैभवका विनाश करता है। हेमन्तऋतुके गन्धर्वनगरसे रोगोंका विशेष आतंक रहता है। वसन्तऋतुमें दिखाई देनेवाला गन्धर्वनगर सुकाल करता है तथा जनताका पूर्णरूपसे आर्थिक विकास होता है। ग्रीष्मऋतुमें दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर नगरका विनाश करता है, नागरिकोंमें अनेक प्रकारसे अशान्ति फैलाता है। अनाजकी उपज भी कम होती है। वस्त्राभावके कारण भी जनतामें अशान्ति रहती है। आपसमें भी झगड़े बढ़ते हैं, जिससे परिस्थिति उत्तरोत्तर विषम होती जाती है। वर्षा ऋतुमें दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर वर्षाका अभाव करता है। इस गन्धर्वनगरका फल दुष्काल भी है। व्यापारी और कृषक दोनोंके लिए ही इस प्रकारके गन्धर्वनगरका फलादेश अशुभ होता है। जिस वर्षमें उक्त प्रकारका गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ता है, उस वर्षमें गेहूँ और चावलकी उपज भी बहुत कम होती है।

१. गन्धर्वनगरं सर्वं ।

शरद्ऋतुमें गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो मनुष्योंको अनेक प्रकारकी पीड़ा होती है। चोट लगना, शरीरमें घाव लगना, चेचक निकलना, एवं अनेक प्रकारके फोड़े होना आदि फल घटित होता है। अवशेष ऋतुओंमें गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो नागरिकोंको कष्ट होता है। साथ ही छः महीने तक उपद्रव होते रहते हैं। प्रकृतिका प्रकोप होनेसे अनेक प्रकारकी बीमारियाँ भी होती हैं। रात्रिमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो देशकी आर्थिक हानि, वैदेशिक सम्मानका अभाव, तथा देशवासियोंको अनेक प्रकारके कष्ट सहन करने पड़ते हैं। यदि कुछ रात्रि शेष रहे तब गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चोर, नृपति, प्रबन्धक एवं पूँजीपतियोंके लिए हानिकारक होता है। रात्रिके अन्तिम पहरमें—ब्रह्ममुहूर्त कालमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस प्रदेशमें धनका अधिक विकास होता है। भूमिके नीचेसे धन प्राप्त होता है। यह गन्धर्वनगर सुभिक्ष कारक है। इसके द्वारा धन-धान्यकी वृद्धि होती है। प्रशासक वर्गका भी अभ्युदय होता है। कला-कौशलकी वृद्धिके लिए भी इस समयका गन्धर्वनगर श्रेष्ठ माना गया है।

पँचरंगा गन्धर्वनगर हो तो नागरिकोंमें भय और आतङ्कका सञ्चार करता है, रोगभय भी इसके द्वारा होते हैं। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसलको भी क्षति पहुँचती है। श्वेत और रक्तवर्णकी वस्तुओंकी मँहगाई विशेषरूपसे रहती है। जनतामें अशान्ति और आतङ्क फैलता है। श्वेतवर्णका गन्धर्वनगर हो तो घी, तेल और दूधका नाश होता है। पशुओंकी भी कमी होती है और अनेक प्रकारकी व्याधियाँ भी व्याप्त हो जाती हैं। गाय, बैल और घोड़ोंकी कीमतमें अधिक वृद्धि होती है। तिलहन और तिलका भाव ऊँचा बढ़ता है। विदेशोंसे व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ होता है। काले रङ्गका गन्धर्वनगर वस्त्रनाश करता है, कपासकी उत्पत्ति कम होती है तथा वस्त्र बनानेवाले मिलोंमें भी हड़ताल होती है, जिससे वस्त्रका भाव तेज हो जाता है। कागज तथा कागजके द्वारा निर्मित वस्तुओंके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। पुरानी वस्तुओंका भाव भी बढ़ जाता है तथा वस्तुओंकी कमी होनेके कारण बाजार तेज होता जाता है। लालरङ्गका गन्धर्वनगर अधिक अशुभ होता है, यह जितनी ज्यादा देर तक दिखलाई पड़ता रहता है, उतना ही हानिकारक होता है। इस प्रकारके गन्धर्वनगरका फल-मारपीट, झगड़ा, उपद्रव, अस्त्र-शस्त्रका प्रहार एवं अन्य प्रकारसे झगड़े-टण्टोंका होना आदि है। सभी प्रकारके रङ्गोंमें लालरङ्गका गन्धर्वनगर अशुभ कहा गया है। इसका फल रक्तपात निश्चित है। जिस रङ्गका गन्धर्वनगर जितने अधिक समय तक रहता है, उसका फल उतना ही अधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।

गन्धर्वनगर जिस स्थान या नगरमें दिखलाई देता है, उसका फलादेश उसी स्थान और नगरमें समझना चाहिए। जिस दिशामें दिखलाई दे उस दिशामें भी हानि या लाभ पहुँचाता है। इसका फलादेश विश्वजनीन नहीं होता, केवल थोड़े से प्रदेशमें ही होता है। जब गन्धर्वनगर आकाशके तारोंकी तरह बीचमें छाया हुआ दिखलाई दे तो मध्य देशको अवश्य नाश करता है। यह जितनी दूर तक फैला हुआ दिखलाई दे तो समझ लेना चाहिए कि उतनी दूर तक देशका नाश होगा। रोग, मरण, दुर्भिक्ष आदि अनिष्टकारक फलादेशोंकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारका गन्धर्वनगर जनता, प्रशासक और उच्चवर्गके लोगोंके लिए भी भयदायक होता है। अवर्षण, सूखा आदिके कारण फसल भी मारी जाती है। यदि गन्धर्वनगर इन्द्रधनुषाकार या साँपके बिलके आकारमें दिखलाई पड़े तो देशनाश, दुर्भिक्ष, मरण, व्याधि आदि अनेक प्रकारके अनिष्टकारक फल प्राप्त होते हैं। यदि चहारदीवारीके समान गन्धर्वनगरकी भी चहारदीवारी दिखलाई पड़े और ऊपरके गुम्बज भी दिखलाई पड़ें तो निश्चयतः प्रशासक या मन्त्रीका विनाश होता है। नगरके मुखियाके लिए भी इस प्रकारका गन्धर्वनगर अत्यन्त दुःखदायक बताया गया है। जिस गन्धर्वनगरका ऊपरी हिस्सा टूटा हुआ दिखलाई दे तो दस दिन

के भीतर ही किसी प्रधान व्यक्तिकी मृत्यु करता है। ऊपर स्वर्णकी गुम्बजें दिखलाई पड़ें और उनपर स्वर्ण-कलश भी दिखलाई देते हों तो निश्चयतः उस प्रदेशकी आर्थिक हानि, किसी प्रधान व्यक्तिकी मृत्यु, वस्तुओंकी मँहगाई और रोगादि उपद्रव होते हैं। जब गन्धर्वनगरके घरोंकी स्थिति ऊँचे मन्दिरोंके समान दिखलाई दे और उनके कलशों पर मालाएँ लटकती हुई दिखलाई पड़ें तो सुभिक्ष, समयानुसार वर्षा, कृषिका विकास, अच्छी फसल और धन-धान्यकी समृद्धि होती है। टूटते-ढहते गन्धर्वनगर दिखलाई दें तो उनका फल अच्छा नहीं होता। रोग और मानसिक आपत्तियोंके साथ पारस्परिक कलहकी भी सूचना समझनी चाहिए। जिस गन्धर्व नगरके द्वारपर सिंहाकृति दिखलाई दे, वह जनतामें बल, पौरुष और शक्तिका विकास करता है। वृषभाकृतिवाला गन्धर्वनगर जनताको धर्म-मार्गकी ओर ले जानेवाला है। उस प्रदेशकी जनतामें संयम और धर्मकी भावनाएँ विशेषरूपसे उत्पन्न होती हैं। जो व्यक्ति उक्त प्रकारके गन्धर्वनगरोंको स्वर्णाकृतिमें देखता है, उसे उस क्षेत्रमें शान्ति समझ लेनी चाहिए।

मास और वारके अनुसार गन्धर्वनगरका फलादेश—यदि रविवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको कष्ट, दुर्भिक्ष, अन्नका भाव तेज, तृणकी कमी, वृश्चिक-सर्प आदि विषैले जन्तुओंकी वृद्धि, व्यापारमें लाभ, कृषिका विनाश और अन्य प्रकारके उपद्रव भी होते हैं। तेज वायु चलता है, आश्विन मासमें कुछ वर्षा होती है, जिससे साधारण रूपसे चैती फसल हो जाती है। रविवारको सन्ध्यामें गन्धर्वनगर देखनेसे भूकम्पका भय, मध्याह्न में गन्धर्वनगर देखनेसे जनतामें अराजकता एवं प्रातःकाल सूर्योदयके साथ गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगरमें साधारणतः शान्ति रहती है। सन्ध्याकालका गन्धर्वनगर बहुत अधिक बुरा समझा जाता है। रातमें दिखलाई देनेसे कम फल देता है। मेघविजय गणिने रविवारके गन्धर्वनगरको अधिक अशुभकारक बतलाया है। इस दिनका गन्धर्वनगर वर्षाका अभाव करता है तथा व्यापारिक दृष्टिसे भी हानिकारक होता है। सोमवारको गन्धर्वनगर दीप्तियुक्त दिखलाई पड़े तो कलाकारोंके लिए शुभफल, प्रशासकवर्ग और कृषकोंके लिए भी शुभ-फलदायक होता है। इस प्रकारके गन्धर्वनगरके देखनेसे श्रावण और आषाढ़ मासमें अच्छी वर्षा होती है। भाद्रपद और आश्विन में वर्षाकी कमी रहती है। यदि इस प्रकारका गन्धर्वनगर ज्येष्ठमासमें रविवारको दिखलाई पड़े तो निश्चयतः दुर्भिक्ष होता है। आषाढ़में रविवारको दिखलाई पड़े तो आश्विनमें वर्षा, अवशेष महीनोंमें वर्षाका अभाव तथा साधारण फसल, श्रावणमें दिखलाई पड़े तो भूकम्पका भय, मार्गशीर्षमें अल्प वर्षा, वन-बगीचोंकी वृद्धि, खनिज पदार्थोंकी उपजमें कमी; भाद्रपद मासमें रविवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आश्विन और कार्त्तिकमें अनेक प्रकारके रोग, जनतामें अशान्ति तथा उपद्रव होते हैं। आश्विन मासमें रविवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण कष्ट, माघमें ओलोंकी वर्षा, भयङ्कर शीतका प्रकोप और चैती फसलकी हानि होती है। कार्त्तिक और अगहन मासमें रविवारके दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकारके रोगोंके साथ घृत, दूध, तैल आदि पदार्थोंका अभाव होता है, पशुओंके लिए चारेकी भी कमी रहती है। पौष और माघ मासमें गन्धर्वनगर रविवारको दिखलाई पड़े तो छः महीनों तक जनताको आर्थिक कष्ट रहता है। निमोनिया और प्लेग दो महीने तक विशेष रूपसे उत्पन्न होते हैं। होलीके दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष घोर दुर्भिक्ष पड़ता है। अन्नकी अत्यन्त कमी रहती है, चोर और लुटेरोंका भय-आतंक बढ़ता चला जाता है। फाल्गुन और चैत्रमें रविवारके दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन गन्धर्वनगरका दर्शन हो उससे ग्यारह दिनके भीतरमें भूकम्प या अन्य किसी भी प्रकारका महान् उत्पात होता है। वज्रपात होना या आकस्मिक घटनाओंका घटित होना आदि फलादेश समझना चाहिए। वैशाख महीनेमें रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारणतः शुभ फल होता है। केवल उस प्रदेशके प्रशासका-

धिकारीके लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इसी प्रकार ज्येष्ठमासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनतामें साधारण शान्ति, आषाढ़ मासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो श्रावणमें वर्षाकी कमी, धान्योत्पत्तिकी साधारण कमी, वस्त्रके व्यापारमें लाभ, घी, नमक और चीनीके व्यापारमें अत्यधिक लाभ, सोना-चाँदीके व्यापारमें साधारण हानि और अन्नके व्यापारमें लाभ होता है। श्रावण मासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा, श्रेष्ठ फसल और जनतामें सुख-शान्ति रहती है। व्यापारियोंके लिए भी इस महीनेका गन्धर्वनगर उत्तम माना गया है। भाद्रपद और आश्विनमासमें सोमवार के दिनका गन्धर्वनगर अनिष्टकारक, लोहा, सोना, चाँदी आदि धातुओंके व्यापारमें अत्यधिक लाभ, फसल साधारण एवं जनतामें शान्ति रहती है। कार्त्तिकमासके सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शरद्ऋतुमें अत्यधिक हवा चलती है, जिससे शीतका प्रकोप बढ़ जाता है। अगहन मासमें गन्धर्वनगर सोमवारको दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, शान्ति और आर्थिक विकास होता है। मांगलिक कार्योंकी वृद्धिके लिए यह गन्धर्वनगर उत्तम माना गया है। पौष, माघ और फाल्गुन मासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष सुभिक्ष, अनेक प्रकारके रोगोंकी वृद्धि, देशकी समृद्धि और व्यापारमें साधारण लाभ होता है। चैत्रमासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको कष्ट, आर्थिक क्षति, अनेक प्रकारकी व्याधियाँ और प्रशासकवर्गका विनाश होता है। अन्य प्रदेशोंसे संघर्षका भी भय रहता है। वैशाखमासमें सोमवारको गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो जनतामें धार्मिक रुचि उत्पन्न होती है, उस वर्ष अनेक धार्मिक महोत्सव होते हैं। राजा, प्रजा सभीमें धर्माचरणका विकास होता है।

ज्येष्ठमासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस वर्ष आषाढ़में साधारण वर्षा होती है, श्रावण और भाद्रपदमें वर्षाकी कमी रहती है तथा आश्विनमासमें पुनः वर्षा हो जाती है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। व्यापारिक दृष्टिसे वर्ष अच्छा नहीं रहता। लोहा, सोना और वस्त्रके व्यापारमें हानि उठानी पड़ती है। पुराने पदार्थोंके व्यापारमें लाभ होता है। कागजके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। इसी महीनेमें बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अशान्ति, कष्ट, भूकम्प, वज्रपात, रोग, धनहानि आदि फल प्राप्त होता है। गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको लाभ, पारस्परिक प्रेम, शान्ति और सुभिक्ष होता है। शुक्रवारको इस महीनेमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण व्यक्तियोंको विशेष लाभ, धनी-मानियोंको कष्ट, प्रशासकवर्गकी हानि, तत्प्रदेशीय किसी नेताकी मृत्यु, कलाकारोंको कष्ट और वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। फसल भी अच्छी होती है। इसी महीनेमें शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षाका अभाव, दुर्भिक्ष, जनताको कष्ट, तेज वायु या तूफानोंका प्रकोप, अग्निभय, शस्त्रभय, विषैले जन्तुओंका विकास तथा उनके प्रभावसे जनतामें अधिक आतंक होता है।

आषाढ़ महीनेमें मंगलवारके दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अन्नका भाव सस्ता, सोना, चाँदीके मूल्यमें भी गिरावट, कलाकार और शिल्पियोंको सुख-शान्ति, देशका आर्थिक विकास, व्यापारी समाजको सुख और प्रशासकोंको भी शान्ति मिलती है। केवल लोहेकी बनी वस्तुओंमें हानि होती है। इसी महीनेमें बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको साधारण कष्ट, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष और व्यापारमें साधारण लाभ होता है। वज्रपातका योग अधिक रहता है। इस दिन गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनताको विशेष लाभ, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, श्रेष्ठ फसल, व्यापारमें लाभ और सभी प्रकारका अमन-चैन रहता है। शुक्रवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, पर फसल

अच्छी, वस्त्रके व्यापारमें अधिक लाभ, मशीनोंके कल-पुर्जोंमें अधिक लाभ, गुड़, चीनीका भाव सस्ता एवं प्रतिदिन उपभोगमें आनेवाली वस्तुएँ मँहगी होती हैं। शनिवारको गन्धर्वनगर उक्त महीनेमे दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, फसलकी कमी और व्यापारियोंको कष्ट होता है।

श्रावणमासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षाकी कमी, किन्तु भाद्रपदमें अच्छी वर्षा, फसल साधारण, धन-धान्यकी वृद्धि, व्यापारियोंको लाभ, जनताको कष्ट, वस्त्रका अभाव, आपसी-कलह और उक्त प्रदेशमें उपद्रव होते हैं। बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्पवर्षा, साधारण फसल, घी की मँहगी, तैलकी भी मँहगी, वस्त्रका बाजार सस्ता, सोना-चाँदीका बाजार भी सस्ता, शरद् ऋतुमें अधिक शीत, अन्नका भाव भी मँहगा रहता है। साधारण जनताको तो कष्ट होता ही है, पर धनी-मानियोंको भी अनेक प्रकारके कष्ट सहन करने पड़ते हैं। गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, जनतामें शान्ति और व्यापारियोंको साधारण लाभ होता है। शुक्रवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षाभाव, दुर्भिक्ष और जनताको आर्थिक कष्ट होता है। शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं।

भाद्रपद मासमें मङ्गलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्पवर्षा, फसलकी कमी, जनताको कष्ट एवं आर्थिक क्षति होती है। बुधवारको दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारी समाजको लाभ, मसालेके व्यापारमें हानि एवं पशुओंमें अनेक प्रकारके रोग फैलते हैं। गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अतिवृष्टि, फसलकी कमी, बाढ़, राजाकी मृत्यु, नागरिकोंको अशान्ति, घृत, तैलके व्यापारमें लाभ और गुड़, चीनीका भाव घटता है। शुक्रवार-को गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो जनताको कष्ट, अनेक प्रकारके उपद्रव, व्यापारमें हानि और अभिजात्य वर्गके व्यक्तियोंको कष्ट होता है। शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षामें रुकावट, फसलकी कमी और धान्यका भाव मँहगा होता है।

आश्विन मासमे मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्य वर्षा, माघमें विशेष वर्षा और शीतका प्रकोप, फसल साधारण, खनिज पदार्थोंका विकास और देशकी समृद्धि होती है। बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सामान्य शीत, माघमें वज्र-पात, अन्नका भाव मँहगा और व्यापारीवर्ग या धोबी, कुम्हार, नाई आदिके लिए फाल्गुन, चैत्र और वैशाखमें कष्ट होता है। गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन इसका दर्शन होता है, उस दिनके आठ दिन पश्चात् ही घोर वर्षा होती है। इस वर्षासे नदियोंमें बाढ़ आनेकी भी संभावना रहती है। व्यापारीवर्गके लिए यह दर्शन उत्तम माना गया है। शुक्रवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको आनन्द, सुभिक्ष, परस्परमें सहयोगकी भावनाका विकास, धन-जनकी वृद्धि एवं नागरिकोंको सुख-शान्ति मिलती है। शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण जनताको भी कष्ट होता है। वर्षा अच्छी होती है, पर असामयिक वर्षा होनेके कारण जनताके साथ पशुवर्गको भी कष्ट उठाना पड़ता है।

कार्त्तिक मासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्निका प्रकोप होता है, अनेक स्थानों पर आग लगनेकी घटनाएँ सुनाई पड़ती हैं। व्यापारमें घाटा होता है। देशमें कुछ अशान्ति रहती है। पशुओंके लिए चारेका अभाव रहता है। बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीतका प्रकोप होता है। शहरोंमें भी ओले बरसते हैं। पशु और मनुष्योंको अपार कष्ट होता है। गुरुवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको अपार कष्ट होता है। यद्यपि आर्थिक विकासके लिए इस प्रकारके गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ना उत्तम होता है। शुक्रको

गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शान्ति रहती है। जनतामें सहयोग बढ़ता है। औद्योगिक विकासके लिए उत्तम होता है। शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं द्वारा जनताको कष्ट होता है। व्यापारके लिए इस प्रकारके गन्धर्वनगरका दिखलाई पड़ना शुभ नहीं है।

मार्गशीर्ष मासमें मंगलवारके दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको कष्ट, आगामी वर्ष उत्तम वर्षा, फसल अच्छी और बड़े पूँजीपतियोंको कष्ट होता है। बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनताको कष्ट होता है। गुरुवारको गन्धर्वनगरका दिखलाई पड़ना अच्छा होता है, देशका सर्वाङ्गीण विकास होता है। शुक्रवारको गन्धर्वनगरका देखा जाना लाभ, सुख, आरोग्य और शनिवारको देखनेसे हानि होती है। शनिवारकी शामको यदि पश्चिम दिशामें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो गदर होता है। कोई किसीको पूछता नहीं, मारकाट और लूटपाटकी स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पौषमासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्रजाको कष्ट, रोग और अग्निभय; बुधवारको दिखलाई पड़े तो शान्ति, धन और यशकी प्राप्ति; गुरुवारको दिखलाई पड़े तो पूर्ण सुभिक्ष, धान्यका भाव सस्ता, सोना-चाँदीका भाव मँहगा; शुक्रवारको दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष घनघोर वर्षा, आर्थिक कष्ट, आवासकी समस्या और अन्नकष्ट; एवं शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजा और प्रजा दोनोंको अपार कष्ट होता है।

माघमासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चैती फसल बहुत उत्तम, लोहाके व्यापारमें पूर्ण लाभ, रबर या गोंदके व्यापारमें हानि, राजनैतिक उपद्रव और अशान्ति; बुधवारको दिखलाई पड़े तो उत्तम वर्षा, सुभिक्ष, आर्थिक विकास और शान्ति; गुरुवारको दिखलाई पड़े तो सुख, सुभिक्ष और प्रसन्नता; शुक्रवारको दिखलाई पड़े तो शान्ति, लाभ और आनन्द एवं शनिवारको दिखलाई पड़े तो अपार कष्ट होता है। प्रातःकाल शनिवारको इस महीनेमें गन्धर्वनगरका देखना शुभ होता है। उस प्रदेशमें सुभिक्ष, सुख और शान्ति रहती है।

फाल्गुनमासमें मंगलवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आषाढ़से आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, गेहूँ, धान, ज्वार, जौ, गन्नाके भावमें मँहगी रहती है। यद्यपि कार्त्तिकके पश्चात् ये पदार्थ भी सस्ते हो जाते हैं। व्यापारियों, कलाकारों और राजनीतिज्ञोंके लिए वर्ष उत्तम रहता है। बुधवारको गन्धर्वनगर दिखलाई देनेसे फसलमें कमी, राजा या अधिकारी शासकका विनाश, पंचायतमें मतभेद एवं सोना-चाँदीके व्यापारमें लाभ; गुरुवारको दिखलाई दे तो पीले रंगकी वस्तुओंका भाव सस्ता, लाल रंगकी वस्तुओंका भाव मँहगा और तिल, तिलहन आदिका भाव समर्घ, शुक्रको दिखलाई पड़े तो पत्थर, चूनेके व्यापारमें विशेष लाभ, जूटमें घाटा और वर्षा समयानुसार एवं शनिवारको दिखलाई पड़े तो वर्षा अच्छी और फसल सामान्यतया अच्छी ही होती है।

चैत्र मासमें मंगलवारको सन्ध्यासमय गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगरमें अग्निका प्रकोप, पशुओंमें रोग, नागरिकोंमें कलह और अर्थहानि; बुधवारको मध्याह्नमें दिखलाई पड़े तो अर्थविनाश, नागरिकोंमें असन्तोष, रसादि पदार्थोंका अभाव और पशुओंके लिए चारेकी कमी; गुरुवारको रात्रिमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनताको अत्यन्त कष्ट, व्यसनोंका प्रचार, अधार्मिक जीवन एवं अर्थक्षति, शुक्रवारको दिखलाई पड़े तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, अनाजका भाव सस्ता, घी, दूधकी अधिक उत्पत्ति, फलोंकी अधिक उत्पत्ति, व्यापारियोंको लाभ एवं शनिवारको मध्यरात्रि या मध्य दिनमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनतामें घोर संघर्ष, मारकाट एवं अशान्ति होती है। अराजकता सर्वत्र फैल जाती है।

वैशाख मासमें मंगलवारको प्रातःकाल या अपराह्न कालमें गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मासमें अच्छी वर्षा और सुभिक्ष, बुधवारको दिखलाई पड़े तो व्यापारियोंमें मतभेद, आपसमें झगड़ा और आर्थिक क्षति; गुरुवारको दिखलाई पड़े, तो अनेक प्रकारके लाभ और सुख, शुक्रवारको दिखलाई पड़े, तो समय पर वर्षा, धान्यकी अधिक उत्पत्ति और वस्त्र-व्यापारमें लाभ एवं शनिवारको गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्यतया अच्छी फसल होती है।

गन्धर्वनगर सम्बन्धी फलादेश अवगत करते समय उनकी आकृति, रंग और सौम्यता या कुरूपताका भी ख्याल करना पड़ेगा। जो गन्धर्वनगर स्वच्छ होगा उसका फल उतना ही अच्छा और पूर्ण तथा कुरूप और अस्पष्ट गन्धर्वनगरका फलादेश अत्यल्प होता है।

तत्काल वर्षा होनेके निमित्त—वर्षा ऋतुमें जिस दिन सूर्य अत्यन्त जोशीला, दुस्सह और घृतके रङ्गके समान प्रभावशाली हो उस दिन अवश्य वर्षा होती है। वर्षाकालमें जिस दिन उदयके समयका सूर्य अत्यन्त प्रकाशके कारण देखा न जाय, पिघले हुए स्वर्णके समान हो, स्निग्ध वैडूर्य मणिकी-सी प्रभावाला हो और अत्यन्त तीव्र होकर तप रहा हो अथवा आकाशमें बहुत ऊँचा चढ़ गया हो तो उस दिन खूब अच्छी वर्षा होती है। उदय या अस्तके समय सूर्य अथवा चन्द्रमा फीका होकर शहदके रङ्गके समान दिखलाई पड़े तथा प्रचण्ड वायु चले तो अतिवृष्टि होती है। सूर्यकी अमोघ किरणें सन्ध्याके समय निकली रहें और बादल पृथ्वीपर झुके रहें तो ये महावृष्टिके लक्षण समझने चाहिए। सूर्यपिण्डसे एक प्रकारकी जो सीधी रेखा कभी-कभी दिखलाई देती है, वह अमोघ किरण कहलाती है। चन्द्रमा यदि कबूतर और तोतेकी आँखोंके सदृश हो अथवा शहदके रङ्गका हो और आकाशमें चन्द्रमाका दूसरा बिम्ब दिखलाई दे तो शीघ्र ही वर्षा होती है। चन्द्रमाके परिवेष चक्रवाककी आँखोंके समान हों तो वे वृष्टिके सूचक होते हैं और यदि आकाश तीतरके पङ्खोंके समान बादलोंसे आच्छादित हो तो वृष्टि होती है। चन्द्रमाके परिवेष हो, तारागणोंमें तीव्र प्रकाश हो, तो वे वृष्टिके सूचक होते हैं। दिशाएँ निर्मल हों और आकाश काकके अण्डेकी कान्तिवाला हो, वायुका गमन रुक कर होता हो एवं आकाश गोनेत्रकी-सी कान्तिवाला हो तो यह भी वृष्टिके आगमनका लक्षण है। रातमें तारे चमकते हों, प्रातःकाल लालवर्णका सूर्य उदय हो और बिना वर्षाके इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो तत्काल वृष्टि समझनी चाहिए। प्रातःकाल इन्द्रधनुष पश्चिम दिशामें दिखलाई देता हो तो शीघ्र वर्षा होती है। नीलरङ्गवाले बादलोंमें सूर्यके चारों ओर कुण्डलता हो और दिनमें ईशानकोण के अन्दर बिजली चमकती हो तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण महीनेमें प्रातःकाल गर्जना हो और जल पर मछलीका भ्रम हो तो अठारह प्रहरके भीतर पृथ्वी जलसे पूरित हो जाती है। श्रावणमें एक बार ही दक्षिणकी प्रचण्ड हवा चले तो हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रोंके आने पर वर्षा होती है। रातमें गर्जना हो और दिनमें दण्डाकार बिजली चमकती हो और प्राची दिशामें शीतल हवा चलती हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। पूर्व दिशामें धूम्रवर्ण बादल यदि सूर्यास्त होनेपर काला हो जाय और उत्तरमें मेघमाला हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। प्रातःकाल सभी दिशाएँ निर्मल हों और मध्याह्नके समय गर्मी पड़ती हो तो अर्द्धरात्रिके समय प्रजाके सन्तोषके लायक अच्छी वर्षा होती है। अत्यन्त वायुका चलना, सर्वथा वायुका न चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना, अत्यन्त शीत पड़ना, अत्यन्त बादलोंका होना और सर्वथा ही बादलोंका न होना छः प्रकारके मेघके लक्षण बतलाए गए हैं। वायुका न चलना, बहुत वायु चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना वर्षा होनेके लक्षण हैं। वर्षाकालके आरम्भमें दक्षिण दिशाके अन्दर यदि वायु, बादल या बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो अवश्य वर्षा होती है। शुक्रवार

के निकले हुए बादल यदि शनिवार तक ठहरे रहें तो वे बिना वर्षा किए कभी नष्ट नहीं होते। उत्तरमें बादलोंका घटाटोप हो रहा हो और पूर्वसे वायु चलता हो तो अवश्य वर्षा होती है। सायङ्कालके समय अनेक तहवाले बादल यदि मोर, धनुष, लाल पुष्प और तोतेके तुल्य हों अथवा जल-जन्तु, लहरों एवं पहाड़ोंके तुल्य हों तो शीघ्र ही वर्षा होती है। तीतरके पंखोंकी-सी आभा वाले विचित्र वर्णके मेघ यदि उदय और अस्तके समय अथवा रात-दिन दिखलाई दे तो शीघ्र ही बहुत वर्षा होती है। मोटे तहवाले बादलोंसे जब आकाश ढका हुआ हो और हवा चारों ओरसे रुकी हुई हो तो शीघ्र ही अधिक वर्षा होती है।

घड़ेमें रखा हुआ जल गर्म हो जाय, सब लताओंका मुख ऊँचा हो जाय, कुंकुमका-सा तेज चारों ओर निकलता हो, पक्षी स्नान करते हों, गीदड़ सायंकालमें चिल्लाते हों, सात दिन तक आकाश मेघाच्छन्न रहे, रात्रिमें जुगनू जलके स्थानके समीप जाते हों तो तत्काल वृष्टि होती है। गोबरमें कीटोंका होना, अत्यन्त कठिन परितापका होना, तक्र—छाछका खट्टा हो जाना, जलका स्वाद रहित हो जाना, मछलियोंका भूमिकी ओर कूदना, बिल्लीका पृथ्वीको खोदना, लोहकी जंगसे दुर्गन्ध निकलना, पर्वतका काजलके समान वर्णका हो जाना, कन्दराओंसे भापका निकलना, गिरगिट, कृकलास आदिका वृक्षके चोटी पर चढ़कर आकाशको स्थिर होकर देखना, गायोंका सूर्यको देखना, पशु-पक्षी और कुत्तोंका पंजों और खुरों द्वारा कानका खुजलाना, मकानकी छत पर स्थित होकर कुत्तेका आकाशको स्थिर होकर देखना, बगुलोंका पंख फैलाकर स्थिरतासे बैठना, वृक्षपर चढ़े हुए सर्पोंका चीत्कार शब्द होना, मेढकोंकी जोरकी आवाज आना, चिड़ियोंका मिट्टीमें स्नान करना, टिटिहरीका जलमें स्नान करना, चातकका जोरसे शब्द करना, छोटे-छोटे सर्पोंका वृक्ष पर चढ़ना, बकरीका अधिक समय तक पवनकी गतिकी ओर मुँह करके खड़ा रहना, छोटे पेड़ोंकी कलियोंका जल जाना, बड़े पेड़ोंमें कलियोंका निकल आना, बड़की शाखाओंमें खोखलोंका हो जाना, दाढ़ी-मूछोंका चिकना और नरम हो जाना, अत्यधिक गर्मीसे प्राणियोंका व्याकुल होना, मोरके पंखोंमें भन-भन शब्दका होना, गिरगिटका लाल आभा युक्त हो जाना, चातक-मोर-सियार आदि का रोना, आधी रातमें मुर्गोंका रोना, मक्खियोंका अधिक घूमना, भ्रमरोंका अधिक घूमना और उनका गोबरकी गोलियोंको ले जाना, काँसेके बर्तनमें जंग लग जाना, वृक्षतुल्य लता आदिका स्निग्ध, छिद्र रहित दिखलाई पड़ना, पित्त प्रकृतिके व्यक्तिका गाढ़ निद्रामें शयन करना, कागज पर लिखनेसे स्याहीका न सूखना, एवं वातप्रधान व्यक्तिके सिरका घूमना तत्काल वर्षाका सूचक है।

वर्षाज्ञानके लिए अत्युपयोगी सप्तनाड़ी चक्र--शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा इनकी क्रमसे चण्डा, समीरा, दहना, सौम्या, नीरा, जला और अमृता ये सात नाड़ियाँ होती हैं।

कृत्तिकासे आरम्भ कर अभिजित् सहित २८ नक्षत्रोंको उपर्युक्त सात नाड़ियोंमें चार बार घुमाकर विभक्त कर देना चाहिए। इस चक्रमें नक्षत्रोंका क्रम इस प्रकार होगा कि कृत्तिकासे अनुराधा तक मार्गक्रमसे और मघासे धनिष्ठा तक विपरीत क्रमसे नक्षत्रोंको लिखे। सात नाड़ियों के मध्यमें सौम्य नाड़ी रहेगी और इसके आगे-पीछे तीन-तीन नाड़ियाँ। दक्षिण दिशामें गई हुई नाड़ियाँ क्रूर कहलायेंगी और उत्तर दिशामें गई हुई नाड़ियाँ सौम्य कहलायेंगी। मध्यमें रहने वाली नाड़ी मध्यनाड़ी कही जायगी। ये नाड़ियाँ ग्रहयोगके अनुसार फल देती हैं।

दिशा	दक्षिणमें निर्जल नाड़ी			मध्य	उत्तरमें सजल नाड़ी		
नाड़ीके नाम	चण्डा	समीरा	दहना	सौम्या	नीरा	जला	अमृता
स्वामी	शनि	गुरु या सूर्य	मंगल	सूर्य या गुरु	शुक्र	बुध	चन्द्रमा
नक्षत्र	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिर	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
	विशाखा	स्वाती	चित्रा	हस्त	उत्तराफाल्गुनी	पूर्वाफाल्गुनी	मघा
	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषाढा	उत्तराषाढा	अभिजित्	श्रवण
	भरणी	अश्विनी	रेवती	उत्तराभाद्रपद	पूर्वाभाद्रपद	शतभिषा	धनिष्ठा

सप्तनाड़ी चक्रद्वारा वर्षाज्ञान करनेकी विधि—जिस ग्राममें वर्षाका ज्ञान करना हो, उस ग्रामके नामानुसार नक्षत्रका परिज्ञान कर लेना चाहिए। अब इष्टग्रामके नक्षत्रको उपर्युक्त चक्रमें देखना चाहिए कि वह किस नाड़ीका है। यदि ग्राम नक्षत्रकी सौम्यानाड़ी—आर्द्रा, हस्त, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद हो और उसपर चन्द्रमा शुक्रके साथ हो अथवा ग्राम नक्षत्र, चन्द्रमा और शुक्र ये तीनों सौम्या नाड़ीके हों तथा उसपर पापग्रहकी दृष्टि या संयोग नहीं हो तो अच्छी वर्षा नहीं होती है। पापयोग दृष्टि बाधक होती है। इस विचारके अनुसार चण्डा वायु और अग्नि नाड़ियों अशुभ हैं, शेष सौम्या, नीरा, जला और अमृता शुभ हैं।

चक्रका विशेष फल—चण्डानाड़ीमें दो-तीनसे अधिक स्थित हुए ग्रहप्रचण्ड हवा चलाते हैं। समीर नाड़ीमें स्थित होने पर वायु और दहननाड़ी पर स्थित होनेसे ऊष्मा पैदा करते हैं। सौम्यानाड़ीमें स्थित होनेसे समता करते हैं, नीरा नाड़ीमें स्थित होने पर मेघोंका सञ्चय करते हैं, जला नाड़ीमें प्रविष्ट होनेसे वर्षा करते हैं तथा वे ही दो-तीनसे अधिक एकत्रित ग्रह अमृता नाड़ीमें स्थित होनेपर अतिवृष्टि करते हैं। अपनी नाड़ीमें स्थित हुआ एक भी ग्रह उस नाड़ीका फल दे देता है। किन्तु मंगल सभी नाड़ियोंमें स्थित नाड़ीके अनुसार ही फल देता है। पुंग्रहों—गुरु, मंगल और सूर्यके योगसे धुँआ, स्त्री—चन्द्रमा और शुक्र और पुंग्रहोंके योगसे वर्षा तथा केवल स्त्री ग्रहोंके योगसे छाया होती है, जिस नाड़ीमें क्रूर और सौम्यग्रह मिले हुए स्थित हों उसमें जिस दिन चन्द्रमाका गमन हो, उस दिन अच्छी वर्षा होती है। यदि एक नक्षत्रमें ग्रहोंका योग हो तो उस कालमें महावृष्टि होती है। जब चन्द्रमा पापग्रहोंसे या केवल सौम्यग्रहोंसे विद्ध हो तब साधारण वर्षा होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है।

चन्द्रमा जिस ग्रहकी नाड़ीमें स्थित हो, उस ग्रहसे यदि यह मुक्त हो जावे तथा क्षीण न दिखलाई देता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। तात्पर्य यह है कि शुक्लपक्षकी षष्ठीसे कृष्ण पक्षकी दशमी तकका चन्द्रमा जिस नाड़ीमें हो और नाड़ीका स्वामी चन्द्रमाके साथ बैठा हो या उसे देखता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। चन्द्रमा सौम्य एवं क्रूर ग्रहोंके साथ यदि अमृत-नाड़ीमें हो तो एक, तीन या सात दिनमें दो, पाँच या सातबार वर्षा होती है। इसी प्रकार चन्द्रमा क्रूर और सौम्य ग्रहोंसे युक्त हो और जल नाड़ीमें स्थित हो तो इस योगसे आधा दिन, एक पहर या तीन दिन तक वर्षा होती है। यदि सभी ग्रह अमृत नाड़ीमें स्थित हों तो १८ दिन, जलनाड़ीमें हो तो १२ दिन और नीरा नाड़ीमें हो तो ६ दिन तक वर्षा होती है। मध्य नाड़ीमें गए हुए सब ग्रह तीन दिन तक वर्षा करते हैं। शेष नाड़ियोंमें गए हुए सब ग्रह महावायु और दुष्ट वृष्टि करते हैं। अधिक शूरग्रहोंके भोग निर्जला नाड़ियाँ भी जलदायिनी तथा क्रूर ग्रहोंके भोग

से सजल नाड़ियाँ भी निर्जला बन जाती हैं। दक्षिणकी तीनों नाड़ियोंमें गए हुए ग्रह अनावृष्टि की सूचना देते हैं। और ये ही क्रूरग्रह शुभ-ग्रहोंसे युक्त हों और उत्तरकी तीन नाड़ियोंमें स्थित हों तो कुछ वर्षा कर देते हैं। जलनाड़ीमें स्थित चन्द्र और शुक्र यदि क्रूर ग्रहोंसे युक्त हो जावें तो वे इस क्रूर योगसे अल्पवृष्टि करते हैं। जलनाड़ीमें स्थित हुए बुध, शुक्र और बृहस्पति ये चन्द्रमासे युक्त होनेपर उत्तम वर्षा करते हैं। जलनाड़ीमें चन्द्रमा और मंगल आरूढ हों तो वे चन्द्रमासे समागम होनेपर अच्छी वर्षा करते हैं। जलनाड़ीमें चन्द्रमा और मंगल, शनि द्वारा दृष्ट हों तो वर्षाकी कमी होती है। गमनकाल, संयोगकाल, वक्रगतिकाल, मार्गगतिकाल, अस्त या उदयकालमें इन सभी दशाओंमें जलनाड़ीमें प्राप्त हुए सभी ग्रह महावृष्टि करनेवाले होते हैं।

अक्षर क्रमानुसार ग्रामनक्षत्र निकालनेका नियम—चू चे चो ला=अश्विनी, ली लू ले लो=भरणी, अ ई उ ए=कृत्तिका, ओ वा वी वू=रोहिणी, वे वो का की=मृगशिर, कू घ ङ छ= आर्द्रा, के को हा ही=पुनर्वसु, हू हे हो डा=पुष्य, डी डू डे डो=आश्लेषा, मा मी मू मे=मघा, मो टा टी टू=पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी=उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ=हस्त, पे पो रा री= चित्रा, रू रे रो ता=स्वाती, ती तू ते तो=विशाखा, ना नी नू ने=अनुराधा, नो या यी यू= ज्येष्ठा, ये यो भा भी=मूल, भू धा फा ढा=पूर्वाषाढ़ा, भे भो जा जी=उत्तराषाढ़ा, खी खू खे खो=श्रवण, गा गी गू गे=धनिष्ठा, गो सा सी सू=शतभिषा, से सो दा दी=पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ=उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची=रेवती।

वर्षाके सम्बन्धमें एक आवश्यक बात यह भी जान लेनी चाहिए कि भारतमें तीन प्रकारके प्राकृतिक प्रदेश हैं—अनूप, जांगल और मिश्र। जिस प्रदेशमें अधिक वर्षा होती है, वह अनूप; कम वर्षा वाला जांगल और अल्पजलवाला मिश्र कहलाता है। मारवाड़में मामूली भी अशुभ योग वर्षाको नष्ट कर देता है और अनूप देशमें प्रबल अशुभ योग भी अल्पवर्षा कर ही देता है। जिस ग्रहके जो प्रदेश बतलाये गए हैं, वह ग्रह अपने ही प्रदेशोंमें वर्षाका अभाव या सद्भाव करता है।

ग्रहोंके प्रदेश—सूर्यके प्रदेश—द्रविड़ देशका पूर्वार्द्ध, नर्मदा और सोन नदीका पूर्वार्द्ध, यमुनाके दक्षिणका भाग, इक्षुमती नदी, श्री शैल और विन्ध्याचलके देश, चम्प, पुण्ड्र, चेदीदेश, कौशाम्बी, मगध, औण्ड्र, सुह्म, बंग, कलिङ्ग, प्राग्ज्योतिष, शबर, किरात, मेकल, चीन, बाह्लीक, यवन, काम्बोज और शक हैं।

चन्द्रमाके प्रदेश—दुर्ग, आर्द्र, द्वीप, समुद्र, जलाशय, तुषार, रोम, स्त्रीराज, मरुकच्छ और कोशल हैं।

मंगलके प्रदेश—नासिक, दण्डक, अश्मक, केरल, कुन्तल, कोंकण, आन्ध्र, कान्ति, उत्तर पाण्ड्य, द्रविड, नर्मदा, सोन नदी और भीमरथीका पश्चिम अर्धभाग, निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, वेत्रवती, वेणा, गोदावरी, मन्दाकिनी, तापी, महानदी, पयोष्णी, गोमती तथा विन्ध्य, महेन्द्र और मलयाचलकी नदियाँ आदि हैं।

बुधके प्रदेश—सिन्धु और लौहित्य, गंगा, मंदीरका, रथा, सरयू और कौशिकीके प्रान्तके देश तथा चित्रकूट, हिमालय और गोमन्त पर्वत, सौराष्ट्र देश और मथुराका पूर्व भाग आदि हैं।

बृहस्पतिके प्रदेश—सिन्धुका पूर्वार्द्ध, मथुराका पश्चिमार्द्धभाग तथा विराट् और शतद्रु नदी, मत्स्यदेश (धौलपुर, भरतपुर, जयपुर आदि) का आधा भाग, उदीच्यदेश, अर्जुनायन, सारस्वत, वाटधान, रमट, अम्बष्ठ, पारत, स्रुघ्न, सौवीर, भरत, साल्व, त्रैगर्त, पौरव और यौधेय हैं।

शुक्रके प्रदेश—वितस्तार, इरावती और चन्द्रभागा नदी, तक्षशिला, गान्धार, पुष्कलावत, मालवा, उशीनर, शिवि, प्रस्थल, मार्तिकावत, दशार्ण और कैकेय हैं।

शनिके प्रदेश—वेदस्मृति, विदिशा, कुरु क्षेत्रका समीपवर्ती देश, प्रभास क्षेत्र, पश्चिम देश, सौराष्ट्र, आभीर, शूद्रकदेश तथा आनर्तसे पुष्कर प्रान्त तकके प्रदेश, आबू और रैवतक पर्वत हैं।

केतुके प्रदेश—मारवाड़, दुर्गाचलादिक, अवगाण, श्वेत हूणदेश, पल्लव, चोल और चौलक हैं।

वृष्टिकारक अन्य योग—सूर्य, गुरु और बुधका योग जलकी वर्षा करता है। यदि इन्हींके ग्रहोंके साथ मंगलका योग हो जाय तो वायुके साथ जलकी वर्षा होती है। गुरु और सूर्य, राहु और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, शनि और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, गुरु और बुध तथा शुक्र और चन्द्रमा इन ग्रहोंके योग होनेसे जलकी वर्षा होती है।

सुभिक्ष दुर्भिक्षका परिज्ञान—

प्रभवाद् द्विगुणं कृत्वा त्रिभिर्न्यूनं च कारयेत्। सप्तभिस्तु हरेद्भागं शेषं ज्ञेयं शुभाशुभम्॥
एकं चत्वारि दुर्भिक्षं पञ्चद्वाभ्यां सुभिक्षकम्। त्रिषष्टे तु समं ज्ञेयं शून्ये पीडा न संशयः॥

अर्थात् प्रभवादि क्रमसे वर्तमान चालू संवत् की संख्याको दुगुना कर उसमेंसे तीन घटाके सातका भाग देनेसे जो शेष रहे, उससे शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए। उदाहरण—साधारण नामका संवत् चल रहा है। इसकी संख्या प्रभवादिसे ४४ आती है, अतः इसे दुगुना किया। ४४×२=८८, ८८ − ३=८५, ८५÷७=१२ ल०, १ शेष, इसका फल दुर्भिक्ष है। क्योंकि एक और चार शेषमें दुर्भिक्ष, पाँच और दो शेषमें सुभिक्ष, तीन या छः शेषमें साधारण और शून्य शेषमें पीड़ा समझनी चाहिए।

अन्य नियम—विक्रम संवत्की संख्याको तीनसे गुणा कर पाँच जोड़ना चाहिए। योगफलमें सातका भाग देनेसे शेष क्रमानुसार फल जानना। ३ और ५ शेषमें दुर्भिक्ष, शून्यमें महाकाल और १,२,४,६ शेषमें सुभिक्ष होता है।

उदाहरण—विक्रम संवत् २०१३, इसे तीनसे गुणा किया; २०१३×३=६०३९, ६०३९+५ ६०४४, इसमें ७ का भाग दिया, ६०४४÷७=८६३ लब्धि, शेष ३ रहा। इसका फल दुर्भिक्ष हुआ। संवत् २०१३ में साधारण संवत्सर भी है, इसका फल भी दुर्भिक्ष आया है।

संवत्सर निकालनेकी प्रक्रिया

संवत्कालो ग्रहयुतः कृत्वा शून्यरसैर्हृतः।
शेषाः संवत्सरा ज्ञेयाः प्रभवाद्या बुधैः क्रमात्॥

अर्थात्—विक्रम संवत्में ९ जोड़कर ६० का भाग देनेमें जो शेष रहे, वह प्रभवादि गत संवत्सर होता है, उससे आगेवाला वर्तमान होता है। उदाहरण—विक्रम संवत् २०१३, इसमें ९ जोड़ा तो २०१३+९=२०२२÷६०=३३ उपलब्धि, शेष ४२, अतः ४२ वीं संख्या कीलक की थी, जो गत हो चुका है, वर्तमानमें सौम्य संवत् है, जो आगे बदल जायगा, और वर्षान्तमें साधारण ही हो जायगा।

प्रभवादि संवत्सरबोधक चक्र

संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर
१	प्रभव	१६	चित्रभानु	३१	हेमलम्बी	४६	परिधावी
२	विभव	१७	सुभानु	३२	विलम्बी	४७	प्रमादी
३	शुक्ल	१८	तारण	३३	विकारी	४८	आनन्द
४	प्रमोद	१९	पार्थिव	३४	शार्वरी	४९	राक्षस
५	प्रजापति	२०	व्यय	३५	प्लव	५०	नल
६	अंगिरा	२१	सर्वजित्	३६	शुभकृत्	५१	पिंगल
७	श्रीमुख	२२	सर्वधारी	३७	शोभन	५२	मालयुक्त
८	भाव	२३	विरोधी	३८	क्रोधी	५३	सिद्धार्थी
९	युवा	२४	विकृति	३९	विश्वावसु	५४	रौद्र
१०	धाता	२५	खर	४०	पराभव	५५	दुर्मति
११	ईश्वर	२६	नन्दन	४१	प्लवंग	५६	दुन्दुभि
१२	बहुधान्य	२७	विजय	४२	कीलक	५७	रुधिरोद्गारी
१३	प्रमाथी	२८	जय	४३	सौम्य	५८	रक्ताक्षी
१४	विक्रम	२९	मन्मथ	४४	साधारण	५९	क्रोधन
१५	वृष	३०	दुर्मुख	४५	विरोधकृत्	६०	क्षय

पाँच वर्षका एक युग होता है, इसी प्रमाणसे ६० वर्षके १२ युग और उनके १२ स्वामी हैं—विष्णु, बृहस्पति, इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, शिव, पितर, विश्वेदेवा, चन्द्र, अग्नि, अश्विनीकुमार और सूर्य।

मतान्तरसे प्रथम बीस संवत्सरोंके स्वामी ब्रह्मा, इसके आगे बीस संवत्सरोंके स्वामी विष्णु और इससे आगेवाले बीस संवत्सरोंके स्वामी रुद्र—शिव हैं। आजकल रुद्रबीसी चल रही है।

द्वादशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गर्भान् सर्वान् सुखावहान् ।
भिक्षुकानां विशेषेण परदत्तोपजीविनाम् ॥१॥

अब सभी प्राणियोंको सुख देनेवाले मेघके गर्भधारणका वर्णन करता हूँ। विशेषरूपसे इस निमित्तका फल दूसरोंके द्वारा दिये गये भोजनको ग्रहण करनेवाले भिक्षुकोंके लिए प्रतिपादित करता हूँ। तात्पर्य यह है कि उक्त निमित्त द्वारा वर्षा और फसलकी जानकारी सम्यक् प्रकारसे प्राप्त की जाती है। जिस देशमें सुभिक्ष नहीं, उस देशमें त्यागी, मुनियोंका निवास करना कठिन है। अतः मुनि इस निमित्त द्वारा पहलेसे ही सुकाल दुष्कालका ज्ञान कर विहार करते हैं ॥१॥

ज्येष्ठा मूलममावस्यां मार्गशीर्षं प्रपद्यते ।
मार्गशीर्षप्रतिपदि गर्भाधानं प्रवर्त्तते ॥२॥

मार्गशीर्ष—अगहनकी अमावास्याको, जिस दिन चन्द्रमा ज्येष्ठा या मूल नक्षत्रमें होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं अथवा मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदाको, जबकि चन्द्रमा पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं ॥२॥

[1]दिवा समुत्थितो गर्भो रात्रौ विसृजते जलम् ।
रात्रौ समुत्थितश्चापि दिवा विसृजते जलम् ॥३॥

दिनका गर्भ रात्रिमें जलकी वर्षा करता है और रात्रिका गर्भ दिनमें जलकी वर्षा करता है ॥३॥

सप्तमे सप्तमे मासे सप्तमे सप्तमेऽहनि ।
[2]गर्भाः पाकं विगच्छन्ति यादृशं तादृशं फलम् ॥४॥

सात-सात महीने और सात-सात दिनमें गर्भ पूर्ण परिपक्व अवस्थाको प्राप्त होता है। जिस प्रकारका गर्भ होता है, उसी प्रकारका फल प्राप्त होता है। अभिप्राय यह है कि गर्भके परिपक्व होनेका समय सात महीना और सात दिन है। वाराही संहितामें यद्यपि १९६ दिन ही गर्भ परिपक्व होनेके लिए बताये गये हैं, किन्तु यहाँ आचार्यने सात महीने और सात दिन कहे हैं। दोनों कथनोंमें अन्तर कुछ भी नहीं है, यतः यहाँ भी नक्षत्रमास गृहीत हैं, एक नक्षत्रमास २७ दिनका होता है, अतः योग करने पर यहाँ भी १९६ दिन आते हैं ॥४॥

पूर्वसन्ध्या समुत्पन्नः पश्चिमायां प्रयच्छति ।
पश्चिमायां समुत्पन्नः पूर्वायां [3]तु प्रयच्छति ॥५॥

पूर्व सन्ध्यामें धारण किया गया गर्भ पश्चिम सन्ध्यामें बरसता है और पश्चिममें धारण किया गया गर्भ पूर्व सन्ध्यामें बरसता है। अभिप्राय यह है कि प्रातः धारण किया गया गर्भ सन्ध्या समय बरसता है और सन्ध्या समय धारण किया गया गर्भ प्रातः बरसता है ॥५॥

१ यह श्लोक हस्तलिखित प्रतिमें नहीं है, मुद्रितसे दिया जा रहा है। २. गर्भाः पाकेऽभिगच्छन्ति मु०। ३. च मु०।

नक्षत्राणि मुहूर्त्ताश्च सर्वमेवं समादिशेत् ।
षण्मासं समतिक्रम्य ततो देवः प्रवर्षति ॥६॥

नक्षत्र, मुहूर्त आदि सभीका निर्देश करना चाहिए। मेघ गर्भधारणके छः महीनेके पश्चात् वर्षा करते हैं ॥६॥

गर्भाधानादि ये मासास्ते च मासा अवधारिणः ।
विपाचनत्रयश्चापि त्रयः कालाभिवर्षणाः ॥७॥

गर्भाधान, वर्षण आदिके महीनोंका निश्चय करना चाहिए। तीन महीनों तक गर्भकी पक-क्रिया होती है और तीन महीनोंमें वर्षा होती है ॥७॥

शीतवातश्च विद्युच्च गर्जितं परिवेषणम् ।
सर्वगर्भेषु शस्यन्ते निर्ग्रन्थाः साधुदर्शिनः ॥८॥

सभी गर्भोंमें शीतवायुका बहना, बिजलीका चमकना, गर्जना करना और परिवेषकी प्रशंसा सभी निर्ग्रन्थ साधु करते हैं। अर्थात् मेघोंके गर्भ धारणके समय शीतवायुका बहना, बिजलीका चमकना, गर्जना करना और परिवेष धारण करना अच्छा माना गया है। उक्त चिह्न फसलके लिए श्रेष्ठ होते हैं ॥८॥

गर्भास्तु विविधा ज्ञेयाः शुभाऽशुभा यदा तदा ।
पापलिङ्गा निरुदका भयं दद्युर्न संशयः[3] ॥९॥
उल्कापातोऽथ निर्घाताः दिग्-दाहा[4] पांशुवृष्टयः ।
गृहयुद्धं निवृत्तिश्च ग्रहणं चन्द्रसूर्ययोः ॥१०॥
ग्रहाणां चरितं चक्रं साधूनां कोपसम्भवम् ।
गर्भाणामुपघाताय न ते ग्राह्या[5] विचक्षणैः ॥११॥

मेघगर्भ अनेक प्रकारके होते हैं, पर इनमें दो मुख्य हैं—शुभ और अशुभ। पापके कारणीभूत अशुभ मेघगर्भ निस्सन्देह जलकी वर्षा नहीं करते हैं तथा भय भी प्रदान करते हैं। अशुभ गर्भसे उल्कापात, दिग्दाह, धूलिकी वर्षा, गृहकलह, घरसे विरक्ति और चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण होते हैं। ग्रहोंका युद्ध, साधुओंका क्रोधित होना, गर्भोंका विनाश होता है, अतः बुद्धिमान व्यक्तियोंको अशुभ गर्भमेघोंका ग्रहण नहीं करना चाहिए ॥९-११॥

धूमं रजः पिशाचांश्च शस्त्रमुल्कां सनागजः ।
तैलं घृतं सुरामस्थि क्षारं लाक्षां वसां मधु ॥१२॥
अङ्गारकान् मरान् केशान् मांसशोणितकर्दमान् ।
विपच्यमाना मुञ्चन्ति गर्भाः पापभयावहाः ॥१३॥

पापगर्भ पच्यमान होनेके उपरान्त धूप, रज-धूलिका वर्षण, पिशाच-भूत-प्रेत-पिशाचादिका भय, शस्त्रप्रहार, उल्कापतन, हाथियोंका विनाश, तैल, घी, मद्य, हड्डी, क्षार-घातक तेज पदार्थ लाख, चर्बी, मधु, अग्निके अंगारे, नग्न, केश, माँस, रक्त, कीचड़ आदिकी वर्षा करते हैं ॥१२-१३॥

१. षड्मासान् मु०। २. गर्भन् मु०। ३. -भसंशयः मु०। ४. दिशा दाहा निर्घाता, मु०। ५. विविदिभ्नैः मु०।

कार्तिकं चोऽथ पौषं च चैत्रवैशाखमेव च ।
श्रावणं चाश्विनं सौम्यं गर्भं विन्याद् बहूदकम् ॥१४॥

कार्त्तिक, पौष, चैत्र, वैशाख, श्रावण, आश्विन मासमें सौम्य-शुभ गर्भ होता है और अधिक जलकी वर्षा करता है। अर्थात् उक्त मासोंमें यदि मेघ गर्भ धारण करे तो अच्छी वर्षा होती है ॥१४॥

ये तु पुष्येण दृश्यन्ते हस्तेनाभिजिता तथा ।
अश्विन्यां सम्भवन्तश्च ते पश्चान्नैव शोभनाः ॥१५॥

आर्द्राऽऽश्लेषासु ज्येष्ठासु मूले वा सम्भवन्ति ये ।
ये गर्भागमदत्ताश्च मतास्तेऽपि बहूदकाः[3] ॥१६॥

यदि पुष्य, हस्त, अभिजित, अश्विनी इन नक्षत्रोंमें गर्भ धारण हो तो शुभ है, इन नक्षत्रोंके बाद शुभ नहीं। आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रोंमें गर्भधारणका कार्य हो तो उत्तम जलकी वर्षा होती है ॥१५-१६॥

[4]उच्छ्रितं चापि वैशाखान् कार्तिके दधते जलम् ।
हिमागमेन गमिका [5]तेऽपि मन्दोदकाः स्मृताः ॥१७॥

वैशाखमें गर्भ धारण करने पर कार्त्तिक मासमें जलकी वर्षा होती है। इस प्रकारके मेघ हिमागमके साथ जलकी मन्दवृष्टि करनेवाले होते हैं ॥१७॥

स्वातौ च मैत्रदेवे च वैष्णवे च सुवारुणे ।
गर्भाः सुधारणा ज्ञेया [6]ते स्रवन्ते बहूदकम् ॥१८॥

स्वाती, अनुराधा, श्रवण और शतभिषा इन नक्षत्रोंमें मेघ गर्भ धारण करें तो अधिक जलकी वर्षा होती है ॥१८॥

पूर्वामुदीचीमैशानीं ये गर्भा दिशमाश्रिताः ।
ते सस्यवन्तस्तोयाद्यास्ते गर्भास्तु सुपूजिताः ॥१९॥

पूर्व, उत्तर और ईशान कोणमें जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, वे जलकी वर्षा करते हैं तथा फसल भी उत्तम होती है ॥१९॥

[7]वायव्यामथ वारुण्यां ये गर्भा स्रवन्ति च ।
ते वर्षं मध्यमं दद्युः शस्यसम्पत्यमेव च ॥२०॥

वायव्यकोण और पश्चिम दिशामें जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, उनसे मध्यम जलकी वर्षा होती है और अनाजकी फसल उत्तम होती है ॥२०॥

---

१. वाऽथ मु० । २. गर्भागमनदत्ताश्च तेऽपि तांश्च वरोदका. । ३. वरोदकाः मु० । ४. उत्थित चापि वैशाखं सुवन्तं कार्तिकं जलम् मु० । ५. मन्दोदास्ते प्रकीर्तिताः मु० । ६. सम्भवन्तो बहूदकाः मु० । ७. वायव्यां तु वारुण्यां गर्भा ये सम्भवन्ति च । मध्यमं वर्षणं दद्युः शस्यसम्पत्तमेव च ॥२०॥

शिष्टं सुभिक्षं विज्ञेयं जघन्या नात्र संशयः ।
मन्दगाश्च घना या च सर्वतश्च सुपूजिताः ॥२१॥

दक्षिण दिशामें मेघ गर्भ धारण करें तो सामान्यतः शिष्टता, सुभिक्ष समझना चाहिए, इसमें सन्देह नहीं है तथा इस प्रकारके मेघ सर्वत्र पूजे भी जाते हैं ॥२१॥

मारुतः तत्प्रभवाः गर्भा धूयन्ते मारुतेन च ।
वातो गर्भश्च[1] वर्षश्च करोत्यपकरोति च ॥२२॥

वायुसे उत्पन्न गर्भ वायुके द्वारा ही आन्दोलित किये जाते हैं तथा वायु चलता है और गर्भकी क्षति होती है ॥२२॥

कृष्णा नीला च रक्ताश्च पीता शुक्लाश्च सर्वतः ।
व्यामिश्राश्चापि ये गर्भाः स्निग्धाः सर्वत्र पूजिताः ॥२३॥

कृष्ण, नील, रक्त, पीत, शुक्ल, मिश्रितवर्ण तथा स्निग्ध गर्भ सभी जगह पूज्य होते हैं—शुभ होते हैं ॥२३॥

अप्सराणां तु सदृशाः पक्षिणां जलचारिणाम् ।
वृक्षपर्वतसंस्थाना गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥२४॥

देवाङ्गनाओंके सदृश, जलचर पक्षियोंके समान, वृक्ष और पर्वतके आकारवाले गर्भ सर्वत्र पूज्य हैं—शुभ हैं ॥२४॥

वापीकूपतडागाश्च[2] नद्यश्चापि मुहुर्मुहुः ।
पूर्यन्ते तादृशैर्गर्भैस्तोयक्लिन्ना नदीवहैः[3] ॥२५॥

इस प्रकारके गर्भसे बावड़ी, कुँआ, तालाब, नदी आदि जलसे लबालब भर जाती है तथा इस प्रकार जल कई बार बरसता है ॥२५॥

[4]नक्षत्रेषु तिथौ चापि मुहूर्त्ते करणे दिशि ।
यत्र यत्र समुत्पन्नाः[5] गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥२६॥

जिस-जिस नक्षत्र, तिथि, दिशा, मुहूर्त, करणमें स्निग्ध मेघ गर्भ धारण करते है, वे उस-उस प्रकारके मेघ पूज्य होते हैं—शुभ होते हैं ॥२६॥

सुसंस्थानाः सुवर्णाश्च सुवेषाः स्वभ्रजा घनाः ।
सुबिन्दवः स्थिता गर्भाः सर्वे सर्वत्र पूजिताः ॥२७॥

सुन्दर आकार, सुन्दर वर्ण, सुन्दर वेप, सुन्दर बादलोंसे उत्पन्न, सुन्दर बिन्दुओंसे युक्त मेघगर्भ पूजित होते हैं—शुभ होते हैं ॥२७॥

कृष्णा रूक्षाः सुखण्डाश्च विद्रवन्तः पुनः पुनः ।
विस्वरा रूक्षशब्दाश्च गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥२८॥

कृष्ण, रूक्ष, खण्डित तथा विकृत-आकृतिवाले, भयङ्कर और रूक्ष शब्द करनेवाले मेघगर्भ सर्वत्र निन्दित हैं ॥२८॥

---

१. वर्षन्तु गर्भाश्च मु० । २. तडागानि मु० । ३. धरावहैः मु० । ४. मुद्रित प्रतिमें २७वें श्लोकके स्थानपर २६वां तथा २६ के स्थानपर २७ वा है । ५. स्निग्धाः मु० ।

[1]अन्धकारसमुत्पन्ना गर्भास्ते तु न पूजिताः ।
चित्राः स्रवन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥२९॥

अन्धकारमें समुत्पन्न गर्भ—कृष्णपक्षमें उत्पन्न गर्भ पूज्य नहीं—शुभ नहीं होते हैं। चित्रा नक्षत्रमें उत्पन्न गर्भ भी निन्दित है ॥२९॥

मन्दवृष्टिमनावृष्टिभयं राजपराजयम् ।
दुर्भिक्षं मरणं रोगं गर्भाः कुर्वन्ति तादृशम् ॥३०॥

उक्त प्रकारका मेघगर्भ मन्दवृष्टि, अनावृष्टि राजाके पराजयका भय, दुर्भिक्ष, मरण, रोग, इत्यादि बातोंको करता है ॥३०॥

मार्गशीर्षे तु गर्भास्तु ज्येष्ठामूलं समादिशेत् ।
पौषमासस्य गर्भास्तु विन्द्यादाषाढिकां बुधाः ॥३१॥
माघजात् श्रवणे विन्द्यात् प्रोष्ठपदे च फाल्गुनात् ।
चैत्रामश्वयुजे विन्द्याद्‌गर्भं जलविसर्जनम् ॥३२॥

मार्गशीर्षका गर्भ ज्येष्ठा या मूलमें और पौषका गर्भ पूर्वाषाढ़ामें, माघमें उत्पन्न गर्भ श्रवणमें, फाल्गुनमें उत्पन्न धनिष्ठा नक्षत्रमें, चैत्रमें उत्पन्न अश्विनी नक्षत्रमें जलकी वर्षा करता है ॥३१-३२॥

मन्दोदा प्रथमे मासे पश्चिमे ये च कीर्तिताः ।
शेषा बहूदका ज्ञेयाः प्रशस्तैर्लक्षणैर्यदा ॥३३॥

पहले जिन मेघगर्भोंका निरूपण किया है, उनमेंसे उपर्युक्त मेघगर्भ पहले महीनेमें कम जलकी वर्षा करते हैं, अवशेष प्रशस्त-शुभ लक्षणोंके अनुसार अधिक जलकी वर्षा करते हैं ॥३३॥

यानि रूपाणि दृश्यन्ते गर्भाणां यत्र यत्र च ।
तानि सर्वाणि ज्ञेयानि भिक्षूणां भैक्षवर्तिनाम् ॥३४॥

मेघगर्भोंका जहाँ-जहाँ जो-जो रूप हो, वहाँ-वहाँ उसका मधुकरीवृत्ति करनेवाले साधुको निरीक्षण करना चाहिए ॥३४॥

सन्ध्यायां यानि रूपाणि मेघेष्वभ्रेषु यानि च ।
तानि गर्भेषु सर्वाणि [2]यथावदुपलक्षयेत् ॥३५॥

मेघोंका जो रूप सन्ध्या समयमें हो, उनका गर्भकालमें अवस्थाके अनुसार निरीक्षण करना चाहिए ॥३५॥

ये केचिद् विपरीतानि-पश्यन्ते तानि सर्वशः ।
लिङ्गानि तोयगर्भेषु भयदेषु भवेत् तदा ॥३६॥

प्रतिपादित शुभ चिह्नोंके विपरीत चिह्न यदि दिखलाई पड़े तो उन चिह्नोंवाला मेघगर्भ भय देनेवाला होता है ॥३६॥

१. यह श्लोक हस्तलिखित प्रतिमें नहीं है, किन्तु इसका उत्तरार्ध श्लोक नं० ३० में मिलता है।
२. वस्थं निरीक्षयेत् मु० ।

गर्भा यत्र न दृश्यन्ते तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ।
उत्पन्ना वा स्रवन्त्याशु भद्रबाहुवचो यथा ।।३७।।

जहाँ मेघगर्भ दिखलाई नहीं पड़ें, वहाँ अत्यन्त भय समझना चाहिए । उत्पन्न हुई फसल शीघ्र नष्ट हो जाती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ।।३७।।

निर्ग्रन्था यत्र गर्भांश्च न पश्येयुः कदाचन ।
तं च देशं परित्यज्य सगर्भं संश्रयेत् त्वरा[1] ।।३८।।

निर्ग्रन्थ मुनि जिस देशके मेघगर्भ न देखें, उस देशको छोड़कर शीघ्र ही उन्हें मेघगर्भ वाले अन्य देशका आश्रय लेना चाहिए ॥३८॥

इति श्रीभद्रबाहुके सकलमुनिजनानन्दभद्रबाहुविरचिते महानैमित्त-
शास्त्रे गर्भवातलक्षणं द्वादशमं परिसमाप्तम् ।

विवेचन—मेघ गर्भकी परीक्षा द्वारा वर्षाका निश्चय किया जाता है । वराहमिहिरने बतलाया है—"दैवविदवहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति । तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिर्देशे" ॥ अर्थात् जो दैवका जानकार पुरुष रात-दिन गर्भ लक्षणमें मन लगाकर सावधान चित्तसे रहता है, उसके वाक्य मुनियोंके समान मेघगणितमें कभी मिथ्या नहीं होते । अतः गर्भकी परीक्षाका परिज्ञान कर लेना आवश्यक है । आचार्यके इस अध्यायमें गर्भधारणका निरूपण किया है । मार्गशीर्षमासमें शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे जिस दिन चन्द्रमा पूर्वाषाढा नक्षत्रमें होता है, उस दिनसे ही सब गर्भोंका लक्षण जानना चाहिए । चन्द्रमा जिस नक्षत्रमें रहता है, यदि उसी नक्षत्रमें गर्भ धारण हो तो उस नक्षत्रसे १९५ दिनके उपरान्त प्रसवकाल—वर्षा होनेका समय होता है । शुक्लपक्षका गर्भ कृष्णपक्षमें और कृष्णपक्षका गर्भ शुक्लपक्षमें, दिनका गर्भ रात्रिमें, रातका गर्भ दिनमें, प्रातःकालका गर्भ सन्ध्यामें और सन्ध्याका गर्भ प्रातःकालमें जलकी वर्षा करता है । मार्गशीर्षके आदिमें उत्पन्न गर्भ एवं पौष मासमें उत्पन्न गर्भ मन्दफल युक्त हैं—अर्थात् कम वर्षा होती है । माघमासका गर्भ श्रावण कृष्णपक्षमें प्रातःकालको प्राप्त होता है । माघके कृष्णपक्ष द्वारा भाद्रपदमासका शुक्लपक्ष निश्चित है । फाल्गुन मासके शुक्लपक्षमें उत्पन्न गर्भ भाद्रपदमासके शुक्लपक्षमें जलकी वर्षा करता है । फाल्गुनके कृष्णपक्षका गर्भ आश्विनके शुक्लपक्षमें जलकी वृष्टि करता है ।

पूर्वदिशाके मेघ जब पश्चिमकी ओर उड़ते हैं और पश्चिमके मेघ पूर्वदिशामें उदित होते हैं, इसी प्रकार चारों दिशाओंके मेघ पवनके कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघका गर्भ काल जानना चाहिए । जब उत्तर, ईशानकोण और पूर्व दिशा वायुमें आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्द युक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहुत घेरेदार होता है, उस समय भी मेघोंके गर्भ धारणका समय रहता है । मेघोंके गर्भधारण करनेका समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन है । इन्हीं महीनोंमें मेघ गर्भ धारण करते हैं । जो व्यक्ति गर्भधारणका काल पहचान लेता, वह गणित द्वारा बड़ी ही सरलतासे जान सकता है कि गर्भधारणके १९५ दिनके उपरान्त वर्षा होती है । अगहनके महीनेमें जिस तिथिको मेघ

1. तं देशं प्रथमं त्यक्त्वा सगर्भं त्वरितं श्रयेत् ।

गर्भ धारण करते हैं, उस तिथिसे ठीक १९५ वें दिनमें अवश्य वर्षा होती है। अतः गर्भधारणकी तिथिका ज्ञान लक्षणोंके आधार पर ही किया जा सकता है। स्थूल और स्निग्ध मेघ जब आकाशमें आच्छादित हों और आकाशका रंग काकके अण्डे और मोरके पंखके समान हो तो मेघोंका गर्भधारण समझना चाहिए। इन्द्रधनुष और गम्भीर गर्जनायुक्त, सूर्याभिमुख, बिजलीका प्रकाश करनेवाले मेघ हों तो; ईशान और पूर्व दिशामें गर्भधारण करते हैं। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियोंका कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहनमासमें जिस तिथिको मेघ सन्ध्याकी अरुणिमासे अनुरक्त और मंडलाकार होते हैं, उसी तिथिको उनकी गर्भधारणकी क्रिया समझनी चाहिए। अगहनमासमें जिस तिथिको प्रबल वायु चले, लाल-लाल बादल आच्छादित हों, चन्द्र और सूर्यकी किरणें तुषारके समान कलुषित और शीतल हों तो छिन्न-भिन्न गर्भ समझना चाहिए। गर्भधारणके उपर्युक्त चारों मासोंके अतिरिक्त ज्येष्ठमास भी माना गया है। ज्येष्ठमें शुक्लपक्षकी अष्टमीसे चार दिनों तक गर्भ धारणकी क्रिया होती है। यदि ये चारों दिन एक समान हों तो सुखदायी होते हैं, तथा गर्भधारण क्रिया बहुत उत्तम होती है। यदि इन दिनोंमें एक दिन जल बरसे, एक दिन पवन चले, एक दिन तेज़ धूप पड़े और एक दिन आँधी चले तो निश्चयतः गर्भ शुभ नहीं होता। ज्येष्ठमासका गर्भ मात्र ८६ दिनोंमें बरसता है। अगहनका गर्भ १९५ दिनमें वर्षा करता है; किन्तु वास्तविक गर्भ अगहन, पौष और माघका ही होता है। अगहनके गर्भ द्वारा आषाढ़में वर्षा, पौषके गर्भसे श्रावणमें, माघके गर्भसे भाद्रपद और फाल्गुनके गर्भसे आश्विनमें जलकी वर्षा होती है।

फाल्गुनमें तीक्ष्ण पवन चलनेसे, स्निग्ध बादलोंके एकत्र होनेसे, सूर्यके अग्निसमान पिङ्गल और ताम्रवर्ण होनेसे गर्भ क्षीण होता है। चैत्रमें सब गर्भपवन, मेघ, वर्षा और परिवेष युक्त होनेसे शुभ होते हैं। वैशाखमें मेघ, वायु, जल और बिजलीकी चमक एवं कड़कड़ाहटके होनेसे गर्भकी पुष्टि होती है। उल्का, वज्र, धूलि, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, कीलक, केतु, ग्रहयुद्ध, निर्घात, परिघ, इन्द्रधनुष, राहुदर्शन, रुधिरादिका वर्षण आदिके होनेसे गर्भका नाश होता है। सभी ऋतुएँ पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और रोहिणी नक्षत्रमें धारण किया गया गर्भ पुष्ट होता है। इन पाँच नक्षत्रोंमें गर्भ धारण करना शुभ माना जाता है तथा मेघ प्रायः इन्हीं नक्षत्रोंमें गर्भ धारण करते भी हैं। अगहन महीनेमें जब ये नक्षत्र हों, उन दिनों गर्भकालका निरीक्षण करना चाहिए। पौष, माघ और फाल्गुनमें भी इन्हीं नक्षत्रोंका मेघगर्भ शुभ होता है, किन्तु शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा और स्वाती नक्षत्रमें भी गर्भधारणकी क्रिया होती है। अगहनसे वैशाख मास तक छः महीनोंमें गर्भ धारण करनेसे ८, ६, १६, २४, २० और ३ दिन तक निरन्तर वर्षा होती है। क्रूरग्रहयुक्त होने पर समस्त गर्भमें ओले, अशनि और मछलीकी वर्षा होती है। यदि गर्भ समयमें अकारण ही घोर वर्षा हो तो गर्भका स्खलन हो जाता है। गर्भ पाँच प्रकारके निमित्तोंसे पुष्ट होता है। जो पुष्टगर्भ है, वह सौ योजन तक फैल कर जलकी वर्षा करता है। चतुर्निमित्तक पुष्ट गर्भ ५० योजन, त्रिनिमित्तक २५ योजन, द्विनिमित्तक १२॥ योजन और एक निमित्तक ५ योजन तक जलकी वर्षा करता है। पञ्चनिमित्तों में पवन, जल, बिजली, गर्जना और मेघ शामिल हैं। वर्षाका प्रभाव भी निमित्तोंके अनुसार ही ज्ञात किया जाता है। पञ्चनिमित्तक मेघगर्भसे एक द्रोण जलकी वर्षा, चतुर्निमित्तकसे बारह आढक जलकी वर्षा, त्रिनिमित्तकसे ८ आढक जलकी वर्षा, द्विनिमित्तकसे ६ आढक और एक निमित्तकसे ३ आढक जलकी वर्षा होती है। यदि गर्भकालमें अधिक जलकी वर्षा हो जाय तो प्रसवकालके अनन्तर ही जलकी वर्षा होती है।

मेघविजयगणिने मेघगर्भका विचार करते हुए लिखा है कि मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदाके

उपरान्त जब चन्द्रमा पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर स्थित हो, उसी समय गर्भके लक्षण अवगत करते चाहिए। जिस नक्षत्रमें मेघ गर्भ धारण करते हैं, उससे १९५ वें दिन जब वही नक्षत्र आता है तो जलकी वर्षा होती है। मार्गशीर्ष शुक्लपक्षका गर्भ तथा पौष कृष्णपक्षका गर्भ अत्यल्प वर्षा करनेवाला होता है। माघ शुक्लपक्षका गर्भ श्रावण कृष्णमें और माघ कृष्णका गर्भ भाद्रपद शुक्लमें जलकी वर्षा करता है। फाल्गुन शुक्लका गर्भ भाद्रपद कृष्णमें, फाल्गुन कृष्णके आश्विन शुक्लमें, चैत्र शुक्लका गर्भ आश्विन कृष्णमें, चैत्र कृष्णका गर्भ कार्त्तिक शुक्लमें जलकी वर्षा करता है। सन्ध्या समय पूर्वमें आकाश मेघाच्छादित हो और ये मेघ पर्वत या हाथीके समान हों तथा अनेक प्रकारके श्वेत हाथियोंके समान दिखलाई पड़ें तो पाँच या सात रातमें अच्छी वर्षा होती है। सन्ध्या समय उत्तरमें आकाश मेघाच्छादित हो और मेघ पर्वत या हाथीके समान मालूम पड़े तो तीन दिनमें उत्तम वर्षा होती है। सन्ध्या समय पश्चिम दिशामें श्याम रङ्गके मेघ आच्छादित हों तो सूर्यास्तकालमें ही जलकी उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण और आग्नेय दिशाके मेघ, जिन्होंने पौषमें गर्भ धारण किया है वे अल्पवर्षा करते हैं। श्रावण मासमें ऐसे मेघों द्वारा श्रेष्ठ वर्षा होनेकी सम्भावना रहती है। आग्नेय दिशामें अनेक प्रकारके आकार वाले मेघ स्थित हो तो ईति, सन्तापके साथ सामान्य वर्षा करते हैं। वायव्य और ईशान दिशाके बादल शीघ्र ही जल बरसाते हैं। जिन मेघोंने किसी भी महीनेकी चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमीको गर्भ धारण किया है, वे मेघ शीघ्र ही जलकी वर्षा करते हैं। मार्गशीर्ष कृष्ण पक्षमें मघा नक्षत्रमें मेघ गर्भ धारण करे अथवा मार्गशीर्ष कृष्णा चतुर्दशीको मेघ और बिजली दिखलाई पड़े तो आषाढ़ शुक्लपक्षमें अवश्य ही जलकी वर्षा होती है।

मार्गशीर्ष कृष्ण चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी इन तिथियोंमें आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी ये नक्षत्र हो और इन्हींमें गर्भधारणकी क्रिया हुई हो तो आषाढ़में केवल तीन दिनों तक ही उत्तम वर्षा होती है। यदि मार्गशीर्षमें उत्तरा, हस्त और चित्रा ये नक्षत्र सप्तमी तिथिको पड़ते हों और इसी तिथिको मेघ गर्भ धारण करें तो आषाढ़में केवल बिजली चमकती है और मेघोंकी गर्जना होती है। अन्तिम दिनोंमें तीन दिन वर्षा होती है। आषाढ़ शुक्ला अष्टमीको स्वाती नक्षत्र पड़े तो इस दिन महावृष्टि होनेका योग रहता है। मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी, एकादशी और द्वादशी और अमावस्याको चित्रा, स्वाती, विशाखा नक्षत्र हो और इन तिथियोंमें मेघोंने गर्भ-धारण किया हो तो आषाढ़ी पूर्णिमाको घनघोर वर्षा होती है। जब गर्भका प्रसवकाल आता है, उस समय पूर्वमें बादल धूमिल, सूर्यास्तमें श्याम और मध्याह्नमें विशेष गर्मी रहती है। यह लक्षण प्रसवकाल का है। श्रावण, भाद्रपद और आश्विनका गर्भ सात दिन या नौ दिनमें ही बरस जाता है। इन महीनोंका गर्भ अधिक वर्षा करनेवाला होता है। दक्षिणकी प्रबल हवाके साथ पश्चिम की वायु भी साथ ही चले तो शीघ्र ही वर्षा होती है। यदि पूर्व पवन चले और सब दिशा धूम्रवर्ण हो जायँ तो चार प्रहरके भीतर मेघ बरसता है। यदि उदयकालमें सूर्य पिघलाये गये स्वर्णके समान या वैडूर्य मणिके समान उज्ज्वल हो तो शीघ्र ही वर्षा करता है। गर्भकालमें साधारणतः आकाशमें बादलोंका छाया रहना शुभ माना गया है। उल्कापात, विद्युत्पात, धूलि, वर्षा, भूकम्प, दिग्दाह, गन्धर्वनगर, निर्घात शब्द आदिका होना मेघगर्भ कालमें अशुभ माना गया है। पंचनक्षत्र—पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदामें धारण किया गया गर्भ सभी ऋतुमें वर्षाका कारण होता है। शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा, स्वाती, मघा इन नक्षत्रोंमें धारण किया गया गर्भ भी अधिक शुभ होता है। अच्छी वर्षाके साथ सुभिक्ष, शान्ति, व्यापारमें लाभ और जनतामें सन्तोष रहता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रका गर्भ पशुओंके लिए लाभदायक होता है। इस गर्भका निमित्त नर और मादा पशुओंकी उन्नतिका कारण होता है। पशुओंके रोग-शोकादि नष्ट हो जाते हैं और उन्हें अनेक प्रकारसे लोग अपने कार्योंमें लाते हैं।

पशुओंकी कीमत भी बढ़ जाती है। देशमें कृषिका विकास पूर्णरूपसे होता है तथा कृषिके सम्बन्धमें नये-नये अन्वेषण होते हैं। पूर्वाषाढ़ामें गर्भ धारण करनेसे चातुर्मासमें उत्तम वर्षा होती है और माघके महीनेमें भी वर्षा होती है, जिससे फसलकी उत्पत्ति अच्छी होती है। पूर्वाषाढ़ाका गर्भ देशके निवासियोंके आर्थिक विकासका भी कारण बनता है। यदि इस नक्षत्रके मध्यमें गर्भ धारणका कार्य होता है, तो प्रशासकके लिए हानि होती है तथा राजनैतिक दृष्टिसे उक्त प्रदेशका सम्मान गिर जाता है। उत्तराषाढ़ामें गर्भ धारणकी क्रिया होती है तो भाद्रपदके महीनेमें अल्प वर्षा होती है, अवशेष महीनोंमें खूब वर्षा होती है। कलाकार और शिल्पियोंके लिए उक्त प्रकारका गर्भ अच्छा होता है। देशमें कला-कौशलकी भी वृद्धि होती है। यदि उक्त नक्षत्रमें सन्ध्या समय गर्भ धारणकी क्रिया हो तो व्यापारियोंके लिए अशुभ होता है। वर्षा प्रचुर परिमाणमें होती है। विद्युत्पात अधिक होता है, तथा देशके किसी बड़े नेताकी भी मृत्यु होती है। उत्तराषाढ़ाके प्रथम चरणमें गर्भ धारणकी क्रिया हो तो साधारण वर्षा आश्विनमासमें होती है, द्वितीयचरणमें गर्भ धारणकी क्रिया हो तो भाद्रपदमासमें अल्पवर्षा होती है और यदि तृतीय चरणमें गर्भ धारण की क्रिया हो तो पशुओंको कष्ट होता है। अतिवृष्टिके कारण बाढ़ अधिक आती है तथा समस्त बड़ी नदियाँ जलसे आप्लावित हो जाती हैं। दिग्दाह और भूकम्प होनेका योग भी आश्विन और माघमासमें रहता है। कृषिके लिए उक्त प्रकारकी जलवृष्टि हानिकारक ही होती है। उत्तराषाढ़ाके चतुर्थचरणमें गर्भ धारण होनेपर उत्तम वर्षा होती है और फसलके लिए यह वर्षा अमृतके समान गुणकारी सिद्ध होती है।

पूर्वा भाद्रपदमें गर्भ धारण हो तो चातुर्मासके अलावा पौषमें भी वर्षा होती है और फसलमें अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं, जिससे फसलकी क्षति होती है। यदि इस नक्षत्रके प्रथम चरणमें गर्भ धारणकी क्रिया मार्गशीर्ष कृष्णपक्षमें हो तो गर्भधारणके १९३ दिन बाद उत्तम वर्षा होती है और आषाढ़के महीनेमें आठ दिन वर्षा होती है। प्रथम चरणकी आरम्भवाली तीन घटियोंमें गर्भ धारण हो तो पाँच आढक जल आषाढमें, सात आढक श्रावणमें, छः आढक भाद्रपद और चार आढक आषाढ़ तथा आश्विनमें बरसता है। गर्भ धारणके दिनसे ठीक १९३ वें दिनमें निश्चयतः जल बरस जाता है। यदि द्वितीय चरणमें गर्भ धारणकी क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्षमें हो तो १९२ दिनके पश्चात् या १९२ वें दिनमें ही जलकी वर्षा होती है। आषाढ़ कृष्णपक्षमें उत्तम जल बरसता है, शुक्लपक्षमें केवल दो दिन अच्छी वर्षा और तीन दिन साधारण वर्षा होती है। द्वितीय चरणका गर्भ चार सौ कोशकी दूरीमें जल बरसाता है। यदि इसी नक्षत्रके इसी चरणमें मार्गशीर्ष शुक्लपक्षमें गर्भ धारणकी क्रिया हो तो आषाढ़में प्रायः वर्षाका अभाव रहता है। श्रावण मासमें पानी बरसना आरम्भ होता है, भाद्रपदमें भी अल्प ही वर्षा होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रके उक्त चरणमें गर्भ धारण करनेका फल वर्षमें एक खारी जल बरसता है; किन्तु यह जल इस प्रकार बरसता है, जिससे इसका सदुपयोग पूर्णरूपसे नहीं हो पाता। यदि पूर्वाभाद्रपदके तृतीय चरणमें मेघ मार्गशीर्ष कृष्णपक्षमें गर्भ धारण करें तो १९० वें दिन वर्षा होती है। वर्षाका आरम्भ आषाढ़ कृष्ण सप्तमीसे हो जाता है तथा आषाढ़में ग्यारह दिनों तक वर्षा होती रहती है। श्रावणमें कुल आठ दिन, भाद्रपदमें चौदह दिन और आश्विनमें नौ दिन वर्षा होती है। कार्तिक मासमें कृष्णपक्षकी त्रयोदशीसे शुक्लपक्षकी पञ्चमी तक वर्षा होती है। इस चरणका गर्भ धारण फसलके लिए भी उत्तम होता है तथा सभी प्रकारके धान्योंकी उत्पत्ति उत्तम होती है। अब नक्षत्रके चतुर्थ चरणमें गर्भ धारणकी क्रिया हो तो १९६ वें दिन घोर वर्षा होती है। सुभिक्ष, शान्ति और देशके आर्थिक विकासके लिए उक्त गर्भ धारणका योग उत्तम है। वर्षमें कुल ४ दिन वर्षा होती है। आषाढ़में १६, श्रावणमें १६, भाद्रपदमें १४, आश्विनमें

१६, कार्त्तिकमें १०, मार्गशीर्षमें ३ और माघमें ३ दिन पानी बरसता है। अन्नका भाव सस्ता रहता है। गुड़, चीनी, घी, तैल, तिलहनका भाव कुछ तेज रहता है।

उत्तराभाद्रपदके प्रथम चरणमें मार्गशीर्ष शुक्लपक्षमें गर्भधारण हो तो गर्भधारणके १८८ वें दिन वर्षा होती है। वर्षाका आरम्भ आषाढ़ शुक्ल तृतीयासे होता है। वर्षमें ७३ दिन वर्षा होती है। आषाढ़में ६ दिन, श्रावणमें १८ दिन, भाद्रपदमें १८, आश्विनमें १४, कार्त्तिकमें १०, मार्गशीर्षमें ५ और पौषमें २ दिन वर्षा होती है। द्वितीय चरणमें गर्भधारण होने पर १८५ वें दिन वर्षा आरम्भ होती है तथा वर्षमें कुल ६६ दिन जल बरसता है। तृतीय चरणमें गर्भधारण होने पर १८३ वें दिन ही जलकी वर्षा होने लगती है। यदि इसी नक्षत्रमें आषाढ़ या श्रावणमें मेघ गर्भ धारण करे तो ७ वें दिन ही वर्षा होती है। चतुर्थचरणमें गर्भधारण करने पर १७८ वें दिन वर्षा आरम्भ हो जाती है तथा फसलभी अच्छी होती है। ज्येष्ठमें उक्त नक्षत्रके उक्त चरणमें गर्भधारण हो तो ११ वें दिन वर्षा, आषाढ़में गर्भधारण हो तो ६ वें दिन वर्षा, और श्रावणमें गर्भधारण हो तो तीसरे दिन वर्षा आरम्भ होती है। रोहिणी नक्षत्रमें गर्भधारण होनेपर अच्छी वर्षा होती है तथा वर्षमें कुल ८१ दिन जल बरसता है। आषाढ़में १२ दिन, श्रावणमें १६; भाद्रपदमें १८, आश्विनमें १४, कार्त्तिकमें ५, मार्गशीर्षमें ७, पौषमें ३ और माघमें ६ दिन पानी बरसता है। फसल उत्तम होती है। गेहूँकी उत्पत्ति विशेषरूपसे होती है।

त्रयोदशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यात्रां [1]सुख्यां जयावहाम् ।
[2]निर्ग्रन्थदर्शनं तथ्यं पार्थिवानां जयीषिणाम् ॥१॥

अब निर्ग्रन्थ आचार्योंके द्वारा प्रतिपादित राजाओंको विजय और सुख देनेवाली यात्राका वर्णन करता हूँ ॥१॥

आस्तिकाय विनीताय श्रद्धानाय धीमते ।
कृतज्ञाय सुभक्ताय यात्रा सिद्ध्यति श्रीमते ॥२॥

आस्तिक—लोक, परलोक, धर्म, कर्म, पुण्य, पाप पर आस्था रखनेवाले, विनीत, श्रद्धालु, बुद्धिमान्, कृतज्ञ, भक्त और श्रीमान् की यात्रा सफल होती है ॥२॥

अहं कृतं नृपं क्रूरं नास्तिकं पिशुनं शिशुम् ।
कृतघ्नं चपलं भीरुं श्रीर्जहात्यबुधं शठम् ॥३॥

अहंकारी, क्रूर, नास्तिक, चुगुलखोर, बालक, कृतघ्नी, चपल, डरपोक और शठ नृपकी यात्रा असफल होती है—यात्रामें सफलतारूपी लक्ष्मीकी प्राप्ति उपर्युक्त लक्षणविशिष्ट व्यक्तिको नहीं होती ॥३॥

वृद्धान् साधून् समागम्य दैवज्ञांश्च विपश्चितान् ।
ततो यात्राविधिं कुर्यान् नृपस्तान् पूज्यबुद्धिमान् ॥४॥

वृद्ध, साधु, दैवज्ञ—ज्योतिषी, विद्वान्‌का यथाविधि सम्मान कर बुद्धिमान् राजाको यात्रा करनी चाहिए ॥४॥

राज्ञा बहुश्रुतेनापि प्रष्टव्या ज्ञाननिश्चिताः ।
अहङ्कारं परित्यज्य तेभ्यो गृह्णीत निश्चयम् ॥५॥

अनेक शास्त्रोंके ज्ञाता नृपतिको भी अहंकारका त्याग कर निमित्तज्ञसे यात्राका मुहूर्त्त ग्रहण करना चाहिए—ज्योतिषीसे यात्राका मुहूर्त्त एवं यात्राके शकुनोंका विचार कर ही यात्रा करनी चाहिए ॥५॥

ग्रहनक्षत्रतिथयो [3]मुहूर्त्तं करणं स्वराः ।
लक्षणं व्यञ्जनोत्पातं निमित्तं साधुमङ्गलम् ॥६॥

ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यञ्जन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तोंका विचार यात्रा कालमें करना आवश्यक है ॥६॥

१. सम्प्रमुखावहाम् मु० । २. निर्ग्रन्थदर्शितां तथ्यां पार्थिवानां जिगीषिणाम् । ३. मूवन्त मु० । ४. मुहूर्ता. मु० । ५. उत्पाता, मु० ।

[1]यस्माद्देवासुरे युद्धे निमित्तं दैवतैरपि ।
कृतं प्रमाणं तस्मात् विविधं दैवतं मतम् ।।७।।

देवासुर संग्राममें देवताओंने भी निमित्तोंका विचार किया था, अतः सर्वदा राजाओंको निश्चय पूर्वक निमित्तोंकी पूजा करनी चाहिए—निमित्तोंके शुभाशुभके अनुसार यात्रा करनी चाहिए ।।७।।

हस्त्यश्वरथपादातं बलं खलु चतुर्विधम् ।
निमित्ते तु तथा ज्ञेयं [2]यत्र तत्र शुभाऽशुभम् ।।८।।

हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल इस प्रकार चार तरहकी चतुरंग सेना होती है। यात्राकालीन निमित्तोंके अनुसार उक्त प्रकारकी सेनाका शुभाशुभत्व अवगत करना चाहिए ।।८।।

[3]शनैश्चरगता एव हीयन्ते हस्तिनो [4]यदा ।
अहोरात्रान्यमाक्रोद्युः तत्प्रधानवधस्मृतः[5] ।।९।।

यदि कोई राजा ससैन्य शनिश्चरको यात्रा करे तो हाथियोंका विनाश होता है। अहर्निश यमराजका प्रकोप रहता है तथा प्रधान सेनानायकका वध होता है ।।९।।

यावच्छायाकृतिरावैर्हीयन्ते वाजिनो यदा ।
विमनस्का विमतयः [6]तत्प्रधानवधस्मृतः ।।१०।।

यदि घोड़ोंकी छाया, आकृति और हंसनेकी ध्वनि—आवाज हीयमान हो तथा वे अन्य मनस्क और अस्त-व्यस्त चलते हों तो सेनापतिका वध होता है ।।१०।।

[7]मेघशंखस्वराभास्तु हेमरत्नविभूषिताः ।
छायाप्रहीणाः कुर्वन्ति तत्प्रधानवधस्तथा[8] ।।११।।

यदि स्वर्ण आभूषणोंसे युक्त घोड़े मेघके समान आकृति और शंखध्वनिके समान शब्द करते हुए छायाहीन दिखलाई पड़ें तो प्रधान सेनापतिके वधकी सूचना देते हैं ।।११।।

शौर्यशस्त्रबलोपेता विख्याताश्च पदातयः ।
परस्परेण भिद्यन्ते तत्प्रधानवधस्तदा ।।१२।।

यदि यात्रा कालमें प्रसिद्ध पैदल सेना शौर्य, शस्त्र और शक्तिसे सम्पन्न होकर आपसमें ही झगड़ जाय तो प्रधान सेनापतिके वधकी सूचना अवगत करनी चाहिए ।।१२।।

निमित्ते लक्षयेदेतां चतुरङ्गां तु वाहिनीम् ।
[9]नैमित्तः स्थपतिर्वैद्यः पुरोधाश्च ततो विदुः ।।१३।।

चतुरंग सेनाके गमन समयके निमित्तोंका अवलोकन करना चाहिए। नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित इन चारोंके लक्षणोंको निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ।।१३।।

---

१. पूर्वं च पूजिता ह्येते निमित्ता भूभृतैरपि । तस्माद्धि पूजनीयाश्च निमित्ताः सततं नृपैः ।।७।। २. तत्र मु० । ३. गतिस्वरभेदोपेता मु० । ४ यथा मु० । ५. तथा मु० । ६. प्रधानस्य वधस्तथा मु० । ७. मेरुशङ्खस्वभावाश्च मु० । ८. तदा । ९. एवमेव जय कुर्युः विपरीता न संशय भा० ।

चतुर्विधोऽयं विष्कम्भस्तस्य बिम्बाः प्रकीर्तिताः ।
स्निग्धो जीमूतसङ्काशः [1]सुस्वप्नः सासविच्छुभः ॥१४॥

नैमित्त, राजा, वैद्य और पुरोहित यह चार प्रकारका विष्कम्भ है, इसके बिम्ब—पर्याय स्निग्ध, जीमूतसंकाश—मेघोंका सान्निध्य, सुस्वप्न और धनुपञ्ज हैं ।।१४।।

[2]नैमित्तः साधुसम्पन्नो राज्ञः कार्यहिताय सः ।
सङ्घाता पार्थिवेनोक्ताः समानस्थाप्यकोविदः ॥१५॥
स्कन्धावारनिवेशेषु कुशलः [3]स्थापको मतः ।
कायशल्यशलाकासु विषोन्मादज्वरेषु च ॥१६॥
चिकित्सानिपुणः कार्यः राज्ञा वैद्यस्तु यात्रिकः ।
ज्ञानवानल्प[4]वाग्धीमान् [5]कांक्षामुक्तो [6]यशःप्रियः ॥१७॥
मानोन्मानप्रभायुक्तो पुरोधा गुणवाञ्छितः ।
स्निग्धो गम्भीरघोषश्च [7]सुमनाश्चाशुमान् बुधः ॥१८॥
छायालक्षणपुष्टश्च सुवर्णः पुष्टए सुवाक् ।
सबलः पुरुषो [8]विद्वान् क्रोधश्च यतिः शुचिः ॥१९॥
हिंस्रो त्रिवर्णः पिङ्गो वा निरोमा [9]छिद्रवर्जितः ।
रक्तश्मश्रुः पिङ्गनेत्रो गौरस्ताम्रः पुरोहितः ॥२०॥

शुभ लक्षणोंसे युक्त, राजाके हितकार्यमें संलग्न, राजाके द्वारा प्रतिपादित योजनाओंको घटित करनेवाला, समताभाव स्थापित करनेवाला और निमित्तोंका ज्ञाता नैमित्तिक होता है।

छावनी—सैन्य शिविर बनानेमें निपुण, युद्ध संचालक और समयज्ञ स्थपति राजा होता है।

शरीरशास्त्र, निदानशास्त्र, शल्यकर्म—आपरेशन, सूचीकर्म—इञ्जेक्शन, मूर्च्छा, ज्वर आदि कर्मोंमें प्रवीण और चिकित्सा कार्यमें दक्ष वैद्यको ही राजाको यात्रा कालमें वैद्य निर्वाचित करना चाहिए।

ज्ञानी, अल्पभाषण करनेवाला—मितभाषी, बुद्धिमान्, सांसारिक आकांक्षाओंसे रहित, यशकी कामना रखनेवाला, गुणवान्, मानोन्मानप्रमायुक्त—समान कदवाला, स्निग्ध और गंभीर स्वर—कोमल और स्निग्ध स्वरवाला, श्रेष्ठ चित्तवाला, बुद्धिमान्, पुष्ट शरीरवाला, सुन्दर वर्णवाला, सुन्दर आकृतिवाला, सुन्दर वचनवाला, बलवान्, विद्वान्, अक्रोधी—शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, पवित्र, त्रिवर्ण—द्विज, हिंसक, पिङ्गवर्ण, लोमरहित, छिद्र—चेचकके दाग रहित, लाल मूँछ, पिंगल नेत्र, गौरवर्ण, ताम्र-कांचनदेह पुरोहित होता है १५-२०॥

१. सुस्वनः मु० । २. यह श्लोक हस्तलिखित प्रतिमें नहीं है । ३. स्थपतिः स्मृतः मु० । ४. वाग्मी च मु० । ५. शान्तो मु० । ६. मम मु० । ७. मानात्रसममायुक्तः मु० । ८. विद्वान् क्रोध-नरवपल्ः शिशुः मु० । ९. निवरोपगत् मु० ।

नित्योद्विग्नो [1]नृपहिते युक्तः प्राज्ञः सदाहितः
एवमेतान् यथोद्दिष्टान् सत्कर्मेषु च योजयेत् ॥२१॥

नित्य ही चिन्तित, राजाके हितकार्यमें संलग्न, बुद्धिमान, सर्वदा हित चाहनेवाला पुरोहित यह नैमित्त होता है। राजाको पूर्वोक्त गुणवाले नैमित्त, वैद्य और पुरोहितको ही कार्यमें लगाना चाहिए ॥२१॥

इतरेतरयोगेन न सिद्ध्यन्ति कदाचन।
[2]अशान्तो शान्तकारो यो शान्तिपुष्टिशरीरिणाम् ॥२२॥

इतरेतर योग—उपर्युक्त लक्षणोंसे रहित व्यक्तियोंको कार्यमें लगा देने पर संग्राम सम्बन्धी यात्रा सफल नहीं होती। ऐसे ही व्यक्तिको नियुक्त करना चाहिए, जो अशान्तको शान्त कर सके और प्रजामें शान्ति और पुष्टि—समृद्धि स्थापित कर सके ॥२२॥

यद्देवाऽसुरयुद्धे च निमित्तं दैवतैरपि।
कृतप्रमाणं च [3]तस्माद्धि द्विविधं दैवतं मतम् ॥२३॥

देवासुर संग्राममें देवताओंने निमित्तोंको देखा था और उन्हें प्रमाणभूत स्वीकार किया था। अतएव निमित्त दो प्रकारके होते हैं—शुभ और अशुभ ॥२३॥

ज्ञानविज्ञानयुक्तोऽपि लक्षणैर्यैर्विवर्जितः।
[5]न कार्यसाधको ज्ञेयो यथा चक्रो रथस्तथा ॥२४॥

ज्ञान-विज्ञानसे सहित होने पर भी यदि नैमित्त, पुरोहितादि उपर्युक्त लक्षणोंसे रहित हों तो वे कार्यसाधक नहीं हो सकते हैं। जिस प्रकार वक्ररथ—टेढ़ा रथ अच्छी तरहसे गमन करनेमें असमर्थ है, उसी प्रकार उपर्युक्त लक्षणोंसे रहित व्यक्तियोंसे युक्त होने पर राजा संग्राम कार्यमें असमर्थ रहता है ॥२४॥

यस्तु लक्षणसम्पन्नो ज्ञानेन च समायुतः।
स [6]कार्यसाधनो ज्ञेयो यथा सर्वाङ्गिको रथः ॥२५॥

जो नृप उपर्युक्त लक्षणोंसे युक्त, ज्ञान-विज्ञानसे सहित व्यक्तियोंको नियुक्त करता है, उसके कार्य सफल हो जाते हैं। जिस प्रकार सर्वाङ्गीण रथ द्वारा मार्ग तय करनेसे सुविधा होती है, उसी प्रकार उक्त लक्षणोंसे सहित व्यक्तियोंके नियुक्त करने पर कार्य साधनेमें भी सफलता प्राप्त होती है ॥२५॥

अल्पेनापि तु ज्ञानेन कर्मज्ञो लक्षणान्वितः।
तद् विन्द्यात् सर्वमतिमान् राजकर्मसु [7]सिद्धये ॥२६॥

राज कार्योंकी सिद्धिके लिए कार्य कुशल, उपर्युक्त लक्षणयुक्त बुद्धिमान् अल्पज्ञानी व्यक्तिको ही नियुक्त करना चाहिए ॥२६॥

---

१. नृपहीनो युक्तः मु०। २. अशान्तशान्तकरणः शान्तपुण्याभिचारिणाम् मु०। ३. यस्मात् यद्वृत्त दैवतैरपि मु०। ४. मुक्तोऽपि मु०। ५. तं साधुकार्यगो मु०। ६. ०साधुकार्यगो मु०। ७. सिद्ध्यति मु०।

अपि लक्षणवान् मुख्यः कश्चिदर्थं प्रसाधयेत् ।
[1]न च लक्षणहीनस्तु [2]विद्वानपि न साधयेत् ॥२७॥

उपर्युक्त लक्षणवान् व्यक्ति अल्पज्ञानी होने पर भी कार्यकी सिद्धि कर सकता है। किन्तु लक्षण रहित विद्वान् व्यक्ति भी कार्यको सिद्ध नहीं कर सकता है ॥२७॥

यथान्धः पथिको भ्रष्टः पथि क्लिश्यत्यनायकः ।
अनैमित्तस्तथा राजा नष्टे श्रेयसि क्लिश्यति ॥२८॥

जिस प्रकार अन्धा रास्तागीर ले जानेवालेके न रहनेसे रास्तासे च्युत हो जानेसे कष्ट उठाता है उसी प्रकार नैमित्तिकके बिना राजा भी कल्याणके नष्ट होनेसे कष्ट उठाता है ॥२८॥

यथा तमसि चक्षुष्मान्न रूपं साधु पश्यति ।
अनैमित्तस्तथा राजा न श्रेयः साधु यास्यति ॥२९॥

जिस प्रकार नेत्रवाला व्यक्ति भी अन्धकारमें अच्छी तरह रूपको नहीं देख सकता है, उसी प्रकार नैमित्तिकसे हीन राजा भी अच्छी तरह कल्याणको नहीं प्राप्त कर सकता है ॥२९॥

यथा वक्रो रथो गन्ता चित्रं [3]यति [4]यथा च्युतम् ।
अनैमित्तस्तथा राजा न [5]साधुफलमीहते ॥३०॥

जिस प्रकार वक्र—टेढ़े-मेढ़े रथ द्वारा मार्ग चलनेवाला व्यक्ति मार्गसे च्युत हो जाता है और अभीष्ट स्थानपर नहीं पहुँच पाता; उसी प्रकार नैमित्तिकसे रहित राजा भी कल्याणमार्ग नहीं प्राप्त करते हैं ॥३०॥

चतुरङ्गान्वितो युद्धं कुलालो वर्तिनं यथा ।
अवनद्धं न गृह्णाति वर्जितं सूत्रतन्तुना ॥३१॥

जिस प्रकार कुम्हार बर्तन बनाते समय मृत्तिका, चाक, दण्ड आदि उपकरणोंके रहनेपर भी, बर्तन निकालनेवाले धागेके बिना बर्तन बनानेका कार्य सम्यक् प्रकार नहीं कर सकता है, उसी प्रकार चतुरंग सेनासे सहित होनेपर भी राजा नैमित्तिकके बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है ॥३१॥

चतुरङ्गबलोपेतस्तथा राजा न शक्नुयात् ।
अविनष्टफलं भोक्तुं निमित्तेन विवर्जितम् ॥३२॥

चतुरंग सेनासे युक्त होनेपर भी राजा नैमित्तिक से रहित होनेपर युद्धके समग्रफल प्राप्त नहीं कर सकता है ॥३२॥

तस्माद्राजा निमित्तज्ञं अष्टाङ्गकुशलो वरम् ।
विभृयात् प्रथमं प्रीत्याऽभ्यर्थयेत् सर्वसिद्धये ॥३३॥

अतएव राजा सभी प्रकारकी सिद्धि प्राप्त करनेके लिए अष्टाङ्ग निमित्तके ज्ञाता, चतुर, श्रेष्ठ नैमित्तिकको प्रार्थना पूर्वक अपने यहाँ नियुक्त करें ॥३३॥

१. ज्ञानेन यन्हीनस्तु मु० । २. विद्वानानि न मु० । ३. नाव मु० । ४. च्यवनम् मु० । ५. सेना मु० ।

आरोग्यं जीवितं लाभं सुखं मित्राणि सम्पदः ।
धर्मार्थकाममोक्षाय तदा यात्रा नृपस्य हि ॥३४॥

आरोग्य, जीवन, लाभ, सुख, सम्पत्ति, मित्र-मिलाप, धर्म-अर्थ काम और मोक्षकी प्राप्ति जिस समय होनेका योग हो, उसी समय राजाको यात्रा करनी चाहिए ॥३४॥

शय्याऽऽसनं यानयुग्मं हस्त्यश्वं स्त्री-नरं स्थितम् ।
वस्त्रान्तस्त्वप्नयोधांश्च यथास्थानं स योदयति ॥३५॥

शुभ यात्रासे ही शय्या, आसन, सवारी, हाथी, घोड़ा, स्त्री, पुरुष, वस्त्र, योद्धा आदि यथासमय प्राप्त होते हैं। अर्थात् कुसमयमें यात्रा करनेसे अच्छी वस्तुएँ भी नष्ट हो जाती हैं। अतः समयका प्रभाव सभी वस्तुओंपर पड़ता है ॥३५॥

भृत्यामात्यास्त्रियः पूज्या राज्ञा स्थाप्याः सुलक्षणाः ।
[1]एभिस्तु लक्षणै राजा लक्षणोऽप्यवसीदति ॥३६॥

भृत्य, अमात्य—प्रधानमन्त्री और स्त्रियोंका यथोचित सम्मान करके इन्हें राज्य चलानेके लिए राजधानीमें स्थापित करना चाहिए। इन उपर्युक्त लक्षणोंसे युक्त राजा ही लक्ष्यको प्राप्त करता है ॥३६॥

तस्माद् देशे च काले च सर्वज्ञानवतां वरम् ।
सुमनाः पूजयेद् राजा नैमित्तं दिव्यचक्षुषम् ॥३७॥

अतएव देश और कालमें सभी प्रकारके ज्ञानियोंमें श्रेष्ठ दिव्य चक्षुधारी नैमित्तिकका सम्मान राजाको प्रसन्नचित्तसे करना चाहिए ॥३७॥

न वेदा नापि चाङ्गानि न विद्याश्च पृथक् पृथक् ।
प्रसाधयन्ति तानर्थान्निमित्तं यत् सुभाषितम् ॥३८॥

निमित्तोंके द्वारा जितने प्रकारके और जैसे कार्य सफल हो सकते हैं, उस प्रकारके उन कार्योंको न वेदसे सिद्ध किया जा सकता है, न वेदाङ्गसे और न अन्य किसी भी प्रकारकी विद्या से ॥३८॥

अतीतं वर्तमानं च भविष्यद्यच्च किञ्चन ।
सर्वं विज्ञायते येन तज्ज्ञानं नेतरं मतम् ॥३९॥

अतीत—भूत, वर्तमान और भविष्यत्का परिज्ञान निमित्तोंके द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य किसी शास्त्र या विद्याके द्वारा नहीं ॥३९॥

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहुः सौख्यं धर्मविदो जनाः ।
तस्मात् प्रीतिः सखा ज्ञेया सर्वस्य जगतः सदा ॥४०॥

धर्मके जानकार व्यक्तियोंने प्रेमका फल स्वर्ग और सुख बतलाया है। अतएव समस्त संसारका प्रेमको मित्र जानना चाहिए ॥४०॥

1. एषां कुलक्षणैः मु० ।

स्वर्गेण तादृशा प्रीतिर्विपर्ययैर्वापि मानुषैः ।
[1]यदेद्वः स्यान्निमित्तेन सतां प्रीतिस्तु जायते ॥४१॥

मनुष्योंको स्वर्गसे जैसी प्रीति होती है अथवा विषयोंमें—भोगोंमें जैसी प्रीति होती है, उस प्रकार निमित्तोंसे सज्जनोंकी प्रीति होती है अर्थात् शुभाशुभको ज्ञात करनेके लिए निमित्तों की परम आवश्यकता है, अतः निमित्तोंसे प्रेम करना प्रत्येक व्यक्तिका कर्त्तव्य है ॥४१॥

तस्मात् स्वर्गास्पदं पुण्यं निमित्तं जिनभाषितम् ।
पावनं परमं[2] श्रीमान् कामदं च[3] [4]प्रमोदजम् ॥४२॥

अतएव जिनेन्द्र भगवान्के द्वारा निरूपित निमित्त स्वर्गके तुल्य पुण्यास्पद, परम पवित्र, इच्छाओंको पूर्ण करनेवाले और प्रमोदको देनेवाले हैं ॥४२॥

रागद्वेषौ च मोहश्च वर्जयित्वा निमित्तवित् ।
देवेन्द्रमपि निर्भीतो यथाशास्त्रं समादिशेत् ॥४३॥

निमित्तज्ञको राग, द्वेष और मोहका त्याग कर निर्भय होकर शास्त्रके अनुसार इन्द्रको भी यथार्थ बात कह देनी चाहिए ॥४३॥

सर्वाण्यपि निमित्तानि [5]अनिमित्तानि सर्वशः ।
[6]नैमित्ते पृच्छतो याति निमित्तानि भवन्ति च[7] ॥४४॥

सभी निमित्त और सभी अनिमित्त नैमित्तिकसे पूछने पर निमित्त हो जाते हैं। अर्थात् नैमित्तिक व्यक्ति अनिमित्तिकोंको निमित्त मान कर फलाफलका निर्देश करता है ॥४४॥

यथान्तरिक्षात् पतितं यथा भूमौ च तिष्ठति ।
तथाङ्गजनिता चेष्टं निमित्तं फलमात्मकम् ॥४५॥

निमित्त तीन प्रकारके हैं—आकाशसे पतित, भूमि पर दिखाई देनेवाले और शरीरसे उत्पन्न चेष्टाएँ ॥४५॥

[8]पतेन्निम्ने यथाप्यम्भो सेतुबन्धे च तिष्ठति ।
[9]चेतो निम्ने तथा[10] तत्त्वं [11]तद्विद्यादफलात्मकम् ॥४६॥

जिस प्रकार जल नीचेकी ओर जाता है, पर पुल बाँध देने पर रुक जाता है, उसी प्रकार मानवका मन भी निम्न बातोंकी ओर जाता है, किन्तु इन बातोंको अफलात्मक—फल रहित जानना चाहिए ॥४६॥

[12]बहिरङ्गाश्च जायन्ते अन्तरङ्गाच्च चिन्तितम् ।
तज्ज्ञः शुभाऽशुभं ब्रूयान्निमित्तज्ञानकोविदः ॥४७॥

अन्तरङ्गमें विचार करनेपर ही बहिरङ्गमें विकृति आती है। अतः निमित्तज्ञानमें प्रवीण व्यक्तिको शुभाशुभ निमित्तका वर्णन करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि बाह्य प्रकृतिमें विकार अन्तरङ्ग कारणोंसे ही होता है, अतः बाह्य निमित्तोंमें क्रिया वर्णन सत्य सिद्ध होता है ॥४७॥

१. यदि स्पष्टा निमित्तेन मु० । २. प्रवरं मु० । ३. वा मु० । ४. प्रमादतः मु० । ५. निमित्तान्यपि मु० । ६. निमित्ते मु० । ७. तु मु० । ८. सर्वथाम्भो यथा निम्ने सेतुबन्धे च तिष्ठति मु० । ९. चित्ते मु० । १०. तद्वत् मु० । ११. विन्द्यात् सर्वफलात्मकम् मु० । १२. बहिरङ्गाद्विविधमन्तरङ्गाश्च चिन्तितम् मु० ।

सुनिमित्तेन संयुक्तस्तत्परः साधुवृत्तयः ।
अदीनमनसङ्कल्पो भव्यादिं लक्षयेद् बुधः[1] ॥४८॥

सुनिमित्तोंका जानकर, साधु आचरणवाला व्यक्ति, मनको दृढ़ करता हुआ, शुभाशुभ फलका निरूपण करे ॥४८॥

कुञ्जरस्तु यदा नर्देत्[2]ज्वलमाने हुताशने
स्निग्धदेशे [3]ससम्भ्रान्तो राज्ञां विजयमावहेत् ॥४९॥

स्निग्ध देशमें एकाएक अग्नि प्रज्वलित हो और हाथी गर्जना करें तो राजाकी विजय होती है ॥४९॥

एवं हयवृषाश्चाऽपि सिंहव्याघ्राश्च सुस्वराः ।
नर्दयन्ति तु [4]सैन्यानि तदा राजा प्रमर्दति ॥५०॥

इसी प्रकार घोड़ा, बैल, सिंह, व्याघ्र स्वरपूर्वक सुन्दर गर्जना करें तो राजा सेनाको कुचलता है ॥५०॥

स्निग्धोऽल्पघोषो धूम्रोऽथ गौरवर्णो महानृजुः ।
प्रदक्षिणोऽप्यवच्छिन्नः सेनानी विजयावहः ॥५१॥

यदि गमन कालमें स्निग्धा, मन्दध्वनि, धूम्रयुक्ता, गौरवर्णा, सीधी बड़ी शिखावाली अग्नि दाहिनी ओरसे चारों ओरको प्रदक्षिणा करती हुई भी अविच्छिन्ना दिखलाई पड़े तो सेनानीकी विजय होती है ॥५१॥

कृष्णो वा विकृतो रूक्षो वामावर्तो हुताशनः ।
हीनार्चिधूमबहलः स प्रस्थाने भयावहः ॥५२॥

यदि गमन समयमें कृष्ण शिखावाली, रूक्ष विकृति-विकारवाली, अधिक धूमवाली अग्नि सेनाकी बाईं ओर दिखलाई पड़े तो भयप्रद होती है ॥५२॥

सेनाग्रे हूयमानस्य यदि पीता शिखा भवेत् ।
श्यामाऽथवा यदा रक्ता पराजयति सा चमूः ॥५३॥

यदि गमन कालमें सेनाके आगे पीतवर्ण की अग्निकी ज्वाला धू धू करती हुई दिखलाई पड़े, रक्तवर्णकी अथवा कृष्णवर्ण की शिखा उपर्युक्त प्रकारकी ही दिखलाई पड़े तो सेनाकी पराजय होती है ॥५३॥

यदि होतुः पथे शीघ्रं [5]ज्वलत्स्फुलिङ्गमग्रतः ।
पार्श्वतः पृष्ठतो वाऽपि तदेवं फलमादिशेत् ॥५४॥

यदि गमन समय मार्गमें होता—हवन करनेवालेके आगे अग्निकण शीघ्रतासे उड़ते हुए दिखलाई पड़े, अथवा पीछे या बगलकी ओर अग्निकण दिखलाई पड़े तो भी सेनाकी पराजय होती है ॥५४

१. विधि मु० । २. नेर्दंप्यमाने मु० । ३. गुष च निभ्रान्त मु० । ४. सैन्यानि मु० । ५. जुह्वतः भ्रगमग्रतः मु० ।

यदि धूमाभिभूता स्याद् वातो भस्म निपातयेत् ।
अहुतः कम्पते वाऽऽज्यं न सा यात्रा विधीयते ॥५५॥

यदि धूमसे युक्त अग्नि हो और वायुके द्वारा इसकी भस्म—राख इधर-उधर उड़ रही हो अथवा अग्निमें आहुतिरूप दिया गया घी कम्पित हो रहा हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥५५॥

राजा परिजनो वाऽपि कुप्यते मन्त्रशासने ।
होतुराज्यविलोपे च तस्यैव वधमादिशेत् ॥५६॥

राजा या परिजन मन्त्रीके अनुशासनसे क्रोधित हों और हवन करनेवाले होताका घी नष्ट हो जाय तो उसकी वधकी सूचना समझनी चाहिए ॥५६॥

यद्याज्यभाजने केशा भस्मास्थीनि पुनः पुनः ।
सेनाग्रे हूयमानस्य मरणं तत्र निर्दिशेत् ॥५७॥

यदि सेनाके समक्ष हवनके घृतपात्रमें केश, भस्म, हड्डी पुनः पुनः गिरती हों तो सेनाके मरणका निर्देश करना चाहिए ॥५७॥

आपो होतुः पतेद्धस्तात् पूर्णपात्राणि वा भुवि ।
कालेन स्याद्वधस्तत्र सेनाया नात्र संशयः ॥५८॥

यदि होताके हाथसे जल गिर जाय अथवा पूर्ण पात्र पृथ्वी पर गिर जाय तो कुछ समयमें सेनाका वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥५८॥

यदा होता तु सेनायाः प्रस्थाने स्खलते मुहुः ।
बाधयेद् ब्राह्मणान् भूमौ तदा स्ववधमादिशेत् ॥५९॥

जब सेनाके प्रस्थानमें होता बार-बार स्खलित हो और पृथ्वी पर ब्राह्मणोंको बाधा पहुँचाता हो तो अपने वधका निर्देश करता है ॥५९॥

धूमः [1]कुणिपगन्धो वा पीतको वा यदा भवेत् ।
सेनाग्रे हूयमानस्य तदा सेना पराजयः ॥६०॥

यदि आमन्त्रित सेनाके आगे हवनकी अग्निका धूम मुर्दा जैसी गन्धवाला हो अथवा धूम पीले वर्णका हो तो सेनाके पराजयकी सूचना समझनी चाहिए ॥६०॥

मूषको नकुलस्थानो वराहो [2]गच्छतोऽन्तरा ।
वामावर्तः पतङ्गो वा राज्ञो व्यसनमादिशेत् ॥६१॥

न्यौला, मूषक और शूकर यदि पीछेकी ओर आते हुए दिखलाई पड़ें अथवा बाईं ओर पतङ्ग—चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो राजाकी विपत्तिकी सूचना समझनी चाहिए ॥६१॥

मक्षिका वा पतङ्गो वा यद्वाऽप्यन्यः सरीसृपः ।
सेनाग्रे निपतेत् किञ्चिद्धूयमाने वधं वदेत् ॥६२॥

मधुमक्खी, पतङ्ग, सरीसृप—रेंग कर चलनेवाला जन्तु, सर्पादि आमन्त्रित सेनाके आगे गिरे तो वध होनेकी सूचना समझनी चाहिए ॥६२॥

१. कुणिम मु० । २. गच्छतेनराम् मु० ।

शुष्कं प्रदह्यते यदा वृष्टिश्चाप्यपवर्षति ।
ज्वाला धूमाभिभूता तु ततः सैन्यो निवर्तते ॥६३॥

शुष्क—सूखे काष्ठादि जलने लगें, कुछ-कुछ वर्षा भी हो और अग्निकी लौ धूमयुक्त हो तो सेना लौट आती है ॥६३॥

[1]जुह्वतो दक्षिणं देशं यदि गच्छन्ति चार्चिषः ।
राज्ञो विजयमाचष्टे वामतस्तु पराजयम् ॥६४॥

यदि राजाके गमनसमयमें दक्षिण ओर हवन करती हुई अग्नि दिखलाई पड़े तो विजय और बाईं ओर उक्त प्रकारकी अग्नि दिखलाई पड़े तो पराजय होती है ॥६४॥

जुहत्यनुपसर्पणस्थानं तु यत् पुरोहितः ।
जित्वा शत्रून् रणे सर्वान् राजा तुष्टो निवर्तते ॥६५॥

यदि पुरोहित ढालू स्थान पर यज्ञ करता हो अथवा जिधर राजा गमन कर रहा हो, उधर पुरोहित यज्ञ करता हो तो समस्त शत्रुओंको जीत कर प्रसन्न होता हुआ राजा लौटता है ॥६५॥

यस्य वा सम्प्रयातस्य [2]सम्मुखो पृष्ठतोऽपि वा ।
पतत्युल्का सनिर्घाता वधं तस्य निवेदयेत् ॥६६॥

प्रयाण करनेवाले जिस राजाके सम्मुख या पीछे घर्षण करती हुई उल्का गिरे तो उस राजाका वध होता है ॥६६॥

सेनां यान्ति प्रयातां यां क्रव्यादाश्च जुगुप्सिताः ।
अभीक्ष्णं विस्वरा घोरा सा सेना वध्यते परैः ॥६७॥

घृणित मांसभक्षी जन्तु—शेर, व्याघ्र, गृद्ध आदि जन्तु बार-बार विकृत और भयङ्कर शब्द करते हुए प्रयाण करनेवाली सेनाका अनुगमन करें तो सेना शत्रुओं द्वारा वधको प्राप्त होती है ॥६७॥

प्रयाणे निपतेदुल्का प्रतिलोमा यदा चमूः ।
निवर्तयति मासेन तत्र यात्रा न सिध्यति ॥६८॥

जब सेनाके प्रयाणके समय विपरीत दिशामें उल्कापात होता है, तब सेना एक महीनेमें लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥६८॥

छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत तदा सम्प्रस्थिता चमूः ।
निवर्तयेत सा शीघ्रं न सा सिद्ध्यति पृतगिन् ॥६९॥

यदि सेनाके प्रयाणके समय उल्का छिन्न भिन्न दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही सेना लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥६९॥

१ गुरु दक्षिण देशं यदि गच्छन्ति वा चिरं मु० । २. सम्मुख मु० । ३. सम्मुखे मु० । ४. निवर्तयेत मु० ।

यस्याः प्रयाणे सेनायाः सनिर्घाता मही चलेत् ।
न तया सम्प्रयातव्यं साऽपि वध्येत सर्वशः ॥७०॥

जिस सेनाके प्रयाणके समय घर्षण करती हुई पृथ्वी चले—भूकम्प हो तो उस सेनाके साथ नहीं जाना चाहिए; क्योंकि उसका भी वध होता है ॥७०॥

अग्रतस्तु सपाषाणं तोयं वर्षति वासवः ।
सङ्ग्रामं घोरमत्यन्तं जयं राज्ञश्च शंसति ॥७१॥

यदि सेनाके आगे मेघ ओलों सहित वर्षा कर रहा हो तो भयंकर युद्ध होता है और राजाके जयलाभमें सन्देह समझना चाहिए ॥७१॥

प्रतिलोमो यदा वायुः सपाषाणो रजस्करः ।
निवर्तयति प्रस्थाने परस्परजयावहः ॥७२॥

कंकड़ पत्थर और धूलिको लिये हुए यदि विपरीत दिशाका वायु चलता हो तो प्रस्थान करनेवाले राजाको लौटना पड़ता है तथा परस्पर विजयलाभ होता है—दोनोंको—पक्ष-विपक्षियों-को जयलाभ होता है ॥७२॥

मारुतो दक्षिणो वापि यदा हन्ति परां चमूम् ।
[1]प्रस्थितानां प्रमुखतः विन्द्यात् तत्र पराजयम् ॥७३॥

यदि सेनाके प्रयाणके समय दक्षिणी वायु चल रहा हो और यह सेनाका घात कर रहा हो तो प्रस्थान करनेवाले राजाकी पराजय होती है ॥७३॥

[2]यदा तु तत्परां सेनां समागम्य महाघनाः ।
तस्य विजयमाख्याति भद्रबाहुवचो यथा ॥७४॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनाके चारों ओर बादल एकत्र हो जायँ तो भद्रबाहु स्वामीके वचनानुसार उस सेनाकी विजय होती है ॥७४॥

हीनाङ्गा जटिला बद्धा व्याधिताः [3]पापचेतसः ।
षण्ढाः पापस्वरा ये च प्रयाणे ते तु निन्दिताः ॥७५॥

प्रस्थानकालमें ही हीनाङ्ग व्यक्ति, बेड़ी आदिमें बद्ध व्यक्ति, रोगी, पापबुद्धि, नपुंसक, पापस्वर—विकृतस्वर-तोतलीबोली बोलनेवाला, हकलानेवाला आदि व्यक्ति यदि मिल जायँ तो यात्राको निन्दित समझना चहिए ॥७५॥

नग्नं प्रव्रजितं [4]दृष्ट्वा मङ्गलं मङ्गलार्थिना ।
कुर्यादमङ्गलं यस्तु तस्य सोऽपि न मङ्गलम् ॥७६॥

नग्न, दीक्षित मुनि आदि साधुओंका दर्शन मंगलार्थीके लिए मंगलमय होता है। जिसको साधु-मुनिका दर्शन अमङ्गलरूप होता है, उसके लिए वह भी मंगलरूप नहीं है ॥७६॥

---

१. प्रस्थितो प्रमुग्वं । २. यदा मूर्यान् परं सेनां समागत्य महाजन' मु० । ३. पापपांशने मु० । ४. दृष्ट्वा मु० ।

पीडितोऽपचयं कुर्यादाक्रुष्टो वधबन्धनम् ।
ताडितो मरणं दद्याद् त्रासितो रुदितं तथा ॥७७॥

यदि प्रयाणकालमे पीड़ित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो हानि, चीखता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-बन्धन, ताड़ित दिखलाई पड़े तो मरण और रुदित दिखलाई पड़े तो त्रासित होना पड़ता है ॥७७॥

पूजितः [1]सानुरागेण लाभं राज्ञः समादिशेत् ।
तस्मात्तु मङ्गलं कुर्यात् प्रशस्तं साधुदर्शनम् ॥७८॥

अनुराग पूर्वक पूजित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो राजाको लाभ होता है, अतएव आनन्द मंगल करना चाहिए। यात्राकालमें साधुका दर्शन शुभ होता है ॥७८॥

देवतं तु यदा बाह्यं राजा सत्कृत्य स्वं पुरम् ।
प्रवेशयति तद्राजा बाह्यस्तु लभते पुरम् ॥७९॥

जब राजा बाह्य देवताके मन्दिरकी अर्चना कर अपने नगरमें प्रवेश करता है तो बाह्य से ही नगरको प्राप्त कर लेता है ॥७९॥

वैजयन्त्यो विवर्णास्तु[2] [3]बाह्ये राज्ञो यदाग्रतः ।
पराजयं समाख्याति तस्मात् तां परिवर्जयेत् ॥८०॥

यदि राजाके आगे बहिर्भागकी पताका विकृतरंग—बदरंगी दिखलाई पड़े तो राजाकी पराजय होती है, अतः उसका त्याग कर देना चाहिए ॥८०॥

सर्वार्थेषु प्रमत्तश्च यो भवेत् पृथिवीपतिः ।
हितं न शृण्वतश्चापि तस्य विन्द्यात् पराजयम् ॥८१॥

जो राजा समस्त कार्योंमें प्रमाद करता है और हितकारी वचनोंको नहीं सुनता है, उसकी पराजय होती है ॥८१॥

अभिद्रवन्ति यां सेनां विस्वरं मृगपक्षिणः ।
श्वमानुषशृगाला वा सा सेना वध्यते परैः ॥८२॥

जिस सेनापर विकृत स्वरमें आवाज करते हुए पशु पक्षी आक्रमण करें अथवा कुत्ता, मनुष्य और शृगाल सेनाका पीछा करें तो यह सेना शत्रुओंके द्वारा बाँधी जाती है ॥८२॥

भग्नं दग्धं च शकटं यस्य राज्ञः प्रयायिनः ।
देवोपसृष्टं जानीयान्न तत्र गमनं शिवम् ॥८३॥

प्रस्थान करनेवाले जिस राजाकी गाड़ी—रथ, मोटर अकस्मात् भग्न या दग्ध हो जायँ तो उसे यह दैविक उपसर्ग समझना चाहिए और उसका गमन करना कल्याणकारी नहीं है ॥८३॥

उल्का वा विद्युतोऽभ्रं वा कनकाः सूर्यरश्मयः ।
स्तनितं यदि वा छिद्रं सा सेना वध्यते परैः ॥८४॥

यदि प्रयाण कालमें उल्का, विद्युत्, अभ्र और सूर्यकी स्वर्ण किरणें स्तनित-कड़कती हुई अथवा सछिद्र दिखाई पड़ें तो सेना शत्रुओंके द्वारा बन्धनको प्राप्त होती है ॥८४॥

---

१. मोनरागेन मु० । २. स्तु मु० । ३. राज्ञो बाह्ये यदा ग्रहः मु० ।

प्रयातायास्तु सेनाया यदि कश्चिन्निवर्तते ।
चतुःपदो द्विपदो वा न सा यात्रा विशिष्यति ॥८५॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनासे कोई चतुष्पद—पशु या द्विपद-मनुष्य या पक्षी आदि लौटने लगें तो उस यात्राको शिष्ट-शुभकारी नहीं समझना चाहिए ॥८५॥

प्रयातो यदि वा राजा निपतेद् वाहनात् क्वचित् ।
अन्यो वाऽपि गजाऽश्वो वा साऽपि यात्रा जुगुप्सिता ॥८६॥

यदि प्रयाण करता हुआ राजा सवारीसे गिर जाय अथवा अन्य हाथी, घोड़े गिर जायँ तो यात्राको निन्दित समझना चाहिए ॥८६॥

क्रव्यादाः पक्षिणो यत्र निलीयन्ते ध्वजादिषु ।
निवेदयन्ति ते राज्ञस्तस्य घोरं चमूवधम् ॥८७॥

जिस राजाकी सेनाकी ध्वजा पर मांसभक्षी पक्षी बैठ जायें तो उस राजाकी सेनाका भयङ्कर वध होता है ॥८७॥

मुहुर्मुहुर्यदा राजा निवर्तन्तो निमित्ततः ।
प्रयातः परचक्रेण सोऽपि वध्येत संयुगे ॥८८॥

जब किसी निमित्त—कार्यके लिए राजा प्रयाण करनेवाली सेनासे लौट करके जाय तो शत्रु राजाके द्वारा युद्धमें मारा जाता है ॥८८॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य रथश्च पथि भज्यते ।
भग्नानि चोपकरणानि तस्य राज्ञो वधं दिशेत् ॥८९॥

जब यात्रा करनेवाले राजाका रथ मार्गमें भग्न हो जाय तथा उस राजाके छत्र, चमर आदि उपकरण भग्न हो जायँ तो उसका वध समझना चाहिए ॥८९॥

प्रयाणे पुरुषा वाऽपि यदि नश्यन्ति सर्वशः ।
सेनाया बहुशश्चाऽपि हता दैवेन सर्वशः ॥९०॥

यदि प्रस्थानमें—यात्रामें अनेक व्यक्तियोंकी मृत्यु हो तो भाग्यवश सेनामें भी अनेक प्रकारकी हानि होती है ॥९०॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य दानकं कुरुते जनः ।
हिरण्यव्यवहारेषु साऽपि यात्रा न सिध्यते ॥९१॥

यदि प्रयाण करनेवाले राजाके व्यक्ति प्रयाणकालमें स्वर्णादिक दान करें तो यात्रा सफल नहीं होती है ॥९१॥

प्रवरं घातयेद् भृत्यं प्रयाणे यस्य पार्थिवः ।
अभिषिञ्चेत् सुतं चापि चमूस्तस्यापि वध्यते ॥९२॥

प्रयाणकालमें जिस राजाके प्रधान भृत्यका घात हो और नृप उसके पुत्र को अभिषिक्त करे तो उसकी सेनाका वध होता है ॥९२॥

१. मुसानं चोपकरणं मु० । २. यदि मु० ।

विपरीतं यदा कुर्यात् सर्वकार्यं मुहुर्मुहुः ।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥९३॥

यदि प्रयाणकालमें नृप बार-बार विपरीत कार्य करे तो सेना उससे परित्रस्त होकर लौट आती है ॥९३॥

परिवर्तेद् यदा वातः सेनामध्ये यदा यदा ।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥९४॥

सेनामें जब वायु बार-बार सेनाको अभिघातित और परिवर्तित करे तो सेना उसके द्वारा त्रस्त होकर लौट आती है ॥९४॥

विशाखारोहिणीभानु[1]नक्षत्रैरुत्तरैश्च या ।
पूर्वाह्णे च [2]प्रयाता वा सा सेना परिवर्तते ॥९५॥

विशाखा और रोहिणी सूर्यके नक्षत्र तथा उत्तरात्रय सूर्य नक्षत्रोंके पूर्वाह्णमें प्रयाण करने पर सेना लौट आती है ॥९५॥

पुष्येण मैत्रयोगेन योऽश्विन्यां च नराधिपः ।
अपराह्णे विनर्याति वाञ्छितं स समाप्नुयात् ॥९६॥

पुष्य, अनुराधा और अश्विनी नक्षत्रमें अपराह्णकालमें जो राजा प्रयाण करता है, वह इच्छित कार्यको पूरा कर लेता है अर्थात् उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है ॥९६॥

दिवा हस्ते तु रेवत्यां वैष्णवे च न शोभनम् ।
प्रयाणं सर्वभूतानां विशेषेण महीपतेः ॥९७॥

हस्त नक्षत्रमे दिनमें तथा रेवती और श्रवण नक्षत्रमें प्रयाण करना सभीको अच्छा होता है, किन्तु राजाओंका प्रयाण विशेषरूपसे अच्छा होता है ॥९७॥

हीने मुहूर्ते नक्षत्रे तिथौ च करणे तथा ।
पार्थिवो योऽभिनिर्याति अचिरात् सोऽपि बध्यते ॥९८॥

हीन मुहूर्त, नक्षत्र, तिथि और करणमें जो राजा अभिनिष्क्रमण करता है, वह शीघ्र ही वधको प्राप्त होता है ॥९८॥

[3]यदाप्ययुक्तो मात्रयात्यधिको मारुतस्तदा ।
परेस्तद्वध्यते सैन्यं यदि वा न निवर्त्तते ॥९९॥

यदि यात्राकालमें वायु परिमाणसे अधिक चले तो सेनाको लौट आना चाहिए। यदि ऐसी स्थितिमें सेना नहीं लौटती है तो सेना शत्रुओंके द्वारा वधको प्राप्त होती है ॥९९॥

विहारानुत्सवांश्चापि कारयेत् पथि पार्थिवः ।
स सिद्धार्थो निवर्तेत भद्रबाहुवचो यथा ॥१००॥

यदि राजा मार्गमें विहार और उत्सव करे तो सफल मनोरथ होकर लौट आता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१००॥

१. यां तु नक्षत्रैरुत्तरैश्च यत् मु० । २. प्रयातस्य हतसैन्यो निवर्तते मु० । ३. यथामयुक्तिं वा राजा ।गामधिकमूपते मु० । तदा ससैन्यो वध्येत यदि नैव निवर्तते मु० ।

वसुधा वारि वा यस्य यानेषु प्रतिहीयते ।
वज्रादयो निपतन्ते ससैन्यो वध्यते नृपः ॥१०१॥

यदि प्रयाणकालमें पृथ्वी जलसे युक्त हो अथवा यान-रथ, घोड़ा, हाथी आदिकी सवारीमें हीनता हो—सवारियोंके चलनेमें कठिनाई हो अथवा बिजली आदि गिरे तो राजाका सेना सहित विनाश होता है ॥१०१॥

सर्वेषां शकुनानां च प्रशस्तानां स्वरः शुभः ।
[1]पूर्णं विजयमाख्याति प्रशस्तानां च दर्शनम् ॥१०२॥

सभी शुभ शकुनोंमें स्वर शुभ शकुन होता है। श्रेष्ठ शुभ वस्तुओंका दर्शन पूर्ण विजय देता है ॥१०२॥

फलं वा यदि वा पुष्पं ददते यस्य पादपः ।
अकालजं प्रयातस्य न सा यात्रा विधीयते ॥१०३॥

प्रयाण कालमें जिस नृपको असमयमें ही वृक्ष फल या पुष्प दें, तो उस समय यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥१०३॥

येषां [2]निदर्शने किञ्चित् विपरीतं मुहुर्मुहुः ।
स्थालिका पिठरो वाऽपि तस्य तद्वधमीहते ॥१०४॥

प्रयाणकालमें जिन वस्तुओंके दर्शनमें कुछ विपरीतता दिखलाई पड़े अथवा बटलोई, मथानी आदि वस्तुओंके दर्शन हों तो उस राजाकी सेनाका वध होता है ॥१०४॥

[3]अचिरेणैवाकालेन तद् विनाशाय कल्पते ।
निवर्तयन्ति ये केचित् प्रयाता बहुशो नराः ॥१०५॥

यदि गमन करनेवाले अधिक व्यक्ति लौट कर वापस जाने लगें तो शीघ्र ही असमयमें सेनाका विध्वंस होता है ॥१०५॥

यात्रामुपस्थितोपकरणं तेषां च स्याद् ध्रुवं वधः ।
पक्वानां विरसं दग्धं [4]सर्पिर्भाण्डो विभिद्यते ॥१०६॥
तस्य व्याधिभयं चाऽपि मरणं वा पराजयम् ।
[5]रथानां प्रहरणानाञ्च ध्वजानामथ यो नृपः ॥१०७॥
[6]चिह्नं कुर्यात् क्वचिन्नीलं [7]मन्त्रिणा सह वध्यते ।
म्रियते पुरोहितो वाऽस्य छत्रं वा पथि भज्यते ॥१०८॥

जिनको यात्रा कालमें उपकरण—अस्त्र-शस्त्रोंका दर्शन हो, उनका वध होता है। पक्वान्न नीरस और जला हुआ तथा घृतका बर्तन फूटा हुआ दिखलाई पड़े तो व्याधि, भय, मरण और पराजय होता है। रथ, अस्त्र-शस्त्र और ध्वजामें जो राजा नील चिह्न अंकित करता है, वह मन्त्रीके सहित वधको प्राप्त होता है। यदि मार्गमें राजाका छत्र भंग हो तो पुरोहितका मरण होता है ॥१०६-१०८॥

१. पूर्णं मु० । २. निवसनं मु० । ३. आभाराय मत्रेन्मृगो मु० । ४. दग्धभूमिषु भोद्दते मु० । ५. रथप्रहरणं चैव ध्वजस्थानं यो नृपः, मु० । ६. चित्रं मु० । ७. स च मन्त्री मु० ।

[1]जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिनाम् ।
अनग्निज्वलनं वा स्यात् सोऽपि राजा विनश्यति ॥१०९॥

प्रयाण करनेवालोंके सैन्य-शिविरमें यदि नेत्ररोग उत्पन्न हो अथवा विना अग्नि जलाये ही आग जल जावे तो प्रयाण करनेवाले राजाका विनाश होता है ॥१०९॥

द्विपदश्चतुःपदो वाऽपि सकृन्मुञ्चति विस्वरः ।
बहुशो व्याधितार्त्ता वा सा सेना विद्रवं व्रजेत् ॥११०॥

यदि द्विपद—मनुष्यादि, चतुष्पद—चौपाये आदि एक साथ विकृत शब्द करें तो अधिक व्याधिसे पीड़ित होकर सेना उपद्रवको प्राप्त होती है ॥११०॥

सेनायास्तु प्रयातायां कलहो यदि जायते ।
द्विधा त्रिधा वा सा सेना विनश्यति न संशयः ॥१११॥

यदि सेनाके प्रयाणके समय कलह हो और सेना दो या तीन भागोंमें बँट जाय तो निस्सन्देह उसका विनाश होता है ॥१११॥

जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धावारे प्रयायिनाम् ।
अचिरेणैव कालेन साऽग्निना दह्यते चमूः ॥११२॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनाकी आँखमें शिविरमें ही पीड़ा उत्पन्न हो तो शीघ्र ही अग्निके द्वारा वह सेना विनाशको प्राप्त होती है ॥११२॥

व्याधयश्च प्रयातानामतिशीतं विपर्ययेत् ।
अत्युष्णं चातिरूक्षं च राज्ञो यात्रा न सिध्यति ॥११३॥

यदि प्रयाण करनेवालोंके लिए व्याधियाँ उत्पन्न हो जायँ तथा अति शीत विपरीत—अति उष्ण या अति रूक्षमें परिणत हो जाय तो राजाकी यात्रा सफल नहीं होती है ॥११३॥

निविष्टो यदि सेनाग्निः क्षिप्रमेव प्रशाम्यति ।
उपवह्य [2]नदन्तश्च भज्यते सोऽपि वध्यते ॥११४॥

यदि सेनाकी प्रज्वलित अग्नि शीघ्र ही शान्त हो जाय—बुझ जाय तो बाहरमें स्थित आनन्दित भागनेवाले व्यक्ति भी वधको प्राप्त होते हैं ॥११४॥

[3]देवो वा यत्र नो वर्षेत् क्षीराणां [4]कल्पना तथा ।
विन्द्यान्महद्भयं घोरं शान्तिं तत्र तु कारयेत् ॥११५॥

जहाँ वर्षा न हो और जल जहाँ केवल कल्पनाकी वस्तु ही रहे, वहाँ अत्यन्त घोर भय होता है, अतः शान्तिका उपाय करना चाहिए ॥११५॥

देवतान् दीक्षितान् वृद्धान् पूजयेत् ब्रह्मचारिणः ।
ततस्तेषां तपोभिश्च पापं राज्ञां प्रशाम्यति ॥११६॥

राजाको देवताओं, यतियों, वृद्धों और ब्रह्मचारियोंकी पूजा करनी चाहिए; क्योंकि इनके तपके द्वारा ही राजाका पाप शान्त होता है ॥११६॥

— —

१. जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धावारे प्रयायिनां, यह पंक्ति मुद्रित प्रतिमें नहीं है । २. सदन्तस्य मु० । ३. देवतात्रेष्टने वर्षे मु० । ४. क्लेन मु० ।

[1]उत्पाताश्चापि जायन्ते हस्त्यश्वरथपत्तिषु ।
[2]भोजनेष्वप्यनीकेषु राजबन्धश्चमूवधः ॥११७

यदि हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेनामें उत्पात हो तथा सेनाके भोजनमें भी उत्पात—कोई अद्भुत बात दिखलाई पड़े तो राजाको कैद और सेनाका वध होता है ॥११७॥

उत्पाता विकृताश्चापि दृश्यन्ते ये प्रयायिनाम् ।
सेनायां चतुरङ्गायां तेषामौत्पातिकं फलम् ॥११८॥

प्रयाण करनेवालोंको जो उत्पात और विकार दिखलाई पड़ते हैं, चतुरंग सेनामें उनका औत्पातिक फल अवगत करना चाहिए ॥११८॥

भेरीशङ्खमृदङ्गाश्च प्रयाणे ये यथोचिताः ।
निवध्यन्ते प्रयातानां विस्वरा वाहनाश्च ये ॥११९॥

भेरी, शंख; मृदङ्गका शब्द प्रयाणकालमें यथोचित हो—न अधिक और न कम तथा सैनिकोंके वाहन भी विकृत शब्द न करें तो शुभ फल होता है ॥११९॥

यद्यग्रतस्तु प्रयायेत काकसैन्यं प्रयायिनाम् ।
विस्वरं निभृतं वाऽपि येषां विद्याच्चमूवधम् ॥१२०॥

यदि प्रमाण करनेवालोंके आगे काकसेना—कौओंकी पंक्ति गमन करे अथवा विकृत स्वर करती हुई काकपंक्ति लौटे तो सेनाका वध होता है ॥१२०॥

राज्ञो यदि प्रयातस्य गायन्ते ग्रामिकाः पुरे ।
चण्डानिलो नदीं शुष्येत् सोऽपि वध्येत पार्थिवः ॥१२१॥

यदि गमन करनेवाले राजाके आगे ग्रामवासी नारियाँ गाना [रुदन करती] गाती हों और प्रचण्ड वायु नदीको सुखा दे तो राजाके वधकी सूचना समझनी चाहिए ॥१२१॥

देवताऽतिथिभृत्येभ्योऽदत्वा तु भुञ्जते यदा ।
यदा भक्ष्याणि भोज्यानि तदा राजा विनश्यति ॥१२२॥

देवताकी पूजा, अतिथिका सत्कार और भृत्योंको विना दिये जो भोजन करता है, वह राजा विनाशको प्राप्त होता है ॥१२२॥

द्विपदाश्चतुःपदा वाऽपि यदाऽभीक्ष्णं [3]रदन्ति वै ।
परस्परं सुसम्बद्धा सा सेना वध्यते परैः ॥१२३॥

द्विपद—मनुष्यादि अथवा चतुष्पद—पशु आदि चौपाये परस्परमें सुसंगठित होकर आवाज करते हैं—गर्जना करते हैं, तो सेना शत्रुओंके द्वारा वधको प्राप्त होती है ॥१२३॥

ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि नमन्ते निष्क्रमन्ति वा ।
सेनायाः शस्त्रकोशेभ्यः साऽपि सेना विनश्यति ॥१२४॥

यदि प्रयाणके समय सेनाके अस्त्र-शस्त्र ज्वलन्त होने लगें-अपने आप झुकने लगें अथवा शस्त्रकोशसे बाहर निकलने लगें तो भी सेनाका विनाश होता है ॥१२४॥

---

१. उत्पातश्चाश मु० । २. भोजनेषु भनेकेषु मु० । ३. रमन्ति मु० ।

नर्दन्ते द्विपदा यत्र पक्षिणो वा चतुःपदाः ।
क्रव्यादास्तु विशेषेण तत्र संग्राममादिशेत् ॥१२५॥

द्विपद—पक्षी अथवा चतुष्पद—चौपाये गर्जना करते हों अथवा विशेष रूपसे मांसभक्षी पशु-पक्षी गर्जना करते हों तो संग्रामकी सूचना समझनी चाहिए ॥१२५॥

विलोमेषु च वातेषु [1]प्रतीप्ते वाहनेऽपि च ।
शकुनेषु च दीप्तेषु युध्यतां तु पराजयः ॥१२६॥

उलटी हवा चलती हो, वाहन—सवारियाँ प्रदीप्त मालूम पड़ें और शकुन भी दीप्त हों तो युद्ध करनेवाले का पराजय होता है ॥१२६॥

युद्धप्रियेषु हृष्टेषु नर्दत्सु वृषभेषु च ।
रक्तेषु चाभ्रजालेषु सन्ध्यायां युद्धमादिशेत् ॥१२७॥

युद्धमें प्रियोंके प्रसन्न होने पर साँड़, बैल आदिके गर्जना करने पर और सन्ध्याकालमें बादलों के लाल होने पर युद्धकी सूचना समझनी चाहिए ॥१२७॥

अभ्रेषु च विवर्णेषु युद्धोपकरणेषु च ।
दृश्यमानेषु सन्ध्यायां सद्यः संग्राममादिशेत् ॥१२८॥

युद्धके उपकरण—अस्त्र-शस्त्रादि एवं सन्ध्याकालमें बादलोंके विवर्ण दिखलाई देने पर शीघ्र ही युद्धका निर्देश समझना चाहिए ॥१२८॥

कपिले रक्तपीते वा हरिते च तले चमूः ।
स सद्यः परसैन्येन बध्यते नाऽत्र संशयः ॥१२९॥

यदि प्रयाणकालमें सेना कपिलवर्ण, हरित, रक्त और पीतवर्णके बादलोंके नीचे गमन करे तो शीघ्र ही सेना निस्सन्देह शत्रु सेनाके द्वारा वधको प्राप्त होती है ॥१२९॥

काका गृध्राः शृगालाश्च कङ्का ये चामिषप्रियाः ।
पश्यन्ति यदि सेनायां प्रयातायां भयं भवेत् ॥१३०॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनाके समक्ष काक, गृद्ध, शृगाल और मांसप्रिय अन्य चिड़ियाँ दिखलाई पड़ें तो सेनाको भय होता है ॥१३०॥

उलूका वा विडाला वा मूषका वा यदा भृशम् ।
वासन्ते यदि सेनायां [2]निश्चितः स्वामिनो बधः ॥१३१॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनामें उल्लू, विडाल या मूषक अधिक संख्यामें निवास करें तो निश्चित रूपसे स्वामीका वध होता है ॥१३१॥

ग्राम्या वा यदि वाऽरण्या दिवा वसन्ति निर्भयम् ।
सेनायां संप्रयातायां [3]स्वामिनोऽत्र भयं भवेत् ॥१३२॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनामें शहरी या ग्रामीण कीए निर्भय होकर निवास करें तो स्वामीको भय होता है ॥१३२॥

१. दिनेषु वाहिनेषु मु० । २. नियत मोऽस्ति को वधः मु० । ३. सोऽस्तिको मु० ।

मैथुनेन विपर्यासं यदा कुर्युर्विजातयः ।
रात्रौ दिवा च सेनायां [1]स्वामिनो वधमादिशेत् ॥१३३॥

यदि प्रयाण करनेवाली सेनामें रात्रि या दिनमें विजातिके प्राणी—गायके साथ घोड़ा या गधा मैथुनमें विपर्यास—उल्टी क्रिया करें पुरुषका कार्य स्त्री और स्त्रीका कार्य पुरुष करे तो स्वामीका वध होता है ॥१३३॥

चतुःपदानां मनुजा यदा कुर्वन्ति [2]वाशितम् ।
मृगा वा पुरुषाणां तु तत्रापि [3]स्वामिनो वधः ॥१३४॥

यदि चतुष्पदकी आवाज मनुष्य करें अथवा पुरुषोंकी आवाज मृग—पशु करें तो स्वामीका वध होता है ॥१३४॥

एकपादस्त्रिपादो वा त्रिशृङ्गो यदि वाऽधिकः ।
प्रसूयते पशुर्यत्र तत्रापि सौप्तिको वधः ॥१३५॥

जहाँ एक पैर या तीन पैरवाला, अथवा तीन सींग या इससे अधिक वाला पशु उत्पन्न हो तो स्वामीका वध होता है ॥१३५॥

अश्रुपूर्णमुखादीनां शेरते च यदा भृशम् ।
पदन्विलिखमानास्तु हया यस्य स वध्यते ॥१३६॥

जिस सेनाके घोड़े अत्यन्त आँसुओंसे मुखभरे होकर शयन करें अथवा अपनी टापसे जमीनको खोंदें तो उसके राजाका वध होता है ॥१३६॥

निष्कुटयन्ति पादैर्वा भूमौ वालान् किरन्ति च ।
प्रहृष्टश्च प्रपश्यन्ति तत्र सङ्ग्राममादिशेत् ॥१३७॥

जब घोड़े पैरोंसे धरतीको कूटते हों अथवा भूमिमें अपने बालोंको गिराते हों और प्रसन्नसे दिखलाई पड़ते हों तो संग्रामकी सूचना समझनी चाहिए ॥१३७॥

न चरन्ति यदा ग्रासं न च पानं पिबन्ति वै ।
श्वसन्ति वाऽपि धावन्ति विन्यादग्निभयं तदा ॥१३८॥

जब घोड़े घास न खावें, जल न पीयें, हाँफते हों या दौड़ते हों तो अग्निभय समझना चाहिए ॥१३८॥

क्रौञ्चस्वरेण स्निग्धेन मधुरेण पुनः पुनः ।
हेषन्ते गर्वितास्तुष्टास्तदा राज्ञो जयावहाः ॥१३९॥

जब क्रौंचपक्षी स्निग्ध और मधुर स्वरसे बार-बार प्रसन्न और गर्वित होता हुआ शब्द करे तो राजाके लिए जय देनेवाला समझना चाहिए ॥१३९॥

प्रहेषन्ते प्रयातेषु यदा वादित्रनिःस्वनैः ।
लक्ष्यन्ते बहवो हृष्टास्तस्य राज्ञो ध्रुवं जयम् ॥१४०॥

जिस प्रयाण करनेवाले राजाके बाजे शब्द करते हुए दिखलाई पड़ें तथा अधिकांश व्यक्ति प्रसन्न दिखलाई पड़ें, उस राजाकी निश्चयतः जय होती है ॥१४०॥

---

१. सौप्तिको मु० । २. वासितम् मु० । ३. सोऽप्तिको मु० ।

यदा मधुरशब्देन हेषन्ति खलु वाजिनः ।
कुर्यादभ्युत्थितं सैन्य तदा तस्य पराजयम् ॥१४१॥

जब मधुर शब्द करते हुए घोड़े हींसनेकी आवाज करें तो प्रयाण करनेवाली सेनाकी पराजय होती है ॥१४१॥

अभ्युत्थितायां सेनायां लक्ष्यते यच्छुभाऽशुभम् ।[1]
वाहने प्रहरणे वा तत् तत् फलं समीहते ॥१४२॥

प्रयाण करनेवाली सेनाके वाहन—सवारी और प्रहरण—अस्त्र-शस्त्र सेनामें जितने शुभा-शुभ शकुन दिखलाई पड़ें उन्हींके अनुसार फल प्राप्त होता है ॥१४२॥

सन्नाहिको यदा युक्तो नष्टसैन्यो बहिर्व्रजेत् ।
तदा राज्यप्रणाशस्तु अचिरेण भविष्यति ॥१४३॥

जब बख्तरसे युक्त सेनापति सेनाके नष्ट होने पर बाहर चला जाता है तो शीघ्र ही राज्यका विनाश हो जाता है ॥१४३॥

सौम्यं वाह्यं नरेन्द्रस्य हयममारुह्यते हयः ।
सेनायामन्यराजानां तदा मार्गन्ति नागराः ॥१४४॥

यदि राजाके उत्तरमें घोड़ा घोड़े पर चढ़े तो उस समय नागरिक अन्य राजाकी सेनामें प्रवेश करते हैं—शरण ग्रहण करते हैं ॥१४४॥

अर्द्धवृत्ताः प्रधावन्ति वाजिनस्तु युयुत्सवः ।[2]
हेषमानाः प्रमुदितास्तदा ज्ञेयो जयो ध्रुवम् ॥१४५॥

प्रसन्न हींसते हुए युद्धोन्मुख घोड़े अर्द्धवृत्ताकारमें जब दौड़ते हुए दिखलाई पड़ें तो निश्चयसे जय समझना चाहिए ॥१४५॥

पादं पादेन मुक्तानि निःक्रमन्ति यदा हयाः ।
पृथग् पृथग् संस्पृश्यन्ते तदा विन्द्याद्भयावहम् ॥१४६॥

जब घोड़े पैरको पैरसे मुक्त करके चलें और पैरोंका पृथक् पृथक् स्पर्श हो तो उस समय भय समझना चाहिए ॥१४६॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य वाजिनां संप्रणाहिकः ।
पथि च म्रियते यस्मिन्नचिरात्मा नो भविष्यति ॥१४७॥

जब प्रयाण करनेवाले राजाके घोड़ोंको सन्नद्ध करनेवाला सईस मार्गमें मृत्युको प्राप्त हो जाय तो शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥१४७॥

शिरस्यास्ये च दृश्यन्ते यदा हृष्टास्तु वाजिनः ।
तदा राज्ञो जयं विन्द्यान्नचिरात् समुपस्थितम् ॥१४८॥

जब घोड़ोंका सिर और मुख प्रसन्न दिखलाई पड़ें तो शीघ्र ही राजाकी विजय समझनी चाहिए ॥१४८॥

१. भयावह मु० । २. युगाः मु० ।

[1]हयानां ज्वलिते चाग्निः पुच्छे पाणौ पदेषु वा ।
जघने च नितम्बे च तदा विद्यान्महद्भयम् ॥१४९॥

यदि प्रयाणकालमें घोड़ोंकी पूँछ, पाँव, पिछले पैर, जघन और नितम्ब— चूतड़ोंमें अग्नि प्रज्ज्वलित दिखलाई पड़े तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥१४९॥

हेषमानस्य दीप्तासु निपतन्त्यर्चिषो मुखात् ।
अश्वस्य विजयं श्रेष्ठमूर्ध्वदृष्टिश्च शंसते ॥१५०॥

यदि हींसते हुए घोड़ेके मुखसे प्रदीप्त अग्नि निकलती हुई दिखलाई पड़े तो विजय होती है। घोड़ेका ऊपरको मुख किये रहना भी अच्छा समझा जाता है ॥१५०॥

श्वेतस्य कृष्णं दृश्येत पूर्वकाये तु वाजिनः ।
हन्यात् तं स्वामिनं क्षिप्रं विपरीते [2]धनागमम् ॥१५१॥

यदि घोड़ेका पूर्वभाग श्वेत या कृष्ण दिखलाई पड़े तो स्वामीकी मृत्यु शीघ्र कराता है। विपरी—परभाग—श्वेतका कृष्ण और कृष्णका श्वेत दिखलाई पड़े तो स्वामीको धनकी प्राप्ति होती है ॥१५१॥

[3]वाहकस्य वधं विन्याद् यदा स्कन्धे हयो ज्वलेत् ।
पृष्ठतो ज्वलमाने तु भयं सेनापतेर्भवेत् ॥१५२॥

जब घोड़ेका स्कन्ध—कन्धा जलता हुआ दिखलाई पड़े तो सवारका वध और पृष्ठभाग ज्वलित दिखलाई पड़े तो सेनापतिका वध समझना चाहिए ॥१५२॥

तस्यैव तु यदा धूमो निर्धावति प्रहेषितः ।
पुरस्यापि तदा नाशं निर्दिशेत् प्रत्युपस्थितम् ॥१५३॥

यदि हींसते हुए घोड़ेका पीछा धुआँ करे तो उस नगरका भी नाश उपस्थित हुआ समझना चाहिए ॥१५३॥

सेनापतिवधं विद्याद् वालस्थानं यदा ज्वलेत् ।
त्रीणि वर्षाण्यनावृष्टिस्तदा तद्विषये भवेत् ॥१५४॥

यदि घोड़ेके वालस्थान—करुवारस्थान जलने लगे तो सेनापतिका वध समझना चाहिए। और उस देशमें तीन वर्ष तक अनावृष्टि समझनी चाहिए ॥१५४॥

अन्तःपुरविनाशाय मेढ्रं प्रज्वलते यदा ।
उदरं ज्वलमानं च कोशनाशाय वा ज्वलेत् ॥१५५॥

यदि घोड़ेका मेढ्—अण्डकोश स्थान जलने लगे तो अन्तःपुरका विनाश और उदरके जलनेसे कोशनाश होता है ॥१५५॥

---

१. हयानां जघने पाणौ पुच्छे पात्रेषु वा यदि । दृश्येताग्निरथा धूमास्तदा... । २. वधा मु० । ३. माहकस्य मु० ।

शेरते दक्षिणे पार्श्वे हयो जयपुरस्कृतः ।
स्वबन्धशायिनश्चाहुर्जयमाश्चर्यसाधकः ॥१५६॥

यदि दक्षिण—दाहिनी, पार्श्व—ओरसे घोड़ा शयन करे तो जय देनेवाला और पेटकी ओरसे शयन करे तो आश्चर्य पूर्वक जय देता है ॥१५६॥

वामार्धशायिनश्चैव तुरङ्गा नित्यमेव च ।
राज्ञो यस्य न सन्देहस्तस्य मृत्युं समादिशेत् ॥१५७॥

यदि नित्य बाईं आधी करवटसे घोड़ा शयन करे तो निस्सन्देह उस राजाकी मृत्युकी सूचना समझनी चाहिए ॥१५७॥

सौसुप्यते यदा नागः पश्चिमश्चरणस्तथा ।
सेनापतिवधं विद्याद् यदाऽन्नं च न भुञ्जते ॥१५८॥

यदि हाथी पश्चिमकी ओर पैर करके शयन करे तथा कोई अन्न नहीं खावे तो सेनापतिका वध समझना चाहिए ॥१५८॥

[1]यदान्नं पादवारीं वा नाभिनन्दन्ति हस्तिनः ।
यस्यां तस्यां तु सेनायामचिराद्वधमादिशेत् ॥१५९॥

जिस सेनामें हाथी अन्न, जल और तृण नहीं खाते हों—त्याग कर चुके हों, उस सेनामें शीघ्र ही वध होता है ॥१५९॥

निपतन्त्यग्रतो यद्वै त्रस्यन्ति वा रुदन्ति वा ।
निष्पदन्ते समुद्विग्नां यस्य तस्य वधं वदेत् ॥१६०॥

जिस राजाके प्रयाण कालमें उसके आगे आकर दुःखी या रुदन करता हुआ व्यक्ति गिरता हो अथवा उद्विग्न होकर आता हो तो उस राजाका वध होता है ॥१६०॥

क्रूरं नदन्ति विषमं विस्वरं निशि हस्तिनः ।
दीप्यमानास्तु केचित्तु तदा सेनावधं ध्रुवम् ॥१६१॥

यदि रात्रिमें हाथी क्रूर, विषम, घोर और विस्वर—विकृत स्वरवाली आवाज करें अथवा दीप्त—अग्निमें जलते हुए दिखलाई पड़ें तो सेनाका शीघ्र वध होता है ॥१६१॥

गो-नागवाजिनां स्त्रीणां मुखाच्छोणितबिन्दवः ।
द्रवन्ति बहुशो यत्र तस्य राज्ञः पराजयः ॥१६२॥

जिस राजाको प्रयाण कालमें गाय, हाथी, घोड़ा, और स्त्रियोंके मुखपर रक्तकी बूँद दिखलाई पड़ें उस राजाकी पराजय होती है ॥१६२॥

नरा यस्य विपद्यन्ते प्रयाणे वारणाः पथि ।
कपालं गृह्य धावन्ति दीनास्तस्य पराजयः ॥१६३॥

जिस राजाके प्रयाणकालमें मार्गमें उसके हाथियोंके द्वारा मनुष्य पीड़ित हों और वे मनुष्य अपना सिर पकड़ कर दीन होकर भागें तो उस राजाकी पराजय होती है ॥१६३॥

1. यदन्नं पादवारीं वा नाभिनन्दन्ति हस्तिनः ।

यदा धुनन्ति सीदन्ति निपतन्ति किरन्ति च ।
खादमानास्तु खिद्यन्ते तदाऽऽख्याति पराजयम् ॥१६४॥

जिसके प्रयाणकालमें घोड़े पूँछका संचालन अधिक करते हों, खिन्न होते हों, गिरते हों, दुःखी होते हों, अधिक लीद करते हों और घास खाते समय खिन्न होते हों तो वे उसकी पराजय की सूचना देते हैं ॥१६४॥

हेषन्त्यभीक्ष्णमश्वास्तु विलिखन्ति खुरैर्धराम् ।
नदन्ति च यदा नागास्तदा विन्द्याद् ध्रुवं जयम् ॥१६५॥

घोड़े बार-बार हींसते हों, खुरोंसे जमीनको खोदते हों और हाथी प्रसन्नताकी चिग्घाड़ करते हों तो उसकी निश्चित जय समझना चाहिए ॥१६५॥

पुष्पाणि पीतरक्तानि शुक्लानि च यदा गजाः ।
अभ्यन्तरा गदन्तेषु दर्शयन्ति तदा जयम् ॥१६६॥

यदि हाथी पीत, रक्त और श्वेत रंगके पुष्पोंकी भीतरी दाँतोंके अग्रभागमें दिखलाते हुए मालूम हों तो जय समझना चाहिए ॥१६६॥

यदा मुञ्चन्ति शुण्डाभिर्नागा नादं पुनः पुनः ।
परसैन्योपघाताय तदा विन्द्याद् ध्रुवम् जयम् ॥१६७॥

जब हाथी सूँड़से बार-बार नाद करते हों तो परसेना—शत्रुसेनाके विनाशके लिए प्रयाण करनेवाले राजाकी जय होती है ॥१६७॥

पादैः पादान् विकर्षन्ति तलैर्वा विलिखन्ति च ।
गजास्तु यस्य सेनायां निरुध्यन्ते[1] ध्रुवं परैः ॥१६८॥

जिस सेनाके हाथी पैरोंके द्वारा पैरोंको खींचें अथवा तलके द्वारा धरतीको खोदें तो शत्रुके द्वारा सेनाका निरोध होता है ॥१६८॥

मत्ता यत्र विपद्यन्ते न मद्यन्ते च योजिताः ।
नागास्तत्र वधो राज्ञो महाऽमात्यस्य वा भवेत् ॥१६९॥

जहाँ मदोन्मत्त हाथी विपत्तिको प्राप्त हों अथवा मत्त हाथियोंकी योजना करने पर भी वे मदको प्राप्त न हों तो उस समय वहाँ राजा या महाऽमात्य—मन्त्रीका वध होता है ॥१६९॥

यदा राजा निवेशेत भूमौ कण्टकसङ्कुले ।
विषमे सिकताकीर्णे सेनापतिवधो ध्रुवम् ॥१७०॥

जब राजा कंटकाकीर्ण, विषम, बालुकायुक्त भूमिमें सेनाका निवास करावे-सैन्य शिविर स्थापित करे तो सेनापतिके वधका निर्देश समझना चाहिए ॥१७०॥

श्मशानास्थिरजःकीर्णे पश्चदग्धवनस्पतौ ।
शुष्कवृक्षसमाकीर्णे निविष्टो[2] वधमीहते ॥१७१॥

श्मशानभूमिकी हड्डियाँ जहाँ हों, धूलि युक्त, दग्धवनस्पति और शुष्क वृक्षवाली भूमिमें सैन्यशिविरकी स्थापना की जाय तो वध होता है ॥१७१॥

---

१. विरुध्यन्ते मु० । २. निविष्टा ।

कोविदारसमाकीर्णे श्लेष्मान्तकमहाद्रुमे ।
पिलूकालविविष्टस्य प्राप्नुयाच्च चिराद् वधम् ॥१७२॥

लाल कचनार वृक्षसे युक्त तथा गोन्दवाले बड़े वृक्षोंसे युक्त और पीलूके वृक्षके स्थानमें सैन्य शिविर स्थापित किया जाय तो विलम्बसे वध होता है ॥१७२॥

असारवृक्षभूयिष्ठे पाषाणतृणकुत्सिते ।
देवतायतनाक्रान्ते निविष्टो वधमाप्नुयात् ॥१७३॥

रेड़ीके अधिक वृक्षवाले स्थानमें अथवा पाषाण-पत्थर और तिनकेवाले स्थानमें, कुत्सित—ऊँची-नीची खराब भूमिमें, अथवा देवमन्दिरकी भूमिमें यदि सैन्य-शिविर हो तो वध प्राप्त होता है ॥१७३॥

अमनोज्ञैः फलैः पुष्पैः पापपक्षिसमन्विते ।
अधोमार्गे निविष्टश्च युद्धमिच्छति पार्थिवः ॥१७४॥

कुरूप फल, पुष्पोंसे युक्त तथा पापी—मांसहारी पक्षियोंसे युक्त वृक्षोंके नीचे सैन्य पड़ाव करनेवाला राजा युद्धकी इच्छा करता है ॥१७४॥

नीचैर्निविष्टभूपस्य[1] नीचेभ्यो भयमादिशेत् ।
यथा दृष्टेषु देशेषु तज्ज्ञेभ्यः प्राप्नुयाद् वधम् ॥१७५॥

नीचे स्थानोंमें स्थित रहनेवाला राजाको नीचोंसे भय होता है। तथानुसार देखे गये देशोंमेंसे वध प्राप्त होता है ॥१७५॥

यत् किञ्चित् परिहीनं स्यात् तत् पराजयलक्षणम् ।
परिवृद्धं च यद् किञ्चिद् दृश्यते विजयावहम् ॥१७६॥

जो कुछ भी कमी दिखलाई पड़े वह पराजयकी सूचिका है और जो अधिकता दिखलाई पड़े तो वह विजयकी सूचिका है ॥१७६॥

दुर्वणाश्च दुर्गन्धाश्च कुवेषा व्याधिनस्तथा ।
सेनाया ये नराश्च स्युः शस्त्रवध्या भवन्त्यथ ॥१७७॥

बुरे रंगवाले, दुर्गन्धित, कुवेषधारी और रोगी सेनाके व्यक्ति शास्त्रके द्वारा वध होते हैं ॥१७७॥

यथातानप्ररूपेण राज्ञो जयपराजयः ।
विज्ञेयः सम्प्रयातस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥१७८॥

इस प्रकारसे भद्रबाहु स्वामीके वचनानुसार प्रयाण करनेवाले राजाकी जय-पराजय अवगत कर लेनी चाहिए ॥१७८॥

परस्य विषयं लब्ध्वा अग्निदग्धा न लोपयेत् ।
परदारां न हिंस्येत् पशून् वा पक्षिणस्तथा ॥१७९॥

शत्रुके देशको प्राप्त करके भी उसे अग्निसे नहीं जलाना चाहिए और न उस देशका लोप ही करना चाहिए। पर स्त्री, पशु और पक्षियोंकी भी हिंसा नहीं करनी चाहिए ॥१७९॥

---

१. भूपस्य मु० ।

वशीकृतेषु मध्येषु न च शस्त्रं निपातयेत् ।[1]
निरापराधवित्तानि नाददीत कदाचन ॥१८०॥

आधीन हुए देशोंमें शस्त्रपात प्रयोग नहीं करना चाहिए। निरपराधी व्यक्तियोंको कभी भी कष्ट नहीं देना चाहिए ॥१८०॥

देवतान् पूजयेत् वृद्धान् [2]लिङ्गिनो ब्राह्मणान् गुरून् ।
[3]परिहारेण नृपती राज्यं मोदति सर्वतः ॥१८१॥

जो देवता, वृद्ध, मुनि, ब्राह्मण, गुरुकी पूजा करता है और समस्त बुराइयोंको दूर करता है, वह राजा सर्व प्रकारसे आनन्द पूर्वक राज्य करता है ॥१८१॥

राजवंशं न वोच्छिद्यात् बालवृद्धांश्च पण्डितान् ।
[4]न्यायेनार्थान् समासाद्य सार्थो राजा विवर्द्धते ॥१८२॥

किसी राज्य पर अधिकार कर लेने पर भी राजवंशका उच्छेद—विनाश नहीं करना चाहिए तथा बाल, वृद्ध और पंडितोंका भी विनाश नहीं करना चाहिए। न्यायपूर्वक जो धनादिको प्राप्त करता है, वही राजा वृद्धिगत होता है ॥१८२॥

धर्मोत्सवान् विवाहांश्च [5]सुतानां कारयेद् बुधः ।
न चिरं धारयेद् कन्यां तथा धर्मेण वर्द्धते ॥१८३॥

अधिकार किये गये राज्यमें धर्मोत्सव करे, अधिकृत राजाकी कन्याओंका विवाह करावे और उसकी कन्याओंको अधिक समय तक न रखें, क्योंकि धर्म पूर्वक ही राज्यकी वृद्धि होती है ॥१८३॥

कार्याणि धर्मतः कुर्यात् पक्षपातं विसर्जयेत् ।
व्यसनैर्विप्रयुक्तश्च [6]तस्य राज्यं विवर्द्धते ॥१८४॥

धर्म पूर्वक ही पक्षपात छोड़कर कार्य करे और सभी प्रकारके व्यसन—जुआ खेलना, मांस खाना, चोरी करना, परस्त्री सेवन करना, शिकार खेलना, वेश्यागमन करना और मद्यपान करना इन सात व्यसनोंसे अलग रहे, उसका राज्य बढ़ता है ॥१८४॥

यथोचितानि सर्वाणि यथा न्यायेन पश्यति ।
राजा कीर्तिं समाप्नोति [7]परत्रेह च मोदते ॥१८५॥

यथोचित सभीको जो न्यायपूर्वक देखता है, वही राजकीर्त्ति-यश प्राप्त करता है और इह लोक और परलोकमें आनन्दको प्राप्त होता है ॥१८५॥

इमं यात्राविधिं कृत्स्नां योऽभिजानाति तत्त्वतः ।
न्यायतश्च प्रयुञ्जति प्राप्नुयात् स महत् पदम् ॥१८६॥

जो राजा इस यात्राविधिको वास्तविक और सम्पूर्ण रूपसे जानता है और न्यायपूर्वक व्यवहार करता है, वह महान् पद प्राप्त करता है ॥१८६॥

इति महामुनीश्वरसकलानन्दमहामुनिभद्रबाहुविरचिते
महानिनिमित्तशास्त्रे राजयात्राध्यायः समाप्तः ।

---

१. अनिष्टतस्तु मध्यस्तु शस्त्रापसरं निधापयेत् । २. लिङ्गस्थान । ३. परिहारं नृपतिर्दद्या-द्रामायतत्रिनम् मु० । ४. न्यायेनार्था मम दद्यात् तथा राज्येन वर्धते । ५. सुतानां मु० । ६. यशोऽभिष्ट-सुखप्रदः मु० । ७. तदा प्रत्यय मोदते मु० ।

विवेचन—इस प्रस्तुत यात्रा प्रकरणमें राजा महाराजाओंकी यात्राका निरूपण आचार्यने किया है। अब गणतन्त्र भारतमें राजाओंकी परम्परा ही समाप्त हो चुकी है। अतः यहाँ पर सर्व सामान्यके लिए यात्रा सम्बन्धकी उपयोगी बातोंपर प्रकाश डाला जायगा। सर्वप्रथम यात्राके मुहूर्त्त के सम्बन्धमें कुछ लिखा जाता है। क्योंकि समयके शुभाशुभत्वका प्रभाव प्रत्येक जड़ या चेतन पदार्थ पर पड़ता है। यात्राके मुहूर्त्तके लिए शुभ नक्षत्र, शुभ तिथि, शुभ वार और चन्द्रवासके विचारके अतिरिक्त वारशूल, नक्षत्रशूल, समयशूल, योगिनी और राशिके क्रमका विचार करना चाहिए।

यात्राके लिए शुभनक्षत्र निम्न हैं—

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा ये नक्षत्र यात्राके लिए उत्तम; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा ये नक्षत्र मध्यम एवं भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति, विशाखा ये नक्षत्र यात्राके लिए निन्द्य हैं।

तिथियोंमें द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ बताई गई हैं।

दिक्शूल और नक्षत्रशूल तथा प्रत्येक दिशाके शुभ दिन

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवारको पूर्वमें, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवारको दक्षिणमें; शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्रको पश्चिम एवं मंगल तथा बुधवारको उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें उत्तर दिशामें यात्रा करना वर्जित है। पूर्व दिशामें रविवार, मंगलवार और गुरुवार; पश्चिममें शनिवार, सोमवार, बुधवार और गुरुवार; उत्तर दिशामें गुरुवार, रविवार, सोमवार और शुक्रवार एवं दक्षिण दिशामें बुधवार, मंगलवार, सोमवार, रविवार और शुक्रवारको गमन करना शुभ होता है। जो नक्षत्रका विचार नहीं कर सकते हैं, वे उक्त शुभवारोंमें यात्रा कर सकते हैं। पूर्वदिशामें ऊषाकालमें यात्रा वर्जित है। पश्चिम दिशामें गोधूलिकी यात्रा वर्जित है। उत्तर दिशामें अर्धरात्रि और दक्षिण दिशामें दोपहरकी यात्रा वर्जित है।

योगिनीवासविचार

नवभूम्यः शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्क कृताः शक्ररसास्तुरंगा तिथ्यः।
द्विदशोमा वसवश्च पूर्वतः स्युः तिथयः सम्मुखवामगा च शस्ताः॥

अर्थ—प्रतिपदा और नवमीको पूर्व दिशामें; एकादशी और तृतीयाको अग्निकोण, पञ्चमी और त्रयोदशीको दक्षिण दिशामें, चतुर्थी और द्वादशीको नैऋत्य कोणमें, षष्ठी और चतुर्दशीको पश्चिम दिशामें, सप्तमी और पूर्णिमाको वायव्यकोणमें; द्वितीया और दशमीको उत्तर दिशामें एवं अमावास्या और अष्टमीको ईशान कोणमें योगिनीका वास होता है। सम्मुख और बायें तरफ अशुभ एवं पीछे और दाहिनी ओर योगिनी शुभ होती है।

चन्द्रमाका निवास

चन्द्रश्चरति पूर्वादौ क्रमात्त्रिदिक्चतुष्टये।
मेषादिष्वेष यात्रायां सम्मुखस्त्वतिशोभनः॥

अर्थात् मेष, सिंह और धनु राशिका चन्द्रमा पूर्वमें; वृष, कन्या और मकर राशिका चन्द्रमा दक्षिण दिशामें; तुला, मिथुन और कुम्भ राशिका चन्द्रमा पश्चिम दिशामें एवं कर्क, वृश्चिक और मीन राशिका चन्द्रमा उत्तर दिशामें वास करता है।

चन्द्रमाका फल

सम्मुखीनोऽर्थलाभाय दक्षिणः सर्वसम्पदे ।
पश्चिमः कुरुते मृत्युं वामश्चन्द्रो धनक्षयम् ॥

अर्थ—सम्मुख चन्द्रमा धन लाभ करनेवाला; दक्षिण चन्द्रमा सुख सम्पत्ति देनेवाला; पृष्ठ चन्द्रमा शोक सन्ताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धन नाश करनेवाला होता है।

राहु विचार

अष्टासु प्रथमाद्येषु प्रहरार्धेष्वहर्निशम् ।
पूर्वस्यां वामतो राहुस्तुर्यां तुर्यां व्रजेद्दिशम् ॥

अर्थ—राहु प्रथम अर्धमासमें पूर्व दिशामें, द्वितीय अर्धमासमें वायव्यकोणमें, तृतीय अर्धमासमें दक्षिण दिशामें, चतुर्थ अर्धमासमें ईशानकोणमें, पञ्चम अर्धमासमें पश्चिम दिशामें, षष्ठ अर्धमासमें आग्नेयी दिशामें, सप्तम अर्धमासमें उत्तर दिशामें और अष्टम अर्धमासमें नैऋत्यकोणमें राहुका वास रहता है।

यात्राके लिए राहु आदिका विचार

जयाय दक्षिणो राहु योगिनी वामतः स्थिता ।
पृष्ठतो द्वयमप्येतच्चन्द्रमाः सम्मुखः पुनः ॥

अर्थ—दिशाशूलका बायीं ओर रहना, राहुका दाहिनी ओर या पीछेकी ओर रहना, योगिनीका बायीं ओर या पीछेकी ओर रहना एवं चन्द्रमाका सम्मुख रहना यात्रामें शुभ होता है। द्वादश महीनोंमें पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तरके क्रमसे प्रतिपदासे पूर्णिमा तक क्रमसे सौख्य, क्लेश, भीति, अर्थागम, शून्य, निःस्वत्व, मित्रता, द्रव्य क्लेश, दुःख, इष्टाप्ति, अर्थलाभ, लाभ, मंगल, वित्तलाभ, लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सौख्य, भीति, लाभ, मृत्यु, अर्थागम, सुख, कष्ट, सौख्य, क्लेश, लाभ, सुख, सौख्यलाभ, कार्य सिद्धि, कष्ट, क्लेश, कष्टसे सिद्धि, अर्थ, मृत्यु, लाभ, द्रव्यलाभ, शून्य, सौख्य, मृत्यु, अत्यन्त कष्ट फल होता है। १३,१४ और १५ तिथिका फल ३,४ और ५ तिथिके फल समान जानना चाहिए।

तिथि चक्र प्रकार

पो.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ	श्रा	भा	आ	का	मा	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्यं	क्लेश	भीतिः	अर्थाग
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्यम्	नैःस्वम्	निःस्व	मित्रघाः
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्ले	दुःखम्	इष्टाप्तिः	अर्थः
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभ	सौख्य	मङ्गलम्	वित्तला
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	लाभः	द्रव्याप्ति	धनम्	सौख्यं
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भीतिः	लाभः	मृत्युः	अर्थाग
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	लाभः	कष्टम्	द्रव्यला	सुखम्
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्टम्	सौख्यम्	क्लेश	सुखम्
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सौख्य	लाभः	कार्यसि	कष्टम्
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्लेशः	कष्टम्	अर्थः	धनम्
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्युः	लाभः	द्रव्यला	शून्यम्
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्यम	सौख्यं	मृत्युः	कष्ट

यात्रा मुहूर्त्त चक्र

	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं।
नक्षत्र	रो० उपा० उभा० उभा० पूपा० पूभा० ज्ये० मू० श० ये मध्यम हैं।
	भ० कृ० आ० आश्ले० म० ज्ये० मू० श० त्रि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	२।३।५।७।१०।११।१२

चन्द्रवास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समय शूल चक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायंकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्द्धरात्रि

दिक्शूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	बृ०	सू० शु०	मं० बु०

योगिनी चक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
१।९	३।११	१३।५	१२।४	१४।६	१५।७	१०।२	३०।८	तिथि

यात्राके शुभाशुभत्वका गणित द्वारा ज्ञान

शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे लेकर तिथि, वार, नक्षत्र इनके योगको तीन स्थानमें स्थापित करें और क्रमशः सात, आठ और तीनका भाग देनेसे यदि प्रथम स्थानमें शेष रहे तो यात्रा करनेवाला दुःखी होता है। द्वितीय स्थानमें शून्य बचनेसे धन नाश होता है और तृतीय स्थानमें शून्य शेष रहनेसे मृत्यु होती है। उदाहरण—कृष्णपक्ष की एकादशी रविवार और विशाखा नक्षत्रमें भुवनमोहनलालको यात्रा करनी है। अतः शुक्लपक्षकी प्रतिपदासे कृष्णपक्षकी द्वादशी तिथि तक

गणना की तो २७ संख्या आई; रविवारकी संख्या एक ही हुई और अश्विनीसे विशाखा तक गणना की तो १६ संख्या हुई। इन तीनों अंकका योग किया तो २७+१+१६=४४ हुआ। इसे तीन स्थानों पर रखकर ७, ८ और ३ का भाग दिया। ४४÷७=६ लब्ध और २ शेष; ४४÷८=५ लब्ध और ४ शेष; ४४÷३=१४ लब्ध और २ शेष। यहाँ एक भी स्थान पर शून्य शेष नहीं आया है। अतः फलादेश उत्तम है, यात्रा करना शुभ है।

घातक चन्द्र विचार

मेषराशि वालोंको जन्मका, वृषराशि वालोंका पाँचवाँ, मिथुनराशि वालोंको नौवाँ, कर्कराशि वालोंको दूसरा, सिंहराशि वालोंको छठवाँ, कन्याराशि वालोंको दशवाँ, तुलाराशि वालोंको तीसरा, वृश्चिकराशि वालोंको सातवाँ, धनराशि वालोंको चौथा, मकरराशि वालोंको आठवाँ, कुम्भराशि वालोंको ग्यारहवाँ और मीनराशि वालोंको बारहवाँ चन्द्र घातक होता है। यात्रामें घातक चन्द्र त्यक्त है।

घातक नक्षत्र

कृत्तिका, चित्रा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा, आर्द्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद, मघा, मूल और पूर्वाभाद्रपद ये नक्षत्र मेषादि बारह राशिवाले व्यक्तियोंके लिए घातक हैं। किसी-किसी आचार्यका मत है कि मेष राशिवालोंको कृत्तिकाका प्रथम चरण, वृषराशि वालोंको चित्राका दूसरा चरण, मिथुन राशिवालोंको शतभिषाका तीसरा चरण, वृषराशि वालोंको मघाका तीसरा चरण, सिंहराशि वालोंको धनिष्ठाका प्रथम चरण, कन्याराशि वालोंको आर्द्राका तीसरा चरण, तुलाराशि वालोंको मूलका दूसरा चरण, वृश्चिक राशिको रोहिणीका चौथा चरण, धनराशि वालोंको पूर्वाभाद्रपदका चौथा चरण, मकरराशि वालोंको मघाका चौथा चरण, कुम्भराशि वालोंको मूलका चौथा चरण और मीनराशि वालोंको पूर्वाभाद्रपदका तीसरा चरण त्याज्य है।

घाततिथि विचार

वृष, कन्या और मीन राशिवालोंको पञ्चमी, दशमी और पूर्णिमा घाततिथि है। मिथुन और कर्क राशिवाले व्यक्तियोंको द्वितीया, द्वादशी और सप्तमी घाततिथियाँ हैं। वृश्चिक और मेष राशिवालोंको प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी घात तिथि हैं। मकर और तुला राशिवालोंको चतुर्थी, चतुर्दशी और नवमी घाततिथियों एवं धन, कुम्भ और सिंह राशिवाले व्यक्तियोंके लिए तृतीया, त्रयोदशी और अष्टमी घाततिथियों हैं। इनका यात्रामे त्याग परम आवश्यक है।

घातवार

मकर राशिवाले व्यक्तियोंको मंगलवार घातक है; वृष, सिंह और कन्या राशिवालोंको शनिवार; मिथुन राशिवाले व्यक्तिके लिए सोमवार, मेष राशिवालोंको रविवार, कर्क राशिवालोंको बुधवार; धनु, मीन और वृश्चिकको शुक्रवार एवं कुम्भ और तुला राशिवालोंको गुरुवार घातक है। इन घातक वारोंमें यात्रा करना वर्जित है।

घातक लग्न

मेष, वृष आदि द्वादश राशिवालोंको क्रमशः मेष, वृष, कर्क, तुला, मकर, मीन, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मिथुन और सिंह लग्न घातक हैं। अतः यात्रामें वर्जित हैं।

राशिज्ञान करनेकी विधि

चू, चे, चोला, ली, लू, ले लो और आ इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर अपने नामके आदिका हो तो मेषराशि; ई, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे और वो इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर

अपने नामका आदि अक्षर हो तो मिथुन राशि; ही, हू हे, हो, डा, डी, डू, डे और डो इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर अपने नामका आदि अक्षर हो तो कर्क राशि; मा मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू और टे इन अक्षरोंमेंसे कोई भी अक्षर नामका आदि अक्षर हो तो सिंह राशि; टो, पा, पी, पू, प, ण ठ, पे और पो इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामका आदि अक्षर हो तो कन्या राशि; रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू और ते इन अक्षरोंमेंसे कोई भी अक्षर नामके आदिका अक्षर हो तो तुला राशि; तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी और यू इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामके आदिका अक्षर हो तो वृश्चिक राशि; ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा और भे इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामका आदि अक्षर हो तो धनु राशि; भो, जा, जी, खी, खू, खे, खो, गा और गी इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामके आदि का अक्षर हो तो मकर राशि; गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो और दा इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामका आदि अक्षर हो तो कुम्भ राशि एवं दी, दू, था, झ, ञ, दे, दो, चा और ची इन अक्षरोंमें से कोई भी अक्षर नामका आदि अक्षर हो तो मीन राशि होती है।

संक्षिप्त विधि

आला=मेष, उवा=वृष, काछा=मिथुन, डाहा=कर्क, माटा=सिंह, पाठा=कन्या, राता=तुला, नोया वृश्चिक, भू धा फा ढ,=मकर, गो सा=कुम्भ, दा चा=मीन।

उपर्युक्त अक्षर विधि परसे अपनी राशि निकालकर घाततिथि, घातनक्षत्र, घातवार और घात लग्नका विचार करना चाहिए।

यात्राकालीन शकुन—ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, पपैया, नेवला, बंधा हुआ पशु, मांस, श्रेष्ठ वाक्य, फूल, ऊख, भरा कलश, छाता, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगड़ी, बिना बंधा हुआ सफेद बैल, मदिरा, पुत्रवती स्त्री, जलती हुई अग्नि और मछली आदि पदार्थ यात्राके लिए गमन करते हुए दिखलाई पड़े तो शुभ शकुन समझना चाहिए। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, अथवा धोये हुए वस्त्र लिये हुए धोबी, मछली, घृत, सिंहासन, रोदनरहित मुर्दा, ध्वजा, शहद, मेढा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाजपक्षी, पालकी, वेदध्वनि, श्रेष्ठ स्तोत्रपाठकी ध्वनि, मांगलिक गायन और अंकुश ये पदार्थ यात्राके समय सम्मुख आवें और बिना जलका घड़ा लिये हुए आदमी पीछे जाता हो तो अत्युत्तम है।

बॉझ स्त्री, चमड़ा, धानकी भूसी, हाड़, सर्प, लवण, अंगार, इन्धन, हिजड़ा, विष्ठा लिये पुरुष, तैल, पागल व्यक्ति, चर्बी, औषध, शत्रु, जटावाला व्यक्ति, संन्यासी, तृण, रोगी, मुनि और बालकके अतिरिक्त अन्य नंगा व्यक्ति, तेल लगाकर बिना स्नान किये हुए, छूटे केश, जातिसे पतित, कान-नाक कटा व्यक्ति, भूखा, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, निज घरका जलना, बिलावोंका लड़ना और सम्मुख छींक यात्रामें अशुभ है। गेरूसे रंगा कपड़ा, या इस प्रकारके वस्त्रोंको धारण करनेवाला व्यक्ति, गुड़, छाछ, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा व्यक्ति, लड़ाई, शरीरसे वस्त्र गिर जाना, भैंसोंकी लड़ाई, काला अन्न, रुई, वमन, दाहिनी ओर गर्दभ शब्द, अतिक्रोध, गर्भवती, शिरमुण्डा, गीले वस्त्र वाला, दुष्ट वचन बोलनेवाला, अन्धा और बहिरा ये सब यात्रा समयमें सम्मुख आवें तो अति निन्दित हैं।

गोहा, जाहा, शूकर, सर्प और खरगोशका शब्द शुभ होता है। निज या परके मुखसे इनका नाम लेना शुभ है, परन्तु इनका शब्द या दर्शन शुभ नहीं है। रीछ और वानरका नाम लेना और सुनना अशुभ है, पर शब्द सुनना शुभ होता है। नदीका तैरना, भयकार्य, गृहप्रवेश और नष्ट वस्तुका देखना साधारण शुभ है। कोयल, छिपकली, पोतकी, शूकरी, रता, पिंगला,

छछुन्दरि, सियारिन, कपोत, खञ्जन, तीतर इत्यादि पक्षी यदि राजाकी यात्राके समय वाम भागमें हों तो शुभ हैं। छिक्कर, पपीहा, श्रीकण्ठ, वानर और रुरुमृग यात्रा समय दक्षिण भागमें हों तो शुभ हैं। दाहिनी ओर आये हुए मृग और पक्षी यात्रामें शुभ होते हैं। विषम संख्यक मृग अर्थात् तीन, पाँच, सात, नौ, ग्यारह, तेरह, पन्द्रह, सत्रह, उन्नीस, इक्कीस आदि संख्यामें मृगोंका झुण्ड चलते हुए साथ दें तो शुभ है। यात्रा समय बायीं ओर गदहेका शब्द शुभ है। यदि सिरके ऊपर दही की हण्डी रखे हुए कोई ग्वालिन जा रही हो और दहीके कण गिरते हुए दिखलाई पड़ें तो यह शकुन यात्राके लिए अत्यन्त शुभ है। यदि दहीकी हंडी काले रंगकी हो और वह काले रंगके वस्त्रसे आच्छादित हो तो यात्रामें आधी सफलता मिलती है। श्वेतरंगकी हंडी श्वेतवस्त्रसे आच्छादित हो तो पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि रक्तवस्त्रसे आच्छादित हो तो यश प्राप्त होता है, पर यात्रामें कठिनाइयाँ अवश्य सहन करनी पड़ती हैं। पीतवर्णके वस्त्रसे आच्छादित होनेपर धनलाभ होता है तथा यात्रा भी सफलतापूर्वक निर्विघ्न हो जाती है। हरे-रंगका वस्त्र विजयकी सूचना देता है तथा यात्रा करनेवालेकी मनोकामना सिद्ध होनेकी ओर संकेत करता है। यदि यात्रा करनेके समय कोई व्यक्ति खाली घड़ा लेकर सामने आवे और तत्काल भरकर साथ-साथ वापस चले तो यह शकुन यात्राकी सिद्धिके लिए अत्यन्त शुभकारक है। यदि कोई व्यक्ति भरा घड़ा लेकर सामने आवे और तत्काल पानी गिराकर खाली घड़ा लेकर चले तो यह शकुन अशुभ है। यात्राकी कठिनाइयोंके साथ धनहानिकी सूचना देता है।

यात्रा समयमें काकका विचार—यदि यात्राके समय काक वाणी बोलता हुआ वामभागमें गमन करे तो सभी प्रकारके मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यदि काक मार्गमें प्रदक्षिणा करता हुआ बायें हाथ आ जावे तो कार्यकी सिद्धि, क्षेम, कुशल तथा मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यदि पीठ पीछे काक मन्दरूपमें मधुर शब्द करता हुआ गमन करे अथवा शब्द करता हुआ उसी ओर मार्गमें आगे बढ़े, जिधर यात्राके लिए जाना है, अथवा शब्द करता हुआ काक आगे हरे वृक्षकी हरी डाली पर स्थित हो और अपने पैरसे मस्तकको खुजला रहा हो तो यात्रामें अभीष्ट फलकी सिद्धि होती है। यदि गमनकालमें काक हाथीके ऊपर बैठा दिखलाई पड़े या हाथी पर बजते हुए बाजों पर बैठा हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रामें सफलता मिलती है, साथ ही धन-धान्य, सवारी, भूमि आदिका लाभ होता है। यदि काक घोड़ेके ऊपर स्थित दिखलाई पड़े तो भूमिलाभ, मित्रलाभ एवं धनलाभ करता है। देवमन्दिर, ध्वजा, ऊँचे महल, धान्यकी राशि, अन्नके ढेर एवं उन्नत भूमि पर बैठा हुआ काक मुँहमें सूखी घास लेकर चबा रहा हो तो निश्चय यात्रामें अर्थ लाभ होता है। इस प्रकारकी यात्रामें सभी प्रकारके सुख साधन प्रस्तुत रहते हैं। यह यात्रा अत्यन्त सुखकर मानी जाती है। आगे-पीछे काक गोबरके ढेर पर बैठा हो या दूधवाले-बड़, पीपल आदि पर स्थित होकर बीट कर रहा हो अथवा मुँहमें अन्न, फल, मूल, पुष्प आदि हों तो अनायास ही यात्राकी सिद्धि होती है। यदि कोई स्त्री जलका भरा हुआ कलश लेकर आवे और उस पर काक स्थित होकर शब्द करने लगे तथा जलके भरे हुए घड़े पर स्थित हो काक शब्द करे तो स्त्री और धनकी प्राप्ति होती है। यदि शय्याके ऊपर स्थित होकर काक शब्द करे तो आप्तजनोंकी प्राप्ति होती है। गायकी पीठ पर बैठकर या दूर्वा पर बैठकर अथवा गोबर पर बैठकर काक चोंच घिसता हो तो अनेक प्रकारके भोज्य पदार्थोंकी प्राप्ति होती है। धान्य, दूध, दही, मनोहर अंकुर, पत्र, पुष्प, फल, हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर काक बोलता जाय तो सभी प्रकारके इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं। वृक्षोंके ऊपर स्थित होकर काक शान्त शब्द बोले तो स्त्रीप्रसंग हो, धन-धान्य पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-धान्यका लाभ हो एवं गायकी पीठ पर स्थित होकर शब्द करे तो स्त्री, धन, यश और उत्तम भोजनकी प्राप्ति होती है। ऊंटकी पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे, गदहेकी पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे

तो धनलाभ और सुखकी प्राप्ति होती है। यदि शूकर, बैल, खाली घड़ा, मुर्दा मनुष्य या मुर्दा पशु, पाषाण और सूखे वृक्षकी डाली पर स्थित होकर काक शब्द करे तो यात्रामें ज्वर, अर्थहानि, चोरों द्वारा धनका अपहरण एवं यात्रामें अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। यदि काक दक्षिणकी ओर गमन करे, दक्षिणकी ओर ही शब्द करे, पीछेसे सम्मुख आवे, कोलाहल करता हो और प्रतिलोम गति करके पीठ पीछेकी ओर चला आवे तो यात्रामें चोट लगती है, रक्तपात होता है तथा और भी अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। बलिभोजन करता हुआ काक बाईं ओर शब्द करता हो और वहाँसे दक्षिणकी ओर चला आवे एवं वामप्रदेशमें प्रतिलोम गमन करता हो तो यात्रामें अनेक प्रकारके विघ्न होते हैं। आर्थिकहानि भी होती है। यदि गमनकालमें काक दक्षिण बोलकर पीठ पीछेकी ओर चला जाय तो किसीकी हत्या सुनाई पड़ती है। गायकी पूँछ या सर्पके बिल पर बैठा हुआ काक दिखलाई पड़े तो मार्गमें सर्पदर्शन, नाना तरहके संघर्ष और भय होते है। यदि काक आगे कठोर शब्द करता हुआ स्थित हो तो हानि, रोग; पीठ पीछे स्थित हो कठोर शब्द करे तो मृत्यु एवं खाली बैठकर शब्द कर रहा हो तो यात्रा सदा निन्दित है। सूखे काठके टूँकको तोड़कर चोंचके अग्रभागमें दबाकर रखा हो और बायें भागमें स्थित हो तो मृत्यु, नाना प्रकारके कष्ट होते हैं। यदि चोंचमें काक हड्डी दबाये हो तो अशुभ फल होता है। वामभागमें सूखे वृक्षपर काक स्थित हो तो अतिरोग, खाली या तीखे वृक्ष पर बैठा हो तो यात्रामें कलह और कार्यनाश एवं काँटेदार वृक्षपर स्थित होकर रूखा शब्द करे तो यात्रामें मृत्यु होती है।

भग्नशरणके वृक्ष पर स्थिति काक कठोर शब्द करता हो तो यात्रामें धनक्षय, कुटुम्बी मरण एवं नाना तरहसे अशुभ होता है। यदि छत पर बैठकर काक बोलता हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए। इस शकुनके होने पर यात्रा करनेसे वज्रपात—बिजली गिरती है। यदि कूड़ेके ढेर पर या राख-भस्मके ढेर पर स्थित होकर काक शब्द करे तो कार्यका नाश होता है। अपयश, धनक्षय एवं नाना तरहके कष्ट यात्रामें उठाने पड़ते हैं। लता, रस्सी, केश, सूखी लकड़ी, चमड़ा, हड्डी, फटे-पुराने चिथड़े, वृक्षोंकी छाल, रुधिरयुक्त वस्तु, जलती लकड़ी एवं कीचड़ काक की चोंचमें दिखलाई पड़े तो यात्रामें पापयुक्त कार्य करने पड़ते हैं, यात्रामें कष्ट होता है, धनक्षय या धनकी चोरी, अचानक दुर्घटनाएँ आदि घटित होती हैं। छाया, आयुध, छत्र, घड़ा, हड्डी, वाहन, काष्ठ एवं पाषाण चोंचमें रखे हुए काक दिखलाई पड़े तो यात्रा करनेवाले की मृत्यु होती है। एक पाँव समेटकर, चञ्चल चित्त होकर जोर-जोरसे कठोर शब्द करता हो तो काक युद्ध, झगड़े, मार-पीट आदिकी सूचना देता है। यदि यात्रा करते समय काक अपनी बीट यात्रा करनेवालेके मस्तक पर गिरा दे तो यात्रामें विपत्ति आती है। नदीतट या मार्गमें काक तीव्रस्वर बोले तो अत्यन्त विपत्तिकी सूचना समझ लेनी चाहिए। यात्राके समयमें यदि काक रथ, हाथी, घोड़ा और मनुष्यके मस्तक पर बैठा दीख पड़े तो पराजय, कष्ट, चोरी और झगड़ेकी सूचना समझनी चाहिए। शास्त्र, ध्वजा, छत्र पर स्थित होकर काक आकाशकी ओर देख रहा हो तो यात्रामें सफलता समझनी चाहिए।

यात्रामें उल्लूका विचार—यदि यात्राकालमें उल्लू बाईं ओर दिखलाई पड़े तथा उल्लू अपना भोजन भी साथमें लिये हो तो यात्रा सफल होती है। यदि उल्लू वृक्षपर स्थित होकर अपना भोजन सञ्चय करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा करनेवाला इस यात्रामें अवश्य धनलाभ कर लौटता है। यदि गमन करनेवाले पुरुषके वाम भागमें उल्लूका प्रशान्तमय शब्द हो और दक्षिण भागमें असम शब्द हो तो यात्रामें सफलता मिलती है। किसी भी प्रकारकी बाधा नहीं आती है। यदि यात्राकर्त्ताके वामभागमें उल्लू शब्द करता हुआ दिखलाई पड़े अथवा बाईं ओरसे उल्लूका शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा प्रशस्त होती है। यदि पृथ्वी पर स्थित होकर उल्लू

शब्द कर रहा हो तो धनहानि, आकाशमें स्थित होकर शब्द कर रहा हो तो कलह, दक्षिण भागमें स्थित होकर शब्द कर रहा हो तो कलह या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। यदि उल्लूका शब्द तेजस और पवनयुक्त हो तो निश्चयतः यात्रा करनेवाले की मृत्यु होती है। यदि उल्लू पहले बायीं ओर शब्द करे, पश्चात् दक्षिणकी ओर शब्द करे तो यात्रामें पहले समृद्धि, सुख और शान्ति; पश्चात् कष्ट होता है। इस प्रकारके शकुनमें यात्रा करनेसे कभी-कभी मृत्यु तुल्य भी कष्ट भोगना पड़ता है।

नीलकण्ठ विचार—यदि यात्राकालमें नीलकण्ठ स्वस्तिक गतिमें भक्ष्य पदार्थोंको ग्रहण कर प्रदक्षिणा करता हुआ दिखलाई पड़े तो सभी प्रकारके मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यदि दक्षिण—दाहिनी ओर नीलकण्ठ गमन समयमें दिखलाई पड़े तो विजय, धन, यश और पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि नीलकण्ठ काकको पराजय करता हुआ सामने दिखलाई पड़े तो निर्विघ्न यात्राकी सिद्धि करता है। यदि वनमध्यमें रुदन करता हुआ नीलकण्ठ सामने आवे अथवा भयङ्कर शब्द करता हुआ या घबड़ाकर शब्द करता हुआ आगे आवे तो यात्रामें विघ्न आते हैं। धन चोरी चला जाता है और जिस कार्यकी सिद्धिके लिए यात्रा की जाती है वह सफल नहीं होता। यदि यात्राकालमें नीलकण्ठ मयूरके समान शब्द करे तो यशप्राप्ति, धनलाभ, विजय एवं निर्विघ्न यात्रा सिद्ध होती है। गमन करनेवाले व्यक्तिके आगे-आगे कुछ दूर तक नीलकण्ठके दर्शन हों तो यात्रा सफल होती है। धन, विजय और यश प्राप्त होता है। शत्रु भी यात्रामें मित्र बन जाते हैं तथा वे भी सभी तरह की सहायता करते हैं।

खंजन विचार—यदि यात्राकालमें खंजनपक्षी हरे पत्र, पुष्प और फल युक्त वृक्षपर स्थित दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है; मित्रोंसे मिलन, शुभ कार्योंकी सिद्धि एवं लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। हाथी, घोड़ाके बंधनेके स्थानमें, उपवन, घरके समीप, देवमन्दिर, राजमहल आदिके शिखर पर खंजन बैठा हुआ सशब्द दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। दही, दूध, घृत आदिको मुखमें लिये हुए खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो नियमतः लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। यात्रामें इस प्रकारके शुभ शकुन मिलते हैं, जिनसे चित्त प्रसन्न रहता है तथा बिना किसी प्रकारके कष्टके यात्रा सिद्ध हो जाती है। सहस्रों व्यक्ति सहायक मिल जाते हैं। छाया सहित, सुन्दर, फल-पुष्प युक्त वृक्षपर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो लक्ष्मीकी प्राप्तिके साथ विजय, यश और अधिकारोंकी प्राप्ति होती है। खंजनका दर्शन यात्राकालमें बहुत ही उत्तम माना जाता है। गधा, ऊँट, श्वानकी पीठपर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े अथवा अशुचि और गन्दे स्थानोंपर बैठा हुआ खंजन दिखलाई पड़े तो यात्रामें बाधाएँ आती हैं, धनहानि होती है और पराजय भी होता है।

तोता विचार—यदि गमन समयमें दाहिनी ओर या सम्मुख तोता दिखलाई पड़े तथा वह मधुर शब्द कर रहा हो, बन्धन मुक्त हो तो यात्रामें सभी प्रकारसे सफलता प्राप्त होती है। यदि तोता मुखमें फल दबाये और बायें पंखसे अपनी गर्दन खुजला रहा हो तो यात्रामें धन-धान्यकी प्राप्ति होती है। हरित फल, पुष्प और पत्तोंसे युक्त वृक्षके ऊपर तोता स्थित हो तो यात्रामें विजय, सफलता, धन और यशकी प्राप्ति समझनी चाहिए। किसी विशेष व्यक्तिसे मिलनेके लिए यदि यात्रा की जाय और यात्राके आरम्भमें तोता जयनाद करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा पूर्ण सफल होती है। यदि गमनकालमें तोता बाईं ओरसे दाहिनी ओर चला आवे और प्रदक्षिणा करता हुआ सा प्रतीत हो तो यात्रामें सभी प्रकारकी सफलता समझनी चाहिए। यदि तोता शरीरको कँपाता हुआ इधरसे उधर घूमता जाय अथवा निन्दित, दूषित और घृणित स्थलोंपर जाकर स्थित हो जाय तो यात्राकी सिद्धिमें कठिनाई होती है। शुक विषपन्न करनेवाला तोता यदि सामने फल या पुष्पको कुरेदता हुआ दिखलाई पड़े तो धनप्राप्तिका योग समझना चाहिए। यदि तोता रुदन करता हुआ या किसी प्रकारके शोक शब्दको करता हुआ सामने आवे

तो यात्रा अत्यन्त अशुभ होती है। इस प्रकारके शकुनमें यात्रा करनेसे प्राणघातका भी भय रहता है।

चिड़िया विचार—यदि छोटी लाल मुनैया सामने दिखलाई पड़े तो विजय, पीठ पीछे शब्द करे तो कष्ट, दाहिनी ओर शब्द करती हुई दिखलाई पड़े तो हर्ष एवं बाईं ओर धनक्षय, रोग या अनेक प्रकारकी आपत्तियोंकी सूचना देती है। जिस चिड़ियाके सिरपर कलंगी हो, यदि वह सामने या दाहिनी ओर दिखलाई पड़े तो शुभ, बाईं ओर और पीठ पीछे उसका रहना अशुभ होता है। मुँहमें चारा लिये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रामें सभी प्रकारकी सिद्धि, धन-धान्यकी प्राप्ति, सांसारिक सुखोंका लाभ एवं अभीष्ट मनोरथोंकी सिद्धि होती है। यदि किसी भी प्रकारकी चिड़ियाँ आपसमें लड़ती हुई सामने गिर जाँय तो यात्रामें कलह, विवाद, झगड़ाके साथ मृत्यु भी प्राप्त होती है। चिड़ियाके परोंका टूटकर सामने गिरना यात्राकर्त्ताको विपत्तिकी सूचना देती है। चिड़ियाका लंगड़ाकर चलना और धूलमें स्नान करना यात्रामें कष्टोंकी सूचना देता है।

मयूर विचार—यात्रामें मयूरका नृत्य करते हुए देखना अत्यन्त शुभ होता है। मधुर शब्द करते एवं नृत्य करते हुए मयूर यदि यात्रा करते समय दिखलाई पड़े तो यह शकुन अत्यन्त उत्तम है, इसके द्वारा धन-धान्यकी प्राप्ति, विजय प्राप्ति, सुख एवं सभी प्रकारके अभीष्ट मनोरथोंकी सिद्धि समझ लेनी चाहिए। मयूरका एक ही झटकेमें उड़कर सूखे वृक्षपर बैठ जाना यात्रामें विपत्तिकी सूचना देता है।

हाथी विचार—यदि प्रस्थान कालमें हाथी सूँड़को ऊपर किये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रामें इच्छाओंकी पूर्ति होती है। यदि यात्रा करते समय हाथीका दाँत ही टूटा हुआ दिखलाई पड़े तो भय, कष्ट और मृत्यु होती है। गर्जना करता हुआ मदोन्मत्त हाथी यदि सामने आता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। जो हाथी पीलवानको गिराकर आगे दौड़ता हुआ आवे तो यात्रामें कष्ट, पराजय, आर्थिक क्षति आदि फलोंकी प्राप्ति होती है।

अश्व विचार—यदि प्रस्थानकालमें घोड़ा हिनहिनाता हुआ दाहिने पैरसे पृथ्वीको खोद रहा हो और दाहिने अंगको खुजला रहा हो तो वह यात्रामें पूर्ण सफलता दिलाता है तथा पद वृद्धिकी सूचना देता है। घोड़ेका दाहिनी ओर हिनहिनाते हुए निकल जाना, पूछको फटकारते हुए चलना एवं दाना खाते हुए दिखलाई पड़ना शुभ है। घोड़ेका लेटे हुए दिखलाई पड़ना, कानोंको फटफटाना, मल मूत्र त्याग करते हुए दिखलाई पड़ना यात्राके लिए अशुभ होता है।

गधा विचार—वामभागमें स्थित गर्दभ अतिदीर्घ शब्द करता हुआ यात्रामें शुभ होता है। आगे या पीछे स्थित होकर गधा शब्द करे तो भी यात्राकी सिद्धि होती है। यदि प्रयाणकालमें गधा अपने दाँतोंसे अपने कन्धेको खुजलाता हो तो धनकी प्राप्ति, सफल मनोरथ और यात्रामें किसी भी प्रकारका कष्ट नहीं होता है। यदि संभोग करता हुआ गधा दिखलाई पड़े तो स्त्रीलाभ, युद्ध करता हुआ दिखलाई पड़े तो बध-बंधन एवं देह या कानको फटफटाता हुआ दिखलाई पड़े तो कार्य नाश होता है। खच्चरका विचार भी गधेके विचारके समान ही है।

वृषभ विचार—प्रयाणकालमें वृषभ बाईं ओर शब्द करे तो हानि, दाहिनी ओर शब्द करे और सींगोंसे पृथ्वीको खोदे तो शुभ; घोर शब्द करता हुआ साथ-साथ चले तो विजय एवं दक्षिणकी ओर गमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो मनोरथ सिद्धि होती है। बैल या साँड़ बाईं ओर आकर बायीं सींगसे पृथ्वीको खोदे, बाईं करवट लेटा हुआ दिखलाई पड़े तो अशुभ होता है। यात्राकालमें बैल या साँड़का बाईं ओर आना भी अशुभ कहा गया है।

महिष विचार—दो महिष सामने लड़ते हुए दिखलाई पड़े तो अशुभ, विवाद, कलह और युद्धकी सूचना देते हैं। महिषका दाहिनी ओर रहना, दाहिनी सींगसे या दाहिनी ओर स्थित

होकर दोनों सींगोंसे मिट्टीका खोदना यात्रामें विजयकारक है। बैल और महिष दोनोंकी छींक यात्रामें वर्जित है।

गाय विचार—गर्भिणी गाय, गर्भिणी भैंस और गर्भिणी बकरीका यात्रा कालमें सम्मुख या दाहिनी ओर आना शुभ है। रंभाती हुई गाय सामने आवे और बच्चेको दूध पिला रही हो तो यात्राकालमें अत्यधिक शुभ माना जाता है। जिस गायका दूध दुहा जा रहा हो, वह भी यात्राकालमें शुभ होती है। रंभाती हुई, बच्चेको देखनेके लिए उत्सुक, हर्षयुक्त गायका प्रयाणकालमें दिखलाई पड़ना शुभ होता है।

विडाल विचार—यात्राकालमें बिल्ली रोती हुई, लड़ती हुई, छींकती हुई दिखलाई पड़े तो यात्रामें नाना प्रकारके कष्ट होते हैं। बिल्लीका रास्ता काटना भी यात्रामें संकट पैदा कराता है। यदि अकस्मात् बिल्ली दाहिनी ओरसे बाईं ओर आवे तो किञ्चित् शुभ और बाईं ओरसे दाहिनी ओर आवे तो अत्यन्त अशुभ होता है। इस प्रकारका बिल्लीका आना यात्रामें संकटोंकी सूचना देता है। यदि बिल्ली चूहेको मुखमें दबाये सामने आ जाय तो कष्ट, रोटीका टुकड़ा दबाकर सामने आवे तो यात्रामें लाभ एवं दही या दूध पीकर सामने आवे तो साधारणतः यात्रा सफल होती है। बिल्लीका रुदन यात्राकालमें अत्यन्त वर्जित है, इससे यात्रामें मृत्यु या तत्तुल्य कष्ट होता है।

कुत्ता विचार—यात्रा कालमें कुत्ता दक्षिण भागसे वाम भागमें गमन करे तो शुभ और कुतिया वाम भागसे दक्षिण भागकी ओर आवे तो शुभ; सुन्दर वस्तुको मुखमें लेकर यदि कुत्ता सामने दिखलाई पड़े तो यात्रामें लाभ होता है। व्यापारके निमित्त की गई यात्रा अत्यन्त सफल होती है। यदि कुत्ता थोड़ी-सी दूर आगे चलकर, पुनः पीछेकी ओर लौट आवे तो यात्रा करने वालेको सुख; प्रसन्न क्रीड़ा करता हुआ कुत्ता सम्मुख आनेके उपरान्त पीछेकी ओर लौट जाय तो यात्रा करनेवालेको धन-धान्यकी प्राप्ति होती है। इस प्रकारके शकुनसे यात्रामें विजय, सुख और शान्ति रहती है। यदि श्वान ऊँचे स्थानसे उतर कर नीचे भागमें आ जाय तथा वह दाहिनी ओर आ जावे तो शुभकारक होता है। निर्विघ्न यात्राकी सिद्धि तो होती ही है, साथ ही यात्रा करनेवालेको अत्यधिक सम्मानकी प्राप्ति होती है। हाथीके बँधनेके स्थान, घोड़ाके स्थान, शय्या, आसन, हरी घास, छत्र, ध्वजा, उत्तम वृक्ष, घड़ा, ईंटोंके ढेर, चमर, ऊँची भूमि आदि स्थानों पर मूत्र करके कुत्ता यदि मनुष्यके आगे गमन करे तो अभीष्ट कार्योंकी सिद्धि हो जाती है। यात्रा सभी प्रकारसे सफल होती है। सन्तुष्ट, पुष्ट, प्रसन्न, रोगरहित, आनन्दयुक्त, लीला सहित एवं क्रीड़ा सहित कुत्ता सम्मुख आवे तो अभीष्ट कार्योंकी सिद्धि होती है। नवीन अन्न, घृत, विष्ठा, गोबर इनको मुखमें धारण कर दाहिनी ओर और बाईं ओर देखता हुआ श्वान सामने आवे तो सभी प्रकारसे यात्रा सफल होती है। यदि श्वान आगे पृथ्वीको खोदता हुआ यात्रा करनेवालेको देखे तो निस्सन्देह इस यात्रासे धनलाभ होता है। यदि कुत्ता गमन करनेवालेको आकर सूँघे, अनुलोम गतिसे आगे बढ़े, पैरसे मस्तकको खुजलावे तो यात्रा सफल होती है। श्वान गमन कर्त्ताके साथ-साथ बाईं ओर चले तो सुन्दर रमणी, धन और यशकी प्राप्ति कराता है। श्वान जूता मुँहमें लेकर सामने आवे या साथ-साथ चले; हड्डी लेकर सामने आवे या साथ-साथ चले; केश, वल्कल, पाषाण, जीर्णवस्त्र, अंगार, भस्म, ईंधन, ठीकरा इन पदार्थोंको मुँहमें लेकर श्वान सामने आवे तो यात्रामें रोग, कष्ट, मरण, धन हानि आदि फल प्राप्त होते हैं। काष्ठ, पाषाणको कुत्ता मुखमें लेकर यात्रा करनेवालेके सामने आवे; पूँछ, कान और शरीरको यात्रा करनेवालेके सामने हिलावे तो यात्रामें धन हरण, कष्ट एवं रोग आदि होते हैं। यदि यात्रा करनेवाला कुत्ताको जल, वृक्षकी लकड़ी, अग्नि, भस्म, केश, हड्डी, काष्ठ, सींग, श्मशान, भूसा, अंगार, शूल, पाषाण, विष्ठा, चमड़ा आदि पर मूत्र करते हुए देखे तो यात्रामें नाना प्रकारके कष्ट होते हैं।

शृगाल विचार—जिस दिशामें यात्रा की जा रही हो, उसी दिशामें शृग
शब्द सुनाई पड़े तो यात्रामे सफलता प्राप्त होती है। यदि पूर्व दिशाको यात्रा
समक्ष शृगाल या शृगाली आजाय और वह शब्द भी कर रही हो तो यात्रा
संकटकी सूचना देती है। यदि सूर्य सम्मुख देखती हुई शृगाली बाईं ओर बोले
ओर बोले तो अर्थनाश और पीठ पीछे बोले तो कार्यहानि फल होता है। दक्षि
करनेवाले व्यक्तिके दाहिनी ओर शृगाली शब्द करे तो यात्रामें सफलताकी
इसी दिशाके यात्रीके आगे सूर्यकी ओर मुँहकर शृगाली बोले तो मृत्युकी प्राप्ति
दिशाको गमन करनेवालेके सम्मुख शृगाली बोले तो किञ्चित् हानि और सूर्यकी
बोले तो अत्यन्त संकटको सूचना देती है। यदि पश्चिम दिशाके यात्रीके पीठ पी
करती हुई चले तो अर्थनाश, बाईं ओर शब्द करे तो अर्थागम होता है। उत्तर दिशाको गमन करनेवाले व्यक्तिके पीठ पीछे शृगाली सूर्यकी ओर मुँहकर बोले तो यात्रामें अर्थहानि और मरण होता है। यदि यात्राकालमें शृगाली दाहिनी ओरसे निकलकर बाईं ओर चली जाय और वहीं पर शब्द करे तो यात्रामें सफलताकी सूचना समझनी चाहिए। शृगालीके शब्दकी कर्कशता और मधुरताके अनुसार फलमें ही अनाधिकता हो जाती है।

यात्रामें छींक विचार—छींक होनेपर सभी प्रकारके कार्योंको बन्दकर देना चाहिए। गमन कालमें छींक होनेसे प्राणोंकी हानि होती है। सामने छींक होनेपर कार्यका नाश, दाहिने नेत्रके पास छींक हो तो कार्यका निषेध, दाहिने कानके पास छींक हो तो धनका क्षय, दक्षिण कानके पृष्ठ भागमें छींक हो तो शत्रुओंकी वृद्धि, बायें कानके पास छींक हो तो जय, बायें कानके पृष्ठ भागकी ओर छींक हो तो भोगोंकी प्राप्ति, बायें नेत्रके आगे छींक हो तो धनलाभ होता है। प्रयाण कालमें सम्मुखकी छींक अत्यन्त अशुभ कारक है और दाहिनी छींक धन नाश करनेवाली है। अपनी छींक अत्यन्त अशुभकारक होती है। ऊँचे स्थानकी छींक मृत्युमय है, पीठ पीछेकी छींक भी शुभ होती है। छींक का विचार डाकने निम्न प्रकार किया है।

> दखिन छीकैं धन लै दीजै, नैरित कोन सिंहासन दीजै ॥
> पच्छिम छींकै मिठ भोजना, गेलो पलटै वायव कोना ॥
> उत्तर छीकै मान समान, सर्व सिद्ध लै कोन ईशान ॥
> पूरब छिंका मृत्यु हकार, अग्निकोन में दुःख के भार ॥
> सबके छिक्का कहिगेल 'डाक' अपने छिक्का नहि कस काज ॥
> आकाशक छिक्के जे नर जाय, पलटि अन्न मन्दिर नहि खाय ॥

अर्थात्—दक्षिण दिशासे होनेवाली छींक धन हानि करती है, नैऋत्यकोणकी छींक सिंहासन दिलाती है, पश्चिम दिशाकी छींक मीठा भोजन और वायव्य कोणकी छींक द्वारा गया हुआ व्यक्ति सकुशल वापस लौट आता है। उत्तरकी छींक मान-सम्मान दिलाती है, ईशानकोण की छींक समस्त मनोरथोंकी सिद्धि करती है। पूर्वकी छींक मृत्यु और अग्निकोणकी दुःख देती है। यह अन्य लोगोंकी छींक फल है। अपनी छींक तो सभी कार्योंको नष्ट करनेवाली होती है। अतः अपनी छींकका सदा त्याग करना चाहिए। ऊँच स्थान की छींकमें जो व्यक्ति यात्राके लिए जाता है, वह पुनः वापस नहीं लौटता है। नीचे स्थानकी छींक विजय देती है।

बसन्तराज शाकुनमें दशों दिशाओंकी अपेक्षा छींकके दस भेद बतलाये हैं। पूर्व दिशामें छींक होनेसे मृत्यु, अग्निकोणमें शोक, दक्षिणमें हानि, नैऋत्यमें प्रियसंगम, पश्चिममें मिष्ट आहार, वायव्यमें श्रीसम्पदा, उत्तरमें कलह, ईशानमें धनागम, ऊपरकी छींकमें संहार और नीचेकी छींकमें सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है। नीचे आठों दिशाओंमें प्रहर-प्रहरके अनुसार छींकका शुभाशुभत्व दिखलाया जाता है।

आठो दिशाओंमें प्रहरानुसार छींकफल बोधकचक्र

ईशान	पूर्व	आग्नेय
१ हर्ष २ नाश ३ व्याधि ४ मित्र संगम	१ लाभ २ धन लाभ ३ मित्र लाभ ४ अग्नि भय	१ लाभ २ मित्र दर्शन ३ शुभवार्ता ४ अग्नि भय
उत्तर १ शत्रु भय २ रिपु संग ३ लाभ ४ भोजन	यात्रा	**दक्षिण** १ लाभ २ मृत्यु भय ३ नाश ४ काल
वायव्यकोण १ स्त्री लाभ २ लाभ ३ मित्र लाभ ४ दूर गमन	**पश्चिम** १ दूर गमन २ हर्ष ३ कलह ४ चोर	**नैऋत्य** १ लाभ २ मित्र भेंट ३ शुभ वार्ता ४ लाभ

चतुर्दशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वकर्मविपाकजम् ।
शुभाशुभतथोत्पातं[1] राज्ञो जनपदस्य च ॥१॥

अब राजा और जनपदके पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कार्योंके फलसे होनेवाले उत्पातोंका निरूपण करता हूँ ॥१॥

प्रकृतेर्यो विपर्यासः स चोत्पातः[2] प्रकीर्तितः ।
दिव्याऽन्तरिक्षभौमाश्च व्यासमेषां निबोधत ॥२॥

प्रकृतिके विपर्यास--विपरीत कार्यके होनेको उत्पात कहते हैं। ये उत्पात तीन प्रकारके होते हैं--दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। इनका विस्तारसे वर्णन निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥२॥

यदात्युष्णं भवेच्छीते शीतमुष्णे तथा ऋतौ ।
तदा तु नवमे मासे दशमे वा भयं भवेत् ॥३॥

यदि शीत ऋतुमें अत्यन्त गर्मी पड़े और ग्रीष्म ऋतुमें अत्यन्त कड़ाकेकी सर्दी पड़े तो उक्त घटनाके नौ महीने या दश महीनेके उपरान्त महान् भय होता है ॥३॥

सप्ताहमष्टरात्रं वा[3] नवरात्रं दशाह्निकम् ।
यदा निपतते वर्षं प्रधानस्य वधाय तत् ॥४॥

यदि वर्षा सात दिन और आठ रात अथवा नौ रात्रि और दश दिन तक हो तो प्रधान–राजा या मन्त्रीका वध होता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा लगातार सात दिन और आठ रात अर्थात् दिनसे आरम्भ होकर आठवीं रातमें समाप्त हो या नौ रात और दस दिन अर्थात्-रातसे आरम्भ होकर दशवें दिन समाप्त हो तो प्रधानका वध होता है ॥४॥

पक्षिणश्च यदा मत्ता पशवश्च पृथग्विधाः ।
विपर्ययेण संसक्ता विन्द्याद् जनपदे भयम् ॥५॥

यदि पक्षी मत्त–पागल और पशु भिन्न स्वभावके हो जायँ तथा विपर्यय—विपरीत जाति, गुण, धर्मवालोंका संयोग हो अर्थात् पशु पक्षियोंसे मिलें, पक्षी पशुओंसे अथवा गाय आदि पशु भी भिन्न स्वभाववालोंसे संयोग करें तो राष्ट्रमें भय—आतङ्क व्याप्त हो जाता है ॥५॥

आरण्या ग्राममायान्ति वनं गच्छन्ति नागराः ।
रुदन्ति चाथ जल्पन्ति तदापायाय[4] कल्पते ॥६॥
अष्टादशेषु[5] मासेषु तथा सप्तदशेषु च ।
राजा च म्रियते तत्र भयं रोगश्च जायते ॥७॥

१. शुभाऽशुभान् समुत्पातान् मु० । २. स उत्पातः मु० । ३. वा मु० । ४. पापाय मु० । ५. अष्टादशस्य मासस्य तथा सप्तदशस्य च ।

जंगली पशु गाँवमें आवें और ग्रामीण पशु जंगल को जायें, रुदन करें और शब्द करें तो जनपदके पापका उदय समझना चाहिए। इस पापके फलसे अठारह महीनोंमें या सत्रह महीनोंमें राजाका मरण होता है और उस जनपदमें भय एवं रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अर्थात् उस जनपदमें सभी प्रकारका कष्ट व्याप्त हो जाता है ॥६-७॥

स्थिराणां कम्पसरणे चलानां [1]गमने तथा।
ब्रूयात् तत्र वधं राज्ञः षण्मासात् पुत्रमन्त्रिणः ॥८॥

स्थिर पदार्थ—जड़-चेतनात्मक स्थिर पदार्थ काँपने लगें—चंचल हो जायें और चंचल पदार्थोंकी गति रुक जाय—स्थिर हो जायँ तो इस घटनाके छः महीनेके उपरान्त राजा एवं मंत्री-पुत्रका वध होता है ॥८॥

[2]सर्पणे हसने चापि [3]क्रन्दने युद्धसम्भवे।
स्थावराणां वधं विन्द्यात्त्रिमासं [4]नात्र संशयः ॥९॥

युद्धकालमें अकारण चलने, हँसने और रोने-कलपने से तीन महीनेके उपरान्त स्थावर—यहाँके निवासियोंका निस्सन्देह वध होता है ॥९॥

पक्षिणः पशवो मर्त्याः प्रसूयन्ति [5]विपर्ययात्।
यदा तदा तु षण्मासाद् [6]भूयात् राजवधो ध्रुवम् ॥१०॥

यदि पक्षी, पशु और मनुष्य विपर्यय—विपरीत सन्तान उत्पन्न करें अर्थात् पक्षियोंके पशु या मनुष्यकी आकृतिकी सन्तान उत्पन्न हो, पशुओंके पक्षी या मनुष्यकी आकृतिकी सन्तान उत्पन्न हो और मनुष्योंके पशु या पक्षीकी आकृतिकी सन्तान उत्पन्न हो तो इस घटनाके छः महीनेके उपरान्त राजाका वध होता है और उस जनपदमें भय—आतङ्क व्याप्त हो जाता है ॥१०॥

विकृतैः पाणिपादाद्यैर्न्यूनैश्चाप्यधिकैस्तथा।
यदा त्वेते प्रसूयन्ति क्षुद्भयानि तदादिशेत् ॥११॥

विकृत हाथ, पैर वाली अथवा न्यून या अधिक हाथ, पैर, सिर, आँख वाली सन्तान पशु-पक्षी और मनुष्योंके उत्पन्न हो तो क्षुधाकी पीड़ा और भय—आतंक आदि होनेकी सूचना अवगत करनी चाहिए ॥११॥

षण्मासं द्विगुणं चापि परं वाथ चतुर्गुणम्।
राजा च म्रियते तत्र भयानि च न संशयः ॥१२॥

जहाँ उक्त प्रकारकी घटना घटित होती है, वहाँ छः महीना, एक वर्ष और दो वर्षके उपरान्त राजाकी मृत्यु एवं निस्सन्देह भय होता है ॥१२॥

मद्यानि रुधिरास्थीनि धान्याङ्गारवसास्तथा।
मघवान् वर्षते यत्र तत्र विन्द्यात् महद्भयम् ॥१३॥

जहाँ मेघ मद्य, रुधिर, हड्डी, अग्नि चिनगारियाँ और चर्बीकी वर्षा करते हैं वहाँ चार प्रकारका भय होता है ॥१३॥

१. गमने हि मु०। २. दर्पेण मु०। ३. क्रन्दनं मु०। ४. स्थावरात्मकम् मु०। ५. विपर्ययैः मु०। ६. भय राजवधस्तदा मु०। ७. मेघो वा वर्षते यत्र भयं विद्यात्चतुर्विधम्।

[1]सरीसृपा जलचराः पक्षिणो द्विपदास्तथा ।
[2]वर्षमाणा जलधरात् तदाख्याति महाभयम् ॥१४॥

जहाँ मेघोंसे सरीसृप—रीढवाले सर्पादि जन्तु, जलचर—मेढक, मछली आदि एवं द्विपद पक्षियोंकी वर्षा हो, वहां घोर भयकी सूचना समझनी चाहिए ॥१४॥

निरिन्धनो यदा चाग्नि[3]र्दीप्यते सततं पुरे ।
स राजा नश्यते देशाच्छण्मासात् परतस्तदा ॥१५॥

यदि राजा नगरमें निरन्तर बिना ईंधनके अग्निको प्रज्वलित होते हुए देखे तो वह राजा छः महीनेके उपरान्त—उक्त घटनाके देखनेके छः महीने पश्चात् विनाशको प्राप्त हो जाता है ॥१५॥

दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि वस्त्राण्यश्वा नरा गजाः ।
वर्षे च म्रियते राजा देशस्य च महद्भयम् ॥१६॥

जहाँ शस्त्र, वस्त्र, अश्व—घोड़ा, मनुष्य और हाथी आदि जलते हुए दिखलाई पड़े वहाँ इस घटनाके पश्चात् एक वर्षमें राजाका मरण हो जाता है और देशके लिए महान् भय होता है ॥१६॥

चैत्य[4]वृक्षा रसान् यद्वत् [5]प्रस्रवन्ति विपर्ययात् ।
समस्ता यदि वा व्यस्तास्तदा [6]देशे भयं वदेत् ॥१७॥

यदि चैत्य वृक्ष—गूलरके वृक्षोंसे विपर्यय रस टपके अथवा चैत्यालयके समस्त स्थित वृक्षोंमेंसे सभीसे या पृथक्-पृथक् वृक्षसे विपरीत रस टपके अर्थात् जिस वृक्षसे जिस प्रकारका रस निकलता है, उससे भिन्न प्रकारका रस निकले तो जनपदके लिए भयका आगमन समझना चाहिए ॥१७॥

दधि क्षौद्रं घृतं तोयं दुग्धं रेतविमिश्रितम् ।
[7]प्रस्रवन्ति यदा वृक्षास्तदा व्याधिभयं भवेत्[8] ॥१८॥

जब वृक्षोंसे दही, शहद, घी, जल, दूध और वीर्य मिश्रित रस निकले तब जनपदके लिए व्याधि और भय समझना चाहिए ॥१८॥

रक्ते [9]पुत्रभयं [10]विन्द्यात् नीले श्रेष्ठिभयं [11]तथा ।
अन्येष्वेषु विचित्रेषु वृक्षेषु तु भयं विदुः ॥१९॥

यदि लाल रंगका रस निकले तो पुत्रको भय, नील रंगका रस निकले तो सेठोंको भय, और अन्य विचित्र प्रकारका रस निकले तो जनपदको भय होता है ॥१९॥

१. सरीसृपाः मु० । २. वर्षमाणे जलं हन्याद् भयमाख्याति दारुणम् म० । ३. भिद्यते मु० । ४. वृक्षरसा मु० । ५. प्रभवन्ति मु० । ६. विन्द्याद्भयागमम् मु० । ७. निस्रवन्ति मु० । ८. विदुः मु० । ९. शत्रु मु० । १०. विन्द्यात् मु० । ११. विदुः मु० ।

विस्वरं रवमानस्तु चैत्यवृक्षो [1]यदा पतेत् ।
[2]सततो भयमाख्याति देशजं पञ्चमासिकम् ॥२०॥

यदि चैत्य वृक्ष—चैत्यालयके समक्ष स्थित वृक्ष अथवा गूलरका वृक्ष विकृत आवाज करता हुआ गिरे तो देश-निवासियोंके लिए पञ्चमासिक-पाँच महीनोंके लिए भय होता है ॥२०॥

नानावस्त्रैः समाच्छन्ना [3]दृश्यन्ते चैव यद् द्रुमाः ।
राष्ट्रजं तद्भयं विन्याद् विशेषेण तदा विषे ॥२१॥

यदि नाना प्रकारके वस्त्रोंसे युक्त वृक्ष दिखलाई पड़ें तो राष्ट्रके निवासियोंको भय होता है तथा विशेष रूपसे देशके लिए भय समझना चाहिए ॥२१॥

शुक्लवस्त्रो द्विजान् हन्ति रक्तः क्षत्रं तदाश्रयम् ।
पीतवस्त्रो यदा व्याधिं तदा च वैश्यघातकः ॥२२॥

यदि वृक्ष श्वेत वस्त्रसे युक्त दिखलाई पड़े तो ब्राह्मणोंका विनाश, रक्त वस्त्रसे युक्त दिखलाई पड़े तो क्षत्रियोंका विनाश और पीत वस्त्रसे युक्त दिखलाई पड़े तो व्याधि उत्पन्न होती है और वैश्योंके लिए विनाशक हैं ॥२२॥

[4]नीलवस्त्रैस्तथा श्रेणीन् कपिलैर्म्लेच्छमण्डलम् ।
धूम्रैर्निहन्ति श्वपचान् चाण्डालानप्यसंशयः ॥२३॥

नील वर्णके वस्त्रसे युक्त वृक्ष दिखलाई पड़े तो अश्रेणी—शूद्रादि निम्न वर्गके व्यक्तियोंका विनाश, कपिल वर्णके वस्त्रसे युक्त दिखलाई पड़ें तो म्लेच्छ—यवनादिका विनाश, धूम्रवर्णके वस्त्रसे युक्त दिखलाई पड़े तो श्वपच—चाण्डाल डोमादिका विनाश होता है ॥२३॥

मधुराः क्षीरवृक्षाश्च [5]श्वेतपुष्पफलाश्च ये ।
सौम्यायां दिशि यज्ञार्थं जानीयात् प्रतिपुद्गलाः ॥२४॥

जो मधुर, क्षीरवृक्ष, श्वेत पुष्प और फलोंसे युक्त उत्तर दिशामें होते हैं, वे यज्ञके लिए उत्पातके फलकी सूचना देते हैं। अर्थात्, दक्षिण दिशामें मधुर, क्षीर वृक्ष श्वेत पुष्प और फलोंसे युक्त ब्राह्मणोंके लिए उत्पातकी सूचना देते हैं ॥२४॥

कषायमधुरास्तिक्ता उष्णवीर्यविलासिनः ।
रक्तपुष्पफलाः प्राच्यां सुदीर्घनृपक्षत्रयोः ॥२५॥

कषाय, मधुर, तिक्त, उष्णवीर्य, विलासी, लाल पुष्प और फलवाले वृक्ष पूर्व दिशामें बलवान् राजा और क्षत्रियोंके लिए प्रतिपुद्गल—उत्पात सूचक हैं ॥२५॥

अम्लाः सलवणाः स्निग्धाः पीतपुष्पफलाश्च ये ।
[6]दक्षिण दिशि विज्ञेया वैश्यानां प्रतिपुद्गलाः ॥२६॥

आम्ल, लवणयुक्त, स्निग्ध, पीत पुष्प और फलवाले वृक्ष दक्षिण दिशामें वैश्योंके लिए उत्पात सूचक हैं ॥२६॥

---

१. यतः मु० । २. सतो भयं समाख्याति मु० । ३. यदा दृश्यन्ते वैद्रुमाः मु० । ४. नीलवस्त्रो निहन्त्याशु शूद्रांश्च प्रभृतिनाशनम् । पशुरविमयं चित्रं चित्रैः धूम्रैश्वपचः ॥ मु० । ५. कषायाश्च तु मु० । ६. दक्षिणो मु० ।

[1]सरीसृपा जलचराः पक्षिणो द्विपदास्तथा ।
[2]वर्षमाणा जलधरात् तदाख्याति महाभयम् ॥१४॥

जहाँ मेघोंसे सरीसृप—रीढवाले सर्पादि जन्तु, जलचर—मेढक, मछली आदि एवं द्विपद पक्षियोंकी वर्षा हो, वहां घोर भयकी सूचना समझनी चाहिए ॥१४॥

निरिन्धनो यदा चाग्निर्[3]दीप्यते सततं पुरे ।
स राजा नश्यते देशाच्छण्मासात् परतस्तदा ॥१५॥

यदि राजा नगरमें निरन्तर बिना ईंधनके अग्निको प्रज्वलित होते हुए देखे तो वह राजा छः महीनेके उपरान्त—उक्त घटनाके देखनेके छः महीने पश्चात् विनाशको प्राप्त हो जाता है ॥१५॥

दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि वस्त्राण्यश्वा नरा गजाः ।
वर्षे च म्रियते राजा देशस्य च महद्भयम् ॥१६॥

जहाँ शस्त्र, वस्त्र, अश्व—घोड़ा, मनुष्य और हाथी आदि जलते हुए दिखलाई पड़े वहाँ इस घटनाके पश्चात् एक वर्षमें राजाका मरण हो जाता है और देशके लिए महान् भय होता है ॥१६॥

चैत्य[4]वृक्षा रसान् यद्वत् [5]प्रस्रवन्ति विपर्ययात् ।
समस्ता यदि वा व्यस्तास्तदा [6]देशे भयं वदेत् ॥१७॥

यदि चैत्य वृक्ष—गूलरके वृक्षोंसे विपर्यय रस टपके अथवा चैत्यालयके समस्त स्थित वृक्षोंमेंसे सभीसे या पृथक्-पृथक् वृक्षसे विपरीत रस टपके अर्थात् जिस वृक्षसे जिस प्रकारका रस निकलता है, उससे भिन्न प्रकारका रस निकले तो जनपद्के लिए भयका आगमन समझना चाहिए ॥१७॥

दधि क्षौद्रं घृतं तोयं दुग्धं रेतविमिश्रितम् ।
[7]प्रस्रवन्ति यदा वृक्षास्तदा व्याधिभयं भवेत् ॥१८॥

जब वृक्षोंसे दही, शहद, घी, जल, दूध और वीर्य मिश्रित रस निकले तब जनपद्के लिए व्याधि और भय समझना चाहिए ॥१८॥

रक्ते [9]पुत्रभयं [10]विन्द्यात् नीले श्रेष्ठिभयं [11]तथा ।
अन्येष्वेषु विचित्रेषु वृक्षेषु तु भयं विदुः ॥१९॥

यदि लाल रंगका रस निकले तो पुत्रको भय, नील रंगका रस निकले तो सेठोंको भय, और अन्य विचित्र प्रकारका रस निकले तो जनपद्को भय होता है ॥१९॥

---

१. सरीसृपाः मु० । २. वर्षमाणे जलं इन्याद् भयमाख्याति दारुणम् म० । ३. भिद्यते मु० । ४ वृक्षरसा मु० । ५. प्रभवन्ति मु० । ६. विन्द्यादभयागमम् मु० । ७. निस्रवन्ति मु० । ८. विदुः मु० । ९. शत्रु मु० । १०. विन्द्यात् मु० । ११. विदुः मु० ।

वृद्धा द्रुमा [1]स्रवन्त्याशु मरणे पर्युपस्थिताः ।
ऊर्ध्वाः शुष्का भवन्त्येते तस्मात् तांल्लक्षयेद् बुधः ॥३४॥

मरणके लिए उपस्थित—जर्जरित टूटकर गिरनेवाले पुराने वृक्ष शीघ्र ही रसका क्षरण करते हैं। ऊपरकी ओर ये सूखे होते हैं। अतएव बुद्धिमान् व्यक्तियोंको इनका लक्ष्य करना चाहिए ॥३४॥

यथा वृद्धो नरः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ।
तथा वृद्धो द्रुमः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ॥३५॥

जैसे कोई वृद्ध पुरुष किसी निमित्तके मिलते ही मरणको प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुराना वृक्ष भी किसी निमित्तको प्राप्त होते ही विनाशको प्राप्त हो जाता है ॥३५॥

इतरेतरयोगास्तु वृक्षादिवर्णनामभिः ।
वृद्धापलोग्रमूलाश्च चलच्छैर्याश्च साधयेत् ॥३६॥

वृद्ध पुरुष और पुराने वृक्षका परस्परमें इतरेतर—अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। अतः पुराने वृक्षके उत्पातोंसे वृद्धका फल तथा नवीन युवक वृक्षोंसे युवक और शिशुओंका उत्पात निमित्तक फल ज्ञात करना चाहिए। तथा उल्कापात आदिके द्वारा भी निमित्तोंका परिज्ञान करना चाहिए ॥३६॥

हसने रोदने नृत्ये देवतानां प्रसर्पणे ।
महद्भयं विजानीयात् [2]षण्मासाद्द्विगुणात्परम् ॥३७॥

देवताओंके हँसने, रोने, नृत्य करने और चलनेसे छः महीनेसे लेकर एक वर्षतक जनपद के लिए महान् भय अवगत करना चाहिए ॥३७॥

चित्राश्चर्यसुलिङ्गानि निमीलन्ति वदन्ति वा ।
ज्वलन्ति च विगन्धीनि भयं राजवधोद्भवम् ॥३८॥

विचित्र, आश्चर्य कार्य चिह्न लुप्त हों या प्रकट हों और हिंगुट वृक्ष सहसा जलने लगे तो जनपदके लिए भय और राजाका मरण होता है ॥३८॥

[3]तोयावहानि सहसा रुदन्ति च हसन्ति च ।
मार्जारवच्च वासन्ति तत्र विन्द्याद् महद्भयम् ॥३९॥

तोयावहानि—नदियाँ सहसा रोती और हँसती हुई दिखलाई पड़ें तथा मार्जार-बिल्लीके समान गन्ध आती हो तो महान् भय समझना चाहिए ॥३९॥

वादित्रशब्दाः श्रूयन्ते देशे यस्मिन्न मानुषैः ।
स देशो राजदण्डेन पीड्यते नात्र संशयः ॥४०॥

जिस देशमें मनुष्य बिना किसीके बजाये भी बाजेकी आवाज सुनते हैं, वह देश राजाके दण्डसे पीड़ित होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥४०॥

---

१. निहन्त्याशु मु० । २. षण्मासात्रिगुणो परान् । ३. तोयधान्यानि मु० ।

कटुकण्टकिनो रूक्षाः कृष्णपुष्पफलाश्च ये ।
वारुण्यां दिशि वृक्षाः स्युः शूद्राणां प्रतिपुद्गलाः ॥२७॥

कटु, काँटोंवाले, रूक्ष, काले रंगके फूल-फलवाले वृक्ष पश्चिम दिशा शूद्रोंके लिए उत्पात सूचक हैं ॥२७॥

[1]महान्तश्चतुरस्राश्च गाढाश्चापि विशेषिणः ।
वनमध्ये स्थिताः सन्तः स्थावराः प्रतिपुद्गलाः ॥२८॥

महान् चौकोर, और विशेषरूपसे गाढ़—मजबूत और वनके मध्यमें स्थित वृक्ष स्थावरों-वहाँके निवासियोंके लिए उत्पात सूचक होते हैं ॥२८॥

ह्रस्वाश्च तरवो येऽन्ये अन्त्ये जाता वनस्य च ।
अचिरोद्भवकारा ये यायिनां प्रतिपुद्गलाः ॥२९॥

छोटे वृक्ष और जो अन्य वृक्ष वनके अन्तमें उत्पन्न हुए हैं एवं शीघ्र ही उत्पन्न हुए वृक्षों का जिनका आकार है अर्थात् जो छोटे-छोटे है, वे यायी—आक्रमण करनेवालोंके लिए उत्पात सूचक हैं ॥२९॥

ये विदिक्षु विमिश्राश्च [2]विकर्मस्था विजातिषु ।
[3]प्रतिपुद्गलाश्च येषां तेषामुत्पातजं फलम् ॥३०॥

जो विदिशाओंमें अलग-अलग हों तथा विजाति—भिन्न-भिन्न जातिके वृक्षोंमे विकर्मस्थ—जिनके कार्य पृथक् पृथक् हों वे जनपद के लिए उत्पात सूचक होते हैं। प्रति पुद्गलका तात्पर्य उत्पातसे होनेवाले फलकी सूचना देते हैं ॥३०॥

श्वेतो [4]रसो द्विजान् हन्ति रक्तः क्षत्रनृपान् वदेत् ।
पीता वैश्यविनाशाय कृष्णः शूद्रनिपूदये ॥३१॥

यदि वृक्षोंसे श्वेतरसका क्षरण हो तो द्विज—ब्राह्मणोंका विनाश, लाल रस क्षरित हो तो क्षत्रिय और राजाओंका विनाश, पीला रस क्षरित हो तो वैश्योंका विनाश और कृष्ण—काला रस क्षरित हो तो शूद्रोंका विनाश होता है ॥३१॥

परचक्रं नृपभयं क्षुधाव्याधिधनक्षयम् ।
एवं लक्षणसंयुक्ताः स्रावाः कुर्युर्महद्भयम् ॥३२॥

यदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्णका मिश्रित रस क्षरित हो तो परशासन और नृपति का भय, क्षुधा, रोग, धनका नाश और महान् भय होता है ॥३२॥

कीटदष्टस्य वृक्षस्य व्याधितस्य च यो रसः ।
विवर्णः स्रवते गन्धं न दोषाय स कल्पते ॥३३॥

यदि कीड़ों द्वारा खाये गए रोगी वृक्षका विकृत और दुर्गन्धित रस क्षरित होता है, तो उनका दोष नहीं माना जाता। अर्थात् रोगी वृक्षके रस क्षरणका विचार नहीं किया जाता ॥३३॥

---

१. महान्तश्चतुरस्राश्च स्वगाढाश्च वरोपिनाः । २. विकर्मसु मु० । ३. पुद्गलाश्च तु ये येषां ते तेषां प्रतिपुद्गलाः मु० । ४. राजा मु० ।

चतुःपदानां सर्वेषां मनुजानां यदाऽम्बरे ।
श्रूयते व्याहृतं घोरं तदा मुख्यो विपद्यते ॥48॥

जब आकाशमें समस्त पशुओं और मनुष्योंका व्यवहार किया गया घोर शब्द सुनाई पड़े तो मुखियाकी मृत्यु होती है अथवा मुखिया विपत्तिको प्राप्त होता है ॥48॥

निर्घाते कम्पने भूमौ [1]शुष्कवृक्षप्ररोहणे ।
देशपीडां विजानीयान्मुख्यश्चात्र न जीवति ॥49॥

भूमिके अकारण निर्घातित और कम्पित होने तथा सूखे वृक्षके पुनः हरे हो जानेसे देशको पीड़ा समझनी चाहिए तथा वहाँके मुखियाकी मृत्यु होती है ॥49॥

[2]यदा भूधरशृङ्गाणि निपतन्ति महीतले ।
तदा राष्ट्रभयं विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥50॥

जब अकारण ही पर्वतोंकी चोटियाँ पृथ्वीतल पर आकर गिर जायँ, तब राष्ट्रभय समझना चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥50॥

वल्मीकस्याशु जनने मनुजस्य निवेशने ।
अरण्यं विशतश्चैव तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥51॥

मनुष्योंके निवासस्थानमें चींटियाँ जल्दी ही अपना बिल बनावें और नगरोंसे निकलकर जंगलमें प्रवेश करें तो राष्ट्रके लिए महान् भय जानना चाहिए ॥51॥

महापिपीलिकावृन्दं सन्द्रकाभृत्यविप्लुतम् ।
तत्र तत्र च सर्वं तद्राष्ट्रभङ्गस्य चादिशेत् ॥52॥

जहाँ-जहाँ अत्यधिक चींटियाँ एकत्रित होकर झुण्ड-के-झुण्ड बनाकर भाग रही हों, वहाँ-वहाँ सर्वत्र राष्ट्र भंगका निर्देश समझना चाहिए ॥52॥

महापिपीलिकाराशिर्विस्फुरन्तो विपद्यते ।
उद्घानुत्तिष्ठते यत्र तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥53॥

जहाँ अत्यधिक चीटियोंका समूह विस्फुरित—काँपते हुए मृत्युको प्राप्त हो और उद्घ—क्षत-विक्षत—घायल होकर स्थित हो, वहाँ महान् भय होता है ॥53॥

श्वश्वपिपीलिकावृन्दं निम्नमूर्द्ध विसर्पति ।
वर्षं तत्र विजानीयाद्भद्रबाहुवचो यथा ॥54॥

जहाँ चीटियाँ रूप बदल कर—पंखवाली होकर नीचेसे ऊपरको जाती हैं, वहाँ वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥54॥

राजोपकरणे भग्ने चलिते पतितेऽपि वा ।
क्रव्यादसेवने चैव राजपीडां समादिशेत् ॥55॥

राजाके उपकरण—छत्र, चमर, मुकुट आदिके भग्न होने, चलित होने या गिरनेसे तथा मांसाहारीके द्वारा सेवा करनेसे राजा पीड़ाको प्राप्त होता है ॥55॥

1. शुक्र मु० । 2. स्थिरां भूमिं प्रयातस्य यद्रामुद्रवतो मजेत् । निमज्जन्ति च चक्राणि तस्य विन्द्यात् महद्भयम् ॥

[1]तोयावहानि सर्वाणि वहन्ति रुधिरं यदा ।
षष्ठे मासे समुद्भूते सङ्ग्रामः शोणिताकुलः ॥४१॥

जिस देशमें नदियोंमें रक्त की सी धारा प्रवाहित होती है, उस देशमें इस घटनाके छठवें महीनेमें संग्राम होता है और पृथ्वी जलसे प्लावित हो जाती है ॥४१॥

चिरस्थायीनि तोयानि [2]पूर्वं यान्ति पयःक्षयम् ।
गच्छन्ति वा प्रतिस्रोतः परचक्रागमस्तदा ॥४२॥

चिरस्थायी नदियोंका जल जब पूर्ण क्षय हो जाय—सूख जाय अथवा विपरीत धारा प्रवाहित होने लगे तो परशासनका आगमन होता है ॥४२॥

वर्धन्ते चापि शीर्यन्ते चलन्ते वा तदाश्रयात् ।
सशोणितानि दृश्यन्ते यत्र तत्र महद्भयम् ॥४३॥

जहाँ नदियाँ बढ़ती हों, विशीर्ण होती हों अथवा चलती हों और रक्त युक्त दिखलाई पड़ती हों, वहाँ महान् भय समझना चाहिए ॥४३॥

शस्त्रकोपात् प्रधावन्ते नदन्ति विचरन्ति वा ।
यदा रुदन्ति दीप्यन्ति संग्रामस्तेषु निर्दिशेत् ॥४४॥

जहाँ अस्त्र अपने कोशसे बाहर निकलते हों, शब्द करते हों, विचरण करते हों, रोते हों और दीप्त—चमकते हों, वहाँ संग्रामकी सूचना समझनी चाहिए ॥४४॥

यानानि वृक्षवेश्मानि धूमायन्ति ज्वलन्ति वा ।
अकालजं फलं पुष्पं तत्र मुख्यो विनश्यति ॥४५॥

जहाँ सवारी, वृक्ष और घर धूमायमान—धुँआ युक्त या जलते हुए दिखलाई पड़ें अथवा वृक्षोंमें असमयमें फल, पुष्प उत्पन्न हों, वहाँ मुख्य—प्रधानका नाश होता है ॥४५॥

भवने यदि श्रूयन्ते गीतवादित्रनिस्वनाः ।
यस्य तद्भवनं तस्य शारीरं जायते भयम् ॥४६॥

जिसके घरमें बिना किसी व्यक्तिके द्वारा गाये-बजाये जाने पर भी गीत, वादित्रका शब्द सुनाई पड़ता हो, उसके शारीरिक भय होता है ॥४६॥

[3]पुष्पं पुष्पे निबध्येत फलेन च यदा फलम् ।
वितथं च तदा [4]विन्द्यात् महज्जनपदक्षयम् ॥४७॥

जब पुष्पमें पुष्प निबद्ध हो अर्थात् पुष्पमें पुष्पकी ही उत्पत्ति हुई हो अथवा फलमें फल निबद्ध हो अर्थात् फलसे फलकी उत्पत्ति हुई हो तो सर्वत्र वितण्डावादका प्रचार एवं जनपदका महान् विनाश होता है ॥४७॥

१. तोयधान्यानि मु० । २. पूर्णं मु० । ३. पुष्पे पुष्पं फले पुष्पं फले वा विफलं यदा, मु० । ४. वपने वितथं विन्द्यात्तथा जनपदे भयम्, मु० ।

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिदुदीर्यते।
मारकः सिन्धुसौवीरसुराष्ट्रवत्सभूमिषु ॥६४॥
भोजनेषु[1] भयं विन्द्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः।
पञ्चमासात् परं विन्द्याद् भयं घोरमुपस्थितम् ॥६५॥

यदि चन्द्रमा या वरुणमें कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो सिन्धुदेश, सौवीरदेश, सौराष्ट्र—गुजरात और वत्सभूमिमें मरण होता है। भोजन सामग्रीमें भय रहता है और राजाका मरण पूर्वमें ही हो जाता है। पाँच महीनेके उपरान्त वहाँ घोर भयका संचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है ॥६४-६५॥

रुद्रे च वरुणे[2] कश्चिदुत्पातसमुदीर्यते।
सप्तपक्षं भयं विन्द्याद् ब्राह्मणानां न संशयः ॥६६॥

शिवजी और वरुणदेवकी प्रतिमामें यदि किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलाई पड़े तो वहाँ ब्राह्मणोंके लिए सात पक्ष अर्थात् तीन महीना पन्द्रह दिनका भय समझना चाहिए, इसमें किसी भी प्रकारका सन्देह नहीं है ॥६६॥

इन्द्रस्य प्रतिमायां तु यद्युत्पातः प्रदृश्यते।
संग्रामे त्रिषु मासेषु राज्ञः सेनापतेर्वधः ॥६७॥

यदि चन्द्रकी प्रतिमामें कोई भी उत्पात दिखलायी पड़े तो तीन महीनेमें संग्राम होता है और राजा या सेनापतिका वध होता है ॥६७॥

यद्युत्पातो बलन्देवे तस्योपकरणेषु च।
महाराष्ट्रान् महायोद्धान् सप्तमासान् प्रपीडयेत् ॥६८॥

यदि बलदेवकी प्रतिमा या उसके उपकरणों—छत्र, चमर आदिमें किसीभी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो सात महीनों तक महाराष्ट्रके महान् योद्धाओंको पीड़ा होती है ॥६८॥

वासुदेवे यद्युत्पातस्तस्योपकरणेषु च।
चक्रारूढाः प्रजा ज्ञेयाश्चतुर्मासान् वधो नृपे ॥६९॥

वासुदेवकी प्रतिमा उसके उपकरणोंमें किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलाई पड़े तो प्रजा चक्रारूढ—षड्यन्त्रमें तल्लीन रहती है और चार महीनोंमें राजाका वध होता है ॥६९॥

प्रद्युम्ने वाऽथ उत्पातो गणिकानां भयावहः।
[3]कुशीलानां च द्रष्टव्यं भयं चेद्वाऽष्टमासिकम् ॥७०॥

प्रद्युम्नकी मूर्तिमें किसी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो वेश्याओंके लिए अत्यन्त भयकारक होता है और कुशील व्यक्तियोंके लिए आठ महीनों तक भय रहता है ॥७०॥

यदार्यप्रतिमायां तु किञ्चिदुत्पातजं भवेत्।
चौरा मासा त्रिपक्षाद्वा विलीयन्ति [4]रुदन्ति वा ॥७१॥

यदि सूर्यकी प्रतिमामें कुछ उत्पात हो तो एक महीने या तीन पक्ष—डेढ़ महीनेमें चोर विलीन हो जाते—नष्ट हो जाते हैं या विलाप करते हुए दुःखको प्राप्त होते हैं ॥७१॥

---

१. भोजेषु च मु०। २. नृपे मु०। ३. विशालायां मु०। ४. रजन्ति मु०।

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिदुदीर्यते ।
मारकः सिन्धुसौवीरसुराष्ट्रवत्सभूमिषु ॥६४॥
भोजनेषु[1] भयं विन्द्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः ।
पञ्चमासात् परं विन्द्याद् भयं घोरमुपस्थितम् ॥६५॥

यदि चन्द्रमा या वरुणमें कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो सिन्धुदेश, सौवीरदेश, सौराष्ट्र—गुजरात और वत्सभूमिमें मरण होता है। भोजन सामग्रीमें भय रहता है और राजाका मरण पूर्वमें ही हो जाता है। पाँच महीनेके उपरान्त वहाँ घोर भयका संचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है ॥६४-६५॥

रुद्रे च वरुणे कश्चिदुत्पातसमुदीर्यते ।
सप्तपक्षं भयं विन्द्याद् ब्राह्मणानां न संशयः ॥६६॥

शिवजी और वरुणदेवकी प्रतिमामें यदि किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलाई पड़े तो वहाँ ब्राह्मणोंके लिए सात पक्ष अर्थात् तीन महीना पन्द्रह दिनका भय समझना चाहिए, इसमें किसी भी प्रकारका सन्देह नहीं है ॥६६॥

इन्द्रस्य प्रतिमायां तु यद्युत्पातः प्रदृश्यते ।
संग्रामे त्रिषु मासेषु राज्ञः सेनापतेर्वधः ॥६७॥

यदि चन्द्रकी प्रतिमामें कोई भी उत्पात दिखलायी पड़े तो तीन महीनेमें संग्राम होता है और राजा या सेनापतिका वध होता है ॥६७॥

यद्युत्पातो बलन्देवे तस्योपकरणेषु च ।
महाराष्ट्रान् महायोद्धान् सप्तमासान् प्रपीडयेत् ॥६८॥

यदि बलदेवकी प्रतिमा या उसके उपकरणों—छत्र, चमर आदिमें किसीभी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो सात महीनों तक महाराष्ट्रके महान् योद्धाओंको पीड़ा होती है ॥६८॥

वासुदेवे यद्युत्पातस्तस्योपकरणेषु च ।
चक्रारूढाः प्रजा ज्ञेयाश्चतुर्मासान् वधो नृपे[2] ॥६९॥

वासुदेवकी प्रतिमा उसके उपकरणोंमें किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलाई पड़े तो प्रजा चक्रारूढ—षड्यन्त्रमें तल्लीन रहती है और चार महीनोंमें राजाका वध होता है ॥६९॥

प्रद्युम्ने वाऽथ उत्पातो गणिकानां भयावहः ।
[3]कुशीलानां च द्रष्टव्यं भयं चेद्वाऽष्टमासिकम् ॥७०॥

प्रद्युम्नकी मूर्तिमें किसी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो वेश्याओंके लिए अत्यन्त भय कारक होता है और कुशील व्यक्तियोंके लिए आठ महीनों तक भय रहता है ॥७०॥

यदार्यप्रतिमायां तु किञ्चिदुत्पातजं भवेत् ।
चौरा मासा त्रिपक्षाद्वा विलीयन्ति [4]रुदन्ति वा ॥७१॥

यदि सूर्यकी प्रतिमामें कुछ उत्पात हो तो एक महीने या तीन पक्ष—डेढ़ महीनेमें चोर विलीन हो जाते—नष्ट हो जाते हैं या विलाप करते हुए दुःखको प्राप्त होते हैं ॥७१॥

---

१. भोजेषु च मु० । २. नृणे मु० । ३. विशालायां मु० । ४. रजन्ति मु० ।

यद्युत्पातः श्रियाः कश्चित् त्रिमासात् कुरुते फलम् ।
वणिजां पुष्पबीजानां वनितालेख्यजीविनाम् ॥७२॥

यदि लक्ष्मीकी मूर्त्तिमें उत्पात हो तो इस उत्पातका फल तीन महीनेमें प्राप्त होता है और वैश्य—व्यापारीवर्ग, पुष्प, बीज और लिखकर आजीविका करनेवालोंकी स्त्रियोंको कष्ट होता है ॥७२॥

वीरस्थाने श्मशाने च यद्युत्पातः समीर्यते ।
चतुर्मासान् क्षुधामारी पीड्यन्ते च यतस्ततः ॥७३॥

वीरभूमि या श्मशानभूमिमें यदि उत्पात दिखलायी पड़े तो चार महीने तक क्षुधामारी-भुखमरीसे इधर-उधरकी समस्त जनता पीड़ित होती है ॥७३॥

यद्युत्पातः प्रदृश्यते विश्वकर्मणि माश्रितः ।
पीड्यन्ते शिल्पिनः सर्वे पञ्चमासात्परं भयम् ॥७४॥

यदि विश्वकर्मामे किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो सभी शिल्पियोंको पीड़ा होती है और इस उत्पातके पाँच महीनेके उपरान्त भय होता है ॥७४॥

भद्रकाली विकुर्वन्ती स्त्रियो हन्तीह सुव्रताः ।
आत्मानं वृत्तिनो ये च षण्मासात् पीडयेत् प्रजाम् ॥७५॥

यदि भद्रकालीकी प्रतिमामें विकार—उत्पात हो तो व्रती स्त्रियोंका नाश होता है और इस उत्पातके छः महीने पश्चात् प्रजाको पीडा होती है ॥७५॥

इन्द्राण्याः समुत्पातः कुमार्यः परिपीडयेत् ।
त्रिपक्षादक्षिरोगेण कुक्षिकर्णशिरोज्वरैः ॥७६॥

यदि इन्द्राणीकी मूर्त्तिमें उत्पात हो तो कुमारियोंको तीन पक्ष—डेढ़ महीनेके उपरान्त नेत्ररोग, कुक्षिरोग, कर्णरोग, शिररोग और ज्वरकी पीड़ासे पीड़ित होना पड़ता है—कष्ट होता है ॥७६॥

धन्वन्तरे समुत्पातो वैद्यानां स भयङ्करः ।
षाण्मासिकविकारांश्च रोगजान् जनयेन्नृणाम् ॥७७॥

धन्वन्तरिको प्रतिमामें उत्पात हो तो वैद्यको अत्यन्त भयंकर उत्पात होता है और छः महीने तक मनुष्योंको विकार और रोग उत्पन्न होते हैं ॥७७॥

जामदग्ने यदा रामे विकारः कश्चिदीर्यते ।
तापसांश्च तपाट्यांश्च त्रिपक्षेण जिघांसति ॥७८॥

परशुराम या रामचन्द्रकी प्रतिमामें विकार दिखलायी पड़े तो तपस्वी और तप आरम्भ करने वालोंका तीन पक्षमें विनाश होता है ॥७८॥

१. मनविरचयं मु० । २. भद्रशाल्यां मु० ।

पञ्चविंशतिरात्रेण कबन्धं यदि दृश्यते ।
सन्ध्यायां भयमाख्याति महापुरुषविद्रवम् ॥७९॥

यदि सन्ध्याकालमें कबन्ध धड़ दिखलायी पड़े तो पच्चीस रात्रियों तक भय रहता है तथा किसी महापुरुषका विद्रवण–विनाश और भलापन होता है ॥७९॥

सुलसायां यदोत्पातः षण्मासं सर्पिजीविनः ।
पीडयेद् गरुडे यस्य वासुकास्तिकभक्तिषु ॥८०॥

यदि सुलसाकी मूर्त्तिमें उत्पात दिखलायी पड़े तो सर्पजीवियों—सपहेरों आदिके छः महीनों तक पीड़ा होती है और गरुडकी मूर्त्तिमें उत्पात दिखलायी पड़े तो वासुकीमें श्रद्धाभाव और भक्ति करने वालोंको कष्ट होता है ॥८०॥

भूतेषु यः समुत्पातः सदैव परिचारिकाः ।
मासेन पीडयेत्तूर्णं निर्ग्रन्थवचनं यथा ॥८१॥

भूतोंकी मूर्त्तिमें उत्पात दिखलायी पड़े तो परिचारिकाओं—दासियोंको सदा पीड़ा होती है और इस उत्पात-दर्शनके एक महीने तक अधिक पीड़ा रहती है, ऐसा निर्ग्रन्थ गुरुओंका वचन है ॥८१॥

अर्हत्सु वरुणे रुद्रे ग्रहे शुक्रे नृपे भवेत् ।
पञ्चालगुरुशुक्रेषु पावकेषु पुरोहिते ॥८२॥
वातेऽग्नौ वासुभद्रे च विश्वकर्मप्रजापतौ ।
सर्वस्य तद् विजानीयात् वक्ष्ये सामान्यजं फलम् ॥८३॥

अर्हन्त प्रतिमा, वरुणप्रतिमा, रुद्रप्रतिमा, सूर्यादिग्रहोंकी प्रतिमाओं, शुक्रप्रतिमा, द्रोणप्रतिमा, इन्द्रप्रतिमा, अग्निपुरोहित, वायु, अग्नि, समुद्र, विश्वकर्मा, प्रजापतिकी प्रतिमाओंके विकार उत्पातका फल सामान्य ही अवगत करना चाहिए ॥८२–८३॥

चन्द्रस्य वरुणस्यापि रुद्रस्य च वधूषु च ।
समाहारे यदोत्पातो राजाग्रमहिषीभयम् ॥८४॥

चन्द्रमा, वरुण, शिव और पार्वतीकी प्रतिमाओंमें उत्पात हो तो राजाकी पट्टरानीको भय होता है ॥८४॥

कामजस्य यदा भार्या या चान्याः केवलाः स्त्रियाः ।
कुर्वन्ति किञ्चिद् विकृतं प्रधानस्त्रीषु तद्भयम् ॥८५॥

यदि कामदेवकी स्त्री रतिकी प्रतिमा अथवा अन्य किसी भी स्त्रीकी प्रतिमामें उत्पात दिखलायी पड़े तो प्रधान स्त्रियोंमें भयका संचार होता है ॥८५॥

एवं देशे च जातौ च कुले पाखण्डिभक्तिषु ।
तज्जातिप्रतिरूपेण स्वैः स्वैर्देवैः शुभं वदेत् ॥८६॥

इस प्रकार जाति, देश, कुल और धर्मकी उपासना आदिके अनुसार अपने-अपने आराध्य देवकी प्रतिमाके विकार–उत्पातसे अपना-अपना शुभाशुभ फल ज्ञात करना चाहिए ॥८६॥

१. मा मु० । २. स महाराजमुत्पातो राजाग्रमहिषीषु च । ३. पृका यस्य मु० ।

उद्गच्छमानः सविता पूर्वतो विकृतो यदा ।
स्थावरस्य विनाशाय पृष्ठतो यायिनाशनः ॥८७॥

यदि उदय होता हुआ सूर्य पूर्व दिशामें—सम्मुख विकृत उत्पात युक्त दिखलायी पड़े तो स्थावर निवासी राजाको और पीछेकी ओर विकृत दिखलायी पड़े तो यायी आक्रमक राजाके विनाशका सूचक होता है ॥८७॥

हेमवर्णः सुतोयाय मधुवर्णो भयङ्करः ।
शुक्ले च सूर्यवर्णेऽस्मिन् सुभिक्षं क्षेममेव च ॥८८॥

यदि उदयकालीन सूर्य स्वर्ण वर्णका हो तो जलकी वर्षा, मधुवर्णका होतो भयप्रद और शुक्लवर्णका होतो सुभिक्ष और कल्याणकी सूचना देता है ॥८८॥

हेमन्ते शिशिरे रक्तः पीते ग्रीष्मवसन्तयोः ।
वर्षासु शरदि शुक्लो विपरीतो भयङ्करः ॥८९॥

हेमन्त और शिशिर ऋतुमे लालवर्ण, ग्रीष्म और वसन्तऋतुमें पीत एवं वर्षा और शरदूमें शुक्लवर्णका सूर्य शुभप्रद है, इन वर्णोंसे विपरीत वर्ण हो तो भयप्रद है ॥८९॥

दक्षिणे चन्द्रशृङ्गे तु यदा तिष्ठति भार्गवः ।
[1]अभ्युद्गतं तदा राजा बलं हन्यात् सपार्थिवः ॥९०॥

यदि चन्द्रमाके उदयकालमें चन्द्रमाके दक्षिण शृंग पर शुक्र हो तो ससैन्य राजाका विनाश होता है ॥९०॥

चन्द्रशृङ्गे यदा [2]भौमो विकृतस्तिष्ठतेतराम् ।
भृशं प्रजा विपद्यन्ते क्षुरवः पार्थिवाश्चलाः ॥९१॥

यदि चन्द्रशृंग पर विकृत मंगल स्थित हो तो प्रजाको अत्यन्त कष्ट होता है और पुरोहित एवं राजा चंचल हो जाते है ॥९१॥

शनैश्चरो यदा सौम्यशृङ्गे पर्युपतिष्ठति ।
तदा वृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं प्रकरोति च ॥९२॥

यदि चन्द्र शृंगपर शनैश्चर हो तो वर्षाका भय होता है और भयंकर दुर्भिक्ष होता है ॥९२॥

भिनत्ति सोमं मध्येन ग्रहेष्वन्यतमो यदा ।
तदा राजभयं विन्द्यात् प्रजाक्षोभं च दारुणम् ॥९३॥

जब कोई भी ग्रह चन्द्रमाके भयसे भेदन करता है तो राजभय होता है और प्रजाको दारुण क्षोभ होता है ॥९३॥

राहुणा गृह्यते चन्द्रो यस्य नक्षत्रजन्मनि ।
रोगं मृत्युभयं वाऽपि तस्य कुर्यान्न संशयः ॥९४॥

जिस व्यक्तिके जन्म नक्षत्र पर राहु चन्द्रमाका ग्रहण करे—चन्द्रग्रहण हो तो रोग और मृत्युभय निस्सन्देह होता है ॥९४॥

---

१. अभ्युद्गत मु० । २. भौमस्तिष्ठते विकृतो भृशम् मु० । ३. प्रजास्तत्र मु० ।

क्रूरग्रहयुतश्चन्द्रो गृह्यते दृश्यतेऽपि वा।
यदा क्षुभ्यन्ति सामन्ता राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥९५॥

क्रूरग्रह युक्त चन्द्रमा राहुके द्वारा ग्रहीत या दृष्ट हो तो राजा और सामन्त क्षुब्ध होते हैं और राष्ट्रको पीड़ा होती है ॥९५॥

लिखेत सोमः शृङ्गेन भौमं शुक्रं गुरुं यथा।
शनैश्चरं चाधिकृतं षड्भयानि तदा दिशेत् ॥९६॥

चन्द्रशृंगके द्वारा मंगल, शुक्र और गुरुका स्पर्श होता हो तथा शनैश्चर आधीन किया जा रहा हो तो छः प्रकारके भय होते हैं ॥९६॥

यदा बृहस्पतिः शुक्रं भिद्येदथ विशेषतः।
पुरोहितास्तदाऽमात्याः प्राप्नुवन्ति महद्भयम् ॥९७॥

यदि बृहस्पति—गुरु, शुक्रका भेदन करे तो विशेषरूपसे पुरोहित और मन्त्री महान् भयको प्राप्त होते हैं ॥९७॥

ग्रहाः परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा।
तत्र शस्त्रवाणिज्यानि विन्द्यादर्थविपर्ययम् ॥९८॥

यदि ग्रह परस्परमें भेदन करें अथवा प्रवेशको प्राप्त हों तो शास्त्रका अर्थविपर्यय—विपरीत हो जाता है अर्थात् वहाँ युद्ध होते हैं ॥९८॥

श्वेतो गृहमन्यं श्वेतं प्रविशेत लिखेत् तदा।
ब्राह्मणानां मिथो भेदं मिथः पीडां विनिर्दिशेत् ॥९९॥

यदि श्वेतवर्णका ग्रह—चन्द्रमा, शुक्र श्वेतवर्णके ग्रहोंका स्पर्श और प्रवेश करें तो ब्राह्मणोंमें परस्पर मतभेद होता है तथा परस्परमें पीड़ाको भी प्राप्त होते हैं ॥९९॥

एवं शेषेषु वर्णेषु स्ववर्णैश्चारयेद् ग्रहः।
वर्णतः स्वभयानि स्युस्तद्युतान्युपलक्षयेत् ॥१००॥

इसी प्रकार रक्तवर्णके ग्रह रक्तवर्णके ग्रहोंका स्पर्श और प्रवेश करें तो क्षत्रियोंको, पीतवर्णके ग्रह पीतवर्णके ग्रहोंका स्पर्श और प्रवेश करें तो वैश्योंको एवं कृष्णवर्णके ग्रह कृष्णवर्णके ग्रहोंका स्पर्श और प्रवेश करें तो शूद्रोंको भय, पीड़ा या उनमें परस्पर मतभेद होता है। ज्योतिषशास्त्रमें सूर्यको रक्तवर्ण, चन्द्रमाको श्वेतवर्ण, मंगलको रक्तवर्ण, बुधको श्यामवर्ण, गुरुको पीतवर्ण, शुक्रको श्यामगौर वर्ण, शनिको कृष्णवर्ण, राहुको कृष्णवर्ण और केतुको कृष्णवर्ण माना गया है ॥१००॥

श्वेतो ग्रहो यदा पीतो रक्तकृष्णोऽथवा भवेत्।
सवर्णविजयं कुर्यात् यथास्वं वर्णशङ्करम् ॥१०१॥

यदि श्वेतग्रह पीत, रक्त अथवा कृष्ण हो तो जातिके वर्णानुसार विजय प्राप्त कराता है अर्थात् रक्त होनेपर क्षत्रियों की, पीत होनेपर वैश्योंको और कृष्णवर्ण होनेपर शूद्रोंकी विजय होती है। मिश्रितवर्ण होनेसे वर्णसंकरोंकी विजय होती है ॥१०१॥

१. भद्रिणाम् मु०।

उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽघाताश्च दारुणाः ।
उत्तराः सर्वभूतानां दक्षिणा मृगपक्षिणाम् ॥१०२॥

अनेक प्रकारके उत्पात होते हैं, इनमें ग्रहघात—ग्रहयुद्ध उत्पात अत्यन्त दारुण हैं। उत्तर-दिशाका ग्रहघात समस्त प्राणियोंको कष्टप्रद होता है और दक्षिणका ग्रहघात केवल पशु-पक्षियों को कष्ट देता है ॥१०२॥

करङ्कं शोणितं मांसं विद्युतश्च भयं वदेत् ।
दुर्भिक्षं जनमारिं च शीघ्रमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥१०३॥

अस्थिपंजर, रक्त, मांस और बिजलीका उत्पात भयकी सूचना देता है तथा जहाँ यह उत्पात हो वहाँ दुर्भिक्ष और जनमारी शीघ्र ही फैल जाती है ॥१०३॥

शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते ।
सेनापतिरमात्यश्च राजा राष्ट्रं च पीडयते ॥१०४॥

यदि अकारण भयंकर शब्दके द्वारा जब पृथ्वी काँपने लगे तथा सर्वत्र शोरगुल व्याप्त हो जाय तो सेनापति, मन्त्री, राजा और राष्ट्रको पीड़ा होती है ॥१०४॥

फले फलं यदा किञ्चित् पुष्पे पुष्पं च दृश्यते ।
गर्भाः पतन्ति नारीणां युवराजा च वध्यते ॥१०५॥

यदि फलमें फल और पुष्पमें पुष्प दिखलायी पड़े तो स्त्रियोंके गर्भ गिर जाते हैं तथा युवराजका वध होता है ॥१०५॥

नर्तनं जल्पनं हासमुत्कीलननिमीलने ।
देवाः यत्र प्रकुर्वन्ति तत्र विन्द्यात् महद्भयम् ॥१०६॥

जहाँ देवा द्वारा नाचना, बोलना, हँसना, कीलना और पलक झपकना आदि क्रियाएँ की जायँ, वहाँ अत्यन्त भय होता है ॥१०६॥

पिशाचा यत्र दृश्यन्ते देशेषु नगरेषु वा ।
अन्यराजा भवेत्तत्र प्रजानां च महद्भयम् ॥१०७॥

जहाँ देश और नगरोंमें पिशाच दिखलायी पड़ें वहाँ अन्य व्यक्ति राजा होता है तथा प्रजाको अत्यन्त भय होता है ॥१०७॥

भूमिर्यत्र नभो याति विशति वसुधाजलम् ।
दृश्यन्ते वाऽम्बरे देवास्तदा राजवधो ध्रुवम् ॥१०८॥

जहाँ पृथ्वी आकाशकी ओर जाती हुई मालूम हो अथवा पातालमें प्रविष्ट होती हुई दिखलायी पड़े और आकाशमें देव दिखलायी पड़े तो वहाँ राजाका वध निश्चयतः होता है ॥१०८॥

धूमज्वालां रजो भस्म यदा मुञ्चन्ति देवताः ।
तदा तु म्रियते राजा मूलतस्तु जनक्षयः ॥१०९॥

यदि देव धूम, ज्वाला, धूलि और भस्म—राखकी वर्षा करें तो राजाका मरण होता है तथा मूलरूपसे मनुष्योंका भी विनाश होता है ॥१०९॥

१. दिवा।

अस्थिमांसैः पशूनां च भस्मनां निचयैरपि[1] ।
जनक्षयाः प्रभूतास्तु विकृते वा नृपवधः ॥११०॥

यदि पशुओंकी हड्डियाँ और मांस तथा भस्मका समूह आकाशसे बरसे तो अधिक मनुष्योंका विनाश होता है। अथवा उक्त वस्तुओंमें विकार—उत्पात होनेपर राजाका वध होता है ॥११०॥

विकृताकृति-संस्थाना जायन्ते यत्र मानवाः ।
तत्र राजवधो ज्ञेयो विकृतेन सुखेन वा ॥१११॥

जहाँ मनुष्य विकृत आकारवाले और विचित्र दिखलायी पड़े वहाँ राजाका वध होता है अथवा विकृत दिखलायी पड़नेसे सुख क्षीण होता है ॥१११॥

वधः सेनापतेश्चापि भयं दुर्भिक्षमेव च ।
अग्नेर्वा ह्यथवा वृष्टिस्तदा स्यान्नात्र संशयः ॥११२॥

यदि आकाशसे अग्निकी वर्षा हो तो सेनापतिका वध, भय और दुर्भिक्ष आदि फल घटित होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ॥११२॥

द्वारं शस्त्रगृहं वेश्म राज्ञो देवगृहं तथा ।
धूमायन्ते यदा राज्ञस्तदा मरणमादिशेत् ॥११३॥

देवमन्दिर या राजाके महलके द्वारा शस्त्रागार, दालान या वरामदेमें धुँआ दिखलायी पड़े तो राजाका मरण होता है ॥११३॥

परिघाऽर्गला कपाटं द्वारं रुन्धन्ति वा स्वयम् ।
पुररोधस्तदा विन्द्यान्नैगमानां महद्भयम् ॥११४॥

यदि स्वयं ही बिना किसीके बन्द किये बेड़ा, सांकल और द्वारके किवाड़ बन्द हो जायँ तो पुरोहित और वेदके व्याख्याताओंको महान् भय होता है ॥११४॥

यदा द्वारेण नगरं शिवा प्रविशते दिवा ।
वास्यमाना विकृता वा तदा राजवधो ध्रुवम् ॥११५॥

यदि दिनमें सियारिन–गीदड़ी नगरके द्वारसे विकृत या सिक्त होकर प्रविष्ट हो तो राजाका वध होता है ॥११५॥

अन्तःपुरेषु द्वारेषु विष्णुमित्रे तथा पुरे ।
अट्टालकेऽथ हट्टेषु मधु लीनं विनाशयेत् ॥११६॥

यदि सियारिन अन्तःपुर, द्वार, नगर, तीर्थ, अट्टालिका और बाजारमें प्रवेश करे तो सुखका विनाश करती है ॥११६॥

धूमकेतुहतं मार्गं शुक्रश्चरति वै यदा ।
तदा तु सप्तवर्षाणि महान्तमनयं वदेत् ॥११७॥

यदि शुक्र धूमकेतु द्वारा आक्रान्त मार्गमें गमन करे तो सात वर्षोंतक महान अन्याय–अकल्याण होता रहता है ॥११७॥

---

1. मृगपक्षिपशूनां च मार्गे ज्वलने गमे मु० ।

गुरुणा प्रहतं मार्गं यदा भौमः प्रपद्यते।
भयं सार्वजनिकं करोति बहुधा नृणाम् ॥११८॥

यदि बृहस्पतिके द्वारा प्रताडित मार्गमें मंगल गमन करे तो सार्वजनिक भय होता है तथा अधिकतर मनुष्योंको भय होता है ॥११८॥

भौमेनापि हतं मार्गं यदा सौरिः प्रपद्यते।
तदाऽपि शूद्रचौराणमनयं कुरुते नृणाम् ॥११९॥

मंगलके द्वारा प्रताडितमार्गमें शनैश्चर गमन करे तो शूद्र और चोरोंका अकल्याण होता है ॥११९॥

सौरेण तु हतं मार्गं [1]वाचस्पतिः प्रपद्यते।
भयं सर्वजनानां तु करोति बहुधा तदा ॥१२०॥

यदि शनैश्चरके द्वारा प्रताडित मार्गमें बृहस्पति गमन करे तो सभी मनुष्योंको भय होता है ॥१२०॥

राजदीपो निपतते भ्रश्यतेऽधः कदाचन।
षण्मासात् पञ्चमासाद्वा नृपमन्यं निवेदयेत् ॥१२१॥

यदि राजाका दीपक अकारण नीचे गिर जाय तो छः महीने या पाँच-महीनेमें अन्य राजा होनेका निर्देश समझना चाहिए ॥१२१॥

[2]हसन्ति यत्र निर्जीवाः धावन्ति प्रवदन्ति च।
जातमात्रस्य तु शिशोः सुमहद्भयमादिशेत् ॥१२२॥

जहाँ निर्जीव—जड़ पदार्थ हँसते हों, दौड़ते हों और बातें करते हों वहाँ उत्पन्न हुए समस्त बच्चोंको महान् भयका निर्देश समझना चाहिए ॥१२२॥

निवर्तते यदा छाया [3]परितो वा [4]जलाशयात्।
प्रदृश्यते च दैत्यानां सुमहद्भयं[5]मादिशेत् ॥१२३॥

यदि जलाशय—तालाब, नदी आदिके चारों ओरसे छाया लौटती हुई दिखलायी पड़े तो दैत्योंके महान् भयका निर्देश समझना चाहिए ॥१२३॥

अद्वारे द्वारकरणं कृतस्य च विनाशनम्।
हतस्य ग्रहणं वाऽपि तदा ह्युत्पातलक्षणम् ॥१२४॥

अद्वारमें—जहाँ द्वार करने योग्य न हो वहाँ द्वार करना, किये हुए कार्यका विनाश करना और नष्टवस्तुको ग्रहण करना उत्पातका लक्षण है ॥१२४॥

[6]यजनोच्छेदनं यस्य ज्वलिताङ्गमथाऽपि वा।
स्पन्दते वा स्थिरं किञ्चित् कुलहानिं तदाऽऽदिशेत् ॥१२५॥

१. वाचरगं मु०। २. निर्जीवाभाण्गे हासे जल्पोधे प्रधावने मु०। ३. परिमग्ना मु०। ४. जलाधपात् मु०। ५. लक्षणम् मु०। ६. यजने खादनं मु०।

यदि किसीके यजन—पूजा, प्रतिष्ठा, यज्ञादिका स्वयमेव उच्छेद—विनाश हो अथवा अंग प्रज्वलित होते हों अथवा स्थिर वस्तुमें चंचलता उत्पन्न हो जाय तो कुलहानि समझनी चाहिए ॥१२५॥

दैवज्ञा भिक्षवः प्राज्ञाः साधवश्च पृथग्विधाः ।
परित्यजन्ति तं देशं ध्रुवमन्यत्र शोभनम् ॥१२६॥

दैवज्ञ—ज्योतिषियों, भिक्षुओं, मनीषियों और साधुओंको विभिन्न प्रकारके उत्पात होनेवाले देशको छोड़कर अन्यत्र निवास करना ही श्रेष्ठ होता है ॥१२६॥

युद्धानि कलहा बाधा विरोधाऽरिविवृद्धयः ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तन्ते तं देशं परिवर्जयेत् ॥१२७॥

युद्ध, कलह, बाधा, विरोध एवं शत्रुओंकी वृद्धि जिस देशमें निरन्तर हो उस देशका त्याग कर देना चाहिए ॥१२७॥

विपरीता यदा छाया दृश्यन्ते वृक्ष-वेश्मनि ।
यदा ग्रामे पुरे वाऽपि प्रधानवधमादिशेत् ॥१२८॥

ग्राम और नगरमें जब वृक्ष और घरकी छाया विपरीत—जिस समय पूर्वमें छाया रहती हो, उस समय पश्चिममें और जब पश्चिममें रहती हो तब पूर्वमें हो तो प्रधानका वध होता है ॥१२८॥

महावृक्षो यदा शाखामुत्करां मुञ्चते द्रुतम् ।
भोजकस्य वधं विन्द्यात् सर्पाणां वधमादिशेत् ॥१२९॥

महावृक्ष जब अकारण ही अपनी शाखाको शीघ्र ही गिराता है तो भोजन—सपेरोंका वध होता है तथा सर्पोंका भी वध होता है ॥१२९॥

पांशुवृष्टिस्तथोल्का च निर्घाताश्च सुदारुणाः ।
यदा पतन्ति युगपद् घ्नन्ति राष्ट्रं सनायकम् ॥१३०॥

धूलिकी वर्षा, उल्कापात, भयंकर कड़क—विद्युत्पात एक साथ हो तो राष्ट्रनायकका विनाश होता है ॥१३०॥

रसाश्च विरसा यत्र नायकस्य च दूषणम् ।
तुलामानस्य हसनं राष्ट्रनाशाय तद्भवेत् ॥१३१॥

जब अकारण ही रस विरस—विकृत रसवाले हो तो नायकमें दोष लगता है तथा तराजूके हसनेसे राष्ट्रका नाश होता है ॥१३१॥

शुक्लप्रतिपदि चन्द्रे समं भवति मण्डलम् ।
भयङ्करं तदा तस्य नृपस्याथ न संशयः ॥१३२॥

यदि शुक्लप्रतिपदाको चन्द्रमाके दोनों शृंग समान दिखलायी पड़ें-समान मंडल हो तो निस्सन्देह राजाके लिये भय करनेवाला होता है ॥१३२॥

समाभ्यां यदि शृङ्गाभ्यां यदा दृश्येत चन्द्रमाः।
धान्यं भवेत् तदा न्यूनं मन्दवृष्टिं विनिर्दिशेत् ॥१३३॥

यदि इसीदिन दोनों शृंग समान दिखलायी पड़ें तो अन्नकी उपज कम होती है और वृष्टि भी कम होती है। यहाँ विशेषता यह है कि आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदाके दिन चन्द्रमाके शृंगोंका अवलोकन करना चाहिए ॥१३३॥

वामशृङ्गं यदा वा स्यादुन्नतं[1] दृश्यते भृशम्।
तदा सृजति लोकस्य दारुणत्वं न संशयः ॥१३४॥

यदि चन्द्रमाका बाँया शृंग उन्नत मालूम हो तो लोकमें दारुण भयका संचार होता है, इसमें संशय नहीं है ॥१३४॥

ऊर्ध्वस्थितं नृणां पापं तिर्यक्स्थं राजमन्त्रिणाम्।
अधोगतं च वसुधां सर्वां हन्यादसंशयम् ॥१३५॥

ऊर्ध्वस्थित चन्द्रमा मनुष्योंके पापको, तिर्यक्स्थ राजा और मन्त्रीके पापको, अधोगत समस्त पृथ्वीके पापका निस्सन्देह विनाश करता है ॥१३५॥

शस्त्रं रक्ते भयं पीते धूमे दुर्भिक्षविद्रवे।
चन्द्रे तदोदिते ज्ञेयं भद्रबाहुवचो यथा ॥१३६॥

चन्द्रमा यदि रक्तवर्णका उदित हो तो शस्त्रका भय, पीतवर्णका हो तो भय और धूम्रवर्ण होने पर दुर्भिक्षकारक होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१३६॥

दक्षिणात्परतो दृष्टं चोरदूतभयङ्करम्।
अपरे तोयजीवानां वायव्ये हन्ति वै गदम् ॥१३७॥

यदि दक्षिणकी ओर शृंग या रक्तवर्णादि दिखलायी पड़ें तो चोर और दूतको भयंकर होता है, पूर्वकी ओर दिखलायी पड़े तो जलजन्तुओंको और वायव्य दिशाकी ओर दिखलायी पड़े तो रोगका विनाश होता है ॥१३७॥

[2]विवदत्सु च लिङ्गेषु यानेषु प्रवदत्सु च।
वाहनेषु च हृष्टेषु विन्द्याद्भयमुपस्थितम् ॥१३८॥

शिवलिङ्गोंमे विवाह होने पर, सवारियोंमें वार्तालाप होने पर और वाहनोंमें प्रसन्नता दिखलायी पड़ने पर महान् भय होता है ॥१३८॥

ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्देत् तदा स्याच्च भयङ्करः
ककुदं चलते वापि तदाऽपि स भयङ्करः ॥१३९॥

यदि बैल—साँड़ ऊपरको मुँह कर गर्जना करे तो अत्यन्त भयंकर होता है और वह अपने कुकुद कुब्बको चंचल करे तो भी भयंकर समझना चहिए ॥१३९॥

---

१. उन्नतं मु०। २ शस्त्रकोटेषु बालेषु विवादेषु च लिङ्गिषु मु०।

व्याधयः प्रबला यत्र माल्यगन्धं न वायते ।
आहूतिपूर्णकुम्भाश्च विनश्यन्ति भयं वदेत् ॥१४०॥

जहाँ व्याधियाँ प्रबल हों, माल्यगन्ध न मालूम पड़ती हो और आहूतिपूर्ण कलश—मंगल-कलश विनाशको प्राप्त होते हों, वहाँ भय होता है ॥१४०॥

नववस्त्रं प्रसङ्गेन ज्वलते मधुरा गिरा ।
अरुन्धतीं न पश्येत स्वदेहं यदि दर्पणे ॥१४१॥

यदि नवीन वस्त्र अकारण जल जाय, मधुर वचन मुँहसे निकलें, अरुन्धती तारा दिखलायी न पड़े तो महान् भय अवगत करना चाहिए अर्थात् मृत्युकी सूचना समझनी चाहिए ॥१४१॥

न पश्यति स्वकार्याणि परकार्यविशारदः ।
मैथुने यो निरक्तश्च न च सेवति मैथुनम् ॥१४२॥
न मित्रचित्तो भूतेषु स्त्री वृद्धं [1]हिंसते शिशुम् ।
विपरीतश्च सर्वत्र सर्वदा स भयावहः ॥१४३॥

जो परकार्यमें तो रत हो, पर स्व कार्यका सेवन न करता हो, मैथुनमें संलग्न रहने पर भी मैथुनका सेवन न करता हो, मित्रमें जिसका चित्त आसक्त नहीं हो और जो स्त्री, वृद्ध और शिशुओंकी हिंसा करता हो तथा स्वभाव और प्रकृतिसे विपरीत जितने भी कार्य हैं, सब भयप्रद हैं ॥१४२–१४३॥

अभीक्ष्णं [2]चापि सुप्तस्य निरुत्साहाविलम्बिनः ।
[3]अलक्ष्मीपूर्णचित्तस्य प्राप्नोति स महद्भयम् ॥१४४॥

जो निरन्तर सोनेवाला है, निरुत्साही है और धनसे रहित है, उसे महान् भयकी प्राप्ति होती है ॥१४४॥

क्रव्यादाः शकुना यत्र बहुशो विकृतस्वनाः ।
तत्रेन्द्रियार्थाः [4]विगुणाः श्रिया हीनाश्च मानवाः ॥१४५॥

जहाँ मांसभक्षी पक्षी अत्यधिक विकृत स्वरवाले हों वहाँ मनुष्य इन्द्रियोंकी अर्थोंको ग्रहण करनेकी शक्तिसे हीन और लक्ष्मीसे रहित होते हैं। अर्थात् वहाँ अज्ञानता और निर्धनता निवास करती है ॥१४५॥

निपतति द्रुमश्छिन्नो [5]स्वप्नेष्वभयलक्षणम् ।
रत्नानि यस्य नश्यन्ति बहुशः प्रज्वलन्ति वा ॥१४६॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें निर्भय होकर कटे हुए पेड़को गिरते देखता है, उसके रत्न नष्ट हो जाते हैं अथवा बहुमूल्य पदार्थ अग्नि लगनेसे जल जाते हैं ॥१४६॥

क्षीयते वा म्रियते वा पञ्चमासात् परं नृपः ।
गजस्यारोहणे यस्य यदा दन्तः प्रभिद्यते ॥१४७॥

जब हाथी पर सवारी करते समय, हाथीके दाँत टूट जाँय तो सवारी करनेवाला राजा पाँच महीनेके उपरान्त क्षय या मरणको प्राप्त हो जाता है ॥१४७॥

१. सेवते मु० । २. चापरस्वप्नस्य निरुत्साहो विविन्तितः मु० । ३. अलक्ष्मीपूर्णो न चिरात् मु० । ४. विगुणाः मु० । ५. वपुश्च इवलक्षणम् मु० ।

यदि सन्ध्याकालमें घोड़े ऊपरको मुँह किये हुए रोते हों या दीन होकर चारों ओर भ्रमण करते हों तो पराजय समझना चाहिए ॥१५५॥

[1]हया यत्र तदोत्पातं निर्दिशेद्राजमृत्यवे ।
विच्छिद्यमाना हेषन्ते यदा रूक्षस्वरं हया ॥१५६॥

जब घोड़े रूक्ष स्वर और टूटी-फूटी आवाजमें हींसते हों तो वे अपने इस उत्पात द्वारा राजाकी मृत्युकी सूचना देते हैं ॥१५६॥

[2]खरवद्भीमनादेन तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
उत्तिष्ठन्ति निषीदन्ति विश्वसन्ति भ्रमन्ति च ॥१५७॥

जब घोड़े गधोंके समान तीव्र स्वरमें रेकें और उठें, बैठें तथा भ्रमण करें तो पराजय समझना चाहिए ॥१५७॥

रोगार्त्ता इव हेषन्ते तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
ऊर्ध्वमुखा विलोकन्ति विन्द्याज्जनपदे भयम् ॥१५८॥

यदि रोगसे पीड़ित हुए के समान हींसते हों तो पराजय समझना चाहिए और ऊर्ध्वमुख रेकें तो जनपदको भय होता है ॥१५८॥

शान्ता प्रहृष्टा धर्मार्त्ता विचरन्ति यदा हयाः ।
बालानां वीक्ष्यमाणास्ते न ते ग्राह्या विपश्चितैः ॥१५९॥

जब घोड़े शान्त, प्रसन्न और कामसे पीड़ित होकर विचरण करें और स्त्रियोंके द्वारा देखे जाते हों तो विद्वानोंको उनका शुभाशुभत्व नहीं लेना चाहिए ॥१५९॥

मूत्रं पुरीषं बहुशो विलुप्ताङ्गा प्रकुर्वतः ।
हेषन्ते दीननिद्रार्त्तास्तदा कुर्वन्ति ते जयम् ॥१६०॥

यदि घोड़े विलुप्तांग होकर अधिक मूत्र और लीद करें और निद्रासे पीड़ित होकर हींसें तो जयकी सूचना देते हैं ॥१६०॥

स्तम्भयन्तोऽथ लांगूलं हेषन्तो दुर्मना हयाः ।
मुहुर्मुहुश्च जृम्भन्ते तदा शस्त्रभयं वदेत् ॥१६१॥

पूँछको स्तम्भित करते हुए खिन्न होकर घोड़े हींसें और बार-बार जँभाई लें तो शस्त्रभय कहना चाहिए ॥१६१॥

यदा विरुद्धं हेषन्ते स्वल्पं विकृतिकारणम् ।
तदोपसर्गो व्याधिर्वा सद्यो भवति रात्रिजः ॥१६२॥

यदि घोड़े विकृत कारणोंके होने पर विपरीत हींसते हों तो रात्रिमें उत्पन्न होनेवाली व्याधि या उपसर्ग शीघ्र ही होते हैं ॥१६२॥

१. १५६ वां श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है। २. इस श्लोकका पूर्वार्ध मुद्रित प्रतिमें नहीं है।

भूम्यां ग्रसित्वा ग्रासं तु हेषन्ते प्राङ्मुखा यदा ।
अश्वारोधाश्च बद्धाश्च तदा क्लिश्यति क्षुद्भयम् ॥१६३॥

पृथ्वीमेंसे एकाध और घास खाकर यदि पूर्वकी ओर मुखकर घोड़े हींसें तो क्षुधाके क्लेश और भयकी सूचना देते हैं ॥१६३॥

शरीरं केसरं पुच्छं यदा ज्वलति वाजिनः ।
परिचक्रं प्रयातं च देशभङ्गं च निर्दिशेत् ॥१६४॥

यदि घोड़ोंके शरीर, पूँछ और कसबार जलने लगें तो परशासनका आगमन और देश भंगकी सूचना समझनी चाहिए ॥१६४॥

यदा बाला प्रत्तरन्ते पुच्छं चटपटायते ।
वाजिनः सस्फुलिङ्गा वा तदा विद्यान्महद्भयम् ॥१६५॥

यदि अकारण घोड़ोंके बाल टूट कर गिरने लगें, पूँछ चटचट करने लगे और उनके शरीरसे स्फुलिंग निकलने लगें तो अत्यधिक भय समझना चाहिए ॥१६५॥

हेषन्ते तु तदा राज्ञः पूर्वाह्ने नागवाजिनः ।
तदा सूर्यग्रहं विन्द्यादपराह्ने तु चन्द्रजम् ॥१६६॥

यदि पूर्वाह्नमें राजाके हाथी, घोड़े हींसने लगें तो सूर्यग्रह और पराह्नमें हींसने लगें तो चन्द्रग्रह समझना चाहिए ॥१६६॥

शुष्कं काष्ठं तृणं वाऽपि यदा संदंशते हयः ।
हेषन्ते सूर्यमुद्वीक्ष्य तदाऽग्निभयमादिशेत् ॥१६७॥

सूखे काठ, तिनके आदि खाते हुए घोड़े सूर्यकी ओर मुँहकर हींसने लगें तो अग्निभय समझना चाहिए ॥१६७॥

यदा शेवालजले वाऽपि मग्नं कृत्वा मुखं हयाः ।
हेषन्ते विकृता यत्र तदाप्यग्निभयं भवेत् ॥१६८॥

जब घोड़े शेवाल युक्त जलमें मुँह डुबाकर हींसें तो उस समय भी अग्निभय समझना चाहिए ॥१६८॥

उल्कासमाना हेषन्ते संदश्य दशनान् हयाः ।
संग्रामे विजयं क्षेमं भर्तुः पुष्टिं विनिर्दिशेत् ॥१६९॥

जब उल्काके समान दाँत निकालते हुए घोड़े हींसें तो स्वामीके लिए संग्राममें विजय, क्षेम और पुष्टिका निर्देश करते हैं ॥१६९॥

प्रसारयित्वा ग्रीवां च स्तम्भयित्वा च वाजिनाम् ।
हेषन्ते विजयं ब्रूयात्संग्रामे नात्र संशयः ॥१७०॥

गर्दनको जरा-सा झुकाकर—टेढ़ी करके स्थिर रूपसे खड़े होकर जब घोड़े हींसें तो संग्राममें निस्सन्देह विजयकी प्राप्ति होती है ॥१७०॥

श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धा न पूज्यन्ते यथा पुरा ।
सप्तमासात् परं यत्र भयमाख्यात्युपस्थितम् ॥१७१॥

जिस नगरमें श्रमण, ब्राह्मण और वृद्धोंकी पूजा नहीं की जाती है उस नगरमें सात महीनेके उपरान्त भय उपस्थित होता है ॥१७१॥

अनाहतानि तूर्याणि नर्दन्ति विकृतं यदा ।
पष्ठे मासे नृपो वध्यः भयानि च तदाऽऽदिशेत् ॥१७२॥

जब बाजे बिना बजाये ही विकृत घोर शब्द करें तो छठवें महीनेमें राजाका वध होता है और वहाँ भय भी होता है ॥१७२॥

कृत्तिकासु यदोत्पातो दीप्तायां दिशि दृश्यते ।
आग्नेयीं वा समाश्रित्य त्रिपक्षादग्नितो भयम् ॥१७३॥

यदि पूर्व दिशामें कृत्तिका नक्षत्रमें उत्पात दिखलायी पड़े अथवा आग्नेय कोणमें उत्पात दिखलायी पड़े तो तीन पक्ष—डेढ महीनेमें अग्निका भय होता है ॥१७३॥

रोहिण्यां तु यदा घोषो निर्वातो यदि दृश्यते ।
सर्वाः प्रजाः प्रपीड्यन्ते षण्मासात्परतस्तदा ॥१७४॥

यदि रोहिणी नक्षत्रमें बिना वायुके शब्द सुनाई पड़े तो इस उत्पातके छः महीने पश्चात् सभी प्रजाको पीड़ा होती है ॥१७४॥

उल्कापातः सनिर्घातः सवातो यदि दृश्यते ।
रोहिण्यां पञ्चमासेन कुर्याद् घोरं महद्भयम् ॥१७५॥

यदि रोहिणी नक्षत्रमें घर्षण और वायु सहित उल्कापात हो तो पाँच महीनेमें घोर भय होता है ॥१७५॥

एवं नक्षत्रशेषेषु यद्युत्पाताः पृथग्विधाः ।
देवतार्जनलीनं च प्रसाध्यं भिक्षुणा सदा ॥१७६॥

इसी प्रकार अन्य नक्षत्रोंमें भिन्न-भिन्न प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो भिक्षुओंको देव पूजा द्वारा उस उत्पातके अनिष्ट फलको दूर करना चाहिए । अर्थात् उत्पातकी शान्ति पूजा-पाठ द्वारा करनी चाहिए ॥१७६॥

वाहनं महिषीं पुत्रं बलं सेनापतिं पुरम् ।
पुरोहितं नृपं वित्तं घ्नन्त्युत्पाताः समुच्छ्रिताः ॥१७७॥

उत्पन्न हुए विभिन्न प्रकारके उत्पात सवारी, सेना, रानी, पुत्र, सेनापति, पुरोहित, अमात्य, राजा और धन आदिका विनाश करते हैं ॥१७७॥

एषामन्यतरं हित्वा निर्वृतिं यान्ति ते सदा ।
परं द्वादशरात्रेण सद्यो नाशयिता पिता ॥१७८॥

जो व्यक्ति इन उत्पातोंमेंसे किसी भी उत्पातकी अवहेलना करते हैं, वे बारह रात्रियोंमें ही कष्टको प्राप्त करते हैं तथा उनके कुटुम्बमें पिता या अन्य कोई मृत्युको प्राप्त होते हैं ॥१७८॥

यत्रोत्पाताः न दृश्यन्ते यथाकालमुपस्थिताः ।
तेन सञ्चयदोषेण राजा देशश्च [1]नश्यति ॥१७९॥

जहाँ यथासमयमें उपस्थित हुए उत्पातोंको नहीं देखा जाता है, वहाँ उत्पातके द्वारा संचित दोषसे राजा और देश दोनोंका नाश होता है ॥१७९॥

देवान् प्रव्रजितान् विप्रांस्तस्माद्राजाऽभिपूजयेत् ।
तदा शाम्यति तत् पापं यथा साधुभिरीरितम् ॥१८०॥

उत्पातसे उत्पन्न हुए दोषकी शान्तिके लिए देव, दीक्षित मुनि और ब्राह्मण—व्रती व्यक्तियोंकी पूजा करनी चाहिए। इससे जिस पापसे उत्पात उत्पन्न होते हैं, वह मुनियोंके द्वारा प्रतिपादित पाप शान्त हो जाता है ॥१८०॥

यत्र देशे समुत्पाता दृश्यन्ते भिक्षुभिः क्वचित् ।
ततो देशादतिक्रम्य व्रजेयुरन्यतस्तदा ॥१८१

मुनियोंको जिस देशमें कहीं भी उत्पात दिखलायी पड़े उस देशको छोड़कर अन्य देशमें चला जाना चाहिए ॥१८१॥

सचित्ते [2]सुभिक्षे देशे दिरुत्पाते प्रियातिथौ ।
विहरन्ति सुखं तत्र भिक्षवो धर्मचारिणः ॥१८२॥

धन-धान्यसे परिपूर्ण, सुभिक्ष युक्त, निरुपद्रव और अतिथि-सत्कार करनेवाले देशमें धर्माचरण करनेवाले साधु सुखपूर्वक विहार करते हैं ॥१८२॥

इति सकलमुनिजनानन्दमहामुनीश्वरभद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रे सकलशुभाऽशुभ-व्याख्यानविधानकथने चतुर्दशमः परिच्छेदः समाप्तः ॥१४॥

विवेचन—स्वभावके विपरीत होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकारके होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। देव प्रतिमाओं द्वारा जिन उत्पातोंकी सूचना मिलती है, वे दिव्य कहलाते हैं। नक्षत्रोंका विचार, उल्का, निर्घात, पवन, विद्युत्पात, गन्धर्वपुर एवं इन्द्रधनुषादि अन्तरिक्ष उत्पात हैं। इस भूमिपर चल एवं स्थिर पदार्थोंका विपरीतरूपमें दिखलायी पड़ना भौम उत्पात हैं। आचार्य ऋषिपुत्रने दिव्य उत्पातोंका वर्णन करते हुए बतलाया है कि तीर्थंकर प्रतिमाका छत्र भंग होना, हाथ-पाँव, मस्तक, भामण्डलका भंग होना अशुभ सूचक है। जिस देश या नगरमें प्रतिमाजी स्थिर या चलित भंग हो जायँ तो उस देश या नगरमें अशुभ होता है। छत्र भंग होनेसे प्रशासक या अन्य किसी नेताकी मृत्यु, रथ टूटनेसे राजाका मरण तथा जिस नगरमें रथ टूटता है, उस नगरमें छः महीनेके पश्चात् अशुभ फलकी प्राप्ति होती है। शहरमें महामारी, चोरी, डकैती या अन्य अशुभ कार्य छः महीनोंके भीतर होता है। भामण्डलके भंग होनेसे

१. नश्यते मु० । २. भिक्षुके ।

तीसरे या पाँचवें महीनेमें आपत्ति आती है। उस प्रदेशके शासक या शासन परिवारमें किसीकी मृत्यु होती है। नगरमें धन-जनकी हानि होती है। प्रतिमाके हाथ भंग होनेसे तीसरे महीनेमें कष्ट और पाँव भंग होनेसे सातवें महीनेमें कष्ट होता है। हाथ और पाँवके भंग होनेका फल नगरके साथ नगरके प्रशासक, मुखिया एवं पंचायतके प्रमुखको भी भोगना पड़ता है। प्रतिमा का अचानक भंग होना अत्यन्त अशुभ है। यदि रखी हुई प्रतिमा स्वयमेव ही मध्याह्न या प्रातः-कालमें भंग हो जाय तो उस नगरमें तीन महीनेके उपरान्त महान् रोग या संक्रामक रोग फैलते हैं। विशेष रूपसे हैजा, प्लेग एवं इनफ्लुएँजाकी उत्पत्ति होती है। पशुओंमें भी रोग उत्पन्न होता है।

यदि स्थिर प्रतिमा अपने स्थानसे हटकर दूसरी जगह पहुँच जाय या चलती हुई मालूम पड़े तो तीसरे महीने अचानक विपत्ति आती है। उस नगर या प्रदेशके प्रमुख अधिकारीको मृत्युतुल्य कष्ट भोगना पड़ता है। जनसाधारणको भी आधि-व्याधिजन्य कष्ट उठाना पड़ता है। यदि प्रतिमा सिंहासनसे नीचे उतर आवे अथवा सिंहासनसे नीचे गिर जाये तो उस प्रदेशके प्रमुखकी मृत्यु होती है। उस प्रदेशमें अकाल, महामारी और वर्षाभाव रहता है। यदि उपर्युक्त उत्पात लगातार सात दिन या पन्द्रह दिन तक हों तो निश्चयतः प्रतिपादित फलकी प्राप्ति होती है। यदि एकाध दिन उत्पात होकर शान्त हो गया तो पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता है। यदि प्रतिमा जीभ निकालकर कई दिनों तक रोती हुई दिखलाई पड़े तो जिस नगरमें यह घटना घटती है, उस नगरमें अत्यन्त उपद्रव होता है। प्रशासक और प्रशास्योंमें झगड़ा होता है। धन-धान्यकी क्षति होती है। चोर और डाकुओंका उपद्रव अधिक बढ़ता है। संग्राम, मारकाट एवं संघर्षकी स्थिति बढ़ती जाती है। प्रतिमाका रोना, राजा, मन्त्री या किसी महान् नेताकी मृत्युका सूचक; हँसना पारस्परिक विद्वेष संघर्ष एवं कलहका सूचक; चलना और काँपना बीमारी, संघर्ष, कलह, विषाद, आपसी फूट एवं गोलाकार चक्कर काटना भय, विद्वेष, सम्मानहानि तथा देशकी धन-जन हानिका सूचक है। प्रतिमाका हिलना तथा रंग बदलना अनिष्ट सूचक एवं तीन महीनोंमें नाना प्रकारके कष्टोंका सूचक अवगत करना चाहिए। प्रतिमाका पसीजना अग्निभय, चोरभय एवं महामारीका सूचक है। धुँआ सहित प्रतिमासे पसीना निकले तो जिस प्रदेशमें यह घटना घटित होती है, उससे सौ कोशकी दूरीमें चारों ओर धन-जनकी क्षति होती है। अति-वृष्टि या अनावृष्टिके कारण जनताको महान् कष्ट होता है।

तीर्थङ्करकी प्रतिमासे पसीना निकलना धार्मिक विद्वेष एवं संघर्षकी सूचना देता है। मुनि और श्रावक दोनोंपर किसी प्रकारकी विपत्ति आती है तथा दोनोंको विधर्मियों द्वारा उपसर्ग सहन करना पड़ता है। अकाल और अवर्षणकी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। यदि शिवकी प्रतिमासे पसीना निकले तो ब्राह्मणोंको कष्ट, कुबेरकी प्रतिमासे पसीना निकले तो वैश्यों को कष्ट, कामदेवकी प्रतिमासे पसीना निकले तो आगमकी हानि, कृष्णकी प्रतिमासे पसीना निकले तो सभी जातियोंको कष्ट; सिद्ध और बौद्ध प्रतिमाओंसे धुँआ सहित पसीना निकले तो उस प्रदेशके ऊपर महान् कष्ट, चण्डिका देवीकी प्रतिमामेंसे पसीना निकले तो स्त्रियोंको कष्ट, बाराही देवीकी प्रतिमासे पसीना निकले तो हाथियोंका ध्वंस; नागिनी देवीकी प्रतिमासे धुँआ सहित पसीना निकले तो गर्भनाश; रामकी प्रतिमासे पसीना निकले तो देशमें महान् उपद्रव, लूट-पाट, धननाश; सीता या पार्वतीकी प्रतिमासे पसीना निकले तो नारी-समाजको महान् कष्ट एवं सूर्यकी प्रतिमासे पसीना निकले तो संसारको अत्यधिक कष्ट और उपद्रव सहन करने पड़ते हैं। यदि तीर्थङ्करकी प्रतिमा भग्न हो और उससे अग्निकी लपट या रक्तकी धारा निक-लती हुई दिखलायी पड़े तो संसारमें मार-काट निश्चय होती है। आपसमें मार-काट हुए बिना किसीको भी शान्ति नहीं मिलती है। किसी भी देवकी प्रतिमाका भंग होना, फूटना या

हसना चलना आदि अशुभकारक है। उक्त क्रियाएँ एक सप्ताह तक लगातार होती हों तो निश्चय तीन महीनेके भीतर अनिष्टकारक फल प्राप्त होता है। ग्रहोंकी प्रतिमाएँ, चौबीस शासन देवोंका शासन देवियोंकी प्रतिमाएँ, क्षेत्रपाल और दिक्पालोंकी प्रतिमाओंमें उक्त प्रकारकी विकृति होनेसे व्याधि, धनहानि, मरण एवं अनेक प्रकारकी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देवकुमार, देवकुमारी, देववनिता एवं देवदूतोंके जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे समाजमें अनेक प्रकारकी हानि पहुँचाते हैं। देवोंके प्रासाद, भवन, चैत्यालय, वेदिका, तोरण, केतु आदिके जलने या बिजली द्वारा अग्नि प्राप्त होनेसे उस प्रदेशमें अत्यन्त अनिष्टकर क्रियाएँ होती हैं। उक्त क्रियाओंका फल छः महीनेमें प्राप्त होता है। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवोंके प्रकृति विपर्यय लोगोंके नाना प्रकारके कष्टोंका सामना करना पड़ता है।

आकाशमें असमयमें इन्द्रधनुष दिखलायी पड़े तो प्रजाको कष्ट, वर्षाभाव और धन-हानि होती है। इन्द्रधनुषका वर्षा ऋतुमें होना ही शुभ सूचक माना जाता है, अन्य ऋतुमें अशुभ सूचक कहा गया है। आकाशसे रुधिर, मांस, अस्थि और चर्वीकी वर्षा होनेसे संग्राम, जनताको भय, महामारी एवं प्रशासकोंमें मतभेद होता है। धान्य, सुवर्ण, वल्कल, पुष्प और फलकी वर्षा हो तो उस नगरका विनाश होता है, जिसमें यह घटना घटती है। जिस नगरमें कोयले और धूलिकी वर्षा होती है, उस नगरका सर्वनाश होता है। बिना बादलके आकाशसे ओलोंका गिरना, बिजलीका तड़पना तथा बिना गर्जनके अकस्मात् बिजलीका गिरना उस प्रदेशके लिए भयोत्पादक तथा नाना प्रकारकी हानियाँ होती हैं। किसी भी व्यक्तिको शान्ति नहीं मिल सकती है। निर्मल सूर्यमें छाया दिखलायी न दे अथवा विकृत छाया दिखलायी दे तो देशमें महाभय होता है। जब दिन या रातमें मेघ हीन आकाशमें पूर्व या पश्चिम दिशामें इन्द्रधनुष दिखलायी देता है; तब उस प्रदेशमें घोर दुर्भिक्ष पड़ता है। जब आकाशमें प्रतिध्वनि हो, तूर्य-तुरईकी ध्वनि सुनाई दे एवं आकाशमें घण्टा, झालरका शब्द सुनाई पड़े तो दो महीने तक महाध्वनिसे प्रजा पीड़ित रहती है। आकाशमें किसी भी प्रकारका अन्य उत्पात दिखलायी पड़े तो जनताको कष्ट, व्याधि, मृत्यु एवं संघर्ष जन्य दुःख उठाना पड़ता है।

दिनमें धूलिका बरसना, रात्रिके समय मेघविहीन आकाशमें नक्षत्रोंका नाश या दिनमें नक्षत्रोंका दर्शन होना संघर्ष, मरण, भय और धन-धान्यका विनाश सूचक है। आकाशका बिना बादलोंका रंग बिरंग होना, विकृत आकृति और संस्थानका होना भी अशुभसूचक है। जहाँ छः महीनों तक लगातार हर महीने उल्का दिखलाई देती रहे, वहाँ मनुष्यका मरण होता है। सफेद और धूसर रंगकी उल्काएँ पुण्यात्मा कहे जानेवाले व्यक्तियोंको कष्ट पहुँचाती हैं। पञ्चरंगी उल्का महामारी और इधर-उधर टकरा कर नष्ट होनेवाली उल्का देशमें उपद्रव उत्पन्न करती है। अन्तरिक्ष निमित्तोंका विचार करते समय पूर्वोक्त विद्युत्पात, उल्कापात आदिका विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

भूमि पर प्रकृति विपर्यय—उत्पात दिखलायी पड़ें तो अनिष्ट समझना चाहिए। ये उत्पात जिस स्थानमें दिखलायी देते हैं, अनिष्ट फल उसी जगह घटित होता है। अस्त्र-शस्त्रोंका जलना, उनके शब्द होना, जलते समय अग्निसे शब्द होना तथा ईंधनके बिना जलाये अग्निका जल जाना अनिष्ट सूचक है। इस प्रकारके उत्पातमें किसी आत्मीयकी मृत्यु होती है। असमयमें वृक्षोंमें फल-पुष्पका आना, वृक्षोंका हँसना, रोना दूध निकलना आदि उत्पात धनक्षय, शिशुओंमें रोग तथा आपसमें झगड़ा होनेकी सूचना देते हैं। वृक्षोंसे मद्य निकले तो वाहनोंका नाश, रुधिर निकलनेसे संग्राम, शहद निकलनेसे रोग, तेल निकलनेसे दुर्भिक्ष, जल निकलनेसे भय और दुर्गन्धित पदार्थ निकलनेसे पशु क्षय होता है। अंकुर सूख जानेसे वीर्य और अन्नका नाश, रोगहीन वृक्ष अकारण सूख जायें तो सेनाका विनाश और अन्नक्षय, आप ही वृक्ष खड़े होकर उठ

बैठे तो देवका भय, कुसमयमें फल-फूलोंका आना प्रशासक और नेताओंका विनाश, वृक्षोंसे ज्वाला और धुँआ निकले तो मनुष्योंका क्षय होता है। वृक्षोंसे मनुष्यके जैसा शब्द निकलता हुआ सुनाई पड़े तो अत्यन्त अशुभकारी होता है। इससे मनुष्योंमें अनेक प्रकारकी बीमारियाँ फैलती है, जनतामें अनेक प्रकारसे अशान्ति आती है।

कमल आदिके एक कालमें दो या तीन बालकी उत्पत्ति हो अथवा दो फूल या फल दिखलायी पड़े तो जिस जगह यह घटना घटित होती है, वहाँके प्रशासकका मरण होता है। जिस किसानके खेतमें यह निमित्त दिखलायी पड़ता है, उसकी भी मृत्यु होती है। जिस गाँवमें यह उत्पात दिखलायी पड़ता है, उस गाँवमें धन-धान्यके विनाशके साथ अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। फल-फूलोंमें विकारका दिखलायी पड़ना, प्रकृति विरुद्ध फल-फूलोंका दृष्टिगोचर होना ही उस स्थानकी शान्तिको नष्ट करनेवाला तथा आपसमें संघर्ष उत्पन्न करनेवाला है। शीत और ग्रीष्ममें परिवर्तन हो जाने से अर्थात् शीत ऋतुमें गर्मी और ग्रीष्म ऋतुमें शीत पड़नेसे अथवा सभी ऋतुओंमें परस्पर परिवर्तन हो जानेसे दैवभय, राजभय, रोगभय और नाना प्रकारके कष्ट होते हैं। यदि नदियाँ नगरके निकटवर्ती स्थानको छोड़कर दूर हटकर बहने लगें तो उन नगरोंकी आबादी घट जाती हैं, वहाँ अनेक प्रकारके रोग फैलते हैं। यदि नदियोंका जल विकृत हो जाय, वह रुधिर, तैल, घी, शहद आदिकी गन्ध और आकृतिके समान बहता हुआ दिखलायी पड़े तो तो भय, अशान्ति और धनक्षय होता है। कुओंसे धूम निकलता हुआ दिखलायी पड़े, कुओंका जल स्वयं ही खौलने लगे, रोने और गानेका शब्द जलसे निकले तो महामारी फैलती है। जलका रूप, रस, गन्ध और स्पर्शमें परिवर्तन हो जाय तो भी महामारीकी सूचना समझनी चाहिए।

स्त्रियोंका प्रसव विकार होना, उनके एक साथ तीन-चार बच्चोंका पैदा करना, उत्पन्न हुए बच्चोंकी आकृति पशुओं और पक्षियोंके समान हो तो, जिन कुलमें यह घटना घटित होती है, उस कुलका विनाश, जिस गाँव या नगरमें घटना घटित होती है, उस गाँव या नगरमें महामारी, अवर्षण और अशान्ति रहती है। इस प्रकारके उत्पातका फल ६ महीने से लेकर एक वर्ष तक प्राप्त होता है। घोड़ी, ऊँटनी, भैंस, गाय और हथिनी एक साथ दो बच्चे पैदा करें तो इनकी मृत्यु हो जाती है तथा उस नगरमें मारकाट होती है। एक जातिका पशु दूसरे जातिके पशुके साथ मैथुन करे तो अमंगल होता है, दो बैल परस्परमें स्तनपान करें तथा कुत्ता गायके बछड़ेका स्तनपान करे तो महान् अमंगल होता है। पशुओंके विपरीत आचरणसे भी अनिष्टकी आशंका समझनी चाहिए। यदि दो स्त्री जातिके प्राणी आपसमें मैथुन करें तो भय, स्तनपान अकारण करें तो हानि, दुर्भिक्ष एवं धन विनाश होता है।

रथ, मोटर, बहली आदि की सवारी बिना चलाये चलने लगे और बिना किसी खराबीके चलानेपर भी न चले तथा सवारियाँ चलानेपर भूमिमें गड़ जाँय तो अशुभ होता है। बिना बजाये तुरहीका शब्द होने लगे और बजानेपर बिना किसी प्रकारकी खराबीके तुरही शब्द न करे तो इससे परचक्रका आगमन होता है अथवा शासकका परिवर्तन होता है। नेताओंमें मतभेद होता है और वे आपसमें झगड़ते हैं। यदि पवन स्वयं ही साँय-साँय की विकृत ध्वनि करता हुआ चले तथा पवनसे घोर दुर्गन्ध आती हो तो भय होता है, प्रजाका विनाश होता है तथा दुर्भिक्ष भी होता है। घरके पालतू पक्षिगण वनमें जायें और वनैले पक्षी निर्भय होकर पुरमें प्रवेश करें, दिनमें चरनेवाले रात्रिमें अथवा रात्रिके चरनेवाले दिनमें प्रवेश करें तथा दोनों सन्ध्याओंमें मृग और पक्षी मंडल बाँधकर एकत्रित हों तो भय, मरण, महामारी एवं धान्यका विनाश होता है। सूर्यकी ओर मुँहकर गीदड़ रोयें, कबूतर या उल्लू दिनमें राजभवनमें प्रवेश करे, प्रदोषके समय मुर्गा शब्द करे, हेमन्त आदि ऋतुओंमें कोयल बोले, आकाशमें बाज आदि पक्षियोंका प्रतिलोम मण्डल विचरण करे तो भयदायी होता है। घर, चैत्यालय और

द्वारपर अकारण ही पक्षियोंका झुंड गिरे तो उस घर या चैत्यालयका विनाश होता है। यदि कुत्ता हड्डी लेकर घरमें प्रवेश करे तो रोग उत्पन्न होनेकी सूचना देता है। पशुओंकी आवाज मनुष्योंके समान मालूम पड़ती हो तथा वे पशु मनुष्योंके समान आचरण भी करें तो उस स्थान पर घोर संकट उपस्थित होता है। रातमें पश्चिम दिशाकी ओर से कुत्ता शब्द करते हों और उनके उत्तरमें शृगाल शब्द करे अर्थात् पहले कुत्ता बोले, पश्चात् शृगाल अनन्तर पुनः कुत्ता, पश्चात् शृगाल इस प्रकार शब्द करें तो उस नगरका विनाश छः महीनेके बाद होने लगता है और तीन वर्षों तक उस नगरपर आपत्ति आती रहती है। भूकम्प हुए बिना पृथ्वी फट जाय, बिना अग्निके धुँआ दिखलायी पड़े और बालकगण मार-पीटका खेल खेलते हुए कहें—मार डालो, पीटो, इसका विनाश कर दो तो उस प्रदेशमें भूकम्प होनेकी सूचना समझनी चाहिए। बिना बनाये किसी व्यक्तिके घरकी दीवालोंपर गेरूके लाल चिह्न या कोयलेसे काले चित्र बन जायें तो उस घरका पाँच महीनेके बाद विनाश होता है। जिस घरमें अधिक मकड़ियाँ जाला बनाती हैं उस घरमें कलह होती है। गाँव या नगरके बाहर दिनमें शृगाल और उल्लू शब्द करें तो उस गाँवके विनाशकी सूचना समझनी चाहिए। वर्षाकालमें पृथ्वीका काँपना, भूकम्प होना, बादलोंकी आकृतिका बदल जाना, पर्वत और घरोंका चलायमान होना, भयंकर शब्दोंका चारों दिशाओंसे सुनायी पड़ना, सूखे हुए वृक्षोंमें अंकुरका निकल आना, इन्द्रधनुषका काले रूपमें दिखलायी पड़ना एवं श्यामवर्णकी विद्युतका गिरना भय, मृत्यु और अनावृष्टिका सूचक है। जब वर्षाऋतुमें अधिक वर्षा होनेपर भी पृथ्वी सूखी दिखलायी पड़े तो उस वर्ष दुर्भिक्षकी स्थिति समझनी चाहिए। ग्रीष्मऋतुमें आकाशमें बादल दिखलायी पड़े, बिजली कड़के और चारों ओर वर्षाऋतुकी बहार दिखलायी पड़े तो भय तथा महामारी होती है। वर्षाऋतुमें तेज हवा चले और त्रिकोण या चौकोर ओले गिरें तो उस वर्ष अकालकी आशंका समझनी चाहिए। यदि गाय, बकरी, घोड़ी, हथिनी और स्त्रीके विपरीत गर्भकी स्थिति हो तथा विपरीत सन्तान प्रसव करें तो राजा और प्रजा दोनोंके लिए अत्यन्त कष्ट होता है। ऋतुओंमें अस्वाभाविक विकार दिखलायी पड़े तो जगत्में पीड़ा, भय, संघर्ष आदि होते हैं। यदि आकाशमें धूलि, अग्नि और धुँआकी अधिकता दिखलायी पड़े तो दुर्भिक्ष, चोरोंका उपद्रव एवं जनतामें अशान्ति होती है।

रोग-सूचक उत्पात—चन्द्रमा कृष्ण वर्णका दिखलायी दे तथा ताराएँ विभिन्न वर्णकी टूटती हुई मालूम पड़ें तो, सूर्य उदयकालमें कई दिनों तक लगातार काला और रोता हुआ दिखलायी पड़े तो दो महीने उपरान्त महामारीका प्रकोप होता है। बिल्ली तीन बार रोकर चुप हो जाय तथा नगरके भीतर आकर शृगाल—सियार तीन बार रोकर चुप हो जाय तो उस नगरमें भयंकर हैजा फैलता है। उल्कापात हरे वर्णका हो, चन्द्रमा भी हरे वर्णका दिखलायी पड़े तो सामूहिक रूपमें ज्वरका प्रकोप होता है। यदि सूखे वृक्ष अचानक हरे हो जायँ तो उस नगरमें सात महीनेके भीतर महामारी फैलती है। चूहोंका समूह-सेना बनाकर नगरसे बाहर जाता हुआ दिखलायी पड़े तो प्लेगका प्रकोप समझना चाहिए। पीपल वृक्ष और वट वृक्षमें असमयमें फल पुष्प आवें तो नगर या गाँवमें पाँच महीनोंके भीतर संक्रामक रोग फैलता है, जिससे सभी प्राणियोंको कष्ट होता है। गोधा मेढक और मोर रात्रिमें भ्रमण करें तथा श्वेत काक एवं गृद्ध घरोंमें घुस आवें तो उस नगर या गाँवमें तीन महीनेके भीतर बीमारी फैलती है। काक मैथुन देखनेसे छः मासमें मृत्यु होती है।

धन-धान्य नाशसूचक उत्पात—वर्षाऋतुमें लगातार सात दिनों तक जिस प्रदेशमें ओले बरसते हैं, उस प्रदेशके धन-धान्यका नाश हो जाता है। रात या दिन चन्द्र किसीके घरमें प्रविष्ट होकर बोलने लगे तो उस व्यक्तिकी सम्पत्ति छः महीनेमें विलीन हो जाती है। घरके द्वार पर स्थित वृक्ष रोने लगे तो उस घरकी सम्पत्ति विलीन होती है घरमें रोग एवं कष्ट फैलते हैं।

अचानक घरकी छतके ऊपर स्थित होकर श्वेत काक पाँच बार जोर-जोरसे काँव-काँव करे, पुनः चुप होकर तीन बार धीरे-धीरे काँव-काँव करे तो उस घरकी सम्पत्ति एक वर्षमें विलीन हो जाती है। यदि यह घटना नगरके बाहर पश्चिमी द्वार पर घटित हो तो नगरकी सम्पत्ति विलीन हो जाती है। नगरके मध्यमें किसी व्यन्तरकी बाधा या व्यन्तरका दर्शन लगातार कई दिनों तक हो तो भी नगरकी श्री विलीन हो जाती है। यदि आकाशसे दिनभर धूल बरसती रहे, तेज वायु चले और दिन भयंकर मालूम हो तो उस नगरकी सम्पत्ति नष्ट होती है, जिस नगरमें यह घटना घटती है। जंगलमें गई हुई गायें मध्याह्नमें ही रंभाती हुई लौट आवें और वे अपने बछड़ोंको दूध न पिलावें तो सम्पत्तिका विनाश समझना चाहिए। किसी भी नगरमे कई दिनों तक संघर्ष होता रहे वहाँके निवासियोंमें मेलमिलाप न हो तो पाँच महीनोंमें समस्त सम्पत्तिका विनाश हो जाता है। वरुण नक्षत्रका केतु दक्षिणमें उदय हो तो भी सम्पत्तिका विनाश समझना चाहिए। यदि लगातार तीन दिनों तक प्रातः सन्ध्या काली, मध्याह्न सन्ध्या नीली और सायं सन्ध्या मिश्रित वर्णकी दिखलायी पड़े तो भय, आतंकके साथ द्रव्य विनाशकी भी सूचना मिलती है। रातको निरभ्र आकाशमें ताराओंका अभाव दिखलायी पड़े या ताराएँ टूटती हुई मालूम हों तो रोग और धननाश दोनों फल प्राप्त होते हैं। यदि ताराओंका रंग भस्मके समान मालूम हो, दक्षिण दिशा रुदन करती हुयी और उत्तर दिशा हँसती हुई सी दिखलायी पड़े तो धन-धान्यका विनाश होता है। पशुओं-की वाणी यदि मनुष्यके समान मालूम हो तो धन-धान्यके विनाशके साथ संग्रामकी सूचना भी मिलती है। कबूतर अपने पंखोंको पटकता हुआ जिस घरमें उल्टा गिरता है और अकारण ही मृत जैसा हो जाता है, उस घरकी सम्पत्तिका विनाश हो जाता है। यदि गाँव या नगरके बीस पच्चीस बच्चे जो नग्न होकर धूलिमें खेल रहे हों, वे अकस्मात् नष्ट हो गया 'नष्ट हो गया' इस शब्दका व्यवहार करें तो उस नगरसे सम्पत्ति रूठकर चली जाती है। रथ, मोटर, इक्का, रिक्सा, साइकिल आदि की सवारीपर चढ़ते ही कोई व्यक्ति पानी गिराते हुए दिखलायी पड़े तो भी धन नाश होता है। दक्षिण दिशाकी ओरसे शृगालका रोते हुए नगरमें प्रवेश करना धन-हानिका सूचक है।

वर्षाभाव सूचक उत्पात—ग्रीष्म ऋतुमें आकाशमें इन्द्रधनुष दिखलायी पड़े, माघ-मासमें गर्मी पड़े तो उस वर्ष वर्षा नहीं होती है। वर्षाऋतुके आगमनमें कुहासा छा जावे तो उस वर्ष वर्षाका अभाव जानना चाहिए। आषाढ़ महीनेके प्रारम्भमें इन्द्रधनुषका दिखलायी पड़ना भी वर्षाभाव सूचक है। सर्पको छोड़कर अन्य जातिके प्राणी सन्तानका भक्षण करें तो वर्षाभाव और घोर दुर्भिक्षकी सूचना समझनी चाहिए। यदि चूहे लड़ते हुए दिखलायी पड़ें, रातके समय श्वेत धनुष दिखलायी दे, सूर्यमें छेद मालूम पड़े, चन्द्रमा टूटा हुआ-सा दिखलायी पड़े, धूलिमें चिड़ियाँ स्नान करें और सूर्यके अस्त होते समय सूर्यके पास ही दूसरा उद्योतवाला सूर्य दिखाई दे तो वर्षाभाव होता है तथा प्रजाको कष्ट उठाना पड़ता है।

अग्निभय सूचक-उत्पात—सूखे काठ, तिनके, घास आदिका भक्षण कर घोड़े सूर्यकी ओर मुँहकर हींसने लगें तो तीन महीनेमें नगरमें अग्नि प्रकोप होता है। घोड़ोंका जलमें हींसना, गायोंका अग्नि चाटना या खाना, सूखे वृक्षोंका स्वयं जल उठना, एकत्र घास या लकड़ीमेंसे स्वयं धुँआ निकलना, लड़कोंका आगसे खेल करना, या खेलते-खेलते बच्चे घरमें आग ले आवें पक्षि आकाशमें उड़ते हुए अकस्मात् गिर जावें तो उस गाँव या नगरमें पाँच दिनसे लेकर तीन महीने तक अग्निका प्रकोप होता है।

राजनैतिक उपद्रव सूचक—जिस स्थान पर मनुष्य गाना गा रहे हों, वहाँ गाना सुननेके लिए यदि घोड़ी, हथिनी, कुतियाँ एकत्र हो तो राजनैतिक उपद्रव होते हैं। जहाँ बच्चे खेलते-खेलते आपसमें लड़ाई करें, क्रोधसे झगड़ा आरम्भ करें वहाँ युद्ध अवश्य होता है तथा राजनीतिके

मुखियोंमें आपसमें फूट पड़ जानेसे देशकी हानि भी होती है। विना बैलोंका हल यदि आपसे आप खड़ा होकर नाचने लगे तो परचक्र—जिस पार्टीका शासन है, उससे विपरीत पार्टीका शासन होता है। शासन प्राप्त पार्टी या दलको पराजित होना पड़ता है। शहरके मध्यमें कुत्ते ऊँचा मुँह कर लगातार आठ दिन तक भूँकते दिखलायी पड़ें तो भी राजनैतिक झगड़े उत्पन्न होते हैं। जिस नगर या गाँवमें गीदड़, कुत्ते और चूहा बिल्लीको मार लगावे, उस नगर या गाँवमें राजनीतिको लेकर उपद्रव होते हैं। उसमें अशान्ति इस घटनाके बाद दस महीने तक रहती है। जिस नगर या गाँवमें सूखा वृक्ष स्वयं ही उखड़ता हुआ दिखलायी पड़े, उस नगर या गाँवमें पार्टी बन्दी होती है। नेताओं और मुखियोंमें परस्पर वैमनस्य हो जाता है, जिससे अत्यधिक हानि होती है। जनतामें भी फूट हो जानेसे राजनीतिकी स्थिति और भी विषम हो जाती है। जिस देशमें बहुत मनुष्योंकी आवाज सुनाई पड़े, पर बोलनेवाला कोई नहीं दिखलायी दे, उस देश या नगरमें पाँच महीनों तक अशान्ति रहती है। रोग-बीमारीका प्रकोप भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय गीदड़, लोमड़ी किसी नगर या ग्रामके चारों ओर रुदन करें तो भी राजनैतिक झंझट रहता है।

वैयक्तिक हानि-लाभ सूचक उत्पात—यदि कोई व्यक्ति बाजोंके न बजाने पर भी लगातार सात दिनों तक बाजोंकी ध्वनि सुने तो चार महीनेमें उसकी मृत्यु तथा धन हानि होती है। जो अपनी नाकके अग्रभाग पर मक्खीके न रहने पर भी मक्खी बैठी हुई देखता है, उसे व्यापारमें चार महीने तक हानि होती है। यदि प्रातःकाल जागने पर हाथोंकी हथेलियों पर दृष्टि पड़ जाय तथा हाथमें कलश, ध्वजा और छत्र यों ही दिखलायी पड़े तो उसे सात महीने तक धनका लाभ होता है तथा भावी उन्नति भी होती है। कहीं गन्धके साधन न रहने पर भी सुगन्ध मालूम पड़े तो मित्रोंसे मिलाप, शान्ति एवं व्यापारमें लाभ तथा सुखकी प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति स्थिर चीजोंको चलायमान और चञ्चल वस्तुओंको स्थिर देखता है, उसे व्याधि, मरणभय एवं धननाशके कारण कष्ट होता है। प्रातःकाल यदि आकाश काला दिखलायी पड़े और सूर्यमें अनेक प्रकारके दाग दिखलायी दें तो उस व्यक्तिको तीन महीनेके भीतर रोग होता है।

सुख दुःखकी जानकारीके लिए अन्य फलादेश

नेत्रस्फुरण—आँख फड़कनेका विशेष फलादेश—दाहिनी आँखका नीचेका हिस्सा कानके पासका फड़कनेसे हानि, नीचेका मध्यका हिस्सा फड़कनेसे भय और नाकके पास वाला नीचेका हिस्सा फड़कनेसे धनहानि, आत्मीयको कष्ट या मृत्यु, क्षय आदि फल होते हैं। इसी आँखका ऊपरी भाग अर्थात् बरौनीका कानके निकटवाला हिस्सा फड़कनेसे सुख, मध्यका भाग फड़कनेसे धन लाभ और ऊपर ही नाकके पासवाला भाग फड़कनेसे हानि होती है। बायीं आँख का नीचेवाला भाग नाकके पासका फड़कनेसे सुख, मध्यका हिस्सा फड़कनेसे भक्ष और कानके पासवाला नीचेका हिस्सा फड़कनेसे सम्पत्ति लाभ होता है। ऊपर बरौनीका नाकके पासवाला भाग फड़कनेसे भय, मध्यका हिस्सा फड़कनेसे चोरी या धनहानि और कानके पासवाला हिस्सा फड़कनेसे कष्ट, मृत्यु अपनी या किसी आत्मीयकी अथवा अन्य किसी भी प्रकारकी अशुभ सूचना चाहिए। साधारणतया स्त्रीकी बायीं आँखका फड़कना और पुरुषकी दाहिनी आँखका फड़कना शुभ माना जाता है, पर विशेष जाननेके लिए दोनों ही नेत्रोंके पृथक् पृथक् भागोंके फड़कनेका विचार करना चाहिए।

अंगस्फुरण फल—अंग फड़कनेका फल

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
मस्तक स्फुरण	पृथ्वी लाभ	वक्षःस्फुरण	विजय	कण्ठ स्फुरण	ऐश्वर्य लाभ
ललाट स्फुरण	स्थान लाभ	हृदय स्फुरण	वांछित सिद्धि	ग्रीवा स्फुरण	रिपु भय
कन्धा स्फुरण	भोग समृद्धि	कटि स्फुरण	प्रमोद-बल	पृष्ठ स्फुरण	युद्ध पराजय
भ्रूमध्य	सुख प्राप्ति	कटिपार्श्व	प्रीति	कपोल स्फुरण	वरांगना प्राप्ति
भ्रूयुग्म	महान् सुख	नाभि स्फुरण	स्त्री नाश	मुख स्फुरण	मित्र प्राप्ति
कपाल स्फुरण	शुभ	आंत्रक स्फुरण	कोश वृद्धि	बाहु स्फुरण	मधुर भोजन
नेत्र स्फुरण	धन प्राप्ति	भग स्फुरण	पति प्राप्ति	बाहु मध्य	धनागम
नेत्रकोण स्फुरण	लक्ष्मी लाभ	कुक्षि स्फुरण	सुप्रीति लाभ	वस्तिदेश स्फुरण	अभ्युदय
नेत्रसमीप	प्रिय समागम	उदर स्फुरण	कोश प्राप्ति	उरःस्फुरण	वस्त्र लाभ
नेत्रपक्ष स्फुरण	सफलता, राज-सम्मान	लिंग स्फुरण	स्त्रीलाभ	जानु स्फुरण	शत्रु वृद्धि
नेत्रपक्ष-पलक स्फुरण	मुकदमेमें विजय	गुदा स्फुरण	वाहन प्राप्ति	जंघा स्फुरण	स्वामि प्राप्ति
नेत्रकोपाङ्ग देश स्फुरण	कलत्र लाभ	वृषण स्फुरण	पुत्र प्राप्ति	पादोपरि	स्थान लाभ
नासिका स्फुरण	प्रीति सुख	ओष्ठ स्फुरण	प्रियवस्तु लाभ	पादतल	नृपत्व
हस्त स्फुरण	सद् द्रव्यलाभ	हनु स्फुरण	भय	पाद स्फुरण	अलाभ

पल्लीपतन और गिरगिट आरोहण फल बोधक चक्र

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
शिर	लाभ	ललाट	बन्धुदर्शन	भ्रूमध्य	राज्यसंबंध	उत्तरोष्ठ	धननाश	अधरोष्ठ	नवतुल्यता
नासाग्र	व्याधि	दक्षिणकं०	आयुवृद्धि	वामकर्ण	बहुलाभ	नेत्र २	धनप्राप्ति	द० भुज	बुद्धिनाश
वामभुजा	राजभय	कंठ	शत्रुनाश	स्तनद्वय	दुर्भाग्य	उदर	भूषणलाभ	पृष्ठदेश	बहुधन प्राप्ति
जानुद्वय	शुभागम	जंघा	शुभ	हस्तद्वय	वस्त्रलाभ	स्कन्ध	विजय		
कटिभाग	सवारी लाभ	दक्षिण-मणिबंध	कष्ट, धन नाश	वाममणिबंध	कीर्तिनाश	हृदय	धनलाभ	नासिका	मिष्टान्न भोजन
						वामपाद	नाश		
गुल्फ	बन्धन	केशान्त	मरण	दक्षिणपाद	गमन			मुख	स्त्रीनाश
								पादमध्य	मरण

पैर, जंघा, घुटने, गुदा और कमरपर छिपकली गिरनेसे बुरा फल होता है, अन्यत्र प्रायः शुभ फल होता है। पुरुषोंके बायें अंगका जो फल बतलाया गया है, उसे स्त्रियोंके दाहिने भागका तथा पुरुषोंके दाहिने अंगके फलादेशको स्त्रियोंके बायें भागका फल जानना चाहिए। छिपकलीके गिरनेसे और गिरगिटके ऊपर चढ़नेसे बराबर ही फल होता है। संक्षेपमें बतलाया गया है।

यदि पतति च पल्ली दक्षिणाङ्गे नराणां; स्वजनजनविरोधो वामभागे च लाभम्।
उदरशिरसि कण्ठे पृष्ठभागे च मृत्युं; करचरणहृदिस्थे सर्वसौख्यं मनुष्यः॥

अर्थात्—दाहिने अंगपर पल्ली पतन हो तो आत्मीय लोगोंमें विरोध हो और वाम अंग पर पल्लीके गिरनेसे लाभ होता है। पेट, सिर, कण्ठ, पीठपर पल्लीके गिरनेसे मृत्यु तथा हाथ, पाँव और छातीपर गिरनेसे सब सुख प्राप्त होते हैं।

गणित द्वारा पल्ली पतनके प्रश्नका उत्तर

'तिथिप्रहरसंयुक्ता तारकावारमिश्रिता, नवभिस्तु हरेद् भागं शेषं ज्ञेयं फलाफलम्।
घातं नाशं तथा लाभं कल्याणं जयमङ्गले। उत्साहहानी मृत्युश्च छिक्का पल्ली च जाम्बुक॥'

अर्थात्—जिस दिन जिस प्रहरमें पल्ली पतन हुआ हो—छिपकली गिरी हो उस दिनकी तिथि शुक्ल प्रतिपदासे गिनकर लेना, प्रातःकालसे प्रहर और अश्विनीसे पतनके नक्षत्र तक लेना अर्थात् तिथि संख्या, नक्षत्र संख्या और प्रहर संख्याको योग कर देना, इस योगमें नौ का भाग देनेपर एक शेषमें घात, दोमें नाश, तीनमें लाभ, चारमें कल्याण, पाँचमें जय, छःमें मंगल, सातवेंमें उत्साह, आठमें हानि और नौ शेषमें मृत्यु फल कहना चाहिए। उदाहरण—रामलालके ऊपर चैत्र कृष्ण द्वादशीको अनुराधा नक्षत्रमें दिनमें १० बजे छिपकली गिरी है। इसका गणित द्वारा विचार करना है, अतः तिथि संख्या २७ (फाल्गुन शुक्ला १ से चैत्र कृष्णा द्वादशी तक) नक्षत्र संख्या १७ (अश्विनीसे अनुराधा तक), प्रहर संख्या २ (प्रातःकाल सूर्योदयसे तीन-तीन घंटेका एक-एक प्रहर लेना चाहिए) अतः २७+१७+२=४६÷९=५ ल० शेष १ यहाँ उदाहरणमें एक शेष रहा है, अतः इसका फल घात होता है। किसी दुर्घटनाका शिकार यह व्यक्ति होगा।

पल्ली-पतनका फलादेश इस प्रकारका भी मिलता है कि प्रातःकालसे लेकर मध्याह्न काल तक पल्लीपतन होनेसे विशेष अनिष्ट, मध्याह्नसे सायंकाल तक पल्लीपतन होनेसे साधारण अनिष्ट और सन्ध्याकालके उपरान्त पल्ली-पतन होनेसे फलाभाव होता है। किसी-किसीका यह भी मत है कि तीनों कालोंकी सन्ध्याओंमें पल्लीपतन होनेसे अधिक अनिष्ट होता है। इसका फल किसी-न-किसी प्रकारकी अशुभ घटनाका घटित होना है। दिनमें सोमवारको पल्ली-पतन होनेसे साधारण फल, मंगलवारको पल्लीपतनका विशेष फल, बुधवारको पल्लीपतन होनेसे शुभ फलकी वृद्धि तथा अशुभ फलकी हानि, गुरुवारको पल्लीपतन होनेसे शुभ फलका अधिक प्रभाव तथा अशुभ फल साधारण, शुक्रवारको पल्लीपतन होनेसे सामान्य फलादेश, शनिवारको पल्लीपतन होनेसे अशुभ फलकी वृद्धि और शुभ फलकी हानि एवं रविवारको पल्लीपतन होनेसे शुभ फल भी अशुभ फलके रूपमें परिणत हो जाता है। पल्लीपतनका अनिष्ट फल तभी विशेष होता है, जब शनि या रविवारको भरणी या आश्लेषा नक्षत्रमें चतुर्थी या नवमी तिथिको सन्ध्याकालमें पल्ली-छिपकली गिरती है। इसका फल मृत्युकी सूचना या किसी आत्मीयकी मृत्यु सूचना अथवा किसी मुकद्दमेकी पराजयकी सूचना समझनी चाहिए।

पञ्चदशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहचारं जिनोदितम् ।
तत्रादितः प्रवक्ष्यामि शुक्रचारं निबोधत ॥१॥

अब जिनेन्द्र भगवान्‌के द्वारा प्रतिपादित ग्रहाचारका निरूपण करता हूँ । इसमें सबसे पहले शुक्राचारका वर्णन किया जा रहा है ॥१॥

भूतं भव्यं भवद्‌वृष्टिमवृष्टिं भयमग्निजम् ।
जयाऽजयोरुजं चापि सर्वान् सृजति भार्गवः ॥२॥

भूत-भविष्य फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय, रोग, धन-सम्पत्ति आदि सभी फलका शुक्र निर्देशक है ॥२॥

म्रियन्ते वा प्रजास्तत्र वसुधा[2] वा प्रकम्पते ।
दिवि मध्ये यदा गच्छेदर्धरात्रेण[1] भार्गवः ॥३॥

जब अर्धरात्रिके समय शुक्र आकाशमें गमन करता है, तब प्रजाकी मृत्यु होती है और पृथ्वी कम्पित होती है ॥३॥

दिवि मध्ये यदा दृश्येच्छुक्रः सूर्यपथास्थितः ।
सर्वभूतभयं कुर्याद्विशेषाद्वर्णसङ्करम् ॥४॥

सूर्यकी स्थितिमें स्थित होकर—सूर्यके साथ रहकर शुक्र यदि आकाशके मध्यमें दिखलायी पड़े तो समस्त प्राणियोंको भय करता है तथा विशेषरूपसे वर्णसङ्करोंके लिए भयप्रद है ॥४॥

अकाले उदितः शुक्रः [3]प्रस्थितो वा यदा भवेत् ।
तदा त्रिसांवत्सरिकं ग्रीष्मे वर्षेत्सरसु वा ॥५॥

यदि असमयमें शुक्र उदित या अस्त हो तो तीन वर्षों तक ग्रीष्म और शरद्‌ऋतुमें ईति—प्लेग या अन्य महामारी होती है ॥५॥

गुरुभार्गवचन्द्राणां रश्मयस्तु यदा हताः ।
एकाहमपि दीप्यन्ते तदा विन्द्याद्भयं खलु ॥६॥

यदि बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमाकी किरणें घातित होकर एक दिन भी दीप्त हों तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥६॥

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि ।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत् ॥७॥

भरणी नक्षत्रको आदि कर चार-चार नक्षत्रोंके छः मण्डल होते हैं, जिनके नाम निम्न-प्रकार अवगत करना चाहिए ॥७॥

१. अर्धारच मु० । २. च० मु० । ३. निवृत्तो वा यदा तदा० मु० । त्रिसांवत्सरिकं ग्रीष्मं शारदं चेतिमिर्भवेत् मु० ।

सर्वभूतहितं रक्तं परुषं रोचनं तथा ।
ऊर्ध्वं चण्डं च तीक्ष्णं च [1]निरुक्तानि निबोधत ॥८॥

समस्त प्राणियोंको कल्याण करनेवाले रक्त, परुष, दीप्तिमान, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण ये छः मण्डल हैं। नामके अनुसार उसका अर्थ अवगत करना चाहिए।॥८॥

[2]चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च ।
पञ्चकं षट्कविज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गवः ॥९॥

भरणीसे चार नक्षत्र—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिराका प्रथम मण्डल; आर्द्रासे चार नक्षत्र—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषाका द्वितीय मण्डल; मघासे पाँच नक्षत्र—मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्राका तृतीय मण्डल; स्वातिसे तीन नक्षत्र—स्वाति, विशाखा और अनुराधाका चतुर्थ मण्डल; ज्येष्ठासे पाँच नक्षत्र—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रवण या पञ्चम मण्डल एवं धनिष्ठासे छः नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवतीका षष्ठ मण्डल होता है। इन मण्डलोंके नाम क्रमशः रक्त, परुष, रोचन, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण हैं ॥९॥

प्रथमं च द्वितीयं च मध्यमे शुक्रमण्डले ।
तृतीयं पञ्चमं चैव मण्डले साधुनिन्दिते ॥१०॥

शुक्रके प्रथम और द्वितीय मण्डल मध्यम हैं तथा तृतीय और पञ्चम साधुओंके द्वारा निन्दित हैं ॥१०॥

चतुर्थं चैव षष्ठं च मण्डले प्रवरे स्मृते ।
आद्ये द्वे मध्यमे विन्द्यान्निन्दिते त्रिकपञ्चमे ॥११॥

चतुर्थ और षष्ठ मण्डल उत्तम है, आदिके दो—प्रथम और द्वितीय मध्यम हैं तथा तृतीय और पञ्चम निन्दित हैं ॥११॥

श्रेष्ठे चतुर्थषष्ठे च मण्डले भार्गवस्य [3]हि ।
शुक्लपक्षे [4]प्रशस्येत् सर्वेष्वस्तमनोदये ॥१२॥

शुक्ल पक्षमें अनुदित—अस्त शुक्रके चौथे और छठवें मण्डलकी प्रशंसाकी गयी है ॥१२॥

[5]अथ गोमूत्रगतिमान् भार्गवो नाभिवर्षति ।
विकृतानि च वर्तन्ते सर्वमण्डलदुर्गतौ ॥१३॥

यदि वक्रगति शुक्र हो तो वर्षा नहीं होती है। चौथे और षष्ठके अतिरिक्त अन्य सभी मण्डलोंमें रहनेवाला शुक्र विकृत—उत्पातकारक होता है ॥१३॥

प्रथमे मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति च ।
मध्यमा सस्यनिष्पत्तिर्[6]मध्यमं वर्षमुच्यते ॥१४॥

यदि प्रथम मण्डलमें शुक्र अस्त हो या उदित हो—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा

---

१. निरुक्तानि साधयेत् मु० । २. चिह्नाङ्कित श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है । ३. तु मु० । ४. प्रशमन्ति मु० । ५. आथातो वक्र मु० । ६. वर्षं च मध्यमं नृणाम् मु० ।

नक्षत्रमें शुक्र अस्त हो या उदित हो तो उस वर्ष मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है ॥१४॥

भोजान् कलिङ्गानुङ्गांश्च काश्मीरान् दस्युमालवान् ।
यवनान् सौरसेनांश्च गोद्विजान् शबरान् वधेत् ॥१५॥

भोज, कलिंग, उङ्ग, काश्मीर, यवन, मालव, सौरसेन, गोत्र, द्विज और शबरोंका उक्त प्रकारके शुक्रके अस्त और उदयसे वध होता है ॥१५॥

पूर्वतो [1]शीरकालिङ्गान् मागधो जयते नृपः ।
[2]सुभिक्षं क्षेममारोग्यं मध्यदेशेषु [3]जायते ॥१६॥

पूर्वमें शीर और कलिंगको मागध नृप जीतता है तथा मध्य देशमें सुवृष्टि, क्षेम और आरोग्य रहता है ॥१६॥

यदा चान्ये तिरोहन्ति तत्रस्थभार्गवं ग्रहाः ।
[4]कुण्डानि अङ्गा वधयः क्षत्रियाः लम्बशाकुनाः ॥१७॥
[5]धार्मिका शूरसेनाश्च, किराता मांससेवकाः ।
यवनाः भिल्लदेशाश्च प्राचीना चीनदेशजाः ॥१८॥

यदि शुक्रको अन्य ग्रह आच्छादित करते हों तो विदर्भ और अंग देशके क्षत्रिय, लवादि पक्षियोंका वध होता है । धार्मिक शूरसेन देशवासी, मत्स्याहारी, किरात, यवन, भिल्ल और चीन देश वासियोंको शुक्रकी पीड़ा होनेसे पीड़ित होना पड़ता है ॥१७-१८॥

द्वितीयमण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा ।
शारदस्योपघाताय विषमां वृष्टिमादिशेत् ॥१९॥

यदि द्वितीय मंडलमें शुक्र अस्त हो या उदित हो तो शरदऋतुमें होनेवाली फसलका उपघात होता है और वर्षा हीनाधिक होती है ॥१९॥

अहिच्छत्रं च कच्छं च सूर्यावर्तं च पीडयेत् ।
[6]ततोत्पातनिवासानां देशानां क्षयमादिशेत् ॥२०॥

अहिच्छत्र, कच्छ और सूर्यावर्तको पीड़ा होती है। उत्पातवाले देशोंका विनाश होता है ॥२०॥

यदा चाऽन्ये तिरोहन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।
निषादाः [7]पाण्डवा म्लेच्छाः सङ्कुलस्थाश्च साधवः ॥२१॥
[8]कौण्डजाः पुरुपादाश्च शिल्पिनो वर्वराः शकाः ।
वाहिका यवनाश्चैव मण्डूकाः केकरास्तथा ॥२२॥

१. नर मु० । २. सुवृष्टि मु० । ३. विनिर्दिशेत् मु० । ४. जङ्गा मु० । ५. धर्मिणः सुरसेनाश्च मत्स्यकीरा अनेकशः । किराता महिषाश्चैव पीड्यन्ते शुक्रपीडिते मु० । ६. यह पंक्ति मुद्रित प्रतिमें नहीं है । ७. पाण्डिका मु० । ८. कोटिकाः मु० ।

पाञ्चालाः कुरवश्चैव पीड्यन्ते [1]सयुगन्धराः (गान्धाराः) ।
एकमण्डलसंयुक्ते भार्गवे पीडिते फलम् ॥२३॥

यदि द्वितीय मण्डल स्थित शुक्रको अन्य ग्रह आच्छादित करें तो निषाद, पाण्डव, म्लेच्छ, साधु, व्यापारी, कौण्डेय, पुरुषार्थी, शिल्पी, बर्बर, शक, वाह्लिका, यवन, मण्डूक, केकर, पाञ्चाल, कौरव और गान्धार आदिको पीड़ा होती है। यह एक मण्डलमें स्थित शुक्रके पीड़नका फल है ॥२१-२३॥

तृतीये मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा ।
तदा धान्यं सनिचयं पीड्यन्ते [2]व्यूहकेतवः ॥२४॥
वाटधानाः कुनाटाश्च कालकूटश्च पर्वतः ।
ऋषयः कुरुपाञ्चालाश्चातुर्वर्ण्यश्च पीड्यते ॥२५॥
[3]वाणिजश्चैव कालज्ञः पण्या [4]वासास्तथाऽश्मकाः ।
अवन्तीश्चापरान्ताश्च सपल्याः सचराचराः ॥२६॥
पीड्यन्ते [5]भयेनाथ क्षुधारोगेण चार्दिताः ।
महान्तश्शवराश्चैव पारसीकास्सयावनाः ॥२७॥

यदि तृतीय मण्डलमें शुक्र उदय या अस्तको प्राप्त हो तो धान्य और उसका समूह विनाशको प्राप्त होता है। मूर्ख और धूर्त पीड़ित होते हैं। वाटधान, कुनाट, कालकूट पर्वत, ऋषि, कुरु, पाञ्चाल और चातुर्वर्णको पीड़ा होती है। व्यापारी, कुलीन, ज्योतिषी, दुकानदार, वनवासी-ऋषि-मुनि, दक्षिणी प्रदेश, अवन्तिनिवासी, उपरान्तक, गोमांस भक्षी शवरादि वासी, भयभीत और शत्रुके द्वारा पीड़ित होते हैं तथा क्षुधाकी पीड़ा भी उठानी पड़ती है। शुक्रके स्नेह, संस्थान और वर्णके द्वारा नृपपीड़नका भी विचार करना चाहिए ॥२४-२७॥

चतुर्थे मण्डले शुक्रो कुर्यादस्तमनोदयम् ।
तदा सस्यानि जायन्ते महामेघाः सुभिक्षदाः ॥२८॥
पुण्यशीलो जनो राजा [6]प्रजानां मधुरोहितः ।
बहुधान्यां महीं विद्यादुत्तमं देववर्षणम् ॥२९॥
[7]अन्तवश्चाद्वन्तश्च शूलकाः कास्यपास्तथा ।
वाह्यो [8]वृद्धोऽर्थवन्तश्च पीड्यन्ते सर्पपास्तथा ॥३०॥
यदा चान्ये ग्रहा यान्ति [9]रौरवाः म्लेच्छसङ्कुलाः ।
टङ्कणाश्च पुलिन्दाश्च किराताः [10]सौरकर्णजाः ॥३१॥
पीड्यन्ते पूर्ववत्सर्वं दुर्भिक्षेण भयेन च ।
ऐक्ष्वाको म्रियते राजा शेषाणां क्षेममादिशेत् ॥३२॥

१. शङ्कुगन्धराः । मु० । २. मूढकेतवः मु० । ३. कुलजाः मु० । ४. वनवासी तथा मु० । ५. भयशस्त्राभ्यां क्षुधारोगेण चार्दिताः । ६. प्रजाश्चापि पुरोहितः मु० । ७. अन्तधाश्चाप्यावन्तश्च शूलिका श्यामकास्तथा । मु० । ८. विप्रश्च दन्ताश्च मु० । ९. सौरेया मु० । १०. सोण्टकर्णिकाः मु० ।

यदि चतुर्थ मण्डलमें शुक्रका उदय या अस्त हो तो वर्षा अच्छी होती है, मेघ जलकी अधिक वर्षा करते हैं, सुभिक्ष और फसल उत्तम उत्पन्न होती है। राजा, प्रजा और पुरोहित धर्मका आचरण करनेवाले होते हैं। पृथ्वीमें अनाज खूब उत्पन्न होते हैं तथा वर्षा भी उत्तम होती है। अन्तधा, अवन्ती, मूलिका, श्यामिका और सर्वत्रकी पीड़ा होती है। यदि शुक्र अन्य ग्रहों द्वारा आच्छादित हो तो म्लेच्छ, शिल्पी, पुलिन्द, किरात, सौरकर्णज और पूर्ववत् अन्य सभी भय और दुर्भिक्षसे पीड़ित होते हैं। इक्ष्वाकुवंशी राजाकी मृत्यु होती है, किन्तु अवशेष सभी राजाओंकी क्षेम-कुशल होती है ॥२८-३२॥

यदा [1]तु पञ्चमे शुक्रः कुर्यादस्तमनोदयौ ।
अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं जनयेत् तदा ॥३३॥
सर्वं श्वेतं तदा धान्यं क्रेतव्यं सिद्धिमिच्छता ।
त्याज्या देशास्तथा चेमे निर्ग्रन्थैः साधुवृत्तिभिः ॥३४॥
स्त्रीराज्यं ताम्रकर्णाश्च कर्णाटाः कमनोत्कटाः ।
वाह्लीकाश्च विदर्भाश्च मत्स्यकाशीसतस्कराः ॥३५॥
स्फीताश्च रामदेशाश्च स्वरसेनास्तथैव च ।
जायन्ते वत्सराजानः परं यदि [2]तथा हताः ॥३६॥
क्षुधामरणरोगेभ्यश्चतुर्भागे भविष्यति ।
एषु देशेषु चान्येषु भद्रबाहुवचो यथा ॥३७॥

यदि पञ्चम मण्डलमें शुक्रका उदय या अस्त हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष और भय उत्पन्न करता है। धन-धान्यकी वृद्धि चाहनेवालोंको सभी श्वेत पदार्थ और अनाज खरीद लेना चाहिए और निर्ग्रन्थ साधुओंको इन देशोंका त्याग कर देना चाहिए। स्त्री राज्य, ताम्रकर्ण, कर्णाटक, आसाम, वाह्लीक, विदर्भ, मत्स्य, काशी, स्फोतदेश, रामदेश, सूरसेन, वत्सराज इत्यादि देशोंमें क्षुधा, मरण, रोग, दुर्भिक्ष आदिका कष्ट होगा, इस प्रकारका भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥३३-३७॥

यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।
[3]सौराष्ट्राः सिन्धुसौवीराः मन्तिसाराश्च साधवः ॥३८॥
[4]अनार्याः कच्छयौधेयाः सांदृष्टार्जुननायकाः ।
पीड्यन्ते तेषु देशेषु [5]म्लेच्छो वै म्रियते नृपः ॥३९॥

यदि पंचम मंडलमें शुक्र अन्य ग्रहोंके द्वारा अभिभूत हो तो सौराष्ट्र, सिन्धुदेश, सौवीर-देश, अन्तिसारदेश, साधुजन, अनार्यदेश, कच्छदेश सन्धिके योग्य हैं। पूर्व दिशाके स्वामी भी सन्धि करनेके योग्य हैं। इन देशोंमें पीड़ा होती है तथा म्लेच्छ नृपका मरण होता है ॥३८-३९॥

यदा तु मण्डले षष्ठे कुर्यादस्तमथोदयम् ।
शुक्रस्तदा प्रकुर्वीत भयानि तत्र क्षुद्भयम् ॥४०॥

१. वा मु० । २. तदा हता मु० । ३. सुराष्ट्राः मु० । ४. आनर्त्तकच्छमैन्धेयाः साम्यष्टाश्चार्जुना जनाः । मु० । ५. म्लेच्छस्य म्रियते मु० ।

[1]रसाः पाञ्चालबाह्लीका गन्धाराश्च [2]गवोलकाः ।
विदर्भाश्च दशार्णाश्च पीड्यन्ते नात्र संशयः ॥४१॥
द्विगुणं धान्यमर्घेण नोत्तरं वर्षयेत् तदा ।
चतैः शस्त्रं च व्याधिं च मूर्च्छयेत् तादृशेन यत् ॥४२॥

यदि शुक्र छठवें मंडलमें अस्त या उदयको प्राप्त हो तो साधारण भयोंको उत्पन्न करता है तथा यहाँ क्षुधाका भय होता है। वत्स, पाञ्चाल, बाह्लीक, गान्धार, गवोलक, विदर्भ, दशार्ण निस्सन्देह पीड़ाको प्राप्त होते हैं। अनाजका भाव दूना महंगा हो जाता है तथा उत्तरार्ध चातुर्मासमें वर्षा भी नहीं होती है। शस्त्र, घात और मूर्च्छा इस प्रकारके शुक्रमें होती है ॥४०–४२॥

[3]यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।
हिरण्यौषधयश्चैव शौण्डिका दूतलेखकाः ॥४३॥
काश्मीरा बर्बराः पौण्ड्रा भृगुकच्छं अनुप्रजाः ।
पीड्यन्तेऽवन्तिगाश्चैव म्रियन्ते च नृपास्तथा ॥४४॥

यदि अन्य ग्रह इस छठवें मंडलमें स्थित शुक्रके साथ संयोग करें तो हिरण्य, औषधि, शौण्डिक, दूतलेखक, काश्मीर, बर्बर, पौण्ड्र, भड़ौच, आवन्तिक पीड़ित होते हैं और नृपका मरण होता है ॥४३–४४॥

नागवीथीति विज्ञेया भरणी कृत्तिकाऽश्विनी ।
[4]रोहिण्यार्द्रा मृगशिरगजवीथीति निर्दिशेत् ॥४५॥
ऐरावणपथं विन्द्यात् पुष्याऽऽश्लेषा पुनर्वसुः ।
फाल्गुनी च मघा चैव वृषवीथीति संज्ञिता ॥४६॥
गोवीथी रेवती चैव द्वे च प्रोष्ठपदे तथा ।
जरद्गवपथं [5]विन्द्याच्छ्रवणे वसुवारुणे ॥४७॥
अजवीथी विशाखा च चित्रा स्वातिः करस्तथा ।
ज्येष्ठा मूलाऽनुराधासु मृगवीथीति संज्ञिता ॥४८॥
अभिजिद् द्वे तथापाढ़े वैश्वानरपथः स्मृतः ।
शुक्रस्याग्रगताद्वर्णात् संस्थानाच्च फलं वदेत् ॥४९॥

अश्विनी, भरणी और कृत्तिकाकी संज्ञा नागवीथि; रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा की गजवीथि; पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषाकी संज्ञा ऐरावत वीथि, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और मघाकी संज्ञा वृषवीथि; पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवतीको गोवीथि, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा को जरद्गववीथि; हस्त, विशाखा और चित्राकी अजवीथि; ज्येष्ठा, मूल और अनुराधाकी मृगवीथि एवं पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और स्वाति या अभिजित्‌की वैश्वानरवीथि है। शुक्रके अग्रगत वर्ण और आकारसे फलका निरूपण करना चाहिए ॥४५–४९॥

१. वत्सा। २. गमेल्लिकाः मु०। ३. ०स्थाऽन्ये मु०। ४. मत्स्वानां रोहिणी चार्द्रा, गजवीथीति निर्दिशेत्। मु०। ५. च्छ्रवणं वसुवारुणम् मु०।

तज्जातप्रतिरूपेण जघन्योत्तममध्यमम् ।
स्नेहादिषु शुभं ब्रूयाद् ऋक्षादिषु न संशयः ॥५०॥

तीन-तीन नक्षत्रोंकी एक-एक वीथि बतायी गयी है। इन नक्षत्रोंमें शुक्रके गमन करनेसे जघन्य, उत्तम और मध्यम फल होता है। अतएव इन नक्षत्रोंमें निस्सन्देह शुभाशुभ फलका प्रतिपादन करना चाहिए ॥५०॥

तिष्यो ज्येष्ठा तथाऽऽश्लेषा [1]हरिणो मूलमेव च ।
हस्तं चित्रा मघाऽषाढ़े शुक्रो दक्षिणतो व्रजेत् ॥५१॥

पुष्य, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मृगशिरा, मूल, हस्त, चित्रा, मघा, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रोंमें शुक्र दक्षिण से गमन करता है ॥५१॥

शुष्यन्ते तोयधान्यानि राजानः क्षत्रियास्तथा ।
उग्रभोगाश्च पीड्यन्ते धननाशो [3]विनायकः ॥५२॥

दक्षिणमार्गसे जब शुक्र गमन करता है तो जल और अनाज के पौधे सूख जाते हैं तथा राजा, क्षत्रिय और महाजन पीड़ित होते हैं एवं धनका नाश होता है ॥५२॥

वैश्वानरपथो नामा यदा हेमन्तग्रीष्मयोः ।
मारुताऽग्निभयं [4]कुर्यात् [5]वारीं च चतुःषष्टिकाम् ॥५३॥

जब हेमन्त और ग्रीष्म ऋतुमें वैश्वानर वीथिसे शुक्र गमन करता है तो वायु और अग्नि-भय, मृत्यु आदि फल घटित होते हैं तथा एक आढक प्रमाण जल बरसता है ॥५३॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः ।
विषमं [6]वर्षमाख्याति [7]स्थले बीजानि वापयेत् ॥५४॥

जब शुक्र इनके मध्यसे गमन करता है तो सभी बातें विषम हो जाती हैं और बीज स्थल में बोना चाहिए। अर्थात् वर्ष निकृष्ट होता है ॥५४॥

खारी द्वात्रिंशिका ज्ञेया मृगवीथीति संज्ञिता ।
[8]व्याधयः त्रिषु विज्ञेयास्तथा[9] चरति भार्गवे ॥५५॥

जब शुक्र मृगवीथिमें विचरण करता है तब धान्य ३२ खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं और दैहिक, दैविक तथा भौतिक तीनों प्रकारकी व्याधियाँ अवगत करनी चाहिए ॥५५॥

एतेषां तु यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तथा ।
विषमं वर्षमाख्याति [10]निम्ने बीजानि वापयेत् ॥५६॥

जब शुक्र उत्तरको ओर जाता है तो सभी वस्तुओंको विषम समझना चाहिए तथा निम्न-स्थान में बीज बोना चाहिए ॥५६॥

कोद्रवाणां बीजानां खारी षोडशिका वदेत् ।
अजवीथीति विज्ञेया पुनरेषा न संशयः ॥५७॥

१. भय वदेत् मु० । २. मरुभायां मु० । ३. विनाशकः मु० । ४. मृत्युः मु० । ५. वारां मु० । ६. सर्वं मु० । ७. बीजानि तु स्थले वदेत् मु० । ८. व्याधयश्च मु० । ९. यदा मु० । १०. भूगं निम्ने वदेत्तदा मु० ।

यदि शुक्र अजवीथिमें गमन करे तो निस्सन्देह कोद्रव बीज सोलह खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं ॥५७॥

कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा मघा मैत्रं पुनर्वसुः ।
स्वातिस्तथा विशाखासु फाल्गुन्योरुभयोस्तथा ॥५८॥
दक्षिणेन यदा शुक्रो व्रजत्येतैर्यदा समम् ।
मध्यमं वर्षमाख्याति समे बीजानि वापयेत् ॥५९॥
[1]निष्पद्यन्ते च शस्यानि मध्यमेनापि वारिणा ।
जरद्गवपथश्चैव खारीं [2]द्वात्रिंशकां भवेत् ॥६०॥

कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, मघा, अनुराधा, पुनर्वसु, स्वाति, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रोंके साथ जब शुक्र दक्षिणकी ओर गमन करता है, तो मध्यम वर्ष होता है तथा समभूमिमें बीज बोनेसे अच्छी फसल होती है। कम वर्षा होनेपर भी फसल उत्तम होती है तथा जरद्गवीथिसे शुक्रका गमन होनेपर द्वादश खारी प्रमाण धान्यकी उत्पत्ति होती है ॥५८-६०॥

[3]एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः ।
तदापि मध्यमं वर्षं मीषत् पूर्वा विशिष्यते ॥६१॥

उपर्युक्त नक्षत्रोंके मध्यमसे जब शुक्र गमन करे तो मध्यम वर्ष होता है तथा पूर्वोक्त वर्ष की अपेक्षा कुछ उत्तम रहता है ॥६१॥

सर्वं निष्पद्यते धान्यं न व्याधिर्नापि चेतयः ।
खारी तदाऽष्टिका ज्ञेया गोवीथीति च संज्ञिता ॥६२॥

सभी प्रकारके धान्य उत्पन्न होते हैं, किसी भी प्रकारकी महामारी और व्याधियाँ नहीं होतीं। इस नागवीथिमें शुक्रके गमनसे आठ खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥६२॥

एतेषामेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा ।
मध्यमं सर्वमाचष्टे नेतयो नापि व्याधयः ॥६३॥

जब उपर्युक्त नक्षत्रोंमें शुक्र उत्तरकी ओरसे गमन करता है तो मध्यम वर्ष होता है तथा महामारी और व्याधियोंका अभाव होता है ॥६३॥

निष्पत्तिः सर्वधान्यानां भयं चात्र न मूर्च्छति ।
खारीचतुष्का विज्ञेया वृषवीथीति संज्ञिता ॥६४॥

जब वृषवीथिमें शुक्र गमन करता है तो सभी प्रकारके धान्योंकी उत्पत्ति होती है, भय और आतङ्कका अभाव रहता है तथा चार खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥६४॥

अभिजिच्छ्रवणं चापि धनिष्ठावारुणे तथा ।
रेवती भरणी चैव तथा भाद्रपदाऽश्विनी ॥६५॥

---

१. निष्पद्यन्ते तथा शस्यं मध्येनाप्यथ वारिणा मु० । २. द्वादशिका मु० । ३. चिह्नाङ्कित दोनों श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं मिलते हैं ।

निश्चयास्तदा विपद्यन्ते खारी विन्द्याच्च पञ्चिका ।
ऐरावणपथो ज्ञेयो श्रेष्ठ एव प्रकीर्तितः ॥६६॥

अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, भरणी, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और अश्विनी इन नक्षत्रोंमें शुक्रका गमन करना ऐरावणपथ माना जाता है। इस मार्गमें गमन करनेसे समुदायोंको विपत्ति होती है और पाँच खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥६४–६६॥

एषां यदा दक्षिणतो भार्गवः प्रतिपद्यते ।
बहूदकं तदा विन्द्यात् [1]महाधान्यानि वापयेत् ॥६७॥

उपर्युक्त नक्षत्रोंमें यदि शुक्र दक्षिण मार्गसे गमन करे तो अत्यधिक वर्षा होती है तथा स्थलमें बीज बोने पर भी धान्यकी उत्पत्ति होती है ॥६७॥

जलजानि तु शोभन्ते ये च जीवन्ति वारिणा ।
खारी तदाष्टिका ज्ञेया गजवीथीति संज्ञिता ॥६८॥

जलचर जन्तु शोभित और आनन्दित होते हैं तथा इसमें आठ खारी प्रमाण धान्य और इसकी संज्ञा गजवीथि है ॥६८॥

एतेषामेव तु मध्येन यदा याति तु भार्गवः ।
[2]स्थलेष्वप्तबीजानि जायन्ते निरुपद्रवानि ॥६९॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रोंके मध्यसे गमन करता है तो स्थलमें बोये गए बीज भी निर्विघ्न होते हैं ॥६९॥

निचयाश्च विनश्यन्ति खारी द्वादशिका भवेत् ।
दानशीला नरा [3]हृष्टा नागवीथीति संज्ञिता ॥७०॥

नागवीथिमें शुक्रके गमन करनेसे समुदायोंकी हानि होती है तथा द्वादशखारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है और मनुष्य दानशील होते हैं ॥७०॥

[4]एवमेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा ।
स्थले धान्यानि जायन्ते शोभन्ते जलजानि वा ॥७१॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रोंमें उत्तरकी ओरसे गमन करता है तो स्थलमें भी फसल उत्पन्न होती है और जलज जीव शोभित होते हैं ॥७१॥

सर्वोत्तरा नागवीथी सर्वदक्षिणतोऽग्निजा ।
गोवीथी मध्यमा ज्ञेया मार्गास्त्वेव त्रयः स्मृताः ॥७२॥

नागवीथि सबसे उत्तर, वैश्वानर वीथि दक्षिण और गोवीथि मध्यमा होती है, इस प्रकार तीन प्रकारके मार्ग बतलाये गये हैं ॥७२॥

१. एतेषां मु० । २ महाधान्यं स्थले वपेत् मु० । ३. स्थलेष्वप्तानि बीजानि जायन्ते निरुपद्रवम मु० । ४. हृष्टा मु० । ५. एवमेव मु० ।

उत्तरे उत्तमं विन्द्यान्मध्यमे मध्यमं फलम् ।
दक्षिणे तु जघन्यं स्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥७३॥

उत्तरवीथिसे गमन करनेपर उत्तम फल, मध्यवीथिके गमन करनेपर मध्यम फल और दक्षिणसे गमन करनेपर जघन्य फल होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥७३॥

यत्रोदितश्च विचरेन्नक्षत्रं भार्गवस्तथा ।
नृपं पुरं धनं मुख्यं पशुं हन्याद् विलम्बकः ॥७४॥

निम्न प्रकार प्रतिपादित रविवारादि क्रूर वारोंमें उक्त नक्षत्रोंमें जब शुक्र गमन करता है तो राजा, नगर, धान्य, धन और मुख्य पशुओंका अविलम्ब नाश होता है अर्थात् श्रेष्ठ वारोंमें उत्तम फल और क्रूरवारोंमें गमन करनेपर निकृष्ट फल प्राप्त होता है ॥७४॥

आदित्ये विचरेद् रोगं मार्गेऽतुल्यामयं भयम् ।
गर्भोपघातं कुरुते ज्वलनेनाविलम्बितम् ॥७५॥
[1]ईतिव्याधिभयं चौरान् कुरुतेऽन्तःप्रकोपनम् ।
प्रविशन् भार्गवः सूर्ये जिह्मेनाथ विलम्बिना ॥७६॥

शुक्रके सूर्यमें विचरण करने पर रोग, अत्यधिक भय, शीघ्र ही अग्निके द्वारा गर्भोपघात आदि फल घटित होते हैं, शुक्रका सूर्यमें प्रवेश करने पर व्याधि, भय, दारुण प्रकोप आदि फल होते हैं ॥७५-७६॥

प्रथमे मण्डले शुक्रो विलम्बी डमरायते ।
पूर्वापरा दिशो हन्यात् पृष्ठे तेन विलम्बिना ॥७७॥

यदि प्रथम मण्डलमें शुक्र लम्बायमान होकर अधिक समय तक रहे तो पूर्व और पश्चिम दिशामें घात करता है ॥७७॥

द्वितीयमण्डले शुक्रश्चिरगो मण्डलेरितः ।
हन्याद्देशान् धनं तोयं सकलेन विलम्बिना ॥७८॥

यदि द्वितीय मण्डलमें शुक्र सूर्यसे प्रेरित होकर अधिक समय तक रहे तो देशके धन, जल एवं धान्यका विनाश करता है ॥७८॥

तृतीये चिरगो व्याधिं मृत्युं सृजति भार्गवः ।
चलितेन विलम्बेन मण्डलोक्ताश्च या दिशः ॥७९॥

यदि तृतीय मण्डलमें शुक्र अधिक समय तक विचरण करे तो व्याधि और मृत्यु मण्डलकी दिशामें होती हैं अर्थात् तृतीय मण्डलकी जिस दिशामें अधिक समय तक शुक्र गमन करता है उस दिशामें व्याधि और मृत्यु फल घटित होते हैं ॥७९॥

चतुर्थे विचरन् शुक्रो [2]शयी हन्यात् सुयानकान् ।
शस्यशेषं च सृजते निन्दितेन विलम्बिना ॥८०॥

चतुर्थ मण्डलमें शयनावस्थागत शुक्रके रहनेसे अच्छे वाहनोंका विनाश होता है तथा निन्दित विलम्बी शुक्र धान्यका विनाश करता है ॥८०॥

1. ईतिव्याधि-इत्यादि यह पंक्ति हस्तलिखित प्रतिमें अधिक मिलती है । 2. मर्या मु० ।

पञ्चमे विचरन् शुक्रो दुर्भिक्षं जनयेत् तदा ।
हन्याच्च मण्डलं देशं क्षीणेनाथ विलम्बिना ॥८१॥

क्षीण और विलम्बी शुक्र यदि पञ्चम मण्डलमें विचरण करे तो दुर्भिक्ष उत्पन्न होता है तथा उस मण्डल और देशका विनाश होता है ॥८१॥

यदा तु मण्डले षष्ठे भार्गवश्चिरगो भवेत् ।
तदा तं मण्डलं देशं हन्ति लम्बेन पाशिना ॥८२॥

जब षष्ठ मण्डलमें शुक्र अधिक समय तक गमन करता है तो लम्बायमान पाशके द्वारा उस मण्डल और देशका विनाश करता है ॥८२॥

हीने चारे जनपदानतिरिक्ते नृपं वधेत् ।
समे तु समतां विन्याद्विषमे विषमं वदेत् ॥८३॥

हीन चार—गतिवाला शुक्र जनपदका विनाश अतिरिक्तगति—अधिक गतिवाला शुक्र नृपका वध, समगतिवाला शुक्र समता और विषमगतिवाला शुक्र विषमता करता है । अर्थात् शुक्र गतिके अनुसार शुभाशुभ फल होता है ॥८३॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां [1]मैत्रमैत्रं तथैव च ।
वर्षासु दक्षिणाद्येषु यदा चरति भार्गवः ॥८४॥
व्याधिश्चेतिश्च दुर्वृष्टिस्तदा धान्यं विनाशयेत् ।
महार्घं जनमारिश्च जायते नात्र संशयः ॥८५॥

कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, विशाखा, इन नक्षत्रोंमें, दक्षिणादि दिशाओंमें, वर्षा-कालमें जब शुक्र गमन करता है, तब निम्नफल घटित होते हैं । उक्त प्रकारके शुक्रमें व्याधि, ईति महामारी, अनावृष्टि या अतिवृष्टि, मँहगी, जनमारी एवं धान्यका नाश निस्सन्देह होता है । तात्पर्य यह है कि उक्त नक्षत्रोंमें जब शुक्र शीघ्र गतिसे गमन करता है या मन्दगतिसे गमन करता है, तब उपर्युक्त अशुभ फल घटता है ॥८४–८५॥

एतेषामेव मध्येन मध्यमं फलमादिशेत् ।
उत्तरेणोत्तरं विन्यात् सुभिक्षं क्षेममेव च ॥८६॥

जब उपर्युक्त नक्षत्रोंमें शुक्र मध्यम गतिसे गमन करता है, तो मध्यम फल घटता है । उत्तर दिशामें शुक्रके गमन करनेसे सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥८६॥

मघायां च विशाखायां वर्षासु मध्यमस्थितः ।
तदा सम्पद्यते सस्यं समर्घं च सुखं शिवम् ॥८७॥

वर्षाकालमें जब शुक्र मघा और विशाखामें मध्यम गतिसे स्थित रहता है तो धान्यकी खूब उत्पत्ति होनेके साथ वस्तुओंके भावमें समता, सुख और कल्याण होता है ॥८७॥

पुनर्वसुमाषाढां च याति मध्येन भार्गवः ।
[3]तदा सुवृष्टिश्च विन्यात् व्याधिश्च समुदीर्यते ॥८८॥

१. न मु० । २. मैत्रं । ३. यह पंक्ति इस्त लिखित प्रतिमें अधिक है ।

यदि पुनर्वसु और पूर्वाषाढ़ामें शुक्र मध्यम गतिसे गमन करे तो व्याधि और वर्षा सर्वत्र होती है ॥८८॥

आषाढां श्रवणं चैव यदि मध्येन गच्छति ।
कुमारश्चैव पीड्यन्ते अनार्याश्चान्त्यवासिनः ॥८९॥

उत्तराषाढ़ा और श्रवणमें जब शुक्र मध्यम गतिसे गमन करता है तो कुमार, अनार्य और अन्त्यजोंको पीड़ा होती है ॥८९॥

प्रजापत्यमाषाढां च यदा मध्येन गच्छति ।
तदा व्याधितः चौराश्च पीड्यन्ते वणिजस्तथा ॥९०॥

रोहिणी और उत्तराषाढ़ामें जब शुक्र मध्यम गतिसे गमन करता है तो व्यापारी, रोगी और चोरोंको पीड़ा होती है ॥९०॥

चित्रामेव विशाखां च याम्यमार्द्रां च रेवतीम् ।
मैत्रे भद्रपदां चैव याति वर्षति भार्गवः ॥९१॥

चित्रा, विशाखा, भरणी, आर्द्रा, रेवती, अनुराधा और पूर्वभाद्रपदमें जब शुक्र गमन करता है तो वर्षा होती है ॥९१॥

फल्गुन्यथ भरण्यां च चित्रवर्णस्तु भार्गवः[1] ।
तदा तु तिष्ठेद् गच्छेद् तु[2] वक्रं भाद्रपदं जलम् ॥९२॥

जब विचित्रवर्णका शुक्र पूर्वाफाल्गुनी और भरणीमें गमन करता है या स्थित रहता है तो भाद्रपद मासमें निश्चयसे वर्षा होती है ॥९२॥

प्रत्यूषे पूर्वतः शुक्रः पृष्ठतश्च बृहस्पतिः ।
यदाऽन्योऽन्यं न[3] पश्येत् तदा चक्रं परिवर्तते ॥९३॥
धर्मार्थकामा लुप्यन्ते सम्भ्रमो वर्णसङ्करः ।
नृपाणां च समुद्योगो यतः शुक्रस्ततो जयः ॥९४॥
अवृष्टिश्च भयं घोरं दुर्भिक्षं च तदा भवेत् ।
आढकेन तु धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥९५॥

प्रातःकालमें पूर्वमें शुक्र हो और उसके पीछे बृहस्पति हो और परस्परमें एक दूसरेको न देखते हो तो शासन चक्रमें परिवर्तन होता है; धर्म, अर्थ, काम लुप्त हो जाते हैं, वर्णसंकरोंमें आकुलता व्याप्त हो जाती है और राजाओंकी उद्योगमें प्रवृत्ति होती है। क्योंकि जिस ओर शुक्र रहता है, उसी ओर जय होता है। तात्पर्य यह है कि जो नृप शुक्रके सम्मुख रहता है, उसे विजय लाभ होता है। अनावृष्टि, घोर दुर्भिक्ष तथा एक आढ़क प्रमाण जलकी वर्षा होनेसे धान्य ग्राहकोंके लिए प्रिय हो जाते हैं अर्थात् अनाजका भाव मँहगा होता है ॥९३-९५॥

यदा च पृष्ठतः शुक्रः पुरस्ताच्च बृहस्पतिः ।
यदा लोकयतेऽन्योन्यं तदेव हि फलं तदा ॥९६॥

---

1. प्रा० मु० । 2. वा ध्रुवं भाद्रपदे जलम् मु० । 3. स मु० ।

जब शुक्र पीछे हो और बृहस्पति आगे हो और परस्पर दृष्टि भी हो तो भी उपर्युक्त फलकी प्राप्ति होती है ॥९६॥

कृत्तिकायां यदा शुक्रः विकृष्य [1]प्रतिपद्यते ।
ऐरावणपथे यद् यत् तद् वद् ब्रूयात् फलं तदा ॥९७॥

यदि शुक्र कृत्तिका नक्षत्रमें खिंचा हुआ-सा दिखलायी पड़े तो जो फलादेश शुक्रका ऐरावणवीथिमें शुक्रके गमन करनेका है, वही यहाँ पर भी समझना चाहिए ॥९७॥

रोहिणीशकटं शुक्रो यदा समभिरोहति
चक्रारूढाः प्रजा ज्ञेया महद्भयं विनिर्दिशेत् ॥९८॥
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च [2]चेद्याश्च [3]करनाटकाः ।
[4]चैरा विकल्पकाश्चैव पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥९९॥

यदि शुक्र शकटाकार रोहिणीमें आरोहण करे तो प्रजा शासनमें रत रहती है और महान् भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चोल, करनाटक, चेदी, चेर और विदर्भ आदि प्रदेश पीड़ाको प्राप्त होते हैं ॥९८-९९॥

प्रदक्षिणं यदा याति तदा हिंसति स प्रजाः ।
उपघातं बहुविधं वा सन् कुरुते भुवि ॥१००॥

जब शुक्र दक्षिणकी ओर गमन करता है तो प्रजाका विनाश एवं पृथ्वी पर नाना प्रकारके उपद्रव, उत्पात आदि करता है ॥१००॥

संव्यानमुपसेवानो [5]भवेयं सोमशर्मणः ।
सोमं च सोमजं चैव सोमपार्श्वं च हिंसति ॥१०१॥

बायीं ओरसे शुक्र गमन करे तो सोम और शर्मा नाम धारियोंके लिए कल्याणप्रद होता है। सोम, सोमसे उत्पन्न और सोमपार्श्व की हिंसा करता है ॥१०१॥

वत्सा [6]विदेहजिह्वाश्च वसा [7]मद्रास्तथोरगाः ।
पीड्यन्ते ये च तद्भक्ताः [8]सन्ध्यानमारोहेत् यथा ॥१०२॥

वत्स, विदेह, कुन्तल, वसा, मद्रा, उरगपुर आदि प्रदेश शुक्रके बायीं ओर जाने पर पीड़ित होते हैं ॥१०२॥

अलंकारोपघाताय यदा दक्षिणतो व्रजेत् ।
सौम्ये सुराष्ट्रे च तदा वामगः परिहिंसति ॥१०३॥

जब शुक्र दक्षिणकी ओरसे गमन करता है तो अलङ्कारोंका विनाश होता है तथा बायीं ओरसे गमन करनेपर सुन्दर सुराष्ट्रका घात करता है ॥१०३॥

---

१. प्रतिदृश्यते मु० । २. ज्येष्ठाश्च मु० । ३. ना मु० । ४. चीरा मु० । ५. भद्रेयं मु० । ६. जिह्वाश्च मु० । ७. भौमास्त मु० । ८. संव्याने मारुते यथा मु० ।

आर्द्रां हत्वा निवर्तेत यदि शुक्रः कदाचन ।
संग्रामास्तत्र जायन्ते मांसशोणितकर्दमाः ॥१०४॥

यदि शुक्र आर्द्राका घात कर परिवर्तित हो तो युद्ध होते हैं तथा पृथ्वीमें रक्त और मांसकी कीचड़ हो जाती है ॥१०४॥

तैलिकाः [1]सारिकाश्चान्तं चामुण्डामांसिकास्तथा ।
[2]आपण्डाः क्रूरकर्माणः पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥१०५॥

उक्त प्रकारके शुक्रके होनेसे तेली, सैनिक, ऊँट, भैंसे तथा कूँची आदिसे कठोर क्रूर कार्य करनेवाले पीड़ित होते हैं ॥१०५॥

दक्षिणेन यदा गच्छेद् द्रोणमेवं तदा दिशेत् ।
वामगो रुद्रकर्माणि भार्गवः परिहिंसति ॥१०६॥

यदि आर्द्राका घातकर दक्षिणकी ओर शुक्र गमन करे तो एक द्रोण प्रमाण जलकी वर्षा होती है और बाँयी ओर शुक्र गमन करे तो रौद्रकर्म—क्रूरकर्मोंका विनाश होता है ॥१०६॥

पुनर्वसुं यदा रोहेद्गाश्च गोजीविनस्तथा ।
हासं प्रहासं राष्ट्रं च विदर्भान् दासकांस्तथा ॥१०७॥

जब शुक्र पुनर्वसु नक्षत्रमें आरोहण करता है तो गाय और गोपाल आदिमें हास, परिहास—आमोद-प्रमोद होता है। विदर्भ और दासोंको भी प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद प्राप्त होता है ॥१०७॥

शम्बरान् [3]पुलिन्दकांश्च श्वानपण्ढांश्च वल्कलान् ।
पीडयेच्च [4]महासण्डान् शुक्रस्तादृशेन यत् ॥१०८॥

उक्त प्रकारका शुक्र भील, पुलिन्द, श्वान, नपुंसक, वल्कलधारी और अत्यन्त नपुंसकोंको अत्यन्त पीड़ित करता है ॥१०८॥

प्रदक्षिणे प्रयाणे तु द्रोणमेकं तदा दिशेत् ।
वामयाने तदा पीडां ब्रूयात्तत्सर्वकर्मणाम् ॥१०९॥

पुनर्वसुका घातकर शुक्रके दाहिनी ओरसे प्रयाण करने पर एक द्रोण प्रमाण जलकी वर्षा कहनी चाहिए और बाँयी ओरसे प्रयाण करने पर सभी कार्योंका घात कहना चाहिए ॥१०९॥

पुष्यप्राप्ते द्विजान् हन्ति [5]पुनर्वसावपि शिल्पिनः ।
[6]पुरुषान् धर्मिणश्चापि पीड्यन्ते चोत्तरायणाः ॥११०॥

पुष्य नक्षत्रको प्राप्त होनेवाला उत्तरायण शुक्र द्विज, प्रजावान और धनुषके शिल्पि और धार्मिक व्यक्तियोंको पीड़ित करता है ॥११०॥

---

१. सैनिकाश्चाद्रा उष्ट्रा माहिषकास्तथा, मु० । २. ईषिकाः मु० । ३. मणिवन्धांश्च मु० । ४. महामु० मु० । ५. प्राज्ञांश्च धनुशिल्पिनः मु० । ६. मरुण्डा मु० ।

वङ्गाउत्कल-चाण्डालाः पार्वतेयाश्च ये नराः ।
इक्षुमन्त्याश्च पीडयन्ते आर्द्रामारोहणं यथा ॥१११॥

जब शुक्र आर्द्रामें आरोहण करता है तो वंगवासी, उत्कलवासी, चांडल पहाड़ी व्यक्ति और इक्षुमती नदीके किनारेके निवासी व्यक्तियोंको पीड़ा होती है ॥१११॥

मत्स्यभागीरथीनां तु शुक्रोऽश्लेषां यदाऽऽरुहेत् ।
वामगः सृजते व्याधिं दक्षिणो हिंसते प्रजाः ॥११२॥

जब शुक्र बाँया जाता हुआ आश्लेषामें आरोहण करता है तो मत्स्यदेश और भागीरथीके तटनिवासियोंको व्याधि होती है और दक्षिणसे गमन करता हुआ आरोहण करता है तो प्रजाकी हिंसा होती है ॥११२॥

मघानां दक्षिणं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गवः ।
आढकेन तदा धान्यं प्रियं विन्द्यादसंशयम् ॥११३॥

यदि शुक्र मघा नक्षत्रके दक्षिण भागका भेदन करे तो आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है और धान्य महँगा होता है ॥११३॥

विलम्बेन यदा तिष्ठेत् मध्ये भित्त्वा यदा मघाम् ।
आढकेन हि धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥११४॥

जब मघाके मध्यका भेदन कर शुक्र अधिक समय तक रहता है तो आढक प्रमाण जलकी वर्षा होती है और धान्य प्रिय होता—महँगा होता है ॥११४॥

मघानामुत्तरं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गवः ।
कोष्ठागाराणि पीडयन्ते तदा धान्यमुपहिंसन्ति ॥११५॥

यदि मघाके उत्तर भागका शुक्र भेदन करे तो धान्यके लिए हिंसा होती है और कोष्ठागार—खजांची लोग पीड़ित होते हैं ॥११५॥

प्राज्ञा महान्तः पीडयन्ते ताम्रवर्णाः यदा भृगुः ।
प्रदक्षिणे विलम्बश्च महदुत्पादयेज्जलम् ॥११६॥

जब शुक्र ताम्रवर्णका होता है तो विद्वान् मनीषी व्यक्ति पीड़ित होते हैं और प्रदक्षिणामें शुक्र विलम्ब करे तो अत्यधिक वर्षा होती है ॥११६॥

पूर्वाफाल्गुनीं सेवेत गणिकां रूपजीविनः ।
पीडयेद् वामगः कन्यामुग्रकर्माणं दक्षिणः ॥११७॥

पूर्वाफाल्गुनीमें शुक्रका बाँयी ओरसे आरोहण हो तो रूपसे आजीविका करनेवाली गणिकाएँ पीड़ित होती हैं और दाहिनी ओरसे आरोहण हो तो उग्रकार्य करनेवाले पीड़ित होते हैं ॥११७॥

१. दुहृत्ता मु० । २. यदा मु० । ३. पर्वतेऽश्लेषांशो मु० । ४. गृजते मु० । ५. हिनस्ति ।
६. धान्यार्थमुपहिंसन्ति मु० । ७. यदा भृगाः मु० । ८. महान् मु० ।

शबरान् प्रतिलिङ्गानि पीडयेदुत्तरा [1]स्थितः।
वामगः स्थविरान् हन्ति दक्षिणः स्त्रीनिपीडयेत् ॥११८॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें बाँयी ओरसे शुक्र आरोहण करे तो शबर, ब्रह्मचारी, स्थविर—निवासी राजाको पीड़ा होती है तथा दाहिनी ओरसे आरोहण करने पर स्त्रियोंको पीड़ा होती है ॥११८॥

काशानि रेवतीहस्ते पीडयेत् भार्गवः स्थितः।
दक्षिणे चौरघाताय वामश्चौरजयावहः ॥११९॥

दाहिनी ओरसे रेवती और हस्त नक्षत्रमें शुक्र स्थित हो तो काश और चोरोंका घात करता है और बाँयी ओरसे स्थित होने पर चोरोंको जय देता है ॥११९॥

चित्रस्थं पीडयेत् सर्वं विचित्रं गणितं लिपिम्।
कोशलान् मेखलान् शिल्पं द्यूतं कनक [2]वाणिजान् ॥१२०॥

चित्रा नक्षत्र स्थित शुक्र गणित, लिपि, साहित्य आदि सभीका घात करता है। कला-कौशल, द्यूत, स्वर्णका व्यापार आदिको पीड़ित करता है ॥१२०॥

आरूढपल्लवान् हन्ति [3]मारीचोदारकोशलान्।
मार्जारनकुलांश्चैव कक्षमार्गे च पीडति ॥१२१॥

चित्रा नक्षत्र पर आरूढ शुक्र पल्लव, सौराष्ट्र, कोशलका विनाश करता है और कक्षमार्गमें स्थित होने पर मार्जार-बिल्ली और न्योलोंको पीड़ित करता है ॥१२१॥

चित्रमूलाश्च [4]त्रिपुरा [5]वातन्यतमथापि च।
वामगः सृजते व्याधिं दक्षिणो वणिकान् वधेत् ॥१२२॥

यदि वामभागसे गमन करता हुआ शुक्र चित्राके अन्तिम चरणमें कुछ समय तक अपना विस्तार करे तो व्याधिकी उत्पत्ति एवं दक्षिण ओरसे गमन करता हुआ अन्तिम चरणमें स्थित हो तो व्यापारियोंका विनाश करता है ॥१२२॥

स्वातौ दशार्णाश्चेति सुराष्ट्रं चोपहिंसति।
आरूढो नायकं हन्ति वामो [6]वामं तु दक्षिणे ॥१२३॥

स्वाति नक्षत्रमें शुक्र गमन करे तो दशार्ण और सौराष्ट्रकी हिंसा करता है तथा बाँयी ओरसे आरूढ होनेवाला शुक्र बायीं ओरके नायक और दाहिनी ओरसे आरूढ होनेवाला शुक्र दाहिनी ओरके नायकका वध करता है ॥१२३॥

विशाखायां समारूढो [7]वरसामन्त जायते।
अथ विन्द्यात् महापीडां उशना स्रवते यदि ॥१२४॥

यदि विशाखा नक्षत्रमें शुक्र आरूढ हो तो श्रेष्ठ सामन्त उत्पन्न होते है और शुक्र यदि स्रवण करे—च्युत हो तो महा पीड़ा होती है ॥१२४॥

---

१. गतः मु०। २. वाणिजम् मु०। ३. सिलीन्ध्रं रूदकोशलान् मु०। ४. चित्रपुरीं मु०। ५. वातेऽम्बु मु०। ६. वामवामी भवेत्तमः मु०। ७. पीडयेदुशनास्तथा मु०।

दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति [1]पश्चिमो पाक्षिणान् यथा ।
अग्निकर्माणि वामस्थो हन्ति सर्वाणि भार्गवः ॥१२५॥

दक्षिणस्थ शुक्र मृगों—पशुओंका विनाश करता है, पश्चिमस्थ पक्षियोंका विनाश और वामस्थ समस्त अग्निकार्योंका विनाश करता है ॥१२५॥

मध्येन प्रज्वलन् गच्छन् विशाखामश्विजे नृपम् ।
उत्तरोऽवन्तिजान् हन्ति [2]स्त्रीराज्यस्थांश्च दक्षिणः ॥१२६॥

यदि शुक्र प्रज्वलित होता हुआ उत्तरसे विशाखा और अश्विनी नक्षत्रके मध्यसे गमन करता है तो अवन्ति देशमें उत्पन्न व्यक्तियोंका घात एवं दक्षिणसे गमन करता है तो स्त्रीराज्यके व्यक्तियोंका विनाश करता है ॥१२६॥

अनुराधास्थितो शुक्रो यायिनः प्रस्थितान् वधेत् ।
मर्दते च मिथो भेदं दक्षिणे न तु वामगः ॥१२७॥

अनुराधा स्थित शुक्र यायी—आक्रमण करनेके लिए प्रस्थान करनेवालोंके वधका संकेत करता है। यदि अनुराधा नक्षत्रका शुक्र मर्दन करे तो परस्परमें मतभेद होता है। यह फल दक्षिणकी ओरका है, बायीं ओरका नहीं ॥१२७॥

मध्यदेशे तु दुर्भिक्षं जयं विन्द्यादुदये ततः ।
फलं प्राप्यन्ति चारेण भद्रबाहुवचो यथा ॥१२८॥

यदि अनुराधा नक्षत्रमें शुक्रका उदय हो तो मध्य देशमें दुर्भिक्ष और जय होती है। भद्रबाहु स्वामीके वचनके अनुसार शुक्रचारका फल प्राप्त होता है ॥१२८॥

ज्येष्ठास्थः पीडयेज्ज्येष्ठान् [3]इक्ष्वाकान् गन्धमादजान् ।
मर्दनारोहणे [4]व्याधि मध्यदेशे [5]ततो वधेत् ॥१२९॥

ज्येष्ठा नक्षत्रमें स्थित शुक्र इक्ष्वाकुवंश तथा गन्धमादन पर्वत पर स्थित बड़े व्यक्तियोंको पीड़ित करता है। मर्दन और आरोहण करनेवाला शुक्र विनाश करता है तथा मध्य देशके मत-मतान्तरोंका निराकरण करता है ॥१२९॥

दक्षिणः क्षेमकृज्ज्ञेयो वामगस्तु भयङ्करः ।
[6]प्रशस्तवर्णो विमलः स विज्ञेयो [7]सुखङ्करः ॥१३०॥

दक्षिणकी ओरसे ज्येष्ठा नक्षत्रमें गमन करनेवाला शुक्र क्षेम करनेवाला होता है और बायीं ओरसे गमन करनेवाला शुक्र भयंकर होता है तथा निर्मल श्वेतवर्णका शुक्र सुखकारक होता है ॥१३०॥

हन्ति मूलफलं मूले [8]कन्दानि च वनस्पतिम् ।
औषध्योमलयं चापि माल्यकाष्ठोपजीविनः ॥१३१॥

मूल नक्षत्रमें स्थित शुक्र वनस्पतिके फल, मूल, कन्द, औषधि, चन्दन एवं चन्दन-लकड़ी आदिके द्वारा आजीविका करनेवालोंका विनाश करता है ॥१३१॥

१. पश्चिमस्थो [illegible] मु० । २. विशाख० मु० । ३. [illegible] मु० । ४. हन्ति मु० । ५. [illegible] मु० । ६. [illegible] मु० । ७. सुखावहः मु० । ८. [illegible] मु० ।

यदाऽऽरुहेत् प्रमर्देत कुटुम्बाभूश्च दुःखिताः।
कन्दमूलं फलं हन्ति दक्षिणो वामगो जलम् ॥१३२॥

दक्षिणकी ओरसे गमन करता हुआ शुक्र जब मूल नक्षत्रका आरोहण या प्रमर्दन करे तो कुटुम्ब, भूमि आदि दुःखित होती हैं, कन्द, मूल, फलका विनाश होता है और बायीं ओरसे गमन करता हुआ जलका विनाश करता है ॥१३२॥

[1]वामभूमिजलेचारं आषाढस्थः प्रपीडयेत् ।
[2]शान्तिकरश्च मेघश्च तालीरारोह–मर्दने ॥१३३॥

पूर्वाषाढा नक्षत्रमें स्थित शुक्र सभी भूमि और जलचर आदिको पीड़ा देता है और शुक्रके आरोहण और मर्दन करनेसे शान्तिकर जलकी वर्षा होती है ॥१३३॥

दक्षिणः स्थविरान् हन्ति वामगो भयमावहेत् ।
सुवर्णो मध्यमः स्निग्धो भार्गवः सुखमावहेत् ॥१३४॥

दक्षिणकी ओरसे गमनकर पूर्वाषाढा नक्षत्रमें विचरण करनेवाला शुक्र स्थावरों—निवासी राजाओंका घात करता है और बायीं ओर गमन करनेवाला शुक्र भय उत्पन्न करता है तथा सुन्दर, स्निग्ध मध्यमसे गमन करनेवाला शुक्र सुख उत्पन्न करता है ॥१३४॥

यद्युत्तरासु तिष्ठेच पाञ्चालान् मालवत्रयान् ।
पीडयेन्मर्दयेद्द्रोहाद्विश्वासाद्भेदकृत्तथा ॥१३५॥

यदि उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें शुक्र स्थित हो तो पाञ्चाल तथा तीनों मालवोंको पीड़ित, मर्दित, द्रोहित एवं विश्वासके कारण भेद उत्पन्न करता है ॥१३५॥

अभिजित्स्थः कुरून् हन्ति कौरव्यान् क्षत्रियांस्तथा ।
[3]पशवः साधवश्चापि पीड्यन्ते रोह-मर्दने ॥१३६॥

अभिजित् नक्षत्र पर जब शुक्र स्थित रहता है तो कौरवों तथा क्षत्रियोंका मर्दन करता है तथा अभिजित् नक्षत्रमें आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पशु और साधुओंको पीड़ित करता है ॥१३६॥

यदा प्रदक्षिणं गच्छेत् पञ्चत्वं कुरुमादिशेत् ।
वामतो गच्छमानस्तु ब्राह्मणानां भयङ्करः ॥१३७॥

इस नक्षत्रके लिए दक्षिणकी ओरसे जब शुक्र गमन करता है तो कुरुवंशी क्षत्रियोंके लिए मृत्यु एवं बायीं ओरसे जब गमन करता है तो ब्राह्मणोंके लिए भयंकर होता है ॥१३७॥

सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च श्रवणस्थः प्रपीडयेत् ।
वङ्गाङ्गमगधान् हन्यादारोहणप्रमर्दने ॥१३८॥

यदि शुक्र श्रवण नक्षत्रमें स्थित हो तो सौरसेन और मत्स्य देशको पीड़ित करता है। श्रवण नक्षत्रमें आरोहण और प्रमर्दन करनेसे शुक्र वंग, अङ्ग और मगधका विनाश करता है ॥१३८

१. भूमिजलचरान् मु० । २. शातदेशांश्च मरांश्च मु० । ३. मघश्च मु० ।

दक्षिणे श्रवणं गच्छेद् द्रोणमेघं निवेदयेत् ।
वामगस्तूपघाताय नृणां च प्राणिनां तथा ॥१३९॥

यदि दक्षिणकी ओरसे शुक्र श्रवण नक्षत्रमें जाय तो एक द्रोण प्रमाण जलकी वर्षा होती है और बायीं ओरसे गमन करे तो मनुष्य और पशुओंके लिए घातक होता है ॥१३९॥

धनिष्ठास्थो धनं हन्ति समृद्धांश्च कुटुम्बिनः ।
पाञ्चालाः सूरसेनांश्च मत्स्यानारोहमर्दने ॥१४०॥

यदि धनिष्ठा नक्षत्रमें शुक्र गमन करे तो समृद्धशाली, धनिक कुटुम्बियोंके धनका अपहरण करता है। धनिष्ठा नक्षत्रके आरोहण और मर्दन करनेपर शुक्र पाञ्चाल, सूरसेन और मत्स्य देशका विनाश करता है ॥१४०॥

दक्षिणो धनिनो हन्ति वामगो व्याधिकृद् भवेत् ।
मध्यगः सुप्रसन्नश्च सम्प्रशस्यति भार्गवः ॥१४१॥

दक्षिणकी ओर गमन करनेवाला शुक्र धनिकोंका विनाश और बायीं ओरसे गमन करनेवाला शुक्र व्याधि करनेवाला होता है। मध्यसे गमन करनेवाला शुक्र उत्तम होता है। तथा सुख और शान्तिकी वृद्धि करता है ॥१४१॥

शलाकिनः शिलाकृतान् वारुणस्थः प्रहिंसति ।
कालाकूटान् कुनाटांश्च हन्यादारोहमर्दने ॥१४२॥

शतभिषा नक्षत्रमें स्थित शुक्र शलाकी और शिलाकृतोंकी हिंसा करता है। इस नक्षत्रमें आरोहण और मर्दन करनेवाला शुक्र कालकूट और कुनाटोंकी हिंसा करता है ॥१४२॥

दक्षिणो नीचकर्माणि हिंसते नीचकर्मिणः ।
वामगो दारुणं व्याधिं ततः सृजति भार्गवः ॥१४३॥

दक्षिणसे गमन करनेवाला शुक्र नीच कार्य और नीच कार्य करनेवालोंका विनाश करता है तथा वाम ओरसे गमन करनेवाला शुक्र भयंकर रोग उत्पन्न करता है ॥१४३॥

यदा भाद्रपदां सेवेत् धूर्तान् दूतांश्च हिंसति ।
मलयान्मालवान् हन्ति मर्दनारोहणे तथा ॥१४४॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्रमें स्थित शुक्र धूर्त और दूतोंकी हिंसा करता है तथा मर्दन और आरोहण करनेवाला शुक्र मलय और मालवानोंकी हिंसा करता है ॥१४४॥

दूतोपजीविनो वैद्यान् दक्षिणस्थः प्रहिंसति ।
वामगः स्थविरान् हन्ति भद्रबाहुवचो यथा ॥१४५॥

दक्षिणस्थ शुक्र दौत्य कार्य द्वारा आजीविका करनेवालों और वैद्योंका घात करता है तथा वामस्थ शुक्र स्थविरोंकी हिंसा करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१४५॥

उत्तरां तु यदा सेवेज्जलजान् हिंसते सदा ।
वत्सान् बाह्लीकगान्धारानारोहणप्रमर्दने ॥१४६॥

उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें स्थित शुक्र जलज—जलनिवासी और जलमें उत्पन्न प्राणियोंका घात करता है। इस नक्षत्रमें आरोहण और प्रमर्दन करनेवाला शुक्र पल्लव, वाह्लीक और गान्धार देशोंका विनाश करता है ॥१४६॥

दक्षिणे स्थावरान् हन्ति वामगः स्याद् भयङ्करः।
मध्यगः सुप्रसन्नश्च भार्गवः सुखमावहेत् ॥१४७॥

दक्षिणस्थ शुक्र स्थावरोंका विनाश करता है और वामग शुक्र भयंकर होता है। मध्यम शुक्र प्रसन्नता और सुख प्रदान करता है ॥१४७॥

भयान्तिकं नागराणां नागरांश्चोपहिंसति।
भार्गवो रेवतीप्राप्तो दुःप्रभश्च कृशो यदा ॥१४८॥

रेवती नक्षत्रको प्राप्त होनेवाला शुक्र नागरिक और नगरोंके लिए भय और आतंक करनेवाला है ॥१४८॥

मर्दनारोहणे हन्ति नाविकानथ नागरान्।
दक्षिणे गोपिकान् हन्ति उत्तरे भूपणानि तु ॥१४९॥

रेवती नक्षत्रको मर्दन और आरोहण करनेवाला शुक्र नाविक और नागरिकोंकी हिंसा करता है। दक्षिणस्थ शुक्र गायोंका घात करता है और उत्तरस्थ भूपण होता है ॥१४९॥

हन्यादश्विनीप्राप्तः सिन्धुसौवीरमेव च।
मत्स्यान् कुनटान् रूढो मर्दमानश्च हिंसति ॥१५०॥

अश्विनी नक्षत्रमें स्थित शुक्र सिन्धु और सौवीर देशका विनाश करता है। इस नक्षत्रका आरोहण और मर्दन करनेसे शुक्र मत्स्य और कुनटका घात करता है ॥१५०॥

अश्वपण्योपजीविनो दक्षिणो हन्ति भार्गवः[1]।
तेषां व्याधिं तथा मृत्युं सृजत्यथ तु वामगः ॥१५१॥

दक्षिणस्थ भार्गव—शुक्र अश्व-घोड़ोंके व्यापारी और दुकानदारोंका घात करता है और वामग शुक्र उनके लिए व्याधि और मृत्यु करता है ॥१५१॥

भृत्यकरान् यवनांश्च भरणीस्थः प्रपीडयेत्[2]।
किरातान् मद्रदेशानामाभीरान्मर्द-रोहणे ॥१५२॥

भरणी स्थित शुक्र भृत्यकर्म करनेवालों एवं यवनों—मुसलमानोंको पीड़ित करता है। इस नक्षत्रका मर्दन और रोहण करनेवाला शुक्र किरात, मद्र और आभीर देशका घात करता है ॥१५२॥

प्रदक्षिणं प्रयातस्य द्रोणं मेघं निवेदयेत्।
वामगः सम्प्रयातस्य रुद्रकर्माणि हिंसति ॥१५३॥

इस नक्षत्रसे दक्षिणकी ओर गया शुक्र एक द्रोण प्रमाण मेघोंकी वर्षा करता है और बांयी ओर गया शुक्र रुद्र कार्योंका विनाश करता है ॥१५३॥

---

१. मध्यमः मु०। २. भार्गवः मु०।

एवमेतत् फलं कुर्यादनुचारं तु भार्गवः।
पूर्वतः पृष्ठतश्चापि समचारो भवेल्लघुः॥१५४॥

इस प्रकार शुक्र अपने विचरणका फल करता है। पूर्वसे और पीछेसे शुक्रके गमनका संक्षिप्त फल कहा गया है॥१५४॥

उदये च प्रवासे च ग्रहाणां कारणं रविः।
प्रवासं छादयन्कुर्यात् मुञ्चमानस्तथोदयम्॥१५५॥

ग्रहोंके उदय और प्रवासमें कारण सूर्य है। यहाँ प्रवासका अभिप्राय ग्रहोंके अस्त होनेसे है। जब सूर्य ग्रहोंको आच्छादित करता है तो यह उनका अस्त कहा जाता है और जब छोड़ता है तो उदय माना जाता है॥१५५॥

प्रवासाः पञ्च शुक्रस्य पुरस्तात् पञ्च पृष्ठतः।
मार्गे तु मार्गसन्ध्याश्च चक्रे वीथीसु निर्दिशेत्॥१५६॥

शुक्रके सम्मुख और पीछे पाँच-पाँच प्रकारके अस्त हैं। मार्गी होनेपर मार्ग सन्ध्या होती है तथा वक्रीका कथन भी वीथियोंमें अवगत करना चाहिए॥१५६॥

त्रैमासिकः प्रवासः स्यात् पुरस्तात् दक्षिणे पथि।
पञ्चसप्ततिर्मध्ये स्यात् पञ्चाशीतिस्तथोत्तरे॥१५७॥
चतुर्विंशत्यहानि स्युः पृष्ठतो दक्षिणे पथि।
मध्ये पञ्चदशाहानि षडहान्युत्तरे पथि॥१५८॥

दक्षिण मार्गमें शुक्रका सम्मुख त्रैमासिक अस्त होता है, मध्यमें ७५ दिनोंका और उत्तरमें ८५ दिनोंका अस्त होता है। दक्षिण मार्गमें पीछेकी ओर २४ दिनोंका, मध्यमें पन्द्रह दिनोंका और उत्तर मार्गमें ६ दिनोंका अस्त होता है॥१५७-१५८॥

ज्येष्ठानुराधयोश्चैव द्वौ मासौ पूर्वतो विदुः।
अपरेणाष्टरात्रं तु तौ च सन्ध्ये स्मृते बुधैः॥१५९॥

ज्येष्ठा और अनुराधामें पूर्वकी ओरसे द्विमास—दो महीनोंकी और पश्चिमसे आठ रात्रि की सन्ध्या विद्वानों द्वारा प्रतिपादित की गयी है॥१५९॥

मूलादिदक्षिणो मार्गः फाल्गुन्यादिषु मध्यमः।
उत्तरश्च भरण्यादिर्जघन्यो मध्यमोऽन्तिमौ॥१६०॥

मूलादि नक्षत्रमें दक्षिण मार्ग, पूर्वाफाल्गुनी आदि नक्षत्रोंमें मध्यम और भरणी आदि नक्षत्रमें उत्तर मार्ग होता है। इनमें प्रथम मार्ग जघन्य है और अन्तिम दोनों मध्यम हैं॥१६०॥

वामो वदेत् यदा खारीं विंशकां त्रिंशकामपि।
करोति नागवीथीस्थो मार्गवश्चारमार्गगः॥१६१॥

नागवीथिमें विचरण करनेवाला वामगत शुक्र दश, बीस और तीस खारी अन्नका भाव करता है॥१६१॥

---

१. समचारो तु धल्पुः मु०। २. द्विमासं मु०। ३. वामोऽथ दशकां मु०। ४. ०मार्गगः मु०।

वक्रं याते द्वादशाहं समक्षेत्रे दशाह्निकम् ।
शेषेषु पृष्ठतो विन्द्यात् एकविंशमहोनिशम् ॥१७८॥

वक्र मार्गमें—वक्री होने पर शुक्रको बारह दिन और सम क्षेत्रमें दस दिन एक नक्षत्रके भोगमें लगते हैं। पीछेकी ओर गमन करनेमें उन्नीस दिन एक नक्षत्रके भोगमें व्यतीत होते हैं ॥१७८॥

पूर्वतः समचारेण पञ्च पक्षेण भार्गवः ।
[1]तदा करोति कौशल्यं भद्रबाहुवचो यथा ॥१७९॥

पूर्वासे गमन करता हुआ शुक्र पाँच पक्ष अर्थात् ७५ दिनोंमें कौशल करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१७९॥

ततः पञ्चदशर्क्षाणि [2]सञ्चरत्युशना पुनः ।
षड्भिर्मासैस्ततो ज्ञेयः प्रवासं पूर्वतः [3]परम् ॥१८०॥

इसके पश्चात् शुक्र पन्द्रह नक्षत्र चलता है और हटता है। इस प्रकार छः महीनोंमें पुनः प्रवासको प्राप्त हो जाता है ॥१८०॥

द्वाशीतिं चतुराशीतिं षडाशीतिं च भार्गवः ।
भक्तं समेषु भागेषु प्रवासं कुरुते समम् ॥१८१॥

८२, ८४ और ८६ दिनोंमें समान भाग देने पर शुक्रका समान प्रवास आ जाता है ॥१८१॥

द्वादशाहं च विंशाहं दशपञ्च च भार्गवः ।
नक्षत्रे तिष्ठते स्वेवं समचारेण पूर्वतः ॥१८२॥

बारह दिन, बीस दिन और पन्द्रह दिन शुक्र एक नक्षत्र पर पूर्व दिशासे विचरण करने पर निवास करता है ॥१८२॥

पांशुवातो रजो धूमं शीतोष्णं वा प्रवर्षणम् ।
विद्युदुल्काश्च कुरुते भार्गवोऽस्तमनोदये ॥१८३॥

शुक्रका अस्त होना धूलि वर्षा, धूम, गर्मी और ठण्डकका पड़ना, विद्युत्पात और उल्कापात आदि फलोंको करता है ॥१८३॥

सितकुसुमनिभस्तु भार्गवः प्रचलति वीथीषु [4]सर्वशो यदा वै ।
घटगृहजलपोतस्थितोऽभूद् बहुजलकृच्च ततः सुखदश्चारु ॥१८४॥

श्वेत पुष्पोंके समान वर्णवाला शुक्र वीथियोंमें गमन करता है, तो निश्चयसे सभी ओर जलकी खूब वर्षा होती है तथा वर्ष सुख देनेवाला और आनन्ददायी व्यतीत होता है ॥१८४॥

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि वक्रं चारं निबोधत ।
भार्गवस्य समासेन तथ्यं निर्ग्रन्थभाषितम् ॥१८५॥

इसके पश्चात् शुक्रके वक्रचारका निरूपण संक्षेपमें किया जाता है, जैसा कि निर्ग्रन्थ मुनियोंने वर्णन किया है ॥१८५॥

---

१. पचाहं इति ऋक्षाणि, मु० । २. सुरम्य सरत्युशनाहतः मु० । ३. पुनः मु० । ४. सर्वं देशशोकदः, मु० ।

पूर्वेण विंशऋक्षाणि [1]पश्चिमेकोनविंशतिः ।
चरेत् प्रकृतिचारेण समं [2]सीमानिरीक्षयोः ॥१८६॥

सीमा निरीक्षणमें स्वाभाविक गतिसे शुक्र पूर्वमें बीस नक्षत्र और पश्चिममें उन्नीस नक्षत्र गमन करता है ॥१८६॥

एकविंशं यदा गत्वा याति विंशतिमं पुनः ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं विकृतं भवेत् ॥१८७॥

अस्तकालमें इक्कीसवें नक्षत्र तक पहुँचकर शुक्र पुनः बीसवें नक्षत्र पर आता है, इसी लौटनेकी गतिको उसका विकृत वक्र कहा जाता है ॥१८७॥

[3]तदा ग्रामं नगरं धान्यं चैव पल्वलोदकान् ।
धनधान्यं च विविधं हरन्ति च दहन्ति च ॥१८८॥

इस प्रकारका विकृत वक्र ग्राम, नगर, धान्य, छोटे-छोटे तालाब, नाना प्रकारके धन, धान्य और समृद्धि आदिका हरण और दहन करता है ॥१८८॥

द्वाविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम् ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं शोभनं भवेत् ॥१८९॥

यदि अस्तकालमें शुक्र बाईसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः बीसवें पर लौट आये तो इस प्रकारका वक्र शुभ माना जाता है ॥१८९॥

विप्रमोदं च वस्त्रं च पल्वलां औषधींस्तथा ।
ह्रदान् नदींश्च कूपांश्च [4]भार्गवो पूरयिष्यति ॥१९०॥

इस प्रकारके शोभन वक्रमें शुक्र आमोद-प्रमोद, वस्त्रप्राप्ति, तालाबोंका जलसे पूर्ण होना, औषधियोंकी उपज, नदी, कुएँ, पोखरे आदिका जलसे पूर्ण होना एवं धन-धान्यकी समृद्धि आदि फल करता है ॥१९०॥

त्रिविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम् ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं दीप्तमुच्यते ॥१९१॥

यदि अस्तकालमें शुक्र तेईसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः बीसवें नक्षत्र पर लौट आवें तो इस प्रकारका वक्र दीप्त कहा जाता है ॥१९१॥

गृहाणि वनखण्डांश्च दहत्यग्निरभीक्ष्णशः ।
दिशो वनस्पतींश्चापि [5]भृगुर्दहति रश्मिभिः ॥१९२॥

इस प्रकारके दीप्त वक्रमें शुक्र अपनी किरणों द्वारा घर, वनप्रदेश, दिशा, वनस्पति आदिको जलाता है। अर्थात् दीप्त वक्रमें अग्नि और सूर्यकी तेज किरणों द्वारा सभी वस्तुएँ जलने लगती हैं ॥१९२॥

---

१. पश्चादे मु० । २. हीनातिरिक्तयोः मु० । ३. मद्दश ग्राम नगरं लभते दस्यतो भजेत् मु० । ४. शोषयन्युशनाहतम् मु० । ५. रविर्दहति मु० ।

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा ।
वामे शुक्रे तु विज्ञेया गजवीथीमुपागते ॥१६२॥

गजवीथिमें विचरण करनेवाला वाम शुक्र बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्नका भाव करता है ॥१६२॥

ऐरावणपथे त्रिंशचत्वारिंशदथापि वा ।
पञ्चाशीतिका ज्ञेया खारी तुल्या तु भार्गवः ॥१६३॥

ऐरावणवीथिमें विचरण करनेवाला शुक्र तीस, चालीस और पचास खारी प्रमाण अन्नका भाव करता है ॥१६३॥

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा ।
[1]व्योमगो वीथिमागम्य [2]करोत्यर्घेण भार्गवः ॥१६४॥

बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्नका भाव व्योमवीथिमें गमन करनेवाला शुक्र करता है ॥१६४॥

चत्वारिंशद् पञ्चाशद् वा षष्टिं वाऽथ समादिशेत् ।
जरद्गवपथं प्राप्ते भार्गवे खारिसंज्ञया ॥१६५॥

जरद्गव वीथिको प्राप्त होनेवाला शुक्र चालीस, पचास और साठ खारी प्रमाण अन्नका भाव करता है ॥१६५॥

सप्ततिं चाथ वाऽशीतिं नवतिं वा तथा दिशेत् ।
अजवीथीगते शुक्रे भद्रबाहुवचो यथा ॥१६६॥

अजवीथिको प्राप्त होनेवाला शुक्र सत्तर, अस्सी अथवा नब्बे खारी प्रमाण अन्नका भाव करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१६६॥

[3]विंशत्यशीतिकां खारिं शतिकामप्ययथा दिशेत् ।
मृगवीथीमुपागम्य विवर्णो भार्गवो यदा ॥१६७॥

जब शुक्र विवर्ण होकर मृगवीथिको प्राप्त करता है तो बीस, अस्सी अथवा सौ खारी प्रमाण अन्नका भाव होता है ॥१६७॥

विच्छिन्नबिसमृणालं न च पुष्पं फलं यदा ।
वैश्वानरपथं प्राप्तो यदा वामस्तु भार्गवः ॥१६८॥

जब वामस्थ शुक्र वैश्वानर वीथिमें गमन करता है तब कमलका डण्ठल, बिसपत्र, पुष्प और फल उत्पन्न नहीं होते हैं ॥१६८॥

[4]अनुलोमो विजयं मूते प्रतिलोमः पराजयम् ।
उदयास्तमने शुक्रो बुधश्च कुरुते तथा ॥१६९॥

शुक्र और बुध अनुलोम उदय, अस्तको प्राप्त होनेपर विजय करते हैं और प्रतिलोम उदय, अस्तको प्राप्त होनेपर पराजय ॥१६९॥

१. व्यामगो मु० । २. करोत्यर्घं च भार्गवः मु० । ३. शतिका द्विशता खारी, त्रिशता वा तदा भवेत् मु० । ४. तेषां विज्ञवमान्यानि मु० ।

मार्गमेकं समाश्रित्य सुभिक्षक्षेमदस्तथा ।
उशना दिशतितरां सानुलोमो न संशयः ॥१७०॥

शुक्र सीधी दिशामें एक-सा ही गमन करता है तो निस्सन्देह सुभिक्ष और कल्याण देता है ॥१७०॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं शुक्रो हन्याद्विकारगः ।
तस्मात् भयं परं विन्द्याच्चतुर्मासं न चापरम् ॥१७१॥

विकृत होकर शुक्र जिस देशके नक्षत्रका घात करता है, उस देशको, उस घातित होनेवाले दिनसे चार महीने तक भय होता है, अन्य कोई दुर्घटना नहीं घटती है ॥१७१॥

शुक्रोदये ग्रहो याति प्रवासं यदि कश्चनः ।
क्षेमं सुभिक्षमाचष्टे[1] [2]सर्ववर्षसमस्तदा ॥१७२॥

शुक्रके उदय होने पर यदि कोई ग्रह अस्त हो जाय तो सुभिक्ष, कल्याण और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है तथा वर्ष भर एक-सा आनन्द रहता है ॥१७२॥

बलक्षोभो भवेच्छ्यामे मृत्युः कपिलकृष्णयोः ।
नीले गवां [3]च मरणं रूक्षे वृष्टिक्षयः क्षुधा ॥१७३॥

यदि शुक्र श्यामवर्णका हो तो बल क्षुब्ध होता है; पिंगल और कृष्ण वर्णका शुक्र हो तो मृत्यु, नीलवर्णका होने पर गायोंका मरण और रूक्ष होने पर वर्षाका नाश तथा क्षुधाकी वेदना होती है ॥१७३॥

वाताक्षिरोगो माञ्जिष्ठे पीते शुक्र ज्वरो भवेत् ।
कृष्णे विचित्रे वर्णे च क्षयं लोकस्य निर्दिशेत् ॥१७४॥

शुक्रके मंजिष्ठ वर्ण होने पर वात और अक्षिरोग, पीतवर्ण होने पर ज्वर और विचित्र कृष्ण वर्ण होने पर लोकका क्षय होता है ॥१७४॥

नभस्तृतीयभागं च आरुहेत् त्वरितो यदा ।
नक्षत्राणि च चत्वारि प्रवा[4]समारुह्यश्चरेत् ॥१७५॥

जब शुक्र शीघ्र ही आकाशके तृतीय भागका आरोहण करता है तब चार नक्षत्रोंमें प्रवास—अस्त होता है ॥१७५॥

एकोनविंशद्दक्षाणि मासानष्टौ च भार्गवः ।
चत्वारि पृष्ठतश्चारं प्रवासं कुरुते ततः ॥१७६॥

जब शुक्र आठ महीनोंमें उन्नीस नक्षत्रोंका भोग करता है, उस समय पीछेके चार नक्षत्रोंमें प्रवास करता है ॥१७६॥

द्वादशैकोनविंशद्वा दशाहं चैव भार्गवः ।
एकैकस्मिन् नक्षत्रे चरमाणोऽवतिष्ठति ॥१७७॥

शुक्र एक नक्षत्र पर बारह दिन, दश दिन और उन्नीस दिन तक विचरण करता है ॥१७७॥

---

१. -माख्याति मु० । २. महद्धर्षं च तथा मु० । ३. तु मु० । ४. वामाभ्यामारश्चरेत् मु० ।

वक्रं याते द्वादशाहं समक्षेत्रे दशाह्निकम् ।
शेषेषु पृष्ठतो विन्द्यात् एकविंशमहोनिशम् ॥१७८॥

वक्र मार्गमें—वक्री होने पर शुक्रको बारह दिन और सम क्षेत्रमें दस दिन एक नक्षत्रके भोगमें लगते हैं। पीछेकी ओर गमन करनेमें उन्नीस दिन एक नक्षत्रके भोगमें व्यतीत होते हैं ॥१७८॥

पूर्वतः समचारेण पञ्च पक्षेण भार्गवः ।
तदा करोति कौशल्यं भद्रबाहुवचो यथा ॥१७९॥

पूर्वासे गमन करता हुआ शुक्र पाँच पक्ष अर्थात् ७५ दिनोंमें कौशल करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥१७९॥

ततः पञ्चदशर्क्षाणि [1]सञ्चरत्युशना पुनः ।
षड्भिर्मासैस्ततो ज्ञेयः प्रवासं पूर्वतः [2]परम् ॥१८०॥

इसके पश्चात् शुक्र पन्द्रह नक्षत्र चलता है और हटता है। इस प्रकार छः महीनोंमें पुनः प्रवासको प्राप्त हो जाता है ॥१८०॥

द्वाशीतिं चतुराशीतिं षडाशीतिं च भार्गवः ।
भक्तं समेषु भागेषु प्रवासं कुरुते समम् ॥१८१॥

८२, ८४ और ८६ दिनोंमें समान भाग देने पर शुक्रका समान प्रवास आ जाता है ॥१८१॥

द्वादशाहं च विंशाहं दशपञ्च च भार्गवः ।
नक्षत्रे तिष्ठते त्वेवं समचारेण पूर्वतः ॥१८२॥

बारह दिन, बीस दिन और पन्द्रह दिन शुक्र एक नक्षत्र पर पूर्व दिशासे विचरण करने पर निवास करता है ॥१८२॥

पांशुवातो रजो धूमं शीतोष्णं वा प्रवर्षणम् ।
विद्युदुल्काश्च कुरुते भार्गवोऽस्तमनोदये ॥१८३॥

शुक्रका अस्त होना धूलि वर्षा, धूम, गर्मी और ठण्डकका पड़ना, विद्युत्पात और उल्कापात आदि फलोंको करता है ॥१८३॥

सितकुसुमनिभस्तु भार्गवः प्रचलति वीथीषु [4]सर्वशो यदा वै ।
घटगृहजलपोतस्थितोऽभूद् बहुजलकृच्च ततः सुखदश्चारु ॥१८४॥

श्वेत पुष्पोंके समान वर्णवाला शुक्र वीथियोंमें गमन करता है, तो निश्चयसे सभी ओर जलकी खूब वर्षा होती है तथा वर्ष सुख देनेवाला और आनन्ददायी व्यतीत होता है ॥१८४॥

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि वक्रं चारं निबोधत ।
भार्गवस्य समासेन तथ्यं निर्ग्रन्थभाषितम् ॥१८५॥

इसके पश्चात् शुक्रके वक्रचारका निरूपण संक्षेपमें किया जाता है, जैसा कि निर्ग्रन्थ मुनियोंने वर्णन किया है ॥१८५॥

---

१. पचाहं इति ऋक्षाणि, मु० । २. सुरम्य सरयुरानाहतः मु० । ३. पुनः मु० । ४. सर्वं देशशो-करः, मु० ।

पूर्वेण विंशऋक्षाणि [1]पश्चिमेकोनविंशतिः ।
चरेत् प्रकृतिचारेण समं [2]सीमानिरीक्षयोः ॥१८६॥

सीमा निरीक्षणमें स्वाभाविक गतिसे शुक्र पूर्वमें बीस नक्षत्र और पश्चिममें उन्नीस नक्षत्र गमन करता है ॥१८६॥

एकविंशं यदा गत्वा याति विंशतिमं पुनः ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं विकृतं भवेत् ॥१८७॥

अस्तकालमें इक्कीसवें नक्षत्र तक पहुँचकर शुक्र पुनः बीसवें नक्षत्र पर आता है, इसी लौटनेकी गतिको उसका विकृत वक्र कहा जाता है ॥१८७॥

[3]तदा ग्रामं नगरं धान्यं चैव पल्वलोदकान् ।
धनधान्यं च विविधं हरन्ति च दहन्ति च ॥१८८॥

इस प्रकारका विकृत वक्र ग्राम, नगर, धान्य, छोटे-छोटे तालाब, नाना प्रकारके धन, धान्य और समृद्धि आदिका हरण और दहन करता है ॥१८८॥

द्वाविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम् ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं शोभनं भवेत् ॥१८९॥

यदि अस्तकालमें शुक्र बाईसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः बीसवें पर लौट आये तो इस प्रकारका वक्र शुभ माना जाता है ॥१८९॥

[4]क्षिप्रमोदं च वस्त्रं च पल्वलां औषधींस्तथा ।
ह्रदान् नदींश्च कूपांश्च [5]भार्गवो पूरयिष्यति ॥१९०॥

इस प्रकारके शोभन वक्रमें शुक्र आमोद-प्रमोद, वस्त्रप्राप्ति, तालाबोंका जलसे पूर्ण होना, औषधियोंकी उपज, नदी, कुएँ, पोखरे आदिका जलसे पूर्ण होना एवं धन-धान्यकी समृद्धि आदि फल करता है ॥१९०॥

त्रिविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम् ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं दीप्तमुच्यते ॥१९१॥

यदि अस्तकालमें शुक्र तेईसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः बीसवें नक्षत्र पर लौट आवें तो इस प्रकारका वक्र दीप्त कहा जाता है ॥१९१॥

गृहाणि वनखण्डांश्च दहत्यग्निरभीक्ष्णशः ।
दिशो वनस्पतींश्चापि [5]भृगुर्दहति रश्मिभिः ॥१९२॥

इस प्रकारके दीप्त वक्रमें शुक्र अपनी किरणों द्वारा घर, वनप्रदेश, दिशा, वनस्पति आदिको जलाता है। अर्थात् दीप्त वक्रमें अग्नि और सूर्यकी तेज किरणों द्वारा सभी वस्तुएँ जलने लगती हैं ॥१९२॥

---

१. परचारे मु० । २. हीनातिरिक्तयोः मु० । ३. मदश ग्राम नगरं लभते रयतो व्रजेत् मु० । ४. शोपयत्युशनाहतम् मु० । ५. रविर्दहति मु० ।

एतानि त्रीणि वक्राणि कुर्यात् पूर्वेण भार्गवः ।
इमाश्च पृष्ठतो विन्द्यात् [1]वक्रं शुक्रस्य संयतः ॥१६३॥

इन तीन वक्रों—विकृत वक्र, शोभन और दीप्त वक्रको शुक्र पूर्वकी ओरसे करता है तथा पृष्ठतः—पीछेकी ओरसे निम्न वक्रोंको करता है ॥१६३॥

विंशतिं तु यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले वायव्यं वक्रमुच्यते ॥१६४॥

जब शुक्र अस्तकालमें बीसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे वायव्यवक्र कहते हैं ॥१६४॥

वायुवेगसमां विन्द्यान्महीं वातसमाकुलाम् ।
[2]क्लिष्टामल्पेन जलेन जनेनान्येन सर्वशः ॥१६५॥

उक्त प्रकारके वायव्यवक्रमें पृथ्वी वायुसे परिपूर्ण हो जाती है तथा वायुका जोर अत्यन्त रहता है, अल्प वर्षा होनेसे पृथ्वी जलसे परिपूर्ण हो जाती है तथा अन्य राष्ट्रके द्वारा प्रदेश आक्रान्त हो जाता है ॥१६५॥

एकविंशतिं यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले भस्मं तद् वक्रमुच्यते ॥१६६॥

अस्तकालमें यदि शुक्र इक्कीसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे भस्म वक्र कहते हैं ॥१६६॥

ग्रामाणां नगराणां च प्रजानां च दिशो दिशम् ।
नरेन्द्राणां च चत्वारि भस्मभूतानि निर्दिशेत् ॥१६७॥

इस प्रकारके वक्रमें ग्राम, नगर, प्रजा और राजा ये चारों भस्मभूत हो जाते हैं अर्थात् यह वक्र अपने नामानुसार फल देता है ॥१६७॥

एतानि पञ्च वक्राणि कुरुते यानि भार्गवः ।
अतिचारं प्रवक्ष्यामि फलं यच्चास्य किञ्चन ॥१६८॥

इस प्रकार शुक्रके पाँच पाँच वक्रोंका निरूपण किया गया है, अब अतिचारका किञ्चित् फलादेशके साथ वर्णन किया जाता है ॥१६८॥

यदाऽतिक्रमते चारमुशना दारुणं फलम् ।
तदा सृजति लोकस्य दुःखक्लेशभयावहम् ॥१६९॥

यदि शुक्र अपनी गतिका अतिक्रमण करे तो यह उसका अतिचार कहलाता है, इसका फल संसारको दुःख, क्लेश, भय आदि होता है ॥१६९॥

तदाऽन्योन्यं तु राजानो ग्रामांश्च नगराणि च ।
समयुक्तानि [3]बाधन्ते [4]नष्टधर्म-जयार्थिनः ॥२००॥

शुक्रके अतिचारमें राजा ग्राम, और नगर धर्मसे च्युत होकर जयकी अभिलाषासे परस्परमें दौड़ लगाते हैं अर्थात् परस्परमें संघर्षरत होते हैं ॥२००॥

---

१. वक्राणि मु० । २. क्लिष्टां मान्येन जालेन मु० । ३. धावन्ति मु० । ४. नष्टकम् मु० ।

धर्मार्थकामा लुप्यन्ते जायते वर्णसङ्करः ।
शस्त्रेण संचयं विन्द्यान्महाजनगतं तदा ॥२०१॥

राष्ट्रमें धर्म, अर्थ और काम लुप्त हो जाते हैं और सभी धर्मभ्रष्ट होकर वर्णसंकर हो जाते हैं तथा शस्त्र द्वारा क्षत्र-विनाश होता है ॥२०१॥

मित्राणि स्वजनाः पुत्रा गुरुद्वेष्या जनास्तथा ।
[1]जहाति प्राणवर्णांश्च कुरुते तादृशेन यत् ॥२०२॥

शुक्रके अतिचारमें लोगोंकी प्रवृत्ति इस प्रकारकी हो जाती है जिससे वे आपसमें द्वेष-भाव करने लगते हैं तथा मित्र, कुटुम्बी, पुत्र, भाई, गुरु आदि भी द्वेषमें रत रहते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अपने वर्ण—जाति मर्यादा एवं प्राणोंको त्याग कर देते हैं। तात्पर्य यह है कि दुराचारकी प्रवृत्ति बढ़ जानेसे जाति-मर्यादाका लोप हो जाता है ॥२०२॥

विलीयन्ते च राष्ट्राणि दुर्भिक्षेण भयेन च ।
चक्रं प्रवर्तते दुर्गे भार्गवस्यातिचारतः ॥२०३॥

शुक्रके अतिचारमें दुर्भिक्ष और भयसे राष्ट्र विलीन हो जाते हैं और दुर्गके ऊपर अस्त्र-शस्त्रोंकी वर्षा होती है तथा यह अन्य चक्र शासनके आधीन हो जाता है ॥२०३॥

ततः श्मशानभूतास्थिकृष्णभूता मही तदा ।
वसा-रुधिरसङ्कुला काकगृध्रसमाकुला ॥२०४॥

पृथ्वी श्मशानभूमि बन जाती है, मुर्दोंकी भस्मसे कृष्ण हो जाती है तथा मांस, रुधिर और चर्बीसे युक्त होनेके कारण काक, शृगाल और गृद्धोंसे युक्त हो जाती है ॥२०४॥

वक्राण्युक्तानि सर्वाणि फलं यच्चातिचारकम् ।
वक्रचारं प्रवक्ष्यामि पुनरस्तमनोदयात् ॥२०५॥

जो फल सभी प्रकारके वक्रोंका कहा गया है, वह अतिचारमें भी घटित होता है। अब अस्तकालमें पुनः वक्रचारका निरूपण करते हैं ॥२०५॥

वैश्वानरपथं प्राप्तः पूर्वतः प्रविशेत् यदा ।
षडशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२०६॥

अब शुक्र वैश्वानरपथमें पूर्वकी ओरसे प्रवेश करता है तो ८६ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२०६॥

मृगवीथीं [2]पुनः प्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
चतुरशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२०७॥

यदि शुक्र मृगवीथिको दुबारा प्राप्त होकर अस्त हो तो ८४ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२०७॥

---

१. जहन्ति मु० । २. पुनः मु० ।

अजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
अशीतिं षडहानि तु गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२०८॥

यदि शुक्र अजवीथिको पुनः प्राप्त कर अस्त हो तो ८६ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२०८॥

जरद्गवपथप्राप्तः प्रवासं यदि गच्छति ।
सप्ततिं पञ्च चाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२०९॥

यदि शुक्र जरद्गवपथको प्राप्त होकर प्रवास करे तो ७५ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२०९॥

गोवीथीं समनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
सप्ततिं तु तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२१०॥

गोवीथिको प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ७० दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१०॥

वृषवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
पञ्चषष्टिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२११॥

वृषवीथिको प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ६५ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२११॥

ऐरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
षष्टिं तु स तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२१२॥

ऐरावणवीथिको प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ६० दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१२॥

गजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
पञ्चाशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२१३॥

गजवीथिको पुनः प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ८५ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१३॥

नागवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
पञ्चपञ्चाशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठतः ॥२१४॥

नागवीथिको पुनः प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो ५५ दिनोंके पश्चात् पीछेकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१४॥

वैश्वानरपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
चतुर्विंशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥२१५॥

वैश्वानर पथको प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो २४ दिनोंके पश्चात् पूर्वकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१५॥

मृगवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
द्वाविंशतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥२१६॥

शुक्र मृगवीथिको पुनः प्राप्त होकर अस्त हो तो २२ दिनोंके पश्चात् पूर्वकी ओर दिखलाई पड़ता है ॥२१६॥

अजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
तदा विंशतिरात्रेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥२१७॥

शुक्र अजवीथिको पुनः प्राप्त होकर अस्त हो तो २० रात्रियोंके पश्चात् पूर्वकी ओर उदय होता है ॥२१७॥

जरद्गवपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
तदा सप्तदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥२१८॥

जब शुक्र जरद्गवपथको प्राप्त होकर अस्त होता है तो १७ दिनोंके पश्चात पूर्वकी ओर उदय होता है ॥२१८॥

गोवीथीं समनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
चतुर्दशदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥२१९॥

गोवीथिको प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो चौदह दिनोंके पश्चात् पूर्वकी ओर उदय होता है ॥२१९॥

वृषवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
तदा द्वादशरात्रेण गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥२२०॥

वृषवीथिको प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो १२ रात्रियोंके पश्चात् पूर्वकी ओर उदय होता है ॥२२०॥

ऐरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
तदा स दशरात्रेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥२२१॥

ऐरावणवीथिको प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो १० रात्रियोंके पश्चात् पूर्वकी ओर उदयको प्राप्त होता है ॥२२१॥

गजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
अष्टरात्रं तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥२२२॥

गजवीथिको प्राप्त होकर यदि शुक्र अस्त हो तो अष्ट रात्रियोंके पश्चात् पूर्वकी ओर उदयको प्राप्त होता है ॥२२२॥

नागवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा ।
षडहं तु तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥२२३॥

यदि नागवीथीको पुनः प्राप्त होकर शुक्र अस्त हो तो ६ दिनोंके पश्चात पूर्वकी ओर उदयको प्राप्त होता है ॥२२३॥

एते प्रवासाः शुक्रस्य पूर्वतः पृष्ठतस्तथा ।
यथा शास्त्रे समुद्दिष्टा वर्ण-पाकौ निबोधत ॥२२४॥

शुक्रके ये प्रवास—अस्त पूर्व और पृष्ठसे यथाशास्त्र प्रतिपादित किये गये हैं। इसके वर्णका फल निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥२२४॥

शुक्रो नीलश्च कृष्णश्च पीतश्च हरितस्तथा ।
कपिलश्चाग्निवर्णश्च विज्ञेयः स्यात् कदाचन ॥२२५॥

शुक्रके नील, कृष्ण पीत, हरित, कपिल—पिंगल वर्ण और अग्नि वर्ण होते हैं ॥२२५॥

हेमन्ते शिशिरे रक्तः शुक्रः सूर्यप्रभानुगः ।
पीतो वसन्त-ग्रीष्मे च शुक्लः स्यान्नित्यसूर्यतः ॥२२६॥

हेमन्त और शिशिर ऋतुमें शुक्रका सम वर्ण सूर्यकी कान्तिके अनुसार होता है तथा वसन्त और ग्रीष्ममें पीत वर्ण एवं नित्य सूर्यकी कान्तिसे शुक्रका शुक्ल वर्ण होता है ॥२२६॥

अतोऽस्य येऽन्यथाभावा विपरीता भयावहाः ।
शुक्रस्य भयदो लोके कृष्णे नक्षत्रमण्डले ॥२२७॥

उपर्युक्त प्रतिपादित वर्णोंसे यदि विपरीत वर्ण शुक्रका दिखलाई पड़े तो भयप्रद होता है। शुक्रका कृष्णनक्षत्र मण्डलमें प्रवेश करना अत्यन्त भयप्रद है। अर्थात् जिस ऋतुमें शुक्रका जो वर्ण बतलाया गया है, उससे विपरीत वर्णका दिखलाई पड़ना अशुभ फल सूचक होता है ॥२२७॥

पूर्वोदये फलं यत् तु पच्यतेऽपरतस्तु तत् ।
शुक्रस्यापरतो यत्तु पच्यते पूर्वतः फलम् ॥२२८॥

शुक्रके पूर्वोदयका जो फल है वही पश्चिमोदयमें घटित होता है तथा शुक्रके पश्चिमोदयका जो फल है, वही पूर्वोदयमें भी घटित होता है ॥२२८॥

एवमेवं विजानीयात् फल-पाकौ समाहितः ।
कालातीतं यदा कुर्यात् तदा घोरं समादिशेत् ॥२२९॥

इस प्रकार शुक्रके फलादेशको समझ लेना चाहिए। जब शुक्रके उदयमें कालातीत हो—विलम्ब हो तो अत्यन्त कष्ट होता है ॥२२९॥

सवक्राचारं यो वेत्ति शुक्राचारं स बुद्धिमान् ।
श्रमणः स सुखं याति क्षिप्रं देशमपीडितम् ॥२३०॥

जो श्रमण—मुनि शुक्रके चार, वक्र, उदय, अतिचार आदिको जानता है, वह बुद्धिमान् अपीड़ित देशमें विहार कर शीघ्र ही सुख प्राप्त करता है ॥२३०॥

यदाऽग्निवर्णो रविसंस्थितो वा वैश्वानरं मार्गसमाश्रितश्च[1] ।
तदा भयं शंसति [2]सोऽपि जातं तज्जातजं साधयितव्यमन्यतः ॥२३१॥

जब शुक्र अग्निवर्ण हो अथवा सूर्यके अंश-कलापर स्थित हो अथवा वैश्वानर वीथिमें स्थित हो तो अग्निका भय रहता है तथा अन्यसे उत्पन्न अन्य प्रकारके उपद्रवोंकी भी सम्भावना रहती है ॥२३१॥

इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्त-शास्त्रे भगवत्त्रिलोकपतिदित्यगुरोः शुक्रस्य चारः समाप्तः ॥१५॥

१. ० श्रितस्य० मु० । २. ०ऽग्नि० ।

विवेचन—शुक्रोदय विचार—शुक्रका अश्विनी, मृगशिर, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्रमें उदय होनेसे सिन्धु, गुर्जर, कर्वट प्रदेशोंमें खेतीका नाश, महामारी एवं राजनैतिक संघर्ष होता है। शुक्रका उक्त नक्षत्रोंमें उदय होना नेताओं; महापुरुषों एवं राजनैतिक व्यक्तियोंके लिए शुभ नहीं है। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रोंमें शुक्रका उदय होनेसे, जालन्धर और सौराष्ट्रमें दुर्भिक्ष, विग्रह-संघर्ष एवं कलिङ्ग, स्त्रीराज्य और मरुदेशमें मध्यम वर्षा और मध्यम फसल उत्पन्न होती है। घी और धान्यका भाव समस्त देशमें कुछ महँगा होता है। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रमें शुक्रका उदय हो तो गुर्जर देशमें पुद्गलका भय, दुर्भिक्ष और द्रव्यहीनता, सिन्धु देशमें उत्पात, मालवमें संघर्ष; आसाम, बिहार और बंग प्रदेशमें भय, उत्पात, वर्षाभाव एवं महाराष्ट्र, द्रविड देशमें सुभिक्ष, समय पर वर्षा होती है। शुक्रका उक्त नक्षत्रोंमें उदय होना अच्छा माना जाता है। समस्त देशके भविष्यकी दृष्टिसे आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रोंका उदय अशुभ, दुर्भिक्ष, हानि एवं अशान्ति करनेवाला है। अवशेष सभी नक्षत्रोंका उदय शुभ एवं मंगल देनेवाला है।

शुक्रास्त विचार—अश्विनी, मृगशिर, हस्त, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्रमें शुक्रका अस्त हो तो इटली, रोम, जापानमें भूकम्पका भय; बर्मा, श्याम, चीन, अमेरिकामें सुख-शान्ति; रूस, भारतमें साधारण शान्ति रहती है। देशके अन्तर्गत कोंकण, लाट और सिन्धु प्रदेशमें अल्प वर्षा, सामान्य धान्यकी उत्पत्ति, उत्तरप्रदेशमें अत्यल्प वर्षा, अकाल, द्रविड प्रदेशमें विग्रह, गुर्जर देशमें सुभिक्ष, बंगालमें अकाल, बिहार और आसाममें साधारण वर्षा, मध्यम खेती उपजती है। शुक्रास्तके उपरान्त एक महीना तक अन्न महँगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता हो जाता है। घी, तेल, जूट आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। प्रजाको सुखकी प्राप्ति होती है। सभी लोग अमन-चैनके साथ निवास करते हैं। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रमें शुक्र अस्त हो तो हिन्दुस्तानमें विग्रह, मुसलिम राष्ट्रोंमें शान्ति एवं उनकी उन्नति, इंगलैण्ड और अमेरिकामें समता, चीनमें सुभिक्ष, बर्मामें उत्तम फसल एवं हिन्दुस्तानमें साधारण फसल होती है। मिश्र देशके लिए इस प्रकारका शुक्रास्त भयोत्पादक होता है, अन्नका अभाव होनेसे जनताको अत्यधिक कष्ट होता है। मरुस्थल और सिन्धु देशमें सामान्यतया दुर्भिक्ष होता है। मित्रराष्ट्रोंके लिए उक्त प्रकारका शुक्रास्त अनिष्टकर है। भारतके लिए सामान्यतया अच्छा है। वर्षाभाव होनेके कारण देशमें आन्तरिक अशान्ति रहती है तथा देशमें कल-कारखानोंकी उन्नति होती है। मघामें शुक्रास्त होकर विशाखामें उदयको प्राप्त करे तो देशके लिए सभी तरहसे भयोत्पादक होता है। तीनों पूर्वा—पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढ़ा, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद—रोहिणी और भरणी नक्षत्रोंमें शुक्रका अस्त हो तो पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेशके लिए सुभिक्षदायक, किन्तु इन प्रदेशोंमें राजनैतिक संघर्ष, धान्य भाव सस्ता तथा उक्त प्रदेशोंमें रोग उत्पन्न होते हैं। बंगाल, आसाम और बिहार-उड़ीसाके लिए उक्त प्रकारका शुक्रास्त शुभकारक है। इस प्रदेशोंमें धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है। धन-धान्यकी शक्ति वृद्धिंगत होती है। अन्नका भाव सस्ता होता है। शुक्रका भरणी नक्षत्र पर अस्त होना पशुओंके लिए अशुभकारक है। पशुओंमें नाना प्रकारके रोग फैलते हैं तथा धान्य और तृण दोनोंका भाव महँगा होता है। जनताको कष्ट होता है, राजनीतिमें परिवर्तन होता है। शुक्रका मध्यरात्रिमें अस्त होना तथा आश्लेषा विद्ध मघा नक्षत्रमें शुक्रका उदय और अस्त दोनों ही अशुभ होते हैं। इस प्रकारकी स्थितिमें जनसाधारणको भी कष्ट होता है।

शुक्रके गमनकी नौ वीथियाँ हैं—नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग, अज और दहन—वैश्वानर, ये वीथियाँ अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रोंकी मानी जाती हैं। किसी-किसीके

मतसे स्वाति, भरणी और कीर्त्तिका नक्षत्रमें नागवीथि होती है। गज, ऐरावत और वृषभ नामक वीथियोंमें रोहिणीसे उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र तक तीन-तीन वीथियाँ हुआ करती हैं तथा अश्विनी, रेवती, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें गोवीथि है। श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्रमें जरद्‌गव वीथि, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूलनक्षत्रमें मृगवीथि; हस्त, विशाखा और चित्रा नक्षत्रमें अजवीथि एवं पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढामें दहन वीथि होती है शुक्रका भरणी नक्षत्रसे उत्तर-मार्ग, पूर्वाफाल्गुनीसे मध्यममार्ग और पूर्वाषाढ़ासे दक्षिणमार्ग माना जाता है। जब उत्तरवीथिमें शुक्र अस्त या उदयको प्राप्त होता है, तो प्राणियोंके सुख सम्पत्ति और धन-धान्यकी वृद्धि करता है। मध्यमवीथिमें रहनेसे शुक्र मध्यम फल देता है और जघन्य या दक्षिण वीथिमें विद्यमान शुक्र कष्टप्रद होता है आर्द्रा नक्षत्रसे आरम्भ करके मृगशिर तक जो नौ वीथियाँ हैं, उनमें शुक्रका उदय या अस्त होनेसे यथाक्रमसे अत्युत्तम, उत्तम, ऊन, सम, मध्यम, न्यून, अधम, कष्ट और कष्टतम फल उत्पन्न होता है। भरणी नक्षत्रसे लेकर चार नक्षत्रोंमें जो मण्डल—वीथि हो, उसकी प्रथम वीथिमें शुक्रका अस्त या उदय होनेसे सुभिक्ष होता है, किन्तु अंग, बंग, कलिंग और वाह्लीक देशमें भय होता है। आर्द्रासे लेकर चार नक्षत्रों—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा इन चार नक्षत्रोंके मंडलमें शुक्रका उदय या अस्त हो तो अधिक जलकी वर्षा होती है, धन-धान्य सम्पत्ति वृद्धिगत होती है। प्रत्येक प्रदेशमें शान्ति रहती है, जनतामें सौहार्द्र और प्रेमका प्रचार होता है। यह द्वितीय मंडल उत्तम माना गया है। अर्थात् शुक्रका भरणीसे मृगशिरा नक्षत्र तक प्रथम मण्डल, आर्द्रासे आश्लेषा तक द्वितीय मंडल और मघासे चित्रा नक्षत्र तक तृतीय मण्डल, होता है। तृतीय मंडलमें शुक्रका उदय और अस्त हो तो वृक्षोंका विनाश, शवर-शूद्र, पुण्ड्र, द्रविड, शूद्र, वनवासी, शूलिकका विनाश तथा इनको अपार कष्ट होता है। शुक्रका चौथा मंडल स्वाति, विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रोंमें होता है। इस चतुर्थ मण्डलमें शुक्रके गमन करनेसे ब्राह्म-णादि वर्गोंको विपुल धन लाभ, यशलाभ और धन-जनकी प्राप्ति होती है। चौथे मण्डलमें शुक्रका अस्त होना या उदय होना सभी प्राणियोंके लिए सुखदायक है। यदि चौथे मण्डलमें किसी क्रूर ग्रह द्वारा आक्रान्त हो तो इक्ष्वाकुवंशी, आवन्तिके नागरिक, शूरसेन देशके वासी लोगोंको अपार कष्ट होता है। यदि इस मण्डलमें ग्रहोंका युद्ध हो शुक्र क्रूर ग्रहों द्वारा परास्त हो जाय तो विश्वमें भय और आतङ्क व्याप्त हो जाता है। अनेक प्रकारकी महामारियाँ, जनतामें क्षोभ असन्तोष एवं अनेक प्रकारके संघर्ष होते हैं। ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रवण इन पाँच नक्षत्रका पाँचवाँ मण्डल होता है। इस पंचम मण्डलमें शुक्रके गमन करनेसे क्षुधा, चोर, रोग आदिकी बाधाएँ होती हैं। यदि क्रूर ग्रहों द्वारा पंचम मण्डल आक्रान्त हो तो काश्मीर, अश्मक, मत्स्य, चारुदेवी और अवन्तिदेशवाले व्यक्तियोंके साथ आभीर जाति, द्रविड़, अम्बष्ठ, त्रिगर्त्त, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देश वासियोंका विनाश होता है। क्रूराक्रान्त या क्रूरग्रहाविष्ट शुक्र इस पंचम मण्डलमें रहनेसे जनतामें असन्तोष, घृणा, मात्सर्य और नाना प्रकारके कष्ट उत्पन्न करता है। धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी इन छः नक्षत्रोंका छठवाँ मण्डल है। यदि क्रूर ग्रह इस मण्डलमें निवास करता हो और उसके साथ शुक्र भी संगम करे तो प्रजाको आर्थिक कष्ट रहता है। छठवें मण्डलमें शुक्रका युद्ध यदि किसी शुभ ग्रहके साथ हो तो धन-धान्यकी समृद्धि क्रूर ग्रहके साथ हो तो धन-धान्यका अभाव तथा एक शुभ ग्रह और एक क्रूर ग्रह हो तो जनता को साधारण तथा सुख प्राप्त होता है। वर्षा समयानुसार होती है, जिससे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। शस्त्रघात और चोरघातका कष्ट होता है। छठवें मण्डलमें शुक्र शुभ ग्रहका सहयोगी होकर अस्त हो तो प्रजामें शान्ति और सुखका प्रचार होता है।

इन छः मण्डलोंमें शुक्र-गमनका निरूपण किया गया है। स्वाति और ज्येष्ठा नक्षत्रवाले मण्डल पश्चिम दिशामें होनेसे शुभ फल होता है। मघादि नक्षत्रवाला मण्डल पूर्वदिशामें हो तो अत्यन्त भय होता है। कृत्तिका नक्षत्रको भेद कर शुक्र गमन करे तो नदियोंमें बाढ़ आती है,

जिससे नदीतटवासियोंको महान् कष्ट होता है। रोहिणी नक्षत्रका शुक्र भेदन करे तो महामारी पड़ती है। मृगशिरा नक्षत्रका भेदन करे तो जल या धान्यका नाश, आर्द्रा नक्षत्रका भेदन करनेसे कौशल और कलिंगका विनाश होता है, पर वृष्टि अत्यधिक होती है और फसल भी उत्तम उत्पन्न होती है। पुनर्वसु नक्षत्रका शुक्र भेदन करे तो अश्मक और विदर्भ प्रदेशके रहनेवालोंको अनीतिसे कष्ट होता है, अवशेष प्रदेशोंके निवासियोंको कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्रका भेदन करनेसे सुभिक्ष और जनतामें सुख-शान्ति रहती है। आश्लेषा नक्षत्रमें शुक्रका गमन हो तो सर्पभय रोगोंकी उत्पत्ति एवं दैन्यभावकी वृद्धि होती है। मघा नक्षत्रका भेदन कर शुक्र गमन करे तो सभी देशोंमें शान्ति और सुभिक्ष होते हैं। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रका शुक्र भेदन कर आगे चले तो शबर और पुलिन्द जातिके लिए सुखकारक होता है तथा कुरुजांगल देशके निवासियोंके लिए कष्टप्रद होता है। शुक्रका इस नक्षत्रको भेदन करना वंग, आसाम, बिहार, उत्तरप्रदेशके निवासियोंके लिए शुभ है। शुक्रकी उक्त स्थितिमें धन-धान्यकी समृद्धि होती है। यदि हस्त नक्षत्रका शुक्र भेदन करे तो कलाकारोंको कष्ट होता है। चित्रा नक्षत्रका भेदन होनेसे जगत्‌में शान्ति, आर्थिक विकास एवं पशु-सम्पत्तिकी वृद्धि होती है। इस नक्षत्रका शुक्र सहयोगी ग्रहोंके साथ भेदन करता हुआ आगे गमन करे तो कलिंग, वंग और अंग प्रदेशमें जनताको मधुर वस्तुओंका कष्ट होता है। जिन देशोंमें गन्नाकी खेती अधिक होती है, उन देशोंमें गन्नाकी फसल मारी जाती है। स्वाति नक्षत्रमें शुक्रके आनेसे वर्षा अच्छी होती है। देशकी पर-राष्ट्रनीतिकी दृष्टिसे अच्छा नहीं होता। विदेशोंके साथ संघर्ष करना होता है तथा छोटी-छोटी बातोंको लेकर आपसमें मतभेद हो जाता है और सन्धि तथा मित्रताकी बातें पिछड़ जाती हैं। व्यापारियोंके लिए भी शुक्रकी उक्त स्थिति अच्छी नहीं मानी जाती। लोहे, गुड़, अनाज, घी और मशालेके व्यापारियोंको शुक्रकी उक्त स्थितिमें घाटा उठाना पड़ता है। तेल, तिलहन एवं सोना-चाँदीके व्यापारियोंको अधिक लाभ होता है। विशाखा नक्षत्रका भेदन कर शुक्र आगेकी ओर बढ़े तो सुवृष्टि होती है, पर चोर-डाकुओंका प्रकोप दिनोंदिन बढ़ता जाता है। प्रजामें अशान्ति रहती है। यद्यपि धन-धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है, फिर भी नागरिकोंकी शान्ति भंग होनेकी आशंका बनी रह जाती है। अनुराधाका भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्षत्रियोंको कष्ट, व्यापारियोंको लाभ, कृषकोंको साधारण कष्ट एवं कलाकारोंको सम्मानकी प्राप्ति होती है। ज्येष्ठा नक्षत्रका भेदन कर शुक्रके गमन करनेसे सन्ताप, प्रशासकोंमें मतभेद, धन धान्यकी समृद्धि एवं आर्थिक विकास होता है। मूल नक्षत्रका भेदन कर शुक्रके गमन करनेसे वैद्योंको पीड़ा, डाक्टरोंको कष्ट, एवं वैज्ञानिकोंको अपने प्रयोगोंमें असफलता प्राप्त होती है। पूर्वाषाढ़ाका भेदन कर शुक्रके गमन करनेसे जल-जन्तुओंको कष्ट, नाव और स्टीमरोंके डूबनेका भय, नदियोंमें बाढ़ एवं जन-साधारणमें आतंक व्याप्त होता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रका भेदन करनेसे व्याधि, महामारी, दूषित ज्वरका प्रकोप, हैजा जैसी संक्रामक व्याधियोंका प्रसार, चेचकका प्रकोप एवं अन्य संक्रामक दूषित बीमारियोंका प्रसार होता है। श्रवण नक्षत्रका भेदन कर शुक्र अपने मार्गमें गमन करे तो कर्ण सम्बन्धी रोगोंका अधिक प्रसार और धनिष्ठा नक्षत्रका भेदन कर आगे चले तो आँखकी बीमारियाँ अधिक होती हैं। शुक्रकी उक्त प्रकारकी स्थितिमें साधारण जनताको भी कष्ट होता है। व्यापारवर्ग और कृषकवर्गको शान्ति और सन्तोषकी प्राप्ति होती है। वर्षा समयानुकूल होती जाती है, जिससे कृषकवर्गको परम शान्ति मिलती है। राजनैतिक उथल-पुथल होती है, जिससे साधारण जनतामें भी आतंक व्याप्त रहता है। शतभिषा नक्षत्रका भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्रूर कर्म करनेवाले व्यक्तियोंको कष्ट होता है। इस नक्षत्रका भेदन शुभ ग्रहके साथ होनेसे शुभ फल और क्रूरग्रहके साथ होनेसे अशुभ फल होता है। पूर्वाभाद्रपदका भेदन करनेसे जुआ खेलनेवालोंको कष्ट, उत्तराभाद्रपदका भेदन करनेसे फल-पुष्पोंकी वृद्धि और रेवतीका भेदन करनेसे सेनाका विनाश होता है। अश्विनी नक्षत्रमें भेदन करनेसे शुक्र क्रूरग्रहके

साथ संयोग करे तो जनताको कष्ट और शुभग्रहका संयोग करे तो लाभ, सुभिक्ष और आनन्द की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्रका भेदन करनेसे जनताको साधारण कष्ट होता है।

कृष्णपक्षकी चतुर्दशी अमावास्या, अष्टमी तिथिको शुक्रका उदय या अस्त हो तो पृथ्वीपर अत्यधिक जलकी वर्षा होती है। अनाजकी उत्पत्ति खूब होती है। यदि गुरु और शुक्र पूर्व-पश्चिममें परस्पर सातवीं राशिमें स्थित हों तो रोग और भयसे प्रजा पीड़ित रहती है, वृष्टि नहीं होती। गुरु, बुध, मंगल और शनि ये ग्रह यदि शुक्रके आगेके मार्गमें चलें तो वायुका प्रकोप, मनुष्योंमें संघर्ष, अनीति और दुराचार की प्रवृत्ति, उल्कापात और विद्युत्पातसे जनतामें कष्ट तथा अनेक प्रकारके रोगोंकी वृद्धि होती है। यदि शनि शुक्रसे आगे गमन करे तो जनताको कष्ट, वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। यदि मङ्गल शुक्रसे आगे गमन करता हो तो भी जनतामें विरोध, विवाद, शस्त्रभय, अग्निभय, चोरभय होनेसे नाना प्रकारके कष्ट सहन करने पड़ते हैं। जनतामें सभी प्रकारकी अशान्ति रहती है। शुक्रके आगे मार्गमें बृहस्पति गमन करता हो तो समस्त मधुर पदार्थ सस्ते होते हैं। शुक्रके उदय या अस्तकालमें शुक्रके आगे जब बुध रहता है तब वर्षा और रोग रहते हैं। पित्तसे उत्पन्न रोग तथा काच-कामलादि रोग उत्पन्न होते हैं। संन्यासी, अग्निहोत्री, वैद्य, नृत्यसे आजीविका करनेवाले, अश्व, गौ, वाहन, पीले वर्णके पदार्थ विनाशको प्राप्त होते हैं। जिस समय अग्निके समान शुक्रका वर्ण हो तब अग्निभय, रक्तवर्ण हो तो शस्त्रकोप, काञ्चनके समान वर्ण हो तो गौरवर्णके व्यक्तियोंको व्याधि उत्पन्न होती है। यदि शुक्र हरित और कपिल वर्ण हो तो दमा और खाँसीका रोग अधिक उत्पन्न होता है। भस्मके समान रूक्ष वर्णका शुक्र देशको सभी प्रकारकी विपत्ति देनेवाला होता है। स्वच्छ, स्निग्ध, मधुर और सुन्दर कान्तिवाला शुक्र सुभिक्ष, शान्ति, नीरोगता आदि फलोंको देनेवाला है। शुक्रका अस्त रविवारको हो तथा उदय शनिवारको हो तो देशमें विनाश, संघर्ष, चेचकका विशेष प्रकोप, महामारी, धान्यका भाव मँहगा, जनतामें क्षोभ, आतङ्क एवं घृत और गुड़का भाव सस्ता होता है। शुक्रवारको शुक्र अस्त होकर शनिवारको उदयको प्राप्त हो तो सुभिक्ष, शान्ति, आर्थिक विकास, पशु सम्पत्तिका विकास, समय पर वर्षा, कला-कौशलकी वृद्धि एवं चैत्रके महीनेमें बीमारी पड़ती है। श्रावणमें मंगलवारको शुक्रास्त हो और इसी महीनेमें शनिवारको उदय हो तो जनतामें परस्पर संघर्ष, नेताओंमें मतभेद, फसलकी क्षति, खून-खराबी जहाँ-तहाँ उपद्रव एवं वर्षा भी साधारण होती है। भाद्रपद मासमें गुरुवारको शुक्र अस्त हो और गुरुवारको हो शुक्रका उदय आश्विन मासमें हो तो जनतामें संक्रामक रोग फैलते हैं। आश्विन मासमें शुक्र बुधवारको अस्त होकर सोमवारको उदयको प्राप्त हो तो सुभिक्ष, धन-धान्यकी वृद्धि, जनतामें साहस एवं कल-कारखानोंकी वृद्धि होती है। बिहार, बंगाल, आसाम, उत्कल आदि पूर्वीय प्रदेशोंमें वर्षा यथेष्ट होती है। दक्षिण भारतमें फसल अच्छी नहीं होती, खेतीमें अनेक प्रकारके रोग लग जाते हैं, जिससे उत्तम फसल नहीं होती। कार्तिक मासमें शुक्रास्त होकर पौषमें उदयको प्राप्त हो तो जनताको साधारण कष्ट, माघमें कठोर जाड़ा तथा पाला पड़नेके कारण फसल नष्ट हो जाती है। मार्गशीर्षमें शुक्रका अस्त होना अशुभ सूचक है। पौषमासमें शुक्रास्त होना अच्छा होता है, धन-धान्यकी समृद्धि होती है। माघमासमें शुक्र अस्त होकर फाल्गुनमें उदयको प्राप्त हो तो फसल आगामी वर्ष अच्छी नहीं होती। फाल्गुन और चैत्र मासमें शुक्रका अस्त होना मध्यम है। वैशाखमें शुक्रास्त होकर आषाढ़में उदय हो तो दुर्भिक्ष, महामारी एवं उथल-पुथल सारे देशमें रहती है। राजनैतिक उलट-फेर भी होते रहते हैं। ज्येष्ठ और आषाढ़में शुक्रका अस्त होना अनाजकी कमीका सूचक है।

षोडशोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभविचेष्टितम् ।
यच्छ्रुत्वाऽवहितः प्राज्ञो भवेन्नित्यमतन्द्रितः ॥१॥

अब शुक्रचारके पश्चात् शनि-चारके अन्तर्गत शनिकी शुभाशुभ चेष्टाओंका वर्णन किया जाता है, जिसको सुनकर विद्वान् सुखी हो जाते हैं ॥१॥

प्रवासमुदयं वक्रं गतिं वर्णं फलं तथा ।
शनैश्चरस्य वक्ष्यामि [1]शुभाशुभविचेष्टितम् ॥२॥

पूर्वाचार्योंके मतानुसार शनिका अस्त, उदय, वक्र, गति और वर्णका शुभाशुभ फल वर्णन करता हूँ ॥२॥

प्रवासं दक्षिणे मार्गे मासिकं मध्यमे पुनः ।
दिवसाः पञ्चविंशतिस्त्रयोविंशतिरुत्तरे ॥३॥

दक्षिणमार्गमें शनिका अस्त एक महीनेका उत्कृष्ट और मध्यम पचीस दिनका होता है और उत्तरमें तेईस दिन का ॥३॥

चारंगतो या भूयः सन्तिष्ठति महाग्रहः ।
[2]एकान्तरेण वक्रेण भौमवत् कुरुते फलम् ॥४॥

जब शनि पुनः चार—गमन करता हुआ स्थिर होता है और एकान्तर वक्रको प्राप्त करता है तो भौम—मंगलके समान फलादेश उत्पन्न होता है ॥४॥

संवत्सरमुपस्थाय नक्षत्रं विप्रमुञ्चति ।
सूर्यपुत्रस्ततश्चैव [3]द्योतमानः शनैश्चरः ॥५॥

शनि प्रजाहितकी कामनासे संवत्सरकी स्थापनाके लिए नक्षत्रका त्याग करता है ॥५॥

द्वे नक्षत्रे यदा सौरिर्वर्षेण चरते यदा ।
राज्ञामन्योऽन्यभेदश्च शस्त्रकोपश्च जायते ॥६॥

जब शनि एक वर्षमें दो नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो राजाओंमें परस्पर मतभेद होता है और शस्त्रकोप होता है ॥६॥

दुर्गे भवति संवासो मर्यादा च विनश्यति ।
वृष्टिश्च विषमा ज्ञेया व्याधिकोपश्च जायते ॥७॥

उपर्युक्त प्रकारके शनिकी स्थितिमें शत्रुके भय और आतंकके कारण दुर्गमें निवास करना होता है, मर्यादा नष्ट हो जाती है, वर्षा विषमा—हीनाधिक होती है और व्याधियाँ—रोगादि फैलती हैं ॥७॥

१. यथावदनुपूर्वशः मु० । २. एकान्तरेण मु० । ३. प्रजानां हितकाम्यया मु० ।

यदा तु त्रीणि चत्वारि नक्षत्राणि शनैश्चरः ।
मन्दवृष्टिं च दुर्भिक्षं शस्त्रं व्याधिं च निर्दिशेत् ॥८॥

जब शनि एक वर्षमें तीन या चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो मन्दवृष्टि, दुर्भिक्ष, शस्त्रपीड़ा और रोगादि होते हैं ॥८॥

चत्वारि वा यदा गच्छेन्नक्षत्राणि महाद्युतिः ।
तदा युगान्तं जानीयात् यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥९॥

यदि शनि एक वर्षमें चार नक्षत्रोंका अतिक्रमण करें तो युगान्त समझना चाहिए तथा प्रजा मृत्युके मुखमें चली जाती है ॥९॥

उत्तरे पतितो मार्गे यद्येषो नीलतां व्रजेत् ।
स्निग्धं तदा फलं ज्ञेयं नागरं जायते तदा ॥१०॥
रतिप्रधाना मोदन्ति राजानस्तुष्टभूमयः ।
क्ष्मां मेघवतीं विन्द्यात् सर्वबीजप्ररोहिणीम् ॥११॥

उत्तरमार्गमें गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण और स्निग्ध हो तो उसका फल अच्छा होता है। सरागी व्यक्ति आमोद-प्रमोद करते हैं, राजा सन्तुष्ट होते हैं और पृथ्वी पर सभी प्रकारके बीजोंको उत्पन्न करनेवाली वर्षा होती है ॥१०-११॥

मध्यमे तु यदा मार्गे कुर्यादस्तमनोदयौ ।
मध्यमं वर्षणं सस्यं सुभिक्षं क्षेममेव च ॥१२॥

यदि शनि मध्यम मार्गमें अस्त और उदयको प्राप्त हो तो मध्यम वर्षा, सुभिक्ष, धान्यकी उत्पत्ति एवं कल्याण होता है ॥१२॥

दक्षिणे तु यदा मार्गे यदि स नीलतां व्रजेत् ।
नागरा यायिनश्चापि पीड्यन्ते च [1]भटागणाः ॥१३॥

यदि दक्षिण मार्गमें गमन करता हुआ शुक्र नीलवर्णको प्राप्त हो तो नागरिक और यायी—आक्रमण करनेवाले दोनों ही योद्धागण पीड़ाको प्राप्त होते हैं ॥१३॥

गोपालं वर्जयेत् तत्र दुर्गाणि च समाश्रयेत् ।
कारयेत् सर्वशस्त्राणि बीजानि च न वापयेत् ॥१४॥

उक्त प्रकारकी शनिकी स्थितिमें गोपाल—गोपुर, नगरको छोड़कर दुर्गका आश्रय ग्रहण करना चाहिए, शास्त्रोंकी संभाल करना एवं नवीन शस्त्रोंका निर्माण करना चाहिए और बीज बोनेका कार्य नहीं करना चाहिए ॥१४॥

प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य यस्य याति शनैश्चरः ।
स च राजा विवर्धेत सुभिक्षं क्षेममेव च ॥१५॥

शनि जिस नक्षत्रकी प्रदक्षिणा करता है, उस नक्षत्रमें जन्म लेनेवाला राजा वृद्धिगत होता है, सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥१५॥

1. भटप्रभः मु० ।

अपसव्यं नक्षत्रस्य यस्य याति शनैश्चरः ।
स च राजा विपद्येत दुर्भिक्षं भयमेव च ॥१६॥

शनि जिस नक्षत्रके अपसव्य—दाहिनी ओर गमन करता है, उस नक्षत्रमें उत्पन्न हुआ राजा विपत्तिको प्राप्त होता है तथा दुर्भिक्ष और विनाश भी होता है ॥१६॥

चन्द्रः सौरिं यदा प्राप्तः परिवेषेण [1]रुन्धति ।
अवरोधं विजानीयान्नगरस्य महीपतेः ॥१७॥

जब चन्द्रमा शनिको प्राप्त हो और परिवेषके द्वारा अवरुद्ध हो तो नगर और राजाका अवरोध होता है अर्थात् किसी अन्य राजाके द्वारा डेरा डाला जाता है ॥१७॥

चन्द्रः शनैश्चरं प्राप्तो मण्डलं वाऽनुरोहति ।
यवनां सराष्ट्रां [2]सौवीरां [3]वारुणं भजते दिशम् ॥१८॥

चन्द्रमा शनिको प्राप्त होकर मण्डल पर आरोहण करे तो यवन, सौराष्ट्र, सौवीर उत्तर दिशाको प्राप्त होते हैं ॥१८॥

आनर्त्ताः सौरसेनाश्च दशार्णा द्वारिकास्तथा ।
आवन्त्या अपरान्ताश्च यायिनश्च तदा नृपाः ॥१६॥

उपर्युक्त स्थितिमें आनर्त्त, सौरसेन, दशार्ण, द्वारिका, अवन्तिके निवासी राजा यायी आक्रमण करनेवाले हैं ॥१६॥

यदा वा युगपद् युक्तः सौरिमध्येन नागरैः ।
[4]तदा भेदं विजानीयान्नागराणां परस्परम् ॥२०॥
महात्मानश्च ये सन्तो महायोगापरिग्रहाः ।
उपसर्गं च गच्छन्ति धन-धान्यं च वध्यते ॥२१॥

जब चन्द्रमा और शनि दोनों एक साथ हों तो नागरिकोंमें परस्पर मतभेद होता है। जो महात्मा, मुनि और साधु अपरिग्रही विचरण करते हैं, वे उपसर्गको प्राप्त होते हैं तथा धन-धान्यकी हानि होती है ॥२०-२१॥

देशा महान्तो योधाश्च तथा नगरवासिनः ।
ते सर्वत्रोपतप्यन्ते वेधे सौरस्य तादृशे ॥२२॥

शनिके उक्त प्रकारके वेध होने पर देश, बड़े-बड़े योधा तथा नगर निवासी सर्वत्र सन्तप्त होते हैं ॥२२॥

ब्राह्मी सौम्या प्रतीची च वायव्या च दिशो यदा ।
वाहिनीं यो जयेत्तासु नृपो दैवहतस्तदा ॥२३॥

पूर्व, उत्तर, पश्चिम और वायव्य दिशा की सेनाको जो नृप जीतता है, वह भी भाग्य द्वारा आहत होता है ॥२३॥

---

१. रुन्धते मु० । २. सौरेयां मु० । ३. दारुणां च भजेद्दशाम् मु० । ४. अन्योऽन्यमिदं जानीयात् मु० ।

कृत्तिकासु च यद्यार्किर्विशाखासु बृहस्पतिः ।
[1]समस्तं दारुणं विन्द्यात् [2]मेघश्चात्र प्रवर्षति ॥२४॥

जब कृत्तिका नक्षत्र पर शनि और विशाखा पर बृहस्पति रहता है तो चारों ओर भीषण भय होता है और वहाँ वर्षा होती है ॥२४॥

कीटाः पतङ्गाः शलभा वृश्चिका मूषका शुकाः[3] ।
अग्निश्चौरा बलीयांसस्तस्मिन् वर्षे न संशयः ॥२५॥

इस प्रकार की स्थिति वाले वर्षमें कीट, पतंग, शलभ, बिच्छू, चूहे, अग्नि और चोर निस्सन्देह बलवान होते हैं अर्थात् इनका प्रकोप बढ़ता है ॥२५॥

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम् ।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपश्च दारुणम् ॥२६॥

जब शनि श्वेत रङ्गका हो तो सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रंगका होनेपर भय एवं पीतवर्ण होनेपर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोप होता है ॥२६॥

कृष्णे शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति ।
स्नेहवानत्र गृह्णाति रूक्षः शोषयते प्रजाः ॥२७॥

शनिके कृष्णवर्ण होनेपर नदियाँ सूख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होनेपर प्रजामें सहयोग और रूक्ष होनेपर प्रजाका शोषण होता है ॥२७॥

सिंहलानां किरातानां माद्राणां मालवैः सह ।
द्रविडानां च भोजानां कोंकणानां तथैव च ॥२८॥
[4]उत्कलानां पुलिन्द्राणां पल्हवानां शकैः सह ।
यवनानां [5]च पौराणां स्थावराणां तथैव च ॥२९॥
[6]अङ्गानां च कुरूणां दरयानां च शनैश्चरः ।
एषां विनाशं कुरुते यदि बध्येत संयुगे ॥३०॥

यदि शनिका युद्ध हो तो सिंहल, किरात, मालव, मद्र, द्रविड़, भोज, कोंकण, उत्कल, पुलिन्द, पल्हव, शक, यवन, अङ्ग, कुरु, दरयपुर के नागरिकों और राजाओंका विनाश करता है ॥२८-३०॥

यस्य यस्य तु नक्षत्रे कुर्यादस्तमनोदयौ ।
तस्य देशान्तरे द्रव्यं [7]हन्यात् चाथ विनाशयेत् ॥३१॥

जिस-जिस नक्षत्र पर शनि अस्त या उदयको प्राप्त होता है, उस-उस नक्षत्रवाले द्रव्य, देश एवं देशवासियोंका विनाश करता है ॥३१॥

शनैश्चरं चारमिदं च भूयो यो वेत्ति विद्वान् निभृतो यथावत् ।
स पूजनीयो भुवि लब्धकीर्त्तिः सदा [8]महात्मेव हि दिव्यचक्षुः ॥३२॥

---

१. समन्तात् मु० । २. देव- मु० । ३. -स्तथा मु० । ४. भुवकानां मु० । ५. पुराणानां मु० । ६. अङ्गेयानां सुराणां च दस्यूनां च, मु० । ७. हन्यते वाणिनश्च ये मु० । ८. महानेव मु० ।

जो विद्वान् यथार्थ रूपसे इस शनैश्चर चारको जानता है, वह अत्यन्त पूजनीय है, संसार में कीर्तिका धारी होता है और महान् दिव्यदृष्टिको प्राप्त कर सभी प्रकारके फलादेशोंमें पारंगत होता है ।।३२।।

इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानैमित्तिकशास्त्रे शनैश्चरश्चारः षोडशोऽध्यायः परिसमाप्तः ।।१६।।[1]

विवेचन—शनिके मेषराशिपर होनेसे धान्यनाश, तैलंग, द्राविड़ और वंग देशमें विग्रह; पाताल, नागलोक, दिशा-विदिशामें विद्रोह, मनुष्योंमें क्लेश, वैर, धनका नाश, अन्नकी मँहगी, पशुओंका नाश, एवं जनतामें भय और आतंक रहता है। मेषराशिका शनि आधि-व्याधि उत्पन्न करता है। पूर्वीय प्रदेशोंमें वर्षा अधिक और पश्चिमके देशोंमें वर्षा कम होती है। उत्तर दिशामें फसल अच्छी होती है। दक्षिणके प्रदेशोंमें आपसी विद्रोह होता है। वृष राशिपर शनिके होनेसे कपास, लोहा, लवण, तिल, गुड़ मँहगे होते हैं तथा हाथी, घोड़ा, सोना, चाँदी सस्ते रहते हैं। पृथ्वी मण्डल पर शान्तिका साम्राज्य छाया रहता है। मिथुन राशिके शनिका फल सभी प्रकारके सुखोंकी प्राप्ति है। मिथुनके शनिमें वर्षा अधिक होती है। कर्कराशिके शनिमें रोग, तिरस्कार, धन नाश, कार्यमें हानि, मनुष्योंमें विरोध, प्रशासकोंमें द्वन्द्व, पशुओंमें महामारी एवं देशके पूर्वोत्तर भागमें वर्षाकी भी कमी रहती है। सिंह राशिके शनिमें चतुष्पद, हाथी, घोड़े आदिका विनाश, युद्ध, दुर्भिक्ष, रोगोंका आतंक, समुद्रके तटवर्ती प्रदेशोंमें क्लेश, म्लेच्छोंमें संघर्ष, प्रजाको सन्ताप, धान्यका अभाव एवं नाना प्रकारसे जनताको अशान्ति रहती है। कन्याके शनिमें काश्मीर देशका नाश, हाथी और घोड़ोंमें रोग, सोना-चाँदी-रत्नका भाव सस्ता, अन्नकी अच्छी उपज एवं घृतादि पदार्थ भी प्रचुर परिमाणमें उत्पन्न होते हैं। तुलाके शनिमें धान्यभाव तेज, पृथ्वीमें व्याकुलता, पश्चिमीय देशोंमें क्लेश, मुनियोंको शारीरिक कष्ट, नगर और ग्रामोंमें रोगोत्पत्ति, वनोंका विनाश, अल्प वर्षा, पवनका प्रकोप, चोर-डाकुओंका अत्यधिक भय एवं धनाभाव होते हैं। तुलाका शनि जनताको कष्ट उत्पन्न करता है, इसमें धान्यकी उत्पत्ति अच्छी नहीं होती। वृश्चिक राशिके शनिमें राज कोप, पक्षियोंमें युद्ध, भूकम्प, मेघोंका विनाश, मनुष्योंमें कलह, कार्योंका विनाश, शत्रुओंको क्लेश एवं नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। वृश्चिकके शनिमें चेचक, हैजा और क्षय रोगका अधिक प्रसार होता है। कास-श्वास की बीमारी भी वृद्धिगत होती है। धनराशिके शनिमें धन-धान्य की अच्छी उत्पत्ति, समयानुकूल वर्षा, प्रजामें शान्ति, धर्मकी वृद्धि, विद्याका प्रचार, कलाकारोंका सम्मान, देशके कला-कौशलकी उन्नति एवं जनतामें प्रसन्नताका प्रसार होता है। प्रजाको सभी प्रकारके सुख प्राप्त होते हैं, जनतामें हर्ष और आनन्द की लहर व्याप्त रहती है। मकरके शनिमें सोना, चाँदी, ताँबा, हाथी, घोड़ा, बैल, सूत, कपास आदि पदार्थोंका भाव मँहगा होता है। खेतीका भी विनाश होता है, जिससे अन्नकी उपज भी अच्छी नहीं होती है। रोगके कारण प्रजाका विनाश होता है तथा जनतामें एक प्रकारकी अग्नि का भय व्याप्त रहता है, जिससे अशान्ति दिखलाई पड़ती है। कुम्भ राशिके शनिमें धन-धान्य की उत्पत्ति खूब होती है। वर्षा प्रचुर परिमाणमें और समयानुकूल होती है। विवाहादि उत्तम माङ्गलिक कार्य पृथ्वीपर होते रहते हैं, जिससे जनतामें हर्ष छाया रहता है। धर्मका प्रचार और प्रसार सर्वत्र होता है, सभी लोग सन्तुष्ट और प्रसन्न दिखलाई पड़ते हैं। मीनके शनिमें खेतीका

1. इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदय इत्यादि मुद्रित प्रतिमें नहीं है।

अभाव, नाना प्रकारके भयानक रोगोंकी उत्पत्ति, वर्षाका अभाव, वृक्षोंका भी अभाव, पवनका प्रचण्ड होना, तूफान और भूकम्पोंका आना, भयंकर महामारियोंका पड़ना, सब प्रकारसे जनता का नाश और आतङ्कित होना एवं धनका नाश होना आदि फल घटित होते हैं। सभी राशियोंमें तुला और मीनके शनिको अनिष्टकर माना गया है। मीनका शनि धन-जनकी हानि करता है और फसलको चौपट करनेवाला माना जाता है। यदि मीनके शनिके साथ कर्क राशिका मंगल हो तथा इन दोनोंके पीछे सूर्य गमन कर रहा हो तो निश्चय ही भयंकर अकाल पड़ता है। इस अकालमें धन-जनकी हानि होती है, देशमें अनेक प्रकारकी व्याधियाँ उत्पन्न हो जानेसे भी जनता को कष्ट होता है। वस्तुएँ भी महँगी होती हैं। व्यापारीवर्गको भी मीनके शनिमें लाभ नहीं होता। व्यापारीवर्ग भी अनेक प्रकारसे कष्ट उठाता है। अन्नाभावके कारण जनतामें त्राहि-त्राहि उत्पन्न हो जाती है।

शनिका उदयविचार—मेषमें शनि उदय हो तो जलवृष्टि, मनुष्योंमें सुख, प्रजामें शान्ति, धार्मिक विचार, समर्थता, उत्तम फसल, खनिजपदार्थोंकी उत्पत्ति अत्यधिक, सेवाकी भावना, सहयोग और सहकारिताके आधार पर देशका विकास, विरोधियोंका पराजय, एवं सर्वसाधारण में सुख उत्पन्न होता है। वृष राशिमें शनिके उदय होनेसे तृण-काष्ठका अभाव, घोड़ोंमें रोग, अन्य पशुओंमें भी अनेक प्रकारके रोग एवं साधारण वर्षा होती है। मिथुनमें उदय होनेसे प्रचुर परिमाणमें वर्षा, उत्तम फसल, धान्य-माल सस्ता एवं प्रजा सुखी होती है। कर्क राशिमें शनिके उदय होनेसे वर्षाका अभाव, रसोंकी उत्पत्तिमें कमी, वनोंका अभाव, घी-दूध-चीनीकी उत्पत्तिमें कमी, अधर्मका विकास एवं प्रशासकोंमें पारस्परिक अशान्ति उत्पन्न होती है। कन्यामें शनिका उदय हो तो धान्यनाश, अल्पवर्षा, व्यापारमें लाभ और उत्तम वर्गोंके व्यक्तियोंको अनेक प्रकारका कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशिमें शनिका उदय हो तो महावृष्टि, धनका विनाश, चोरोंका उपद्रव, उत्तम खेती, नदियोंमें बाढ़, नदी या समुद्रके तटवर्ती प्रदेशोंके निवासियोंको कष्ट एवं गेहूँकी फसलका अभाव या कमी रहती है। धनु राशिमें शनिका उदय हो तो मनुष्योंमें अस्वस्थता, रोग, स्त्री और बालकोंमें नाना प्रकारकी बीमारी, धान्यका नाश और जनसाधारणमें अनेक प्रकारके अन्धविश्वासोंका विकास होनेके सभीको कष्ट उठाना पड़ता है। मकरमें शनिका उदय हो तो प्रशासकोंमें संघर्ष, राजनैतिक उलट-फेर, चौपायोंको कष्ट, तृणकी कमी, वर्षा साधारण रूपमें होना एवं लोहेका भाव महँगा होता है। कुम्भ राशिमें शनिका उदय हो तो अच्छी वर्षा, साधारणतया धान्यकी उत्पत्ति, व्यापारमें लाभ, कृषक और व्यापारीवर्गमें सन्तोष रहता है। देशका आर्थिक विकास होता है। नई-नई योजनाएँ बनाई जाती हैं और सभी कार्यरूपमें परिणत कराई जाती हैं। मीनराशिमें शनिका उदय होना अल्प वर्षा कारक, अल्पधान्यकी उत्पत्तिका सूचक एवं चोर, डाकुओंकी वृद्धिकी सूचना देता है। शनिका कर्क-तुला, मकर और मीन राशिमें उदय होना अधिक खराब है। अन्य राशियोंमें शनिके उदय होनेसे अन्नकी उत्पत्ति अच्छी होती है। देशका व्यापार विकसित होता है और देशके साधारण कष्टके सिवा विशेष कष्ट नहीं होता है। रोग-महामारीका प्रसार होता है, जिससे सर्व साधारणको कष्ट होता है।

शनि अस्तका विचार—मेषमें शनि अस्त हो तो धान्यका भाव तेज, वर्षा साधारण, जनतामें असन्तोष, परस्पर फूट, मुकदमोंकी वृद्धि और व्यापारमें लाभ होता है। वृषराशिमें शनि अस्त हो तो पशुओंको कष्ट, देशके पशुधनका विनाश, पशुओंमें अनेक प्रकारके रोग, मनुष्योंमें संक्रामक रोगोंकी वृद्धि एवं धान्यकी उत्पत्ति साधारण होती है। मिथुनराशिमें शनि अस्त हो तो जनताको कष्ट, आपसी विद्वेष, धन-धान्यका विनाश, चैत्रके महीनेमें महामारी एवं प्रजामें अशान्ति रहती है। कर्कराशिमें शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड़, चाँदी, घी अत्यन्त महँगे,

वर्षाकी कमी, देशमें अशान्ति, तथा नाना प्रकारके धान्यकी महँगाई और कलिंग, वंग, अंग, विदर्भ, विदेह, कामरूप, आसाम आदि प्रदेशोंमें वर्षा साधारण होती है। कन्याराशिमें शनिके अस्त होनेसे अच्छी वर्षा, मध्यम फसल, अन्नका भाव महँगा, धातुका भाव भी महँगा और चीनी गुड़की उत्पत्ति मध्यम होती है। तुलाराशिमें शनिका उदय हो तो अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, जनतामें सन्तोष और सभी प्रदेशोंके व्यक्ति सुखी होते हैं। व्यापकरूपसे वर्षा होती है। वृश्चिकराशिमें शनिके अस्त होनेसे अच्छी वर्षा, फसलमें रोग, टिड्डी-शलभादिका विशेष प्रकोप, धनकी वृद्धि, जनतामें साधारणतया शान्ति और सुख होता है। धनुराशिमें शनिके अस्त होनेसे स्त्री-बच्चोंको कष्ट, उत्तम वर्षा, उत्तम फसल, उत्तम व्यापार और जनसाधारणमें सब प्रकारसे शान्ति व्याप्त रहती है। मकरराशिमें शनिके अस्त होनेसे सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी वर्षा, अच्छी फसल, व्यापारमें कमी, राजनैतिक स्थितिमें परिवर्तन एवं पशुधनकी वृद्धि होती है। कुम्भ राशिमे शनिके अस्त होनेसे शीतप्रकोप, पशुओंकी हानि एवं मध्यम फसल होती है। मीनराशिमें शनिके उत्पन्न होनेसे अधर्मका प्रचार, फसलका अभाव एवं प्रजाको कष्ट होता है।

नक्षत्रानुसार शनिफल—श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रमें शनि स्थित हो तो पृथ्वी पर जलकी वर्षा होती है, सुभिक्ष, समर्घता—वस्तुओंके भावमें समता और प्रजाका विकास होता है। उक्त नक्षत्रोंका शनि मनोहर वर्णका होनेसे और अधिक शांति देता है तथा पूर्वीय प्रदेशोंके निवासियोंको अर्थलाभ होता है। पश्चिम प्रदेशोंके नागरिकोंके लिए उक्त नक्षत्रोंका शनि भयावह होता है। चोर, डाकुओं और गुण्डोंका उपद्रव बढ़ जाता है। आश्लेषा, शतभिषा और ज्येष्ठा नक्षत्रोंमें स्थित शनि सुभिक्ष, सुमंगल और समयानुकूल वर्षा करता है। इन नक्षत्रोंमें शनिके स्थित रहनेसे वर्षा प्रचुर परिमाणमें नहीं होती। समस्त देशमें अल्प ही वृष्टि होती है। मूलनक्षत्रमे शनिके विचरण करनेसे क्षुधाभय, शत्रुभय, अनावृष्टि, परस्पर संघर्ष, मतभेद, राजनैतिक उलटफेर, नेताओंमें झगड़ा, व्यापारी वर्गको कष्ट एवं स्त्रियोंको व्याधि होती है। अश्विनी नक्षत्रमें शनिके विचरण करनेसे अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियोंको हानि उठानी पड़ती है। उक्त नक्षत्रका शनि बंगालमें सुभिक्ष, शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि, जनता में उत्साह, विद्याका प्रचार एवं व्यापारकी उत्पत्ति करनेवाला है। आसाम और बिहारके लिए साधारणतः सुखदायी, अल्प वृष्टिकारक एवं नेताओंमे मतभेद उत्पन्न करनेवाला, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और बम्बई राज्यके लिए सुभिक्षकारक, बाढ़के कारण जनताको साधारण कष्ट, आर्थिक विकास एवं धान्यकी उत्पत्तिका सूचक है। मद्रास, कोचीन, राजस्थान, हिमाचल, दिल्ली, पंजाब और विन्ध्यप्रदेशके लिए साधारण वृष्टिकारक, सुभिक्षोत्पादक और आर्थिक विकास करनेवाला है। अवशेष प्रदेशके लिए सुखोत्पादक और सुभिक्षकारक है। अश्विनी नक्षत्रके शनिमें इङ्गलैण्ड, अमेरिका और रूसमें आन्तरिक अशान्ति रहती है। जापानमें अधिक भूकम्प आते हैं तथा अनाजकी कमी रहती है। खाद्य पदार्थोंका अभाव सुदूर पश्चिमके राष्ट्रोंमें रहता है। भरणी नक्षत्रका शनि विशेष रूपसे जलयात्रा करनेवालोंको हानि पहुँचाता है। नर्तक, गाने-बजानेवाले एवं छोटी-छोटी नावों द्वारा आजीविका करनेवालोंको कष्ट देता है। कृत्तिका नक्षत्रका शनि अग्निसे आजीविका करनेवाले, क्षत्रिय, सैनिक और प्रशासक वर्गके लिए अनिष्ट-कर होता है। रोहिणी नक्षत्रमें रहनेवाला शनि उत्तर प्रदेश और पंजाबके व्यक्तियोंको कष्ट देता है। पूर्व और दक्षिण के निवासियोंके लिए सुख-शान्ति देता है। जनतामें क्रान्ति उत्पन्न करता है। समस्त देशमे नई-नई बातोंकी माँग की जाती है। शिक्षा और व्यवसायके क्षेत्रमें उन्नति होती है। मृगशिर नक्षत्रमें शनिके विचरण करनेसे याजक, यजमान, धर्मात्मा व्यक्ति और शान्तिप्रिय लोगोंको कष्ट होता है। इस नक्षत्र पर शनिके रहनेसे रोगोंकी उत्पत्ति अधिक होती

है तथा अग्निभय और शस्त्रभय बराबर बना रहता है। आर्द्रा नक्षत्र पर शनिके न रहनेसे तेली, धोबी, रंगरेज और चोरोंको अत्यन्त कष्ट होता है, देशके सभी भागोंमें सुभिक्ष होता है। वर्षा उत्तम होती है, व्यापार भी बढ़ता है, विदेशोंसे सम्पर्क स्थापित होता है। पुनर्वसु नक्षत्रमें शनिके न रहनेसे पंजाब, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देशमें अत्यन्त पीड़ा होती है। इन प्रदेशोंमें वर्षा भी अल्प होती है तथा महामारीके कारण जनताको कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्रमें शनिके रहनेसे देशमें सुकाल, उत्तम वर्षा, आपसी मतभेद, नेताओंमें संघर्ष एवं निम्न श्रेणीके व्यक्तियोंको कष्ट होता है। पूर्व प्रदेशोंके लिए उक्त नक्षत्रका शनि शान्ति देनेवाला, दक्षिण प्रदेशोंमें सुभिक्ष करनेवाला, उत्तरके प्रदेशोंमें धन-धान्यकी वृद्धि करनेवाला, एवं पश्चिम प्रदेशोंके व्यक्तियोंके लिए अशान्तिकारक होता है। उक्त नक्षत्रका शनि सभी मुसलिम राष्ट्रोंमें अशान्ति उत्पन्न करता है तथा अमेरिकामें आन्तरिक कलह होता है। रूसकी राजनैतिक स्थितिमें भी परिवर्तन आता है। आश्लेषा नक्षत्रका शनि सर्पोंको कष्ट देता है तथा सर्पों द्वारा आजीविका करनेवालोंको भी कष्ट ही देता है। इस नक्षत्र पर शनिके रहनेसे जापान, बर्मा, दक्षिण भारत और युगोस्लोवियामें भूकम्प अधिक आते हैं। इन भूकम्पों द्वारा धन-जनकी पर्याप्त हानि होती है। भारतके लिए उक्त नक्षत्रका शनि उत्तम नहीं है। देशमें समयानुकूल वर्षा भी नहीं होती है, जिससे फसल उत्तम नहीं होती।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रका शनि गुड़, लवण, जल एवं फलोंके लिए हानिकारक होता है। उक्त शनिमें महाराष्ट्र, मद्रास, दक्षिणी भारतके प्रदेश और बम्बईराज्यके लिए लाभ होता है। इन राज्योंका आर्थिक विकास होता है, कला-कौशलकी वृद्धि होती है। हस्त नक्षत्रमें शनि स्थित हो तो शिल्पियोंको कष्ट होता है। कुटीर उद्योगोंके विकासमें उक्त नक्षत्रके शनिसे अनेक प्रकारकी बाधाएँ आती हैं। चित्रा नक्षत्रमें शनि हो तो स्त्रियों, ललितकलाके कलाकारों एवं अन्य कोमल प्रकृतिवालोंको कष्ट होता है। इस नक्षत्रमें शनिके रहनेसे समस्त भारतमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। दक्षिणके प्रदेशोंमें आपसी मतभेद होनेसे कुछ अशान्ति होती है। स्वाति नक्षत्रमें शनि हो तो, नर्तक, सारथी, ड्राइवर, जहाज संचालक, दूत एवं स्टीमरोंके चालकोंको व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देशमें शान्ति और सुभिक्ष उत्पन्न होते हैं। विशाखा नक्षत्रका शनि रंगोंके व्यापारियोंके लिए उत्तम है। लोहा, अभ्रक तथा अन्य प्रकारके खनिज पदार्थोंके व्यापारियोंके लिए अच्छा होता है। अनुराधा नक्षत्रका शनि काश्मीरके लिए अरिष्टकारक होता है। भारतके लिए मध्यम है, इस नक्षत्रके शनिमें खेती अच्छी होती है और वर्षा भी अच्छी ही होती है। इस नक्षत्रके शनिमें बर्तन बनानेका कार्य करनेवाले, कपड़ेका कार्य करनेवाले यन्त्रोंमें विघ्न उत्पन्न होता है। जूट और चीनीके व्यापारियोंके लिए यह बहुत अच्छा होता है। ज्येष्ठा नक्षत्रका शनि श्रेष्ठिवर्ग और पुरोहितवर्गके लिए उत्तम नहीं होता है। अवशेष सभी श्रेणीके व्यक्तियोंके लिए उत्तम होता है। मूल नक्षत्रका शनि काशी, अयोध्या और आगरामें अशान्ति उत्पन्न करता है। यहाँ संघर्ष होते हैं तथा उक्त नगरोंमें अग्निका भी भय रहता है। अवशेष सभी प्रदेशोंके लिए उत्तम होता है। पूर्वाषाढ़ामें शनिके रहनेसे बिहार, बंगाल, उत्तरप्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्यभारतके लिए भयकारक, अल्प वर्षा सूचक और व्यापारमें हानि पहुँचानेवाला होता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें शनि विचरण करता हो तो यवन, शबर, भिल्ल आदि पहाड़ी जातियोंको हानि करता है। इन जातियोंमें अनेक प्रकारके रोग फैल जाते हैं तथा आगरामें भी संघर्ष होता है। श्रवण नक्षत्रमें विचरण करनेसे शनि राज्यपाल, राष्ट्रपति, मुख्यमन्त्री एवं प्रधान मन्त्रीके लिए हानिकारक होता है। देशके अन्य वर्गोंके व्यक्तियोंके लिए कल्याण करनेवाला होता है। धनिष्ठा नक्षत्रमें विचरण करनेवाला शनि धनिकों, श्रीमन्तों और ऊँचे दर्जेके व्यापारियोंके लिए हानि पहुँचाता है। इन लोगोंको

व्यापारमें घाटा होता है। शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदमें शनिके रहनेसे पण्यजीवी व्यक्तियोंको विघ्न होता है। उक्त नक्षत्रके शनिमें बड़े-बड़े व्यापारियोंको अच्छा लाभ होता है। उत्तराभाद्रपदमें शनिके रहनेसे फसलका नाश, दुर्भिक्ष, जनताको कष्ट, शस्त्रभय, अग्निभय एवं देशके सभी प्रदेशोंमें अशान्ति होती है। रेवती नक्षत्रमें शनिके विचरण करनेसे फसलका अभाव, अल्पवर्षा, रोगोंकी भरमार, जनतामें विद्वेष-ईर्ष्या एवं नागरिकोंमें असहयोगकी भावना उत्पन्न होती है। राजाओंमें विरोध उत्पन्न होता है। गुरुके विशाखा नक्षत्रमें रहनेपर शनि यदि कृत्तिका नक्षत्रमें स्थित हो तो प्रजाको अत्यन्त पीड़ा, दुर्भिक्ष और नागरिकोंमें अनेक वर्णका शनि देशको कष्ट देता है, देशके विकासमें विघ्न करता है। श्वेतवर्णका शनि ब्राह्मणोंको भय, पीतवर्णका वैश्योंको, रक्तवर्णका क्षत्रियोंको और कृष्णवर्णका शनि शूद्रोंको भारतके सभी प्रदेशोंमें शान्ति, धन-धान्यकी वृद्धि एवं देशका सर्वाङ्गीण विकास होता है।

सप्तदशोऽध्यायः

वर्णं गतिं च संस्थानं मार्गमस्तमनोदयौ ।
वक्रं[1] फलं प्रवक्ष्यामि गौतमस्य निबोधत ॥१॥

बृहस्पतिके वर्ण, गति, आकार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदिका फलादेश भगवान गौतम स्वामी द्वारा प्रतिपादित आधार पर निरूपित किया जाता है ॥१॥

मेचकः कपिलः श्यामः पीतः[2] मण्डल-नीलवान् ।
रक्तश्च धूम्रवर्णश्च न प्रशस्तोऽङ्गिरास्तदा ॥२॥

बृहस्पतिका मेचक, कपिल—पिङ्गल, श्याम, पीत, नील, रक्त और धूम्र वर्णका मण्डल शुभ नहीं है ॥२॥

मेचकश्चेन्मृतं सर्वं वसु पाण्डुर्विनाशयेत् ।
पीतो व्याधिं भयं शिष्टे धूम्राभः[3] सृजते जलम् ॥३॥

यदि बृहस्पतिका मण्डल मेचक वर्णका हो तो मृत्यु, पाण्डु वर्णका हो तो धन-नाश, पीत वर्णका हो तो व्याधि और धूम्र वर्णका होनेपर जलकी वर्षा होती है ॥३॥

उपसर्पतिमित्रादि पुरतः स्त्री प्रपद्यते ।
त्रि-चत्वारि च नक्षत्रैस्त्रिभिरस्तमनं व्रजेत् ॥४॥

जब बृहस्पति तीन-चार नक्षत्रोंके बीच गमन करता है या तीन नक्षत्रोंमें अस्तको प्राप्त होता है तो स्त्री-पुत्र और मित्रादिकी प्राप्ति होती है ॥४॥

कृत्तिकादि भगान्तश्च मार्गः स्यादुत्तरः स्मृतः ।
अर्यमादिरपाप्यन्तो मध्यमो मार्ग उच्यते ॥५॥

कृत्तिकासे पूर्वाफाल्गुनी तक—कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रोंमें बृहस्पतिका उत्तर मार्ग तथा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा इन नौ नक्षत्रोंमें उसका मध्यम मार्ग होता है ॥५॥

विश्वादिसमयान्तश्च दक्षिणो मार्ग उच्यते ।
एते बृहस्पतेर्मार्गा नव नक्षत्रजास्त्रयः ॥६॥

उत्तराषाढ़ासे भरणी तक—उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रोंमें बृहस्पतिका दक्षिण मार्ग होता है। इस प्रकार बृहस्पतिके नौ-नौ नक्षत्रोंके तीन मार्ग बतलाये गये हैं ॥६॥

---

१. गौत[illegible] ग्रामि य[illegible] : मु० । २. पाण्डु स मु० । ३. धूम्राभश्च सृजेज्जलम् मु० ।

मूलमुत्तरतो याति स्वातिं दक्षिणतो व्रजेत् ।
नक्षत्राणि तु शेषाणि समन्ताद्दक्षिणोत्तरे ॥७॥

उत्तरसे मूलको और दक्षिणसे स्वाति नक्षत्रको प्राप्त करता है तथा दक्षिणोत्तरसे शेष नक्षत्रोंको प्राप्त करता है ॥७॥

मूषके तु यदा ह्रस्वो मूलं दक्षिणतो व्रजेत् ।
दक्षिणतस्तदा विन्द्यादनयोर्दक्षिणे पथि ॥८॥

जब केतु लघु होकर दक्षिणसे मूल नक्षत्रकी ओर जाता है तो बृहस्पति और केतु दोनों ही दक्षिण मार्ग वाले कहे जाते हैं ॥८॥

अनावृष्टिहता देशा [1]क्षुभुक्षाज्वरनाशिताः ।
चक्रारूढा प्रजास्तत्र वध्यन्ते जातंतस्कराः ॥९॥

इन दोनोंके दक्षिण मार्गमें रहनेसे अनावृष्टि—वर्षाका अभाव होता है, जिससे देश पीड़ित होते हैं, तेज ज्वरसे अनेक व्यक्तियोंकी मृत्यु होती है और प्रजा शासनमें आरूढ़ रहती है और वर्णसंकरोंका वध होता है ॥९॥

यदा चोत्तरतः स्वातिं दीप्तो [3]याति बृहस्पतिः ।
उत्तरेण तदा विन्द्याद् दारुणं भयमादिशेत् ॥१०॥

जब बृहस्पति दीप्त होकर उत्तरकी ओरसे स्वाति नक्षत्रको प्राप्त करता है तो उस समय उत्तर देशमें दारुण भय होता है ॥१०॥

लुप्यन्ते च क्रियाः सर्वा नक्षत्रे गुरुपीडिते ।
दस्यवः प्रबला ज्ञेया [4]बीजानि न प्ररोहति ॥११॥

गुरुके द्वारा नक्षत्रके पीड़ित होने पर सभी क्रियाओंका लोप होता है, चोरोंकी शक्ति बढ़ती है और बीज उत्पन्न नहीं होता है ॥११॥

दक्षिणेन तु वक्रेण पञ्चमे पञ्च मुच्यते ।
उत्तरे पञ्चके पञ्च मार्गे चरति गौतमः ॥१२॥

बृहस्पतिके दक्षिणके पाँच मार्गोंमें पञ्चम मार्ग वक्र गति द्वारा पूर्ण किया जाता है और उत्तरके पाँच मार्गोंमें पञ्चम मार्ग मार्गी गति द्वारा पूर्ण किया जाता है ॥१२॥

ह्रस्वे भवति दुर्भिक्षं निष्प्रभे व्याधिजं भयम् ।
विवर्णे पापसंस्थाने मन्दपुष्प-फलं भवेत् ॥१३॥

गुरु ह्रस्व मार्गमें गमन करने पर दुर्भिक्ष, निष्प्रभमें गमन करने पर व्याधि विवर्ण और पापसंस्थान मार्गमें गमन करने पर अल्प फल और पुष्प उत्पन्न होते हैं ॥१३॥

प्रतिलोमानुलोमो वा पञ्च संवत्सरो यदा ।
नक्षत्राण्युपसर्पेण तदा सृजति दुस्समम् ॥१४॥

बृहस्पति अपने पाँच संवत्सरोंमें नक्षत्रोंका प्रतिलोम और अनुलोम रूपसे गमन करता है तो दुष्कालकी उत्पत्ति होती है अर्थात् प्रजाको कष्ट होता है ॥१४॥

१. क्षुत्ज्वरविनाशिताः मु० । २. -संकराः मु० । ३. यायाद् मु० । ४. न च बीजं प्ररोहति मु० ।

ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रोंमें बृहस्पति गमन करे तो जघन्य सुख-सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है। कृत्तिका तथा रोहिणी, मूर्त्ति और आश्लेषा, बृहस्पतिका हृदय है। पूर्वाषाढ़ा, अभिजित्, उत्तराषाढ़ा, पुष्य और मघा उसकी नाभि मानी गयी है। इन नक्षत्रोंमें तथा इनसे विपरीत नक्षत्रोंमें फलका निरूपण करना चाहिए ॥२२-२३॥

द्विनक्षत्रस्य चारस्य यत् पूर्वं परिकीर्तितम् ।
एवमेवं तु जानीयात् षड् भयानि समादिशेत् ॥२४॥

दो-दो नक्षत्रोंका गमन जो पहले कहा गया है, उन्हींके अनुसार छः प्रकारके भयोंका परिज्ञान करना चाहिए ॥२४॥

इमानि यानि बीजानि विशेषेण विचक्षणः ।
व्याधयो मूर्तिघातेन हृद्रोगो हृदये [1]महत् ॥२५॥

जो बीजभूत नक्षत्र हैं, उनके द्वारा मनीषियोंको फलादेश ज्ञात करना चाहिए। यदि बृहस्पतिके मूर्त्ति नक्षत्रों—कृत्तिका और रोहिणीका घात हो तो व्याधियाँ—नाना प्रकारकी बीमारियाँ और हृदय नक्षत्रका घात हो तो हृदय रोग उत्पन्न होते हैं ॥२५॥

पुष्ये हते हतं पुष्पं फलानि कुसुमानि च ।
आग्नेया मूषकाः सर्पा दाघश्च शलभाः शुकाः ॥२६॥

ईतयश्च महाधान्ये जाते च बहुधा स्मृताः ।
स्वचक्रमीतयश्चैव परचक्रं निरम्बु च ॥२७॥

पुष्य नक्षत्रका घात होने पर पुष्प फल और पल्लवोंका विनाश, अग्नि, मूषक—चूहे, सर्प, जलन, शलभ (टिड्डी), शुकका उपद्रव, ईति—महामारी, धान्यघात, स्वशासनमें मित्रता और परशासनमें जलाभाव आदि फल घटित होते हैं ॥२६-२७॥

अत्यम्बु च विशाखायां सोमे सम्वत्सरे विदुः ।
शेषं संवत्सरे ज्ञेयं शारदं तत्र नेतरम् ॥२८॥

अगहन या सौम्यनामके संवत्सरमें जब विशाखा नक्षत्र पर बृहस्पति गमन करता है, तो अत्यधिक जलकी वर्षा होती है। शेष संवत्सरोंमें केवल पौष संवत्सरमें ही अल्प जलकी वर्षा समझनी चाहिए, अन्य वर्षोंमें नहीं ॥२८॥

माघमल्पोदकं विन्द्यात् फाल्गुने दुर्भगाः स्त्रियः ।
चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपाः ॥२९॥

बृहस्पति जिस मासके जिस नक्षत्रमें उदय हो, उस नक्षत्रके अनुसार ही महीनेके नामके समान वर्षका भी नाम होता है। माघ नामके वर्षमें अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नामके वर्षमें स्त्रियोंका दुर्भाग्य पढ़ता है, चैत्र नामके वर्षमें धान्य, जलकी वर्षा विचित्ररूपमें होती है तथा सरीसृपोंकी वृद्धि होती है ॥२९॥

1. हने मु० ।

[1]विशाखा नृपभेदश्च पूर्वतोयं विनिर्दिशेत् ।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते ॥३०॥

वैशाख नामक वर्षमें राजाओंमें मतभेद होता है और जलकी वर्षा अच्छी होती है। ज्येष्ठ नामक वर्षमें—जो कि ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रके मासिक होने पर आता है, अच्छी वर्षा, मित्रोंमें मतभेद और धर्मका प्रचार होता है ॥३०॥

आषाढे तोयसङ्कीर्णं सरीसृपसमाकुलम् ।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबलाः स्मृताः ॥३१॥

आषाढ नामक वर्षमें जलकी कमी होती है, पर कहीं-कहीं अच्छी वर्षा होती है और सरीसृपोंकी वृद्धि होती है। श्रावण नामक वर्षमें दाँतवाले जन्तु, चौर, सर्प आदि प्रबल होते हैं ॥३१॥

संवत्सरे भाद्रपदे शस्त्रकोपाग्निमूर्च्छनम् ।
सरीसृपाश्चाश्वयुजे बहुधा वा भयं विदुः ॥३२॥

भाद्रपद नामक वर्षमें शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा, आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सरमें सरीसृपोंका अनेक प्रकारका भय होता है ॥३२॥

[कार्त्तिक संवत्सरमें शकट द्वारा आजीविका करनेवाले, अस्त्र-शस्त्रोंका निर्माण एवं क्रय-विक्रय करनेवालोंको कष्ट होता है।]

एते संवत्सराश्चोक्ताः पुण्यस्य परतोऽपि वा ।
[2]रोहिण्यार्द्रास्तथाश्लेषा हस्तः स्वातिः पुनर्वसुः ॥३३॥

बृहस्पतिके इन वर्षोंका फल कहा गया है; रोहिणीके अभिघातसे प्रजा सभी प्रकारसे दुःखित होती है ॥३३॥

अभिजिच्चानुराधा च मूलो वासववारुणाः ।
रेवती भरणी चैव विज्ञेयानि बृहस्पतेः ॥३४॥

अभिजित्, अनुराधा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती और भरणी ये नक्षत्र बृहस्पतिके हैं अर्थात् इन नक्षत्रोंमें बृहस्पतिके रहनेसे शुभ फल होता है ॥३४॥

कृत्तिकायां गतो नित्यमारोहण-प्रमर्दने ।
रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिताः ॥३५॥

कृत्तिका नक्षत्रमें स्थित बृहस्पति जब आरोहण और प्रमर्दन करता है और रोहिणीमें स्थित होकर अभिघात करता है तो प्रजाको अनेक प्रकारका कष्ट होता है ॥३५॥

शस्त्रघातस्तथाऽऽर्द्रायामाश्लेषायां विषाद् भयम् ।
मन्दहस्तपुनर्वसोस्तोयं चौराश्च दारुणाः ॥३६॥

आर्द्राके घातित होने पर बृहस्पति शस्त्रघात, आश्लेषामें स्थित होने पर विषादभय तथा हस्त और पुनर्वसुमें घातित होने पर मन्द वर्षा और भीषण चोरभय उत्पन्न करता है ॥३६॥

1. वैशाखे मु० । 2. रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिता मु० ।

वायव्ये वायवो दृष्टा रोगदं वाजिनां भयम् ।
अनुराधानुघाते च [1]स्त्रीसिद्धिश्च प्रहीयते ॥३७॥

स्वाति नक्षत्रमें स्थित बृहस्पतिके घातित होने पर वायव्य दिशामें रोग उत्पन्न करता है, घोड़ोंको अनेक प्रकारका भय होता है, अनुराधा नक्षत्रके घातित होने पर मित्रतामें कमी आती है ॥३७॥

तथा मूलाभिघातेन दुष्यन्ते मण्डलानि च ।
वायव्यस्याभिघातेन पीड्यन्ते धनिनो नराः ॥३८॥

मूल नक्षत्रके घातित होने पर मण्डल—प्रदेशोंको कष्ट होता है, दोष लगता है और विशाखा नक्षत्रके अभिघातित होने पर धनिक व्यक्तियोंको पीड़ा होती है ॥३८॥

वारुणे जलजं तोयं फलं पुष्पं च शुष्यति ।
अकारान्नाविकांस्तोयं पीडयेद्रेवती हता ॥३९॥

शतभिषाके अभिघातित होने पर कमल, जल, फल, पुष्प इत्यादि सूख जाते हैं। उत्तरा भाद्रपदके अभिघातित होने पर नाविक और जल-जन्तुओंको पीड़ा तथा जलका अभाव और रेवती नक्षत्रके अभिघातित होने पर पीड़ा होती है ॥३९॥

वामं करोति नक्षत्रं यस्य दीप्तो बृहस्पतिः ।
लब्ध्वाऽपि सोऽर्थं विपुलं न भुञ्जीत कदाचन ॥४०॥
[2]हिनस्ति बीजं तोयञ्च मृत्युदा भरणी यथा ।
अपि हस्तगतं द्रव्यं सर्वथैव विनश्यति ॥४१॥

दीप्त बृहस्पति जिस व्यक्तिके बाँयीं ओर नक्षत्रको अभिघातित करता है; वह व्यक्ति विपुल सम्पत्तिको प्राप्त करके भी उसका भोग नहीं कर सकता है, तथा बीज और जलका विनाश करता है और यमके समान मृत्युप्रद होता है। हाथ पर रखा हुआ धन भी विनाशको प्राप्त होता है ॥४०-४१॥

प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं यस्य कुर्यात् बृहस्पतिः ।
यायिनां विजयं विन्द्यात् नागराणां पराजयम् ॥४२॥

बृहस्पति जिस व्यक्तिके दाहिनी ओर नक्षत्रको अभिघातित करता है, वह व्यक्ति यदि यायी हो तो विजय और नागरिक हो तो पराजय होता है ॥४२॥

प्रदक्षिणं तु कुर्वीत सोमं यदि बृहस्पतिः ।
नागराणां जयं विन्द्यात् यायिनां च पराजयम् ॥४३॥

यदि बृहस्पति चन्द्रमाको प्रदक्षिणा करे तो नागरिकोंका विजय और यायियोंका पराजय होता है ॥४३॥

उपघातेन चक्रेण मध्यगन्ता बृहस्पतिः ।
निहन्याद् यदि नक्षत्रं यस्य तस्य पराजयम् ॥४४॥

१. मैत्री। २. (४१) नम्बरका श्लोक मुद्रित प्रतिमें नहीं है।

उपघात चक्रके मध्यमें स्थित होकर बृहस्पति जिस व्यक्तिके नक्षत्रका घात करता है, उसीका पराजय होता है ॥४४॥

बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो रूपं सञ्छादयेत् भृशम् ।
स्थावराणां वधं कुर्यात् पुररोधं च दारुणम् ॥४५॥

जब बृहस्पतिके रूपका चन्द्रमा आच्छादन करे तो स्थावरोंका वध होता है और नगरका भयंकर अवरोध होता है अर्थात् नगर घेरेके अन्दर रहता है, जिससे अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं ॥४५॥

स्निग्धप्रसन्नो विमलोऽभिरूपो महाप्रमाणो द्युतिमान् सपीतः ।
गुरुर्यदा चोत्तरमार्गचारी तदा प्रशस्तः प्रतिपक्षहन्ता[1] ॥४६॥

यदि बृहस्पति स्निग्ध, प्रसन्न, निर्मल, सुन्दर, कान्तिमान, पीतवर्ण, पूर्व आकृतिवाला और युवावस्थावाला उत्तर मार्गमें विचरण करता है तो शुभ होता है और प्रतिपक्षियोंका विनाश करता है ॥४६॥

इति श्रीसकलमुनिजनानन्दमहामुनिभद्रबाहुविरचिते परमनैमित्तिकशास्त्रे बृहस्पतिचारः सप्तदशमः परिसमाप्तः ॥१७॥

विवेचन—मासके अनुसार गुरुके राशि परिवर्तनका फल—यदि कार्त्तिक मासमें गुरु राशि परिवर्तन करे तो गायोंको कष्ट, शस्त्र-अस्त्रोंका अधिक निर्माण, अग्निभय, साधारण वर्षा, समर्घता, मालिकोंको कष्ट, द्रविड़ देशवासियोंको शान्ति, सौराष्ट्रके निवासियोंको साधारण कष्ट, उत्तरप्रदेश वासियोंको सुख एवं धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है। अगहनमें गुरुके राशिपरिवर्तन होनेसे अल्प वर्षा, कृषिकी हानि, परस्परमें युद्ध, आन्तरिक संघर्ष, देशके विकासमें अनेक रुकावटें एवं नाना प्रकारके संकट आते हैं। बिहार, बंगाल, आसाम आदि पूर्वीय प्रदेशोंमें वर्षा अच्छी होती है तथा इन प्रदेशोंमें कृषि भी अच्छी होती है। उत्तरप्रदेश, पंजाब और सिन्धमें वर्षाकी कमी रहती है, फसल भी अच्छी नहीं होती है। इन प्रदेशोंमें अनेक प्रकारके संघर्ष होते हैं, जनतामें अनेक प्रकारकी पार्टियाँ तैय्यार होती हैं तथा इन प्रदेशोंमें महामारी भी फैलती है। चेचकका प्रकोप उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, मध्यभारत और राजस्थानमें होता है। पौष मासमें बृहस्पतिके राशि परिवर्तनसे सुभिक्ष, आवश्यकतानुसार अच्छी वर्षा, धर्मकी वृद्धि, क्षेम, आरोग्य और सुखका विकास होता है। भारतवर्षके सभी राज्योंके लिए यह बृहस्पति उत्तम माना जाता है। पहाड़ी प्रदेशोंकी उन्नति और अधिक रूपमें होती है। माघ मासमे गुरुके राशि-परिवर्तनसे सभी प्राणियोंको सुख-शान्ति, सुभिक्ष, आरोग्य और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा एवं सभी प्रकारसे कृषिका विकास होता है। ऊसर भूमिमें भी अनाज उत्पन्न होता है। पशुओंका विकास और उन्नति होती है। फाल्गुनमासमें गुरुके राशि-परिवर्तन होनेसे स्त्रियोंको भय, विधवाओंकी संख्याकी वृद्धि, वर्षाका अभाव अथवा अल्प वर्षा, ईति-भीति, फसलकी कमी एवं हैजेका प्रकोप व्यापकरूपसे होता है। बंगाल, राजस्थान और गुजरातमें अकालकी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। चैत्रमे गुरुका राशि-परिवर्तन होनेसे नारियोंको सन्तानकी प्राप्ति, सुभिक्ष, उत्तम वर्षा, नाना व्याधियोंकी आशंका एवं संसारमें राजनैतिक परिवर्तन होते हैं। जापान, जर्मन,

1. प्रतिपक्ष मु० ।

अमेरिका, इंगलैण्ड, रूस, चीन, श्याम, वर्मा, आस्ट्रेलिया, मलाया आदिमें मनमुटाव होता है, राष्ट्रोंमें भेदनीति कार्य करती है। गुटबन्दीका कार्य आरम्भ हो जानेसे परिवर्तनके चिह्न स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगते हैं। वैशाखमासमें गुरुका राशि-परिवर्तन होनेसे धर्मकी वृद्धि, सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, व्यापारिक उन्नति, देशका आर्थिक विकास, दुष्ट-गुण्डे-चोर आदिका दमन, सज्जनोंको पुरस्कार एवं खाद्यान्नका भाव सस्ता होता है। घी, गुड़, चीनी आदिका भाव भी सस्ता ही रहता है। उक्त प्रकारके गुरुमें फलोंकी फसलमें कमी आती है। समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है। जूट, तम्बाकू और लोहेकी उपज अधिक होती है। विदेशोंसे भारतका मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा सभी राष्ट्र मैत्री सम्बन्धमें आगे बढ़ना चाहते हैं। ज्येष्ठमासमें गुरुके राशि-परिवर्तन होनेसे धर्मात्माओंको कष्ट, धर्मस्थानों पर विपत्ति, सत्क्रियाका अभाव, वर्षाकी कमी, धान्यकी उत्पत्तिमें कमी एवं प्रजामें अनेक प्रकार व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। मध्य भारत, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्यमें सूखा पड़ता है, जिससे इन राज्योंकी प्रजाको अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। उक्त मासमें गुरुका राशि-परिवर्तन कलाकारोंके लिए मध्यम और योद्धाओंके लिए श्रेष्ठ होता है। आषाढ़मासमें बृहस्पतिका राशि-परिवर्तन हो तो राज्यवालोंको क्लेश, मुख्य मन्त्रियोंको शारीरिक कष्ट, ईति-भीति, वर्षाका अवरोध, फसलकी क्षति, नये प्रकारकी क्रान्ति एवं पूर्वोत्तर प्रदेशोंमें उत्तम वर्षा होती है। दक्षिणके प्रदेशोंमें भी उत्तम वर्षा होती है। मलबारमें फसलमें कुछ कमी रह जाती है। गेहूँ, धान, जौ और मक्काकी उत्पत्ति सामान्यतया अच्छी होती है। श्रावणमासमें गुरुका राशि-परिवर्तन होनेसे अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, देशका आर्थिक विकास, फल-फूलोंकी वृद्धि, नागरिकोंमें उत्तेजना, क्षेम और आरोग्य फैलता है। भाद्रपद और आश्विनमासमें गुरुके राशि परिवर्तन होनेसे क्षेम, श्री, आयु, आरोग्य एवं धन-धान्यकी वृद्धि होती है। अच्छी वर्षा समयानुकूल होती है। जनताको आर्थिक लाभ होता है तथा सभी मिलकर देशके विकासमें योगदान देते हैं।

द्वादश राशि स्थित गुरुफल—मेष राशिमें बृहस्पतिके होनेसे चैत्रसंवत्सर कहलाता है। इसमें खूब वर्षा होती है, सुभिक्ष होता है। वस्त्र, गुड़, ताँबा, कपास, मूँगा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। घोड़ों को पीड़ा, महामारी, ब्राह्मणोंको कष्ट, तीन महीनों तक जनसाधारणको भी कष्ट होता है। भाद्रपद मासमें गेहूँ, चावल, उड़द, घी सस्ते होते हैं, दक्षिण और उत्तरमें खण्डवृष्टि होती है। दक्षिणोत्तर प्रदेशोंमें दुर्भिक्ष, दो महीनेके पश्चात् वर्षा होती है। कार्त्तिक और मार्गशीर्ष मासमें कपास, अन्न, गुड़ महँगा होता है, घीका भाव सस्ता होता है, जूट, पाटका भाव महँगा होता है। पौष मासमें रसोंका भाव महँगा, अन्नका भाव सस्ता, गुड़-घीका भाव कुछ महँगा होता है। एक वर्षमें यदि बृहस्पति तीन राशियोंका स्पर्श करे तो अत्यन्त अनिष्ट होता है।

वृषराशिमें गुरुके होनेसे वैशाखमें वर्ष माना जाता है। इस वर्षमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। गेहूँ, चावल, मूँग, उड़द, तिलके व्यापारमें अधिक लाभ होता है। श्रावण और ज्येष्ठ इन दो महीनोंमें सभी वस्तुएँ लाभप्रद होती हैं। इन दोनों महीनोंमें वस्तुएँ खरीद कर रखनेसे अधिक लाभ होता है। कार्त्तिक, माघ और वैशाखमें घीका भाव तेज होता है। आषाढ़, श्रावण और आश्विनमें अच्छी वर्षा होती है, भादोंके महीनेमें वर्षाका अभाव रहता है। रोग उत्पत्ति इस वर्षमें अधिक होती है। पूर्व प्रदेशोंमें मलेरिया, चेचक, निमोनिया, हैजा आदि रोग सामूहिक रूपसे फैलते हैं। पश्चिमके प्रदेशोंमें सूखा होनेसे बुखारका अधिक प्रसार होता है। आषाढ़ मासमें बीजवाले अनाज महँगे और अवशेष सभी अनाज सस्ते होते हैं। गुड़का भाव फाल्गुनसे महँगा होता है और अगले वर्ष तक चला जाता है। घी का भाव घटता-बढ़ता रहता है। चौपायोंको कष्ट अधिक होता है। श्रावण और भाद्रपद दोनों महीनोंमें पशुओं में महामारी पड़ती है, जिससे मवेशियोंका नाश होता है।

मिथुनराशि पर बृहस्पतिके आनेसे ज्येष्ठ नामक संवत्सर होता है। इसमें बालकों और घोड़ोंको रोग होता है, वायु-वर्षा होती है। पाप, अत्याचार और अनीतिकी वृद्धि होती है। चोरभय, शस्त्रभय एवं आतंक व्याप्त रहता है। सोना, चाँदीका बाजार एक वर्ष तक अस्थिर रहता है, व्यापारियोंको इन दोनोंके व्यापारमें लाभ होता है। अनाजका भाव वर्षके आरंभमें महँगा, पश्चात् सस्ता होता है। जूट, सोंठ, मिर्चा, पीपल, सरसोंका भाव कुछ तेज होता है। कर्क राशि पर गुरुके रहनेसे आषाढाख्य संवत्सर होता है। इस वर्षमें कार्त्तिक और फाल्गुनमें सभी प्रकारके अनाज तेज होते हैं, अल्पवर्षा, दुर्भिक्ष, अशान्ति और रोग फैलते हैं। सोना, चाँदी, रेशम, ताँबा, मूँगा, मोती, माणिक्य, अन्न आदिका भाव कुछ तेज होता है; पर अनाज, गुड़ और घी का भाव अधिक तेज होता है, शीतकालकी संचितकी गयी वस्तुओंको वर्षाकालमें बेचनेसे अधिक लाभ होता है। सिंह राशिका बृहस्पति श्रावणाख्यवत्सर होता है। इसमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है, घी, दूध और रसोंकी उत्पत्ति अत्यधिक होती है। फल-पुष्पोंकी उपज अच्छी होनेसे विश्वमें शान्ति और सुख दिखलाई पड़ता है। धान्यकी उत्पत्ति अच्छी होती है। नये नेताओंकी उत्पत्ति होनेसे देशका नेतृत्व नये व्यक्तियोंके हाथमें जाता है, जिससे देशकी प्रगति ही होती है। व्यापारियोंके लिए यह वर्ष उत्तम होता है। सभी वस्तुओंके व्यापारमें लाभ होता है। सिंहके गुरुमें चौपायें महंगे होते हैं। सोना, चाँदी, घी, तेल, गेहूँ, चावल भी महंगा ही रहता है। चातुर्मासमें वर्षा अच्छी होती है। कार्त्तिक और पौषमें अनाज महँगा होता है, अवशेष महीनोंमें अनाजका भाव सस्ता रहता है। सोना-चाँदी आदि धातुएं कार्त्तिकसे माघ तक महँगी रहती हैं, अवशेष महीनोंमें कुछ भाव नीचे गिर जाते हैं। यों सोनेके व्यापारियोंके लिए यह वर्ष बहुत अच्छा है। गुड़, चीनीके व्यापारमें घाटा होता है। वैशाख माससे श्रावणमास तक गुड़का भाव कुछ तेज रहता है, अवशेष महीनोंमें समर्घता रहती है। स्त्रियोंके लिए यह बृहस्पति अच्छा नहीं है, स्त्रीधर्म सम्बन्धी अनेक बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं तथा कन्याओंको चेचक अधिक निकलती हैं। सर्वसाधारणमें आनन्द, उत्साह और हर्षकी लहर दिखलाई पड़ती है।

कन्या राशिके गुरुमें भाद्रसंवत्सर होता है। इसमें कार्त्तिकसे वैशाख तक सुभिक्ष होता है। इस संवत्सरमें संग्रह किया गया अनाज वैशाखमें दूना लाभ देता है। वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही रहती है। तुला राशिके बृहस्पतिमें आश्विनवर्ष होता है। इसमें घी, तेल सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष और पौषमें धान्यका संग्रह करना उचित है। मार्गशीर्षसे लेकर चैत्र तक पाँचों महीनोंमें लाभ होता है। विग्रह—लड़ाई और संघर्ष देशमें होनेका योग अवगत करना चाहिए। रस संग्रह करनेवालोंको अधिक लाभ होता है। वृश्चिकराशिका बृहस्पति होनेपर कार्त्तिक संवत्सर होता है। इसमें खण्डवृष्टि, धान्यकी फसल अल्प होती है। घरोंमें परस्पर वैमनस्य आठ महीनों तक होता है। भाद्रपद, आश्विन और कार्त्तिक इन महीनोंमें महँगाई जाती है। सोना, चाँदी, काँसा, ताँबा, तिल, घी, श्रीफल, कपास, नमक, श्वेतवस्त्र मँहगे बिकते हैं। देशके विभिन्न प्रदेशोंमें संघर्ष होते हैं, स्त्रियोंको नाना प्रकारके कष्ट होते हैं। धनुराशिके बृहस्पतिमें मार्गशीर्ष संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अधिक होती है। सोना, चाँदी, अनाज, कपास, लोहा, काँसा आदि सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। मार्गशीर्षसे ज्येष्ठ तक घी कुछ महंगा रहता है। चौपायोंको अधिक लाभ होता है, इनका मूल्य अधिक बढ़ जाता है। मकरके गुरुमें पौषसंवत्सर होता है, इसमें वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। उत्तर और पश्चिममें खण्ड-वृष्टि होती है तथा पूर्व और दक्षिणमें दुर्भिक्ष। धान्यका भाव महंगा रहता है। कुम्भके गुरुमें माघ संवत्सर होता है। इसमें सुभिक्ष, पर्याप्त वर्षा, धार्मिक प्रचार, धातु और अनाज सस्ते होते हैं। माघ-फाल्गुनमें पदार्थ सस्ते रहते हैं। वैशाखमें वस्तुओंके भाव कुछ तेज हो जाते हैं।

मीनके गुरुमें फाल्गुन संवत्सर होता है। इसमें अनेक प्रकारके रोगोंका प्रसार, साधारण वर्षा, सुभिक्ष, गेहूँ, चीनी, तिल, तैल और गुड़का भाव तेज होता है। पौष मासमें कष्ट होता है। फाल्गुन और चैत्रके महीनेमें बीमारियाँ फैलती हैं। दक्षिणभारत और राजस्थानके लिए यह वर्ष मध्यम है। पूर्वके लिए वर्ष उत्तम है, पश्चिमके प्रदेशोंके लिए वर्ष साधारण है।

बृहस्पतिके वक्री होनेका विचार—मेषराशिका बृहस्पति वक्री होकर मीनराशिका हो जाय तो आषाढ़, श्रावणमें गाय, महिष, गधे और ऊँट तेज हो जाते हैं। चन्दन, सुगन्धित तेल तथा अन्य सुगन्धित वस्तुएँ महँगी होती हैं। वृषराशिका गुरु पाँच महीने वक्री हो जाय तो गाय-बैल आदि चौपाएँ, वर्तन आदि तेज होते हैं। सभी प्रकारके धान्यका संग्रह करना उचित है। मवेशीमें अधिक लाभ होता है। मिथुनराशिका गुरु वक्री हो तो आठ महीने तक चौपाएँ तेज रहते हैं। मार्गशीर्ष आदि महीनोंमें सुभिक्ष, सब लोग स्वस्थ एवं उत्तरप्रदेश और पंजाबमें दुष्कालकी स्थिति आती है। कर्कराशिका गुरु यदि वक्री हो तो घोर दुर्भिक्ष, गृहयुद्ध, जनतामें संघर्ष, राज्योंकी सीमामें परिवर्तन तथा घी, तैल, चीनी, कपासके व्यापारमें लाभ एवं धान्य-भाव भी महँगा होता है। सिंहराशिके गुरुके वक्री होनेसे सुभिक्ष, आरोग्य और सब लोगोंमें प्रसन्नता होती है। धान्यके संग्रहमें भी लाभ होता है। कन्याराशिके गुरुके वक्री [illegible] आमोद-प्रमोदमें लीन रहती है। तुलाराशिके [illegible] आदि पदार्थ महंगे होते हैं। वृश्चिकराशिका [illegible] उचित होता है। गेहूँ, चना आदि महंगे होते हैं। धनुराशिका गुरु वक्री हो तो सभी प्रकारके अनाज सस्ते होते हैं। मकर राशिके गुरुके वक्री होनेसे धान्य सस्ता होता है और आरोग्यताकी वृद्धि होती है। यदि कुम्भराशिका गुरु वक्री हो तो सुभिक्ष, कल्याण, उचित वर्षा एवं धान्यभाव सम रहता है। वर्षान्तमें वस्तुओंके भाव कुछ महंगे होते हैं। मीनराशिका गुरु वक्री हो तो धनक्षय, चोरोंसे भय, प्रशासकोंमें अनबन, धान्य और रस पदार्थ महँगे होते हैं। लवण, कपास, घी और तेलमें चौगुना लाभ होता है। मीनके गुरुका वक्री होना धातुओंके भावोंमें भी तेजी लाता है तथा सुवर्णादि सभी धातुएँ महँगी होती हैं।

गुरुका नक्षत्र भोग विचार—जब गुरु कृत्तिका, रोहिणी नक्षत्रमें स्थित हो उस समय मध्यम वृष्टि और मध्यम धान्य उपजता है। मृगशिरा और आर्द्रामें गुरुके रहनेसे यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और धन-धान्यकी वृद्धि होती है। पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषामें गुरु हो तो अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, लूट-पाट, संघर्ष और अनेक प्रकारके रोग होते हैं। मघा और पूर्वाफाल्गुनीमें गुरुके होनेसे सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य होते हैं। उत्तराफाल्गुनी और हस्तमें गुरु स्थित हो तो वर्षा अच्छी, जनताको सुख एवं सर्वत्र क्षेम-आरोग्य व्याप्त रहता है। चित्रा और स्वाती नक्षत्रमें गुरु हो तो श्रेष्ठ धान्य, उत्तम वर्षा तथा जनतामें आमोद-प्रमोद होते हैं। विशाखा और अनुराधामें गुरुके होनेसे मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है। ज्येष्ठा और मूलमें गुरु हो तो दो महीनेके उपरान्त खण्डवृष्टि होती है। पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ामें गुरु हो तो तीन महीनों तक लगातार अच्छी वर्षा, क्षेम, आरोग्य और पृथ्वी पर सुभिक्ष होता है। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्रमें गुरु हो तो सुभिक्षके साथ धान्य महंगा होता है। पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपदमें गुरुका होना अनावृष्टिका सूचक है। रेवती, भरणी और अश्विनी नक्षत्रमें गुरुके होनेसे सुभिक्ष, धान्यकी अधिक उत्पत्ति एवं शान्ति रहती है। मृगशिरासे पाँच नक्षत्रोंमें गुरु शुभ होता है। गुरु शीघ्र गति हो और शनि वक्री हो तो विश्वमें हाहाकार होने लगता है।

गुरुके उदयका फलादेश—मेष राशिमें गुरुका उदय हो तो दुर्भिक्ष, मरण, संकट, आकस्मिक दुर्घटनाएँ होती हैं। वृषमें उदय होनेसे सुभिक्ष, मणि-रत्न महँगे होते हैं। मिथुनमें उदय होनेसे वेश्याओंको कष्ट, कलाकार और व्यापारियोंको भी पीड़ा होती है। कर्कमें उदय होनेसे अल्पवृष्टि, मृत्यु एवं धान्यभाव तेज होता है। सिंहमें उदय होनेसे समयानुकूल यथेष्ट-वर्षा, सुभिक्ष एवं नदियोंकी बाढ़से जन-साधारणमें कष्ट होता है। कन्याराशिमें गुरुके उदय होनेसे बालकोंको कष्ट, साधारण वर्षा और फसल भी अच्छी होती है। तुलाराशिमें गुरुके उदय होनेसे काश्मीरी चन्दन, फल-पुष्प एवं सुगन्धित पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिकराशिमें गुरुके उदय होनेसे दुर्भिक्ष, धन-विनाश, पीड़ा, एवं अल्प वर्षा होती है। धनुराशि और मकर-राशिमें गुरुका उदय होनेसे रोग, उत्तम धान्य, अच्छी वर्षा एवं द्विजातियोंको कष्ट होता है। कुम्भराशिमें गुरुका उदय होनेसे अतिवृष्टि, अनाजका भाव महँगा एवं मीनराशिमें गुरुके उदय होनेसे युद्ध, संघर्ष और अशान्ति होती है। कार्त्तिकमासमें गुरुका उदय होनेसे थोड़ी वर्षा, रोग, पीड़ा; मार्गशीर्षमें उदय होनेसे सुभिक्ष, उत्तम वर्षा; पौषमें उदय होनेसे नीरोगता और धान्यकी प्राप्ति; माघ-फाल्गुनमें उदय होनेसे खण्डवृष्टि, चैत्रमें उदय होनेसे विचित्र स्थिति, वैशाख-ज्येष्ठमें उदय होनेसे वर्षाका निरोध; आषाढ़में उदय हो तो आपसमें मतभेद, अन्नका भाव तेज; श्रावणमें उदय हो तो आरोग्य, सुख-शान्ति, वर्षा; भाद्रपद मासमें उदय होनेसे धान्य नाश एवं आश्विनमें उदय होनेसे सभी प्रकारसे सुखकी प्राप्ति होती है।

गुरुके अस्तका विचार—मेषमें गुरु अस्त हो तो थोड़ी वर्षा; बिहार, बंगाल, आसाममें सुभिक्ष, राजस्थान, पंजाबमें दुष्काल; वृषमें अस्त हो तो दुर्भिक्ष, दक्षिणभारतमें अच्छी फसल, उत्तर भारतमें खण्ड वृष्टि; मिथुनमें अस्त हो तो घृत, तेल, लवण आदि पदार्थ महँगे, महामारीके कारण सामूहिक मृत्यु, अल्प वृष्टि; कर्कमें हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण, क्षेम; सिंहमें अस्त हो तो युद्ध, संघर्ष, राजनैतिक उलटफेर, धनका नाश; कन्यामें अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, तुलामें पीड़ा, द्विजोंको विशेष कष्ट, धान्य महँगा; वृश्चिकमें अस्त हो तो नेत्ररोग, धनहानि, आरोग्य, शस्त्रभय; धनुराशिमें अस्त हो तो भय, आतंक, रोगादि; मकरराशिमें अस्त हो तो उड़द, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे; कुम्भमें अस्त हो तो प्रजाको कष्ट, गर्भवती नारियोंको रोग एवं मीन राशिमें अस्त हो तो सुभिक्ष, साधारण वर्षा, धान्यका भाव सस्ता होता है। गुरुका क्रूर ग्रहोंके साथ अस्त या उदय होना अशुभ होता है। शुभ ग्रहोंके साथ अस्त या उदय होनेसे गुरुका शुभ फल प्राप्त होता है। गुरुके साथ शनि और मंगलके रहनेसे प्रायः सभी वस्तुओंकी कमी होती है और भाव भी उनके महँगे होते हैं। जब गुरुके साथ शनिकी दृष्टि गुरुपर रहती है, तब वर्षा कम होती है और फसल भी अल्प परिमाणमें उपजती है।

अष्टादशोऽध्यायः

गतिं प्रवासमुदयं वर्णं ग्रहसमागमम् ।
बुधस्य सम्प्रवक्ष्यामि फलानि च निबोधत: ॥१॥

बुधके प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोगका वर्णन करता हूँ, उनका फल निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥१॥

सौम्या विमिश्राः संक्षिप्तास्तीव्रा घोरास्तथैव च ।
दुर्गाविगतयो ज्ञेया बुधस्य च विचक्षणैः ॥२॥

सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकारकी बुधकी गतियाँ विद्वानोंने बतलाई हैं ॥२॥

सौम्यां गतिं समुत्थाय [1]त्रिपक्षाद् दृश्यते बुधः ।
विमिश्रायां गतौ पक्षे संक्षिप्तायां षड्नके ॥३॥
तीक्ष्णायां दशरात्रेण घोरायां तु षडाह्निके ।
पापिकायां त्रिरात्रेण दुर्गायां सम्यगक्षये ॥४॥

सौम्यागतिमें बुध तीन पक्ष अर्थात् ४५ दिन तक देखा जाता है, विमिश्रा गतिमें दो पक्ष अर्थात् तीस दिन, संक्षिप्ता गतिमें चौबीस दिन, तीक्ष्णा गतिमें दस रात, घोरामें छः दिन, पापा गतिमें तीन रात और दुर्गामें नौ दिन तक बुध दिखलाई पड़ता है। तात्पर्य यह है कि बुधकी सौम्यागति ४५ दिन, विमिश्रा ३० दिन, संक्षिप्ता २४ दिन, तीक्ष्णा या तीव्रा १० दिन, घोरा ६ दिन, पापा ३ दिन और दुर्गा ६ दिन तक रहती है ॥३-४॥

सौम्याः विमिश्राः संक्षिप्ता बुधस्य गतयो हिताः ।
शेषाः पापाः समाख्याताः विशेषेणोत्तरोत्तराः ॥५॥

बुधकी सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं, शेष सभी गतियाँ पाप गति कहलाती हैं तथा विशेषरूपसे उत्तरकी गतियाँ पाप हैं ॥५॥

नक्षत्रं शकवाहेन जहाति समचारताम्[2] ।
एषोऽपि नियताश्चारो भयं कुर्यादतोऽन्यथा ॥६॥

यदि बुध समानरूपसे गमन करता हुआ शकट वाहकके द्वारा स्वाभाविक गतिसे नक्षत्रका त्याग करे तो यह बुधका नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करनेसे भय होता है ॥६॥

नक्षत्राणि चरेत्पञ्च पुरस्तादुत्थितो बुधः ।
ततश्चास्तमितः षष्ठे सप्तमे दृश्यते परः ॥७॥

सम्मुख उदय होकर बुध पाँच नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, छठवें नक्षत्र पर अस्त होता है और सातवें पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥७॥

---

१. त्रिपक्षे मु० । २. -चारतः मु० ।

उदितः पृष्ठतः सौम्यश्चत्वारि चरते ध्रुवम् ।
पञ्चमेऽस्तमितः षष्ठे दृश्यते पूर्वतः पुनः ॥८॥

पृष्ठतः उदित होकर बुध चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, पाँचवें नक्षत्र पर अस्त होता है और छठवें पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥८॥

चत्वारि षट् तथाष्टौ च कुर्यादस्तमनोदयौ ।
सौम्यायां तु विमिश्रायां संक्षिप्तायां यथाक्रमम् ॥९॥

सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतिमें क्रमशः चार, छः और आठ नक्षत्रों पर अस्त और उदयको बुध प्राप्त होता है ॥९॥

नक्षत्रमस्य चिह्नानि[1] गतिभिस्तिसृभिर्यदा ।
पूर्वाभिः पूर्वसस्यानां तदा सम्पत्तिरुत्तमा ॥१०॥

उक्त तीनों गतियोंमें जब बुध नक्षत्रोंको पुनः ग्रहण करता है तो पूर्णरूपसे धान्यकी उत्पत्ति होती है और उत्तम सम्पत्ति रहती है ॥१०॥

बुधो यदोत्तरे मार्गे सुवर्णः पूजितस्तदा ।
मध्यमे मध्यमो ज्ञेयो जघन्यो दक्षिणे पथि ॥११॥

पूर्वोत्तर मार्गमें बुध अच्छे वर्णवालों द्वारा पूजित होता है अर्थात् उत्तम फलदायक होता है, मध्यमें मध्यम और दक्षिणमार्ग जघन्य माना जाता है ॥११॥

वसु कुर्यादतिस्थूलो ताम्रः शस्त्रप्रकोपनः ।
[2]अतश्चारुणवर्णश्च बुधः सर्वत्र पूजितः ॥१२॥

अति स्थूल बुध धनकी वृद्धि करता है, ताम्रवर्णका बुध शस्त्रकोप करता है, सूक्ष्म और अरुण वर्णका बुध सर्वत्र पूजित—उत्तम होता है ॥१२॥

पृष्ठतः पुरलम्भाय पुरस्तादर्थवृद्धये ।
स्निग्धो रूक्षो बुधो ज्ञेयः सदा सर्वत्रगो बुधैः ॥१३॥

बुधका पीछे रहना नगर प्राप्तिके लिए, सामने रहना अर्थवृद्धिके लिए और स्निग्ध और रूक्ष बुध सदा सर्वत्र गमन करनेवाला होता है ॥१३॥

गुरोः शुक्रस्य भौमस्य वीथीं विन्द्याद् यथा बुधः ।
दीप्तोऽतिरूक्षः सङ्ग्रामं तदा घोरं निवेदयेत् ॥१४॥

जब बुध गुरु, शुक्र और मंगलकी वीथिको प्राप्त होता है तब अत्यन्त रूक्ष और दीप्त होता है, अतः घोर संग्राम होता है ॥१४॥

मार्गवस्योत्तरां[3] वीथीं चन्द्रशृङ्गं च दक्षिणम् ।
बुधो यदा निहन्यात्तावुभयोर्दक्षिणापथे ॥१५॥
राज्ञां चक्रधराणां च सेनानां शस्त्रजीविनाम् ।
पौर-[4]जनपदानां च क्रिया काचिन्न सिध्यति ॥१६॥

१. मनुगृह्णाति मु० । २. अणु मु० । ३.-रथोत्तरां मु० । ४.-जान० मु० ।

यदि शुक्र उत्तरा वीथिमें हो और चन्द्रशृङ्ग दक्षिणकी ओर हो तथा उनको दक्षिण मार्गमें बुध घातित करे तो राजा, चक्रधर—शासक, सेना, शस्त्रसे आजीविका करनेवाले, पुरवासी और नागरिकोंकी कोई भी क्रिया सिद्ध नहीं होती है ॥१५-१६॥

[1]शुक्रस्य दक्षिणां वीथीं चन्द्रशृङ्गमथोत्तरम् ।
भिन्द्याल्लिखेत् तदा सौम्यस्ततो [2]राज्याग्निजं भयम् ॥१७॥

शुक्र यदि दक्षिण वीथिमें हो और चन्द्रशृङ्ग नीचेकी ओर उत्तर तरफ हो तथा बुध इनका भेदनकर स्पर्श करे तो उस समय राज्य और अग्निका भय होता है ॥१७॥

यदा बुधोऽरुणाभः [3]स्याद्दुर्भगो वा निरीक्ष्यते ।
तदा स स्थावरान् हन्ति ब्रह्म-क्षत्रं च पीडयेत् ॥१८॥

जब बुध अरुण कान्तिवाला हो अथवा दुर्भग—कुरूप दिखलाई पड़ता हो तो स्थावर—नागरिकोंका विनाश करता है और ब्राह्मण और क्षत्रियोंको पीड़ित करता है ॥१८॥

चान्द्रस्य दक्षिणां वीथीं भित्त्वा तिष्ठेद् य ग्रहः ।
रूक्षः स कालसङ्काशस्तदा चित्रविनाशनम् ॥१९॥
चित्रमूर्त्तिश्च चित्रांश्च शिल्पिनः कुशलांस्तथा ।
तेषां च बन्धनं कुर्यात् मरणाय समीहते ॥२०॥

जब कोई ग्रह बुधकी दक्षिण वीथिका भेदन करे तथा वह रूक्ष दिखलाई पड़े तो शिल्प-कला एवं चित्रकलाका विनाश होता है। चित्र, मूर्त्ति, कुशल मूर्त्तिकार और चित्रकारोंका बन्धन और विनाश होता है। अर्थात् उक्त प्रकारकी स्थितिमें ललित कलाओं और ललि कलाओंके निर्माताओंका विनाश एवं मरण होता है ॥१९-२०॥

भित्त्वा यदोत्तरां वीथीं दासकांशोऽवलोकयेत् ।
सोमस्य चोत्तरं शृङ्गं लिखेद् भद्रपदां वधेत् ॥२१॥
शिल्पिनां दारुजीवीनां तदा षाण्मासिको [4]भयः ।
अकर्मसिद्धिः कलहो मित्रभेदः पराजयः ॥२२॥

यदि बुध उत्तरावीथिका भेदन कर काष्ठमृगका अवलोकन करे एवं चन्द्रमाके उत्तर शृंगका स्पर्श करे तथा पूर्वाभाद्रपदका वेध करे तो काष्ठजीवी शिल्पियोंका छः महीनेमें वध होता है। अकार्यकी सिद्धि होती है, कलह, मित्रभेद और पराजय आदि फल घटित होते हैं ॥२१-२२॥

पीतो यदोत्तरां वीथीं गुरुं भित्त्वा प्रलीयते ।
तदा चतुष्पदो गर्भो कोशधान्यं बुधो वधेत् ॥२३॥
वैश्यश्च [5]शिल्पिनश्चापि गर्भं मासञ्च सारथिः ।
सो नयेद्धजते मासं भद्रबाहुवचो यथा ॥२४॥

पीतवर्णका बुध उत्तरावीथिमें बृहस्पतिका भेदन कर अस्त हो जाय तो चौपाएँ गर्भ, खजाना, धान्य आदिका विनाश करता है। उक्त प्रकारकी बुधकी स्थिति वैश्य और शिल्पियोंको

1. दक्षिणं मु० । 2. रोगाग्निजं भयम् मु० । 3. स्यादुर्भगो वा मु० । 4. वधः मु० ।
5. शिल्पिनो चापि भयं भवति दारुणम् मु० ।

दारुण भय होता है। यह भय एक महीने तक रहता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥२३-२४॥

विभ्राजमानो रक्तो वा बुधो दृश्येत कश्चन।
नागराणां च स्थिराणां च दीक्षितानां च तद्भयम् ॥२५॥

यदि कभी शोभित होनेवाला रक्तवर्णका बुध दिखलाई पड़े तो नागरिक, स्थिर और दीक्षित—साधु-मुनियोंको भय होता है ॥२५॥

कृत्तिकास्वग्निदो रक्तो रोहिण्यां स क्षयङ्करः।
सौम्ये रौद्रे तथाऽऽदित्ये पुष्ये सर्पे बुधः स्मृतः ॥२६॥
[1]पितृदैवं तथाऽऽश्लेषां कलुषो यदि [2]दृश्यते।
पितॄँस्तान् विहङ्गांश्च सस्यं स भजते नयः ॥२७॥

कृत्तिकामें लालवर्णका बुध हो तो अग्निप्रकोप करनेवाला, रोहिणीमें हो तो क्षय करनेवाला और मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रोंमें कलुषित बुध हो तो पितर और विहंगमों तथा धान्यकी प्राप्ति होती। अर्थात् धान्यकी उत्पत्ति होती है ॥२६-२७॥

बुधो विवर्णो मध्येन विशाखां यदि गच्छति।
ब्रह्म-क्षेत्रविनाशाय तदा ज्ञेयो न संशयः ॥२८॥

यदि विवर्ण बुध विशाखाके मध्यसे गमन करे तो ब्राह्मण और क्षत्रियोंका विनाश होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२८॥

मासोदितोऽनुराधायां यदा सौम्यो निषेवते।
[2]पशुधनचरान् धान्यं तदा पीड्यते भृशम् ॥२९॥

जब मासोदित बुध अनुराधामें रहता है तो मूक—गूँगे, कहो और अँधोंको अत्यधिक कष्ट देता है ॥२९॥

श्रवणे राज्यविभ्रंशो ब्राह्मे ब्राह्मणपीडनम्।
धनिष्ठायां च वैवर्ण्ये धनं हन्ति धनेश्वरम् ॥३०॥

श्रवण विकृतवर्णवाला बुध यदि नक्षत्रमें हो तो राज्य भ्रष्ट होता है, अभिजित्में हो तो ब्राह्मणोंको पीड़ा होती है और धनिष्ठामें हो तो धनिकोंका धन नष्ट होता है ॥३०॥

उत्तराणि च पूर्वाणि याम्यायां [3]दिशि हिंसति।
धातुवादविदो हन्यात्तज्ज्ञांश्च परिपीडयेत् ॥३१॥

यदि बुध दक्षिणमार्गमें तीनों उत्तरा—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद तथा तीनों पूर्वा—पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपदका घात करे तो धातुवादके ज्ञाताओंको पीड़ा होती है ॥३१॥

ज्येष्ठायामनुपूर्वेण स्वातौ च यदि तिष्ठति।
बुधस्य चरितं घोरं [4]महादुःखमुपस्थते ॥३२॥

1. सेवने मु०। 2. मूकान्धबधिरांश्चैव मु०। 3. यदि मु०। 4. महाभनिक मु०।

यदि ज्येष्ठा और स्वातिमें बुध रहे तो उसका यह घोर चरित अत्यन्त कष्ट देनेवाला देता है ॥३२॥

उत्तरे त्वनयोः सौम्यो यदा दृश्येत पृष्ठतः ।
पितृदैवमनुप्राप्तस्तदा मासमुपग्रहः ॥३३॥

जब सौम्य बुध उत्तरमें इन दोनों नक्षत्रोंमें—ज्येष्ठा और स्वातिमें पृष्ठतः—पीछेसे दिखलाई पड़े तथा मघाको प्राप्त हो तो एक महीनेके लिए उपग्रह—कष्ट होता है ॥३३॥

पुरस्तात् सह शुक्रेण यदि तिष्ठति सुप्रभः ।
बुधो [1]मध्यगतो चापि तदा मेघा बहूदकाः ॥३४॥

सम्मुख शुक्रके साथ श्रेष्ठ कान्तिवाला बुध रहे तो उस समय अधिक जलकी वर्षा होती है ॥३४॥

दक्षिणेन तु पार्श्वेण यदा गच्छति दुःप्रभः ।
तदा सृजति लोकस्य महाशोकं[2] महद्भयम् ॥३५॥

यदि बुरी कान्तिवाला बुध दक्षिणकी ओरसे गमन करे तो लोकके लिए अत्यन्त भय और शोक उत्पन्न होता है ॥३५॥

धनिष्ठायां जलं हन्ति वारुणे जलजं वधेत् ।
वर्णहीनो यदा याति बुधो दक्षिणतस्तदा ॥३६॥

यदि वर्णहीन बुध दक्षिणकी ओरसे धनिष्ठा नक्षत्रमें गमन करे तो जलका विनाश और पूर्वाषाढ़ामें गमन करे तो जलको रोकता है ॥३६॥

तनुः समार्गो यदि सुप्रभोऽजितः समप्रसन्नो गतिमागतोन्नतिम् ।
यदा न रूक्षो न च दूरगो बुधस्तदा प्रजानां सुखमूर्जितं सृजेत् ॥३७॥

ह्रस्व, मार्गी, सुकान्तिवाला, समाकार, प्रसन्न गतिको प्राप्त बुध जब न रूक्ष होता है और न दूर रहता है, उस समय प्रजाको सुख-शान्ति देता है ॥३७॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते बुधचारो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥१८॥

विवेचन—बुधका उदय होनेसे अन्नका भाव महँगा होता है। जब बुध उदित होता है उस समय अतिवृष्टि, अग्निप्रकोप एवं तूफान आदि आते हैं। श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तराषाढ़ा नक्षत्रको मर्दित करके बुधके विचरण करनेसे रोगभय, अनावृष्टि होती है। आर्द्रासे लेकर मघा तक जिस किसी नक्षत्रमें बुध रहता है, उसमें ही शस्त्रपात, भूख, भय, रोग, अनावृष्टि और सन्तापसे जनताको पीड़ित करता है। हस्तसे लेकर ज्येष्ठा तक छः नक्षत्रोंमें बुध विचरण करे तो मवेशीको कष्ट, सुभिक्ष, पूर्ण वर्षा, तेल और तिलहनका भाव महँगा होता है। बंगाल, आसाम, बिहार, बम्बई, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, मध्यभारतमें सुभिक्ष, काश्मीरमें अन्नकष्ट, राजस्थानमें दुष्काल, वर्षाका अभाव एवं राजनैतिक उथल-पुथल समस्त

1. विग्रजने काले मु० । 2. शोकं महद्भयङ्करः मु० ।

देशमें होती है। जापानमें चावलकी कमी हो जाती है। रूस और अमेरिकामें खाद्यान्नकी प्रचुरता रहनेपर भी अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। उत्तराफाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद और भरणी नक्षत्रमें बुधका उदय हो या बुध विचरण कर रहा हो तो प्राणियोंको अनेक प्रकारकी सुख-सुविधाओंकी प्राप्तिके साथ, धान्य भाव सस्ता, उचित परिमाणमें वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारियोंको लाभ, चोरोंका अधिक उपद्रव एवं विदेशोंके साथ सहानुभूति-पूर्ण सम्पर्क स्थापित होता है। पंजाब, दिल्ली और राजस्थान राज्योंकी सरकारोंमें परिवर्तन भी उक्त बुधकी स्थितिमें होता है। घी, गुड़, सुवर्ण, चाँदी तथा अन्य खनिज पदार्थोंका मूल्य बढ़ जाता है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्रमें बुधका विचरण करना देशके सभी वर्गों और हिस्सोंके लिए सुभिक्षप्रद होता है। द्विजोंको अनेक प्रकारके लाभ और सम्मान प्राप्त होते हैं। निम्न श्रेणीके व्यक्तियोंको भी अधिकार मिलते हैं तथा सभी जनता सुख-शान्तिके साथ निवास करती है। यदि बुध अश्विनी, शतभिषा, मूल और रेवती नक्षत्रका भेदन करे तो जल-जन्तु, जलसे आजीविका करनेवाले, वैद्य डाक्टर एवं जलसे उत्पन्न पदार्थोंमें नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद इन तीन नक्षत्रोंमेंसे किसी एकमें शुक्र विचरण करे तो संसारको अन्नकी कमी होती है। रोग, तस्कर, शस्त्र, अग्नि आदिका भय और आतंक व्याप्त रहता है। विज्ञान नये-नये पदार्थोंकी शोध और खोज करता है, जिससे अनेक प्रकारकी नई बातों पर प्रकाश पड़ता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें बुधका उदय होनेसे अनेक राष्ट्रोंमें संघर्ष होता है तथा वैमनस्य उत्पन्न हो जानेसे अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति परिवर्तित हो जाती है। उक्त नक्षत्रमें बुधका उदय और विचरण करना दोनों ही राजस्थान, मध्यभारत और सौराष्ट्रके लिए हानिकारक है। इन प्रदेशोंमें वृष्टिका अवरोध होता है। भाद्रपद और आश्विनमासमें साधारण वर्षा होती है। कार्तिकमासके आरम्भमें गुजरात और बम्बई प्रदेशमें वर्षा अच्छी होती है। राजस्थानके मन्त्रिमण्डलमें परिवर्तन भी उक्त ग्रह स्थितिके कारण होता है।

पराशरके मतानुसार बुधका फलादेश—पराशरने बुधकी सात प्रकारकी गतियाँ बतलाई है—प्राकृत, विमिश्र, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगान्त, घोर और पाप। स्वाति, भरणी, रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्रमें बुध स्थित हो तो इस गतिको प्राकृत कहते हैं। बुधकी यह गति ४० दिन तक रहती है, इसमें आरोग्य, वृष्टि, धान्यकी वृद्धि और मंगल होता है। प्राकृत गति भारतके पूर्व प्रदेशोंके लिए उत्तम होती है। इस गतिमें गमन करने पर बुध बुद्धिजीवियोंके लिए उत्तम होता है। कलाकौशलकी भी वृद्धि होती है। देशमें नवीन कल-कारखाने स्थापित किये जाते हैं। अनाज अच्छा उत्पन्न होता है और वर्षा भी अच्छी होती है। कलिंग—उड़ीसा, विदेह—मिथिला, काशी, विदर्भ देशके निवासियोंको सभी प्रकारके लाभ होते हैं। मरुभूमि—राजस्थानमें सुभिक्ष रहता है, वर्षा भी अच्छी होती है। फसल उत्तम होनेके साथ मवेशीको कष्ट होता है। मथुरा और सूरसेन देशवासियोंका आर्थिक विकास होता है। व्यापारीवर्गको साधारण लाभ होता है। सोना और चाँदीके सट्टेमें हानि उठानी पड़ती है। जूटका भाव बहुत ऊँचा चढ़ जाता है, जिससे व्यापारियोंको हानि होती है।

मृगशिरा, आर्द्रा, मघा और आश्लेषा नक्षत्रमें बुधके विचरण करनेको मिश्रा गति कहते हैं। यह गति ३० दिनों तक रहती है। इस गतिका फल मध्यम है। देशके सभी राज्यों और प्रदेशोंमें सामान्य वर्षा, उत्तम फसल, रस पदार्थोंकी कमी, धातुओंके मूल्यमें वृद्धि एवं उच्चवर्गके व्यक्तियोंको सभी प्रकारसे सुख प्राप्त होता है। बुधकी मिश्रा गति मध्यप्रदेश और मध्यभारतके निवासियोंके लिए अधिक शुभ होती है। उक्त राज्योंमें उत्तम वृष्टि होती है और फसल भी अच्छी ही होती है। पुष्य, पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रमें संक्षिप्ता गति होती है। यह गति २२ दिनों तक रहती है। इस गतिका फल भी मध्यम ही है पर विशेषता

यह है कि इस गतिके होने पर घी, तैल पदार्थोंका भाव महँगा होता है। देशके दक्षिणभागके निवासियोंको साधारण कष्ट होता है। दक्षिणमें अन्नकी फसल अच्छी होती है। उत्तरमें गुड़, चीनी और अन्य मधुर पदार्थोंकी उत्पत्ति अच्छी होती है। कोयला, लोहा, अभ्रक, ताँबा, सीसा भूमिसे अधिक निकलता है। देशका आर्थिक विकास होता है। जिस दिनसे बुध उक्त गति आरम्भ करता है, उसी दिनसे लेकर जिस दिन यह गति समाप्त होती है, उस दिन तक देशमें सुभिक्ष रहता है। देशके सभी राज्योंमें अन्न और वस्त्रकी कमी नहीं होती। आसाममें बाढ़ आजानेसे फसल नष्ट होती है। विहारके वे प्रदेश भी कष्ट उठाते हैं, जो नदियोंके तटवर्ती हैं। उत्तरप्रदेशमें सब प्रकारसे शान्ति व्याप्त रहती है। पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, ज्येष्ठा, आश्विनी और रेवती नक्षत्रमें बुधकी गति तीक्ष्ण कहलाती है। यह गति १८ दिनकी होती है। इस गतिके होनेसे वर्षाका अभाव, दुष्काल, महामारी, अग्निप्रकोप और शस्त्रप्रकोप होता है। मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें बुधके विचरण करनेसे बुधकी योगान्तिका गति कहलाती है। यह गति ९ दिन तक रहती है। इस गतिका फल अत्यन्त अनिष्टकर है। देशमें रोग, शोक, झगड़े आदिके साथ वर्षाका भी अभाव रहता है। श्रावण और ज्येष्ठ मासमें साधारण वर्षा होती है, इसके पश्चात् अन्य महीनोंमें वर्षा नहीं होती है। जब तक बुध इस गतिमें रहता है, तब तक अधिक लोगोंकी मृत्यु होती है। आकस्मिक दुर्घटनाएँ अधिक घटती हैं। श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्रमें शुक्रके रहनेसे उसकी घोर गति कहलाती है। यह गति १५ दिन तक रहती है। जब बुध इस गतिमें गमन करता है, उस समय देशमें अत्याचार, अनीति, चोरी आदिका व्यापकरूपसे प्रचार होता है। उत्तरप्रदेश, पंजाब, बंगाल, और दिल्ली राज्यके लिए यह गति अत्यधिक अनिष्ट करनेवाली है। बुधके इस गतिमें विचरण करनेसे आर्थिक क्षति, किसी बड़े नेताकी मृत्यु, देशमें अर्थसंकट, अन्नाभाव आदि फल घटित होते हैं। हस्त, अनुराधा या ज्येष्ठा नक्षत्रमें बुधके विचरण करनेसे पापागति होती है। इस गतिके दिनोंकी संख्या ११ है। इस गतिमें बुधके रहनेसे अनेक प्रकारकी हानियाँ उठानी पड़ती हैं। देशमें राजनैतिक उलट-फेर होते हैं। विहार, आसाम और मध्यप्रदेशके मन्त्रिमण्डलमें परिवर्तन होता है।

देवलके मतसे फलादेश—देवलने बुधकी चार गतियाँ बतलाई हैं—ऋज्वी, वक्रा, अतिवक्रा और विकला। ये गतियाँ क्रमशः ३०, २४, १२ और ६ दिन तक रहती हैं। ऋज्वी गति प्रजाके लिए हितकारी, वक्रामें शस्त्रभय, अतिवक्रामें धनका नाश, और विकलामें भय तथा रोग होते हैं। पौष, आषाढ़, श्रावण, वैशाख और माघमें बुध दिखलाई दे तो संसारको भय, अनेक प्रकारके उत्पात एवं धन-जनकी हानि होती है। यदि उक्त मासोंमें बुध अस्त हो तो शुभ होता है। आश्विन या कार्त्तिक मासमें बुध दिखलाई दे तो शस्त्र, रोग, अग्नि, जल और क्षुधाका भय होता है। पश्चिम दिशामें बुधका उदय अधिक शुभ फल करता है तथा सभी देशको शुभकारक होता है। स्वर्ण, हरित या सस्यकमणिके समान रंगवाला बुध निर्मल और स्वच्छ होकर उदित होता है, तो सभी राज्यों और देशोंके लिए मंगल करनेवाला है।

एकोनविंशतितमोऽध्यायः

चारं प्रवासं वर्णं च दीप्तिं [1]काष्ठाङ्गतिं फलम् ।
वक्रानुवक्रनामानि लोहितस्य निबोधत ॥१॥

मंगलके चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र आदिका विवेचन किया जाता है ॥ १ ॥

चारेण विंशतिं मासानष्टौ वक्रेण लोहितः ।
चत्वारस्तु प्रवासेन समाचारेण गच्छति ॥२॥

मंगलका चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीनेका होता है ॥ २ ॥

अनृजुः परुषः श्यामो ज्वलितो धूमवान् शिखी ।
विवर्णो वामगो व्यस्तः क्रुद्धो ज्ञेयः [2]तदाऽशुभः ॥३॥

वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायीं ओर गमन करनेवाला मंगल सदा अशुभ होता है ॥ ३ ॥

यदाऽष्टौ सप्त मासान् वा दीप्तः पुष्टः प्रजापतिः ।
तदा सृजति कल्याणं शस्त्रमूर्च्छां तु निर्दिशेत् ॥४॥

यदि प्रजापति—मंगल आठ या सात महीने तक दीप्त और पुष्ट होकर निवास करे तो कल्याण होता है तथा शस्त्रमोह उत्पन्न होता है ॥ ४ ॥

मन्ददीप्तश्च दृश्येत यदा भौमो [3]चलेत्तदा ।
तदा नानाविधं दुःखं प्रजानामहितं सृजेत् ॥५॥

जब मंगल मन्द और दीप्त दिखलाई पड़े, चंचल हो, उस समय प्रजाके लिये नाना प्रकारके दुःख और अहित करता है ॥ ५ ॥

ताम्रो दक्षिणकाष्ठास्थः प्रशस्तो दस्युनाशनः ।
ताम्रो यदोत्तरे काष्ठे तस्य दस्यु तदा हितम् ॥६॥

यदि ताम्रवर्णका मंगल दक्षिण दिशामें हो तो शुभ होता है, किन्तु चौरोंका नाश होता है। यदि ताम्रवर्णका मंगल उत्तरदिशामें हो तो चौरोंका हित होता है ॥ ६ ॥

रोहिणीं स्यात् परिक्रम्य लोहितो दक्षिणं व्रजेत् ।
सुरासुराणां [4]जानानां सर्वेषामभयं वदेत् ॥७॥

यदि रोहिणीकी परिक्रमा करके मंगल दक्षिण दिशाकी ओर चला जाय तो देव-दानव, मनुष्य सभीको अभयकी प्राप्ति होती है ॥ ७ ॥

---

१. काष्ठं गति मु० । २. सदा मु० । ३. न तेजवान् मु० । ४. मार्गाणां मु० ।

क्षत्रियाणां विषादश्च दस्यूनां शस्त्रविभ्रमः।
गावो गोष्ठ-समुद्राश्च विनश्यन्ति विचेतसः ॥८॥

यदि रोहिणी नक्षत्र पर मंगलकी कुचेष्टा दिखलायी पड़े, तो गाय, गोशाला और समुद्रका विनाश होता है ॥ ८ ॥

स्पृशेल्लिखेत् प्रमर्देद् वा रोहिणीं यदि लोहितः।
तिष्ठते दक्षिणो वाऽपि तदा शोक-भयङ्करः ॥९॥

यदि मंगल रोहिणी नक्षत्रका स्पर्श करे, भेदन और प्रमर्दन करे अथवा दक्षिणमें निवास करे तो भयंकर शोककी प्राप्ति होती है ॥९॥

सर्वद्वाराणि दृष्ट्वाऽसौ विलम्बं यदि गच्छति।
सर्वलोकहितो ज्ञेयो दक्षिणोऽसृग् लोहितः ॥१०॥

यदि दक्षिण मंगल सभी द्वारोंको देखता हुआ विलम्बसे गमन करे तो समस्त लोकका हित होता है ॥१०॥

पञ्च वक्राणि भौमस्य तानि भेदेन द्वादश।
उष्णं शोषमुखं व्यालं लोहितं लोहमुद्गरम् ॥११॥

मंगल पाँच वक्र होते हैं और भेदकी अपेक्षा बारह वक्र कहे गये हैं। उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर ये पाँच प्रधान वक्र हैं ॥११॥

उदयात् सप्तमे ऋक्षे नवमे वाऽष्टमेऽपि वा।
यदा भौमो निवर्तेत तदुष्णं वक्रमुच्यते ॥१२॥

जब मङ्गलका उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पर हुआ हो, और वह लौटकर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं ॥१२॥

सुवृष्टिः प्रबला ज्ञेया विष-कीटाग्निमूर्च्छनम्।
ज्वरो जनक्षयो वाऽपि तज्जातां च विनाशनम् ॥१३॥

इस उष्णवक्रमें वर्षा अच्छी होती है, विष, कीट और अग्निकी वृद्धि होती है, ज्वर और रोगादिका विनाश होता है तथा जनताको भी कष्ट होता है ॥१३॥

एकादशे यदा भौमो द्वादशे दशमेऽपि वा।
निवर्तेत तदा वक्रं तच्छोषमुखमुच्यते ॥१४॥
अपोऽन्तरिक्षात् पतितं दूषयति तदा रसान्।
ते सृजन्ति रसान् दुष्टान् नानाव्याधींस्तु भूतजान् ॥१५॥
शुष्यन्ति तडागानि सरांसि सरितस्तथा।
बीजं न रोहते तत्र जलमध्येऽपि वापितम् ॥१६॥

जब मङ्गल दशवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्रसे लौटता है तो यह शोषमुख वक्र कहलाता है। इस प्रकारके वक्रमें आकाशसे जलकी वर्षा होती है, रस दूषित हो जाते हैं तथा रसोंके

1. शाम· मु० । 2. स च मु० ।

दूषित होनेसे प्राणियोंको नाना प्रकारकी व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। जलकी वर्षा भी उक्त प्रकारके वक्रमें उत्तम नहीं होती है, जिससे तालाब सूख जाते हैं तथा जलमें भी बोनेपर बीज न उगते हैं; अर्थात् फसलकी कमी रहती है ॥१४-१६॥

त्रयोदशेऽपि नक्षत्रे यदि वाऽपि चतुर्दशे।
निवर्तेत यदा भौमस्तद् वक्रं व्यालमुच्यते ॥१७॥
पतङ्गाः सविषाः कीटाः सर्पा जायन्ति तामसाः।
फलं न बध्यते पुष्पे बीजमुप्तं न रोहति ॥१८॥

यदि मङ्गल चौदहवें अथवा तेरहवें नक्षत्रसे लौट आवें तो यह उसका व्यालचक्र कहलाता है। पतंग-टीड़ी, विषैले जन्तु, कीट, सर्प आदि तामस प्रकृतिके जन्तु उत्पन्न होते हैं, फल और पुष्पमें बाधा नहीं होती, किन्तु बोया गया बीज अङ्कुरित नहीं होता है ॥१७-१८॥

यदा पञ्चदशे ऋक्षे षोडशे वा निवर्तते।
लोहितो लोहितं वक्रं कुरुते गुणजं तदा ॥१९॥
देश-स्नेहा-म्भसां लोपं राज्यभेदश्च जायते।
सङ्ग्रामाश्चात्र वर्तन्ते मांस-शोणित-कर्दमाः ॥२०॥

जब मङ्गल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्रसे लौटता है, तब यह लोहित वक्र कहा जाता है, यह गुण उत्पन्न करनेवाला है। इस वक्रका फल देश, स्नेह, जलका लोप हो जाता है और राज्यमें मतभेद उत्पन्न हो जाता है तथा युद्ध होते हैं, जिससे रक्त और मांसकी कीचड़ हो जाती है ॥१९-२०॥

यदा सप्तदशे ऋक्षे पुनरष्टादशेऽपि वा।
प्रजापतिर्निवर्तेत तद् वक्रं लोहमुद्गरम् ॥२१॥
निर्दया निरनुक्रोशा लोहमुद्गरसन्निभाः।
प्रणयन्ति नृपा दण्डं क्षीयन्ते येन तत्प्रजाः ॥२२॥

जब मङ्गल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्रसे लौटता है तो लोहमुद्गर वक्र कहलाता है। इस प्रकारके वक्रमें जीवधारियोंकी प्रवृत्ति निर्दय और निरङ्कुश हो जाती है तथा राजा लोग प्रजाको दण्डित करते हैं, जिससे प्रजाका क्षय होता है ॥२१-२२॥

धर्मार्थकामा हीयन्ते विलीयन्ते च दस्यवः।
तोय-धान्यानि शुष्यन्ति रोगमारी बलीयसी ॥२३॥

उक्त प्रकारके वक्रमें धर्म, अर्थ और काम नष्ट हो जाते हैं और चोरोंका विनाश हो जाता है। जल और धान्य सूख जाते हैं तथा रोग और महामारी बढ़ती है ॥२३॥

वक्रं कृत्वा यदा भौमो विलम्बेन गतिं प्रति।
वक्रा-नुवक्रयोर्घोरं मरणाय समीहते[1] ॥२४॥

यदि मङ्गल वक्र गतिको प्राप्तकर विलम्बित गति हो तो यह वक्रानुवक्र कहलाता है। इसका फल मरणप्रद होता है ॥२४॥

---

1. -इति मु०।

कृत्तिकादीनि सप्तेह वक्रेणाङ्गारकश्चरेत् ।
हत्वा वा दक्षिणस्तिष्ठेत् तत्र वक्ष्यामि यत् फलम् ॥२५॥

यदि मङ्गल वक्र गति द्वारा कृत्तिकादि सात नक्षत्रों पर गमन करे अथवा घात कर दक्षिण की ओर स्थित रहे तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥२५॥

साल्वांश्च सारदण्डांश्च विप्रान् क्षत्रांश्च पीडयेत् ।
मेखलांश्चानयोर्घोरं[1] मरणाय समीहते ॥२६॥

उक्त प्रकारका मङ्गल साल्वदेश, सारदण्ड, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णोंको निरसन्देह घोर कष्ट प्राप्त होता है ॥२६॥

मघादीनि च सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
चरेद् विवर्णस्तिष्ठेद् वा तदा विन्द्यान्महद्भयम् ॥२७॥

यदि मघादि सात नक्षत्रोंमें वक्र मङ्गल विचरण करे अथवा विकृत वर्ण होकर निवास करे तो महान् भय होता है ॥२७॥

सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान् प्रासीलान् द्राविडाङ्गनाम् ।
पाञ्चालान् सौरसेनान् वा वाह्लीकान् नकुलान् वधेत् ॥२८॥
मेखलान् वाऽप्यवन्त्यांश्च पार्वतांश्च नृपैः सह ।
जिघांसन्ति तदा भौमो ब्रह्म-क्षत्रं विरोधयेत् ॥२९॥

उक्त प्रकारके मङ्गलका फल सौराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर, द्राविड, पाञ्चाल, सौरसेन, वाह्लीक, नकुल, मेखला, आवन्ति, पहाड़ी प्रदेशके निवासियों और राजाओंका विनाश होता है और ब्राह्मण-क्षत्रियोंमें विरोध होता है ॥२८-२९॥

मैत्रादीनि च सप्तैव यदा सेवेत लोहितः ।
वक्रेण[2] पापगत्या वा महतामनयं वदेत् ॥३०॥
राजानश्च विरुध्यन्ते[3] चातुर्दिश्यो विलुप्यते ।
कुरु-पाञ्चालदेशानां[4] मूर्च्छते तद् भयानि च ॥३१॥

यदि मङ्गल अनुराधा आदि सात नक्षत्रोंका भोग करे अथवा वक्रगतिको अपगतिसे विचरण करे तो अत्यन्त अनीति होती है। राजाओंमें युद्ध होता है, चारों वर्ण लुप्त हो जाते हैं; कुरु-पाञ्चाल देशोंमें भय और मूर्च्छा रहती है ॥३०-३१॥

धनिष्ठादीनि सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
सेवेत[5] ऋजुगत्या वा तदाऽपि स जुगुप्सितः ॥३२॥
धनिनो जलविप्रांश्च[6] तथा चैव हयान् गजान् ।
उदीच्यान् नाविकांश्चापि पीडयेल्लोहितस्तदा ॥३३॥

यदि मङ्गल वक्रगतिसे धनिष्ठा आदि सात नक्षत्रोंका भोग करे अथवा ऋजुगतिसे गमन

---

1. सदा प्राप्नोत्यमंशयम् मु० । 2. वाऽपगत्या मु० । 3. -वर्णो मु० । 4. मूर्च्छति च मु० । 5. मृदुगत्या मु० । 6. -श्रीवांश्च मु० ।

करे तो वह निन्दित होता है। धनिक, जलजन्तु, घोड़ा, हाथी, उत्तरके निवासी और नाविकोंको पीड़ा देते हैं ॥३२-३३॥

भौमो वक्रेण युद्धे वामवीथीं चरते हि तः।
तेषां भयं विजानीयाद् येषां ते प्रतिपुद्गलाः ॥३४॥

जब मङ्गल वक्र होकर युद्धमें वाम वीथिमें गमन करता है तो जनताके लिए भय होता है ॥३४॥

क्रूरः क्रुद्धश्च ब्रह्मघ्नो यदि तिष्ठेद् ग्रहैः सह।
परचक्रागमं विन्द्यात् तासु नक्षत्रवीथिषु ॥३५॥
धान्यं तदा न विक्रेयं संश्रयेच्च बलीयसम्।
चिनुयात्तुपधान्यानि दुर्गाणि च समाश्रयेत् ॥३६॥

क्रूर, क्रुद्ध और ब्रह्मघाती होकर मङ्गल यदि अन्य ग्रहोंके साथ उन नक्षत्र वीथियोंमें रहे तो परशासनका आगमन होता है। इस प्रकारकी स्थितिमें धान्य-अनाज नहीं बेचना चाहिए, बलवान्का आश्रय लेना तथा धान्य और भूसाका संग्रह करके दुर्गका आश्रय लेना चाहिए ॥३५-३६॥

उत्तराफाल्गुनीं भौमो यदा लिखति वामतः।
यदि वा दक्षिणं गच्छेत् धान्यस्यार्घो महा भवेत् ॥३७॥

जब मङ्गल उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रको वाम भागसे स्पर्श करता है अथवा दक्षिणकी ओर गमन करता है तो धान्य-अनाज बहुत मँहगा होता है ॥३७॥

यदाऽनुराधां प्रविशेन्मध्ये न च लिखेत्तथा।
मध्यमं तं विजानीयात् तदा भौमविपर्यये ॥३८॥

यदि मङ्गल अनुराधामें मध्यसे प्रवेश करे, स्पर्श न करे तो मध्यम होता है और विपर्यय प्रवेश करनेपर विपरीत फल होता है ॥३८॥

स्थूलः सुवर्णो द्युतिमांश्च पीतो रक्तः सुमार्गो[3] रिपुनाशनाय।
भौमः[4] प्रसन्नः सुमनः प्रशस्तो भवेत् प्रजानां सुखदस्तदानीम् ॥३९॥

स्थूल, सुवर्ण, कान्तिमान्, सुकर, पीत, रक्त, सुमार्गगामी, कान्त, प्रसन्न, समगामी, विलम्बी मङ्गल प्रजाको सुख-शान्ति और धन-धान्य देनेवाला है ॥३९॥

इति निर्ग्रन्थभद्रबाहुके निमित्ते भद्रारकचारो नाम एकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥१९॥

१. या यां मु०। २. सः मु०। ३. सुमार्गश्च सुर्भी प्रजानाम् मु०। ४. कान्तः प्रसन्नः समगो विलम्बी भौमः प्रशस्तः सुखदः मु०।

विवेचन—भौमका द्वादश राशियोंमें स्थित होनेका फल—मेष राशिमें मङ्गल स्थित हो तो सभी प्रकारके अनाज मँहगे होते हैं। वर्षा अल्प होती है तथा धान्यकी उत्पत्ति भी अल्प ही होती है। पूर्वीय प्रदेशोंमें वर्षा साधारणतया अच्छी होती है; उत्तरीय प्रदेशोंमें खण्ड वृष्टि, पश्चिमीय प्रदेशोंमें वर्षाका अभाव या अत्यल्प तथा दक्षिणीय प्रदेशोंमें साधारण वृष्टि होती है। मेषराशिका मङ्गल जनतामें भय और आतंक भी उत्पन्न करता है। वृषराशिमें मङ्गलके स्थित होनेसे साधारण वृष्टि देशके सभी भागोंमें होती है। चना, चीनी और गुड़का भाव कुछ मँहगा होता है। महामारीके कारण मनुष्योंकी मृत्यु होती है। बङ्गालके लिए मङ्गलकी उक्त थिति अधिक भयावह होती है। मङ्गलकी उक्त स्थिति वर्मा, स्याम, चीन और जापानके लिए राजनैतिक दृष्टिसे उथल-पुथल करनेवाली होती है। नेताओंमें मतभेद, फूट और कलह रहनेसे जनसाधारणको भी कष्ट होता है। पूर्वी पाकिस्तानके लिए वृषका मङ्गल अनिष्टप्रद होता है। खाद्यान्नका अभाव होनेके साथ भयङ्कर बीमारियाँ भी उत्पन्न होती हैं। मिथुनराशिमें मङ्गलके थित होनेसे अच्छी वर्षा होती है। देशके सभी राज्यों और प्रदेशोंमें सुभिक्ष, शान्ति, धर्माचरण, न्याय, नीति और सचाईका प्रसार होता है। अहिंसा और सत्यका व्यवहार बढ़नेसे देशमें शान्ति बढ़ती है। सभी प्रकारके अनाज समर्घ रहते हैं। सोना, चाँदी, लोहा, ताँबा, काँसा, पीतल आदि खनिज धातुओं के व्यापारमें साधारण लाभ होता है। पञ्जाबमें फसल बहुत अच्छी उपजती है। फल और तरकारियाँ भी अच्छी उपजती हैं। कर्कराशिमें मङ्गल हो तो भी सुभिक्ष और उत्तम वर्षा होती है। उत्तर प्रदेशमें काशी, कन्नौज, मथुरामें उत्तम फसल नहीं होती है, अवशेष स्थानोंमें उत्तम फसल उपजती है। सिंहराशिमें मङ्गलके रहनेसे सभी प्रकारके धान्य मँहगे होते हैं। वर्षा भी अच्छी नहीं होती। राजस्थान, गुजरात, मध्यभारतमें साधारण वर्षा होती है। भाद्रपद मासमें वर्षाका योग अत्यल्प रहता है। आश्विनमास वर्षा और फसलके लिए उत्तम माने जाते हैं। सिंह-राशिके मङ्गलमें क्रूर कार्य अधिक होते हैं, युद्ध और संघर्ष अधिक होते हैं। राजनीतिमें परिवर्तन होता है। साधारण जनताको भी कष्ट होता है। आजीविका साधनोंमें कमी आ जाती है। कन्याराशिके मङ्गलमें खण्डवृष्टि, धान्य सस्ते, थोड़ी वर्षा, देशमें उपद्रव, क्रूर कार्योंमें प्रवृत्ति, अनीति और अत्याचारका व्यापक रूपसे प्रचार होता है। बङ्गाल और पञ्जाबमें नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। महामारीका प्रकोप आसाम और बङ्गालमें होता है। उत्तर प्रदेश और मध्यप्रदेश के लिए कन्याराशिका मङ्गल अच्छा होता है। तुलाराशिके मङ्गलमें किसी बड़े नेता या व्यक्तिकी मृत्यु, अस्त्र-शस्त्रकी वृद्धि, मार्गमें भय, चोरोंका विशेष उपद्रव, अराजकता, धान्यका भाव मँहगा, रसोंका भाव सस्ता और सोना-चाँदीका भाव कुछ मँहगा होता है। व्यापारियोंको हानि उठानी पड़ती है। वृश्चिक राशिके मङ्गलमें साधारण वर्षा, मध्यम फसल, देशका आर्थिक विकास, ग्रामोंमें अनेक प्रकारकी बीमारियोंका प्रकोप, पहाड़ी प्रदेशोंमें दुष्काल, नदीके तटवर्ती प्रदेशोंमें सुभिक्ष, नेताओंमें संघटनकी भावना, विदेशोंसे व्यापारिक सम्बन्धका विकास, राजनीतिमें उथल-पुथल एवं पूर्वीय देशोंमें महामारी फैलती है। धनुराशिके मङ्गलमें समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, अनाजका भाव सस्ता, दुग्ध-घी आदि पदार्थोंकी कमी, चीनी-गुड़ आदि मिष्ट पदार्थोंकी बहुलता एवं दक्षिणके प्रदेशोंमें उत्पात होता है। मकर राशिके मङ्गलमें धान्य पीड़ा, फसलमें अनेक रोगोंकी उत्पत्ति, मवेशीको कष्ट, चारेका अभाव, व्यापारियोंको अल्प लाभ, पश्चिमके व्यापारियोंको हानि, गेहूँ, गुड़ और मशालेके मूल्यमें दुगुनी वृद्धि एवं उत्तर भारतके निवासियोंको आर्थिक सङ्कटका सामना करना पड़ता है। कुम्भके मङ्गलमें खण्डवृष्टि, मध्यम फसल, खनिज पदार्थोंकी उत्पत्ति अत्यल्प, देशका आर्थिक विकास, धार्मिक वातावरणकी वृद्धि, जनतामें सन्तोष और शान्ति रहती है। मीनराशिके मङ्गलमें एक महीने तक समस्त भारतमें सुख-शान्ति रहती है। जापानके लिए मीन राशिका मङ्गल अनिष्टप्रद है, वहाँ मन्त्रिमण्डलमें

परिवर्तन, नागरिकोंमें सन्तोष, खाद्यान्नोंकी कमी एवं अर्थसङ्कट भी उपस्थित होता है। जर्मनके लिए मीनराशिका मङ्गल शुभ होता है। रूस और अमेरिकामें परस्पर सद्भावना इसी मङ्गलमें होता है। मीनराशिका मङ्गल धान्योंकी उत्पत्तिके लिए उत्तम होता है। खनिज पदार्थोंकी कमी इसी मङ्गलमें होती है। कोयलाका भाव ऊँचा उठ जाता है। पत्थर, सीमेण्ट, चूना आदिके मूल्यमें भी वृद्धि होती है। मीनराशिका मङ्गल जनताके स्वास्थ्यके लिए उत्तम नहीं होता।

नक्षत्रोंके अनुसार मङ्गलका फल—अश्विनी नक्षत्रमें मङ्गल हो तो क्षति, पीड़ा, तृण और अनाजका भाव तेज होता है। समस्त भारतमें एक महीनेके लिए अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। चौपायोंमें रोग उत्पन्न होता है। देशमें हलचल होती रहती है। सभी लोगोंको किसी-न-किसी प्रकारका कष्ट होता है। भरणी नक्षत्रमें मङ्गल हो तो ब्राह्मणोंको पीड़ा, गाँवोंमें अनेक प्रकारके कष्ट, नगरोंमें महामारीका प्रकोप, अन्नका भाव तेज और रस पदार्थोंका भाव सस्ता होता है। मवेशीके मूल्यमें वृद्धि हो जाती है तथा चारेके अभावमें मवेशीको कष्ट भी होता है। कृत्तिका नक्षत्रमें मङ्गलके होनेसे तपस्वियोंको पीड़ा, देशमें उपद्रव, अराजकता, चोरियोंकी वृद्धि, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचारका प्रचार होता है। रोहिणी नक्षत्रमें मङ्गलके रहनेसे वृक्ष और मवेशीको कष्ट, कपास और सूतके व्यापारमें लाभ, धान्यका भाव सस्ता होता है। मृगशिर नक्षत्रमें मङ्गल हो तो कपासका नाश, शेष वस्तुओंकी अच्छी उत्पत्ति होती है। इस नक्षत्रपर मङ्गलके रहनेसे देशका आर्थिक विकास होता है। उन्नतिके लिए किये गए सभी प्रयास सफल होते हैं। तिल, तिलहनकी कमी रहती है तथा भैंसोंके लिए यह मङ्गल विनाशकारक है। आर्द्रा नक्षत्रमें मङ्गलके रहनेसे जलकी वर्षा, सुभिक्ष और धान्यका भाव सस्ता होता है। पुनर्वसु नक्षत्रमें मङ्गलका रहना देशके लिए मध्यम फलदायक है। बुद्धिजीवियोंके लिए यह मङ्गल उत्तम होता है। शारीरिक श्रम करनेवालोंको मध्यम रहता है। सेनामें प्रविष्ट हुए व्यक्तियोंके अनिष्टकर होता है। पुष्य नक्षत्रमें स्थित मङ्गल चोरभय, शस्त्रभय, अग्निभय, राज्यकी शक्तिका ह्रास, रोगोंका विकास, धान्यका अभाव, मधुर पदार्थोंकी कमी एवं चोर-गुण्डोंका उत्पात अधिक होने लगता है। आश्लेषा नक्षत्रमें मङ्गलके स्थित रहनेसे शस्त्रघात, धान्यका नाश, वर्षाका अभाव, विषैले जन्तुओंका प्रकोप, नाना प्रकारकी व्याधियोंका विकास एवं हर तरहसे जनताको कष्ट होता है। मघामें मंगलके रहनेसे तिल, उड़द, मूंगका विनाश, मवेशीको कष्ट, जनतामें असन्तोष, रोगकी वृद्धि, वर्षाकी कमी, मोटे अनाजोंकी अच्छी उत्पत्ति तथा देशके पूर्वीय प्रदेशोंमें सुभिक्ष होता है। पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रोंमें मंगलके रहनेसे खण्डवृष्टि, प्रजाको पीड़ा, तेल और घोड़ोंके मूल्यमें वृद्धि, थोड़ा जल एवं मवेशीके लिए कष्ट होता है। हस्त नक्षत्रमें तृणाभाव होनेसे चारेकी कमी बराबर बनी रह जाती है, जिससे मवेशीको कष्ट होता है। चित्रामें मंगल हो तो रोग और पीड़ा, गेहूँका भाव तेज, चना, जौ और ज्वारका भाव कुछ सस्ता होता है। धर्मात्मा व्यक्तियोंको सम्मान और शक्तिकी प्राप्ति होती है। विश्वमें नानाप्रकारके संकट बढ़ते हैं। स्वाती-नक्षत्रमें मंगलके रहनेसे अनावृष्टि, विशाखामें कपास और गेहूँकी उत्पत्ति कम तथा इन वस्तुओं-का भाव महँगा होता है। अनुराधामें सुभिक्ष और पशुओंको पीड़ा, ज्येष्ठामें मंगल हो तो थोड़ा जल और रोगोंकी वृष्टि; मूल नक्षत्रमें मंगल हो तो ब्राह्मण और क्षत्रियोंको पीड़ा, तृण और धान्य-का भाव तेज; पूर्वाषाढ़ा या उत्तराषाढ़ामें मंगल हो तो अच्छी वर्षा, पृथ्वी धन-धान्यसे परिपूर्ण, दूधकी वृद्धि, मधुर पदार्थोंकी उन्नति; श्रवणमें धान्यकी साधारण उत्पत्ति, जलकी वर्षा, उड़द, मूंग आदि दाल वाले अनाजोंकी कमी तथा इनके भावमें तेजी; धनिष्ठामें मंगलके होनेसे देशकी खूब समृद्धि, सभी पदार्थोंका भाव सस्ता, देशका आर्थिक विकास, धन-जनकी वृद्धि, पूर्व और पश्चिमके सभी राज्योंमें सुभिक्ष, उत्तरके राज्योंमें एक महीनेके लिए अर्थसंकट, दक्षिणमें सुख-शान्ति, कला-कौशलका विकास, मवेशियोंकी वृद्धि और सभी प्रकारसे जनताको सुख; शतभिषामें

मंगलके होनेसे कीट, पतंग, टीडी, मूषक आदिका अधिक प्रकोप, धान्यकी अच्छी उत्पत्ति; पूर्वाभाद्रपदमें मंगलके होनेसे तिल, वस्त्र, सुपारी और नारियलके भाव तेज होते हैं, दक्षिण-भारतमें अनाजका भाव महँगा होता है; उत्तराभाद्रपदमें मंगलके होनेसे सुभिक्ष, वर्षाकी कमी और नाना प्रकारके देशवासियोंको कष्ट एवं रेवती नक्षत्रमें मंगलके होनेसे धान्यकी अच्छी उत्पत्ति, सुख, सुभिक्ष, यथेष्ट वर्षा, ऊन और कपासकी अच्छी उपज होती है। रेवती नक्षत्रका मंगल काश्मीर, हिमाचल एवं अन्य पहाड़ी प्रदेशोंके निवासियोंके लिए उत्तम होता है।

मंगलका किसी भी राशिपर वक्री होना तथा शनि और मंगलका एक ही राशिपर वक्री होना अत्यन्त अशुभ कारक होता है। जिस राशिपर उक्त ग्रह वक्री होते हैं उस राशिवाले पदार्थोंका भाव महँगा होता है तथा उन वस्तुओंकी कमी भी हो जाती है।

विंशतितमोऽध्यायः

राहुचारं प्रवक्ष्यामि क्षेमाय च सुखाय च ।
द्वादशाङ्गविद्भिः प्रोक्तं निर्ग्रन्थैस्तत्त्ववेदिभिः ॥१॥

द्वादशाङ्गके वेत्ता निर्ग्रन्थ मुनियोंके द्वारा प्रतिपादित राहुचारको, कल्याण और सुखके लिए निरूपण करता हूँ ॥१॥

श्वेतो रक्तश्च पीतश्च विवर्णः कृष्ण एव च ।
ब्राह्मण-क्षत्र-वैश्यानां विजाति-शूद्रयोर्मतः ॥२॥

राहुका श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रोंके लिए शुभाशुभ निमित्तक माने गये हैं ॥२॥

षण्मासाः प्रकृतिर्ज्ञेया ग्रहणं वार्षिकं भयम् ।
त्रयोदशानां मासानां पुररोधं समादिशेत् ॥३॥
चतुर्दशानां मासानां विन्द्याद् वाहनजं भयम् ।
अथ पञ्चदशे मासे बालानां भयमादिशेत् ॥४॥
षोडशानां तु मासानां महामन्त्रिभयं वदेत् ।
अष्टादशानां मासानां विन्द्याद् राज्ञस्ततो भयम् ॥५॥
एकोनविंशकं पर्वविंशं कृत्वा नृपं वधेत् ।
अतः परं च यत् सर्वं विन्द्यात् तत्र कलिं भुवि ॥६॥

राहुकी प्रकृति छः महीने तक, ग्रहण एक वर्ष तक भय उत्पन्न करता है, विकृत ग्रहण तेरह महीने तक नगरका अवरोध होता है, चौदह महीने तक वाहनका भय और पन्द्रह महीने तक स्त्रियोंको भय होता है। सोलह महीने तक महामन्त्रियोंको भय, अठारह महीने तक राजाओं-को भय, उन्नीस महीने या बीस महीने तक राजाओंका वध होता है। इससे अधिक समय तक फल प्राप्त हो तो पृथ्वीपर कलियुगका ही प्रभाव जानना चाहिए ॥३-६॥

पञ्चसंवत्सरं घोरं चन्द्रस्य ग्रहणं परम् ।
विग्रहं तु परं विन्द्यात् सूर्यद्वादशवार्षिकम् ॥७॥

चन्द्रग्रहणके पश्चात् पाँच वर्ष संकटके और सूर्यग्रहणके बाद बारह वर्ष संकटके होते हैं ॥७॥

यदा प्रतिपदि चन्द्रः प्रकृत्या विकृतो भवेत् ।
अथ भिन्नो विवर्णो वा तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥८॥

जब प्रतिपदा तिथिको चन्द्रमा प्रकृतिसे विकृत हो और भिन्न वर्णका हो तो ग्रहागम जानना चाहिए ॥८॥

लिखेद् रश्मिभिर्भूयो वा यदाऽऽच्छाद्येत भास्करः ।
पूर्वकाले च सन्ध्यायां ज्ञेयो राहुस्तदागमः ॥9॥

यदि सूर्य किरणोंके द्वारा स्पर्श करे अथवा पूर्वकालकी सन्ध्यामें सूर्यके द्वारा आच्छादन हो तो राहुका आगम समझना चाहिए ॥9॥

पशु-व्याल-पिशाचानां सर्वतोऽपरदक्षिणम् ।
तुल्यान्यभ्राणि वातोल्के यदा राहुस्तदाऽऽगमः ॥10॥

राहुके आगम होनेपर पशु, सर्प, पिशाच आदि दक्षिणसे चारों ओर दिखलायी पड़ते हैं, तथा समान मेघ, वायु और उल्कापात भी होता है ॥10॥

सन्ध्यायां तु यदा शीतं अपरेसासनं ततः ।
सूर्यः पाण्डुश्चला भूमिस्तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥11॥

जब सन्ध्यामें शीत हो, अन्य समयमें उष्णता हो, सूर्य पाण्डुवर्ण हो, भूमि चल हो तो ग्रहागम समझना चाहिए ॥11॥

सरांसि सरितो वृक्षा वल्ल्यो गुल्म-लतावनम् ।
[1]सौम्यभ्रांश्चवले वृक्षा राहुर्ज्ञेयस्तदाऽऽगमः ॥12॥

तालाब, नदी, वृक्ष, लता, वन, सौम्य कान्तिवाले हों और वृक्ष चंचल हो तो राहुका आगम समझना चाहिए ॥12॥

छादयेच्चन्द्र-सूर्यौ च यदा मेघा सिताम्बरा[2] ।
सन्ध्यायां च तदा ज्ञेयं राहोरागमनं ध्रुवम् ॥13॥

जब सन्ध्याकालमें आकाशमें मेघ चन्द्र और सूर्यको आच्छादित करदें, तब राहुका आगमन समझना चाहिए ॥13॥

एतान्येव तु लिङ्गानि भयं कुर्युरपर्वणि ।
वर्षासु वर्षदानि स्युर्भद्रबाहुवचो यथा ॥14॥

उक्त चिह्न अपर्व—पूर्णिमा और अमावास्यासे भिन्नकालमें भय उत्पन्न करते हैं। वर्षा ऋतु वर्षा करनेवाले होते हैं, ऐसा भद्रबाहुस्वामीका वचन है ॥14॥

शुक्लपक्षे द्वितीयायां सोमशृङ्गं [3]तदा प्रभम् ।
स्फुटिताग्रं द्विधा वाऽपि विन्द्याद् राहुस्तदाऽऽगमम् ॥15॥

जब शुक्ल पक्षकी द्वितीयामें चन्द्रशृंग शुभ हो अथवा उस शृंगके टूटकर दो हिस्से दिखलायी पड़ते हों, तब राहुका आगमन समझना चाहिए ॥15॥

चन्द्रस्य चोत्तरा कोटी [4]द्वे शृङ्गे दृश्यते यदा ।
धूम्रो विवर्णो ज्वलितस्तदा राहोर्ध्रुवागमः ॥16॥

जब चन्द्रमाकी उत्तर कोटिमें दो शृंग दिखलायी पड़े और चन्द्र धूम्र, विकृत वर्ण और ज्वलित दिखलायी पड़े, उस समय निश्चयसे राहुका आगम जानना चाहिए ॥16॥

1. सौम्यप्रभा मु० । 2. सिताम्बरे मु० । 3. यदा शुभम् मु० । 4. द्विशृङ्गं मु० ।

उदयास्तमने भूयो यदा यश्चोदयो रवौ ।
इन्द्रो वा यदि दृश्येत तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥१७॥

जब उदय या अस्तकालमें पुनः पुनः सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी पड़ें तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥१७॥

कबन्धा-परिघा-मेघा धूम-रक्तपट-ध्वजाः ।
उद्गच्छमाने दृश्यन्ते सूर्ये राहोस्तदाऽऽगमः ॥१८॥

जब मेघ कबन्ध, परिघके आकारके हों तथा सूर्यमें ध्वजा, धूम और रक्त वर्णकी उच्छिद्यमान दिखलायी पड़े तब राहुका आगमन समझना चाहिए ॥१८॥

[1]मार्गवान् महिषाकारः शकटस्थो यदा शशी ।
उद्गच्छन् दृश्यतेऽष्टम्यां तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥१९॥

जब अष्टमीको चन्द्रमा मार्गी, महिषाकार, रोहिणी नक्षत्रमें फटा-टूटा-सा दिखलायी पड़े तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥१९॥

सिंह-मेषो-ष्ट्र-संकाशः परिवेषो यदा शशी ।
अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥२०॥

जब शुक्लपक्षकी अष्टमीको चन्द्रमाका परिवेष सिंह, मेष और ऊँटके समान मालूम पड़े, तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥२०॥

श्वेतके सरसङ्काशे रक्त-पीतोऽष्टमो यदा ।
यदा चन्द्रः प्रदृश्येत तदा ब्रूयाद् ग्रहागमः ॥२१॥

यदि अष्टमीमें चन्द्रमा श्वेतवर्ण, केसररंग या रक्त-पीत दिखलायी पड़े तो ग्रहागम कहना चाहिए ॥२१॥

उत्तरतो दिशः श्वेतः पूर्वतो रक्तकेसरैः ।
दक्षिणतोऽथ पीताभः प्रतीच्यां कृष्णकेसरः ॥२२॥
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि क्षिप्रं चन्द्रः प्रमुच्यते ।
[2]परिवेषो दिनं चन्द्रे विमर्देत विमुञ्चति ॥२३॥

उत्तरसे दिशा श्वेत, पूर्वसे रक्त-केसर, दक्षिणसे पीतवर्ण और पश्चिमसे कृष्ण-पीत हो तो राहुके द्वारा चन्द्रका ग्रहण किए जाने पर भी शीघ्र ही छोड़ दिया जाता है। चन्द्रमामें दिनका परिवेष होनेपर राहु द्वारा विमर्दित होनेपर भी चन्द्रमा शीघ्र ही छोड़ा जाता है ॥२२-२३॥

द्वितीयायां यदा चन्द्रः श्वेतवर्णः प्रकाशते ।
उद्गच्छमानः सोमो वा तदा गृह्येत राहुणा ॥२४॥

यदि चन्द्रमा द्वितीयामें श्वेतवर्णका शोभित हो अथवा उखड़ता हुआ चन्द्रमा हो तो वह राहुके द्वारा ग्रहण किया जाता है ॥२४॥

---

१. कबन्धो मु० । २. -विष्टो मु० ।

तृतीयायां यदा सोमो विवर्णो दृश्यते यदि ।
पूर्वरात्रे तदा राहुः पौर्णमास्यामुपक्रमेत् ॥२५॥

यदि तृतीयामें चन्द्रमा विवर्ण—विकृतवर्ण दिखलायी पड़े तो पूर्णमासीकी पूर्णरात्रिमें राहु द्वारा ग्रस्त होता है अर्थात् ग्रहण होता है ॥२५॥

अष्टम्यां तु यदा चन्द्रो दृश्यते रुधिरप्रभः ।
पौर्णमास्यां तदा राहुरर्धरात्रमुपक्रमेत् ॥२६॥

यदि अष्टमीको चन्द्रमा रुधिरके समान लाल प्रभाका दिखलायी पड़े तो पूर्णमासीकी अर्धरात्रिमें राहु द्वारा ग्रस्त होता है—ग्राह्य होता है ॥२६॥

नवम्यां तु यदा चन्द्रः परिवेश्य तु सुप्रभः ।
अर्धरात्रमुपक्रम्य तदा राहुमुपक्रमेत् ॥२७॥

यदि नवमी तिथिको सुप्रभावाले चन्द्रमाका परिवेप दिखलायी पड़े तो पूर्णमासीमें अर्धरात्रिके अनन्तर राहु द्वारा चन्द्र ग्रस्त होता है अर्थात् अर्धरात्रिके पश्चात् ग्राह्य होता है ॥२७॥

कृष्णप्रभो यदा सोमो दशम्यां परिविष्यते ।
पश्चाद् रात्र[1] तदा राहुः सोमं गृह्णात्यसंशयः ॥२८॥

यदि दशमी तिथिको कृष्णवर्णकी प्रभावाले चन्द्रमाका परिवेप दिखलायी पड़े तो पूर्णमासीको चन्द्रमा राहु द्वारा निरसन्देह आधीरातके पश्चात् ग्रहण किया जाता है ॥२८॥

अष्टम्यां तु यदा सोमं श्वेताभ्रं परिवेषते ।
तदा परिघं वै राहुर्विमुञ्चति न संशयः ॥२९॥

अष्टमी तिथिको श्वेतवर्णकी आभाका चन्द्रमाका परिवेप दिखलायी पड़े तो राहु परिघको छोड़ता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥२९॥

कनकाभो यदाऽष्टम्यां परिवेषेण चन्द्रमाः ।
अर्धरात्रं तदा गत्वा[2] राहुरुद्गिरते पुनः ॥३०॥

यदि अष्टमी तिथिको स्वर्णके समान कान्तिवाले चन्द्रमाका परिवेप दिखलायी पड़े तो पूर्णमासीको राहु अर्धग्रास करके छोड़ देता है तथा पुनः उसे निगल जाता है ॥३०॥

परिवेषोदयोऽष्टम्यां चन्द्रमा रुधिरप्रभः ।
सर्वग्रासं तदा कृत्वा [3]राहुस्तश्च विमुञ्चति ॥३१॥

अष्टमी तिथिको परिवेपमें ही चन्द्रमाका उदय हो और चन्द्रमा रुधिरके समान कान्तिवाला हो तो राहु पूर्णमासी तिथिको चन्द्रमाका सर्वग्रास करके छोड़ता है ॥३१॥

[4]कृष्णपीता यदा कोटिर्दक्षिणः स्याद्ग्रहः सितः ।
पीतो यदाऽष्टम्यां कोटी तदा श्वेतं ग्रहं वदेत् ॥३२॥

जब अष्टमी तिथिको चन्द्रशृङ्गकी कोटि कृष्ण-पीत होती है तो ग्रहण श्वेत होता है तथा पीली कोटि—शृङ्ग होनेपर भी श्वेत ग्रहण होता है ॥३२॥

---

१. -रात्रं मु० । २. कृत्वा मु० । ३. -श्चन्द्रं मु० । ४. रक्त मु० ।

दक्षिणा मेचकाभा तु कपोतग्रहमादिशेत् ।
कपोतमेचकाभा तु कोटी ग्रहमुपानयेत् ॥३३॥

यदि चन्द्रमाकी दक्षिण कोटि—दक्षिण शृङ्ग मेचक आभा हो तो कपोतरंगका ग्रहण होता है और कपोत-मेचक आभा होनेपर ग्रहण का भी वैसा रंग होता है ॥३३॥

[1]पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणः रुधिरप्रभः ।
कपोतग्रहणं विन्यात् पूर्वं पश्चात् सितप्रभः ॥३४॥

यदि अष्टमी तिथिको चन्द्रमाकी उत्तरकी कोटि—किनारा लाल हो और दक्षिणका किनारा रुधिर जैसा हो तो कपोतरंगके ग्रहणको सूचना समझनी चाहिए तथा अन्तमें श्वेतप्रभा समझनी चाहिए ॥३४॥

पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणो रुधिरप्रभः ।
कपोतग्रहणं विन्द्याद् ग्रहं पश्चात् सितप्रभम् ॥३५॥

यदि चन्द्रमाका उत्तरी किनारा पीला और दक्षिणी रुधिरके समान हो तो कपोत रंगका ग्रहण समझना चाहिए तथा अन्तिम समयमें श्वेतप्रभा समझनी चाहिए॥३५॥

यतोऽभ्रस्तनितं विन्द्यात् मारुतं करकाशनी ।
रुतं वा श्रूयते किञ्चित् तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३६॥

जब बादल गर्जना करे, वायु, ओले और बिजली गिरे तथा किसी प्रकारका शब्द सुनाई पड़े तो ग्रहागम होता है ॥३६॥

मन्दक्षीरा यदा वृक्षाः सर्वदिक् कलुषायते[2] ।
क्रीडते च [3]यदा बालस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३७॥

जब वृक्ष अल्पक्षीर वाले हों, सभी दिशाएँ कलुषित दिखलायी पड़ें, इस प्रकारके समयमें बालक खेलते हों तो उस समय ग्रहागम जानना चाहिए। यहाँ सर्वत्र ग्रहसे तात्पर्य ग्रहण-से है ॥३७॥

ऊर्ध्वं प्रस्पन्दते चन्द्रश्चित्रः संपरिवेष्यते ।
कुरुते मण्डलं स्पष्टस्तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३८॥

यदि चन्द्रमा ऊपरकी ओर स्पन्दित होता हो, विचित्र प्रकारके परिवेषसे वेष्टित, स्पष्ट मंडलाकार हो तो ग्रहणका आगमन समझना चाहिए ॥३८॥

यतो विषयघातैश्च यतश्च पशु-पक्षिणः ।
तिष्ठन्ति मण्डलायन्ते ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥३९॥

यदि देशका आघात हो और पशु-पक्षी मण्डलाकार होकर स्थित हों तो ग्रहणका आगमन समझना चाहिए ॥३९॥

पाण्डुर्वा द्वावलीढो वा चन्द्रमा यदि दृश्यते ।
[5]व्याधितो हीनरश्मिश्च यदा तत्त्वे निवेशनम् ॥४०॥

---

१ रक्तोत्तरा सितकोटिर्दक्षिणा स्याद् यदाष्टमी । कपोतग्रहमाख्याति पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥ मु० ।
२. भवेत् मु० । ३. यतो मु० । ४. -श्चापतपः मु० । ५. व्यथितो मु० ।

यदि चन्द्रमा पाण्डु या द्विगुणित चबाया हुआ दिखलाई पड़े, व्यथित और हीन किरण मालूम पड़े तो चन्द्रग्रहण होता है ॥४०॥

[1]ततः प्रबध्यते वेपस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ।
यतो वा मुच्यते वेपस्ततश्चन्द्रो विमुच्यते ॥४१॥

जिस परिवेपसे चन्द्रमा प्रबाधित हो, उससे ग्रहण होता है और जिससे चन्द्रमा छोड़ा जाय उससे चन्द्रमा मुक्त होता है ॥४१॥

गृहीतो विप्यते चन्द्रो वेपमावेव विप्यते ।
यदा तदा विजानीयात् षण्मासाद्ग्रहणं पुनः ॥४२॥

जब चन्द्रग्रहणके समय चन्द्रमा अपना फटा-टूटा वेप प्रकट करे तो छः महीने पश्चात् पुनः चन्द्रग्रहण समझना चाहिए ॥४२॥

[2]प्रत्युद्गच्छति आदित्यं यदा गृह्येत चन्द्रमाः ।
भयं तदा विजानीयात् ब्राह्मणानां[3] विशेषतः ॥४३॥

सूर्यकी ओर जाते हुए चन्द्रमाका ग्रहण हो तो ब्राह्मणोंके लिए भय समझना चाहिए ॥४३॥

[4]प्रातरासेविते चन्द्रो दृश्यते कनकप्रभा ।
भयं तदा विजानीयादमात्यानां विशेषतः ॥४४॥

जब प्रातःकालमें चन्द्रमा स्वर्णकी आभावाला मालूम हो तो भय होता है और विशेषरूपसे अमात्योंके लिए भय—आतंक होता है ॥४४॥

मध्याह्ने तु यदा चन्द्रो गृह्यते कनकप्रभः ।
क्षत्रियाणां नृपाणां च तदा भयमुपस्थितम् ॥४५॥

मध्याह्नमें यदि चन्द्रमा कनकप्रभ मालूम हो तो क्षत्रिय और राजाओंके लिए भय होता है ॥४५॥

[5]यदा मध्यनिशायां तु राहुणा गृह्यते शशी ।
भयं तदा विजानीयात् वैश्यानां समुपस्थितम् ॥४६॥

जब मध्य रात्रिमें राहु चन्द्रमाको ग्रस्त करता है तब वैश्योंके लिए भय होता है ॥४६॥

नीचावलम्बी सोमस्तु यदा गृह्येत राहुणा ।
सूर्पाकारं तदाऽऽनर्त्तं मरुकच्छं च पीडयेत् ॥४७॥

नीच राशिस्थ चन्द्रमा—वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमाको जब राहु ग्रस्त करता है तो सूर्पाकार, आनर्त्त, मरु और कच्छ देशोंको पीड़ित करता है ॥४७॥

अल्पचन्द्रं च द्वीपाश्च म्लेच्छाः पूर्वापरा द्विजाः ।
दीक्षिताः क्षत्रियामात्याः शूद्राः पीडामवाप्नुयुः ॥४८॥

यदि अल्पचन्द्रका ग्रहण हो तो श्वीन आदि द्वीप, म्लेच्छ, पूर्व-पश्चिम निवासी द्विज, मुनि-साधु, क्षत्रिय, अमात्य और शूद्र पीड़ाको प्राप्त होते हैं ॥४८॥

---

१. यतः मु० । २. प्रत्युतमुच्यम् मु० । ३. उपस्थितम् मु० । ४. प्रातरासो यदा सोमो गृह्यते राहुणाऽऽवृतः मु० । ५. व्यावृते यदि मध्याह्ने (मध्याह्ने) मु० ।

यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्रं ततो यात्रां निवेशयेत् ।
वृत्ते निवर्तते यात्रा यतो तस्मान्महद् भयम् ॥४६॥

जब राहु द्वारा चन्द्रग्रहण होता है तो यात्राका विनाश समझना चाहिए। चन्द्रग्रहणके दिन यात्रा करनेवाला व्यक्ति यों ही वापस लौट आता है, अतः यात्रामें भय है ॥४६॥

गृह्णीयादेकमासेन चन्द्र-सूर्यौ यदा तदा ।
रुधिरवर्णसंसक्ता सङ्ग्रामे जायते मही ॥५०॥

जब एक ही महीनेमें चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हो तो पृथ्वीपर युद्ध होता है और पृथ्वी रक्त-रंजित हो जाती है ॥५०॥

चौराश्च यायिनो म्लेच्छा घ्नन्ति साधूननायकान् ।
विरुध्यन्ते गणाश्चापि नृपाश्च विषये चराः ॥५१॥

उक्त दोनों ग्रहणोंके होनेपर चोर, यायी, म्लेच्छ, साधु और नेताओंकी हत्या करते हैं तथा देश-विशेषमें दूत, राजा और गणोंको रोक लिया जाता है ॥ ५१ ॥

[1]यतोत्साहं तु हत्वा तु राजानं निष्क्रमते शशी ।
तदा क्षेमं सुभिक्षञ्च मन्दरोगांश्च निर्दिशेत् ॥५२॥

चन्द्रमा पहले राहुको परास्त कर निकल आवे तो क्षेम, सुभिक्ष तथा रोगोंकी मन्दता होती है ॥५२॥

पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा राहुः निक्रमते शशी ।
[2]रूक्षो वा हीनरश्मिर्वा पूर्वो राजा विनश्यति ॥५३॥

जब राहु पूर्व दिशामें चन्द्रमाका भेदनकर निकले और चन्द्रमा रूक्ष तथा हीन किरण मालूम पड़े तो पूर्व देशके राजाका विनाश होता है ॥५३॥

दक्षिणाभेदने गर्भे दाक्षिणात्यांश्च पीडयेत् ।
उत्तराभेदने चैव नाविकांश्च जिघांसति ॥५४॥

दक्षिण दिशामें गर्भके भेदन होनेसे दाक्षिणात्य—दक्षिण निवासियोंको कष्ट और उत्तर गर्भका भेदन होनेसे नाविकोंका घात होता है ॥५४॥

निश्चलः सुप्रभः कान्तो यदा निर्याति चन्द्रमाः ।
राज्ञां विजय-लाभाय तदा ज्ञेयः शिवङ्करः ॥५५॥

निश्चल और सुन्दर कान्तिवाला चन्द्रमा जब चन्द्रग्रहणसे निकलता है तो राजाओंको जयलाभ और राष्ट्रमें सर्वशान्ति होती है ॥५५॥

एतान्येव तु लिङ्गानि चन्द्रे[3] ज्ञेयानि धीमता ।
कृष्णपक्षे यदा चन्द्रः शुभो वा यदि वाऽशुभः ॥५६॥

उपर्युक्त चिह्नोंको चन्द्रमामें अवगतकर बुद्धिमान् व्यक्तियोंको शुभाशुभ जानना

१. एवं हन्तुं यदा हत्वा राजानः मु० । रूक्षो वा हीनरश्मिर्वा पूर्वो राजा विनश्यति । २. श्लोक संख्या ५२ मुद्रित प्रतिमें नहीं है । ३. सूर्ये मु० ।

चाहिए। जब चन्द्रमा कृष्णपक्षमें शुभ या अशुभ होता है तो उसके अनुसार फल घटित होता है ॥५६॥

उत्पाताश्च निमित्तानि शकुन - लक्षणानि च ।
पर्वकाले यदा सन्ति तदा राहोर्ध्रुवागमः ॥५७॥

जब पूर्वकालमें उत्पात, निमित्त, शकुन और लक्षण घटित होते हैं, तब निश्चय राहुका आगमन—ग्रहण होता है ॥५७॥

रक्तो राहुः शशी सूर्यो हन्युः क्षत्रान् सितो द्विजान् ।
पीतो वैश्यान् कृष्णः[1] शूद्रान् द्विवर्णांस्तु जिघांसति ॥५८॥

जब लाल रंगके राहु, सूर्य और चन्द्रमा हों तो क्षत्रियोंका हनन, श्वेत वर्णके होनेपर द्विजोंका हनन, पीतवर्णके होनेपर वैश्योंका हनन और कृष्णवर्णके होनेपर शूद्र और वर्णसंकरों का हनन होता है ॥५८॥

चन्द्रमाः पीडितो हन्ति नक्षत्रं यस्य यद्यतः ।
रूक्षः पापनिमित्तश्च विकृतश्च विनिर्गतः ॥५९॥

रूक्ष, पाप निमित्तक, विकृत और पीड़ित चन्द्रमा निकल कर जिस नक्षत्रका घात करता है, उस नक्षत्रवालोंका अशुभ होता है ॥५९॥

प्रसन्नः साधुकान्तश्च दृश्यते सुप्रभः शशी ।
यदा तदा नृपान् हन्ति प्रजां पीतः सुवर्चसा ॥६०॥

जब ग्रहणसे छूटा हुआ चन्द्रमा प्रसन्न, सुन्दर कान्ति और सुप्रभावाला दिखलायी पड़े तो राजाओंका घात करता है। पीत और तेजस्वी दिखलायी पड़े तो प्रजाका घात करता है ॥६०॥

राज्ञो राहुः प्रवासे यानि लिङ्गान्यस्य पर्वणि ।
यदा गच्छेत् प्रशस्तो वा राजा राष्ट्रविनाशनः ॥६१॥

पर्वकालमें—पूर्णिमाको अस्त होनेपर राहुके जो चिह्न प्रकट हों, उनमें वह प्रशस्त दिखलायी पड़े तो राजा और राष्ट्र का विनाश होता है ॥६१॥

यतो राहुप्रमथने ततो यात्रा न सिध्यति ।
प्रशस्ताः शकुना यत्र सुनिमित्ता सुयोपिताः[2] ॥६२॥

शुभ शकुन और श्रेष्ठ निमित्तोंके होनेपर भी राहुके प्रमथन—अस्थिर अवस्थामें रहनेपर यात्रा सफल नहीं होती है ॥६२॥

राहुश्च चन्द्रश्च तथैव सूर्यो यदा न स्युः सर्वे परस्परघ्नाः ।
काले च राहुर्भजते रवीन्द्वोः तदा सुभिक्षं विजयश्च राज्ञः ॥६३॥

राहु, सूर्य और चन्द्र परस्पर घात न करे तथा समयपर सूर्य और चन्द्रमाका राहुयोग करे तो राजाओंको विजय और राष्ट्रमें सुभिक्ष होते हैं ॥६३॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते संहिते राहुचारं नाम विंशतितमोऽध्यायः ॥२०॥

---

१. समः मु० । २. -योजिताः मु० ।

विवेचन—द्वादश राशियोंके भ्रमणानुसार राहुफल—जिस वर्ष राहु मीन राशिका रहता है, उस वर्ष बिजलीका भय रहता है। सैकड़ों व्यक्तियोंकी मृत्यु बिजलीके गिरनेसे होती है। अन्नकी कमी रहनेसे प्रजाको कष्ट होता है। अन्नमें दूना-तिगुना लाभ होता है। एक वर्ष तक दुर्भिक्ष रहता है, तेरहवें महीनेमें सुभिक्ष होता है। देशमें गृहकलह तथा प्रत्येक परिवारमें अशान्ति बनी रहती है। यह मीन राशिका राहु बंगाल, उड़ीसा, उत्तरीय बिहार, आसामको छोड़ अवशेष सभी प्रदेशोंके लिए दुर्भिक्षकारक होता है। अन्नकी कमी अधिक रहती है, जिससे प्रजाको भुखमरीका कष्ट तो सहन करना ही पड़ता है साथ ही आपसमें संघर्ष और लूट-पाट होनेके कारण अशान्ति रहती है। मीन राशिके राहुके साथ शनि भी हो तो निश्चयतः भारतको दुर्भिक्ष का सामना करना पड़ता है। दाने-दानेके लिए मुँहताज होना पड़ता है। जो अन्नका संग्रह करके रखते हैं, उन्हें भी कष्ट उठाना पड़ता है। कुम्भ राशिमें राहु हो तो सन, सूत, कपास, जूट आदि के सञ्चयमें लाभ रहता है। राहुके साथ मंगल हो तो फिर जूटके व्यापारमें तिगुना-चौगुना होता है। व्यापारिक सम्बन्ध भी सभी लोगोंके बढ़ते जाते हैं। कपास, रूई, सूत, वस्त्र, जूट, सन, पाट तथा पाटादिसे बनी वस्तुओंके मूल्यमें महँगी आती है। कुम्भ राशिमें राहु और मंगलके आरम्भ होते ही छः महीनों तक उक्त वस्तुओंका संग्रह करना चाहिए। सातवें महीनेमें बेच देनेसे लाभ रहता है। कुम्भ राशिके राहुमें वर्षा साधारण होती है, फसल भी मध्यम होती है तथा धान्यके व्यापारमें भी लाभ होता है। खाद्यान्नोंकी कमी राजस्थान, बम्बई, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसामें होती है। बंगालमें भी खाद्यान्नोंकी कमी आती है, पर दुष्कालकी स्थिति नहीं आने पाती। पंजाब, बिहार और मध्य भारतमें उत्तम फसल उपजती है। भारतमें कुम्भ राशिका राहु खण्डवृष्टि भी करता है। शनिके साथ राहु कुम्भ राशिमें स्थित रहे तो प्रजाके लिए अत्यन्त कष्टकारक हो जाता है। दुर्भिक्षके साथ खून-खराबियाँ भी कराता है। यह संघर्ष और युद्धका कारण होता है। विदेशोंसे सम्पर्क भी बिगड़ जाता है, सन्धियोंका महत्त्व समाप्त हो जाता है। जापान और बर्मामें खाद्यान्नकी कमी नहीं रहती है। चीनके साथ उक्त राहुकी स्थितिमें भारतका मैत्री सम्बन्ध दृढ़ होता है। मकर राशिमें राहुके रहनेसे सूत, कपास, रूई, वस्त्र, जूट, सन, पाट आदिका संग्रह तीन महीनों तक करना चाहिए। चौथे महीनेमें उक्त वस्तुओंके बेचनेसे तिगुना लाभ होता है। ऊनी, रेशमी और सूती वस्त्रोंमें पूरा लाभ होता है। मकरका राहु गुड़में हानि कराता है तथा चीनी और चीनीसे निर्मित वस्तुओंके व्यापारमें भी पर्याप्त हानि होती है। खाद्यान्नकी स्थिति कुछ सुधर जाती है, पर कुम्भ और मकर राशिके राहुमें खाद्यान्नोंकी कमी रहती है। मकर राशिके राहुके साथ शनि, मंगल या सूर्यके रहनेसे वस्त्र, जूट और कपास या सूतमें पंचगुना लाभ होता है। वर्षा भी साधारण ही हो पाती है, फसल साधारण रह जाती है, जिससे देशमें अन्नका संकट बना रहता है। मध्यभारत और राजस्थानमें अन्नकी कमी रहती है, जिससे वहाँके निवासियोंके लिए कष्ट होता है। धनु राशिके राहु में मवेशीके व्यापारमें अधिक लाभ होता है। घोड़ा, खच्चर, हाथी एवं सवारीके सामान—मोटर, साईकिल, रिक्सा आदिमें भी अधिक लाभ होता है। जो व्यक्ति मवेशीका संचय तीन महीनों तक करके चौथे महीनेमें मवेशीको बेचता है, उसे चौगुना तक लाभ होता है। मशीनके वे पार्टस् जिनसे मशीनका सीधा सम्बन्ध रहता है, जिनके बिना मशीनका चलना कठिन ही नहीं, असंभव है, ऐसे पार्टसोंके व्यापारमें लाभ होता है। जनसाधारणमें ईर्ष्या, उद्वेग और वैमनस्यका प्रचार होता है।

वृश्चिक राशिमें राहु मंगलके साथ स्थित हो तो जूट और वस्त्रके व्यवसायमें अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशिमें राहुके आरंभ होनेके पाँच महीनों तक वस्तुओंका संग्रह करके छठवें महीनेमें वस्तुओंके बेचनेसे दुगुना या तिगुना लाभ होता है। खाद्यान्नोंकी उत्पत्ति अच्छी होती है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। आसाम, बंगाल, बिहार, पंजाब, पश्चिमी

पाकिस्तान, जापान, अमेरिका, चीनमें उत्तम फसल उत्पन्न होती है। अनाजके व्यापारमें साधारण लाभ होता है। दक्षिण भारतमें फसल उत्तम नहीं होती है। नारियल, सुपाड़ी और आम, इमली आदि फलोंकी फसल साधारण होती है। वस्त्र-व्यवसायके लिए उक्त प्रकारका राहु अच्छा होता है। तुलाराशिमें राहु स्थित हो तो दुर्भिक्ष पड़ता है, खण्डवृष्टि होती है। अन्न, घी, तैल, गुड़, चीनी आदि समस्त खाद्य पदार्थोंकी कमी रहती है। मवेशीको भी कष्ट होता है तथा मवेशीका मूल्य घट जाता है। यदि तुला राशिमें राहु उसी दिन आवे, जिस दिन तुलाकी संक्रान्ति हुई हो, तो भयंकर दुष्काल पड़ता है। देशके सभी राज्यों और प्रदेशोंमें खाद्यान्नोंकी कमी पड़ जाती है। तुलाराशिके राहुके साथ शनि, मंगलका रहना और अनिष्टकर होता है। पंजाब, बंगाल और आसाममें अन्नकी कमी रहती है, दुष्कालके कारण सहस्रों व्यक्ति भूखसे छटपटाकर अपने प्राण छोड़ देते हैं। कन्याराशिका राहु होनेसे विश्वमें शान्ति होती है। अन्न और वस्त्रका अभाव दूर हो जाता है। लौंग, पीपल, इलायची और काली मिर्चके व्यवसायमें मनमाना लाभ होता है। जब कन्या राशिका राहु आरंभ हो उस समयसे लेकर पाँच महीनों तक उक्त पदार्थोंका संग्रह करना चाहिए, पश्चात् छठवें महीनेमें उन पदार्थोंको बेच देनेसे अधिक लाभ होता है। चीनी, गुड़, घी और नमकके व्यवसायमें भी साधारण लाभ होता है। सोना, चाँदीके व्यापारमें कन्याके राहुके छः महीनेके पश्चात् लाभ होता है। जापान, जर्मनी, अमेरिका, इंगलैण्ड, चीन, रूस, मिस्र, इटली आदि देशोंमें खाद्यान्नोंकी साधारण कमी होती है। बर्मामें भी अन्नकी कमी हो जाती है। सिंह राशिका राहु होनेसे सुभिक्ष होता है। सोंठ, धनिया, हल्दी, काली मिर्च, सेंधा नमक, पीपल आदि वस्तुओंके व्यापारमें लाभ होता है। अन्नके व्यवसायमें हानि होती है। गुड़, चीनी और घी के व्यवसायमें समर्घता रहती है। तेलका भाव तेज हो जाता है। सिंहका राहु राजनैतिक स्थितिको सुदृढ़ करता है। देशमें नये भाव और नये विचारोंकी प्रगति होती है। कलाकारोंको सम्मान प्राप्त होता है तथा कलाका सर्वाङ्गीण विकास होता है। साहित्यकी उन्नति होती है। सभी देश शिक्षा और संस्कृतिमें प्रगति करते हैं। कर्क राशिके राहुमें सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, गेहूँ, चना, जौ, ज्वार, बाजरा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं तथा सुभिक्ष और सुवृष्टि होती है। जनतामें सुख-शान्ति रहती है। यदि कर्क राशिके राहुके साथ गुरु हो तो राजनैतिक प्रगति होती है। देश का स्थान अन्य देशोंके बीच श्रेष्ठ माना जाता है। पंजाब, बंगाल, बिहार, बम्बई, मध्यभारत, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और हिमांचल प्रदेशके लिए यह राहु बहुत अच्छा है, इन स्थानोंमें वर्षा और फसल दोनों ही उत्तम होती हैं। आसाममें बाढ़ आनेके कारण अनेक प्रकारकी कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जूटके व्यापारमें साधारण लाभ होता है। जापानमें फसल बहुत अच्छी होती हैं; किन्तु भूकम्प आनेका भय सर्वदा बना रहता है। कर्क राशिका राहु चीन और रूसके लिए उत्तम नहीं है, अवशेष सभी राष्ट्रोंके लिए उत्तम है। मिथुन राशिके राहुमें भी सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। अन्नादि पदार्थोंकी उत्पत्ति भी अच्छी होती है। तथा सभी देशोंमें सुकाल रहता है। वृषराशिके राहुमें अन्नकी कुछ कमी पड़ती है। घी, तेल, तिलहन, चन्दन, केशर, कस्तूरी, गेहूँ, जौ, चना, चावल, ज्वार, मक्का, बाजरा, उड़द, अरहर, मूँग, गुड़, चीनी आदि पदार्थोंके संचयमें लाभ होता है। मेष राशिके राहुमें यदि एक ही मासमें सूर्य और चन्द्रग्रहण हो तो निश्चयतः दुर्भिक्ष पड़ता है। बंगाल, बिहार, आसाम और उत्तर प्रदेशमें उत्तम वर्षा होती है, दक्षिण भारतमें मध्यम वर्षा तथा अवशेष प्रदेशोंमें वर्षाका अभाव या अल्प वर्षा होती है। यदि राहुके साथ शनि और मंगल हों तो वर्षाका अभाव रहता है। अनाजकी उत्पत्ति भी साधारण ही होती है। देशमें खाद्यान्न संकट होनेसे कुछ अशान्ति रहती है। निम्न श्रेणीके व्यक्तियोंको अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं।

राहु द्वारा होनेवाले चन्द्रग्रहणका फल—मेष राशिमें चन्द्रग्रहण हो तो मनुष्योंको पीड़ा होती है। पहाड़ी प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, दक्षिणभारत, महाराष्ट्र, आन्ध्र, वर्मा आदि प्रदेशोंके निवासियोंको अनेक प्रकारकी बीमारियोंका सामना करना पड़ता है। मेषराशिके ग्रहणमें शूद्र और वर्णसंकरोंको अधिक कष्ट होता है। लाल रंगके पदार्थोंमें लाभ होता है। वृष राशिके ग्रहणमें गोप, मवेशी, पथिक, श्रीमन्त, धनिक और श्रेष्ठ व्यक्तियोंको कष्ट होता है। इस ग्रहणसे फसल अच्छी होती है, वर्षा भी मध्यम ही होती है। खनिज पदार्थ और मशालोंकी उत्पत्ति अधिक होती है। गायोंकी संख्या घटती है, जिससे घी, दूधकी कमी होने लगती है। राजनैतिक दृष्टिसे उथल-पुथल होते हैं। ग्रहण पड़नेके एक महीनेके उपरान्त नेताओंमें मनमुटाव आरम्भ होता है तथा सर्व प्रदेशोंके मन्त्रिमण्डलोंमें परिवर्तन होता है। मिथुन राशि पर चन्द्रग्रहणके साथ यदि सूर्यग्रहण भी हो तो कलाकारों, शिल्पियों, वेश्याओं, ज्योतिषियों एवं इसी प्रकारके अन्य व्यवसायियोंको शारीरिक कष्ट होता है। इटली, मिस्र, ईरान आदि देशोंमें तथा विशेषतः मुस्लिम राष्ट्रोंमें अनेक प्रकारसे अशान्ति रहती है। वहाँ अन्न और वस्त्रकी कमी रहती है तथा गृहकलह भी उत्पन्न होती है। उद्योग-धन्धोंमें रुकावट उत्पन्न होती है। वर्मा, चीन, जापान, जर्मन, अमेरिका, इंगलैण्ड और रूसमें शान्ति रहती है। यद्यपि इन देशोंमें भी अर्थसंकट बढ़ता हुआ दिखलायी पड़ता है, फिर भी शान्ति रहती है। भारतके लिए भी उक्त राशि पर दोनों ग्रहणोंका होना अहितकारक होता है। कर्क राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो गर्दभ और अहीरोंको कष्ट होता है। कबाली, नागा तथा अन्य पहाड़ी जातिके व्यक्तियोंके लिए भी पर्याप्त कष्ट होता है। नाना प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं तथा आर्थिक संकट भी उनके सामने प्रस्तुत रहता है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण भी हो तो क्षत्रियोंको कष्ट होता है। सैनिक तथा अस्त्रसे व्यवसाय करनेवाले व्यक्तियोंको पीड़ा होती है। चोर और डाकुओंके लिए अत्यन्त भय होता है। सिंहराशिके ग्रहणमें वनवासी दुःखी होते हैं, राजा और साहूकारोंका धन क्षय होता है। कृषकोंको भी मानसिक चिन्ताएँ रहती हैं। फसल अच्छी नहीं होती तथा फसलमें नाना प्रकारके रोग लग जाते हैं। टिड्डी, मूसोंका भय अधिक रहता है। कठोर कार्योंसे आजीविका अर्जन करनेवालोंको लाभ होता है। व्यवसायियोंको हानि उठानी पड़ती है। कन्या राशिके ग्रहणमें शिल्पियों, कवियों, साहित्यकारों, गायकों एवं अन्य ललित कलाकारोंको पर्याप्त कष्ट रहता है। आर्थिक संकट रहनेसे उक्त प्रकारके व्यवसायियोंको कष्ट होता है। छोटे-छोटे दुकानदारोंको भी अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। बंगाल, आसाम, बिहार, पंजाब, उत्तरप्रदेश, बम्बई, दिल्ली, मद्रास और मध्यप्रदेशमें फसल साधारण होती है। आसाममें अन्नकी कमी रहती है तथा पंजाबमें भी अन्नका भाव महँगा रहता है। यदि कन्या राशि पर चन्द्रग्रहणके साथ सूर्यग्रहण भी हो तो वर्मा, लंका, श्याम, चीन और जापानमें भी अन्नकी कमी पड़ जाती है। वस्त्रके व्यापारमें अधिक लाभ होता है। जूट, सन, रेशम, कपास, रूई और पाटके भाव ग्रहणोंके दो महीनेके पश्चात् अधिक बढ़ जाते हैं। मिट्टीका तेल, पेट्रोल, कोयला आदि पदार्थोंकी कमी पड़ जाती है। यदि कन्याराशिके चन्द्रग्रहण पर मंगल या शनिकी दृष्टि हो तो अनाजोंकी और अधिक कमी पड़ जाती है। तुला राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो साधारण जनतामें असन्तोष होता है। गेहूँ, गुड़, चीनी, घी और तेलका भाव तेज होता है। व्यापारियोंके लिए यह ग्रहण अच्छा होता है, उन्हें व्यापारमें अच्छा लाभ होता है। पंजाब, ट्रावंकोर कोचीन, मलाबारको छोड़ अवशेष भारतमें अच्छी वर्षा होती है। इन प्रदेशोंमें फसल भी अच्छी नहीं होती है। मवेशीको कष्ट होता है तथा बिहार और उत्तर प्रदेशके निवासियोंको अनेक प्रकारकी बीमारियोंका सामना करना पड़ता है। घी, गुड़, चीनी, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, धनिया, हल्दी आदि पदार्थोंका भाव भी महँगा होता है। लोहेके व्यवसायियोंको दूना लाभ होता है। सोना और चाँदीके व्यापारमें साधारण

लाभ होता है। ताँबा और पीपलके भाव अधिक तेज होते हैं। अस्त्र-शस्त्र तथा मशीनोंका मूल्य भी बढ़ता है। वृश्चिकराशि पर चन्द्रग्रहण हो तो सभी वर्णके व्यक्तियोंको कष्ट होता है। पंजाब निवासियोंको हैजा और चेचकका प्रकोप अधिक होता है। बंगाल, बिहार और आसाममें विषैले ज्वरके कारण सहस्रों व्यक्तियोंकी मृत्यु होती है। सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, गोमेद, नीलम आदि रत्नोंके सिवा साधारण पाषाण, सीमेण्ट और चूनाके भाव भी तेज होते हैं। घी, गुड़ और चीनीका भाव सस्ता होता है। यदि वृश्चिक राशिपर चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हों तो वर्षाकी कमी रहती है। फसल भी सम्यक् रूपसे नहीं होती है, जिससे अन्नकी कमी पड़ती है। धनुराशिपर चन्द्रग्रहण हो तो वैद्य, डाक्टर, व्यापारी, घोड़ों एवं यवनोंको शारीरिक कष्ट होता है। धनुराशिके ग्रहणमें देशमें अर्थसंकट व्याप्त होता है, फसल उत्तम नहीं होती है। खनिज पदार्थ, वन और अन्न सभीकी कमी रहती है। फल और तरकारियोंकी भी क्षति होती है। यदि इसी राशिपर सूर्यग्रहण हो और शनिसे दृष्ट हो तो अटकसे कटक तक तथा हिमालयसे कन्याकुमारी तकके देशोंमें आर्थिक संकट रहता है। राजनीतिमें भी उथल-पुथल होते हैं। कई राज्योंके मन्त्रिमंडलोंमें परिवर्तन होता है। मकर राशिपर चन्द्रग्रहण हो तो नट, मन्त्रवादी, कवि, लेखक और छोटे-छोटे व्यापारियोंको शारीरिक कष्ट होता है। कुम्भराशिपर ग्रहण होनेसे अमीरोंको कष्ट तथा पहाड़ी व्यक्तियोंको अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। आसाममें भूकम्प भी होता है। अग्निभय, शस्त्रभय और चोरभय समस्त देशको विपन्न रखता है। मीन राशिपर चन्द्रग्रहण होनेसे जलजन्तु, जलसे आजीविका करनेवाले, नाविक एवं अन्य इसी प्रकारके व्यक्तियोंको पीड़ा होती है।

नक्षत्रानुसार चन्द्रग्रहणका फल—अश्विनी नक्षत्रमें चन्द्रग्रहण हो तो दालवाले अनाज मूँग, उड़द, चना, अरहर आदि महँगे; भरणीमें ग्रहण हो तो श्वेत वस्त्रोंके तीन मासमें लाभ, कपास, रुई, सूत, जूट, सन, पाट आदिमें चार महीनोंमें लाभ और कृत्तिकामें हो तो सुवर्ण, चाँदी, प्रवाल, मुक्ता, माणिक्यमें लाभ होता है। उक्तदिनोंके नक्षत्रोंमें ग्रहण होनेसे वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। खण्डवृष्टिके कारण किसी प्रदेशमें वर्षा अच्छी और किसीमें कम होती है। रोहिणी नक्षत्रमें ग्रहण होनेपर कपास, रुई, जूट और पाटके संग्रहमें लाभ; मृगशिर नक्षत्रमें ग्रहण हो तो लाख, रंग एवं क्षार पदार्थोंमें लाभ; आर्द्रामें ग्रहण हो तो घी, गुड़ और चीनी आदि पदार्थ महँगे; पुनर्वसु नक्षत्रमें ग्रहण हो तो तैल, तिलहन, मूँगफली और चनामें लाभ; पुष्य नक्षत्रमें ग्रहण हो तो गेहूँ, चावल, जौ और ज्वार आदि अनाजोंमें लाभ; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और हस्त, इन चार नक्षत्रोंमें ग्रहण हो तो चना, गेहूँ, गुड़ और जौमें लाभ; चित्रामें ग्रहण होनेसे सभी प्रकारके धान्योंमें लाभ, स्वातीमें ग्रहण होनेसे तीसरे, पाँचवें और नौवें महीनेमें अन्नके व्यापारमें लाभ; विशाखा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे छठवें महीनेमें कुल्थी, काली मिर्च, चीनी, जीरा, धनिया आदि पदार्थोंमें लाभ; अनुराधामें नौवें महीनेमें बाजरा, कोदो, कंगुनी और सरसोंमें लाभ, ज्येष्ठा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे पाँचवें महीनेमें गुड़, चीनी, मिश्री आदि पदार्थोंमें लाभ; मूल नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे चावलोंमें लाभ; पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे वस्त्र-व्यवसायमें लाभ, उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे पाँचवें मासमें नारियल, सुपाड़ी, काजू, किसमिस आदि फलोंमें लाभ; श्रवण नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे मवेशियोंके व्यापारमें लाभ; धनिष्ठा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे उड़द, मूँग, मोठ आदि पदार्थोंके व्यापारमें लाभ; शतभिषा नक्षत्रमें ग्रहण होनेसे चनामें लाभ, पूर्वाभाद्रपदमें ग्रहण होनेसे पीड़ा, उत्तराभाद्रपदमें ग्रहण होनेसे तीन महीनोंमें नमक, चीनी, गुड़ आदि पदार्थोंके व्यापारमें विशेष लाभ होता है।

विद्ध फल—राहुका शनिसे विद्ध होना भय, रोग, मृत्यु, चिन्ता, अन्नाभाव एवं अशान्ति सूचक है। मंगलसे विद्ध होनेपर राहु जनक्रान्ति, राजनीतिमें उथल-पुथल एवं युद्ध होते हैं। बुध या शुक्रसे विद्ध होनेपर राहु जनताको सुख, शान्ति, आनन्द, आमोद-प्रमोद, अभय और आरोग्य प्रदान करता है। चन्द्रमासे राहु विद्ध होनेपर जनताको महान् कष्ट होता है। प्रत्येक ग्रहका विद्ध रूप सप्तशलाका या पंचशलाकाचक्रसे जानना चाहिए।

एकविंशतितमोऽध्यायः

कोणजान् पापसम्भूतान् केतून् वक्ष्यामि ज्योतिषि ।
मृदवो दारुणाश्चैव तेषामासं निबोधत ॥१॥

हे ज्योतिषी ! पापके कारण कोणमें उत्पन्न हुए केतुओंका वर्णन करूँगा। मृदु और दारुण होनेके अनुसार उनका फल समझना चाहिए ॥ १ ॥

एकादिषु शतान्तेषु वर्षेषु च विशेषतः ।
केतवः सम्भवन्त्येवं विषमाः पूर्वपापजाः ॥२॥

एकादि सौ वर्षोंमें पूर्व पापके उदयसे विषम केतु उत्पन्न होते हैं। इन विषम केतुओंका फल विषम ही होता है ॥ २ ॥

पूर्वं लिङ्गानि केतूनामुत्पाताः सदृशाः पुनः ।
ग्रहा[1] अस्तमनाश्चापि दृश्यन्ते चापि लक्षयेत् ॥३॥

केतुओंके पूर्व चिह्न उत्पातके समान ही हैं, अतः ग्रहोंके अस्तोदयको देखकर और लक्ष्य-कर फल कहना चाहिए ॥३॥

शतानि चैव केतूनां प्रवक्ष्यामि पृथक् पृथक् ।
उत्पाता यादृशा उक्ता ग्रहास्तमनान्यपि ॥४॥

सैकड़ों केतुओंका वर्णन पृथक्-पृथक् किया जायगा। ग्रहोंके अस्तोदय तथा जिस प्रकारके उत्पात कहे गये हैं, उनका वर्णन भी वैसा ही किया जायगा ॥ ४ ॥

अन्यस्मिन् केतुभवने यदा केतुश्च दृश्यते ।
तदा जनपदव्यूहः प्रोक्तान् देशान् स हिंसति ॥५॥

यदि अन्य केतुभवनमें केतु दिखलायी पड़े तो जनता प्रतिपादित देशोंका घात करती है ॥५॥

एवं दक्षिणतो विन्द्यादपरेणोत्तरेण च ।
[2]कृत्तिकादियमान्तेषु नक्षत्रेषु यथाक्रमम् ॥६॥

इस प्रकार कृत्तिका नक्षत्रसे भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन दिशाओंमें नक्षत्रोंमें क्रमशः समझ लेना चाहिए ॥६॥

धूम्रः क्षुद्रश्च यो ज्ञेयः केतुरङ्गारकोऽग्निपः ।
प्राणसंत्रासयत्राणी स ग्राणी संशयी तथा ॥७॥

केतु, अंगारक और राहु धूम्रवर्ण और क्षुद्र दिखलायी पड़े तो प्राणोंका संकट और यात्रा करनेवालोंको अनेक प्रकारके संशय उत्पन्न होते हैं ॥७॥

---

1. गृहास्तमनान्ताश्च मु० । २. कृत्तकादियं मु० ।

त्रिशिरस्के द्विजभयम् अरुणे युद्धमुच्यते।
अरश्मिके नृपापायो विरुध्यन्ते परस्परम् ॥८॥

यदि तीन सिरवाला केतु दिखलायी पड़े तो द्विजोंको भय, अरुण केतु दिखलायी पड़े तो युद्ध और किरण रहित केतु दिखलायी पड़े तो राजा और प्रजामें परस्पर विरोध करता है ॥८॥

विकृते[1] विकृतं सर्वं चीणे सर्वपराजयः।
भृङ्गे भृङ्गीवधं पापः कबन्धे जनमृत्युदः ॥९॥
रोगं सस्यविनाशश्च[2] दुस्कालं[3] मृत्युविद्रवः।
मासं लोहितकं ज्ञेयं फलमेवं च पञ्चधा ॥१०॥

विच्छिल—छिद्ररहित केतु दिखलायी पड़े तो प्रजामें फूट और छिद्र सहित केतु दिखलायी पड़े तो पराजय, शृङ्गाकार दिखलायी पड़े तो सींगवाले पशुओंका वध और कबन्ध—घड़ाकार दिखलायी पड़े तो मनुष्योंकी मृत्यु होती है। इस प्रकारके केतुमें रोग उत्पन्न होते हैं, धान्य—फसलका विनाश होता है, अकाल पड़ता है, मृत्यु-उपद्रव होते हैं एवं पृथ्वी मांस और खूनसे भर जाती है, इस प्रकार पाँच प्रकारका फल होता है ॥९-१०॥

मानुषः पशु-पक्षीणां समयस्तापसंक्षयी।
विषाणी दंष्ट्रिघाताय सस्यघाताय शङ्करः ॥११॥

उपर्युक्त प्रकारका केतु पशु-पक्षियोंके लिए मनुष्योंके समान, दुःखोत्पादक तपस्वियोंको क्षय करनेके लिए समयके समान, दंष्ट्री—दाँतसे काटनेवाले व्याघ्रादिके लिए विषयुक्त सर्पादिके समान और फसलका विनाश करनेके लिए रुद्रके समान है ॥११॥

अङ्गारकोऽग्निसङ्काशो धूमकेतुस्तु धूमवान्।
[4]नीलसंस्थानसंस्थानो वैडूर्यसदृशप्रभः ॥१२॥

अग्निके तुल्य केतु अंगारक, धूम्रवर्णका केतु धूमकेतु और वैडूर्यमणिके समान नीलवर्णका केतु नीलसंस्थान नामक है ॥१२॥

कनकाभा शिखा यस्य स केतुः कनकः स्मृतः।
यस्योर्ध्वगा शिखा शुक्ला स केतुः श्वेत[5] उच्यते ॥१३॥

जिस केतुकी शिखा कनकके समान कान्तिवाली है, वह केतु कनकप्रभ और जिस केतुके ऊपरकी शिखा शुक्ल है, वह शुक्ल कहा जाता है ॥१३॥

त्रिवर्णश्चन्द्रवद् वृत्तः समसर्षपवदङ्कुरः[6]।
त्रिभिः शिरोभिः शिशिरो गुल्मकेतुः स[7] उच्यते ॥१४॥

त्रिवर्णवाला चन्द्रमाके समान गोलकेतु समसर्षपवदङ्कुर नामका होता है, तीन सिरवाला केतु शिशिर कहलाता है और गुल्मके समान केतु गुल्मकेतु कहलाता है ॥१४॥

---

१. विच्छिले विच्छिलं सर्वं छिले सर्वपराजयम्। २. विनाशश्च मु०। ३. दुःकालो मु०। ४. नालो मु०। ५. शुक्ल मु०। ६. समस्य च दङ्करः मु०। ७. केतुश्च गुल्मवत् मु०।

विक्रान्तस्य शिखे दीप्ते ऊर्ध्वगे च प्रकीर्त्तिते ।
ऊर्ध्वमुण्डा शिखा यस्य स खिली केतुरुच्यते ॥१५॥

जिस केतुकी शिखा दीप्त हो, वह विक्रान्त संज्ञक, जिसकी शिखा ऊपरको हो वह ऊर्ध्वमुण्डा संज्ञक और जिसकी शिखा खुली हुई हो वह केतु कहा जाता है ॥१५॥

शिखे विषाणवद् यस्य स विषाणी प्रकीर्त्तितः ।
व्युच्छिद्यमानो भीतेन रूक्षा च चिलिका शिखा ॥१६॥

जिसकी शिखा विषाणके समान हो वह विषाणी तथा भयसे रूक्ष और नष्ट होनेवाला और फैली हुई शिखावाला चिली केतु कहा जाता है ॥१६॥

शिखाश्चतस्रो ग्रीवार्धं कबन्धस्य विधीयते ।
एकरश्मिः प्रदीप्तस्तु स केतुर्दीप्त उच्यते ॥१७॥

जिसकी आधी गर्दन हो और शिखा चारों ओर व्याप्त हो वह कबन्ध नामका केतु और एक किरणवाला प्रदीप्त केतु दीप्त कहा जाता है ॥१७॥

शिखा मण्डलवद् यस्य स केतुर्मण्डली स्मृतः ।
मयूरपक्षी विज्ञेयो हसनः प्रभयाऽल्पया ॥१८॥

जिस केतुकी शिखा मण्डलके समान हो वह मंडली और अल्प कान्तिसे प्रकाशित होनेवाला केतु मयूरपक्षी कहा जाता है ॥१८॥

श्वेतः सुभिक्षदो ज्ञेयः सौम्यः शुक्लः शुभार्थिषु ।
कृष्णादिषु च वर्णेषु चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ॥१९॥

श्वेतवर्णका केतु सुभिक्ष करनेवाला, सुन्दर और शुक्लवर्णका केतु शुभ फल देनेवाला और कृष्ण, पीत, रक्त और शुक्लवर्णके केतुमें चारों वर्णोंका शुभाशुभ जानना चाहिए ॥१९॥

केतोः समुत्थितः केतुरन्यो यदि च दृश्यते ।
क्षु-च्छस्त्र-रोग-विघ्नस्था प्रजा गच्छति संक्षयम् ॥२०॥

केतुमेंसे उत्पन्न अन्यकेतु दिखलायी पड़े तो क्षुधा, शस्त्र, रोग, विघ्न आदिके साथ प्रजा क्षयको प्राप्त होती है ॥२०॥

एते च केतवः सर्वे धूमकेतुसमं फलम् ।
विचार्य वीथिभिश्चापि प्रभाभिश्च विशेषतः ॥२१॥

उपर्युक्त सभी केतु धूमकेतुके समान फल देनेवाले हैं तथापि इनका विशेष विचार वीथि, प्रभा और वर्ण आदिके अनुसार करना चाहिए ॥२१॥

यां दिशं केतवोऽर्चिर्भिर्धूमयन्ति दहन्ति च ।
तां दिशं पीडयन्त्येते क्षुधाद्यैः पीडनैर्भृशम् ॥२२॥

जिस दिशाको केतु अग्निमयी किरणोंके द्वारा धूमित करता है और जलाता है, वह दिशा क्षुधा, रोगादिके द्वारा अत्यन्त पीडित होती है ॥२२॥

नक्षत्रं यदि वा केतुर्ग्रहं वाऽप्यथ धूमयेत् ।
ततः शस्त्रोपजीवीनां[1] स्थावरं हिंसते ग्रहः ॥२३॥

यदि केतु किसी नक्षत्र या ग्रहको अभिधूमित करे तो शस्त्रसे आजीविका करनेवाले एवं स्थावरोंकी हिंसा होती है ॥२३॥

स्थावरे धूमिते तज्ज्ञा यायिनो यात्रिधूपने[2] ।
[3]शवरां भिल्लजातीनां पारसीकांस्तथैव च ॥२४॥

स्थावर और यात्रियोंके धूमित होनेपर शवर, भिल्ल और पारसियोंको पीड़ित होना पड़ता है ॥२४॥

शुक्रं दीप्त्या यदि हन्याद्धूमकेतुरुपागतः ।
तदा सस्य-नृपान् नागान् दैत्यान् शूरांश्च पीडयेत् ॥२५॥

यदि धूमकेतु अपनी दीप्तिसे शुक्रको घातित करे तो धान्य, राजा, नाग, दैत्य और शूर-वीरोंको पीड़ा होती है ॥२५॥

शुकानां शकुनानां च वृक्षाणां चिरजीविनाम् ।
शकुनि-ग्रहपीडायां फलमेतत् समादिशेत् ॥२६॥

शुकुनिग्रहकी पीड़ामें शुक, पक्षी, चिरकाल तक रहनेवाले वृक्षोंका पीड़ाकारक फल कहना चाहिए ॥२६॥

शिंशुमारो यदा केतुरुपागत्य प्रधूमयेत् ।
तदा जलचरं तोयं [4]वृद्धवृक्षांश्च हिंसति ॥२७॥

जब केतु शिशुमार सूंस—नामक जलजन्तुको धूमित करता है तब जलचर जन्तु, जल और वृद्ध वृक्षोंका घात होता है ॥२७॥

सप्तर्षीणामन्यतमो यदा केतुः प्रधूमयेत् ।
तदा सर्वभयं विन्द्यात् ब्राह्मणानां न संशयः ॥२८॥

यदि केतु सप्त ऋषियोंमें से किसी एकको प्रधूमित करे तो ब्राह्मणोंको सभी प्रकारका भय निरसन्देह होता है ॥२८॥

बृहस्पतिं यदा हन्याद् धूमकेतुरथार्चिभिः ।
वेदविद्याविदो वृद्धान् नृपांस्तज्ज्ञांश्च हिंसति ॥२९॥

जब धूम्रकेतु अपनी तेजस्वी किरणों द्वारा बृहस्पतिका घात करता है, तब वेदविद्याके पारंगत वृद्ध विद्वान् और राजाओंका विनाश होता है ॥२९॥

एवं शेषान् ग्रहान् केतुर्यदा हन्यात् स्वरश्मिभिः ।
ग्रहयुद्धे यदा[5] प्रोक्तं फलं तत्तु समादिशेत् ॥३०॥

इस प्रकार अन्य शेष ग्रहोंको अपनी किरणों द्वारा केतु घातित करे तो जो फल गृहयुद्धका बतलाया गया है, वही कहना चाहिए ॥३०॥

[illegible]रांश्च न हिंसति, मु० । २. स्यायिनस्तथा मु० । ३. स्यकान् घोरान् भयै-[illegible]मध्य मु० । ५. तदा मु० ।

नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे यदा केतुः प्रदृश्यते ।
तदा देशान् दिशाग्रामं भञ्जन्ते पापदा नृपाः ॥३१॥

यदि पूर्वदिग्भागवाले नक्षत्रमें केतुका उदय दिखलायी पड़े तो पापी राजा देश, दिशा और ग्रामका विनाश करता है ॥३१॥

वङ्गानङ्गान् कलिङ्गांश्च मगधान् काशनन्दनान् ।
पट्टचावांश्च कौशाम्बीं घेणुसारं सदाहवम् ॥३२॥
तोसलिङ्गान् सुलान् नेद्रान् माक्रन्दामलदांस्तथा ।
कुनटान् सिथलान् महिपान् माहेन्द्रं पूर्वदक्षिणः ॥३३॥
वेणान् विदर्भमालांश्च अश्मकांश्चैव छर्वणान् ।
द्रविडान् वैदिकान् दाद्रेकलांश्च दक्षिणापथे ॥३४॥
कोङ्कणान् दण्डकान् भोजान् गोमान् सूर्यारिकाञ्चनम्[1] ।
किष्किन्धान् वनवासांश्च लङ्कां हन्यात् स नैरुतैः ॥३५॥

वंग, अंग, कलिंग, मगध, काश, नन्द, पट्ट, कौशाम्बी, घेणुसार, तोस, लिंग, सुल, नेद्र, माक्रन्द, मालदा, कुनटा, सिथल, महिप, माहेन्द्र, वेण, विदर्भ, माल और दक्षिणापथके अश्मक, छर्वण, द्रविड़, वैदिक, दाद्रेकल, कोंकण, दंडक, भोज, गोमा, सूर्पारि, कंचन, किष्किन्धा, वनवास और लंका इन देशोंका विनाश उपर्युक्त प्रकारका केतु करता है ॥३२-३५॥

अङ्गान् सौराष्ट्रान्[2] समुद्रान् भरुकच्छादसेरकान् ।
शूद्रान् हृपिजलरुहान् केतुर्हन्याद्विपथगः ॥३६॥

यदि विपथग—कुमार्गस्थित केतु हो तो अंग, सौराष्ट्र, समुद्र, भरुकच्छ, असेरक, शूद्र, हृपिकेश आदि देशोंका विनाश करता है ॥३६॥

काम्बोजान् रामगान्धारान् आभीरान् यवरच्छकान् ।
चैत्रसौत्रेयकान् सिन्धुमहामन्यपुवायुजः ॥३७॥
वाह्लीकान् चीनविपयान् पर्वतांश्चाप्यदुस्वरान् ।
सौधेयं कुरुवैदेहान् केतुर्हन्याद्यदुत्तराः ॥३८॥

उत्तर दिशामें स्थित केतु कम्बोज, रामगान्धार, आभीर, यवरच्छक, चैत्रसौत्रेय, सिन्धु, वाह्लीक, चीनविषय, पहाड़ी प्रदेश, सौन्धेय, कुरु, विदेह आदि देशोंका घात करता है ॥३७-३८॥

चर्म्मासुवर्णकलिङ्गान् किरातान् बर्बरान् द्विजान् ।
वैदिम्लमिपुलिन्दांश्च हन्ति स्वात्यां[3] समुच्छ्रितः ॥३९॥

स्वाती नक्षत्रमें उदित केतु, चर्मकार, स्वर्णकार, कलिंग देशवासी, किरात, बर्बर जातियाँ, द्विज, वैदिक, भील, पुलिन्द आदि जातियोंका वध होता है ॥३९॥

---

1. सूर्पारिकंचनम् मु० । 2. सुराष्ट्रान् मु० । 3. साप्यां मु० ।

सदृशाः केतवो हन्युस्तासु मध्ये वधं वदेत् ।
व्याधिं शस्त्रं क्षुधां मृत्युं परचक्रं च निर्दिशेत् ॥४०॥

सदृश केतु घात करते हैं तथा व्याधि, शस्त्र, क्षुधा, मृत्यु और परशासनकी सूचना देते हैं ॥४०॥

न काले नियता[1] केतुः न नक्षत्रादिकस्तथा ।
आकस्मिको भवत्येव कदाचिदुदितो ग्रहः ॥४१॥

केतुके उदयास्तका समय निश्चित नहीं है और नक्षत्र, दिशा आदि भी अनिश्चित ही है। अकस्मात् कदाचित् ग्रहका उदय हो जाता है ॥४१॥

षट् त्रिंशत् तस्य वर्षाणि प्रवासः परमः स्मृतः ।
मध्यमः सप्तविंशं तु जघन्यं[2] तु त्रयोदश ॥४२॥

केतुका ३६ वर्षका उत्कृष्ट प्रवास, २७ वर्षका मध्यम प्रवास और तेरह वर्षका जघन्य प्रवास होता है ॥४२॥

एते प्रयाणा[3] दृश्यन्ते येऽन्ये तीव्रभयादृते ।
प्रवासं शुक्रवच्चास्य विन्द्यादुत्पातिकं महत् ॥४३॥

उक्त प्रमाण या भयके अतिरिक्त अन्य प्रमाण केतुके दिखलायी पड़ते हैं। शुक्रके समान केतु का प्रवास भी अत्यन्त उत्पात कारक होता है ॥४३॥

धूमध्वजो धूमशिखो धूमार्चिर्धूमतारकः ।
विकेशी विशिखश्चैव मयूरो विद्धमस्तकः ॥४४॥
महाकेतुश्च श्वेतश्च केतुमान् केतुवाहनः ।
उल्काशिखश्च जाज्वल्यः प्रज्वाली चाम्बरीपकः[4] ॥४५॥
हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेतुः शुक्लवासोऽन्यदन्तकः ।
विद्युत्समो विद्युल्लता विद्युद्विद्युत्स्फुलिङ्गकः ॥४६॥
चिक्षणो दारुणो गुल्मः कबन्धो ज्वलिताङ्कुरः ।
तालीशः कनकश्चैव विक्रान्तो मांसरोहितः ॥४७॥
वैवस्वतो धूममाली महार्चिश्च विधूमितः ।
दारुणाः केतवो ह्येते भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥४८॥

धूमध्वज, धूमशिख, धूमार्चि, धूमतारक, विकेशी, विशिख, मयूर, विद्धमस्तक, महाकेतु, श्वेत, केतुमान, केतुवाहन, उल्काशिख, जाज्वल्य, प्रज्वाली, चांबरीपक, हेन्द्रस्वर, हेन्द्रकेतु, शुक्लवास, अन्यदन्तक, विद्युत्सम, विद्युल्लता, विद्युत्, विद्युत्स्फुलिंगक, चिक्षण, अरुण, गुल्म, कबन्ध, ज्वलितांकुर, तालीश, कनक, विक्रान्त, मांसरोहित, वैवस्वत, धूममाली, महार्चि, विधूमित और दारुण ये केतु दारुण भय उत्पन्न करनेवाले हैं ॥४४-४८॥

---

1. केतु मु० । २ जघन्यस्तु मु० । ३. प्रयोग मु० । ४. चाम्बरीरकः मु० ।

जलदो जलकेतुश्च जलरेणुसमप्रभः ।
रूक्षो वा जलवान् शीघ्रं विप्राणां भयमादिशेत् ॥४९॥

जलद, जलकेतु, जलरेणु, रूक्ष, जलवान् केतु शीघ्र ही ब्राह्मणोंको भयका निर्देश करता है ॥४९॥

शिखी शिखण्डी विमलो विनाशी धूमशासनः ।
विशिखानः शतार्चिश्च शालकेतुरलक्तकः ॥५०॥
घृतो घृतार्चिश्च्यवनश्चित्रपुष्पविदूषणः ।
विलम्बी विषमोऽग्निश्च वातकी हसनः शिखीः ॥५१॥
कुटिलः कड्वखिलङ्गः कुचित्रगोऽथ निश्चयी ।
नामानि लिखितानि च येषां नोक्तं तु लक्षणम् ॥५२॥

शिखी, शिखण्डी, विमल, विनाशी, धूमशासन, विशिखान, शतार्चि, शालकेतु, अलक्तक, घृत, घृतार्चि, च्यवन, चित्रपुष्प, विदूषण, विलम्बी, विषम, अग्नि, वातकी, हसन, शिखी, कुटिल, कड्वखिलंग, कुचित्रग इत्यादि केतुओंके नाम लिखे गये हैं, लक्षणका निरूपण नहीं किया गया है ॥५०-५२॥

येऽन्तरिक्षे जले भूमौ गोपुरेऽट्टालके गृहे ।
वस्त्राभरण-शस्त्रेषु ते उत्पाता न केवलः ॥५३॥

जो केतु आकाश, जल, भूमि, गोपुर, अट्टारी, घर, वस्त्र, आभरण और शस्त्रमें दिखलायी पड़ते हैं, वे उत्पात नहीं करते ॥५३॥

दीक्षितान् [2]अर्हद्देवांश्च आचार्यांश्च तथा गुरून् ।
पूजयेच्छान्तिपुष्ट्यर्थं पापकेतुसमुत्थिते ॥५४॥

पाप केतुओंकी शान्तिके लिए मुनि—आचार्य, गुरु, दीक्षित साधु और तीर्थङ्करोंकी पूजा करनी चाहिए ॥५४॥

पौरा जानपदा राजा श्रेणीनां[3] प्रवराः नराः ।
पूजयेत् सर्वदानेन पापकेतुः समुत्थिते ॥५५॥

पुरवासी, नागरिक, राजा, ब्राह्मण, व्यापारी आदि व्यक्तियोंको दान-पूजाका कार्य अवश्य करना चाहिए । अशुभ केतु दान-पूजा द्वारा प्रीतिको प्राप्त होता है ॥५५॥

यथा हि बलवान् राजा सामन्तैः सारपूजितः ।
नात्यर्थं बाध्यते तत्तु तथा केतुः सुपूजितः ॥५६॥

जिस प्रकार बलवान् राजा सामन्तोंके द्वारा सेवित होनेपर शान्त रहता है, किसी भी प्रकारकी बाधा नहीं पहुँचाता, इसी प्रकार दुष्ट केतु भी जिस पापके उदयमें कष्ट पहुँचाता है, उस पापकी शान्ति भगवान की पूजासे हो जाती है, वह पाप कष्ट नहीं पहुँचाता है ॥५६॥

१. रुक्षेश्च मु० । २. निर्ग्रन्थांश्च विप्रान् भूतान् यतीश्वरान् मु० । ३. विप्राश्च वणिजो नराः । ४. दानपूजां प्रभु कुर्युः केतोः प्रीतिकरोऽप्यतः मु० ।

सर्पदष्टो[1] यथा मन्त्रैरगदैश्च चिकित्स्यते ।
केतुदष्टस्तथा लोकैर्दानजैापैश्चिकित्स्यते[2] ॥५७॥

जिस प्रकार सर्पके द्वारा काटा गया व्यक्ति मन्त्र और औषधिसे स्वास्थ्य लाभ करता है, उसकी चिकित्सा मन्त्र और औषधि है, उसी प्रकार दुष्ट केतुकी चिकित्सा दान-पूजा है। तात्पर्य यह है कि अशुभ केतु पापोदयसे प्रकट होता है, पाप शान्त होनेपर अशुभ केतु स्वयमेव शान्त हो जाता है। गृहस्थके लिए पाप शान्तिका उपाय जप-तपके अलावा दान-पूजन ही है ॥५७॥

यः केतुचारमखिलं[3] यथावत् पठन्ति[4] युक्तं श्रमणः समेत्य ।
स केतुदग्धांस्त्यजते हि देशान् प्राप्नोति पूजां च नरेन्द्रमूलात् ॥

जो बुद्धिमान् श्रमण—मुनि समस्त केतुचारको यथावत् अध्ययन करता है, वह केतुके द्वारा पीड़ित प्रदेशोंका त्यागकर अन्यत्र गमन करता है, जिससे राजाओंसे पूजा प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ॥५८॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते एकविंशतितमोऽध्यायः ॥२१॥

विवेचन—केतुओंके भेद और स्वरूप—केतु मूलतः तीन प्रकारके हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। ध्वज, शस्त्र, गृह, वृक्ष, अश्व और हस्ती आदिमें जो केतुरूप दर्शन होता है, वह अन्तरिक्ष केतु; नक्षत्रोंमें जो दिखलायी देता है, उसे दिव्यकेतु कहते हैं और इन दोनोंके अतिरिक्त अन्य रूप भौमकेतु हैं। केतुओंकी कुल संख्या एक हजार या एक सौ एक है। केतुका फलादेश, उसके उदय, अस्त, अवस्थान, स्पर्श और धूम्रता आदिके द्वारा अवगत किया जाता है। केतु जितने दिन तक दिखलायी देता है, उतने मास तक उसके फलका परिपाक होता है। जो केतु निर्मल, चिकना, सरल, रुचिर और शुक्लवर्ण होकर उदित होता है, वह सुभिक्ष और सुखदायक होता है। इसके विपरीत रूपवाले केतु शुभदायक नहीं होते, परन्तु उनका नाम धूमकेतु होता है। विशेषतः इन्द्रधनुषके समान अनेक रंगवाले अथवा दो या तीन चोटीवाले केतु अत्यन्त अशुभकारक होते हैं। हार, मणि या सुवर्णके समान रूप धारण करनेवाले और चोटीदार केतु यदि पूर्व या पश्चिममें दिखलायी दें तो सूर्यसे उत्पन्न कहलाते हैं और इनकी संख्या पचीस है। तोता, अग्नि, दुपहरियाका फूल, लाख या रक्तके समान जो केतु अग्निकोणमें दिखलायी दें, तो वे अग्निसे उत्पन्न हुए माने जाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है। पच्चीस केतु टेढ़ी चोटीवाले, रूखे और कृष्णवर्ण होकर दक्षिणमें दिखलायी पड़ते हैं, ये यमसे उत्पन्न हुए माने गये हैं। इनके उदय होनेसे मारी पड़ती है। दर्पणके समान गोल आकारवाले, शिखारहित, किरण युक्त और सजल तेलके समान कान्तिवाले, जो बाईस केतु ईशान दिशामें दिखलायी पड़ते हैं, वे पृथ्वीसे उत्पन्न हुए हैं, इनके उदयसे दुर्भिक्ष और भय होता है। चन्द्रकिरण, चाँदी, हिम, कुमुद या कुन्दपुष्पके समान जो तीन केतु हैं, वे चन्द्रमाके पुत्र हैं और उत्तर दिशामें दिखलायी देते हैं। इनके उदय होनेसे सुभिक्ष होता है।

1. सर्पो दष्टो यथा मु० । 2. -जपै मु० । 3. निखिलं मु० । 4. पठेत् सुयुक्तः मु० ।

ब्रह्मदण्ड नामक युगान्तकारी ब्रह्मासे उत्पन्न हुआ एक केतु है, यह तीन चोटीवाला और तीन रंगका है, इसके उदय होनेकी दिशाका कोई नियम नहीं है। इस प्रकार कुल एक सौ एक केतुका वर्णन किया गया है। अवशेष ८९९ केतुओंका वर्णन निम्न प्रकार है—

शुक्रतनय नामक जो चौरासी केतु हैं, वे उत्तर और ईशान दिशामें दिखलायी पड़ते हैं, ये बृहत्—शुक्लवर्ण, तारकाकार, चिकने और तीव्र फल युक्त होते हैं। शनिके पुत्र साठ केतु हैं, ये कान्तिमान, दो शिखावाले और कनक संज्ञक हैं, इनके उदय होनेसे अतिकष्ट होता है। चोटीहीन, चिकने, शुक्लवर्ण, एक तारेके समान, दक्षिण दिशाके आश्रित पैंसठ विकच नामक केतु, बृहस्पतिके पुत्र हैं। इनका उदय होनेसे पृथ्वीमें लोकपापी जाते हैं। जो केतु साफ दिखलायी नहीं देते, सूक्ष्म, दीर्घ, शुक्लवर्ण, अनिश्चित दिशावाले तस्कर संज्ञक हैं। ये बुधके पुत्र कहलाते हैं। इनकी संख्या ५१ हैं और ये पाप फल वाले हैं। रक्त या अग्निके समान जिनका रंग है, जिनकी तीन शिखाएँ हैं, तारेके समान हैं, इनकी गिनती साठ है। ये उत्तर दिशामें स्थित हैं तथा कौंकुम नामक मंगलके पुत्र हैं, ये सभी पापफल देनेवाले हैं। तामसकीलक नामक तैंतीस केतु, जो राहुके पुत्र हैं तथा चन्द्रसूर्य गत होकर दिखलायी देते हैं। इनका फल अत्यन्त शुभ होता है। जिनका शरीर ज्वालाकी मालासे युक्त हो रहा है, ऐसे एकसौ बीस केतु अग्निविश्वरूप होते हैं। इनका फल बनते हुए कार्योंको बिगाड़ना, कष्ट पहुँचाना आदि है। श्यामवर्ण, चमरके समान व्याप्त चिरागवाले और पवनसे उत्पन्न केतुओंकी संख्या सतहत्तर है। इनके उदय होनेसे भय, आतंक और पाप का प्रसार होता है। तारापुंजके समान आकारवाले प्रजापति युक्त आठ केतु हैं, इनका नाम गयक है। इनके उदय होनेसे क्रान्तिका प्रसार होता है। विश्वमें एक नया परिवर्तन दिखलायी पड़ता है। चौकोर आकारवाले ब्रह्मसन्तान नामक जो केतु हैं, उनकी संख्या दो सौ चार है। इन केतुओंका फल वर्षाभाव और अन्नाभाव उत्पन्न करता है। लताके गुच्छेके समान जिनका आकार है, ऐसे बत्तीस केक नामक जो केतु हैं, वे वरुणके पुत्र हैं। इनके उदय होनेसे जलाभाव, जलजन्तुओंको कष्ट एवं जलसे आजीविका करनेवाले कष्ट प्राप्त करते हैं। कबन्धके समान आकारवाले छियानबे कबन्ध नामक केतु हैं, ये कालयुक्त कहे गये हैं। ये अत्यन्त भयङ्कर, दुःखदायी और कुरूप हैं। बड़े-बड़े एक तारेदार नौ केतु हैं, ये विदिश समुत्पन्न हैं। इनका उदय भी कष्टकर होता है। मथुरा, सूरसेन और विदर्भ नगरीके लिए उक्त केतु अशुभकारक होता है।

केतुओंकी संख्याका योग निम्न प्रकार है।

(२५+२५+२५+२२+३=१०१; ८४+६०+६५+५१+६०+३३+१२०+७७×८+२०४+३२+९६+९=८९९; ८९९+१०१=१०००)

जो केतु पश्चिम दिशामें उदय होते हैं, उत्तरदिशामें फैलते हैं, बड़े-बड़े स्निग्धमूर्ति हैं, उनको वसाकेतु कहते हैं, इनके उदय होनेसे मारी पड़ती है और उत्तम सुभिक्ष होता है। सूक्ष्म, या चिकने वर्णके केतु उत्तर दिशासे आरम्भ होकर पश्चिम तक फैलते हैं, उनके उदयसे क्षुधाभय, उलट-पुलट और मारी फैलती है। अमावास्याके दिन आकाशके पूर्वार्द्धमें सहस्र रश्मिकेतु दिखायी देता है, उसका नाम कपाल केतु है। इसके उदय होनेसे क्षुधा, मरी, अनावृष्टि और रोगभय होता है। आकाशके पूर्व दक्षिणभागमें शूलके अग्रभागके समान कपिश, रूक्ष, ताम्रवर्णकी किरणोंसे क्षुब्ध जो केतु आकाशके तीन भाग तक गमन करता है, उसको रौद्रकेतु कहते हैं, इसका फल कपालकेतुके समान है। जो धूम्रकेतु पश्चिम दिशामें उदय होता है, दक्षिणकी ओर एक अंगुल ऊँची शिखा करके युक्त होता है और उत्तर दिशाकी तरफ क्रमानुसार बढ़ता है, उसको चलकेतु कहते हैं। यह चलकेतु क्रमशः दीर्घ होकर यदि उत्तर ध्रुव, सप्तर्षि मंडल या अभिजित् नक्षत्रको स्पर्श करता हुआ आकाशके एक भागमें

जाकर दक्षिण दिशामें अस्त हो जाय, तो प्रयागसे लेकर अवन्ति तकके प्रदेशमें दुर्भिक्ष, रोग एवं नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। मध्यरात्रिमें आकाशके पूर्वभागमें दक्षिणके आगे जो केतु दिखलायी दे, उसको धूमकेतु कहते हैं। जिस केतुका आकार गाड़ीके जुएके समान है, वह युगपरिवर्तनके समय सात दिन तक दिखलायी पड़ता है। धूमकेतु यदि अधिक दिनोंतक दिखलायी दे तो दश वर्षतक शस्त्रप्रकोप लगातार बना रहता है और नाना प्रकारके संताप प्रजाको देता रहता है। श्वेत नामक केतु यदि जटाके समान आकारवाला, रूखा, कपिशवर्ण और आकाशके तीन भाग तक जाकर लौट आवे तो प्रजाका नाश होता है। जो केतु धूम्रवर्णकी चोटीसे युक्त होकर कृत्तिका नक्षत्रको स्पर्श करे, उसको रश्मिकेतु कहते हैं, इसका फल श्वेत नामक केतुके समान है। ध्रुव नामक एक प्रकारका केतु है, इसका आकार, वर्ण, प्रमाण स्थिर नहीं हैं, यह दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकारका होता है। यह स्निग्ध और अनियत फल देता है। जिस केतुकी कान्ति कुमुदके समान हो, चोटी पूर्वकी ओर फैल रही हो, उसको कुमुदकेतु कहते हैं। यह बराबर दस वर्ष तक सुभिक्ष देनेवाला है। जो केतु सूक्ष्म तारेके समान आकारवाला हो और पश्चिम दिशामें तीन घंटेतक लगातार दिखलायी दे तो उसका नाम मणि केतु है। स्तनके ऊपर दबाव देनेसे जिस प्रकार दूधकी धारा निकलती है, उसी प्रकार जिनकी किरणें छिटकती हैं, यह केतु उसी प्रकारकी किरणोंसे युक्त है। इसके उदयसे साढ़े चार मास तक सुभिक्ष होता है तथा छोटे-बड़े सभी प्राणियोंको कष्ट होता है। जिस केतुकी अन्य दिशाओंमें ऊँची शिखा हो तथा पिछले भागमें चिकना हो, वह जलकेतु कहलाता है। इसके उदय होनेसे नौ महीने तक शान्ति और सुभिक्ष मिलती है। सिंहकी पूँछके समान दक्षिणावर्त शिखावाला, स्निग्ध, सूक्ष्मतारायुक्त पूर्व दिशामें रातमें दिखलायी देनेवाला भवकेतु है। यह भवकेतु जितने मुहूर्ततक दिखलायी देता है, उतने मासतक सुभिक्ष होता है। यदि रूक्ष होता है, तब मरणान्त करानेवाला माना जाता है। फुव्वारेके समान किरणवाला, मृडालके समान गौरवर्ण केतु पश्चिम दिशामें रातभर दिखलायी दे तो सात वर्षतक हर्ष सहित सुभिक्ष होता है। जो केतु आधीरातके समयतक शिखासव्य, अरुणकी-सी कान्तिवाला, चिकना दिखलायी देता है, उसे आवर्त कहते हैं, यह केतु जितने क्षण तक दिखलायी देता है, उतने मास तक सुभिक्ष रहता है। जो धूम्र या ताम्रवर्णकी शिखावाला भयंकर है और आकाशके तीन भागतकको आक्रमण [illegible] सन्ध्याकालमें पश्चिमकी ओर दिखलायी [illegible] तक दिखलायी देता है, उतने वर्षतक [illegible] यकालमें जिसका जन्मनक्षत्र आक्रान्त रहता है, उसे भी कष्ट होता है। जिस-जिस नक्षत्रको केतु आधूमित करे या स्पर्श करे, उस-उस नक्षत्रवाले देश और व्यक्तियोंको पीड़ा होती है। यदि केतुकी शिखा उल्कासे भेदित हो तो शुभफल, सर्वप्रकारकी वृष्टि एवं सुभिक्ष होता है।

केतुओंका विशेषफल—जलकेतु-पश्चिमाग्र शिखावाला होता है। स्निग्धकेतुके अस्त होनेमें जब नौ महीने समय शेष रह जाता है, तब यह पश्चिममें उदय होता है। यह नौ महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य करता है तथा अन्य ग्रहोंके सब दोषोंको नष्ट करता है।

ऊर्मिशीतकेतु—जलकेतुके पर्यान्त गतिमें आगे १८ वर्ष और १४ वर्षके अन्तर पर ये केतु उदय होते हैं। ऊर्मि, शंख, हिम, रक्त, कुक्षि, काम, विसर्पण और शीत ये आठ अमृतसे पैदा हुए महज्केतु हैं। इनके उदय होनेमें सुभिक्ष और क्षेम होता है।

भटकेतु और भवकेतु—ऊर्मि आदि शीत पर्यन्तके आठ केतुओंके चारके समाप्त हो जाने पर ताराके रूप एक रातमें भटकेतु दिखायी देता है। यह भटकेतु पूर्व दिशामें दाहिनी ओर घूमी हुई बन्दरकी पूँछकी तरह शिखावाला, स्निग्ध और कृत्तिकाके गुच्छेकी तरह मुख्य ताराके

प्रमाणका होता है। यह जितने मुहूर्त्त तक स्निग्ध दीखता रहता है उतने महीनों तक सुभिक्ष करता है। रूक्ष होगा तो प्राणोंका अन्त करनेवाला और रोग पैदा करनेवाला होगा।

औद्दालक केतु-श्वेतकेतु, ककेतु—औद्दालक और श्वेतकेतु इन दोनोंका अग्रभाग दक्षिणकी ओर होता है और अर्द्धरात्रिमें इनका उदय होता है। ककेतु प्राची-प्रतीची दिशामें एक साथ युगाकारसे उदय होता है। औद्दालक और श्वेतकेतु सात रात तक स्निग्ध दिखायी देते हैं। ककेतु कभी अधिक भी दिखता रहता है। वे दोनों स्निग्ध होने पर १० वर्ष तक शुभ फल देते हैं और रूक्ष होने पर शस्त्र आदिसे दुःख देते हैं। उद्दालक केतु एक सौ दस वर्ष तक प्रवासमें रहकर भटकेतुकी गतिके अन्तमें पूर्व दिशामें दिखायी देता है। पद्मकेतु—श्वेत केतुके फलके अन्तमें श्वेत पद्मकेतुका उदय होता है, पश्चिममें एक रात दिखायी देनेपर यह सात वर्ष तक आनन्द देता रहता है।

काश्यप श्वेतकेतु—काश्यप श्वेतकेतु तो रूक्ष, श्याव और जटाकी-सी आकृतिका होता है। यह आकाशके तीन भागको आक्रमण करके बाँयी ओर लौट जाता है। यह इन्द्रांश शिखी ११५ वर्ष तक प्रवासित रहकर सहज पद्मकेतुकी गतिके अन्तमें दिखायी देता है। यह जितने महीने दिखायी दे उतने ही वर्ष सुभिक्ष करता है। किन्तु मध्य देशके आर्योंका और औदीच्योंका नाश करता है।

आवर्त्तकेतु—श्वेतकेतुके समाप्त होनेपर पश्चिममें अर्द्ध रात्रिके समय शंखकी आभावाला आवर्त्तकेतु उदय होता है। यह केतु जितने मुहूर्त्त तक दिखायी दे, उतने ही महीनों सुभिक्ष करता है। यह सदा संसारमें यज्ञोत्सव करता है।

रश्मि केतु—काश्यप श्वेतकेतुके समान यह रश्मिकेतु फल देता है। यह कुछ धूम्रवर्णकी शिखाके साथ कृत्तिकाके पीछे दिखायी देता है। विभावसुसे पैदा हुआ यह रश्मिकेतु १०० वर्ष प्रोषित रहकर आवर्त्त केतुकी गतिके अन्तमें कृत्तिका नक्षत्रके समीप दिखायी देता है।

वसाकेतु, अस्थिकेतु, शस्त्रकेतु—वसाकेतु अत्यन्त स्निग्ध, सुभिक्ष और महामारीप्रद होता है। यह १३० वर्ष प्रवासित रहकर उत्तरकी ओर लम्बा होता हुआ उदय होता है। वसाकेतुके समान अस्थिकेतु रूक्ष हो तो क्षुद् भयावह होती है (भुखमरी पड़ती है)। पश्चिममें वसाकेतुकी समानताका दीखा हुआ शस्त्रकेतु महामारी करता है।

कुमुदकेतु—कुमुदकी आभावाला, पूर्वकी तरफ शिखावाला, स्निग्ध और दुग्धकी तरह स्वच्छ कुमुदकेतु पश्चिममें वसा केतुकी गतिके अन्तमें दिखायी देता है। एक ही रातमें दिखायी दिया हुआ यह सुभिक्ष और दस वर्ष तक सुहृद्भाव पैदा करता है, किन्तु पाश्चात्य देशोंमें कुछ रोग उत्पन्न करता है।

कपाल किरण—कपाल केतु प्राची दिशामें अमावास्याके दिन उदय हुआ आकाशके मध्यमें धूम्र किरणोंकी शिखावाला होकर रोग, वृष्टि, भूख और मृत्युको देता है। यह १२५ वर्ष प्रवासमें रहकर अमृतोत्पन्न कुमुद केतुके अन्तमें तीन पक्षसे अधिक उदय रहता है। जितने दिन तक यह दीखता रहता है उतने ही महीनों तक इसका फल मिलता है। जितने मास और वर्ष तक दीखता है, उससे तीन पक्ष अधिक फल रहता है।

मणिकेतु—यह मणिकेतु दूधकी धाराके समान स्निग्ध शिखावाला श्वेत रंगका होता है। यह रात्रिभर एक प्रहर तक सूक्ष्म तारके रूपमें दिखायी देता है। कपाल केतुकी गतिके अन्तमें यह मणिकेतु पश्चिम दिशामें उदय होता है और उस दिनसे साढ़े चार महीने तक सुभिक्ष करता है।

कलिकिरण रौद्रकेतु—(किरण)—कलिकिरण रौद्रकेतु वैश्वानर वीथीके पूर्वकी ओर उदय होकर ३० अंश ऊपर चढ़कर फिर अस्त हो जाता है। यह ३०० वर्ष ९ महीने तक प्रवास

में रहकर अमृतोत्पन्न मणिकेतुकी गतिके अन्तमें उदय होता है। इसकी शिखा तीक्ष्ण, रूखी, धूमिल, ताँबेकी तरह लाल, शूलकी आकृतिवाली और दक्षिणकी ओर झुकी हुई होती है। जिसका फल तेरहवें महीने होता है। जितने महीने यह दिखायी देता है उतने ही वर्ष तक इसका भय समझना चाहिए। उतने वर्षों तक भूख, अनावृष्टि, महामारी आदि रोगोंसे प्रजाको दुःख होता है।

संवर्त्तकेतु—यह संवर्त्तकेतु १००८ वर्ष तक प्रवासमें रहकर पश्चिममें सायंकालके समय आकाशके तीन अंशोंको आक्रमण करके दिखायी देता है। धूम्र ताम्रवर्णके शूलकी-सी कान्तिवाला, रूखी शिखावाला यह भी रात्रिमें जितने मुहूर्त तक दिखायी दे उतने ही वर्ष तक अनिष्ट करता है। इसके उदय होनेसे अवृष्टि, दुर्भिक्ष, रोग, शास्त्रोंका कोप होता है और राजा लोग स्वचक्र और परचक्रसे दुःखी होते हैं। यह संवर्त केतु जिस नक्षत्रमें उदय होता है और जिस नक्षत्रमें अस्त होता है तथा जिसको छोड़ता है वा जिस नक्षत्रको स्पर्श करता है उनके आश्रित देशोंका नाश हो जाता है।

ध्रुवकेतु—यह ध्रुवकेतु अनियत गति और वर्णका होता है। सभी दिशाओंमें जहाँ-तहाँ नाना आकृतिका दीख पड़ता है। द्यु, अन्तरिक्ष का भूमि पर स्निग्ध दिखायी दे तो शुभ और गृहस्थियोंके गृहांगणमें तथा राजाओंके सेनाके किसी भागमें दिखायी देनेसे विनाशकारी होता है।

अमृतकेतु—जल, भट, पद्म, आवर्त्त, कुमुद, मणि और संवर्त्त ये सात केतु प्रकृतिसे ही अमृतोत्पन्न माने जाते हैं।

दुष्ट केतु फल—जो दुष्ट केतु हैं वे क्रमसे अश्विनी आदि २७ नक्षत्रोंमें गये हुए निम्नलिखित देशोंके नरेशोंका नाश करते हैं।

२७ नक्षत्रों के अनुसार दुष्ट केतुओंका घातक फल

नक्षत्र	देश	नक्षत्र	देश
अश्विनी	अश्मक देश घातक	स्वाती	कम्बोज (कश्मीर) का घातक
भरणी	किरात—भीलोंका घातक	विशाखा	अवधका घातक
कृत्तिका	उड़ीसा प्रदेशका घातक	अनुराधा	पुण्ड्र (मिथिलाके समीपका प्रान्त)
रोहिणी	शूरसेनका घातक	ज्येष्ठा	कान्यकुब्ज (कन्नौज) का घातक
मृगसिर	उशीनर (गन्धार)	मूल	मद्रक तथा आन्ध्र
आर्द्रा	जलजा जीय (तिरहुत प्रान्त)	पूर्वाषाढ	काशीका घातक
पुनर्वसु	अश्मकका घातक	उत्तराषाढ़	अर्जुनायक, यौधेय, शिविएवंचेदि
पुष्य	मगध „ „	श्रवण	कैकेय (सतलजके पीछे) और व्यासके आगेका प्रान्त
आश्लेषा	असिक „ „		
मघा	अंग (वैद्यनाथसे भुवनेश्वरतक) का घातक	धनिष्ठा	पंचनद (पंजाब)
		शतभिषा	सिंहल (सीलोन)
पूर्वाफाल्गुनी	पाण्ड्य (देहली प्रान्त) का घातक	पूर्वा भा०	बंग (बंगाल प्रान्त)
उत्तरा फा०	अवन्ति (उज्जैन प्रान्त) „	उत्तराभा०	नैमिष
हस्त	दण्डक (नासिक पंचवटी) „	रेवती	किरात (भूटान और आसामके पूर्वके प्रान्त)
चित्रा	कुरुक्षेत्र प्रदेशका घातक		

जितने दिनों तक ये दीखते हैं, उतने ही महीनों तक और जितने महीनों तक दीखें उतने ही वर्षों तक इनका फल मिलता है। जब वे दीखें तो उसके तीन पक्ष आगे फल देते हैं। जिन केतुओंकी शिखा उल्कासे ताडित हो रही हो वे केतु हूण, अफगान, चीन और चोलसे अन्यत्र देशोंमें श्रेयस्कर होते हैं। जो केतु शुक्ल, स्निग्धतनु, ह्रस्व, प्रसन्न, थोड़े समय ही दीखनेवाला सीधा हो और जिसके उदय होनेसे वृष्टि हुई हो वह शुभ फलदायी होता है।

चार प्रकारके भूकम्प ऐन्द्र, वारुण, वायव्य और आग्नेय होते हैं, इनका कारण भी राहु और केतुका विशेष योग ही है। जब राहुसे सातवें मंगल, मंगलसे पाँचवें बुध और बुधसे चौथे चन्द्रमा होता है, उस समय भूकम्प होता है।

स्वाती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु इन नक्षत्रोंमें अग्नि केतु या संवर्त केतु दिखलायी पड़े तो भूकम्प होता है। पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और मघा इन नक्षत्रोंका आग्नेय मण्डल कहलाता है। जब कीलक या आग्नेय केतु इस मण्डलमें दिखलायी देते हैं तो भूकम्प होनेका योग आता है। चल, जल, उर्मि, औद्दालक, पद्म और रविरश्मिकेतु जब प्रकाशमान होकर किसी भी मध्यरात्रिमें उदित होते हैं, तो उसके तीन सप्ताहमें भयङ्कर भूकम्प पूर्वके देशोंमें तथा हल्का भूकम्प पश्चिमके देशोंमें आता है। वसाकेतु और कपालकेतु यदि प्रतिपदा तिथिको रात्रिके प्रथम प्रहरमें दिखलायी पड़े तो भी भूकम्प आता है। भूकम्पोंके प्रधान निमित्त केतुओंका उदय है। यों तो ग्रहयोगसे गणित द्वारा भूकम्पका समय निकाला जाता है, किन्तु सर्वसाधारण केतुओंके उदयके निरीक्षण मात्रसे आकाशदर्शनसे ही भूकम्प का परिज्ञान कर सकता है।

द्वाविंशतितमोऽध्यायः

सर्वग्रहेश्वरः सूर्यः प्रवासमुदयं प्रति ।
तस्य चारं प्रवक्ष्यामि तन्निबोधत तत्त्वतः ॥१॥

सभी ग्रहोंका स्वामी सूर्य है। इसके प्रवास, उदय और चारका वर्णन करता हूँ, इन्हें यथार्थ समझना चाहिए ॥१॥

सुरश्मी रजतप्रख्यः स्फटिकाभो महाद्युतिः ।
उदये दृश्यते सूर्यः सुभिक्षं नृपतेर्हितः ॥२॥

यदि अच्छा किरणोंवाला, रजतके समान कान्तिवाला, स्फटिकके समान निमल, महान् कान्तिवाला सूर्य उदयमें दिखलाई पड़े तो राजाका कल्याण और सुभिक्ष होता है ॥२॥

रक्तः शस्त्रप्रकोपाय भयाय च महार्घदः ।
नृपाणामहितश्चापि स्थावराणां च कीर्त्तितः ॥३॥

लालवर्णका सूर्य शस्त्रकोप करता है, भय उत्पन्न करता है, वस्तुओंकी महँगाई कराता है और स्थावर—तद्देश निवासी राजाओंका अहित करता है ॥३॥

पीतो लोहितरश्मिश्च व्याधि-मृत्युकरो रविः ।
विरश्मिर्धूमकृष्णाभः क्षुधार्त्तसृष्टिरोगदः ॥४॥

पीत और लोहित—पीली और लाल किरणवाला सूर्य व्याधि और मृत्यु करनेवाला होता है। धूम और कृष्णवर्णवाला सूर्य क्षुधा-पीड़ा—भुखमरी और रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। यहाँ सूर्यके उक्त प्रकारके वर्णोंका प्रातःकाल सूर्योदय समयमें ही निरीक्षण करना चाहिए, उसीका उपर्युक्त फल बताया गया है ॥४॥

कबन्धेनाऽऽवृतः सूर्यो यदि दृश्येत प्राग् दिशि ।
वङ्गानङ्गान् कलिङ्गांश्च काशी-कर्णाट-मेखलान् ॥५॥
मागधान् कटकालांश्च कालवक्रोष्ट्रकर्णिकान् ।
माहेन्द्रसंवृतोवान्द्रास्तदा[1] हन्याच्च भास्करः ॥६॥

यदि उदयकालमें पूर्वदिशामें कबन्ध—धड़से ढका हुआ हुआ सूर्य दिखलायी पड़े तो वंग, अंग, कलिंग, काशी, कर्णाटक, मेखल, मगध, कटक, कालवक्रोष्ट, कर्णिका, माहेन्द्र, उड्र आदि देशोंका घात करता है ॥५–६॥

कबन्धो वामपीतो वा दक्षिणेन यदा रविः ।
चर्विलान् मलयानुड्रान् स्त्रीराज्यं वनवासिकान् ॥७॥
किष्किन्धांश्च कुनाटांश्च ताम्रकर्णांस्तथैव च ।
स वक्र-चक्र-क्रूरांश्च कुणपांश्च स हिंसति ॥८॥

---

1. महेन्द्रसंश्रितानुड्रां मु० ।

जब सूर्यसे दक्षिण या बायीं ओर पीतवर्णका कबन्ध दिखलायी पड़े तो चर्विल, मलय, उड्र, स्त्रीराज्य और वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, ताम्रकर्ण, चक्र-चक्र, क्रूर और कुणपोंका घात करता है ॥७-८॥

अपरेण च कबन्धस्तु दृश्यते द्युतितो यदा ।
युगन्धरायणं मरुत्-सौराष्ट्रान् कच्छगैरिजान् ॥९॥
कोङ्कणानपरान्तांश्च भोजांश्च कालजीविनः ।
अपरांस्तांश्च सर्वान् वै निहन्यात् तादृशो रविः ॥१०॥

यदि पश्चिमकी ओर द्युतिमान् कबन्ध दिखलायी पड़े तो युगन्धरायण, मरुत्, सौराष्ट्र, कच्छ, गैरिक, कोंकण, अपरान्त राष्ट्र, भोज, कालजीवी इत्यादि राष्ट्रोंका घात करता है ॥९-१०॥

उत्तरे उदयोऽर्कस्य कबन्धसदृशस्तदा ।
क्षुद्रकामालवाह्लीकः[1] सिन्धु-सौवीरदर्दुरः ॥११॥
काश्मीरान् दरदांश्चैव पालवां मागधांस्तथा ।
साकेतान् कोशलान् काञ्चीमहिच्छत्रं च हिंसति ॥१२॥

यदि कबन्धके समान उत्तरमें सूर्यका उदय हो तो वह क्षुद्रक, मालव, सिन्धु, सौवीर, दर्दुर, काश्मीर, दरद, पालव, मगध, साकेत, कोशल, काञ्ची और अहिच्छत्रका घात करता है ॥११-१२॥

कबन्धमुदये भानोर्यदा मध्ये प्रदृश्यते ।
मध्यमा मध्यसाराश्च पीड्यन्ते मध्यदेशजाः ॥१३॥

यदि सूर्यके मध्यमें कबन्धका उदय दिखलाई पड़े तो मध्य देशमें उत्पन्न व्यक्तियोंका घात होता है ॥१३॥

नक्षत्रमादित्यवर्णो यस्य दृश्येत भास्करः ।
तस्य पीडा भवेत् पुंसः प्रयत्नेन शिवः स्मृतः ॥१४॥

जिस व्यक्तिके नक्षत्रपर रक्तवर्ण सूर्य दिखलायी पड़ता है, उस व्यक्तिको पीड़ा होती है और बड़े यत्नके पश्चात् कल्याण होता है ॥१४॥

स्थालीपिठरसंस्थाने सुभिक्षं वित्तदं[2] नृणाम्[3] ।
वित्तलाभं तु राज्यस्य मृत्युः पिठरसंस्थिते ॥१५॥

यदि थाली-पिठर—गोल थाली और मूढ़ेके आकारमें सूर्य उदयकालमें दिखलायी पड़े तो मनुष्योंको सुभिक्ष और धन लाभ करानेवाला है। राज्यके लिए धनलाभ करानेवाला होता है। पीढ़ाके समान सूर्य दिखायी पड़े तो मृत्युप्रद होता है ॥१५॥

सुवर्णवर्णे वर्षं वा मासं वा रजतप्रभे ।
शस्त्रं शोणितवत् सूर्यो दाघो वैश्वानरप्रभे ॥१६॥

स्वर्णके समान रंगका सूर्य उदयकालमें दिखलायी पड़े या रजतके समान वर्णका सूर्य दिखलायी पड़े तो वर्ष या मास सुखमय व्यतीत होते हैं। रक्त वर्णके समान सूर्य दिखलायी पड़े तो शस्त्रपीड़ा और अग्निके समान दिखलायी पड़े तो दग्ध करनेवाला होता है ॥१६॥

---

1. क्षुद्रकान् मालवान् हन्ति सिन्धु-सौवीर-दर्दुरान् मु० । 2. क्षुद्रमयं मु० । 3. नृणां मु० ।

शृङ्गी राज्ञां विजयदः कोश-वाहनवृद्धये ।
चित्रः सस्यविनाशाय भयाय च रविः स्मृतः ॥१७॥

शृंगीवर्णका रवि राजाओंके लिए विजय देनेवाला, कोश और वाहनकी वृद्धि करनेवाला होता है। चित्रवर्णका रवि धान्यका विनाश करता है और भयोत्पादक होता है ॥१७॥

अस्तङ्गते यदा सूर्ये चिरं रक्ता वसुन्धरा ।
सर्वलोकभयं विन्द्यात् तदा वृद्धानुशासने ॥१८॥

जब सूर्यके अस्त होने पर पृथ्वी बहुत समय तक रक्तवर्णकी दिखलायी पड़े तो सर्वलोकको भय होता है ॥१८॥

उदयास्तमने ध्वस्ते यदा वै कुरुते रविः ।
महाभयं तदानीके सुभिक्षं क्षेममेव च ॥१९॥

उदय और अस्तकालको जब सूर्य ध्वस्त करे तो सेनामें महान् भय होता है तथा सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥१९॥

एतान्येव तु लिङ्गानि पर्वण्यां चन्द्र-सूर्ययोः ।
तदा राहुरिति ज्ञेयो विकारश्च न विद्यते ॥२०॥

यदि चन्द्रमा और सूर्यके पर्वकाल—पूर्णमासी या अमावास्यामें उक्त चिह्न दिखलायी पड़े तो राहु समझना चाहिए, इसमें विकार नहीं होता है ॥२०॥

शेषमौत्पादिकं प्रोक्तं विधानं भास्करं प्रति ।
ग्रहयुद्धे [1]प्रवक्ष्यामि सर्वगत्या च साधयेत् ॥२१॥

अवशेष सूर्यका औत्पातिक विधान समझना चाहिए। ग्रहयुद्धका वर्णन करूँगा, उसकी सिद्धि गति आदिसे कर लेनी चाहिए ॥२१॥

इति भद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रेऽऽदित्याचारं नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥२२॥

विवेचन—पूर्वाषाढा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा और मघामें १४ नक्षत्र 'चन्द्रनक्षत्र' एवं पूर्वाभाद्रपद, शतभिषा, मृगशिरा, रोहिणी, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूलमें १३ नक्षत्र 'सूर्यनक्षत्र' कहलाते हैं। यदि सूर्यनक्षत्रोंमें चन्द्रमा और चन्द्रनक्षत्रोंमें सूर्य हो तो वर्षा होती है। चन्द्र नक्षत्रोंमें यदि सूर्य और चन्द्रमा दोनों हों तो अल्पवृष्टि होती है, किन्तु यदि सूर्य नक्षत्र पर सूर्य-चन्द्रमा दोनों हों तो वृष्टि नहीं होती। सूर्य नक्षत्र पर सूर्यके आनेसे वायु चलती है, जिससे वायु-दोषके कारण वर्षा नहीं होती।

1. घ मु० ।

चन्द्रमा चन्द्रनक्षत्रों पर रहे तो केवल बादल आच्छादित रहते हैं, वर्षा नहीं होती। कर्क संक्रान्तिके दिन रविवार होनेसे १० विश्वा, सोमवार होनेसे २० विश्वा, मंगलवार होनेसे ८ विश्वा, बुधवार होनेसे १२ विश्वा, गुरुवार होनेसे १८ विश्वा, शुक्रवार होनेसे भी १८ विश्वा और शनिवार होनेसे ५ विश्वा वर्षा होती है। कर्क संक्रान्तिके दिन शनि, रवि, बुध और मंगल वार होनेसे अधिक वृष्टि नहीं होती, शेष वारोंमें सुवृष्टि होती है। चन्द्रमाके जलराशि पर स्थित होने पर सूर्य कर्क राशिमें आवे तो अच्छी वर्षा होती है। मेष, वृष, मिथुन और मीन राशि पर चन्द्रमाके रहते हुए यदि सूर्य कर्क राशिमें प्रविष्ट हो तो १०० आढक वर्षा होती है। कर्क संक्रान्तिके समय धनुष और सिंह राशि पर चन्द्रमाके होनेसे ५० आढक वर्षा होती है। मकर और कन्या राशिपर चन्द्रमाके रहनेसे २५ आढक वर्षा एवं तुला, वृश्चिक, कुम्भ और कर्क राशि-पर चन्द्रमाके रहनेसे १२॥ आढक प्रमाण वर्षा होती है। कर्कराशिमें प्रविष्ट होते हुए सूर्यको यदि बृहस्पति पूर्ण दृष्टिसे देखे अथवा तीन चरण दृष्टिसे देखे तो अच्छी वर्षा होती है। श्रावणके महीनेमें यदि कर्क संक्रान्तिके समय मेघ खूब छाये हों तो सात महीने तक सुभिक्ष होता है और अच्छी वर्षा होती है। मंगलके दिन सूर्यकी कर्क संक्रान्ति और शनिवारको मकर संक्रान्ति का होना शुभ नहीं है। स्वाति, ज्येष्ठा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा इन नक्षत्रोंके पन्द्रहवें मुहूर्तमें मकर राशि या सूर्यके प्रविष्ट होनेसे अशुभ फल होता है। पुनर्वसु, विशाखा, रोहिणी और तीनों उत्तरा नक्षत्रोंके चौथे या पाँचवें मुहूर्त्तमें सूर्य प्रवेश करे तो शुभ फल होता है। सूर्यकी संक्रान्तिके दिनसे ग्यारहवें, पचीसवें, चौथे या अठारहवें दिन अमावास्याका होना सुभिक्ष सूचक है। यदि पहली संक्रान्तिका नक्षत्र दूसरी संक्रान्तिमें आवे तो शुभ फल होता है, किन्तु उस नक्षत्रसे दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें नक्षत्र शुभ नहीं होते।

सूर्यकी संक्रान्तियोंके अनुसार फलादेश—मेषकी संक्रान्तिके दिन तुलाराशिका चन्द्रमा हो तो छः महीनेमें धान्यकी अधिकता करता है। सभी प्रदेशोंमें सुभिक्ष होती है। बङ्गाल और पञ्जाबमें चावल, गेहूँकी उपज अधिक होती है। देशके अन्य सभी भागोंमें भी मोटे धान्योंकी उत्पत्ति अधिक होती है। मेष संक्रान्ति प्रातःकाल होनेपर शुभ, मध्याह्नमें होनेसे निकृष्ट और सन्ध्याकालमें होनेसे अतिनिकृष्ट फल होता है। मेष संक्रान्ति रात्रिमें प्रविष्ट हो तो साधारणतः अशुभ फल होता है। यदि संक्रान्ति कालमें अश्विनी नक्षत्र क्रूर ग्रहों द्वारा विद्ध हो तो अशुभ फल होता है। राष्ट्रमें अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। वर्षा की भी कमी रहती है। मेष संक्रान्ति, कर्क संक्रान्ति और मकर संक्रान्तिका फल एक वर्ष तक रहता है। यदि ये तीनों संक्रान्तियाँ अशुभ वार, अशुभ घटियोंमें आती हैं, तो देशमें नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। शनिवारको मेषसंक्रान्ति पड़नेसे जगत्में अशान्ति रहती है। चीन और रूसमें अन्नादि पदार्थोंकी बहुलता होती है, पर आन्तरिक अशान्ति इन राष्ट्रोंमें भी बनी रहती है।

वृषकी संक्रान्तिमें वृश्चिक राशि चन्द्रमाके रहनेसे चार महीने तक अन्न लाभ होता है। सुभिक्ष और शान्ति रहती है। खाद्यान्नोंकी बहुलता सभी देशों और राष्ट्रोंमें रहती है। काशी, कन्नौज और विदर्भमें राजनैतिक संघर्ष होता है। वृषकी संक्रान्ति बुधवारको होनेसे घीके व्यापारमें लाभ होता है। शुक्रवारको वृषकी संक्रान्ति हो तो रसपदार्थोंकी मँहगी होती है। शनिवारको इस संक्रान्तिके होनेसे अन्नका भाव तेज होता है। मिथुनकी संक्रान्तिको धनुका चन्द्रमा हो तो तिल, तैल, अन्नसंग्रह करनेसे चौथे महीनेमें लाभ होता है। यदि चन्द्रमा क्रूर ग्रह सहित हो तो लाभके स्थानमें हानि होती है। कर्ककी संक्रान्तिमें मकरका चन्द्रमा हो तो दुर्भिक्ष होता है। इस योगके चार महीनेके उपरान्त धनिक भी निर्धन हो जाता है। सभीकी आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाती है। देशके कोने-कोनेमें अन्नकी आवश्यकता प्रतीत होती है। जिन राज्यों, प्रदेशों और देशोंमें अच्छा अनाज उपजता है, उनमें भी अन्नकी कमी

हो जानेसे अनेक प्रकारके कष्ट होते हैं। कन्याकी संक्रान्ति होनेपर मीनके चन्द्रमामें छत्रभंग होता है। उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार और दिल्ली राज्यमें अनेक प्रकारके उपद्रव होते हैं। बम्बई और मद्रासमें अनेक प्रकारकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। तुलाकी संक्रान्तिमें मेषका चन्द्रमा हो तो पाँच महीनेमें व्यापारमें लाभ होता है। अन्नकी उपज साधारण होती है। जूट, सूत, कपास और सनकी फसल साधारण होती है। अतः इन वस्तुओंके व्यापारमें अधिक लाभ होता है। वृश्चिककी संक्रान्तिमें वृषराशिका चन्द्रमा हो तो तिल, तेल तथा अन्नका संग्रह करना उचित है। इन वस्तुओंके व्यापारमें अधिक लाभ होता है। धनुकी संक्रान्ति और मिथुनके चन्द्रमामें पाँच महीने तक अन्नमें लाभ होता है। मकरकी संक्रान्तिमें कर्कका चन्द्रमा हो तो कुलटाओंका विनाश होता है। कपास, घी, सूतमें पाँचवें मासमें भी लाभ होता है। कुम्भकी संक्रान्तिमें सिंहका चन्द्रमा हो तो चौथे महीनेमें अन्नलाभ होता है। मीनकी संक्रान्तिमें कन्याका चन्द्रमा होनेपर प्रत्येक प्रकारके अनाजमें लाभ होता है। अनाजकी कमी भी साधारणतः दिखलायी पड़ती है, किन्तु उस कमीको किसी प्रकार पूरा किया जा सकता है। जिस वारकी यदि संक्रान्ति हो, यदि उसी वारमें अमावास्या भी पड़ती हो तो यह खर्पर योग कहलाता है। यह योग सभी प्रकारके धान्योंको नष्ट करनेवाला है। यदि प्रथम संक्रान्तिको शनिवार हो, दूसरीको रविवार, तीसरीको सोमवार, चौथीको मंगलवार, पाँचवींको बुध, छठवींको गुरुवार, सातवींको शुक्रवार, आठवींको शनिवार, नवमीको रविवार, दसवींको सोमवार, ग्यारहवींको मंगलवार और बारहवीं संक्रान्तिको बुधवार हो तो खर्पर योग होता है। इस योगके होनेसे भी धन-धान्य और जीव-जन्तुओंका विनाश होता है। यदि कार्त्तिकमें वृश्चिककी संक्रान्ति रविवारी हो तो श्वेत रंगके पदार्थ मँहगे, म्लेच्छोंमें रोग-विपत्ति एवं व्यापारी वर्गके व्यक्तियोंको भी कष्ट होता है। चैत्र मासमें मेषकी संक्रान्ति मंगल या शनिवार की हो तो अन्नका भाव तेज, गेहूँ, चने, जौ आदि समस्त धान्योंका भाव तेज होता है। सूर्यका क्रूर ग्रहोंके साथ रहना, या क्रूर ग्रहोंसे विद्ध रहना अथवा क्रूर ग्रहोंके साथ सूर्यका वेध होना, वर्षा, फसल, धान्योत्पत्ति आदिके लिए अशुभ है। सूर्य यदि मृदु संज्ञक नक्षत्रोंको भोग कर रहा हो, उस समय किसी शुभ ग्रहकी दृष्टि सूर्यपर हो तो, इस प्रकारको संक्रान्ति जगतमें उथल-पुथल करती है। सुभिक्ष और वर्षाके लिए यह योग उत्तम है। यद्यपि संक्रान्ति मात्रके विचारसे उत्तम फल नहीं घटता है, अतः ग्रहोंका सभी दृष्टियोंसे विचार करना आवश्यक है।

त्रयोविंशतितमोऽध्यायः

मासे मासे समुत्थानं चन्द्रं [1]यो पश्येत् बुद्धिमान् ।
वर्ण-संस्थानरात्रौ तु ततो ब्रूयात् शुभा-शुभम् ॥१॥

जो बुद्धिमान् व्यक्ति रात्रिमें प्रत्येक महीनेमें चन्द्रमाके वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदिका दर्शन करता है, उसके लिए शुभाशुभका निरूपण करता हूँ ॥१॥

स्निग्धः श्वेतो विशालश्च पवित्रश्चन्द्रः शस्यते ।
किञ्चिदुत्तरशृङ्गश्च दस्यून् हन्यात् प्रदक्षिणम् ॥२॥

स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा प्रशंसित अच्छा—माना जाता है। यदि चन्द्रमाका शृंग-किनारा कुछ उत्तरकी ओर उठा हुआ हो तो दस्युओंका घात करता है ॥२॥

अश्मकान् भरतानुड्रान् काशि-कलिङ्ग-मालवान् ।
दक्षिणद्वीपवासांश्च हन्यादुत्तरशृङ्गवान् ॥३॥

उत्तर शृङ्गवाला चन्द्रमा अश्मक, भरत, उड्र, काशी, कलिंग, मालव और दक्षिणद्वीप वासियोंका घात करता है ॥३॥

क्षत्रियान् यवनान् वाह्लीन् हिमवच्छृङ्गमास्थितान् ।
युगन्धर-कुरून् हन्याद् ब्राह्मणान् दक्षिणोन्नतः ॥४॥

दक्षिण शृङ्गोन्नतिवाला चन्द्र क्षत्रिय, यवन, वाह्लीक, हिमाचलके निवासी, युगन्धर और कुरु निवासियों तथा ब्राह्मणोंका घात करता है ॥४॥

भस्माभो निःप्रभो रूक्षः श्वेतशृङ्गोऽतिसंस्थितः ।
चन्द्रमा न प्रशस्येत सर्ववर्णभयङ्करः ॥५॥

भस्मके समान आभावाला, निष्प्रभ, रूक्ष, श्वेत और अतिउन्नत शृङ्गवाला चन्द्रमा प्रशंस्य नहीं है; क्योंकि यह सभी वर्णवालोंको भय उत्पन्न करता है ॥५॥

शबरान् दण्डकानुड्रान् मद्रांश्च द्रविडांस्तथा ।
शूद्रान् महासनान् वृत्यान् समस्तान् सिन्धुसागरान् ॥६॥
आनर्त्तान्मलकीरांश्च कोङ्कणान् प्रलयम्बिनः ।
[2]रोमवृत्तान् पुलिन्द्रांश्च मारुश्वभ्रं च कच्छजान् ॥७॥
प्रायेण हिंसते देशानेतान् स्थूलस्तु चन्द्रमाः ।
समे शृङ्गे च विद्वेषी तथा यात्रां न योजयेत् ॥८॥

स्थूल चन्द्रमा शवर, दण्डक, उड्र, मन्द्र, द्रविड, शूद्र, महासन, वृत्य, सभी समुद्र, आनर्त, मलकीर, कोंकण, प्रलयम्बिन, रामवृत्त, पुलिन्द, मरुभूमि और कच्छ आदि देशोंका घात करता है। यदि चन्द्रमाका समान शृङ्ग हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥६-८॥

---

१. पश्यति मु० । २. रामा मु० ।

चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी विवर्णो विकृतः शशी ।
यदा मध्येन वा याति पार्थिवं हन्ति मालवम् ॥९॥

जब चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी तिथिको चन्द्रमा विकृत, बदरंग दिखलायी पड़े अथवा वह मध्यसे गमन करता हो तो मालवनृपका विनाश करता है ॥९॥

काञ्चीं किरातान् द्रमिलान् शाक्यान् लुब्धांस्तु सप्तमी ।
कुमारं युवराजानं चन्द्रो हन्यात् तथाऽष्टमी ॥१०॥

सप्तमी और अष्टमीका विकृत चन्द्रमा काञ्ची, किरात, द्रमिल, शाक्य, लुब्धक एवं कुमार और युवराजोंका विनाश करता है ॥१०॥

नवमी मन्त्रिणश्चौरान् ऊर्ध्वगान् वरसन्निभान् ।
दशमी स्थविरान् हन्यात् तथा वै पार्थिवान् प्रियान् ॥११॥

नवमीका विकृत चन्द्रमा मन्त्री, चोर, पथिक और अन्य श्रेष्ठ लोगोंका तथा दशमीका विकृत चन्द्र स्थविर राजा और उनके प्रियोंका विनाश करता है ॥११॥

एकादशी भयं कुर्यात् ग्रामीणांश्च तथा गवाम् ।
द्वादशी राजपुरुषांश्च वस्त्रं सस्यं च पीडयेत् ॥१२॥

एकादशीका विकृत चन्द्रमा ग्रामीण और गायोंको भय करता है तथा द्वादशीका चन्द्रमा राजपुरुष—राजकर्मचारी, वस्त्र और अनाजका घात करता है ॥१२॥

त्रयोदशी-चतुर्दश्योर्भयं शस्त्रं च मूर्च्छति ।
संग्रामः संभ्रमश्चैव जायते वर्णसङ्करः ॥१३॥

त्रयोदशी और चतुर्दशीका विकृत चन्द्रमा भयोत्पादक, शस्त्रकोप और मूर्च्छा करता है। संग्राम—युद्ध और आकुलता व्याप्त होती है और वर्णसंकर पैदा होते हैं ॥१३॥

नृपा भृत्यैर्विरुध्यन्ते राष्ट्रं चौरैर्विलुण्ठ्यते ।
पूर्णिमायां हते चन्द्रे ऋक्षे वा विकृतप्रभे ॥१४॥

यदि पूर्णिमामें चन्द्रमाद्वारा घात नक्षत्रपर चन्द्रमाके स्थित होनेपर अथवा विकृत प्रभावाले चन्द्रमाके होनेपर राजा और सेवकोंमें विरोध होता है तथा चोरोंके द्वारा राष्ट्र लूटा जाता है ॥१४॥

ह्रस्वो रूक्षश्च चन्द्रश्च श्यामश्चापि भयावहः ।
स्निग्धः शुक्लो महान्[1] श्रीमांश्चन्द्रो नक्षत्रवृद्धये ॥१५॥

ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्र भयोत्पादक है तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक होता है ॥१५॥

श्वेतः पीतश्च रक्तश्च कृष्णश्चापि यथाक्रमम् ।
सुवर्णसुखदश्चन्द्रो विपरीतो भयावहः ॥१६॥

श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण ब्राह्मणादि चारों वर्णोंके लिए सुखद होता है और सुवर्ण—सुन्दर चन्द्र सभीके लिए सुखप्रद है, इसके विपरीत चन्द्र भयानक होता है ॥१६॥

1. महो श्रीमान् मु० ।

चन्द्रे प्रतिपदि योऽन्यो ग्रहः प्रविशतेऽशुभः ।
संग्रामं जायते तत्र सप्तराष्ट्रविनाशनः ॥१७॥

यदि प्रतिपदा तिथिको चन्द्रमामें अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो भयङ्कर संग्राम होता है तथा सात राष्ट्रोंका विनाश होता है ॥१७॥

द्वितीयायां तृतीयायां गर्भनाशाय कल्पते ।
चतुर्थ्यां च सुवाती च मन्दवृष्टिं च निर्दिशेत् ॥१८॥

यदि द्वितीया, तृतीया तिथिको चन्द्रमामें अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो गर्भनाश करनेवाला होता है। चतुर्थी तिथिमें प्रवेश करे तो घात और मन्दवृष्टि करनेवाला होता है ॥१८॥

पञ्चम्यां ब्राह्मणान्[1] सिद्धान् दीक्षितांश्चापि पीडयेत् ।
यवनाय धर्मभ्रष्टाय षष्ठ्यां पीडां व्रजन्त्यतः ॥१९॥

पञ्चमी तिथिमें चन्द्रमामें कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो ब्राह्मण, सिद्ध और दीक्षितोंको पीड़ा तथा षष्ठी तिथिमें कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो धर्मरहित, यवन आदिको कष्ट होता है ॥१९॥

महाजनाश्च[3] पीडयन्ते क्षिप्रमैक्षुरकास्तथा ।
ईतयश्चापि जायन्ते सप्तम्यां सोमपीडने ॥२०॥

यदि सप्तमी तिथिको चन्द्रमाके घातित होने पर महाधनिक, नाई, धोबी, कृषक आदिको पीड़ा होती है और ईतियाँ—बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं ॥२०॥

विवर्णपुरुषश्चन्द्रो स्त्रीणां राजा निषेवते ।
कपिलोऽपि दक्षिणे मार्गे विन्द्यादग्निभयं तथा ॥२१॥

किसी अन्य अशुभ ग्रह द्वारा विवर्ण और पुरुष, स्त्रियों—रोहिणी आदिका राजा पति—चन्द्रमा सेवन किया जाय तथा कपिल—पिंगलवर्णका चन्द्रमा दक्षिण मार्गमें भी दिखलायी पड़े तो अग्निभय होता है ॥२१॥

सन्ध्यायां कृत्तिकां ज्येष्ठां रोहिणीं पितृदेवताम् ।
चित्रां विशाखां मैत्रं च चरेद् दक्षिणतः शशी ॥२२॥

सन्ध्यामें कृत्तिका, ज्येष्ठा, रोहिणी, मघा, चित्रा, विशाखा और अनुराधाका चन्द्रमा दक्षिण मार्गसे विचरण करता है ॥२२॥

सर्वभूतभयं विन्द्यात् तथा घोरं तु मासिकम् ।
सस्यं वर्षं च वर्धन्ते चन्द्रस्तद्वद् विपर्ययात् ॥२३॥

चन्द्रमाके विपर्यय होने पर समस्त प्राणियोंको भय होता है तथा धान्य और वर्षाकी वृद्धि होती है ॥२३॥

---

१. ब्राह्मणं मु० । २. क्षरतानि मु० । ३. महाधनाश्च मु० । ४. तदा मु० । ५. तदा मु० ।

रेवती-पुष्ययोः सोमः श्रीमानुत्तरगो यदा ।
महावर्षाणि कल्पन्ते तदा कृतयुगं यथा ॥२४॥

जब चन्द्रमा रेवती और पुष्य नक्षत्रमें उत्तर दिशामें गमन करता है, उस समय कृतयुगके समान महावर्ष होते हैं ॥२४॥

गोवीथीमजवीथीं वा वैश्वानरपथं तथा ।
विवर्णः सेवते चन्द्रः तदाऽल्पमुदकं भवेत् ॥२५॥

जब विवर्ण चन्द्रमा गोवीथि, अजवीथि या वैश्वानर पथमें गमन करता है, तब अल्प जलकी वर्षा होती है ॥२५॥

गजवीथ्यां नागवीथ्यां सुभिक्षं क्षेममेव च ।
सुप्रभे प्रकृतिस्थे च महावर्षं च निर्दिशेत् ॥२६॥

जब सुप्रभ प्रकृतिस्थ चन्द्रमा गजवीथि, नागवीथिमें गमन करता है, तब सुभिक्ष, कल्याण और महावर्षा होती है ॥२६॥

वैश्वानरपथं प्राप्ते चतुरङ्गं तु दृश्यते ।
सोमो विनाशकृल्लोके तदा वाऽग्निभयङ्करः ॥२७॥

जब चतुरंग चन्द्रमा वैश्वानर पथमें गमन करता हुआ दिखलायी पड़ता है तब लोकका विनाश होता है अथवा भयङ्कर अग्निका प्रकोप होता है ॥२७॥

अजवीथीमागते चन्द्रे क्षुत्तृषाग्निभयं नृणाम् ।
विवर्णो हीनरश्मिर्वा भद्रबाहुवचो यथा ॥२८॥

विवर्ण या हीन रश्मिवाला चन्द्रमा अजवीथिमें गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तो मनुष्योंको क्षुधा, तृषा और अग्निका भय रहता है। ऐसा भद्रबाहु स्वामीका वचन है ॥२८॥

गोवीथ्यां नागवीथ्यां च चतुर्थ्यां दृश्यते शशी ।
रोगशस्त्राणि वैराणि वर्षस्य च विवर्धयेत् ॥२९॥

जब चन्द्रमा चतुर्थी तिथिमें गोवीथि या नागवीथिमें गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तब उस वर्षमें रोग, शस्त्र और शत्रुता वृद्धिङ्गत होती है ॥२९॥

ऐरावणे चतुर्थस्थो[2] महावर्षं च उच्यते ।
चन्द्रः प्रकृतिसम्पन्नः सुरश्मिः श्रीरिवोज्ज्वलः ॥३०॥

यदि चन्द्रमा प्रकृति सम्पन्न, सुन्दर किरणवाला, सुन्दर श्रीके समान उज्ज्वल चतुष्पथ ऐरावत मार्गमें दिखलायी पड़े तो यह महावर्षा होता है ॥३०॥

श्यामश्छिद्रश्च पक्षादौ यदा दृश्यते यः सितः ।
चन्द्रमा रौरवं[3] घोरं नृपाणां कुरुते तदा ॥३१॥

जब चन्द्रमा काला और छिद्रयुक्त प्रथम पक्ष—कृष्णपक्षमें दिखलायी पड़े तो उस समय मनुष्योंमें घोर संघर्ष होता है ॥३१॥

१. मद्रा मु० । २. चतुष्पथो मु० । ३. रौरवं मु० ।

धनुषा यदि तुल्यः स्यात् पश्चादौ दृश्यते शशी।
ब्रूयात् पराजयं पृष्ठे युद्धं चैव विनिर्दिशेत् ॥३२॥

यदि प्रथम पक्षमें चन्द्रमा धनुषके तुल्य दिखलायी पड़े तो पराजय होता है और पीछे युद्ध होता है ॥३२॥

वैश्वानरपथेऽष्टम्यां तिर्यक्स्थो वा भयं वदेत्[1]।
परस्परं विरुध्यन्ते नृपाः प्रायः सुवर्चसः ॥३३॥

यदि अष्टमी तिथिको वैश्वानरमार्गमें तिर्यक् चन्द्रमा हो तो शक्तिशाली, तेजस्वी राजाओंमें युद्ध होता है ॥३३॥

दक्षिणं मार्गमाश्रित्य वध्यन्ते प्रवरा नराः।
चन्द्रस्तूत्तरमार्गस्थः क्षेम-सौभिक्षकारकः ॥३४॥

यदि चन्द्रमा दक्षिण मार्गमें हो तो बड़े-बड़े व्यक्तियोंका वध होता है, और उत्तर मार्गमें स्थित रहनेवाला चन्द्रमा क्षेम और सुभिक्ष करनेवाला होता है ॥३४॥

चन्द्रसूर्यौ विशृङ्गौ तु मध्यच्छिद्रौ हतप्रभौ।
युगान्तमिव कुर्वन्तौ तदा यात्रा न सिद्ध्यति[3] ॥३५॥

चन्द्रमा और सूर्य विगत शृङ्ग, मध्य छिद्र, कान्तिरहित हों तो युगान्तके समान—प्रलय कार्य करते हैं, उस समय यात्रा अच्छी नहीं मानी जाती है ॥३५॥

[4]यदैकनक्षत्र-गतौ कुर्यात् तद्वर्णसङ्करम्।
विनाशं तत्र जानीयाद् विपरीते जयं वदेत् ॥३६॥

एक नक्षत्र पर स्थित होकर जहाँ सूर्य और चन्द्र वर्णसंकर—वर्णमिश्रण करें, वहाँ विनाश समझना चाहिए। विपरीत होनेपर जय होता है ॥३६॥

बहुवोदयको वाऽथ ततो भयप्रदो भवेत्।
मन्दपाते फलं मन्दं मध्यमं मध्यमेन तु ॥३७॥

शीघ्र उदयको प्राप्त होनेवाला चन्द्रमा भयप्रद होता है। मन्दपात होनेपर मन्दफल और मध्यममें मध्यफल होता है ॥३७॥

चन्द्रमाः सर्वघातेन राष्ट्राज्यंभयङ्करः।
तथापि नागरान् हन्यात् या ग्रह समागमे ॥३८॥

सर्वघातके द्वारा चन्द्रमा सौराष्ट्रों—सौराष्ट्रके निवासियोंके लिए भयंकर होता है। जब चन्द्रमा अन्य ग्रहके साथ समागम करता है तो नागरिकोंका विनाश करता है ॥३८॥

नागराणां तदा भेदो विज्ञेयस्तु पराजयः।
यायिनामपि विज्ञेयं यदा युद्धं परस्परम् ॥३९॥

जब चन्द्रमाका अन्य किसी ग्रहके साथ युद्ध होता है, तब नागरिकोंमें परस्पर फूट रहती है और यायियों—आक्रमिकोंका पराजय होता है ॥३९॥

१. पश्चो प्रति मु०। २. भवेत् मु०। ३. शाम्यते मु०। ४. यस्य मु०। ५. नं[illegible]र्णसङ्कर मु०।

भार्गवः[1] गुरवः प्राप्तो पुष्याभिश्चित्रया सह ।
शक्रस्य चापरूपं च ब्रह्माणसदृशं[2] फलम् ॥४०॥

यदि इन्द्र धनुषके समान सुन्दर चन्द्रमा पुष्य और चित्रा नक्षत्रके साथ शुक्र और गुरु—बृहस्पतिको प्राप्त करे तो ब्राह्मण सदृश फल होता है ॥४०॥

क्षत्रियाश्च भुवि ख्याताः कोशाम्बीं देवतान्यपि[3] ।
पीडयन्ते तद्भक्ताश्च सङ्ग्रामाश्च गुरोर्वधः ॥४१॥

उक्त प्रकारकी चन्द्रमाकी स्थितिमें भूमिमें प्रसिद्ध कोशाम्बी आदि क्षत्रिय तथा उनके मध्य पीड़ित होते हैं और युद्ध होते हैं, जिससे गुरुजनोंकी हिंसा होती है ॥४१॥

पशवः पक्षिणो वैद्या महिषाः शबराः शकाः ।
सिंहलाः द्रामिलाः काचा बन्धुकाः पह्लवा नृपाः ॥४२॥

पुलिन्द्रा कोङ्कणा भोजाः कुरवो दस्यवः क्षमाः ।
शनैश्चरस्य घातेन पीड्यन्ते यवनैः सह ॥४३॥

चन्द्रमाके द्वारा शनिके घातित होनेसे पशु, पक्षी, वैद्य, महिष—भैंस, शबर, शक, सिंहल, द्रामिल, काच, बंधुक, पह्लव, नृप, पुलिन्द्र, कोंकण, भोज, कुरु, दस्यु, क्षमा आदि प्रदेशवासी यवनोंके साथ पीड़ित होते हैं ॥४२-४३॥

यस्य यस्य य नक्षत्रमेकशो द्वन्द्वशोऽपि वा ।
ग्रहा वामं प्रकुर्वन्ति तं तं हिंसन्ति सर्वशः ॥४४॥

जिस-जिस नक्षत्रको अकेला ग्रह या दो-दो ग्रह वाम—बायीं ओर करे, उस-उस नक्षत्रका घात सभी ओरसे करते हैं ॥४४॥

जन्मनक्षत्रघातेऽथ राज्ञो यात्रा न सिद्ध्यति ।
नागरेण हतश्चाल्पः स्वपक्षाय न यो भवेत् ॥४५॥

यदि कोई राजा जन्मनक्षत्रके घातित होनेपर यात्रा करे तो उसकी यात्रा सफल नहीं होती है। जो नगरवासी पक्षमें नहीं होते हैं, उनके द्वारा अल्पघात होता है ॥४५॥

राजा[4] चावनिजा गर्भा नागरा दारुजीविनः ।
गोपा गोजीविनश्चापि धनुस्सङ्ग्रामजीविनः ॥४६॥
तिला कुलस्था माषाश्च माषा मुद्गाश्चतुष्पदाः ।
पीडयन्ते बुधघातेन स्थावरं यच्च किञ्चन ॥४७॥

चन्द्रमाके द्वारा बुधके घातित होनेसे राजा, खानसे आजीविका करनेवाले, नागरिक, काष्ठसे आजीविका करनेवाले, गोप, गायोंसे आजीविका करनेवाले, धनुष और सेनासे आजीविका करनेवाले, तिल, कुलथी, उड़द, मूंग, चतुष्पद और स्थावर पीड़ित होते हैं ॥४६-४७॥

---

१. स्थावरा मु० । २. माह्मी गुदभरशाम मु० । ३. देवता भपि मु० । ४. या चावनिजा मु० ।

कनकं मणयो रत्नं शकाश्च यवनास्तथा ।
गुर्जरा पह्लवा मुख्याः क्षत्रिया मन्त्रिणो बलम् ॥४८॥

स्थावरस्य वनीकाकुनये सिंहला नृपाः ।
वणिजां वनशल्यं च पीड्यन्ते सूर्यघातेन ॥४९॥

सूर्यके घातसे कनक—सोना, मणि, रत्न, शक, यवन, गुहार, पह्लव आदि मुख्य क्षत्रिय, मन्त्री, सेना, स्थावरोंके अन्तर्गत सिंहल, वणिज और वनशाखावाले पीड़ित होते हैं ॥४८-४९॥

पौरेयाः शूरसेनाश्च शका वाह्लीकदेशजाः ।
मत्स्याः कच्छाश्च वस्याश्च सौवीराः गन्धिजास्तथा[2] ॥५०॥

पीड्यन्ते केतुघातेन ये च सत्त्वास्तथाश्रयाः ।
निर्घाता पापवर्षं वा विज्ञेयं बहुशस्तथा ॥५१॥

केतु घात द्वारा पुरवासी, शूरसेन, शक, वाह्लीक, मत्स्य, कच्छ, वत्स्य, सौवीर, सौधिक आदि देशवाले पीड़ित होते हैं तथा यह अनेक प्रकारसे संघर्षमय पाप वर्ष रहता है ॥५०-५१॥

पाण्ड्याः केरलाश्चोलाः सिंहलाः साविकास्तथा ।
[3]कुनपास्ते तयार्थाश्च मूलका वनवासकाः ॥५२॥

किष्किन्धाश्च कुनाटाश्च प्रत्यग्राश्च वनेचराः ।
रक्तपुष्पफलांश्चैव रोहिण्यां सूर्य-चन्द्रयोः ॥५३॥

पाण्ड्य, केरल, चोल, सिंहल, साविक, कुपन, विदर्भ, वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, वनचर, रक्तपुष्प और फल आदि विक्रन सूर्य और चन्द्रके संयुक्त होनेसे पीड़ित होते हैं ॥५२-५३॥

एवं च जायते सर्वं कुर्वन्ति विकृतिं यदा ।
तदा प्रजा विनश्यन्ति दुर्भिक्षेण भयेन च ॥५४॥

इस प्रकार चन्द्रमाके विकृत होनेसे दुर्भिक्ष और भय द्वारा प्रजाका विनाश होता है ॥५४॥

अर्धमासं यदा चन्द्रे[4] ग्रहा यान्ति विदक्षिणा[5] ।
तदा चन्द्रो जयं कुर्यान्नागरस्य महीपतेः ॥५५॥

जब चन्द्रमा आधे महीने—पन्द्रह दिनका हो तब अन्य ग्रह दक्षिणकी ओर गमन करें तो चन्द्रमा नागरिक और राजाको जय देता है ॥५५॥

हीयमानं यदा चन्द्रं ग्रहाः कुर्वन्ति वामतः ।
तदा विजयमाख्याति नागरस्य महीपतेः ॥५६॥

जब चन्द्रमा क्षीण हो रहा हो—कृष्णपक्षमें ग्रह चन्द्रमाको बायीं ओर करते हों तो नागरिक और राजाका विजय होता है ॥५६॥

---

१. गुहारा मु० । २. सौधिकास्तथा मु० । ३. कुपनास्ते मु० । ४. चन्द्र मु० । ५. विदक्षिणम् मु० ।

गति-मार्गा-कृति-वर्णमण्डलान्यपि वीथयः ।
चार-नक्षत्रचारांश्च ग्रहाणां शुक्रवद् विदुः ॥५७॥

ग्रहोंको गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चारनक्षत्र और चार आदि शुक्रके समान समझना चाहिए ॥५७॥

चन्द्रस्य चारं चरतेऽन्तरिक्षे सुचारदुश्चारसमं प्रचारम् ।
चर्यायुतः खेचरसुप्रणीतं यो वेद भिक्षुः स चरेन्नृपाणाम् ॥५८॥

चन्द्रमाके आकाशमें विचरण करनेपर सुचार और दुश्चार दोनों होते हैं। जो भिक्षु प्रसन्नतायुक्त चन्द्रमाकी चर्याको जानता है, वह भिक्षु राजाओंके मध्यमें विहार करता है ॥५८॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते चन्द्रचारसंज्ञो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥२३॥

विवेचन—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्रके दाहिने भागमें चन्द्रमा हो तो बीज, जल और वनकी हानि होती है। अग्निभय विशेष उत्पन्न होता है। जब विशाखा और अनुराधा नक्षत्रके दायें भागमें चन्द्रमा रहता है तब पाप चन्द्रमा कहलाता है। पाप चन्द्रमा जगत्‌में भय उत्पन्न करता है, परन्तु विशाखा, अनुराधा और मघा नक्षत्रके मध्य भागमें चन्द्रमाके रहनेसे शुभ फल होता है। रेवतीसे लेकर मृगशिरा तक छः नक्षत्र अनागत होकर मिलते हैं, आर्द्रासे लेकर अनुराधा तक बारह नक्षत्र मध्य भागमें चन्द्रमाके साथ मिलते हैं तथा ज्येष्ठासे लेकर उत्तरा भाद्रपद तक नौ नक्षत्र अतिक्रान्त होकर चन्द्रमाके साथ मिलते हैं। यदि चन्द्रमाका शृङ्ग कुछ ऊँचा होकर नावके समान विशालताको प्राप्त करे तो नाविकोंको कष्ट होता है। आधे उठे हुए चन्द्रमा शृङ्गको लांगल कहते हैं, उससे हलजीवी मनुष्योंको पीड़ा होती है। प्रबन्धकों, शासकों और नेताओंमें परस्पर मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा देशमें सुभिक्ष होता है। चन्द्रमाका दक्षिण शृङ्ग आधा उठा हुआ हो तो उसे दुष्ट लांगल शृङ्ग कहते हैं, इसका फल पाण्ड्य, चेर, चोल आदि राज्योंमें पारस्परिक अनैक्य होता है। इस प्रकारके शृंगके दर्शनसे वर्षाऋतुमें जलाभाव होता है तथा ग्रीष्म ऋतुमें संताप होता है। यदि समान भावसे चन्द्रमाका उदय हो तो पहले दिनकी तरह सर्वत्र सुभिक्ष, आनन्द, आमोद प्रमोद, वर्षा, हर्ष आदि होते हैं। दण्डके समान चन्द्रमाके उदय होनेपर गाय, बैलोंको पीड़ा होती है और राजा लोग उग्र दण्डधारी होते हैं। यदि धनुषके आकारका चन्द्रमा उदय हो तो युद्ध होता है, परन्तु जिस ओर उस धनुषकी मौर्वी रहती है, उस देशकी जय होती है। यदि चन्द्रशृङ्ग दक्षिण और उत्तरमें फैला हुआ हो तो भूकम्प, महामारी आदि फल उत्पन्न होते हैं। कृषिके लिए उक्त प्रकारका चन्द्रमा अच्छा नहीं माना गया है। जिस चन्द्रमाका शृङ्ग नीचेको मुख किये हुए हो उसे आवर्तित शृङ्ग कहते हैं, इससे मवेशीको कष्ट होता है। घासकी उत्पत्ति कम होती है तथा हरे चारेका भी अभाव रहता है। यदि चन्द्रमण्डलके चारों ओर अखण्डित गोलाकार रेखा दिखलायी दे तो 'कुण्ड' नामक शृङ्ग होता है। इस प्रकारके शृङ्गसे देशमें अशान्ति फैलती है तथा नाना प्रकारके उपद्रव होते हैं। यदि चन्द्रमाका शृङ्ग उत्तर दिशाकी ओर कुछ ऊँचा हो तो धान्यकी वृद्धि होती है, वर्षा भी उत्तम होती है। दक्षिणकी ओर शृङ्गके कुछ ऊँचे रहनेसे वर्षाका अभाव, धान्यकी कमी एवं नाना तरहकी बीमारियाँ फैलती हैं। एक शृङ्गवाला, नीचेको मुखवाला, शृङ्गहीन अथवा

सम्पूर्ण नये प्रकारका चन्द्रमा देखनेसे देखनेवालोंमें से किसीकी मृत्यु होती है। वैयक्तिक दृष्टिसे भी उक्त प्रकारके चक्रशृङ्गोंका देखना अनिष्टकर माना जाता है। यदि आकारसे छोटा चन्द्रमा दिखलायी पड़े तो दुर्भिक्ष, मृत्यु, रोग आदि अनिष्ट फल घटते हैं तथा बड़ा चन्द्रमा दिखलायी पड़े तो सुभिक्ष होता है। मध्यम आकारके चन्द्रमाके उदय होनेसे प्राणियोंको क्षुधाकी वेदना सहन करनी पड़ती है। राजाओं, प्रशासकों एवं अन्य अधिकारियोंमें अनेक प्रकारके उपद्रव होनेसे संघर्ष होता रहता है। देशमें अशान्ति होती है तथा नये-नये प्रकारके झगड़े उत्पन्न होते हैं। चन्द्रमाकी आकृति विशाल हो तो धनिकोंके यहाँ लक्ष्मीकी वृद्धि, स्थूल हो तो सुभिक्ष, रमणीय हो तो उत्तम धान्य उपजते हैं। यदि चन्द्रमाके शृङ्गको मंगल ग्रह ताडित करता हो तो कुत्सित राजनीतिज्ञोंका विनाश, यथेष्ट वर्षा, पर फसलकी उत्पत्तिका अभाव और शनिग्रहके द्वारा चन्द्रशृङ्ग आहत हो तो शस्त्रभय और क्षुधाका भय होता है। बुध द्वारा चन्द्रमाके शृङ्गको आहत होनेपर अनावृष्टि, दुर्भिक्ष एवं अनेक प्रकारके संकट आते हैं। शुक्र द्वारा चन्द्रशृङ्गका भेदन होनेसे छोटे दर्जेके शासन अधिकारियोंमें वैमनस्य, भ्रष्टाचार और अनीतिका सामना करना पड़ता है। जब गुरु द्वारा चन्द्रशृङ्ग छिन्न होता है, तब किसी महान् नेताकी मृत्यु या विश्वके किसी बड़े राजनीतिज्ञकी मृत्यु होती है।

कृष्ण पक्षमें चन्द्रशृङ्गका ग्रहों द्वारा पीडन हो तो मगध, यवन, पुलिन्द, नेपाल, मरु, कच्छ सूरत, मद्रास, पंजाब, काश्मीर, कुलूत, पुरुपान्द और उशीनर प्रदेशमें सात महीनों तक रोग व्याप्त रहता है। शुक्लपक्षमें ग्रहों द्वारा चन्द्रशृङ्गके छिन्न होना अधिक अशुभ नहीं होता है।

यदि बुध द्वारा चन्द्रमाका भेदन होता हो तो मगध, मथुरा और वेणा नदीके किनारे बसे हुए देशोंको पीड़ा होती है। केतु द्वारा चन्द्रमा पीड़ित होता हो तो अमंगल, व्याधि, दुर्भिक्ष और शस्त्रसे आजीविका करनेवालोंका विनाश होता है। चोरोंको अनेक प्रकारके कष्ट सहन करने पड़ते हैं। राहु या केतुसे ग्रस्त चन्द्रमाके ऊपर उल्का गिरे तो अशान्ति रहती है। यदि भस्मतुल्य रूक्ष, अरुणवर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण, कम्पायमान चन्द्रमा दिखलायी दे तो क्षुधा, संग्राम, रोगोत्पत्ति, चोरभय और शस्त्रभय आदि होते हैं। कुमुद, मृणाल और हारके समान शुभ्रवर्ण होकर चन्द्रमा नियमानुसार प्रतिदिन घटता-बढ़ता है तो सुभिक्ष, शान्ति और सुवृष्टि होती है। प्रजा आनन्दके साथ रहती है तथा संतापोंका विनाश होकर पूर्णतया शान्ति छा जाती है।

द्वादश राशियोंके अनुसार चन्द्रफल—मेष राशिमें चन्द्रमाके रहनेसे सभी धान्य मँहगे; वृषमें चन्द्रमाके होनेसे चने तेज, मनुष्योंकी मृत्यु और चोरभय; मिथुनमें चन्द्रमाके रहनेसे बीज बोनेमें सफलता, उत्तम धान्यकी उत्पत्ति; कर्कमें चन्द्रमाके रहनेसे वर्षा; सिंहमें रहनेसे धान्यका भाव मँहगा; कन्यामें रहनेसे खण्डवृष्टि, सभी धान्य सस्ते, तुलामें चन्द्रमाके रहनेसे थोड़ी वर्षा, देशभंग और मार्गभय, वृश्चिकमें चन्द्रमाके रहनेसे मध्यम वर्षा, ग्रामनाश, उपद्रव, उत्तम धान्यकी उत्पत्ति; धनुराशिमें चन्द्रमाके रहनेसे उत्तम वर्षा, सुभिक्ष और शान्ति; मकर राशिमें चन्द्रमाके रहनेसे धान्यनाश, फसलमें नाना प्रकारके रोग, मूसों-टिड्डी आदिका भय, कुम्भराशिमें चन्द्रमाके रहनेसे अल्प वर्षा, धान्यका भाव तेज, प्रजामें भय एवं मीन राशिमें चन्द्रमाके रहनेसे सुख-सम्पत्ति और सभी प्रकारके अनाज सस्ते होते हैं। वैशाख या ज्येष्ठमें चन्द्रमाका उदय उत्तरकी ओर हो तो सभी प्रकारके धान्य सस्ते होते हैं। मेघका उदय एवं वर्षण उत्तम होता है।

ज्येष्ठ मासकी शुक्लपक्षकी प्रतिपदाको सूर्यास्तके समय ही चन्द्रमा दिखलायी पड़े तो वर्ष पर्यन्त सुभिक्ष रहता है। यदि चन्द्रमाका शृङ्ग उत्तरकी ओर हो तो सुभिक्ष और दक्षिणकी

ओर होनेसे दुर्भिक्ष तथा मध्यका रहनेसे मध्यम फल होता है। कृत्तिका, अनुराधा, ज्येष्ठा, चित्रा, रोहिणी, मघा, मृगशिर, मूल, पूर्वाषाढ़ा, विशाखा ये नक्षत्र चन्द्रमाके उत्तर मार्गवाले कहलाते हैं। जब चन्द्रमा अपने उत्तरमार्गमें गमन करता है तो सुभिक्ष, सुवर्षा, शान्ति, प्रेम और सौन्दर्यका प्रसार होता है। जनतामें धर्माचरणका भी प्रसार होता है। दक्षिण मार्गमें चन्द्रमाका विचरण करना अशुभ माना जाता है। शुक्ल पक्षकी द्वितीयाके दिन मेषराशिमें चन्द्रमाका उदय हो तो ग्रीष्ममें धान्य भाव तेज होता है। वृषमें उदय होनेसे उड़द, तिल, मूंग, अगुरु आदिका भाव तेज होता है। मिथुनमें कपास, सूत, जूट आदिका भाव महँगा होता है। कर्कराशिके होनेसे अनावृष्टि तथा कहीं-कही खण्डवृष्टि; सिंह राशिमें चन्द्रमाके उदय होनेसे धान्य भाव तेज होता है। सोना-चाँदी आदिका भाव भी महँगा होता है। कन्यामें चन्द्रमाका उदय होनेसे पशुओंका विनाश, राजनैतिक पार्टियोंमें मतभेद, संघर्ष होता है। तुलाराशिके चन्द्रमामें उदय होनेसे व्याधि, व्यापारियोंमें विरोध, वृश्चिक राशिके चन्द्रमामें धान्यकी उत्पत्ति, धनु और मकरमें चन्द्रमाका उदय होनेसे दालवाले अनाजका भाव महँगा, कुम्भराशिमें चन्द्रमाका उदय होनेसे तिल, तेल, तिलहन, उड़द, मूंग, मटर आदि पदार्थोंका भाव तेज और मीनराशिमें चन्द्रमाके उदय होनेसे सुभिक्ष, आरोग्य, क्षेम और वृद्धि होती है। उदय कालमें प्रकाशमान, उज्ज्वल चन्द्रमा दर्शक और राष्ट्रकी शक्तिका विकास करता है। यदि उदयकालमें चन्द्रमा रक्तवर्णका मन्द प्रकाश युक्त मालूम पड़े तो धन-धान्यका अभाव होता है।

पञ्चविंशतितमोऽध्यायः

नक्षत्रं ग्रहसम्पत्त्या कृत्स्नस्यार्धं[1] शुभाशुभम् ।
तस्मात् कुर्यात् सदोत्थाय नक्षत्रग्रहदर्शने ॥१॥

समस्त तेजी-मन्दी नक्षत्र और ग्रहोंके शुभाशुभपर निर्भर करती है, अतः सर्वदा प्रातः उठकर नक्षत्रों और ग्रहोंका दर्शन करना चाहिए ॥१॥

सर्वे यदुत्तरे काष्ठे ग्रहाः स्युः स्निग्धवर्चसः ।
तदा वस्त्रं च न ग्राह्यं सुसमासाम्यमर्घताम् ॥२॥

यदि स्निग्ध, तेजस्वी ग्रह उत्तर दिशामें हों तो वस्त्र नहीं लेना चाहिए; क्योंकि वस्त्रोंके मूल्य में समता रहती है; मूल्यमें घटा-बढ़ी नहीं होती ॥२॥

क्षीरो क्षौद्रं यवाः कङ्गुरुदाराः सस्यमेव च ।
दौर्भाग्यं[2] चाधिगच्छन्ति नैवानिचया यद्बुधः ॥३॥

दूध, मधु, जौ, कंगुरु, धान्य आदि पदार्थ बुधकी स्थितिके अनुसार तेजे और मन्दे होते हैं। अर्थात् उक्त पदार्थोंकी स्थिति बुधपर आश्रित है ॥३॥

षष्टिकानां विरागानां द्रव्याणां[3] पाण्डुरस्य[4] च ।
सन-कोद्रव-कङ्गूनां नीलाभानां शनैश्चरः ॥४॥

साठिका चावल, श्वेतरंगसे भिन्न अन्य रंगके पदार्थ, सन, कोद्रव, कांगून और समस्त नील पदार्थ शनैश्चरके प्रतिपुद्गल हैं ॥४॥

यव-गोधूम-व्रीहीणां शुक्लधान्य-मसूरयोः ।
शालीनां चैव द्रव्याणां शुक्रस्य प्रतिपुद्गलाः ॥५॥

जौ, गेहूँ, चावल, श्वेत रंगके अनाज, मसूर, गूलर आदि पदार्थ शुक्रके प्रतिपुद्गल हैं ॥५॥

मधु-सर्पिः-तिलानाञ्च[5] क्षीराणां च तथैव च ।
कुसुम्भस्यातसीनां च गर्भाणां च बुधः स्मृतः ॥६॥

मधु, घी, तिल, दूध, पुष्प, केसर, तीसी, गर्भ आदि बुधके प्रतिपुद्गल हैं ॥६॥

कोशधान्यं सर्षपाश्च पीतं रक्तं तथाग्निजम्[6] ।
अङ्गारकं विजानीयात् सर्वेषां प्रतिपुद्गलाः ॥७॥

कोश, धान्य, सर्षप, पीत-रक्तवर्णके पदार्थ, अग्निसे उत्पन्न पदार्थ मंगलके प्रतिपुद्गल हैं ॥७॥

---

१. महोत्पातं मु० । २. दुर्भाग्यं मधि मु० । ३. द्रव्यस्य च मु० । ४. प्रगस्य मु० । ५. शृगालानां मु० । ६. मथाग्निजम् मु० ।

महाधान्यस्य महतामिक्षूणां शर-वंशयोः ।
गुरूणां मन्दपीतानामथो ज्ञेयो बृहस्पतिः ॥८॥

बड़े-बड़े मोटे धान्य, इक्षु, वंश तथा मन्द पीले पदार्थ बृहस्पतिके प्रतिपुद्‍गल हैं ॥८॥

मुक्ता-मणि-जलेशानां सुर-सौवीर-सोमिनाम् ।
शृङ्गिणामुदकानां च सौम्यस्य प्रतिपुद्गलाः ॥९॥

मुक्तामणि, जलसे उत्पन्न पदार्थ, सोमलता, बेर या अन्य खट्टे पदार्थ, कांजी, शृंगी पदार्थ और समस्त जलीय पदार्थ चन्द्रमाके प्रतिपुद्‍गल हैं ॥९॥

उद्भिजानां च जन्तूनां कन्द-मूल-फलस्य च ।
उष्णवीर्यविपाकस्य रवेस्तु प्रतिपुद्गलाः ॥१०॥

पृथ्वीके उत्पन्न हुए पदार्थ, कन्दमूल, फल और उष्ण पदार्थ सूर्यके प्रतिपुद्‍गल हैं। यहाँ प्रतिपुद्‍गल शब्दका अर्थ उस ग्रहकी स्थिति द्वारा उक्त पदार्थोंकी तेजी-मन्दी जाननेका रूप है ॥१०॥

नक्षत्रे भार्गवः सोमः शोभन्ते सर्वशो यथा ।
यथा द्वारं तथा विन्द्यात् सर्ववस्तु यथाविधि ॥११॥

किसी भी नक्षत्रमें शुक्र और चन्द्र सर्वाङ्गरूपसे शोभित हों तो उस नक्षत्रके द्वार, दिशा और स्वरूप आदिके द्वारा वस्तुओंकी तेजी-मंदी कही जाती है ॥११॥

विवर्णा यदि सेवन्ति ग्रहा वै राहुसप्रभाः ।
दक्षिणां दक्षिणे मार्गे वैश्वानरपथं प्रति ॥१२॥

गिरिनिम्ने च निम्नेषु नदी-पल्वलवारिषु ।
एतेषु वापयेद् बीजं स्थलं वर्ज्जं यथा भवेत् ॥१३॥

मल्लजा मालवे देशे[1] सौराष्ट्रे सिन्धुसागरे ।
एतेष्वपि तदा मन्दं[2] प्रियमन्यत् प्रसूयते ॥१४॥

यदि भरणी नक्षत्रमें राहुके साथ अन्य ग्रह विकृतवर्णके होकर स्थित हों तथा दक्षिणग्रह दक्षिणमार्गमें वैश्वानरपथके प्रति गमनशील हों तो स्थल—चौरस भूमिको छोड़कर पर्वतकी ऊँची-नीची तलहटी, नदियोंके तट एवं पोखरोंमें बीज बोना चाहिए। कालीमिरच मालव देश, गुजरात, समुद्रके तटवर्ती प्रदेशोंमें मन्दी होती है, तथा इसके अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ महँगी होती हैं ॥१२-१४॥

कृत्तिका-रोहिणीयुक्ता बुध-चन्द्र-शनैश्चराः ।
यदा सेवन्ते सहितास्तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥१५॥

आज्यासिकं गुडं तैलं कार्पासो मधु-सर्पिषी ।
सुवर्ण-रजते मुद्गाः शालयस्तिलमेव च ॥१६॥

---

१. मलयेषु सहस्रा मु०। २. मुक्तं मु०।

स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे पञ्चद्रोणेन शालयः।
दशाढकं पश्चिमे स्यात् दक्षिणेन षडाढकम् ॥१७॥

जब बुध, चन्द्र और शनैश्चर ये तीनों एक साथ कृत्तिका विद्ध रोहिणीका भोग करें तब घृत, गुड़, तैल, कपास, मधु, स्वर्ण, चाँदी, मूँग, शाली चावल, तिल आदि पदार्थ महँगे होते हैं। यदि उक्त ग्रह स्निग्ध दक्षिणोत्तर मार्गमें गमन करते हों तो धान्यका भाव पाँच द्रोण प्रमाण होता है। पश्चिममें दशाढक और दक्षिणमें छः आढक प्रमाण होता है ॥१५-१७॥

उत्तरेण तु रोहिण्यां चतुष्कं कुम्भमुच्यते।
दशकं प्रसङ्गतो विन्द्यात् दक्षिणेन चतुर्दशम् ॥१८॥

यदि उत्तरमें रोहिणी हो तो चतुष्क कुंभ कहा जाता है। इससे दश आढक और दक्षिणमें होनेसे चौदह आढक प्रमाण शालीका भाव कहा गया है ॥१८॥

नक्षत्रस्य यदा गच्छेद् दक्षिणं शुक्र-चन्द्रमाः।
सुवर्णं रजतं रत्नं कल्याणं प्रियतां मिथः[2] ॥१९॥

जब शुक्र और चन्द्रमा कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्रके दक्षिणमें जायें तब स्वर्ण, चाँदी, रत्न और धान्य महँगे होते हैं ॥१९॥

धान्यं यत्र प्रियं विन्द्याद्गावो नात्यर्थदोहिनः।
उत्तरेण यदा याति नैतानि चिनुयात् तदा ॥२०॥

जब उक्त ग्रह कृत्तिकाविद्ध रोहिणी नक्षत्रके उत्तरमें जावें तो धान्य महँगा होता, गायें दोहनेके लिए प्राप्त नहीं होती हैं अर्थात महँगी हो जाती हैं ॥२०॥

उत्तरेण तु पुष्यस्य यदा पुष्यति[3] चन्द्रमाः।
भौमस्य दक्षिणे पार्श्वे मघासु यदि तिष्ठति ॥२१॥
मालदा मालं वैदेहा यौधेयाः संज्ञनायकाः।
सुवर्णं रजतं वस्त्रं मणिर्मुक्ता तथा प्रियम् ॥२२॥

जब चन्द्रमा उत्तरसे पुष्य नक्षत्रका भोग करता है तथा मघामें रहकर मंगलका दक्षिणसे भोग करता है, तब काली मिर्च, नमक, सोना, चाँदी, वस्त्र, मणि, मुक्ता एवं मशालेके पदार्थ महँगे होते हैं ॥२१-२२॥

चन्द्रः शुक्रो गुरुर्भौमो[4] मघानां यदि दक्षिणे।
वस्त्रं च द्रोणमेघं च निर्दिशेन्नात्र संशयः ॥२३॥

चन्द्र, शुक्र, गुरु और मंगल यदि मघाके दक्षिणमें हों तो वस्त्र महँगे होते हैं और मेघ द्रोण प्रमाण वर्षा करते हैं। इसमें सन्देह नहीं है ॥२३॥

आरुहेद् वालिखेद्वापि[5] चन्द्रे चैव यथोत्तरे।
ग्रहैर्युक्तस्तु तदा कुम्भं तु पञ्चकम् ॥२४॥

यदि ग्रह युक्त चन्द्रमा उत्तर दिशामें आरोहण करे या उत्तरका स्पर्श करे तो पाँच कुंभ प्रमाण जलकी वर्षा होती है अर्थात् खूब जल बरसता है ॥२४॥

१. प्रगर्न्नं मु०। २. मिथुः। ३. पुष्यति मु०। ४. भौमो मु०। ५. आरुहालिख वाऽपि च मन्द्रे चैव यथोत्तरे मु०।

राहुः केतुः शशी शुक्रो भौमश्चोत्तरतो यदा ।
सेवन्ते चोत्तरं द्वारं यात्यस्तं वा कदाचन ॥२५॥
निवृत्तिं चापि कुर्वन्ति भयं देशेषु[1] सर्वशः ।
बहुतोयान् समान् विन्द्यान् महाशालींश्च वापयेत् ॥२६॥
कार्पासास्तिल-मापाश्च सर्पिश्चात्र प्रियं तथा ।
आशु धान्यानि[2] वर्धन्ते योगक्षेमं च हीयते ॥२७॥

जब राहु, केतु, चन्द्रमा, शुक्र और मंगल उत्तरसे उत्तर द्वारका सेवन करें अथवा अस्तको प्राप्त हों अथवा वक्री हों तो सभी देशोंमें भय होता है। अधिक जलकी वर्षा होती है और चावलकी उत्पत्ति भी खूब होती है। कपास, तिल, उड़द, घी महँगा होता है। वर्षाकी अधिकताके कारण बावड़ी—तालाबोंका जल शीघ्र ही बढ़ता है, जिससे योग-क्षेम–गुजर-बसरमे कमी आती है ॥२५–२७॥

चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे भार्गवो वा विशेपतः ।
उत्तरांस्तारकान् प्राप्य तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥२८॥
महाधान्यानि पुष्पाणि हीयन्ते चामरस्तथा[3] ।
कार्पास-तिल-मापाश्च सर्पिश्चैवार्घते तदा ॥२९॥

यदि शुक्र चन्द्रमाके दक्षिण भागमें हो अथवा विशेपरूपसे उत्तरके नक्षत्रोंको प्राप्त हुआ हो तो महाधान्य—गेहूँ, जौ, धान, चना आदि और पुष्पों—केसर, लवंग आदिकी कमी होती है अर्थात् उक्त पदार्थ महँगे होते हैं। कपास, तिल, उड़द और घी की वृद्धि होती है, अतः ये पदार्थ सस्ते होते हैं ॥२८–२९॥

चित्रायां दक्षिणे पर्श्वे[4] शिखरी नाम तारकाः ।
तयेन्दुर्यदि दृश्येत तदा बीजं न वापयेत् ॥३०॥

चित्रा नक्षत्रके दक्षिण पार्श्वमें शिखरी नामकी तारिका है, यदि चन्द्रमाका उदय इस तारिकामे दिखलायी पड़े तो बीज नहीं बोना चाहिए ॥३०॥

गवाश्वेण हिरण्येन सुवर्ण-मणि-मौक्तिकैः ।
महिष्यजादिभिर्वस्त्रैर्धान्यं क्रीत्वा निवापयेत् ॥३१॥

चन्द्रमाकी उक्त स्थितिमे गाय, अश्व, चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, महिप—भैंस, अजा—बकरी और वस्त्र आदिसे धान्य खरीदकर भी बोना नहीं चाहिए। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमाकी उपर्युक्त स्थितिमे अन्न उत्पन्न नहीं होता है; अतः सभी वस्तुओंसे अनाज खरीदकर उसका संकलन करना चाहिए ॥३१॥

चित्रायां तु यदा[5] शुक्रश्चन्द्रो भवति दक्षिणः ।
पट्गुणं जायते धान्यं योगक्षेमं च जायते ॥३२॥

१. देशेषु मु० । २. धान्यानि मु० । ३. धाशुभास्तथा मु० । ४. पार्श्वे मु० । ५. शुक्रः मु० ।

जब चित्रा नक्षत्रमें दक्षिणकी ओर शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो छः गुना अनाज उत्पन्न होता है और योग क्षेम—गुजर-बसर अच्छी तरहसे होती है ॥३२॥

इन्द्राणि[1] दैवसंयुक्ता यदि सर्वे ग्रहाः कृशाः ।
अभ्यन्तरेण मार्गस्थास्तारका यास्तु वाद्यतः[2] ॥३३॥

कङ्गु-दार-तिला मुद्गाश्चणकाः षष्टिकाः शुकाः ।
चित्रायोगं न सर्पेत चन्द्रमा उत्तरो भवेत् ॥३४॥

संग्राह्यं च तदा धान्यं योगक्षेमं न[3] जायते ।
अल्पसारा भवन्त्येते चित्रा वर्षा[4] न संशयः ॥३५॥

यदि सभी कमजोर ग्रह विशाखा नक्षत्रमें युक्त होकर अभ्यन्तरमार्गसे बादलकी ओरकी ताराओंमें स्थित हों और चन्द्रमा उत्तर होकर चित्रामें स्थित हो, तो कंगु, तिल, मूंग, चना, साठीका चावल आदि धान्योंका संग्रह करना चाहिए। उक्त प्रकारके योगमें योगक्षेममें—भोजन-छाजनमें भी कमी रहती है। वर्षा अल्प होती है, इसमें सन्देह नहीं है ॥३३-३५॥

विशाखामध्यगः शुक्रस्तोयदा धान्यवर्धनः ।
समर्घं यदि विज्ञेयं दशद्रोणक्रयं वदेत् ॥३६॥

यदि विशाखा नक्षत्रके मध्यमें शुक्रका अस्त हो तो धान्यकी उपज अच्छी होती है, अनाजका भाव सम रहता है। दशद्रोण प्रमाण खरीदा जाता है ॥३६॥

पापिनौ चन्द्र-शुक्रौ तु दक्षिणामुत्तरौ तदा ।
तारा-विशाखयोर्घाता तदाऽर्घन्ति चतुष्पदाः ॥३७॥

जब पापी चन्द्र और शुक्र दक्षिण और उत्तरमें हों और विशाखाकी ताराओंका घात हुआ हो तो चौपायोंकी वृद्धि होती है ॥३७॥

दक्षिणेनानुराधायां यदा च व्रजते शशी ।
अप्रभश्च प्रहीणश्च वस्त्रं द्रोणाय कल्पयेत् ॥३८॥

निष्प्रभ और हीन चन्द्रमा दक्षिण मार्गसे अनुराधामें गमन करता है तो वस्त्र मँहगे होते हैं ॥३८॥

ज्येष्ठा-मूलौ यदा चन्द्रो दक्षिणे व्रजतेऽप्रभः ।
तदा सस्यं च वस्त्रं च शर्करी सार्थं विनश्यति ॥३९॥

प्रजानामनयो घोरस्तदा जायन्ति[5] तामसः ।
प्रस्तरूपस्य वर्गस्य तेन घ्नन्ति तां प्रजाम् ॥४०॥

जब प्रभारहित चन्द्रमा दक्षिणमें ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रमें आता है, तब धान्य, वस्त्र और अर्थका विनाश होता है। उक्त प्रकारकी चन्द्रमाकी स्थितिमें प्रजामें भय और वस्त्रके लिए हाहाकार हो जाता है तथा वस्त्रके न मिलनेसे प्रजाका विनाश भी होता है ॥३९-४०॥

1. इन्द्राणि मु०। 2. वाद्यतः मु०। 3. च मु०। 4. वर्षा मु०। 5. जायन्ति मु०।

मूलं मन्देव सेवन्ते यदा दक्षिणतः शशी ।
प्रजातसर्वधान्यानां आढका नु तदा भवेत् ॥४१॥

जब चन्द्रमा दक्षिणसे मन्द होता हुआ मूल नक्षत्रका सेवन करता है तब सभी प्रकारके धान्योंकी उपज खूब होती है और वर्षा आढक प्रमाण होती है ॥४१॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां पुष्या-श्लेषा-पुनर्वसून् ।
व्रजते दक्षिणश्चन्द्रो दशप्रस्थं तदा भवेत् ॥४२॥

जब दक्षिण चन्द्रमा कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, आश्लेषा, पुनर्वसुमें गमन करता है, तब दश प्रस्थ प्रमाण धान्यकी बिक्री होती है अर्थात् फसल भी उत्तम होती है ॥४२॥

मघां विशाखां च ज्येष्ठाऽनुराधे मूलमेव च ।
दक्षिणे व्रजते शुक्रश्चन्द्रे तदाऽऽढकमेव च ॥४३॥

शुक्र और चन्द्रके दक्षिणमें मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, अनुराधा और मूलमें गमन करने पर आढ़क प्रमाण धान्यकी बिक्री होती है अर्थात् फसल कम होती है ॥४३॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां विशाखां च मघां यदा ।
दक्षिणेन ग्रहा यान्ति चन्द्रस्त्वाढकविक्रयः ॥४४॥

जब ग्रह दक्षिणसे कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, विशाखा और मघा नक्षत्रमें गमन करते हैं तो आढ़क प्रमाण वस्तुओंकी बिक्री होती है ॥४४॥

गुरुः शुक्रश्च भौमश्च दक्षिणाः सहिता यदा ।
प्रस्थत्रयं[2] तदा वस्त्रैर्यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥४५॥

जब गुरु, शुक्र और मंगल दक्षिणमें स्थित हों तब धान्यकी बिक्री तीन प्रस्थकी होती है और वस्त्रके लिए प्रजा मृत्युके मुखमें जाती है अर्थात् अन्न और वस्त्रका अभाव होता है ॥४५॥

उत्तरं भजते मार्गं शुक्रपृष्ठं तु चन्द्रमाः ।
महाधान्यानि वर्धन्ते कृष्णधान्यानि दक्षिणे ॥४६॥

जब शुक्र उत्तर मार्गमें आगे हो और चन्द्रमाके पीछे हों तब महाधान्योंकी वृद्धि होती है। यदि यही स्थिति दक्षिण मार्गमें हो तो काले रङ्गके धान्य वृद्धिङ्गत होते हैं ॥४६॥

दक्षिणं चन्द्रशृङ्गं च यदा वृद्धतरं भवेत् ।
महाधान्यं तदा वृद्धं कृष्णधान्यमथोत्तरम् ॥४७॥

यदि चन्द्रमाका शृङ्ग दक्षिणकी ओर बढ़ता दिखलायी पड़े तो महाधान्य गेहूँ, चना, जौ, चावल आदिकी वृद्धि होती है तथा उत्तर शृङ्गकी वृद्धि होने पर काले रंगके धान्य बढ़ते हैं ॥४७॥

कृत्तिकानां मघानां च रोहिणीनां विशाखयोः ।
उत्तरेण महाधान्यं कृष्ण[3]धान्यञ्च दक्षिणे ॥४८॥

कृत्तिका, मघा, रोहिणी और विशाखाके उत्तर होनेसे महाधान्य और दक्षिण होनेसे कृष्ण धान्यकी वृद्धि होती है ॥४८॥

1. पेर मु० । 2. प्रस्थत्रयं तदा वस्त्रैर्यान्ति मु० । 3. धान्यं तु मु० ।

चीनीमें अच्छा लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमाको स्वाति नक्षत्रका चतुर्थ चरण हो तथा शनिवार या रविवार हो तो उस वर्षमें व्यापारियोंको लाभके साथ हानि भी होती है। बाजारमें अनेक प्रकारकी घटा-बढ़ी [illegible] हो, बादलोंका अभाव रहे, निर्मल चाँदनी वर्तमान [illegible] साधारण लाभ होता है। बाजार संतुलित रहता है, [illegible] वा ही। जो व्यक्ति ज्येष्ठ पूर्णिमाको उक्त स्थितिमें धान्य, गुड़का संग्रह करता है, वह भाद्रपद और आश्विनमें लाभ उठाता है। गेहूँ, चना, जौ, तिलहनमें पौषके महीनेमें अधिक लाभ होता है। यदि इस पूर्णिमाको दिनमें मेघ, वर्षा हो और रातमे आकाश स्वच्छ रहे तो व्यापारियोंको साधारण लाभ होता है तथा मार्गशीर्ष, माघ और फाल्गुनमें वस्तुओंमें हानि होनेकी सम्भावना है। रातमें इस तिथिको बिजली गिरे, उल्कापात हो, भूकम्प हो, चन्द्रका परिवेष दिखलायी पड़े, इन्द्र धनुष लाल या काले रंगका दिखलायी पड़े तो अनाजका संग्रह अवश्य करना चाहिए। इस प्रकारकी स्थितिमें अनाजमें कई गुना लाभ होता है। सोना, चाँदीके मूल्यमें साधारण तेजी आती है। ज्येष्ठी पूर्णिमाको मध्यरात्रिमें चन्द्रपरिवेष उदास-सा दिखलायी पड़े और स्यार रह-रहकर बोलें तो अन्नसंग्रहकी सूचना समझना चाहिए। चारेका भाव भी तेज हो जाता है और प्रत्येक वस्तुमें लाभ होता है। घीका भाव कुछ सस्ता होता है तथा तेलकी कीमत भी सस्ती होती है। अगहन और पौष मासमें सभी पदार्थोंमें लाभ होता है। फाल्गुनका महीना भी लाभके लिए उत्तम है। यदि ज्येष्ठी पूर्णिमाको चन्द्रोदय या चन्द्रास्तके समय उल्कापात हो और आकाशमें अनेक रंग-बिरंगी ताराएँ चमकती हुई भूमि पर गिरें तो सभी प्रकारके अनाजोंमें तीन महीनेके उपरान्त लाभ होता है। ताँबा, पीतल, कांसा आदि धातुओंमें और मशालेमें कुछ घाटा भी होता है।

आषाढ़ी पूर्णिमाको आकाश निर्मल और उज्ज्वल चाँदनी दिखलायी पड़े तो सभी प्रकारके अनाज पाँच महीनेके भीतर तेज होते हैं। कार्तिक महीनेसे ही अनाजमें लाभ होना प्रारम्भ हो जाता है। सोनेका भाव माघके महीनेसे महँगा होता है। सट्टेके व्यापारियोंको साधारण लाभ होता है। सूत, कपड़ा और जूटके व्यापारमें लाभ होता है; किन्तु इन वस्तुओंका व्यापार अस्थिर रहता है, जिससे हानि होनेकी भी संभावना रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाको मध्य रात्रिके पश्चात् आकाश लगातार निर्मल रहे तथा मध्य रात्रिके पहले आकाश मेघाच्छन्न रहे तो चैती फसलके अनाजमें लाभ होता है। अगहनी और भदई फसलके अनाजमें लाभ नहीं होता। साधारणतया वस्तुओंके भाव ऊँचे आते हैं। घी, गुड़, तेल, चाँदी, बारदाना, गुवार, मटर आदि वस्तुओंका रूख भी तेजीकी ओर रहता है। शेयरके बाजारमें भी हीनाधिक-घटा-बढ़ी होती है। लोहा, रबर एवं इन पदार्थोंसे बनी वस्तुओंके व्यापारमें लाभ होनेकी सम्भावना अधिक रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाको दिन भर वर्षा हो और रातमें चाँदनी न निकले, बूँदा-बूँदी होती हो तो अनाजमें लाभ होनेकी सम्भावना नहीं है। केवल सोना, चाँदी और गुड़के व्यापारमें अच्छा लाभ होता है। गुड़, चीनीमें कई गुना लाभ होता है। यदि इसी पूर्णिमाको बुध वक्री हुआ हो तो छः महीने तक सभी पदार्थोंमें तेजी रहती है। जो पदार्थ विदेशोंसे आते हैं, उनका भाव अधिक तेज होता है। स्थानीय उत्पन्न पदार्थोंका भाव अधिक तेज होता है। श्रावणी पूर्णिमाको आकाश निर्मल हो तो सभी वस्तुओंमें अच्छा लाभ होता है। यदि इस दिन स्वच्छ चाँदनी आकाशमें व्याप्त दिखलायी पड़े तो नाना प्रकारके रोग फैलते हैं तथा लाल रंगकी सभी वस्तुओंमें तेजी आती है। गेहूँ और चावलकी कमी रहती है। जिस स्थानपर श्रावणीके दिन चन्द्रमा स्वच्छ तथा काले छेदवाला दिखलायी पड़े, उस स्थानमें दुर्भिक्षके साथ खाद्यान्नकी बड़ी भारी कमी हो जाती है, जिससे सभी व्यक्तियोंको कष्ट होता है। लोहा, चाँदी, नीलम आदि बहुमूल्य पदार्थोंका भाव भी तेज होता है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा निर्मल होने पर धान्यका

पञ्चविंशतितमोऽध्यायः

नक्षत्रं ग्रहसम्पत्त्या कृत्स्नस्यार्घं शुभाशुभम् ।
तस्मात् कुर्यात् सदोत्थाय[1] नक्षत्रग्रहदर्शने ॥१॥

समस्त तेजी-मन्दी नक्षत्र और ग्रहोंके शुभाशुभपर निर्भर करती है, अतः सर्वदा प्रातः उठकर नक्षत्रों और ग्रहोंका दर्शन करना चाहिए ॥१॥

सर्वे यदुत्तरे काष्ठे ग्रहाः स्युः स्निग्धवर्चसः ।
तदा वस्त्रं च न ग्राह्यं सुसमासाम्यमर्घताम् ॥२॥

यदि स्निग्ध, तेजस्वी ग्रह उत्तर दिशामें हों तो वस्त्र नहीं लेना चाहिए; क्योंकि वस्त्रोंके मूल्य में समता रहती है; मूल्यमें घटा-बढ़ी नहीं होती ॥२॥

क्षीरो क्षौद्रं यवाः कङ्गुरुदाराः सस्यमेव च ।
दौर्भाग्यं[2] चाधिगच्छन्ति नैवानिचया यद्बुधः ॥३॥

दूध, मधु, जौ, कंगुरु, धान्य आदि पदार्थ बुधकी स्थितिके अनुसार तेजे और मन्दे होते हैं । अर्थात् उक्त पदार्थोंकी स्थिति बुधपर आश्रित है ॥३॥

षष्टिकानां विरागानां द्रव्याणां[3] पाण्डुरस्य[4] च ।
सन-कोद्रव-कङ्गूनां नीलाभानां शनैश्चरः ॥४॥

साठिका चावल, श्वेतरंगसे भिन्न अन्य रंगके पदार्थ, सन, कोद्रव, कांगून और समस्त नील पदार्थ शनैश्चरके प्रतिपुद्गल हैं ॥४॥

यव-गोधूम-व्रीहीणां शुक्लधान्य-मसूरयोः ।
शालीनां चैव द्रव्याणां शुक्रस्य प्रतिपुद्गलाः ॥५॥

जौ, गेहूँ, चावल, श्वेत रंगके अनाज, मसूर, गूलर आदि पदार्थ शुक्रके प्रतिपुद्गल हैं ॥५॥

मधु-सर्पिः-तिलानाञ्च[5] क्षीराणां च तथैव च ।
कुसुम्भस्यातसीनां च गर्भाणां च बुधः स्मृतः ॥६॥

मधु, घी, तिल, दूध, पुष्प, केसर, तीसी, गर्भ आदि बुधके प्रतिपुद्गल हैं ॥६॥

कोशधान्यं सर्षपाश्च पीतं रक्तं तथाग्निजम्[6] ।
अङ्गारकं विजानीयात् सर्वेषां प्रतिपुद्गलाः ॥७॥

कोश, धान्य, सर्षप, पीत-रक्तवर्णके पदार्थ, अग्निसे उत्पन्न पदार्थ मंगलके प्रतिपुद्गल हैं ॥७॥

---

१. सदोत्थाय मु० । २. दुर्भाग्यं मपि मु० । ३. द्रव्यस्य च मु० । ४. प्रगरय मु० । ५. मृगालानां मु० । ६. मधाग्निजम् मु० ।

महाधान्यस्य महतामिक्षूणां शर-वंशयोः ।
गुरूणां मन्दपीतानामथो ज्ञेयो बृहस्पतिः ॥८॥

बड़े-बड़े मोटे धान्य, इक्षु, वंश तथा मन्द पीले पदार्थ बृहस्पतिके प्रतिपुद्गल हैं ॥८॥

मुक्ता-मणि-जलेशानां सूर-सौवीर-सोमिनाम् ।
शृङ्गिणामुदकानां च सौम्यस्य प्रतिपुद्गलाः ॥९॥

मुक्तामणि, जलसे उत्पन्न पदार्थ, सोमलता, बेर या अन्य खट्टे पदार्थ, कांजी, शृंगी पदार्थ और समस्त जलीय पदार्थ चन्द्रमाके प्रतिपुद्गल हैं ॥९॥

उद्भिजानां च जन्तूनां कन्द-मूल-फलस्य च ।
उष्णवीर्यविपाकस्य रवेस्तु प्रतिपुद्गलाः ॥१०॥

पृथ्वीके उत्पन्न हुए पदार्थ, कन्दमूल, फल और उष्ण पदार्थ सूर्यके प्रतिपुद्गल हैं। यहाँ प्रतिपुद्गल शब्दका अर्थ उस ग्रहकी स्थिति द्वारा उक्त पदार्थोंकी तेजी-मन्दी जाननेका रूप है ॥१०॥

नक्षत्रे भार्गवः सोमः शोभन्ते सर्वशो यथा ।
यथा द्वारं तथा विन्द्यात् सर्ववस्तु यथाविधि ॥११॥

किसी भी नक्षत्रमें शुक्र और चन्द्र सर्वाङ्गरूपसे शोभित हों तो उस नक्षत्रके द्वार, दिशा और स्वरूप आदिके द्वारा वस्तुओंकी तेजी-मंदी कही जाती है ॥११॥

विवर्णा यदि सेवन्ति ग्रहा वै राहुसप्तमाः ।
दक्षिणां दक्षिणे मार्गे वैश्वानरपथं प्रति ॥१२॥

गिरिनिम्ने च निम्नेषु नदी-पल्वलवारिषु ।
एतेषु वापयेद् बीजं स्थलं वर्ज्जं यथा भवेत् ॥१३॥

मल्लजा मालवे देशे[1] सौराष्ट्रे सिन्धुसागरे ।
एतेष्वपि तदा मन्दं प्रियमन्यत् प्रदृश्यते ॥१४॥

यदि भरणी नक्षत्रमें राहुके साथ अन्य ग्रह विकृतवर्णके होकर स्थित हों तथा दक्षिणग्रह दक्षिणमार्गमें वैश्वानरपथके प्रति गमनशील हों तो स्थल—चौरस भूमिको छोड़कर पर्वतकी ऊँची-नीची तलहटी, नदियोंके तट एवं पोखरोंमें बीज बोना चाहिए। कालीमिरच मालव देश, गुजरात, समुद्रके तटवर्ती प्रदेशोंमें मन्दी होती है, तथा इसके अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ महँगी होती हैं ॥१२-१४॥

कृत्तिका-रोहिणीयुक्ता बुध-चन्द्र-शनैश्चराः ।
यदा सेवन्ते सहितास्तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥१५॥

आज्यविकं गुडं तैलं कार्पासो मधु-सर्पिषी ।
सुवर्ण-रजते मुद्गाः शालयस्तिलमेव च ॥१६॥

---

१. मलवेदेषु राष्ट्राणां मु० । २. मुल्यं मु० ।

स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे पञ्चद्रोणेन शालयः ।
दशाढकं पश्चिमे[1] स्यात् दक्षिणेन षडाढकम् ॥१७॥

जब बुध, चन्द्र और शनैश्चर ये तीनों एक साथ कृत्तिका विद्ध रोहिणीका भोग करें तब घृत, गुड़, तैल, कपास, मधु, स्वर्ण, चाँदी, मूँग, शाली चावल, तिल आदि पदार्थ महँगे होते हैं। यदि उक्त ग्रह स्निग्ध दक्षिणोत्तर मार्गमें गमन करते हों तो धान्यका भाव पाँच द्रोण प्रमाण होता है। पश्चिममें दशाढक और दक्षिणमें छः आढक प्रमाण होता है ॥१५-१७॥

उत्तरेण तु रोहिण्यां चतुष्कं कुम्भमुच्यते ।
दशकं प्रसङ्गतो विन्द्यात् दक्षिणेन चतुर्दशम् ॥१८॥

यदि उत्तरमें रोहिणी हो तो चतुष्क कुंभ कहा जाता है। इससे दश आढक और दक्षिणमें होनेसे चौदह आढक प्रमाण शालीका भाव कहा गया है ॥१८॥

नक्षत्रस्य यदा गच्छेद् दक्षिणं शुक्र-चन्द्रमाः ।
सुवर्णं रजतं रत्नं कल्याणं प्रियतां मिथः[2] ॥१९॥

जब शुक्र और चन्द्रमा कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्रके दक्षिणमें जायें तब स्वर्ण, चाँदी, रत्न और धान्य महँगे होते हैं ॥१९॥

धान्यं यत्र प्रियं विन्द्याद्गावो नात्यर्थदोहिनः ।
उत्तरेण यदा याति नैतानि चिनुयात् तदा ॥२०॥

जब उक्त ग्रह कृत्तिकाविद्ध रोहिणी नक्षत्रके उत्तरमें जायें तो धान्य महँगा होता, गायें दोहनेके लिए प्राप्त नहीं होती हैं अर्थात् महँगी हो जाती हैं ॥२०॥

उत्तरेण तु पुष्यस्य यदा पुष्यति[3] चन्द्रमाः ।
भौमस्य दक्षिणे पार्श्वे मघासु यदि तिष्ठति ॥२१॥
मालदा मालं वैदेहा यौधेयाः संज्ञनायकाः ।
सुवर्णं रजतं वस्त्रं मणिर्मुक्ता तथा प्रियम् ॥२२॥

जब चन्द्रमा उत्तरसे पुष्य नक्षत्रका भोग करता है तथा मघामें रहकर मंगलका दक्षिणसे भोग करता है, तब काली मिर्च, नमक, सोना, चाँदी, वस्त्र, मणि, मुक्ता एवं मशालेके पदार्थ महँगे होते हैं ॥२१-२२॥

चन्द्रः शुक्रो गुरुर्भौमो[4] मघानां यदि दक्षिणे ।
वस्त्रं च द्रोणमेघं च निर्दिशेन्नात्र संशयः ॥२३॥

चन्द्र, शुक्र, गुरु और मंगल यदि मघाके दक्षिणमें हों तो वस्त्र महँगे होते हैं और मेघ द्रोण प्रमाण वर्षा करते हैं। इसमें सन्देह नहीं है ॥२३॥

आरुहेद् वालिखेद्वापि[5] चन्द्रे चैव यथोत्तरे ।
ग्रहैर्युक्तस्तु तदा कुम्भं तु पञ्चकम् ॥२४॥

यदि ग्रह युक्त चन्द्रमा उत्तर दिशामें आरोहण करे या उत्तरका स्पर्श करे तो पाँच कुंभ प्रमाण जलकी वर्षा होती है अर्थात् खूब जल बरसता है ॥२४॥

१. प्रमर्नं मु० । २. मिथुः । ३. पुष्यति मु० । ४. स्सोमो मु० । ५. आरुहालिख वार्गी च भद्रं चैव यदोत्तरे मु० ।

राहुः केतुः शशी शुक्रो भौमश्चोत्तरतो यदा ।
सेवन्ते चोत्तरं द्वारं यात्यस्तं वा कदाचन ॥२५॥
निवृत्तिं चापि कुर्वन्ति भयं देशेषु[1] सर्वशः ।
बहुतोयान् समान् विन्द्यान् महाशालींश्च वापयेत् ॥२६॥
कार्पासास्तिल-माषाश्च सर्पिश्चात्र प्रियं तथा ।
आशु धान्यानि[2] वर्धन्ते योगक्षेमं च हीयते ॥२७॥

जब राहु, केतु, चन्द्रमा, शुक्र और मंगल उत्तरसे उत्तर द्वारका सेवन करें अथवा अस्तको प्राप्त हों अथवा वक्री हों तो सभी देशोंमे भय होता है। अधिक जलकी वर्षा होती है और चावलकी उत्पत्ति भी खूब होती है। कपास, तिल, उड़द, घी महँगा होता है। वर्षाकी अधिकताके कारण बावड़ी—तालाबोंका जल शीघ्र ही बढ़ता है, जिससे योग-क्षेम–गुजर-बसरमे कमी आती है ॥२५–२७॥

चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे भार्गवो वा विशेषतः ।
उत्तरांस्तारकान् प्राप्य तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥२८॥
महाधान्यानि पुष्पाणि हीयन्ते चामरस्तथा[3] ।
कार्पास-तिल-माषाश्च सर्पिश्चैवार्घते तदा ॥२९॥

यदि शुक्र चन्द्रमाके दक्षिण भागमें हो अथवा विशेषरूपसे उत्तरके नक्षत्रोंको प्राप्त हुआ हो तो महाधान्य—गेहूँ, जौ, धान, चना आदि और पुष्पों—केसर, लवंग आदिकी कमी होती है अर्थात् उक्त पदार्थ महँगे होते हैं। कपास, तिल, उड़द और घी की वृद्धि होती है, अतः ये पदार्थ सस्ते होते हैं ॥२८–२९॥

चित्रायां दक्षिणे पार्श्वे[4] शिखरी नाम तारकाः ।
तयेन्दुर्यदि दृश्येत तदा बीजं न वापयेत् ॥३०॥

चित्रा नक्षत्रके दक्षिण पार्श्वमें शिखरी नामकी तारिका है, यदि चन्द्रमाका उदय इस तारिकामें दिखलायी पड़े तो बीज नहीं बोना चाहिए ॥३०॥

गवाश्वेण हिरण्येन सुवर्ण-मणि-मौक्तिकैः ।
महिष्यजादिभिर्वस्त्रैर्धान्यं क्रीत्वा निवापयेत् ॥३१॥

चन्द्रमाकी उक्त स्थितिमें गाय, अश्व, चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, महिष—भैंस, अजा—बकरी और वस्त्र आदिसे धान्य खरीदकर भी बोना नहीं चाहिए। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमाकी उपर्युक्त स्थितिमें अन्न उत्पन्न नहीं होता है; अतः सभी वस्तुओंसे अनाज खरीदकर उसका संकलन करना चाहिए ॥३१॥

चित्रायां तु यदा[5] शुक्रश्चन्द्रो भवति दक्षिणः ।
षड्गुणं जायते धान्यं योगक्षेमं च जायते ॥३२॥

---

१. देवेषु मु० । २. वाप्यानि मु० । ३. चाशुभास्तथा मु० । ४. पार्श्वे मु० । ५. युक्तः मु० ।

जब चित्रा नक्षत्रमें दक्षिणकी ओर शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो छः गुना अनाज उत्पन्न होता है और योग क्षेम—गुजर-बसर अच्छी तरहसे होती है ॥३२॥

इन्द्राणि[1] देवसंयुक्ता यदि सर्वे ग्रहाः कृशाः ।
अभ्यन्तरेण मार्गस्थास्तारका यास्तु बाह्यतः[2] ॥३३॥

कङ्गु-दार-तिला मुद्गाश्चणकाः षष्टिकाः शुकाः ।
चित्रायोगं न सर्पेत चन्द्रमा उत्तरो भवेत् ॥३४॥

संग्राह्यं च तदा धान्यं योगक्षेमं न[3] जायते ।
अल्पसारा भवन्त्येते चित्रा वर्षा[4] न संशयः ॥३५॥

यदि सभी कमजोर ग्रह विशाखा नक्षत्रमें युक्त होकर अभ्यन्तरमार्गसे बादलकी ओरकी ताराओंमें स्थित हों और चन्द्रमा उत्तर होकर चित्रामें स्थित हो, तो कंगु, तिल, मूंग, चना, साठी-का चावल आदि धान्योंका संग्रह करना चाहिए। उक्त प्रकारके योगमें योगक्षेममें—भोजन-छाजनमें भी कमी रहती है। वर्षा अल्प होती है, इसमें सन्देह नहीं है ॥३३-३५॥

विशाखामध्यगः शुक्रस्तोयदा धान्यवर्धनः ।
समर्घं यदि विज्ञेयं दशद्रोणक्रयं वदेत् ॥३६॥

यदि विशाखा नक्षत्रके मध्यमें शुक्रका अस्त हो तो धान्यकी उपज अच्छी होती है, अनाजका भाव सम रहता है। दशद्रोण प्रमाण खरीदा जाता है ॥३६॥

यायिनौ चन्द्र-शुक्रौ तु दक्षिणामुत्तरौ तदा ।
तारा-विशाखयोर्घाता तदाऽर्घन्ति चतुष्पदाः ॥३७॥

जब यायी चन्द्र और शुक्र दक्षिण और उत्तरमें हो और विशाखाकी ताराओंका घात हुआ हो तो चौपायोंकी वृद्धि होती है ॥३७॥

दक्षिणेनानुराधायां यदा च व्रजते शशी ।
अप्रभश्च प्रहीणश्च वस्त्रं द्रोणाय कल्पयेत् ॥३८॥

निष्प्रभ और हीन चन्द्रमा दक्षिण मार्गसे अनुराधामें गमन करता है तो वस्त्र मँहगे होते हैं ॥३८॥

ज्येष्ठा-मूलौ यदा चन्द्रो दक्षिणे व्रजतेऽप्रभः ।
तदा सस्यं च वस्त्रं च शरीरी चार्थं विनश्यति ॥३९॥

प्रजानामनयो घोरस्तदा जायन्ति[5] तामसः ।
प्रस्तक्रयस्य वस्त्रस्य तेन क्षीयन्ति तां प्रजाम् ॥४०॥

जब प्रभारहित चन्द्रमा दक्षिणमें ज्येष्ठा और मूल नक्षत्रमें आता है, तब धान्य, वस्त्र और अर्थका विनाश होता है। उक्त प्रकारकी चन्द्रमाकी स्थितिमें प्रजामें अन्न और वस्त्रके लिए हाहाकार हो जाता है तथा वस्त्रके खरीदनेमें प्रजाका विनाश भी होता है ॥३९-४०॥

१. इन्द्राग्नि मु० । २. बाह्यतः मु० । ३. च मु० । ४. वर्षा मु० । ५. जायन्ति मु० ।

मूलं मन्देव सेवन्ते यदा दक्षिणतः शशी।
प्रजातसर्वधान्यानां आढका नु तदा भवेत् ॥४१॥

जब चन्द्रमा दक्षिणसे मन्द होता हुआ मूल नक्षत्रका सेवन करता है तब सभी प्रकारके धान्योंकी उपज खूब होती है और वर्षा आढक प्रमाण होती है ॥४१॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां पुष्या-श्लेषा-पुनर्वसून्।
व्रजते दक्षिणश्चन्द्रो दशप्रस्थं तदा भवेत् ॥४२॥

जब दक्षिण चन्द्रमा कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, आश्लेषा, पुनर्वसुमें गमन करता है, तब दश प्रस्थ प्रमाण धान्यकी बिक्री होती है अर्थात् फसल भी उत्तम होती है ॥४२॥

मघां विशाखां च ज्येष्ठाऽनुराधे मूलमेव च।
दक्षिणे व्रजते शुक्रश्चन्द्रे तदाऽऽढकमेव च ॥४३॥

शुक्र और चन्द्रके दक्षिणमें मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, अनुराधा और मूलमें गमन करने पर आढ़क प्रमाण धान्यकी बिक्री होती है अर्थात् फसल कम होती है ॥४३॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां विशाखां च मघां यदा।
दक्षिणेन ग्रहा यान्ति चन्द्रस्त्वाढकविक्रयः ॥४४॥

जब ग्रह दक्षिणसे कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, विशाखा और मघा नक्षत्रमें गमन करते हैं तो आढ़क प्रमाण वस्तुओंकी बिक्री होती है ॥४४॥

गुरुः शुक्रश्च भौमश्च दक्षिणाः सहिता यदा।
प्रस्थत्रयं[2] तदा वस्त्रैर्यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥४५॥

जब गुरु, शुक्र और मंगल दक्षिणमें स्थित हों तब धान्यकी बिक्री तीन प्रस्थकी होती है और वस्त्रके लिए प्रजा मृत्युके मुखमें जाती है अर्थात् अन्न और वस्त्रका अभाव होता है ॥४५॥

उत्तरं भजते मार्गं शुक्रपृष्ठं तु चन्द्रमाः।
महाधान्यानि वर्धन्ते कृष्णधान्यानि दक्षिणे ॥४६॥

जब शुक्र उत्तर मार्गमें आगे हो और चन्द्रमाके पीछे हों तब महाधान्योंकी वृद्धि होती है। यदि यही स्थिति दक्षिण मार्गमें हो तो काले रङ्गके धान्य वृद्धिङ्गत होते हैं ॥४६॥

दक्षिणं चन्द्रशृङ्गं च यदा वृद्धतरं भवेत्।
महाधान्यं तदा वृद्धं कृष्णधान्यमथोत्तरम् ॥४७॥

यदि चन्द्रमाका शृङ्ग दक्षिणकी ओर बढ़ता दिखलायी पड़े तो महाधान्य गेहूँ, चना, जौ, चावल आदिकी वृद्धि होती है तथा उत्तर शृङ्गकी वृद्धि होने पर काले रंगके धान्य बढ़ते हैं ॥४७॥

कृत्तिकानां मघानां च रोहिणीनां विशाखयोः।
उत्तरेण महाधान्यं कृष्ण[3]धान्यश्च दक्षिणे ॥४८॥

कृत्तिका, मघा, रोहिणी और विशाखाके उत्तर होनेसे महाधान्य और दक्षिण होनेसे कृष्ण धान्यकी वृद्धि होती है ॥४८॥

१. चैव मु०। २. प्रस्थत्रयं तदा वस्त्रैर्यान्ति मु०। ३. धान्यं तु मु०।

यस्य देशस्य नक्षत्रं न पीड्यन्ते यदा यदा ।
तं देशं भिक्षवः स्फीताः संश्रयेयुस्तदा तदा ॥४९॥

जिन-जिन देशोंके नक्षत्र ग्रहोंके द्वारा जब-जब पीडित—घातित न हों तब-तब भिक्षुओंको उन देशोंमें प्रसन्न चित्त होकर जाना चाहिए और वहाँ शान्ति-पूर्वक विचरण करना चाहिए ॥४९॥

धान्यं वस्त्रमिति ज्ञेयं तस्यार्घं च शुभाशुभम् ।
ग्रहनक्षत्रसंप्रत्य कथिता भद्रबाहुना ॥५०॥

ग्रह और नक्षत्रोंके शुभाशुभ योगसे धान्य और वस्त्रोंके भावोंको तेजी-मन्दीको भद्रबाहु स्वामीने कहा है ॥५०॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्ते संग्रहयोगार्घकाण्डं नाम पञ्चविंशतितमोऽध्यायः ॥२५॥

विवेचन—तेजी-मन्दी जाननेके अनेक नियम हैं। ग्रहोंकी स्थिति, उनका मार्गी होना या वक्री होना तथा उनकी प्रभाओं परसे तेजी-मन्दीका ज्ञान करना, आदि प्रक्रियाएँ प्रचलित हैं। इस संहिता ग्रन्थमें ग्रहोंकी स्थिति परसे वस्तुओंकी तेजी-मन्दीका साधारण विचार किया गया है। बारह महीनोंकी तिथि, वार, नक्षत्रके सम्बन्धसे भी तेजी-मन्दीका विचार 'वर्ष प्रबोध' नामक ग्रन्थमें विस्तारसे किया गया है। यहाँ संक्षेपमें कुछ प्रमुख योगोंका निरूपण किया जायगा।

द्वादश पूर्णमासियोंका विचार—चैत्रकी पूर्णमासीको निर्मल आकाश हो तो किसी भी वस्तुसे लाभकी सम्भावना नहीं रहती है। यदि इस दिन ग्रहण, भूकम्प, विद्युत्पात, उल्कापात, केतूदय और वृष्टि हो तो धान्यका संग्रह करना चाहिए। गेहूँ, जौ, चना, उड़द, मूंग, सोना, चाँदी आदि पदार्थोंमें इस पूर्णिमाके सातवें महीनेके उपरान्त लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमाको आकाशके स्वच्छ रहने पर सभी वस्तुएँ तीन महीनों तक सस्ती होती हैं। गेहूँ, चना, वस्त्र, सोना आदिका भाव प्रायः सम रहता है। बाजारमें अधिक घटा-बढ़ी नहीं होती। यदि इस पूर्णिमाको चन्द्रपरिवेष, उल्कापात, विद्युत्पात, भूकम्प, वृष्टि, केतूदय या अन्य किसी भी प्रकारका उत्पात दिखलायी पड़े तो धान्यके साथ कपास, वस्त्र, रूई आदि पदार्थ तेज होते हैं। गुड़का भाव भी ऊँचा उठता है। गेहूँ, मूँग, उड़द, चनाका संग्रह भाद्रपद मासमें ही लाभ देता है। सभी प्रकारके अन्नोंका संग्रह लाभ देता है। चावल, जौ, अरहर, कांगुनी, कोदों, मक्का आदि अनाजोंमें दुगुना लाभ होता है। सोने, चाँदी, माणिक्य, मोती इन पदार्थोंका मूल्य कुछ नीचे गिर जाता है। वैशाखी पूर्णिमाको मध्यरात्रिमें जोरसे बिजली चमके और थोड़ी-सी वर्षा होकर बन्द हो जाय तो आगामी माघ मासमें गुड़के व्यापारमें अच्छा लाभ होता है। अनाजके संग्रहमें भी लाभ होता है। इस पूर्णिमाके प्रातःकाल सूर्योदयके समय बादल दिखलायी पड़ें तथा आकाशमें अन्धकार दिखलायी पड़े तो अगहन महीनेमें घी और अनाजमें अच्छा लाभ होता है। दो तीन सभी महीनोंमें सब पदार्थोंमें लाभ होता है, किन्तु घी, अनाज और गुड़-

१ बंबई दि मु० ।

चीनीमें अच्छा लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमाको स्वाति नक्षत्रका चतुर्थ चरण हो तथा शनिवार या रविवार हो तो उस वर्षमें व्यापारियोंको लाभके साथ हानि भी होती है। बाजारमें अनेक प्रकारकी घटा-बढ़ी चलती है। ज्येष्ठ पूर्णिमाको आकाश स्वच्छ हो, बादलोंका अभाव रहे, निर्मल चाँदनी वर्तमान रहे तो सुभिक्ष होता है, साथ ही अनाजमें साधारण लाभ होता है। बाजार संतुलित रहता है, न अधिक ऊँचा ही जाता है और न नीचा ही। जो व्यक्ति ज्येष्ठ पूर्णिमाको उक्त स्थितिमें धान्य, गुड़का संग्रह करता है, वह भाद्रपद और आश्विनमें लाभ उठाता है। गेहूँ, चना, जौ, तिलहनमें पौषके महीनेमें अधिक लाभ होता है। यदि इस पूर्णिमाको दिनमें मेघ, वर्षा हो और रातमें आकाश स्वच्छ रहे तो व्यापारियोंको साधारण लाभ होता है तथा मार्गशीर्ष, माघ और फाल्गुनमें वस्तुओंमें हानि होनेकी सम्भावना है। रातमें इस तिथिको बिजली गिरे, उल्कापात हो, भूकम्प हो, चन्द्रका परिवेष दिखलायी पड़े, इन्द्र धनुष लाल या काले रंगका दिखलायी पड़े तो अनाजका संग्रह अवश्य करना चाहिए। इस प्रकारकी स्थितिमें अनाजमें कई गुना लाभ होता है। सोना, चाँदीके मूल्यमें साधारण तेजी आती है। ज्येष्ठी पूर्णिमाको मध्यरात्रिमें चन्द्रपरिवेष उदास-सा दिखलायी पड़े और स्यार रह-रहकर बोलें तो अन्नसंग्रहकी सूचना समझना चाहिए। चारेका भाव भी तेज हो जाता है और प्रत्येक वस्तुमें लाभ होता है। घीका भाव कुछ सस्ता होता है तथा तेलकी कीमत भी सस्ती होती है। अगहन और पौष मासमें सभी पदार्थोंमें लाभ होता है। फाल्गुनका महीना भी लाभके लिए उत्तम है। यदि ज्येष्ठी पूर्णिमाको चन्द्रोदय या चन्द्रास्तके समय उल्कापात हो और आकाशमें अनेक रंग-बिरंगी ताराएँ चमकती हुई भूमि पर गिरें तो सभी प्रकारके अनाजोंमें तीन महीनेके उपरान्त लाभ होता है। ताँबा, पीतल, कांसा आदि धातुओंमें और मशालेमें कुछ घाटा भी होता है।

आषाढ़ी पूर्णिमाको आकाश निर्मल और उज्ज्वल चाँदनी दिखलायी पड़े तो सभी प्रकारके अनाज पाँच महीनेके भीतर तेज होते हैं। कार्तिक महीनेसे ही अनाजमें लाभ होना प्रारम्भ हो जाता है। सोनेका भाव माघके महीनेसे महँगा होता है। सट्टेके व्यापारियोंको साधारण लाभ होता है। सूत, कपड़ा और जूटके व्यापारमें लाभ होता है; किन्तु इन वस्तुओंका व्यापार अस्थिर रहता है, जिससे हानि होनेकी भी संभावना रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाको मध्य रात्रिके पश्चात् आकाश लगातार निर्मल रहे तथा मध्य रात्रिके पहले आकाश मेघाच्छन्न रहे तो चैती फसलके अनाजमें लाभ होता है। अगहनी और भदई फसलके अनाजमें लाभ नहीं होता। साधारणतया वस्तुओंके भाव ऊँचे आते हैं। घी, गुड़, तेल, चाँदी, बारदाना, गुवार, मटर आदि वस्तुओंका रुख भी तेजीकी ओर रहता है। शेयरके बाजारमें भी हीनाधिक–घटा-बढ़ी होती है। लोहा, रबर एवं इन पदार्थोंसे बनी वस्तुओंके व्यापारमें लाभ होनेकी सम्भावना अधिक रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमाको दिन भर वर्षा हो और रातमें चाँदनी न निकले, बूँदा-बूँदी होती हो तो अनाजमें लाभ होनेकी सम्भावना नहीं है। केवल सोना, चाँदी और गुड़के व्यापारमें अच्छा लाभ होता है। गुड़, चीनीमें कई गुना लाभ होता है। यदि इसी पूर्णिमाको बुध वक्री हुआ हो तो छः महीने तक सभी पदार्थोंमें तेजी रहती है। जो पदार्थ विदेशोंसे आते हैं, उनका भाव अधिक तेज होता है। स्थानीय उत्पन्न पदार्थोंका भाव अधिक तेज होता है। श्रावणी पूर्णिमाको आकाश निर्मल हो तो सभी वस्तुओंमें अच्छा लाभ होता है। यदि इस दिन स्वच्छ चाँदनी आकाशमें व्याप्त दिखलायी पड़े तो नाना प्रकारके रोग फैलते हैं तथा लाल रंगकी सभी वस्तुओंमें तेजी आती है। गेहूँ और चावलकी कमी रहती है। जिस स्थानपर श्रावणीके दिन चन्द्रमा स्वच्छ तथा काले छेदवाला दिखलायी पड़े, उस स्थानमें दुर्भिक्षके साथ खाद्यान्नकी बड़ी भारी कमी हो जाती है, जिससे सभी व्यक्तियोंको कष्ट होता है। लोहा, चाँदी, नीलम आदि बहुमूल्य पदार्थोंका भाव भी तेज होता है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा निर्मल होने पर धान्यका

संग्रह नहीं करना चाहिए। यदि यह पूर्णिमा चन्द्रोदयसे लेकर चन्द्रास्त तक निर्मल रहे तो धान्यमें लाभ नहीं होता है तथा खाद्यान्नोंकी कमी भी नहीं रहती है। सोना, चाँदी, शेयर, चीनी, गुड़, घी, किराना, वस्त्र, जूट, कपास आदि पदार्थ समर्घ रहते हैं। इन पदार्थोंके भावोंमें अधिक ऊँच-नीच नहीं होती है। घटा-बढ़ीका कारण शनि, शुक्र और मंगल हैं, यदि इस पूर्णिमाके नक्षत्रको इन तीनों ग्रहों द्वारा वेधा जाता हो, या दो ग्रहों द्वारा वेधा जाता हो तो सभी पदार्थ महँगे होते हैं। अधिक क्या मिट्टीका भाव भी महँगा होता है। जिन पदार्थोंकी उत्पत्ति मशीनोंके द्वारा होती है, उन पदार्थोंमें कार्त्तिक माससे मंहगाई होना आरम्भ होता है। आश्विन पूर्णिमाके दिन आकाश स्वच्छ, निर्मल हो तो धान्यका संग्रह करना अनुचित है; क्योंकि वस्तुओंमें लाभ होनेकी सम्भावना ही नहीं होती है। आकाशमें मेघ आच्छादित हों तो अवश्य संग्रह करना चाहिए; क्योंकि इस खरीदमें चैत्रके महीनेमें लाभ होता है। कार्त्तिक पूर्णिमाको मेघाच्छन्न होनेपर अनाजमें लाभ होता है। चीनी, गुड़ और घीमें हानि होती है। यदि यह पूर्णिमा निर्मल हो तो सामान्य तथा सभी वस्तुओंका भाव स्थिर रहता है। व्यापारियोंको न अधिक लाभ ही होता है और न अधिक घाटा ही। मार्गशीर्ष और पौषकी पूर्णिमाका फलादेश भी उपर्युक्त कार्त्तिक पूर्णिमाके तुल्य है। माघी पूर्णिमाको बादल हों तो धान्य खरीदनेसे सातवें महीनेमें लाभ होता है और फाल्गुनी पूर्णिमाको बादल हों, वर्षा हो, उल्कापात या विद्युत्पात हो तो धान्यमें सातवें महीनेमें अच्छा लाभ होता है। घी, चीनी, गुड़, कपास, रूई, जूट, सन और पाटके व्यापारमें लाभ होता है। माघी और फाल्गुनी इन दोनों पूर्णिमाओंके स्वच्छ होने पर सोनेके व्यापारमें लाभ होता है।

भौम ग्रहकी स्थितिके अनुसार तेजी-मन्दीका विचार—जब मंगल मार्गी होता है, तब रूई मन्दी होती है। मेष राशिका मंगल मार्गी हो तो मवेशी सस्ते होते हैं। वृषका मंगल मार्गी हो तो रूई तेज होकर मन्दी होती है। तथा चाँदीमें घटा-बढ़ी होती है। मिथुन और कर्क राशिके मार्गी मंगलका फल तेजी-मन्दीके लिए नहीं है। सिंहका मंगल मार्गी होने पर एक मास तक अलसी और गेहूँमें तेजी रहती है। कन्याका मंगल मार्गी हो तो रूई, अलसी, गेहूँ, तेल, तिलहन आदि पदार्थ तेज होकर मन्दे होते हैं। तुलाका मंगल मार्गी होनेपर गुजरात और कच्छमें धान्य भावको महँगा करता है; वृश्चिकका मंगल मार्गी होनेपर चौपायोंमें लाभ करता है। धनुका मंगल मार्गी होनेपर धान्य सस्ता करता है। मकरका मंगल मार्गी हो तो पंजाब तथा बंगालमें धान्यका भाव तेज होता है। कुम्भका मंगल मार्गी होनेपर सभी प्रकारके धान्य सस्ते होते हैं और मीनके मंगलमें भी धान्यका भाव सस्ता ही रहता है। मेष और वृश्चिकके बीच राशियोंमें मंगलके रहने पर दो मास तक धान्य भाव तेज रहता है। जिस महीनेमें सभी ग्रह वक्री हो जावें, उस मासमें अति महँगी होती है। मीनमें मंगलके वक्री होने पर धान्य और घी तेज; कुम्भमें वक्री होने पर धान्य सस्ते और घी, तेल आदि तेज; मकरमें मंगलके वक्री होनेसे लोहा, मशीनरी, विद्युद्यन्त्र, गेहूँ, अलसी आदि पदार्थ तेज होते हैं। कर्क राशिमें मंगलके वक्री होनेसे गेहूँ और अलसीमें घटा-बढ़ी होती रहती है। जिस राशिमें मंगल वक्री होता है, उस राशिके धान्यादि अवश्य तेज होते हैं। माघ अथवा फाल्गुनमें कृष्णपक्षकी १,२,३ तिथिको मंगलके वक्री होने पर अन्नका संग्रह करना चाहिए। इस संग्रहमें १५ दिनोंके बाद ही चौगुना लाभ होता है। जिस मासमें पूर्णिमाके दिन वर्षा होती है, उस मासमें गेहूँ, घी और धान्य तेज होते हैं।

बुध ग्रहकी स्थितिसे तेजी-मन्दी विचार—मेष राशिमें बुधके रहनेसे सोना महँगा होता है। १७ दिनमें गाय, बैल आदि पशुओंकी हानि होती है। मोती, जवाहरात भी तेज

होते हैं। वृष राशिके बुध सभी वस्तुओंमें साधारण घटा-बढ़ी, मिथुन राशिके बुध सभी प्रकारके अनाज सस्ते; कर्कके बुधमें अफीमका भाव तेज होता है। सिंह राशिके बुधमें धान्यका भाव सम रहता है, खट्टे पदार्थ, देवदारु तेज होते हैं और १८ दिनमें सूत, वस्त्र, रेलवेके स्लीपाट, साधारण लकड़ीका भाव तेज होता है। कन्याराशिमें बुधके रहनेसे छः महीने तक सोना, चीनी, तेज होते है, पश्चात् मन्दे हो जाते हैं। तुलाराशिके बुधमें धान्य मँहगे, वृश्चिकराशिके बुधमें चौपाए और अफीम मंहगी, धनुके बुधमें अफीम मंहगी, मकरके बुधमें समभाव, कुम्भके बुधमें धान्य मे घटा-बढ़ी और मीनके बुधमें रूई, अलसी, मेथी, लौंग भी तेज होती हैं। फाल्गुन और आषाढ़ इन महीनोंमें बुधका उदय होनेसे धान्य, घी और लाल पदार्थ मँहगें होते हैं। पूर्वमें बुधोदय होने पर २५ दिनके बाद रुईमें १०) रुपयेकी तेजी आती है और पश्चिममें बुधोदय होने पर रूई, कपास, सूत आदिमें सस्ती आती है। मार्गशीर्षमें बुधोदय हो तो रुई तेज होती हैं। पूर्व दिशामें बुधका अस्त होनेसे ३३ दिनोंमें धान्य, घृतादि मन्दे होते हैं किन्तु रुईमें १५ रुपयेकी तेजी आती है। पश्चिममें बुधके अस्त होनेसे १५ दिनमें रुई १०) रुपये तक सस्ती होती है। मेप राशिसे लेकर सिंह राशि तक बुधके मार्गी होनेसे कपड़ा, चावल, हाथी, घोड़ा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कन्या और तुलामें बुधके मार्गी होनेसे चन्दन, सूत, घृत, चीनी, अलसी आदि पदार्थ मँहगे होते हैं। वृश्चिकमें बुधके मार्गी होनेसे एरंड, बिनौला और मूंगफली तेज हो जायगी। कुम्भ और मीनमें बुधके मार्गी होनेसे सोना, सुपारी, सरसो, सोंठ, लाख, कपड़ा, गुड़, खांड़, तेल और मूँगफली आदि पदार्थ तेज होते हैं।

गुरुकी स्थितिका फलादेश—वृषराशिमें गुरुके रहनेसे घी और धान्यका भाव अत्यन्त तेज होता है। मिथुनराशिमें गुरुके रहनेसे रूई, ताँबा, चाँदी, नारियल, तेल, घृत, अफीम पदार्थ पहले तेज, पश्चात मन्दे होते हैं। कर्कराशिमें गुरुके रहनेसे सभी पदार्थ मँहगे होते हैं। सिंहमें बृहस्पतिके रहनेसे गेहूँ, घी तेज और कन्यामें रहनेसे ज्वार, मूँग, मोंट, चावल, घृत, तैल, सिंघाड़ा छः महीनेके बाद तेज, रूई तीन-चार महीनोंमें तेज तथा चाँदी मन्दी होती है। वृश्चिक राशिके गुरुमें सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। धनुराशिके गुरुमें गेहूँ, चावल, जौ आदि अन्न मँहगे; तैल, गुड़, मद्य सस्ते होते हैं। मकर राशिमें गुरुके रहनेसे तीन महीनें मँहगी पश्चात् मन्दी आती है। मीन राशिके गुरुमे सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। गुरुके अस्त होनेके ३१ दिन बाद रूईमें १०-२० रुपयेकी मन्दी आती है। फाल्गुन मासमें गुरु अस्त हो तो धान्य तेज और रुईमें १०-२० रुपयेकी मन्दी आती है। गुरुके वक्री होनेपर सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, धातु, रुई, केसर, कपूर आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। गुरुके मार्गी होनेसे चाँदी, सरसों, रूई, चावल, घीमें निरन्तर घटा-बढ़ी होती रहती है।

शुक्रकी स्थितिका फलादेश—मेपके शुक्रमें सभी धान्य मँहगे, वृपके शुक्रमें अनाज मँहगा, रूई मन्दी और अफीम तेज, मिथुनके शुक्रमें रूई मन्दी, अफीम तेज, कर्कके शुक्रमें सभी वस्तुएँ मँहगी, रुईका भाव विशेष तेज, सिंहके शुक्रमें लाल रंगके पदार्थ मँहगे, कन्याके शुक्रमें सभी धान्य मँहगे, तुलाके शुक्रमें अफीम तेज, वृश्चिकके शुक्रमें अनाज सस्ता, धनुके शुक्रमें धान्य मँहगे, मकरके शुक्रमें २० दिनमें सभी अन्न मँहगे, कुम्भ एवं मीनके शुक्रमें सभी अनाज सस्ते होते हैं। सिंहका शुक्र, तुलाका मंगल, कर्कका गुरु जब आता है, तब अन्न मँहगा होता है।

शुक्र उदय दिन नक्षत्रानुसार फल

अश्विनीमें जौ, तिल, उड़दका भाव तेज हो। भरणीमें शुक्रका उदय होनेसे तृण, धान्य, तिल, उड़द, चावल, गेहूँका भाव तेज होता है। कृत्तिकामें शुक्र उदय होनेसे सभी प्रकार के अन्न सस्ते होते हैं। रोहिणीमें समर्घता, मृगशिरामें धान्य महँगे, आर्द्रामें अल्पवृष्टि होनेसे महँगाई, पुनर्वसुमें अन्नका भाव मँहगा, पुष्यमें धान्यभाव अत्यन्त मँहगा तथा आश्लेषासे अनुराधा नक्षत्र तक शुक्रके उदय होनेसे तृण, अन्न, काष्ठ, चतुष्पद आदि सभी पदार्थ मँहगे होते हैं।

शुक्र और शनि जब दोनों एक राशि पर अस्त हों तो सब अनाज तेज होते हैं। शुक्र वक्री हों तो सभी अनाज मन्दा, घृत, तैल तेज होते हैं। शुक्रके मार्गी होने पर ४ दिनोंके उपरान्त सोना, चाँदी, मोती, जवाहरात आदि मँहगे होते हैं।

शनिका फलादेश—शनिके उदयके तीन दिन बाद रूई तेज होती है। मूँग, मशाले, चावल, गेहूँके भावोंमें घटा-बढ़ी होती रहती है। अश्विनी और भरणी नक्षत्रमें शनि वक्री हो तो एक वर्ष तक पीड़ा; धान्य और चौपायोंका मूल्य बढ़ जाता है। मघा पर वक्री होकर आश्लेषा पर जब गुरु आता है तो गेहूँ, घृत, शाल, प्रवाल तेज होते हैं। ज्येष्ठा पर वक्री होकर अनुराधा पर शनि आता है तो सब वस्तुएँ तेज होती हैं। उत्तराषाढ़ा पर वक्री होकर पूर्वाषाढ़ा पर आता है तो सभी वस्तुओंमें अत्यधिक घटा-बढ़ी होती है। गुरु और शनि दोनों एक साथ वक्री हों तो और शनि १०।११ राशि का हो तो गेहूँ, तिल, तैल आदि पदार्थ ६ महीने तक तेज होते हैं। शनिके वक्री होनेके तीन महीने उपरान्त गेहूँ, चावल, मूँग, ज्वार, धान्य, खजूर, जायफल, घी, हल्दी, नील, धनियाँ, जीरा, मेंथी, अफीम, घोड़ा, आदि पदार्थ तेज और सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि पदार्थ मन्दे एवं नारियल, सुपाड़ी, लवंग, तिल, तेल आदि पदार्थोंमें घटा-बढ़ी होती रहती है। शनि मार्गी हो तो दो मासमें तैल, हींग, मिर्च, मशालेको तेज और अफीम, रूई, सूत, वस्त्र आदि पदार्थोंको मन्दा करता है। शनि कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्रमें वक्री हो तो सभी वस्तुएँ मँहगी होती हैं।

तेजी-मन्दीके लिए उपयोगी पंचवारका फल—जिस महीनेमें पाँच रविवार हों उस महीनेमें राज्यभय, महामारी, अलसी-सोना आदि पदार्थ तेज होते हैं। किसी भी महीनेमें पाँच सोमवार होनेसे सम्पूर्ण पदार्थ मन्दे, घृत-तैल-धान्य भाव मन्दे रहते हैं। पाँच मंगलवार होनेसे अग्नि-भय,वर्षाका निरोध, अफीम मन्दा तथा धान्यभाव घटता-बढ़ता रहता है। पाँच बुधवार होनेसे घी, गुड़, खाँड़ आदि रस तेज होते हैं; रूई, चाँदी घट-बढ़कर अन्तमें तेज होती है। पाँच गुरुवार होनेसे सोना, पीतल, सूत, कपड़ा, चावल, चीनी आदि पदार्थ मन्दे होते हैं। पाँच शुक्रवार होनेसे प्रजाकी वृद्धि, धान्य मन्दा, लोग सुखी तथा अन्य भोग्य पदार्थ सस्ते होते हैं। पाँच शनिवार होनेसे उपद्रव, अग्निभय, अफीमकी मन्दी, धान्यभाव अस्थिर और तैल मँहगा होता है। लोहेका भाव पाँच शनिवार होनेसे मँहगा तथा अस्त्र-शस्त्र, मशीनके कल-पुर्जोंका भाव पाँच मंगल और पाँच गुरु होनेसे मँहगा होता है।

संक्रान्तिके वारोंका फल—रविवारको संक्रान्तिका प्रवेश हो तो राजविग्रह, अनाज मँहगा, तैल, घी, तिल आदि पदार्थोंका संग्रह करनेसे लाभ होता है। सोमवारको संक्रान्ति

प्रवेश हो तो अनाज मँहगा, प्रजाको सुख; घृत, तैल, गुड़, चीनी आदि पदार्थोंके संग्रहमें तीसरे महीने लाभ होता है। मँगलवारको संक्रान्ति प्रवेश करे तो घी, तैल, धान्य आदि पदार्थ तेज होते हैं। लाल वस्तुओंमें अधिक तेजी आदि आती है तथा सभी वस्तुओंके संग्रहमें दूसरे महीनेमें लाभ होता है। बुधवारको संक्रान्तिका प्रवेश होनेपर श्वेत वस्त्र, श्वेत रंगके अन्य पदार्थ मँहगे तथा नील, लाल और श्याम रंगके पदार्थ दूसरे महीनेमें लाभप्रद होते हैं। गुरुवारको संक्रान्तिका प्रवेश हो तो प्रजा सुखी, धान्य सस्ते; गुड़, खाँड़ आदि मधुर पदार्थोंमें दो महीनेके उपरान्त लाभ होता है। शुक्रवारको संक्रान्ति प्रविष्ट हो तो सभी वस्तुएँ सस्ती, लोग सुखी-सम्पन्न, अन्नकी अत्यधिक उत्पत्ति, पीली वस्तुएँ, श्वेत वस्त्र तेज होते हैं और तैल, गुड़के संग्रहमे चौथे मासमें लाभ होता है। शनिवारको संक्रान्तिके प्रविष्ट होनेसे धान्य तेज, प्रजा दुःखी, राजविरोध, पशुओंको पीड़ा, अन्न नाश तथा अन्नका भाव भी तेज होता है।

जिस वारके दिन संक्रान्तिका प्रवेश हो, उसी वारको उस मासमें अमावास्या हो, तो खर्पर योग होता है। यह जीवोंका और धान्यका नाश करनेवाला होता है। इस योगमें अनाजमें घटा-बढ़ी चलती है, जिससे व्यापारियोंको भी लाभ नहीं हो पाता।

पहली संक्रान्ति शनिवारको प्रविष्ट हुई हो, इससे आगेवाली दूसरी संक्रान्ति रविवारको प्रविष्ट हुई हो और तीसरी आगेवाली मंगलवारको प्रविष्ट हो तो खर्पर योग होता है। यह योग अत्यन्त कष्ट देनेवाला है।

मकर संक्रान्तिका फल—पौष महीनेमें मकर संक्रान्ति रविवारको प्रविष्ट हो तो धान्यका मूल्य दुगुना होता है। शनिवारको हो तो तिगुना, मंगलके दिन प्रविष्ट हो तो चौगुना धान्यका मूल्य होता है। बुध और शुक्रवारको प्रविष्ट होनेसे समान भाव और गुरु तथा सोमवारको हो तो आधा भाव होता है।

शनि, रवि और मंगलके दिन मकर संक्रान्तिका प्रवेश हो तो अनाजका भाव तेज होता है। यदि मेष और कर्क संक्रान्तिका रवि, मंगल और शनिवारको प्रवेश हो तो अनाज मँहगा, ईति-भिति आदिका आतंक रहता है। कार्तिक तथा मार्गशीर्षकी संक्रान्तिके दिन जलवृष्टि हो तो पौषमें अनाज सस्ता होता है तथा फसल मध्यम होती है। कर्क अथवा मकर संक्रान्ति शनि, रवि और मंगलवारकी हो तो भूकम्पका योग होता है। प्रथम संक्रान्ति प्रवेशके नक्षत्रमें दूसरी संक्रान्ति प्रवेशका नक्षत्र दूसरा या तीसरा हो तो अनाज सस्ता होता है। चौथे या पाँचवें पर प्रवेश हो तो धान्य तेज एवं छठवें नक्षत्रमें प्रवेश हो तो दुष्काल होता है।

संक्रान्तिसे गणित द्वारा तेजी-मन्दीका परिज्ञान—संक्रान्ति जिस दिन प्रवेश हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसकी संख्यामें तिथि और वारकी संख्या जो उस दिनकी हो, उसे मिला देना चाहिए। इसमें जिस अनाजकी तेजी-मन्दी जानने हो उसके नामके अक्षरकी संख्या मिला देना। जो योगफल हो उसमें तीनका भाग देनेसे एक शेष बचे तो वह अनाज उस संक्रान्तिके मासमें मन्दा बिकेगा, दो शेष बचे तो समान भाव रहेगा और शून्य शेष बचे तो वह अनाज मँहगा होगा।

संक्रान्ति जिस प्रहरमें जैसी हो, उसके अनुसार सुख-दुःख,लाभालाभ आदिकी जानकारी निम्न चक्र द्वारा करनी चाहिए।

वारानुसार संक्रान्ति फलावबोधक चक्र

वार	नक्षत्र	नाम	फल	काल	फल	दिशा
रवि	उग्र	घोरा	शूद्रोंको सुख	पूर्वाह्न	विप्रोंको सुख	पूर्व
सोम	क्षिप्र	ध्वांक्षी	वैश्योंको सुख	मध्याह्न	वैश्योंको सुख	दक्षिण कोण
मंगल	चर	महोदरी	चोरोंको सुख	अपराह्न	शूद्रोंको सुख	पश्चिम कोण
बुध	मैत्र	मंदाकिनी	राजाओंको सुख	प्रदोष	पिशाचोंको सुख	दक्षिण
गुरु	ध्रुव	नन्दा	द्विजगणोंको सुख	अर्द्धरात्रि	राक्षसोंको सुख	उत्तर कोण
शुक्र	मिश्र	मिश्रा	पशुओंको सुख	अपररात्रि	नटादिको सुख	पूर्व कोण
शनि	दारुण	राक्षसी	चाण्डालोंको सुख	प्रत्यूषकाल	पशुपालकोंको सुख	उत्तर

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु-तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्र—उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुव संज्ञक, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चल संज्ञक, विशाखा और कृत्तिका मिश्र संज्ञक, हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघु संज्ञक, मृगशिर, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्र संज्ञक एवं मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुण संज्ञक हैं।

अधोमुख संज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुख संज्ञक हैं।

ऊर्ध्वमुख संज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुख संज्ञक हैं।

तिर्यङ् मुख संज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ्मुख संज्ञक है।

दग्ध संज्ञक नक्षत्र—रविवारको भरणी, सोमवारको चित्रा, मंगलवारको उत्तराषाढ़ा, बुधवारको धनिष्ठा, बृहस्पतिवारको उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवारको ज्येष्ठा और शनिवारको रेवती दग्ध संज्ञक है।

मास शून्य नक्षत्र—चैत्रमें रोहिणी और अश्विनी, वैशाखमें चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठमें उत्तराषाढ़ा और पुष्य, आषाढ़में पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण में उत्तराषाढ़ा और श्रवण, भाद्रपदमें शतभिषा और रेवती, आश्विनमें पूर्वाभाद्रपद, कार्तिकमें कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्ष में चित्रा और विशाखा, पौषमें आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघमें श्रवण और मूल एवं फाल्गुनमें भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र हैं।

संक्रान्ति प्रवेशके दिन नक्षत्रका स्वभाव और संज्ञा अवगत करके वस्तुओंकी तेजी-मन्दी जाननी चाहिए। यदि संक्रान्तिका प्रवेश तीक्ष्ण, दग्ध या उग्र संज्ञक नक्षत्रमें होता है, तो सभी वस्तुओंकी तेजी समझनी चाहिए। मृदु और ध्रुव संज्ञक नक्षत्रोंमें संक्रान्तिका प्रवेश होनेसे समानभाव रहता है। दारुण संज्ञक नक्षत्रमें संक्रान्तिका प्रवेश होनेसे खाद्यान्नोंका अभाव रहता है, सभी अन्य उपभोगकी वस्तुएँ भी उपलब्ध नहीं हो पाती।

संक्रान्तिवाहनफलबोधक चक्र

करण	बव	बालव	कौलव	तैतिल	गर	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतु-ष्पद	नाग	किंस्तुघ्न
स्थिति	बैठी	बैठी	खड़ी	सोती	बैठी	खड़ी	बैठी	सोती	खड़ी	सोती	खड़ी
फल	मध्यम	मध्यम	महर्घ	समर्घ	मध्यम	महर्घ	महर्घ	महर्घ	समर्घ	समर्घ	महर्घ
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वराह	गर्दभ	हस्ती	महिषी	घोड़ा	कुत्ता	मेंढा	बैल	कुक्कुट
उप वाहन	गज	अश्व	बैल	मेंढा	गर्दभ	ऊँट	सिंह	शार्दूल	महिष	व्याघ्र	वानर
फल	भय	भयं	पीडा	सुभिक्ष	लक्ष्मी	क्लेश	स्थैर्य	सुभिक्ष	क्लेश	स्थैर्य	मृत्यु
वस्त्र	श्वेत	पीत	हरित	पाण्डु	रक्त	श्याम	काला	चित्र	कम्बल	नग्न	घनवर्ण
आयुध	भुशुंडी	गदा	खड्ग	दण्ड	धनुष	तोमर	कुन्त	पाश	अंकुश	तल-वार	बाण
पात्र	सुवर्ण	रूपा	ताम्र	कांस्य	लोह	तीकर	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठ
भक्ष्य	अन्न	पायस	भक्ष्य	पक्वान्न	पय	दधि	चित्रान्न	गुड़	मधुर	घृत	शर्करा
लेपन	कस्तूरी	कुङ्कुम	चन्दन	माटी	गोरो-चन	आँवला	हल्दी	सुरमा	सिन्दूर	अगर	कपूर
वर्ण	देव	भूत	सर्प	पशु	मृग	विप्र	क्षत्री	वैश्य	शूद्र	मिश्र	अंत्यज
पुष्प	पुन्नाग	जाती	बकुल	केतकी	बेल	अर्क	कमल	दूर्वा	मल्लिका	पाटल	जपा
भूषण	नूपुर	कंकण	मोती	मूँगा	मुकुट	मणि	गुंजा	कौड़ी	कीलक	पुन्नाग	सुवर्ण
कंचुकी	विचित्र	पर्ण	हरित	भूर्जपत्र	पीत	गां.श्वेत	नील	कृष्ण	अञ्जन	वल्कल	पाण्डुर
वय	बाला	कुमारी	गता-लका-	युवा	प्रौढा	गग-भा	वृद्धा	बन्ध्या	अति-बन्ध्या	पुत्र-वती	सैन्या

संक्रान्ति जिस वाहन पर रहती है, जो वस्तु धारण करती है, जिस वस्तुका भक्षण करती है, उस वस्तुकी कमी होती है तथा वह वस्तु मँहगी भी होती है। अतः संक्रान्तिके वाहनचक्रसे भी वस्तुओंकी तेजी-मन्दी जानी जा सकेगी।

रवि नक्षत्र फल—अश्विनीमें सूर्यके रहनेसे सभी अनाज, सभी रस, वस्त्र, अलसी, एरंड, तिल, मेथी, लालचन्दन, इलायची, लौंग, सुपारी, नारियल, कूपर, हींग, हिंगलु आदि तेज होते हैं। भरणीमें सूर्यके रहनेसे चावल, जौ, चना, मोठ, अरहर, अलसी, गुड़, घी, अफीम, मूंगा आदि पदार्थ तेज होते हैं। कृत्तिकामें श्वेतपुष्प, जौ, चावल, गेहूँ, मूँग, मोठ, राई और सरसों तेज होती है। रोहिणीमें चावल आदि सभी धान्य, अलसी, सरसों, राई, तैल, दाख, गुड़, खाँड़, सुपारी, रुई, सूत, जूट, आदि पदार्थ तेज होते हैं। मृगशिरामें सूर्यके रहनेसे जलोत्पन्न पदार्थ, नारियल, सर्वफल, रुई, सूत, रेशम, वस्त्र, कपूर, चन्दन, चना आदि पदार्थ तेज होते हैं। आर्द्रामें रविके रहनेसे घी, गुड़, चीनी, चावल, चन्दन, लाल नमक, कपास, रुई, हल्दी, सोंठ, लोहा, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। पुनर्वसु नक्षत्रमें रहनेसे उड़द, मूंग, मोठ, चावल, मसूर, नमक, सज्जी, लाख, नील, सिल, एरंड, मांजुफल, केशर, कपूर, देवदारु, लौंग, नारियल, श्वेत वस्तु आदि पदार्थ मँहगे होते हैं। पुष्य नक्षत्रमें रविके रहनेसे तिल, तैल, मद्य, गुण, ज्वार, गुग्गुल, सुपाड़ी, सोंठ, मोम, हींग, हल्दी, जूट, ऊनीवस्त्र, शीशा, चाँदी आदि वस्तुएँ तेज होती हैं। आश्लेषामें रहनेसे अलसी, तिल, तैल, गुड़, शेमर, नील और अफीम मँहगे होते हैं। आश्लेषामें रविके रहनेसे ज्वार, एरंडबीज, दाख, मिरच, तैल और अफीम मँहगे होते हैं। पूर्वाफाल्गुनीमें रहनेसे सोना, चाँदी, लोहा, घृत, तैल, सरसों, एरंड, सुपाड़ी, नील, बांस, अफीम, जूट आदि तेज होते हैं। उत्तराफाल्गुनीमें रविके रहनेसे, ज्वार, जौ, गुड़, चीनी, जूट, कपास, हल्दी, हरड़, हींग, क्षार और कत्था आदि तेज होते हैं। हस्तमें रविके रहनेसे कपड़ा, गेहूँ, सरसो आदि तेज होते हैं। चित्रामें रहनेसे गेहूँ, चना, कपास, अरहर, सूत, केशर, लाल चपड़ा तेज होता है। स्वातीमें रहनेसे, धातु, गुड़, खांड़, तेल, हिंगुर, कपूर, लाख, हल्दी, रुई, जूट, आदि तेज होते हैं। अनुराधा और विशाखामें रहनेसे चाँदी, चावल, सूत, अफीम आदि मँहगे होते हैं। ज्येष्ठा और मूलमें रहनेसे चावल, सरसों, वस्त्र, अफीम आदि पदार्थ तेज होते हैं। पूर्वाषाढ़ामें रहनेसे तिल, तैल, गुड़, गुग्गुल, हल्दी, कपूर, ऊनी वस्त्र, जूट, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तराषाढ़ा और श्रवणमें रविके होनेसे उड़द, मूँग, जूट, सूत, गुड़, कपास, चावल, चाँदी, बांस, सरसों आदि पदार्थ तेज होते हैं। धनिष्ठामें रहनेसे मूँग, मसूर और नील तेज होते हैं। शतभिषामें रविके रहनेसे सरसों, चना, जूट, कपड़ा, तैल, नील, हींग, जायफल, दाख, छुहारा, सोंठ आदि तेज होते हैं। पूर्वाभाद्रपदमें सूर्यके रहनेसे सोना, चाँदी, गेहूँ, चना, उड़द, घी, रुई, रेशम, गुग्गुल, पीपरामूल आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तराभाद्रपदमें रविके होनेसे सभी रस, धान्य और तेल एवं रेवतीमें रहनेसे मोती, रत्न, फल-फूल, नमक, सुगन्धित पदार्थ, अरहर, मूँग, उड़द, चावल, लहसुन, लाख, रुई और सज्जी आदि पदार्थ तेज होते हैं।

शकाब्द परसे चैत्रादि मासोंमें समस्त वस्तुओंकी तेजी-मन्दी अवगत करनेके लिए ध्रुवाङ्क

मास १२	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भा. प.	आश्वि.	कार्त्तिक	मा.शी	पौष	माघ	फाल्गु.
यव जौ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चना	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गेहूँ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चावल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तिल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चीनी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गुड़	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
घी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
नमक	१	०	२	१	०	०	०	२	१	१	२	१
उड़द	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अरहर	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
मूँग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
रूई	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
रेंडी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
सूत	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
वस्त्र	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कम्बल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
पाट	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
सुपारी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
सीसा	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तेल	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
फिटकिरी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
हींग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
हल्दी	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
लौंग	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
जीरा	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अजवाइन	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कपूर	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कस्तूरी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
धनिया	१	१	१	१	०	०	०	२	१	०	२	१

उक्त चक्र द्वारा तेजी-मन्दी निकालनेकी विधि

शाकः खगाब्धिभूपोनः १६४९ शालिवाहनभूपतेः। अनेन युक्तो द्रव्याङ्कश्चैत्रादिप्रतिमासके॥
रुद्रनेत्रैः हृते शेषे फलं चन्द्रेण मध्यमम्। नेत्रेण रसहानिश्च शून्येनार्घं स्मृतं बुधैः॥

अर्थात् शक वर्षकी संख्यामें से १६४६ घटाकर, शेष जिस मासमें जिस पदार्थका भाव जानना हो उसके ध्रुवाङ्क जोड़कर योगफलमें ३ का भाग देनेसे एक शेष समता, दो शेष मन्दा और शून्य शेषमें तेजी कहना चाहिए। विक्रम संवत्‌में से १३५ घटाने पर शक संवत् हो जाता है। उदाहरण—विक्रम संवत् २०१३ के ज्येष्ठमासमें चावलकी तेजी-मन्दी जाननी है। अतः सर्वप्रथम विक्रम संवत्‌का शक संवत् बनाया—२०१३-१३५=१८७८ शक संवत्। सूत्र-नियमके अनुसार १८७८-१६४६=२२६ और ज्येष्ठमासमें चावलका ध्रुवांङ्क १ है, इसे जोड़ा तो=२२६+१=२३०; इसमें ३ से भाग दिया=२३०÷३=७६; शेष २ रहा। अतः चावलका भाव मन्दा आया। इसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

दैनिक तेजी-मन्दी जाननेका नियम--जिस देशमें, जिस वस्तुकी, जिस दिन तेजी-मन्दी जाननी हो उस देश, वस्तु, वार, नक्षत्र, मास, राशि इन सबके ध्रुवांकोंको जोड़कर ६ का भाग देनेसे शेषके अनुसार तेजी-मन्दीका ज्ञान "तेजी-मन्दी देखनेके चक्र" के अनुसार करना चाहिए।

देश तथा नगरोंकी ध्रुवा--विहार १६६, बंगाल २४७, आसाम ७६१, मध्यप्रदेश १०८, उत्तरप्रदेश ८६०, बम्बई १६८, पंजाब ४१६, रंगून १६७, नेपाल १५४, चीन ६४२, अजमेर १६७, हरिद्वार २७२, बीकानेर २१३, सूरत १२८, अमेरिका ३२२, योरोप ६७६।

मास ध्रुवा—चैत्र ६१, वैशाख ६३, ज्येष्ठ ६५, आषाढ ६७, श्रावण ६६, भाद्रपद ७१, आश्विन ७३, कार्तिक ५१, मार्गशीर्ष ५३, पौष ५५, माघ ५७, फाल्गुन ६५।

सूर्यराशि ध्रुवा—मेष ५२०, वृष ७६२, मिथुन ५१०, कर्क २१८, सिंह ८३०, कन्या २६०, तुला ५०३, वृश्चिक ७११, धनु ५२४, मकर ५५४, कुम्भ २७०, मीन ५८६।

तिथिध्रुवा—प्रतिपदा ६१०, द्वितीया ७१०, तृतीया ४८१, चतुर्थी ३५७, पंचमी ६३४, षष्ठी ३०४, सप्तमी ८१२, अष्टमी १११, नवमी ५६५, दशमी ३०५, एकादशी २३३, द्वादशी २६१, त्रयोदशी ५२४, चतुर्दशी ५५७, पूर्णिमा ६३०, अमावास्या १६६।

वार ध्रुवा—रविवार १३७, सोमवार ६४, मंगल ८०६, बुध ७०२, गुरु ७१३, शुक्र ८०८, शनि ८५।

संसार का कुलध्रुवा—२०८५।

नक्षत्रध्रुवा—अश्विनी १७६, भरणी६८३, कृत्तिका ३७०, रोहिणी ७७५, मृगशिरा ६८२, आर्द्रा १४६, पुनर्वसु ५४०, पुष्य ६३४, आश्लेषा १७०, मघा ७३, पूर्वाफाल्गुनी ८५, उत्तराफाल्गुनी १४८, हस्त ८१०, चित्रा ३०५, स्वाती ८६१, विशाखा ७३४, अनुराधा ७१२, ज्येष्ठा ७१६, मूल ७४३, पूर्वाषाढ़ा ६१४, उत्तराषाढ़ा ६२३, अभिजित् ६८३, श्रवण ६५७, धनिष्ठा ५००, शतभिष ५६४, पूर्वाभाद्रपद ३३६, उत्तराभाद्रपद १८३, रेवती ७२०।

पदार्थोंकी ध्रुवा—सोना २५३, चाँदी ७६०, ताँबा ५६३, पीतल ७५८, लोहा ६१५, काँसा २४६, पत्थर १६३, मोती १४२, रुई ७१७, कपड़ा १२७, पाट ४७३, हैसिअत ७३८, सुर्ती १०३, तम्बाकू २४०, सुपाड़ी २५२, लाह ८८, मिरच २६८, घी ४६५, इत्र ७५, गुड़ २५६, चीनी ३८८, ऊन ११२, शाल ८११, धान ७१०, गेहूँ २३२, तेल ८०१, चावल ७७४, मूंग ८०१, तीसी ३८६,

सरसों ८५८, अरहर ३३३, नमक ३१७, जीरा १५६, अफीम २६३, सोडा १५६, गाय १३२, बैल १६२, भैंस ६१२, भेड़ ६१८, हाथी ८३०, घोड़ा ८३५।

तेजी-मन्दी जानने का चक्र—सूर्य १ तेज, चन्द्र २ अतिमन्द, भौम ३ तेज, राहु ४ अतितेज, बृहस्पति ५ मन्द, शनि ६ तेज, राहु ७ सम, केतु ८ तेज, शुक्र ९ तेज।

उदाहरण—बम्बईमे चैत्र सुदि सप्तमी रविवारको गेहूँका भाव जानना है। अतः सभी ध्रुवाओंका जोड़ किया। बम्बईकी ध्रुवा १९८, सूर्य मेषराशिका होनेसे ५८६, मासध्रुवा ६१, वार ध्रुवा १३७, तिथि ध्रुवा ८१२, इस दिन कृत्तिका नक्षत्र ध्रुवा ३७०, गेहूँ ध्रुवा २३२ इन सबका योग किया। १९८+५८६+१३७+८१२+३७०+२३२+६१=२०९६। इसमें ९ का भाग दिया=२०९६÷९=२३२ लब्धि, ८ शेष। तेजी मन्दी जाननेके चक्रमें देखनेसे ८ शेषमें केतु तेज करनेवाला हुआ अर्थात् तेजी होगी।

दैनिक तेजी-मन्दी निकालनेकी अन्य रीति—

वस्तु विंशोपक धातु—सोना ९६, चाँदी ७१, पीतल ५९, मूंगा ५१, लोहा ५४, सीसा ९०, कांसा १२७, मोती ९५, राँगा ६७, ताँबा १०, कुंकुम २५।

अनाज और किराना—कर्पूर १०२, हर्रे ७३, जीरा ७०, चीनी १०२, मिश्री १०३, ज्वार १००, घी ५०, तेल १०, नमक ५६, हींग ६२, सुपाड़ी २०४, अरहर ७२, मिर्च ८३, सूत ९४, सरसों ८०८, कपड़ा १००, चपड़ा ८७, मूंग १५, सोंठ १००, गुड़ ४०, विनोला ८८, मंजीठ १४४, नारियल ७८, छुहारा १४४, चावल १७, जौ ५७, साठी १६५, गेहूँ १४, ऊड़द ८०, तिल ५३, चना ५६, कपास १२७, अफीम १९२, रूई ७७।

पशु—घोड़ा ७७०, हाथी ६४, भैंस ९२, गाय ७७, बैल ८७, बकरी, ६०, सॉंड़ ९४, भेड़ ८५।

नक्षत्रविंशोपक—अश्विनी १०, भरणी १०, कृत्तिका ९६, रोहिणी २०, मृगशिरा ५६, आर्द्रा ८६, पुनर्वसु २१, पुष्य ६४, आश्लेषा १३५, मघा १५०, पूर्वाफाल्गुनी २२०, उ० फा० ७२, हस्त ३३४, चित्रा २१, स्वाति २१०, विशाखा ३२०, अनुराधा ४९३, ज्येष्ठा ५५९, मूल ५५२, पू० फा० १४२, उ० फा० ४२०, श्रवण ४५०, धनिष्ठा ७३६, शतभिषा ५७६, पूर्वाभाद्रपद ७७४, उत्तरा० भा० १२६,रेवती २५६।

संक्रान्तिराशि विंशोपक—मेष ३७, वृष ८४, मिथुन ८६, कर्क १०९, सिंह १२५, कन्या १००, तुला १०४, वृश्चिक १४४, धनु १४४, मकर १९८, कुम्भ १९०, मीन १८०।

तिथि विंशोपक—प्रतिपदा १८, द्वितीया २०, तृतीया २२, चतुर्थी २४, पंचमी २६, षष्ठी २५, सप्तमी २३, अष्टमी २१, नवमी १९, दशमी १७, एकादशी १५, द्वादशी ११, त्रयोदशी १३, चतुर्दशी ९, अमावास्या ९, पूर्णिमा १६।

वार—रविवार ४०, सोम ५०, मंगल ५०, बुध ७२, गुरु ६५, शुक्र २४, शनि १४।

तेजी-मन्दी निकालनेकी विधि—जिस मासकी या जिस दिनकी तेजी-मन्दी निकालनी हो, उस महीनेकी संक्रान्तिका विंशोपक ध्रुवा, तिथि, वार और नक्षत्रके विंशोपक ध्रुवाओंको जोड़ ३ का भाग देनेसे एक शेष रहनेसे मन्दी, दो शेषमें समान और शून्य शेषमें तेजी होती है।

तेजी-मन्दी निकालनेका अन्य नियम—गेहूँकी अधिकारिणी राशि कुम्भ, सोनाकी मेष, मोतीकी मीन, चीनीकी कुंभ, चावलकी मेष, ज्वारकी वृश्चिक, रूईकी मिथुन और चाँदीकी कर्क है। जिस वस्तुकी अधिकारिणी राशिसे चन्द्रमा चौथा, आठवाँ तथा बारहवाँ हो तो वह वस्तु तेज होती है, अन्य राशि पड़नेसे सस्ती होती है।

सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु ये क्रूर ग्रह हैं, ये क्रूर ग्रह जिस वस्तुकी अधिकारिणी राशिसे पहले, दूसरे, चौथे, पाँचवें, सातवें, आठवें, नौवें, और बारहवें जा रहे हों, वह वस्तु तेज होती है। जितने क्रूर ग्रह उपर्युक्त स्थानोंमें जाते हैं, उतनी ही वस्तु अधिक तेज होती है।

षड्विंशतितमोऽध्यायः

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुरजनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम् ॥१॥

देव और दानवोंके द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर स्वामीको नमस्कार कर शुभाशुभसे युक्त स्वप्नाध्यायका वर्णन करता हूँ ॥१॥

स्वप्नमाला दिवास्वप्नोऽनष्टचिन्तामयः फलाः।
प्रकृता-कृतस्वप्नैश्च नैते ग्राह्या निमित्ततः ॥२॥

स्वप्नमाला, दिवास्वप्न, चिन्ताओंसे उत्पन्न, रोगसे उत्पन्न और प्रकृतिके विकारसे उत्पन्न स्वप्न फलके लिए नहीं ग्रहण करने चाहिए ॥२॥

कर्मजा द्विविधा यत्र शुभाश्चात्राशुभास्तथा।
त्रिविधाः संग्रहाः स्वप्नाः कर्मजाः पूर्वसञ्चिताः ॥३॥

कर्मोदयसे उत्पन्न स्वप्न दो प्रकारके होते हैं—शुभ और अशुभ, पूर्वसंचित कर्मोदयसे उत्पन्न स्वप्न तीन प्रकारके होते हैं ॥३॥

भवान्तरेषु चाभ्यस्ता भावाः सफल-निष्फलाः।
तान् प्रवक्ष्यामि तत्त्वेन शुभाशुभफलानिमान् ॥४॥

जो सफल या निष्फल भाव-भवान्तरोंमें अभ्यस्त हैं, उनके शुभाशुभ फलदायक भावोंको यथार्थ रूपसे निरूपण करता हूँ ॥४॥

जलं जलरुहं धान्यं सदलाम्भोजभाजनम्।
मणि-मुक्ता-प्रवालांश्च स्वप्ने पश्यन्ति श्लेष्मिकाः ॥५॥

जल, जलसे उत्पन्न पदार्थ, धान्य, पत्र सहित कमल, मणि, मोती, प्रवाल आदिको स्वप्नमें कफ प्रकृतिवाला व्यक्ति देखता है ॥५॥

रक्त-पीतानि द्रव्याणि यानि पुष्टान्यग्निसम्भवान्।
तस्योपकरणं विन्द्यात् स्वप्ने पश्यन्ति पैत्तिकाः ॥६॥

रक्त-पीत पदार्थ, अग्नि संस्कारसे उत्पन्न पदार्थ, स्वर्णके आभूषण-उपकरण आदिको पित्त प्रकृतिवाला व्यक्ति स्वप्नमें देखता है ॥६॥

च्यवनं प्लवनं यानं पर्वताग्रे द्रुमं गृहम्।
आरोहन्ति नराः स्वप्ने वातिकाः पन्नगामिनः ॥७॥

वायु प्रकृतिवाला व्यक्ति गिरना, तैरना, सवारीपर चढ़ना, पर्वतके ऊपर चढ़ना, वृक्ष और प्रासादपर चढ़ना आदि वस्तुओंको स्वप्नमें देखता है ॥७॥

---

१. नमस्कृतम् मु० ।

सिंह-व्याघ्र-गजैर्युक्तो गो-वृषाश्वैर्नरैर्युतः ।
रथमारुह्य यो याति पृथिव्यां स नृपो भवेत् ॥८॥

जो सिंह, व्याघ्र, गज, गाय, बैल, घोड़ा और मनुष्योंसे युक्त होकर रथपर चढ़कर गमन करते हुए स्वप्नमें देखता है वह राजा होता है ॥८॥

प्रासादं कुञ्जरवरानारुह्य सागरं विशेत् ।
तथैव च विकर्ष्येत[1] तस्य नीचो नृपो भवेत् ॥९॥

श्रेष्ठ हाथीपर चढ़कर जो महल या समुद्रमें प्रवेश करता है या स्वप्नमें देखता है वह नीच नृप होता है ॥९॥

पुष्करिण्यां तु यस्तीरे भुञ्जीत शालिभोजनम् ।
श्वेतं गजं समारूढः स राजा अचिराद् भवेत् ॥१०॥

जो स्वप्नमें श्वेत हाथीपर चढ़कर नदी या नदीके तटपर भातका भोजन करता हुआ देखता है, वह शीघ्र ही राजा होता है ॥१०॥

सुवर्ण-रूप्यभाण्डे वा यः पूर्वनवरा स्नुयात् ? ।
प्रासादे वाऽथ भूमौ वा याने वा राज्यमाप्नुयात् ॥११॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें प्रासाद, भूमि या सवारीपर आरूढ़ हो सोने या चाँदीके वर्त्तनोंमें स्नान, भोजन, पान आदिकी क्रियाएँ करता हुआ देखे उसे राज्यकी प्राप्ति होती है ॥११॥

[2]श्लेष्ममूत्रपुरीषी च यः स्वप्ने च विकृष्यति ।
राजा राज्यफलं वाऽपि सोऽचिरात् प्राप्नुयान्नरः ॥१२॥

जो राजा स्वप्नमें श्वेत वर्णके मल, मूत्र आदिको इधर-उधर खींचता है, वह राज्य और राज्यकालको शीघ्र ही प्राप्त करता है ॥१२॥

यत्र वा तत्र वा स्थित्वा जिह्वायां लिखते नखः ।
दीर्घया रक्तया स्थित्वा स नीचोऽपि नृपो भवेत् ॥१३॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें जहाँ-तहाँ स्थित होकर जिह्वा—जीभको नखोंसे खुरचता हुआ देखे अथवा रक्तकी—लालवर्णकी दीर्घा—झीलमें स्थित होता हुआ देखे तो वह व्यक्ति नीच होनेपर भी राजा होता है ॥१३॥

भूमिं ससागरजलां सशैल-वन-काननाम् ।
बाहुभ्यामुद्धरेद्यस्तु स राज्यं प्राप्नुयान्नरः ॥१४॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें वन-पर्वत-अरण्ययुक्त पृथ्वी सहित समुद्रके जलको भुजाओं द्वारा पार करता हुआ देखता है, वह राज्य प्राप्त करता है ॥१४॥

---

1. विकर्षेत् मु० । 2. श्वेते पुरीषे मूत्रेऽथ मु० ।

आदित्यं वाऽथ चन्द्रं वा यः स्वप्ने स्पृशते नरः ।
श्मशानमध्ये निर्भीकः परं हत्वा चमूपतिम् ॥१५॥

सौभाग्यमर्थं लभते लिङ्गच्छेदात् स्त्रियं नरः ।
भगच्छेदे तथा नार्यं पुरुषः प्राप्नुयात् फलम् ॥१६॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें सूर्य या चन्द्रमाका स्पर्श करता हुआ देखता है अथवा शत्रु सेनापतिको मारकर श्मशान भूमिमें निर्भीक घूमता हुआ देखता है वह व्यक्ति सौभाग्य और धन प्राप्त करता है। लिङ्गच्छेद होना देखनेसे स्त्रीकी प्राप्ति तथा भगच्छेद होना देखनेसे स्त्रीको पुरुषकी प्राप्ति होती है ॥१५-१६॥

शिरो वा छिद्यते यस्तु सोऽसिना छिद्यतेऽपि वा ।
सहस्रलाभं जानीयाद् भोगांश्च विपुलान् नृपः ॥१७॥

जो राजा स्वप्नमें शिर कटा हुआ देखता है अथवा तलवारके द्वारा छेदित होता हुआ देखता है, वह सहस्रोंका लाभ तथा प्रचुर भोग प्राप्त करता है ॥१७॥

धनुरारोहते यस्तु विस्फारण-समार्जने ।
अर्थलाभं विजानीयात् जयं युधि रिपोर्वधम् ॥१८॥

जो राजा स्वप्नमें धनुषपर बाण चढ़ना, धनुषका स्फालन करना, प्रत्यंचाको समेटना आदि देखता है, वह अर्थलाभ करता है, युद्धमें जय और शत्रुका वध होता है ॥१८॥

द्विगाढं हस्तिनारूढः शुक्लो [1]वाससलङ्कृतः ।
यः स्वप्ने जायते भीतः समृद्धिं लभते सतीम् ॥१९॥

जो स्वप्नमें शुक्ल वस्त्र और श्रेष्ठ आभूषणोंसे अलंकृत होकर हाथीपर चढ़ा हुआ भीत-भयभीत देखता है, वह समृद्धिको प्राप्त होता है ॥१९॥

देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान् स्वप्ने पश्यन्ति [3]तुष्टिभिः ।
[4]सर्वे ते सुखमिच्छन्ति विपरीते विपर्ययः ॥२०॥

जो स्वप्नमें सन्तोषके साथ, देव, साधु, ब्राह्मणको और प्रेतोंको देखते हैं, वे सब सुख चाहते हैं—सुख प्राप्त करते हैं और विपरीत देखने पर विपरीत फल होता है अर्थात् स्वप्नमें उक्त देव-साधु आदिका क्रोधित होना देखनेसे उल्टा फल होता है ॥२०॥

गृहद्वारं विवर्णमभिज्ञाद्वा यो गृहं नरः ।
व्यसनान्मुच्यते शीघ्रं स्वप्नं दृष्ट्वा हि तादृशम् ॥२१॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें गृहद्वार या गृहको विवर्ण देखे या पहिचाने तो वह शीघ्र ही विपत्तिसे छुटकारा प्राप्त करता है ॥२१॥

---

1. [illegible] मु० । २. समम्ह्दृहतः मु० । ३. पुष्टिभि: मु० । ४. रोहिता मु० ।

प्रपानं यः पिबेत् पानं बद्धो वा योऽभिमुच्यते ।
विप्रस्य सोमपानाय शिष्याणामर्थवृद्धये ॥२२॥

यदि स्वप्नमें शर्बत या जलको पीता हुआ देखे अथवा किसी बँधे हुए व्यक्तिको छोड़ता हुआ देखे तो इस स्वप्नका फल ब्राह्मणके लिए सोमपान और शिष्योंके लिए धनवृद्धिकर होता है ॥२२॥

निम्नं कूपजलं छिद्रान् यो भीतः स्थलमारुहेत् ।
स्वप्ने स वर्धते सस्य-धन-धान्येन मेधसा ॥२३॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें नीचे कुएँके जलको, छिद्रको और भयभीत होकर स्थलपर चढ़ता हुआ देखता है वह धन-धान्य और बुद्धिके द्वारा वृद्धिको प्राप्त होता है ॥२३॥

श्मशाने शुष्कदारुं वा वल्लिं शुष्कद्रुमं तथा ।
[1]यूपं च मारुहेद्यऽस्तु स्वप्ने व्यसनमाप्नुयात् ॥२४॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें श्मशानमें सूखे वृक्ष, लता एवं लकड़ीको देखता है अथवा यज्ञके खूँटेपर जो अपनेको चढ़ता हुआ देखता है, वह विपत्तिको प्राप्त होता है ॥२४॥

त्रपु-सीसायसं रज्जुं नाणकं मक्षिका [2]मधुः ।
यस्मिन् स्वप्ने प्रयच्छन्ति [3]मरणं तस्य ध्रुवं भवेत् ॥२५॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें शीशा, राँगा, जस्ता, पीतल, रज्जु, सिक्का तथा मधुका दान करता हुआ देखता है, उसका मरण निश्चय होता है ॥२५॥

अकालजं फलं पुष्पं काले वा यच्च [4]गर्मितम् ।
यस्मै स्वप्ने प्रदीयेते [5]तादृशयासलक्षणम् ॥२६॥

जिस स्वप्नमें असमयके फल-फूल या समयपर होनेपर निन्दित फल-फूलोंको जिसको देते हुए देखा जाय तो यह स्वप्न आयास लक्षण माना जाता है ॥२६॥

अलक्तकं याऽथ रोगो या निवातं यस्य वेश्मनि ।
गृहदाघमवाप्नोति चौरैर्वा शस्त्रघातनम् ॥२७॥

स्वप्नमें जिस घरमें लाक्षारस या रोग अथवा वायुका अभाव देखा जाय तो घरमें आग लगती है या चोरों द्वारा शस्त्रघात होता है ॥२७॥

अगम्यागमनं चैव सौभाग्यायाभिवृद्धये ।
अलं कृत्वा [6]रसं पीत्वा यस्य वस्त्रयाश्च यद् भवेत् ॥२८॥

जो स्वप्नमें अलंकार करके, रस पीकर अगम्या गमन—जो स्त्री पूज्य है, उसके साथ रमण करना देखता है, उसके सौभाग्यकी वृद्धि होती है ॥२८॥

---

१. यूपे वा योऽधिरूढः स्यात् मु० । २. युतम् मु० । ३. तस्याशी ध्रुवो मु० । ४. गर्हितम् मु० । ५. तदृशयायासलक्षणम् मु० । ६. यया मु० ।

[1]शून्यं चतुष्पथं स्वप्ने यो भयं विश्य बुध्यते ।
[2]पुत्रं न लभते भार्या सुरूपं सुपरिच्छदम् ॥२६॥

स्वप्नमें जो निर्जन चौराहे मार्गमें प्रविष्ट होना देखे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो सुन्दर, गुणयुक्त पुत्रकी प्राप्ति उसकी स्त्रीको नहीं होती है ॥२६॥

वीणां विषं च वल्लकीं स्वप्ने गृह्य विबुध्यते ।
कन्यां तु लभते भार्या कुलरूपविभूषिताम् ॥३०॥

स्वप्नमें वीणा, वल्लकी और विषको ग्रहण करे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो उसकी स्त्रीको सुन्दर रूप गुणयुक्त कन्याकी प्राप्ति होती है ॥३०॥

विषेण [3]म्रियते यस्तु विषं वाऽपि पिबेन्नरः ।
स युक्तो धन-धान्येन बध्यते न चिराद्धि सः ॥३१॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें विष भक्षण द्वारा मृत्युको प्राप्त हो अथवा विष भक्षण करता देखे तो वह धन-धान्यसे युक्त होता है तथा चिरकाल तक—अधिक समय तक वह किसी प्रकारके बन्धनमें बँधा नहीं रहता है ॥३१॥

उपाचरन्नासवाज्ये मृतिं गत्वाप्यकिञ्चनः ।
ब्रूयाद् वै सद्वचः किञ्चिन्नासत्यं वृद्धये हितम् ॥३२॥

यदि स्वप्नमें कोई व्यक्ति आसव और घृतका पान करता हुआ देखे अथवा अकिंचन—निस्सहाय होकर अपनेको मरता हुआ देखे तो इस अशुभ स्वप्नकी शान्तिके लिए सत्य वचन बोलना चाहिए; क्योंकि थोड़ा भी असत्यभाषण विकासके लिए हितकारी नहीं होता ॥३२॥

[6]प्रेतयुक्तं समारूढो दंष्ट्रियुक्तं च यो रथम् ।
दक्षिणाभिमुखो याति म्रियते सोऽचिरान्नरः ॥३३॥

जो स्वप्नमें प्रेतयुक्त, गर्दभयुक्त रथमें आरूढ़ दक्षिण दिशाको ओर जाता हुआ देखता है, वह मनुष्य शीघ्र ही मरणको प्राप्त हो जाता है ॥३३॥

वराहयुक्ता या नारी ग्रीवाबद्धं प्रकर्षति ।
सा तस्य पश्चिमा रात्री मृत्युः भवति पर्वते ॥३४॥

यदि रात्रिके उत्तरार्धमें स्वप्नमें कोई शूकरयुक्त नारी किसीकी बँधी हुई गर्दनको खींचे तो उसको पर्वतपर मृत्यु होती है ॥३४॥

खर-शूकरयुक्तेन खरोष्ट्रेण वृकेण वा ।
रथेन दक्षिणं याति दिशं स म्रियते नरः ॥३५॥

स्वप्नमें कोई व्यक्ति खर—गर्दभ, शूकर, ऊँट, भेड़िया सहित रथसे दक्षिण दिशाको जाय तो शीघ्र उस व्यक्तिका मरण होता है ॥३५॥

---

१. मुनि । २. पुत्रमं भवति मु० । ३. म्रियतु (म्रियतु) मु० । ४. न मीतो मु० । ५. ०द्दाग मु० । ६. मृतो मु० । ७. युद्ध मु० । ८. मगो मु० ।

कृष्णवासो यदा भूत्वा प्रवासं नावगच्छति ।
मार्गे सभयमाप्नोति याति दक्षिणगा वधम् ॥३६॥

स्वप्नमें यदि कृष्णवास होने पर भी प्रवासको प्राप्त न हो तो मार्गमें भय प्राप्त होता है तथा दक्षिण दिशाकी ओर गमन दिखलायी पड़े तो मृत्यु भी हो जाती है ॥३६॥

यूपमेकखरं शूलं यः स्वप्नेष्वभिरोहति ।
सा तस्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥३७॥

जो व्यक्ति रात्रिके पिछले भागमें स्वप्नमें यज्ञस्तम्भ, गर्दभ, शूलपर आरोहित होता देखता है वह कल्याण नहीं पाता है ॥३७॥

दुर्वासाः कृष्णभस्मथ वामतैलविपक्षितम् ।
सा तस्य पश्चिमारात्री यदि साधु न पश्यति ॥३८॥

यदि कोई व्यक्ति रात्रिके पिछले प्रहरमें स्वप्नमें दुर्वासा, कृष्णभस्म, तैलपान करना आदि देखे तो कल्याण नहीं होता है ॥३८॥

अभक्ष्यभक्षणं चैव पूजितानां च दर्शनम् ।
कालपुष्पफलं चैव लभ्यतेऽर्थस्य सिद्धये ॥३९॥

स्वप्नमें अभक्ष्य-भक्षण करना, पूज्य व्यक्तियोंका दर्शन करना, सामयिक पुष्प और फलोंका दर्शन करना धन प्राप्तिके लिए होता है ॥३९॥

नौगाग्रे वेश्मनः सालो यः स्वप्ने चरते नरः ।
सोऽचिराद् वमते लक्ष्मीं क्लेशं चाप्नोति दारुणम् ॥४०॥

जो व्यक्ति श्रेष्ठ महलके परकोटे पर चढ़ता हुआ देखे तो वह श्रेष्ठ लक्ष्मीका त्याग करता है, भयंकर कष्ट त्याग करता है ॥४०॥

दर्शनं ग्रहणं भग्नं शयनासनमेव च ।
प्रशस्तमाममांसं च स्वप्ने वृद्धिकरं हितम् ॥४१॥

स्वप्नमें मांसका दर्शन, ग्रहण, भग्न तथा शयन, आसन करना हितकर और प्रशस्त माना गया है ॥४१॥

पक्वमांसस्य घासाय भक्षणं ग्रहणं तथा ।
स्वप्ने व्याधिभयं विन्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥४२॥

स्वप्नमें पक्वमांसका दर्शन, ग्रहण और भक्षण व्याधि, भय और शोकोत्पादक माना गया है, ऐसा भद्रबाहुस्वामीका वचन है ॥४२॥

छर्दने मरणं विन्द्यादर्थनाशो विरेचने ।
छत्रो यानायधान्यानां ग्रहणं मार्गमादिशेत् ॥४३॥

स्वप्नमें वमन करना देखनेसे मरण, विरेचन—दस्त लगना देखनेसे धन नाश, यान आदिके छत्रको ग्रहण करनेसे धन-धान्यका अभाव होता है ॥४३॥

१. यदि मु० । २. मार्गे मु० । ३. भराम (बराम) मु० । ४. वरते मु० ।

मधुरे निवेशस्वप्ने दिवा च यस्य वेश्मनि ।
तस्यार्थनाशं नियतं मृतो वाऽप्यभिनिर्दिशेत् ॥४४॥

स्वप्नमें दिनमें जिसके घरमें प्रवेश करता हुआ देखे, उसका धन नाश निश्चित होता है अथवा मृत्युका निर्देश करे ॥४४॥

यः स्वप्ने गायते हसते नृत्यते पठते नरः ।
गायने रोदनं विन्द्यात् नर्तने वध-बन्धनम् ॥४५॥

स्वप्नमें गाना, हँसना, नाचना और पढ़ना देखते हैं। गाना देखनेसे रोना पड़ता है और नाचना देखनेसे वध-बन्धन होते हैं ॥४५॥

हसने शोचनं ब्रूयात् कलहं पठने तथा ।
बन्धने स्थानमेव स्यात् मुक्तो देशान्तरं व्रजेत् ॥४६॥

हँसना देखनेसे शोक, पढ़ना देखनेसे कलह, बन्धन देखनेसे स्थानप्राप्ति और छूटना देखनेसे देशान्तर गमन होता है ॥४६॥

सरांसि सरितो वृद्धान् पर्वतान् कलशान् गृहम् ।
शोकार्त्तः पश्यते स्वप्ने तस्य शोकोऽभिवर्धते ॥४७॥

जो व्यक्ति स्वप्नमे तालाब, नदी, पर्वत, कलश और गृहोंको शोकार्त्त देखता है, उसका शोक बढ़ता है ॥४७॥

"मरुस्थलीं तथा भ्रष्टं कान्तारं वृक्षवर्जितम् ।
सरितो नीरहीनाश्च शोकार्तस्य शुभावहा ॥४८॥

शोकयुक्त व्यक्ति यदि स्वप्नमें मरुस्थल, वृक्षरहित वन एवं जल रहित नदीको देखता है तो उसके लिए यह स्वप्न शुभ फलप्रद होता है ॥४८॥

आसनं शयनं यानं गृहं वस्त्रं च भूषणम् ।
स्वप्ने कस्मै प्रदीयन्ते सुखिनः श्रियमाप्नुयात् ॥४९॥

स्वप्नमें जो कोई किसीको आसन, शय्या, सवारी, घर, वस्त्र, आभूषण दान करता हुआ देखता है, वह सुखी होता है तथा लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है ॥४९॥

अलङ्कृतानां द्रव्याणां वाजि-वारणयोस्तथा ।
वृषभस्य च शुक्लस्य दर्शने प्राप्नुयाद् यशः ॥५०॥

अलंकृत पदार्थ, श्वेत हाथी, घोड़े, बैल आदिका स्वप्नमें दर्शन करनेसे यशकी प्राप्ति होती है ॥५०॥

---

१. नृत्यते मु० । २. मुक्तो मु० । ३. वदेत् मु० । ४. स च मु० । ५. मुद्रित प्रतिमें ४८ नं० का श्लोक अधिक मिलता है । ७. यस्याभि- मु० ।

पताकामसियष्टिं च शुक्तिं [2]मुक्तान् सकाञ्चनान् ।
दीपिकां लभते स्वप्ने योऽपि ते लभते धनम् ॥५१॥

पताका, तलवार, लाठी, शुक्ति, सीप, मोती, सोना, दीपक आदिको जो स्वप्नमें प्राप्त करना देखता है, वह भी धन प्राप्त करता है ॥५१॥

मूत्रं वा कुरुते स्वप्ने पुरीषं वा सलोहितम् ।
प्रतिबुध्येत्तथा यश्च लभते सोऽर्थनाशनम् ॥५२॥

जो स्वप्नमें पेशाब या टट्टी करना देखता है, और स्वप्न देखनेके बाद ही जग जाता है, वह धन नाशको प्राप्त होता है ॥५२॥

अहिर्वा वृश्चिकः कीटो यं स्वप्ने दशते नरम् ।
प्राप्नुयात् सोऽर्थवान् यः स यदि भीतो न शोचते ॥५३॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें साँप, बिच्छू या अन्य कीड़ों द्वारा काटे जानेपर भयभीत नहीं होता और शोक नहीं करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥५३॥

पुरीषं [1]छर्दनं यस्तु भक्षयेन्न च [3]शंकयेत् ।
मूत्रं रेतश्च रक्तं च स शोकात् परिमुच्यते ॥५४॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें बिना घृणाके टट्टी, वमन, मूत्र, वीर्य, रक्त आदिका भक्षण करता हुआ देखता है, वह शोकसे छूट जाता है ॥५४॥

कालेयं चन्दनं रोध्रं घर्षणे च प्रशस्यते ।
अत्र लेपानि पिष्टानि तान्येव धनवृद्धये ॥५५॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें कालागुरु, चन्दन, रोध्र—तगरको घिसनेमें सुगन्धिके कारण प्रशंसा करता है तथा उनका लेप करना और पीसना देखता है, उसके धनकी वृद्धि होती है ॥५५॥

रक्तानां करवीराणामुत्पलानामुपानयेत् ।
लम्भो वा दर्शने स्वप्ने प्रयाणा वा विधीयते ॥५६॥

स्वप्नमें रक्तकमल और नील कमलोंका, दर्शन, ग्रहण और ग्रोटन-तोड़ना देखनेसे प्रयाण होता है ॥५६॥

कृष्णं वासो हयं कृष्णं योऽभिरूढः प्रयाति च ।
दक्षिणां दिशमुद्दिश्य [5]सोऽपि [6]प्रेतो भवत्यतः ॥५७॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें काले वस्त्र धारणकर काले घोड़ेपर सवार होकर स्थिर हो दक्षिण दिशा की ओर गमन करता है, वह निश्चयसे मृत्युको प्राप्त होता है ॥५७॥

1. छर्दिं मु० । 2. मुक्तान् मु० । 3. शंकित मु० । 4. कुरुते मु० । 5. सोऽपि मु० । 6. प्रेतात् भवत्यतः मु० ।

आसनं शाल्मलीं वापि कदलीं [1]पालिभद्रिकाम् ।
पुष्पितं यः समारूढः सवितमधि रोहति ॥५८॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें पुष्पित शाल्मली, केला और देवदारु या नीमके-वृक्षपर बैठना या चढ़ना देखता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥५८॥

रुद्राक्षी विकृता काली नारी स्वप्ने च कर्षति ।
उत्तरं दक्षिणां दिशं मृत्युः शीघ्रं समीहते ॥५९॥

भयङ्कर, विकृत रूपवाली, काली स्त्री यदि स्वप्नमें उत्तर या दक्षिणकी दिशाकी ओर खींचे तो शीघ्र ही मृत्युको प्राप्त होता है ॥५९॥

जटीं मुण्डीं विरूपाक्षां मलिनां मलिनवाससाम् ।
स्वप्ने यः पश्यति ग्लानिं समूहे भयमादिशेत् ॥६०॥

जटाधारी, सिरमुण्डित, विरूपा कृतिवाली, मलिन नीले वस्त्रवाली स्त्रीको स्वप्नमें ग्लानि-पूर्वक देखना सामूहिक भयका सूचक है ॥६०॥

[2]तापसं पुण्डरीकं वा [3]भिन्नं विकलमेव च ।
दृष्ट्वा स्वप्ने विबुध्येत ग्लानिं तस्य समादिशेत् ॥६१॥

तपस्वी पुण्डरीक तथा नवीन कमलोंको स्वप्नमें देखकर जो जाग जाता है, उसे ग्लानि फलकी प्राप्ति होती है ॥६१॥

स्थले वाऽपि विकीर्येत जले वा नाशमाप्नुयात् ।
यस्य स्वप्ने नरस्यास्य तस्य विन्द्यान्महद् भयम् ॥६२॥

जो व्यक्ति भूमिपर विकीर्ण—फैल जाना और जलमें नाशको प्राप्त हो जाना देखता है, उस व्यक्तिको महान् भय होता है ॥६२॥

वल्ली-गुल्मसमो वृक्षो वल्मीको यस्य जायते ।
शरीरे तस्य विज्ञेयं [4]तदंगस्य विनाशनम् ॥६३॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें अपने शरीरपर लता, गुल्म, वृक्ष, वल्मीक—बाँबी आदिका होना देखता है उसके शरीरका विनाश होता है ॥६३॥

मलो वा वेणुगुल्मो वा खर्जूरो हरितो द्रुमः ।
मस्तके जायते स्वप्ने तस्य साप्ताहिकः स्मृतः ॥६४॥

स्वप्नमें जो व्यक्ति अपने मस्तकपर माला, बाँस, गुल्म, खर्जूर और हरे वृक्षोंको उपजते देखता है, उसकी एक सप्ताहमें मृत्यु होती है ॥ ६४॥

हृदये यस्य जायन्ते तद्रोगेण विनश्यति ।
अनङ्गजायमानेषु तदङ्गस्य विनिर्दिशेत् ॥६५॥

1. पारिभद्रकम् मु० । 2. द्वादशं मु० । 3. नव्यं कमलमेव च मु० । 4. तदागम् विरेचनम् मु० ।

यदि हृदयमें उक्त वृक्षादिकोंका उत्पन्न होना स्वप्नमें देखे तो हृदय रोगसे उसका विनाश होता है। जिस अंगमें उक्त वृक्षादिकोंका उत्पन्न होना स्वप्नमें दिखलायी पड़ता है, उसी अंगकी बीमारी द्वारा मृत्यु होती है ॥६५॥

रक्तमाला तथा माला रक्तं वा सूत्रमेव च ।
यस्मिन्नेवावबध्येत तदङ्गेन [1]विक्लिश्यति ॥६६॥

स्वप्नमें लाल माला या लाल सूत्रके द्वारा जो अंग बाँधा जाय, उसी अंगमें क्लेश होता है ॥६६॥

ग्राहो नरो नरं कश्चित् यदा स्वप्ने च कर्षति ।
बद्धस्य मोक्षमाचष्टे मुक्तिं बद्धस्य निर्दिशेत् ॥६७॥

जब स्वप्नमें कोई मकर या घड़ियाल मनुष्यको खींचता हुआ दिखलायी पड़े तो, जो व्यक्ति बद्ध है—कारागार आदिमें बद्ध है या मुकदमेमें फँसा है, उसकी मुक्ति होती है—छूटता है ॥६७॥

पीतं पुष्पं फलं यस्मै रक्तं वा संप्रदीयते ।
कृताकृतसुवर्णं वा तस्य [2]लाभो न संशयः ॥६८॥

स्वप्नमें यदि किसी व्यक्तिको पीले या लाल फल-फूलोंको देना दिखलायी पड़े तो उसे सोना, चाँदीका लाभ निस्सन्देह होता है ॥६८॥

श्वेतमांसासनं यानं सितमाल्यस्य धारणम् ।
श्वेतानां वाऽपि द्रव्याणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ॥६९॥

श्वेत मांस, श्वेत आसन, श्वेत सवारी, श्वेत मालाका धारण करना तथा अन्य श्वेत द्रव्योंका दर्शन स्वप्नमें शुभ होता है ॥६९॥

बलीवर्दयुतं यानं योऽभिरूढः प्रधावति ।
प्राचीं दिशमुदीचीं वा सोऽर्थलाभमवाप्नुयात् ॥७०॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें श्वेत बैलोंके रथ पर चढ़कर पूर्व या उत्तरकी ओर गमन करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥७०॥

नग-वेश्म-पुराणां तु दीप्तानां तु शिरस्थितः ।
यः स्वप्ने मानवः सोऽपि महीं भोक्तुं [3]निरामयः ॥७१॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें सिर पर पर्वत, घर, नगर तथा दीप्तिमान् पदार्थोंको देखता है, वह स्वस्थ होकर पृथ्वीका उपभोग करता है ॥७१॥

मृण्मयं नागमारूढः सागरे प्लवते द्विजः ।
तथैव च विबुध्येत सोऽचिराद् वसुधाधिपः ॥७२॥

जो स्वप्नमें मृत्तिकाके हाथी पर सवार होकर समुद्रको पार करता हुआ देखे तथा उसी स्थितिमें जाग जाय तो वह शीघ्र ही पृथ्वीका स्वामी होता है ॥७२॥

१. विकृतयति मु० । २. संलाभ कर्षणाद् मु० । ३. शिरस्थेन मु० ।

पाण्डुराणि च वेश्मानि पुष्प-शाखा-फलान्वितान् ।
यो वृक्षान् पश्यति स्वप्ने सफलं चेष्टते तदा ॥७३॥

स्वप्नमें श्वेत गृहमें स्थित, पुष्प, फल और शाखाओंसे युक्त वृक्षोंसे यदि गिरता हुआ देखता है, तो उसकी चेष्टाएँ सफल होती हैं ॥७३॥

वासोभिर्हरितैः शुक्लैर्वेष्टितः प्रतिबुध्यते ।
दह्यते योऽग्निना वाऽपि बध्यमानो विमुच्यते ॥७४॥

जो स्वप्नमें शुक्ल और हरे वृक्षोंसे युक्त होकर अपनेको देखता है, तथा उसी समय जाग जाता है अथवा अग्नि द्वारा जलता हुआ अपनेको देखता है, वह फाँसी पर लटकानेके समय फाँसीसे, या कारागारमें बद्ध होनेपर वहाँसे छोड़ दिया जाता है ॥७४॥

दुग्ध-तैल-घृतानां वा क्षीरस्य च विशेषतः ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने भोजनं न प्रशस्यते ॥७५॥

स्वप्नमे दूध, तैल, घीका दर्शन शुभ है, भोजन नहीं । विशेषरूपसे दूधका दर्शन शुभ माना गया है ॥७५॥

अङ्ग-प्रत्यङ्गयुक्तस्य शरीरस्य विवर्धनम् ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने नख-रोमविवर्धनम् ॥७६॥

स्वप्नमें शरीरके अंग-प्रत्यंगका बढ़ना तथा नख और रोमका बढ़ना भी शुभ माना गया है ॥७६॥

उत्सङ्गः पूर्यते स्वप्ने यस्य धान्यैरनिन्दितैः ।
फल-पुष्पैश्च संप्राप्तः प्राप्नोति महतीं श्रियम् ॥७७॥

स्वप्नमें जिस व्यक्तिकी गोद सुन्दर धान्य, फल, पुष्पसे भर दी जाय, वह महान् धन प्राप्त करता है ॥७७॥

[२]कन्या वाऽऽर्यापि वा कन्या रूपमेव विभूषिता ।
प्रकृष्टा पश्यते स्वप्ने लभते योषितः श्रियम् ॥७८॥

यदि स्वप्नमें सुन्दर रूपयुक्त कन्या या आर्या दिखलायी पड़े तो सुन्दर स्त्रीकी प्राप्ति होती है ॥७८॥

प्रक्षिप्यति यः शस्त्रैः पृथिवीं पर्वतान् प्रति ।
शुभमारोहते यस्य सोऽभिषेकमवाप्नुयात् ॥७९॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें शस्त्रों द्वारा शत्रुओंको परास्त कर पृथ्वी और पर्वतोंको अपने अधीनकर लेना देखता है अथवा जो शुभ पर्वतों पर अपनेको आरोहण करता हुआ देखता है, वह राज्याभिषेकको प्राप्त होता है ॥७९॥

नारी पुंस्त्वं नरः स्त्रीत्वं लभते स्वप्नदर्शने ।
बध्येते तावुभौ शीघ्रं कुटुम्बपरिवृद्धये ॥८०॥

यदि स्वप्नमें स्त्री अपनेको पुरुष होना और पुरुष स्त्री होना देखे तो वे शीघ्र कुटुम्बके बँधते हैं ॥८०॥

मु० । २. कुमन्या मु० ।

राजा राजसुतश्चौरो नो सह्याधन-धान्यतः ।
स्वप्ने संजायते कश्चित् स राज्ञामभिवृद्धये ॥८१॥

यदि स्वप्नमें कोई धन-धान्यसे युक्त हो राजा, राजपुत्र या चोर होना अपनेको देखे तो राजाकी अभिवृद्धि होती है ॥८१॥

रुधिराभिषिक्तां कृत्वा यः स्वप्ने परिणीयते ।
धन-धान्य-श्रिया युक्तो न चिरात् जायते नरः ॥८२॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें रुधिरसे अभिषिक्त होकर विवाह करता हुआ देखता है, वह व्यक्ति चिरकाल तक धन-धान्यसे युक्त नहीं होता ॥८२॥

शस्त्रेण छिद्यते जिह्वा स्वप्ने यस्य कथञ्चन ।
क्षत्रियो राज्यमाप्नोति शेषा वृद्धिमवाप्नुयुः ॥८३॥

यदि स्वप्नमें जिह्वाको शस्त्रसे छेदन करता हुआ दिखलायी पड़े तो क्षत्रियोंको राज्यकी प्राप्ति और अन्य वर्णवालोंकी वृद्धि होती है ॥८३॥

देव-साधु-द्विजातीनां पूजनं शान्तये हितम् ।
पापस्वप्नेषु कार्यस्य शोधनं चोपवासनम् ॥८४॥

पाप स्वप्नोंकी शान्तिके लिए देव-गुरु-साधर्मीबन्धु और द्विजातियोंका पूजन और सत्कर्म करना तथा उपवास करना चाहिए ॥८४॥

एते स्वप्ना यथोद्दिष्टाः प्रायशः फलदा नृणाम् ।
प्रकृत्या कृपया चैव शेषाः साध्या निमित्ततः ॥८५॥

उपर्युक्त यथानुसार प्रतिपादित स्वप्न प्रायः मनुष्योंको फल देनेवाले हैं, अवशेष स्वप्नोंको निमित्त और स्वभावानुसार समझ लेना चाहिए ॥८५॥

स्वप्नाध्यायममुं मुख्यं योऽधीयेत शुचिः स्वयम् ।
स पूज्यो लभते राज्ञो नानापुण्यश्च साधवः ॥८६॥

जो पवित्रात्मा स्वयं इस स्वप्नाध्यायका अध्ययन करता है, वह राजाओंके द्वारा पूज्य होता है तथा पुण्य प्राप्त करता है ॥८६॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते स्वप्नाध्यायः षड्विंशोऽध्यायः समाप्तः ॥२६॥

विवेचन—स्वप्न शास्त्रमें प्रधानतया निम्न सात प्रकारके स्वप्न बताये गये हैं ।

दृष्ट—जो कुछ जागृत अवस्थामें देखा हो उसीको स्वप्नावस्थामें देखा जाय ।

श्रुत—सोनेके पहले कभी किसीसे सुना हो उसीको स्वप्नावस्थामें देखे ।

अनुभूत—जो जागृत अवस्थामें किसी भाँति अनुभव किया हो, उसीको स्वप्न देखना अनुभूत है ।

प्रार्थित--जिनकी जागृतावस्थामें प्रार्थना—इच्छाकी हो उसीको स्वप्नमें देखे ।

कल्पित--जिसकी जागृतावस्थामें कभी भी कल्पनाकी गई हो उसीको स्वप्नमें देखे ।

भाविक--जो कभी न तो देखा गया हो और न सुना हो, पर जो भविष्यमें होनेवाला हो उसे स्वप्नमें देखा जाय ।

दोषज—वात, पित्त और कफ इनके विकृत हो जानेसे देखा जाय । इन सात प्रकारके स्वप्नोंमेसे पहलेके पाँच प्रकारके स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं, वस्तुतः भाविक स्वप्नका फल ही सत्य होता है । रात्रिके प्रहरके अनुसार स्वप्नका फल—रात्रिके पहले प्रहरमें देखे गये स्वप्न एक वर्षमें, दूसरे प्रहरमें देखे गये स्वप्न आठ महीनेमें [चन्द्रसेन मुनिके मतसे ७ महीनेमें], तीसरे प्रहरमें देखे गये स्वप्न तीन महीनेमे, चौथे प्रहरमें देखे गये स्वप्न एक महीनेमें [वराहमिहिरके मत से १६ दिन] ब्राह्म मुहूर्त्त [उषाकाल] में देखे गये स्वप्न दस दिनमें और प्रातःकाल सूर्योदयसे कुछ पूर्व देखे गये स्वप्न अतिशीघ्र शुभाशुभ फल देते हैं । अब जैनाजैन ज्योतिष-शास्त्रके आधार पर कुछ स्वप्नोंका फल उद्धृत किया जाता है—

अगुरु—जैनाचार्य भद्रबाहुके मतसे—काले रंगका अगुरु देखनेसे निःसन्देह अर्थलाभ होता है । जैनाचार्य सेन मुनिके मतसे सुख मिलता है । वराहमिहिरके मतसे धन लाभके साथ स्त्री लाभ भी होता है । बृहस्पतिके मतसे—इष्ट मित्रोंके दर्शन और आचार्य मयूख एवं दैवज्ञवर्य गणपतिके मतसे अर्थ लाभके लिए विदेश गमन होता है ।

अग्नि—जैनाचार्य चन्द्रसेन मुनिके मतसे धूम युक्त अग्नि देखनेसे उत्तम कान्ति वराह मिहिर और मार्कण्डेयके मतसे प्रज्वलित अग्नि देखनेसे कार्यसिद्धि, दैवज्ञगणपतिके मतसे अग्नि भक्षण करना देखनेसे भूमि लाभके साथ स्त्रीरत्नकी प्राप्ति और बृहस्पतिके मतसे जाज्वल्यमान अग्नि देखनेसे कल्याण होता है ।

अग्नि दग्ध—जो मनुष्य आसन, शय्या, पान और वाहन पर स्वयं स्थित होकर अपने शरीरको अग्नि दग्ध होते हुए देखे तो मतान्तरसे अन्यको जलता हुआ देखे और तत्क्षण जाग उठे, तो उसे धन-धान्यकी प्राप्ति होती है । अग्निमें जलकर मृत्यु देखनेसे रोगी पुरुषकी मृत्यु और स्वस्थ पुरुष बीमार पड़ता है । गृह अथवा दूसरी वस्तुको जलते हुए देखना शुभ है । वराह-मिहिरके मतसे अग्नि लाभ भी शुभ है ।

अन्न—अन्न देखनेसे अर्थ लाभ और सन्तानकी प्राप्ति होती है । आचार्य चन्द्रसेनके मतसे श्वेत अन्न देखनेसे इष्ट मित्रोंकी प्राप्ति, लाल अन्न देखनेसे रोग, पीला अनाज देखनेसे हर्ष और कृष्ण अन्न देखनेसे मृत्यु होती है ।

अलंकार—अलंकार देखना शुभ है, परन्तु पहनना कष्टप्रद होता है ।

अस्त्र—अस्त्र देखना शुभफल प्रद, अस्त्र द्वारा शरीरमें साधारण चोट लगना तथा अस्त्र लेकर दूसरेका सामना करना विजयप्रद होता है ।

अनुलेपन—श्वेत रंगकी वस्तुओंका अनुलेपन शुभ फल देनेवाला होता है । वराह मिहिरके मतसे लाल रंगके गन्ध, चन्दन और पुष्पमाला आदिके द्वारा अपनेको शोभायमान देखे तो शीघ्र मृत्यु होती है ।

अन्धकार—अन्धकारमय स्थानोंमे वन, भूमि, गुफा और सुरंग आदि स्थानोंमें प्रवेश होते हुए देखना रोग सूचक है ।

आकाश—भद्रबाहुके मतसे निर्मल आकाश देखना शुभफलप्रद, लाल वर्णकी आभा वाला आकाश देखना कष्टप्रद और नीलवर्णका आकाश देखना मनोरथ सिद्ध करने वाला होता है ।

आरोहण—वृष, गाय, हाथी, मन्दिर, वृक्ष, प्रसाद और पर्वतके ऊपर स्वयं आरोहण करते हु[illegible] को आरोहित देखना अर्थ लाभ सूचक है ।

कपास—कपास देखनेसे स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगीकी मृत्यु होती है। दूसरे को देते हुए कपास देखना शुभ-प्रद है।

कबन्ध—नाचते हुए छीन कबन्ध देखनेसे आधि, व्याधि और धनका नाश होता है। वराहमिहिरके मतसे मृत्यु होती है।

कलश—कलश देखनेसे धन, आरोग्य और पुत्रकी प्राप्ति होती है। कलशी देखनेसे गृहमें कन्या उत्पन्न होती है।

कलह—कलह एवं लड़ाई-झगड़े देखनेसे स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगीकी मृत्यु होती है।

काक—स्वप्नमें काक, गिद्ध, उल्लू और कुकुर जिसे चारों ओरसे घेरकर त्रास उत्पन करें तो मृत्यु और अन्यका त्रास उत्पन्न करते हुए देखे तो अन्यकी मृत्यु होती है।

कुमारी—कुमारी कन्याको देखनेसे अर्थ लाभ एवं सन्तानकी प्राप्ति होती है। वराह-मिहिरके मतसे कुमारी कन्याके साथ आलिंगन करना देखनेसे कष्ट एवं धनक्षय होता है।

कूप—गन्दे जल या पंक वाले कूपके अन्दर गिरना या डूबना देखनेसे स्वस्थ व्यक्ति रोगी और रोगीकी मृत्यु होती है। तालाब या नदीमें प्रवेश करना देखनेसे रोगीको मरण तुल्य कष्ट होता है।

क्षौर—नाईके द्वारा स्वयं अपना या दूसरेका हजामत करना देखनेसे कष्टके साथ-साथ धन और पुत्रका नाश होता है। गणपति दैवज्ञके मतसे माता-पिताकी मृत्यु मार्कण्डेयके मतसे भार्यामरणके साथ माता-पिताकी मृत्यु और बृहस्पतिके मतसे पुत्र मरण होता है।

खेल—अत्यन्त आनन्दके साथ खेल खेलते हुए देखना दुःस्वप्न है। इसका फल बृहस्पतिके मतसे रोना, शोक करना एवं पश्चात्ताप करना ब्रह्मवैवर्त्त पुराणके मतसे—धन नाश, ज्येष्ठ पुत्र या कन्याका मरण और भार्याको कष्ट होता है। नारदके मतसे सन्तान नाश और पाराशरके मतसे—धन क्षयके साथ अपकीर्त्ति होती है।

गमन—दक्षिण दिशाकी ओर गमन करना देखनेसे धन नाशके साथ कष्ट, पश्चिम दिशाकी ओर गमन करना देखनेसे अपमान, उत्तर दिशाकी ओर गमन करना देखनेसे स्वास्थ्य लाभ और पूर्व दिशाकी ओर गमन करना देखनेसे धन प्राप्ति होती है।

गर्त्त—उच्च स्थानसे अन्धकारमय गर्त्तमें गिर जाना देखनेसे रोगीकी मृत्यु और स्वस्थ पुरुष रुग्ण होता है। यदि स्वप्नमें गर्त्तमें गिर जाय और उठनेका प्रयत्न करनेपर भी बाहर न आ सके तो उसकी दस दिनके भीतर मृत्यु होती है।

गाड़ी—गाय या बैलोंके द्वारा खींचे जाने वाली गाड़ी पर बैठे हुए देखनेसे पृथ्वीके नीचे से चिर संचित धनकी प्राप्ति होती है। वराहमिहिरके मतसे—पीताम्बर धारण किये स्त्रीको एक ही स्थानपर कई दिनों तक देखनेसे उस स्थानपर धन मिलता है। बृहस्पतिके मतसे स्वप्नमें दाहिने हाथमें साँपको काटता हुआ देखनेसे १०००००) रुपयेकी प्राप्ति अति शीघ्र होती है।

गाना—स्वयंको गाना गाता हुआ देखनेसे कष्ट होता है भद्रबाहु स्वामीके मतमे स्वयं या दूसरेको मधुर गाना गाते हुए देखनेसे मुकदमामें विजय, व्यापारमें लाभ और यश प्राप्ति, बृहस्पतिके मतसे अर्थ लाभके साथ भयानक रोगोंका शिकार और नारदके मतसे सन्तान कष्ट और अर्थ लाभ एवं मार्कण्डेयके मतसे अपार कष्ट होता है।

गाय—दुहनेवालेके साथ गायको देखनेसे कीर्त्ति और पुण्य लाभ होता है। गणपति दैवज्ञके मतसे जल पीती गाय देखनेसे लक्ष्मीके तुल्य गुणशाली कन्याका जन्म और वराहमिहिर के मतसे स्वप्नमें गायका दर्शन मात्र ही सन्तानोत्पादक है।

गिरना—स्वप्नमें लड़खड़ाते हुए गिरना देखनेसे दुःख, चिन्ता एवं मृत्यु होती है।

गृह—गृहमें प्रवेश करना, ऊपर चढ़ना एवं किसीसे प्राप्त करना देखनेसे भूमि लाभ और धन-धान्यकी प्राप्ति एवं गृहका गिरना देखनेसे मृत्यु होती है।

घास—कच्चा घास, शस्य [धान], कच्चे गेहूँ एवं चनेके पौधे देखनेसे भार्याको गर्भ रहता है। परन्तु इनके काटने या खानेसे गर्भपात होता है।

घृत—घृत देखनेसे मन्दाग्नि, अन्यसे लेना देखनेसे यश प्राप्ति घृत पान करना देखनेसे प्रमेह और शरीरमें लगाना देखनेसे मानसिक चिन्ताओंके साथ शारीरिक कष्ट होता है।

घोटक—घोड़ा देखनेसे अर्थ लाभ, घोड़ापर चढ़ना देखनेसे कुटुम्ब वृद्धि और घोड़ीका प्रसव करना देखनेसे सन्तान लाभ होता है।

चक्षु—स्वप्नमें अकस्मात् चक्षुद्वयका नष्ट होना देखनेसे मृत्यु और आँखका फूट जाना देखनेसे कुटुम्बमें किसीकी मृत्यु होती है।

चादर—स्वप्नमें शरीरकी चादर, चोंगा या कमीज आदिको श्वेत और लाल रंगकी देखनेसे सन्तान हानि होती है।

चिता—अपनेको चितापर आरूढ़ देखनेसे बीमारीकी मृत्यु और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है।

जल—स्वप्नमें निर्मल जल देखनेसे कल्याण, जल द्वारा अभिषेक देखनेसे भूमिकी प्राप्ति, जलमें डूबकर बिलग होना देखनेसे मृत्यु, जलको तैरकर पार करना देखनेसे सुख और जल पीना देखनेसे कष्ट होता है।

जूता—स्वप्नमें जूता देखनेसे विदेश यात्रा, जूता प्राप्त कर उपभोग करना देखनेसे ज्वर, एवं जूतासे मार-पीट करना देखनेसे छः महीनेमें मृत्यु होती है।

तिल-तैल—तिल तैल और खलीकी प्राप्ति होना देखनेसे कष्ट, पीना और भक्षण करना देखनेसे मृत्यु, मालिश करना देखनेसे मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

दधि—स्वप्नमें दही देखनेसे प्रीति; भक्षण करना देखनेसे यशप्राप्ति, भातके साथ भक्षण करना देखनेसे सन्तान लाभ और दूसरोंको देना-लेना देखनेसे अर्थ लाभ होता है।

दाँत—दाँत कमजोर हो गये हैं, और गिरनेके लिए तैयार हैं, या गिर रहे हैं ऐसा देखनेसे धनका नाश और शारीरिक कष्ट होता है। वराहमिहिरके मतसे स्वप्नमें नख, दाँत और केशोंका गिरना देखनेसे मृत्युसूचक है।

दीपक—स्वप्नमें दीपक जला हुआ देखनेसे अर्थलाभ, अकस्मात् निर्वाण प्राप्त हुआ देखनेसे मृत्यु और ऊर्ध्व लौ देखनेसे यश प्राप्ति होती है।

देव-प्रतिमा—स्वप्नमें इष्ट देवका दर्शन पूजन, और आह्वान करना देखनेसे विपुल धनकी प्राप्तिके साथ परम्परासे मोक्ष मिलता है। स्वप्नमें प्रतिमाका कम्पित होना, गिरना, हिलना, चलना, नाचना और गाते हुए देखनेसे आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

नग्न—स्वप्नमें नग्न होकर मस्तकके ऊपर लाल रंगकी पुष्पमाला धारण करना देखनेसे मृत्यु होती है।

नृत्य—स्वप्नमें स्वयंका नृत्य करना देखनेसे रोग और दूसरोंको नृत्य करता हुआ देखनेसे अपमान होता है।

वराहमिहिरके मतसे—नृत्यका किसी भी रूपमें देखना अशुभ सूचक है।

पक्वान्न—स्वप्नमें पक्वान्न कहींसे प्राप्तकर भक्षण करता हुआ देखे तो रोगीकी मृत्यु हो और स्वस्थ व्यक्ति बीमार हो। स्वप्नमें पूरी, कचौरी, मालपूआ और मिष्टान्न खाना देखनेसे शीघ्र मृत्यु होती है।

फल—स्वप्नमें फल देखनेसे धनकी प्राप्ति, फल खाना देखनेसे रोग एवं सन्तान नाश, और फलका अपहरण करना देखनेसे चोरी एवं मृत्यु आदि अनिष्ट फलोंकी प्राप्ति होती है।

फूल—स्वप्नमें श्वेत पुष्पोंका प्राप्त होना देखनेसे धन लाभ, रक्तवर्णके पुष्पोंका प्राप्त होना देखनेसे रोग, पीतवर्णके पुष्पोंका प्राप्त होना देखनेसे यश एवं धन लाभ, हरितवर्णके पुष्पोंका प्राप्त होना देखनेसे इष्ट-मित्रोंका मिलना और कृष्ण वर्णके पुष्प देखनेसे मृत्यु होती है।

भूकम्प—भूकम्प होना देखनेसे रोगीकी मृत्यु और स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है। चन्द्रसेन मुनिके मतसे स्वप्नमें भूकम्प देखनेसे राजाका मरण होता है। भद्रबाहुस्वामीके मतसे स्वप्नमें भूकम्प होना देखनेसे राज्य विनाशके साथ साथ देशमें बड़ा भारी उपद्रव होता है।

मल-मूत्र—स्वप्नमें मल-मूत्र का शरीर में लग जाना देखनेसे धन प्राप्ति; भक्षण करना देखनेसे सुख और स्पर्श करना देखनेसे सम्मान मिलता है।

मृत्यु—स्वप्नमें किसीकी मृत्यु देखनेसे शुभ होता है और जिसकी मृत्यु देखते हैं वह दीर्घजीवी होता है। परन्तु अन्य दुःखद घटनाएँ सुननेको मिलती हैं।

यव—स्वप्नमें जौ देखनेसे घरमें पूजा, होम औ अन्य मांगलिक कार्य होते हैं।

युद्ध—स्वप्नमें युद्ध विजय देखने से शुभ, पराजय देखने से अशुभ और युद्ध सम्बन्धी वस्तुओंको देखनेसे चिन्ता होती है।

रुधिर—स्वप्नमें शरीरमें से रुधिर निकलना देखनेसे धन धान्यकी प्राप्ति; रुधिरसे अभिषेक करता हुआ देखनेसे सुख; स्नान देखनेसे अर्थ-लाभ, और रुधिर पान करना देखनेसे विद्यालाभ एवं अर्थलाभ होता है।

लता—स्वप्नमें कण्टकवाली लता देखनेसे गुल्म रोग; साधारण फल-फूल सहित लता देखनेसे नृप दर्शन और लताके क्रीड़ा करनेसे रोग होता है।

लोहा—स्वप्नमें लोहा देखनेसे अनिष्ट और लोहा या लोहेसे निर्मित वस्तुओंके प्राप्त करने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

वमन—स्वप्नमें वमन और दस्त होना देखनेसे रोगीकी मृत्यु; मल-मूत्र और सोना-चाँदी का वमन करना देखनेसे निकट मृत्यु; रुधिर वमन करना देखनेसे छः मास आयु शेष और दूध वमन करना देखनेसे पुत्र प्राप्ति होती है।

विवाह—स्वप्नमें अन्यके विवाह या विवाहोत्सवमें योग देना देखनेसे पीड़ा, दुःख या किसी आत्मीय जनकी मृत्यु और अपना विवाह देखनेसे मृत्यु या मृत्यु तुल्य पीड़ा होती है।

वीणा—स्वप्नमें अपने द्वारा वीणा बजाना देखनेसे पुत्र प्राप्ति; दूसरोंके द्वारा वीणा बजाना देखनेसे मृत्यु या मृत्यु तुल्य पीड़ा होती है।

शृंग—स्वप्नमें शृंग और नखवाले पशुओंको मारने के लिए दौड़ना देखनेसे राज्य भय और मारते हुए देखनेसे रोगी होता है।

स्त्री—स्वप्नमें श्वेतवस्त्र परिहिता; हाथोंमें श्वेत पुष्प या माला धारण करनेवाली एवं सुन्दर आभूषणोंसे सुशोभित स्त्रीके देखने तथा आलिंगन करनेसे धनप्राप्ति; रोग मुक्ति होती है। पर स्त्रियोंका लाभ होना अथवा आलिंगन करना देखनेसे शुभ फल होता है। पीतवस्त्र परिहिता; पीत पुष्प या पीत माला धारण करनेवाली स्त्रीको स्वप्नमें देखनेसे कल्याण; मलवस्त्र परिहिता मुक्तकेशी और कृष्ण वर्णके दाँतवाली स्त्रीका दर्शन या आलिंगन करना देखने से छः मासके भीतर मृत्यु और कृष्ण वर्णवाली पापिनी आचारविहीना लम्बकेशी लम्बे स्तनवाली और मैले वस्त्र परिहिता स्त्रीका दर्शन और आलिंगन करना देखनेसे शीघ्र मृत्यु होती है।

तिथियोंके अनुसार स्वप्नका फल—

शुक्लपक्षकी प्रतिपदा—इस तिथिमें स्वप्न देखने पर विलम्बसे फल मिलता है।

शुक्लपक्षकी द्वितीया—इस तिथिमें स्वप्न देखने पर विपरीत फल होता है। अपने लिए देखने से दूसरोंको और दूसरोंके लिए देखनेसे अपनेको फल मिलता है।

शुक्लपक्षकी तृतीया—इस तिथिमें भी स्वप्न देखनेसे विपरीत फल मिलता है। पर फलकी प्राप्ति विलम्बसे होती है।

शुक्ल पक्षकी चतुर्थी और पंचमी इन तिथियोंमें स्वप्न देखनेसे दो महीनेसे लेकर दो वर्ष तकके भीतर फल मिलता है। शुक्लपक्षकी षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी और दशमी—इन तिथियोंमें स्वप्न देखनेसे शीघ्र फलकी प्राप्ति होती है तथा स्वप्न सत्य निकलता है।

शुक्लपक्षकी एकादशी और द्वादशी—इन तिथियोंसे स्वप्न देखनेसे विलम्बसे फल होता है।

शुक्लपक्षकी त्रयोदशी और चतुर्दशी—इन तिथियोंमें स्वप्न देखनेसे स्वप्नका फल नहीं मिलता है तथा स्वप्न मिथ्या होते हैं।

पूर्णिमा—इस तिथिके स्वप्नका फल अवश्य मिलता है।

कृष्णपक्षकी प्रतिपदा—इन तिथियोंके स्वप्नका फल नहीं होता है।

कृष्णपक्षकी द्वितीया—इस तिथिके स्वप्नका फल विलम्बसे मिलता है। मतान्तरसे इसका स्वप्न सार्थक होता है।

कृष्णपक्षकी तृतीया और चतुर्थी—इन तिथियोंके स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्षकी पंचमी और षष्ठी—इन तिथियोंके स्वप्न दो महीने बाद और तीन वर्षके भीतर फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्षकी सप्तमी—इस तिथिका स्वप्न अवश्य शीघ्र ही फल देता है।

कृष्णपक्षकी अष्टमी और नवमी—इन तिथियोंके स्वप्न विपरीत फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्षकी दशमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी—इन तिथियोंके स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्षकी चतुर्दशी—इस तिथिका स्वप्न सत्य होता है। तथा शीघ्र ही फल देता है।

अमावस्या—इस तिथिका स्वप्न मिथ्या होता है।

धन प्राप्ति सूचक स्वप्न—स्वप्नमें हाथी, घोड़ा, बैल, सिंहके ऊपर बैठकर गमन करता हुआ देखे तो शीघ्र धन मिलता है। पहाड़, नगर, ग्राम, नदी और समुद्र इनके देखनेसे भी अतुल लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। तलवार, धनुप और बन्दूक आदिसे शत्रुओंको ध्वंस करता हुआ देखनेसे अपार धन मिलता है। स्वप्नमें हाथी, घोड़ा, बैल, पहाड़, वृक्ष और गृह इन पर आरोहण करता हुआ देखनेसे भूमिके नीचेसे धन मिलता है। स्वप्नमें नख और रोमसे रहित शरीरके देखनेसे लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। स्वप्नमें दही, छत्र, फूल, चमर, अन्न, वस्त्र, दीपक, ताम्बूल, सूर्य, चन्द्रमा, पुष्प, कमल, चन्दन, देव-पूजा, वीणा और अस्त्र देखनेसे शीघ्र ही अर्थ-लाभ होता है। यदि स्वप्नमें चिड़ियोंके पर पकड़कर उड़ता हुआ देखे तथा आकाश मार्गमें देवताओंकी दुन्दुभिकी आवाज सुने तो पृथ्वीके नीचेसे शीघ्र धन मिलता है।

सन्तानोत्पादक स्वप्न—स्वप्नमें वृषभ, कलश, माला, गन्ध, चन्दन, श्वेत पुष्प, आम, अमरूद, केला, सन्तरा, नींबू और नारियल इनकी प्राप्ति होनेसे तथा देव मूर्त्ति, हाथी, सत्पुरुष, सिद्ध, गन्धर्व, गुरु, सुवर्ण, रत्न, जौ, गेहूँ, सरसों, कन्या, रक्तपान करना, अपनी मृत्यु देखना, केला, कल्प वृक्ष, तीर्थ, तोरण, भूषण, राज्यमार्ग और मट्ठा देखनेसे शीघ्र ही सन्तानकी प्राप्ति होती है। किन्तु फल और पुष्पों का भक्षण करना देखनेसे सन्तान मरण तथा गर्भपात होता है।

मरण सूचक स्वप्न—स्वप्नमें तेल मले हुए, नग्न होकर भैंस, गधे, ऊँट, कृष्ण बैल और काले घोड़े पर चढ़कर दक्षिण दिशाकी ओर गमन करना देखने से; रसोई गृहमें लाल पुष्पोंसे परिपूर्ण वनमें और सूतिका गृहमें अंग-भंग पुरुषका प्रवेश करना देखनेसे; झूलना, गाना, खेलना, फोड़ना, हँसना, नदीके जलमें नीचे चले जाना तथा सूर्य, चन्द्रमा, ध्वजा और ताराओंका गिरना देखनेसे, भस्म, घी, लोह, लाख, गीदड़, मुर्गा, बिलाव, गोह, न्योला, बिच्छू, मक्खी, सर्प और विवाह आदि उत्सव देखनेसे एवं स्वप्नमे दाढ़ी, मूँछ और सिरके बाल मुँड़वाना देखनेसे मृत्यु होती है।

पाश्चात्य विद्वानोंके मतानुसार स्वप्नोंके फल—यों तो पाश्चात्य विद्वानोंने अधिकांश रूपसे स्वप्नोंको निस्सार बताया है, पर कुछ ऐसे भी दार्शनिक हैं जो स्वप्नोंको सार्थक बतलाते हैं। उनका मत है—कि स्वप्न में हमारी कई अतृप्त इच्छाएँ भी चरितार्थ होती हैं। जैसे हमारे मनमें कहीं भ्रमण करनेकी इच्छा होने पर स्वप्नमें यह देखना कोई आश्चर्यकी बात नहीं है कि हम कहीं भ्रमण कर रहे हैं। सम्भव है कि जिस इच्छाने हमें भ्रमणका स्वप्न दिखाया है वही कालान्तरमें हमें भ्रमण करावे। इसलिए स्वप्नमें भावी घटनाओंका आभास मिलना साधारण बात है। कुछ विद्वानोंने इस थ्योरीका नाम सम्भाव्य गणित रक्खा है। इस सिद्धान्तके अनुसार कुछ स्वप्नमें देखी गई अतृप्त इच्छाएँ सत्य रूपमें चरितार्थ होती हैं; क्योंकि बहुत समय कई इच्छाएँ अज्ञात होनेके कारण स्वप्नमें प्रकाशित रहती हैं और ये ही इच्छाएँ किसी कारणसे मनमें उदित होकर हमारे तदनुरूप कार्य करा सकती हैं। मानव अपनी इच्छाओंके बलसे ही सांसारिक क्षेत्रमें उन्नति या अवनति करता है, उसके जीवनमें उत्पन्न होनेवाली अनन्त इच्छाओं में कुछ इच्छाएँ अप्रस्फुटित अवस्थामें ही विलीन हो जाती हैं, लेकिन कुछ इच्छाएँ परिपक्वावस्था तक चलती रहती हैं। इन इच्छाओंमें इतनी विशेषता होती है कि ये बिना तृप्त हुए लुप्त नहीं हो सकतीं। सम्भाव्य गणितके सिद्धान्तानुसार जब स्वप्नमें परिपक्वावस्था वाली अतृप्त इच्छाएँ प्रतीकाधारको लिये हुए देखी जाती हैं, उस समय स्वप्नका भावी फल सत्य निकलता है। अबाधभावानुसंगसे हमारे मनके अनेक गुप्त भाव प्रतीकोंसे ही प्रकट हो जाते हैं, मनकी स्वाभाविक धारा स्वप्नमें प्रवाहित होती है, जिससे स्वप्नमें मनकी अनेक चिन्ताएँ गुथी हुई प्रतीत होती हैं। स्वप्नके साथ संश्लिष्ट मनकी जिन चिन्ताओं और गुप्त भावोंका प्रतीकोंसे आभास मिलता है, वही स्वप्नका अव्यक्त अंश भावी फलके रूपमें प्रकट होता है। अस्तु उपलब्ध सामग्री के आधारपर कुछ स्वप्नोंके फल नीचे दिये जाते हैं।

अस्वस्थ—अपने सिवाय अन्य किसीको अस्वस्थ देखनेसे कष्ट होता है और स्वयं अपनेको अस्वस्थ देखनेसे प्रसन्नता होती है। जी. एच. मिलरके मतसे स्वप्नमें स्वयं अपनेको अस्वस्थ देखनेसे कुटुम्बियोंके साथ मेल-मिलाप बढ़ता है एवं एक मासके बाद स्वप्नद्रष्टाको कुछ शारीरिक कष्ट भी होता है तथा अन्यको अस्वस्थ देखनेसे द्रष्टा शीघ्र रोगी होता है। डाक्टर सी. जे. हिटवेके मतानुसार अपनेको अस्वस्थ देखनेसे सुख-शान्ति और दूसरेको अस्वस्थ देखनेसे विपत्ति होती है। शुकरातके सिद्धान्तानुसार अपने और दूसरेको अस्वस्थ देखना रोगसूचक है। बिवलोनियन और प्रथगयोरियनके सिद्धान्तानुसार अपनेको अस्वस्थ देखना नीरोग सूचक और दूसरेको अस्वस्थ देखना पुत्र-मित्रादिके रोगको प्रकट करनेवाला होता है।

आवाज—स्वप्नमें किसी विचित्र आवाजको स्वयं सुननेसे अशुभ सन्देश सुननेको मिलता है। यदि स्वप्नकी आवाज सुनकर निद्राभंग हो जाती है तो सारे कार्योंमें परिवर्त्तन होनेकी सम्भावना होती है। अन्य किसीकी आवाज सुनते हुए देखनेसे पुत्र और स्त्रीको कष्ट होता है तथा अपने अति निकट कुटुम्बियोंकी आवाज सुनते हुए देखनेसे किसी आत्मीयकी मृत्यु प्रकट होती है। डा० जी. एच. मिलरके मतसे आवाज सुनना भ्रमका द्योतक है।

ऊपर—यदि स्वप्नमें कोई चीज अपने ऊपर लटकती हुई दिखायी पड़े और उसके गिरने का सन्देह हो तो शत्रुओंके द्वारा धोखा होता है। ऊपर गिर जानेसे धन नाश होता है, यदि ऊपर न गिरकर पासमें गिरती है तो धन-हानिके साथ स्त्री-पुत्र एवं अन्य कुटुम्बियोंको कष्ट होता है। जी. एच. मिलरके मतसे किसी भी वस्तुका ऊपर गिरना धननाशकारक है। डा० सी. जे. ह्विटवेके मतसे किसी वस्तुके ऊपर गिरनेसे तथा गिरकर चोट लगनेसे मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

कटार—स्वप्नमें कटारके देखनेसे कष्ट और कटार चलाते हुए देखनेसे धन हानि तथा निकट कुटुम्बीके दर्शन; मांस भोजन एवं पत्नीसे प्रेम होता है। किसी-किसीके मतसे अपनेमें स्वयं कटार भोंकते हुए देखनेसे किसीके रोगी होनेके समाचार सुनाई पड़ते हैं।

कनेर—स्वप्नमें कनेरके फूले वृक्षका दर्शन करनेसे मान-प्रतिष्ठा मिलती है। कनेरके वृक्ष से फूल और पत्तोंको गिरना देखनेसे किसी निकट आत्मीयकी मृत्यु होती है। कनेरका फल भक्षण करना रोग सूचक है, तथा एक सप्ताहके भीतर अत्यन्त अशान्ति देनेवाला होता है। कनेरके वृक्षके नीचे बैठकर पुस्तक पढ़ता हुआ अपने को देखनेसे दो वर्षके बाद साहित्यिक क्षेत्र में यशकी प्राप्ति होती है, एवं नये-नये प्रयोगका आविष्कर्त्ता होता है।

किला—किलेकी रक्षाके लिए लड़ाई करते हुए देखनेसे मानहानि एवं चिन्ताएँ; किलेमें भ्रमण करनेसे शारीरिक कष्ट; किलेके दरवाजे पर पहरा लगानेसे प्रेमिकासे मिलन एवं मित्रोंकी प्राप्ति और किलेके देखने मात्रसे परदेशी बन्धुसे मिलन होता है तथा सुन्दर स्वादिष्ट मांस भक्षणको मिलता है।

केला—स्वप्नमें केलाका दर्शन शुभफल दायक होता है और केलेका भक्षण अनिष्ट फल देने वाला होता है। किसीके हाथसे जबरदस्ती केला लेकर खानेसे मृत्यु और केलेके पत्तों पर रख कर भोजन करनेसे कष्ट एवं केलेके थम्भे लगानेसे घरमें मांगलिक कार्य होते हैं।

केश—किसी सुन्दरीके केशपाशका स्वप्नमें चुम्बन करनेसे प्रेमिका-मिलन और केशके दर्शन से मुकदमेमें पराजय एवं दैनिक कार्योंमें असफलता मिलती है।

खल—स्वप्नमे किसी दुष्टके दर्शन करनेसे मित्रोंसे अनबन और लड़ाई करनेसे मित्रोंसे प्रेम होता है। खलके साथ मित्रता करनेसे नाना भय और चिन्ताएँ उत्पन्न होती हैं। खलके साथ भोजन पान करनेसे शारीरिक कष्ट, बातचीत करनेसे रोग और उसके हाथसे दूध लेनेसे सैकड़ों रुपयोंकी प्राप्ति होती है। किसी-किसीके मतसे खलका दर्शन शुभ माना गया है।

खेल—स्वप्नमें खेल खेलते हुए देखनेसे स्वास्थ्य वृद्धि और दूसरोंको खेलते हुए देखनेसे ख्याति लाभ होता है। खेलमें अपनेको पराजित देखनेसे कार्य साफल्य और जय देखनेसे कार्य-हानि होती है। खेलका मैदान देखनेसे युद्धमें भाग लेनेका संकेत होता है। खिलाड़ियोंका आपसमें मल्लयुद्ध करते हुए देखना बड़े भारी रोगका सूचक है।

गाय—यदि स्वप्नमें कोई गाय दूध दुहनेकी इन्तजारीमें बैठी हुई दिखाई पड़े तो सभी इच्छाओंकी पूर्त्ति होती है। गायका दर्शन जी० एच० मिलरके मतसे प्रेमिका-मिलन सूचक बताया गया है। चारा खाते हुए गायको देखनेसे अन्न प्राप्ति; बछड़ा पिलाते हुए देखनेसे पुत्र प्राप्ति; गोबर करते हुए गायको देखनेसे धन प्राप्ति और पागुर करते हुए देखनेसे कार्यमें सफलता मिलती है।

घड़ी—स्वप्नमें घड़ी देखनेसे शत्रुभय होता है। घड़ीके घण्टोंकी आवाज सुननेसे दुःखद संवाद सुनते हैं, या किसी मित्रकी मृत्युका समाचार सुनाई पड़ता है। किसीके हाथसे घड़ी गिरते हुए देखनेसे मृत्यु तुल्य कष्ट होता है। अपने हाथकी घड़ीका गिरना देखनेसे छः महीनेके भीतर मृत्यु होती है।

चाय—स्वप्नमें चायका पीना देखनेसे शारीरिक कष्ट; प्रेमिका वियोग एवं व्यापारमें हानि होती है। मतान्तरसे चाय पीना शुभकारक भी है।

जन्म—यदि स्वप्नमें कोई स्त्री बच्चेका जन्म देखे तो उसकी किसी सखी, सहेलीको पुत्र प्राप्ति होती है। तथा उसे उपहार मिलते हैं। यदि पुरुष यही स्वप्न देखे तो यश प्राप्ति होती है।

झाड़ू—यदि स्वप्नमें नया झाड़ू दिखाई पड़े तो शीघ्र ही भाग्योदय होता है। पुराने झाड़ूका दर्शन करनेसे सट्टेमें धन हानि होती है। यदि स्त्री इसी स्वप्नको देखे तो उसे भविष्यमें नाना कष्टोंका सामना करना पड़ता है।

मृत्यु—मृत्यु देखनेसे किसी आत्मीयकी मृत्यु होती है; किन्तु जिस व्यक्तिकी मृत्यु देखी गयी है, उसका कल्याण होता है। मृत्युका दृश्य देखना, मरते हुए व्यक्तिकी छटपटाहट देखना अशुभ सूचक है। किसी सवारीसे नीचे उतरते ही मृत्यु देखना राजनीतिमें पराजयका सूचक है। सवारीके ऊपर चढ़कर ऊँचा उठना तथा किसी पहाड़पर ऊँचा चढ़ना भी शुभफल सूचक होता है।

युद्ध—स्वप्नमें युद्धका दृश्य देखना, युद्धसे भयभीत होना, मारकाटमें भाग लेना तथा अपनेको युद्धमें मृत देखना जीवनमें पराजयका सूचक है, इस प्रकारका स्वप्न देखनेसे सभी क्षेत्रोंमें असफलता मिलती है। जो व्यक्ति युद्धमें अपनी मृत्यु देखता है, उसे कष्ट सहन करने पड़ते हैं तथा वह प्रेममें असफल होता है। जिससे वह प्रेम करता है, उसकी ओरसे ठुकराया जाता है। युद्धमें विजय देखना सफल प्रेमका सूचक है। जिस प्रेमिका या प्रेमीको व्यक्ति चाहता है वह सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है। नग्न होकर युद्ध करते हुए देखनेसे नृत्यमें सफलता मिलती है। तथा अनेक स्थानोंपर भोजन करनेका निमन्त्रण मिलता है। यदि कोई व्यक्ति किसी सवारी पर आरूढ़ होकर रणभूमिमें जाता हुआ दृष्टिगोचर हो तो इस प्रकारके स्वप्नके देखनेसे जीवनमें अनेक सफलता मिलती है।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

यदा स्थितौ जीवबुधौ सहूर्यौ राशिस्थितानाश्च तथानुवर्तिनौ ।
नृनागबद्धावरसङ्करस्तदा भवन्ति वाताः समुपस्थितान्ताः ॥१॥

जब बृहस्पति और बुध सूर्यके साथ स्थित होकर स्वराशियोंमे स्थित ग्रहोंके अनुवर्ती हों और मनुष्य, सर्प तथा अन्य छोटे जन्तु युद्ध करते दिखलायी पड़ें तब भयङ्कर तूफान आता है ॥१॥

न मित्रभावे सुहृदो समेता न चाल्पतयमम्बु ददाति वासवः ।
भिनत्ति वज्रेण तदा शिरांसि महीभृतां चाप्यपवर्षणं च ॥२॥

यदि शुभ ग्रह मित्रभावमें स्थित न हों तो वर्षाका अभाव रहता है तथा इन्द्र पर्वतोंके मस्तकको वज्रसे चूर करता है—पर्वतोंपर विद्युत्पात होता है और अवर्षण रहता है ॥२॥

सोमग्रहे निवृत्तेषु पक्षान्ते चेद् भवेद्ग्रहः ।
तत्रानयः प्रजानां च दम्पत्योर्वैरमादिशेत् ॥३॥

चन्द्रमाकी निवृत्ति होनेपर पक्षान्तमें यदि कोई अशुभ ग्रह हो तो प्रजामें अनीति—अन्याय और दम्पति वैर होता है ॥३॥

कृत्तिकायां दहत्यग्नी रोहिण्यामर्थसम्पदः ।
दंशन्ति मूषिकाः सौम्ये चाद्रीयां प्राणसंशयः ॥४॥

कृत्तिका नक्षत्रमें नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करनेसे अग्नि जलाती है, रोहिणीमें धन-सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है, मृगशिरमें मूषक काटते हैं और आर्द्रामें प्राणोंका संशय उत्पन्न हो जाता है ॥४॥

धान्यं पुनर्वसौ वस्त्रं पुष्यः सर्वार्थसाधकः ।
आश्लेषासु भवेद्रोगः श्मशानं स्यान्मघासु च ॥५॥

पुनर्वसुमें नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करनेसे धान्यकी प्राप्ति होती है, पुष्य नक्षत्रमें धारण करनेसे सभी अभिलाषाओंकी पूर्ति होती है, आश्लेषामें रोग होता है और मघा नक्षत्रमें श्मशान—मरण प्राप्त होता है ॥५॥

पूर्वाफाल्गुनी शुभदा [2]राज्यदोत्तरफाल्गुनी ।
वस्त्रदा संस्मृता लोके तूत्तरभाद्रपदा शुभा ॥६॥

पूर्वा फाल्गुनीमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे शुभ होता है, उत्तरा फाल्गुनीमें राज्यकी प्राप्ति होती है, और उत्तराभाद्रपद शुभ और वस्त्र देनेवाली कही गयी है ॥६॥

हस्ते च ध्रुवकर्माणि चित्रास्वाभरणं शुभम् ।
मृष्टान्नं लभ्यते स्वातौ विशाखा प्रियदर्शिका ॥७॥

१. स्वर्धाता । २. राज्यदोत्तर ।

हस्त नक्षत्रमें ध्रुवकार्य—स्थिर कार्य करना शुभ होता है, चित्रा नक्षत्रमें आभरण धारण करना शुभ होता है, स्वाति नक्षत्रमें वस्त्र, आभरण धारण करनेसे मिष्टान्नकी प्राप्ति होती है और विशाखा नक्षत्रमें धारण करनेसे प्रियका दर्शन होता है ॥७॥

अनुराधा वस्त्रदात्री ज्येष्ठा वस्त्रविनाशिनी ।
मरणाय तथैवोक्ता हानिकारणलक्षणा ॥८॥

नये वस्त्राभरण धारण करनेवालोंको अनुराधा नक्षत्र वस्त्र देनेवाला, ज्येष्ठा वस्त्रका विनाश करनेवाला, मरण देनेवाला और हानि करनेवाला होता है ॥८॥

मूलेन क्लिश्यते वस्त्रं [1]पूषायां रोगसम्भवः ।
उत्तरा वस्त्रदा ख्याता श्रवणो नेत्ररोगदः ॥९॥

मूल नक्षत्रमें वस्त्र धारण करनेवालेको क्लेश, पूर्वाषाढ़ामें रोग, उत्तरा भाद्रपदमें वस्त्र-प्राप्ति और श्रवण नक्षत्रमें नवीन वस्त्राभरण धारण करनेसे नेत्र रोग होता है ॥९॥

धनिष्ठा धनलाभाय शतभिषा विषाद्भयम् ।
पूर्वभाद्रपदात्तोयमुत्तरा बहुवस्त्रदा ॥१०॥

धनिष्ठा नक्षत्रमें नवीन वस्त्राभरण धारण करनेसे धन लाभ, शतभिषामें धारण करनेसे विषका भय तथा पूर्वाभाद्रपदमें और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रोंमें धारण करनेसे बहुत वस्त्रोंकी प्राप्ति होती है ॥१०॥

रेवती लोहिताय स्याद् बहुवस्त्रा तथाश्विनी ।
भरणी यमलोकार्थमेवमेव तु [2]कष्टदा ॥११॥

रेवती नक्षत्रमें नवीन वस्त्राभरण धारण करनेसे, लोहित-जंग लगना, अश्विनीमें धारण करनेसे बहुतसे वस्त्रोंकी प्राप्ति होना और भरणी नक्षत्रमें नवीन वस्त्राभरण धारण करनेसे मरण या तत्तुल्य कष्ट होता है ॥११॥

शुभग्रहाः फलं दद्युः पञ्चाशद्दिवसेषु तु ।
षष्ठ्यहःस्वथवा सर्वे पापा नवदिनान्तरम् ॥१२॥

शुभग्रह पचास या साठ दिनोंके उपरान्त तथा पापग्रह नौ दिनोंके उपरान्त फल देते हैं ॥१२॥

शुभाशुभे वीक्ष्यतु यो ग्रहाणां गृही सुवस्त्रव्यवहारकारी ।
समोदयेऽवाप्य समस्तभोगं निरस्तरोगो व्यसनैर्विमुक्तः ॥१३॥

जो गृहस्थ ग्रहोंके शुभाशुभत्वको देखकर वस्त्रोंका व्यवहार करता है, वह समस्त भोगोंको प्राप्त कर आनन्दित होता है तथा रोग और व्यसनोंसे छुटकारा प्राप्त करता है ॥१३॥

इति श्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्तशास्त्रे सप्तविंशतितमो वस्त्रव्यवहारनिमित्तकोऽध्यायः ॥२७॥

॥ निमित्तं परिसमाप्तम् ॥

---

१. पूषायां । २. कष्टदा ।

विवेचन—ग्रह और नक्षत्र शुभाशुभ, क्रूर-सौम्य आदि अनेक प्रकारके होते हैं। शुभग्रह और शुभ नक्षत्रोंका फल शुभ और अशुभ ग्रह और अशुभ नक्षत्रोंका फल अशुभ मिलता है। इस अध्यायमें साधारणतया नवीन वस्त्राभरणादि धारण करनेके लिए कौन-कौन नक्षत्र शुभ हैं और कौन अशुभ हैं, इसका निरूपण किया गया है। नक्षत्रोंमें विधेय कार्योंके साथ उनकी संज्ञाओंका निरूपण किया जायगा।

शान्ति, गृह, वाटिका विधायक नक्षत्र

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम्। तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये।

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार, इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य करना, बीज बोना, घर बनवाना, शान्ति कार्य करना, गाँवके समीप बगीचा लगाना आदि कार्योंके साथ मृदु कार्य करना भी शुभ होता है।

हाथी-घोड़ेकी सवारी विधायक नक्षत्र

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम्। तस्मिन् गजादिमारोहो वाटिकागमनादिकम्॥

स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा ये पाँच नक्षत्र और सोमवार इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी घोड़े आदिपर चढ़ना, बगीचे आदिमें जाना, यात्रा करना आदि शुभ होता है।

विषशस्त्रादि विधायक नक्षत्र

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा। तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति॥
विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम्। तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा ये पाँच नक्षत्र और मंगल दिनकी क्रूर और उग्र संज्ञा है। इनमें मारण, अग्नि-कार्य, धूर्ततापूर्ण कार्य, विषकार्य, अस्त्र-शस्त्र निर्माण एवं उनके व्यवहार करनेका कार्य सिद्ध होता है।

विशाखा, कृत्तिका ये दो नक्षत्र और बुध दिन इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है। इनमें अग्निहोत्र, साधारण कार्य, वृषोत्सर्ग आदि कार्य सिद्ध होते हैं।

आभूषणादि विधायक नक्षत्र

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तथा। तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम्॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् ये चार नक्षत्र और बृहस्पति दिन, इनकी क्षिप्र और लघु संज्ञा है। इनमें बाजारका कार्य, स्त्री-सम्भोग, शास्त्रादिका ज्ञान, आभूषणोंका बनवाना और पहिनना, चित्रकारी, गाना-बजाना आदि कार्य सफल होते हैं।

मित्रकार्यादि विधायक नक्षत्र

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा। तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम्॥

मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा है। इनमें गाना, वस्त्र पहनना, स्त्रीके साथ रति करना, मित्रका कार्य और आभूषण पहनना शुभ होता है।

पशुओंको शिक्षित करना तथा दारुण-तीक्ष्ण कार्य विधायक नक्षत्र

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुणसंज्ञकम्। तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम्॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा ये चार नक्षत्र और शनि तीक्ष्ण और दारुसंज्ञक हैं। इनमें भयानक कार्य करना, मारना-पीटना, हाथी-घोड़े आदिको सिखलाना ये कार्य सिद्ध होते हैं। ग्रहोंका स्वरूप जान लेना भी आवश्यक है।

सूर्य—यह पूर्व दिशाका स्वामी, पुरुष ग्रह, सम वर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। यह सिंह राशिका स्वामी है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालयका सूचक है। पिताके सम्बन्धमें सूर्यसे विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवोंपर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। यह लग्नसे सप्तम स्थानमें बली माना गया है। मकरसे छः राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे शारीरिक रोग, सिरदर्द, अपच, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मन्दाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासीनता, खेद, अपमान एवं कलह आदिका विचार किया जाता है।

चन्द्रमा—पश्चिमोत्तर दिशाका स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और जलग्रह है। यह कर्कराशिका स्वामी है। वातश्लेष्मा इसकी धातु है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थानका कारक है। चतुर्थ स्थानमें चन्द्रमा बली और मकरसे राशियोंमें इसका चेष्टाबल है। कृष्ण पक्षकी ६ से शुक्ल पक्षकी १० तक क्षीण चन्द्रमा रहनेके कारण पापग्रह और शुक्ल पक्षकी १०मी से कृष्ण पक्षकी ५मी तक पूर्ण ज्योति रहनेसे शुभग्रह और बली माना गया है। इससे पाण्डुरोग, जलज तथा कफज रोग, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, उदर और मस्तिष्क सम्बन्धी रोगोंका विचार किया जाता है।

मङ्गल—दक्षिण दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पित्तप्रकृति, रक्तवर्ण और अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावतः पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रमका स्वामी है। यह मेष और वृश्चिक राशियोंका स्वामी है। यह तीसरे और छठवें स्थानमें बली और द्वितीय स्थानमें निष्फल होता है।

बुध—उत्तर दिशाका स्वामी, नपुंसक, त्रिदोष प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पापग्रह सू०, मं०, रा०, के०, श० के साथ रहनेसे अशुभ और शुभ ग्रह—चन्द्रमा, गुरु और शुक्रके साथ रहनेसे शुभ फलदायक होता है। इससे वाणीका विचार किया जाता है। मिथुन और कन्या राशिका स्वामी है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशाका स्वामी, पुरुष जाति, पीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह चर्बी और कफकी वृद्धि करनेवाला है। यह धनु और मीनका स्वामी है।

शुक्र—दक्षिण-पूर्वका स्वामी, स्त्री, श्याम-गौर वर्ण एवं कार्य कुशल है। छठवें स्थानमें यह निष्फल और सातवेंमें अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ, वीर्य आदि धातुओंका कारक माना गया है। वृष और तुला राशि का स्वामी है।

शनि—पश्चिम दिशाका स्वामी, नपुंसक, वातश्लेष्मिक, कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थानमें बली, वक्री या चन्द्रमाके साथ रहनेसे चेष्टाबली होता है। मकर और कुम्भ राशियोंका अधिपति है।

राहु—दक्षिण दिशाका स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थानपर राहु रहता है, उस स्थानकी उन्नतिको रोकता है।

केतु—कृष्ण वर्ण और क्रूर ग्रह है।

जिस देश या राज्यमें क्रूर-ग्रहोंका प्रभाव रहता है या क्रूर ग्रह वक्री, मार्गी होते हैं, उस देश या राज्यमें दुष्काल, अवर्षा, नाना प्रकारके अन्य उपद्रव होते हैं। शुभग्रहोंके उदय और प्रभावसे राज्य या देशमें शान्ति रहती है। नवीन वस्त्रोंका बुध, गुरु और शुक्रको, द्वितीया, पञ्चमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी और पूर्णिमा तिथिको तथा अश्विनी, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरा तीनों, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्रमें व्यवहार करना चाहिए। नवीन वस्त्र सर्वदा पूर्वाह्णमें धारण करना चाहिए।

परिशिष्टाध्यायः

अथ वक्ष्यामि केषाञ्चिन्निमित्तानां प्ररूपणम् ।
कालज्ञानादिभेदेन यदुक्तं पूर्वसूरिभिः ॥१॥

अब मैं कतिपय निमित्तोंका स्वरूप कथन करता हूँ, इन निमित्तोंका प्रतिपादन पूर्वाचार्योंने कालज्ञानके निमित्तों द्वारा किया है ॥१॥

श्रीमद्वीरजिनं नत्वा भारतीञ्च पुलिन्दिनीम् ।
स्मृत्वा निमित्तानि वक्ष्ये स्वात्मनः कार्यसिद्धये ॥२॥

भगवान् महावीर और जिनवाणीको नमस्कार कर तथा निमित्तोंकी अधिकारिणी पुलिन्दिनी देवीका स्मरणकर स्वात्माके कार्यकी सिद्धिके लिए—समाधिमरण प्राप्तिके लिए मैं निमित्तोंका वर्णन करता हूँ ॥२॥

भौमान्तरिक्षादिभेदा अष्टौ तस्य बुधैर्मताः ।
ते सर्वेऽप्यत्र विज्ञेया प्रज्ञावद्भिर्विशेषतः ॥३॥

भौम, अन्तरिक्ष आदिके भेदसे आठ प्रकारके निमित्त विद्वानोंने बतलाये हैं। इन सभी प्रकारके निमित्तोंका उपयोग आयुर्ज्ञानके लिए करना चाहिए ॥३॥

व्याधेः कोटयः पञ्च भवन्त्यष्टाधिकषष्टिलक्षाणि ।
नवनवति-सहस्राणि पञ्चशती चतुरशीत्यधिकाः ॥४॥

पाँच करोड़ अड़सठ लाख निन्यानवे हजार पाँच सौ चौरासी रोगोंकी संख्या बतायी गई है ॥४॥

एतत्संख्यान् महारोगान् पश्यन्नपि न पश्यति ।
इन्द्रियैर्मोहितो मूढः परलोकपराङ्मुखः ॥५॥

इन्द्रियासक्त परलोककी चिन्तासे रहित व्यक्ति उपर्युक्त संख्यक रोगोंको देखते हुए भी नहीं देखता है अर्थात् विषयासक्त प्राणी संसारके विषयोंमें इतना रत रहता है जिससे वह उपर्युक्त रोगोंकी परवाह नहीं करता ॥५॥

नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते जिनधर्मे महोन्नते ।
द्विधा सल्लेखनां कर्तुं कोऽपि भव्यः प्रवर्तते ॥६॥

दुर्लभ मनुष्य पर्यायके प्राप्त होनेपर आत्माका उन्नतिकारक जैनधर्म बड़े सौभाग्यसे प्राप्त होता है, अतः इस महान् धर्मके प्राप्त होनेपर भी कोई एकाध भव्य ही दोनों प्रकारकी सल्लेखनाएँ करनेके लिए प्रवृत्त होते हैं ॥६॥

कृशत्वं नीयते कायः कषायोऽप्यतिसूक्ष्मताम् ।
उपवासादिभिः पूर्वो ज्ञानध्यानादिभिः परः ॥७॥

उपवास इत्यादिके द्वारा शरीर और कषायोंको कृश कर आत्मशोधनमें लगना सल्लेखना है, इस क्रियाको करनेवाला व्यक्ति ज्ञान, ध्यानमें संलग्न रहता है ॥७॥

शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा सङ्ग्रामे यस्तु मुह्यति ।
द्विपोस्तस्य कृतस्स्नानो मुनेर्व्यर्थं तथा व्रतम् ॥८॥

शास्त्र स्वाध्याय करनेपर भी जिसकी बुद्धि इन्द्रियोंमें आसक्त रहती है उस मुनिके व्रत हाथीके स्नानकी तरह व्यर्थ हैं अर्थात् जिस प्रकार हाथी स्नान करनेके अनन्तर पुनः धूलिमें लोट जाता है, उसी प्रकार जो मुनि या आत्मसाधक शास्त्राभ्यास करनेपर भी सल्लेखना नहीं धारण करता है और इन्द्रियोंमें आसक्त रहता है उसके व्रत व्यर्थ है; यतः जीवनका वास्तविक उद्देश्य सल्लेखना धारण करना है ॥८॥

विरतः कोऽपि संसारी संसारभयभीरुकः ।
विन्ध्यादिमान्यरिष्टानि भाव्यभावान्यनुक्रमात् ॥९॥

जो कोई संसारसे विरत तथा संसार भयसे युक्त व्यक्ति आत्मकल्याण करना चाहता है उसके लिए शरीरमें उत्पन्न होनेवाले नाना प्रकारके अरिष्टोंका मैं निरूपण करता हूँ ॥९॥

पूर्वाचार्यैस्तथा प्रोक्तं दुर्गाद्यैलादिभिः यथा ।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाम्यहम् ॥१०॥

दुर्गाचार्य, ऐलाचार्य आदि पूर्वाचार्योंके अभिप्रायको लेकर ही मैं अरिष्टोंका कथन करता हूँ ॥१०॥

पिण्डस्थश्च पदस्थश्च रूपस्थश्च त्रिभेदतः ।
आसन्नमरणे प्राप्ते जायतेऽरिष्टसन्ततिः ॥११॥

जिस व्यक्तिका शीघ्र ही मरण होनेवाला है उसके शरीरमें पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ ये तीन प्रकारके अरिष्ट उत्पन्न होते हैं ॥११॥

विकृतिर्दृश्यते कायेऽरिष्टं पिण्डस्थमुच्यते ।
अनेकधा तत्पिण्डस्थं ज्ञातव्यं शास्त्रवेदिभिः ॥१२॥

शरीरमें अप्राकृतिक रूपसे अनेक प्रकारकी विकृति होनेको शास्त्रके जानने वालोंने पिण्डस्थ अरिष्ट कहा है ॥१२॥

सुकुमारं करयुगलं कृष्णं कठिनमवेद्यदायस्य ।
न स्फुटन्ति वाङ्गुलयस्तस्यारिष्टं विजानीहि ॥१३॥

यदि किसीके दोनों सुकुमार हाथ अकारण ही कठोर और कृष्ण हो जायँ तथा अँगुलियाँ सीधी न हों तो उसे अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् उक्त लक्षण वाले व्यक्तिका मरण सात दिन में ही होता है ॥१३॥

स्तब्धं लोचनयोर्युग्मं विवर्णः काष्ठवत्तनुः ।
प्रस्वेदो यस्य भालस्थः विकृतं वदनं तथा ॥१४॥

जिसके दोनों नेत्र स्तब्ध अर्थात् विकृत हो जायँ तथा शरीर विकृत वर्ण और काठके समान कठोर हो जाय और मस्तकके ऊपर अधिक पसीना आवे तथा मुख विकृत हो तो अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् सात दिनमें मृत्यु होती है । ॥१४॥

निर्निमित्तं मुखे हासः चक्षुर्भ्यां जलबिन्दवः ।
अहोरात्रं स्रवन्त्येव नखरोमाणि यान्ति च ॥१५॥

बिना किसी कारणके अधिक हँसी आवे, आँखोंमें आँसू व्याप्त रहे और नख तथा रोमके छिद्रोंसे पसीना निकलता हो तो सात दिनमें मृत्यु समझनी चाहिए ॥१५॥

सुकृष्णा दशना यस्य न घोषाकर्णनं पुनः ।
एतैश्चिह्नैस्तु प्रत्येकं तस्यायुर्दिनसप्तकम् ॥१६॥

जिसके दाँत काले हो जायँ तथा कर्णछिद्रोंको बन्द करने पर भीतरसे होने वाली आवाज सुनाई न पड़े तो सात दिनकी आयु समझनी चाहिए ॥१६॥

निर्गच्छंस्तुट्यते वायुस्तस्य पक्षैकजीवनम् ।
नेत्रयोर्मीलनाज्ज्योतिरदृष्टौ दिनसप्तकम् ॥१७॥

यदि शरीरसे निकलती हुई वायु बीचमें टूट-सी जाय तो पन्द्रह दिनकी आयु शेष समझनी चाहिए अथवा बाहर निकलनेमें श्वाँस तेज हो तो पन्द्रह दिनकी आयु समझनी चाहिए। दोनों नेत्रोंके अग्रभागको थोड़ा-सा बन्द करने पर उनमेंसे जो ज्योति निकलती है यदि वह ज्योति निकलती हुई दिखलायी न पड़े तो सात दिनकी आयु समझनी चाहिए ॥१७॥

भ्रूमध्ये नासिका जिह्वादर्शने च यथाक्रमम् ।
नवत्र्येकदिनान्येव सरोगी जीवति ध्रुवम् ॥१८॥

यदि भौंहके मध्यभागको न देख सके तो नौ दिन, नासिका न दिखलायी पड़े तो तीन दिन और जिह्वा न दिखलायी पड़े तो एक दिनकी आयु होती है, अर्थात् उस रोगीकी पूर्वोक्त दिनोंमें मृत्यु हो जाती है ॥१८॥

पाणिपादोपरि क्षिप्तं तोयं शीघ्रं विशुष्यति ।
दिनत्रयं च तस्यायुः कथितं पूर्वसूरिभिः ॥१९॥

पैरोंके ऊपर डाला गया जल यदि शीघ्र ही सूख जाय तो उसकी तीन दिनकी आयु समझनी चाहिए ऐसा पूर्वाचार्योंने कहा है ॥१९॥

निर्विश्रामो मुखात्श्वासो मुखाद्रक्तं पतेद्यदा ।
यद्दृष्टिः स्तब्धः निष्पन्दा वर्णचैतन्यहीनता ॥२०॥

जिसके मुखसे अधिक श्वाँस निकलती हो, मुखसे रक्त गिरता हो, दृष्टि स्तब्ध और निस्पन्द हो तथा मुख विवर्ण और चैतन्यहीन दिखलायी पड़े तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए॥२०॥

स्थिरा ग्रीवा न यस्यास्ति सोऽस्वासो हृदि रुध्यते ।
नासावदनगुह्येभ्यः शीतलः पवनो वहन् ॥२१॥

जिसकी गर्दन टेढ़ी हो जाय या श्वाँसका हृदयमें रुक जाना तथा मुख, नाक और गुह्येन्द्रियसे शीतल वायुका निकलना शीघ्र मरण सूचक है ॥२१॥

न जानाति निजं कार्यं पाणिपादौ च पीडितौ ।
प्रत्येकमेभिस्त्वरिष्टैस्तस्य मृत्युर्भवेल्लघुः ॥२२॥

हाथ, पैर आदिके पीड़ित करनेपर भी जिसे पीड़ाका अनुभव न हो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥२२॥

स्थूलो याति कृशत्वं कृशोऽप्यकस्माच्च जायते स्थूलः ।
स्थगस्थगति यस्य कायः कृतशीर्षहस्तो निरन्तरं शेते ॥२३॥

अकस्मात् स्थूल शरीरका कृश हो जाना तथा कृश शरीरका स्थूल हो जाना और शरीरका काँपने लगना एवं अपने शिरपर हाथ रखकर सोना एक मासकी आयुका द्योतक है ॥२३॥

ग्रीवोपरि करबन्ध्यो गच्छत्यङ्गुलीभिर्दृढबन्धं च ।
क्रमणोद्यमहीनस्तस्यायुर्मासपर्यन्तम् ॥२४॥

गाढ़ बन्धन करनेके लिए जिसकी अंगुलियाँ गलेमें डाली जाँय पर अँगुलियोंसे दृढ़ बन्धन न हो सके तो ऐसे व्यक्तिकी आयु एक महीना अवशेष रहती है ॥२४॥

युग्मं अधरनखदशनरसनाः कृष्णा भवन्ति विना निमित्तेन ।
षड्रसभेदमवेताः तस्यायुर्मासपरिमाणम् ॥२५॥

विना किसी निमित्तके ओठ, नख, दन्त और जिह्वा यदि काली हो जाय तथा षड् रसका अनुभव न हो तो उसकी आयु एक महीना शेष होती है ॥२५॥

ललाटे तिलकं यस्य विद्यमानं न दृश्यते ।
जिह्वा यस्यातिकृष्णत्वं मासमेकं स जीवति ॥२६॥

जिसके मस्तकके ऊपर लगा हुआ तिलक किसीको दिखलायी न पड़े तथा जिह्वा अत्यन्त काली हो जाय तो उसकी आयु एक महीनेकी होती है ॥२६॥

धृतिमदनविनाशो निद्रानाशोऽपि यस्य जायेत ।
भवति निरन्तरं निद्रा मासचतुष्कन्तु तस्यायुः ॥२७॥

धैर्य, कामशक्ति और निद्राके नाश होनेसे चार महीनेकी आयु शेष समझनी चाहिए। अधिक निद्राका आना, दिन-रात सोते रहना भी चार मासकी आयुका सूचक है ॥२७॥

इत्यवोचमरिष्टानि पिण्डस्थानि समासतः ।
इतः परं प्रवक्ष्यामि पदार्थस्थान्यनुक्रमात् ॥२८॥

इस प्रकार पिण्डस्थ अरिष्टोंका वर्णन किया है, अब पदस्थ अरिष्टोंका वर्णन करता हूँ ॥२८॥

चन्द्रसूर्यप्रदीपादीन् विपरीतेन पश्यति ।
पदार्थस्थमरिष्टं तत्कथयन्ति मनीषिणः ॥२९॥

चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तुका विपरीत रूपसे देखना पदस्थ या पर पदार्थ स्थित अरिष्ट विद्वानोंने कहा है ॥२९॥

स्नात्वा देहमलंकृत्य गन्धमाल्यादिभूषणैः ।
शुभ्रैस्ततो जिनं पूज्य चेदं मन्त्रं पठेत् सुधीः ॥३०॥

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं कमले कमले विमले विमले उदरदवदेवी इटिमिटि पुलिन्दिनी स्वाहा ।

एकविंशतिवेलाभिः पठित्वा मन्त्रमुत्तमम् ।
गुरूपदेशमाश्रित्य ततोऽरिष्टं निरीक्षयेत् ॥३१॥

पदस्थ अरिष्टको जाननेकी विधिका निरूपण करते हुए बताया गया है कि स्नान कर श्वेत वस्त्र धारण कर सुगन्धित द्रव्य तथा आभूषणोंसे अपनेको सजाकर एवं जिनेन्द्र भगवान्की पूजा कर "ॐ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं कमले कमले विमले उदरदेवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मंत्रका इक्कीस बार उच्चारण कर गुरु-उपदेशके अनुसार अरिष्टोंका निरीक्षण करें ॥३०-३१॥

चन्द्रभास्करयोर्बिम्बं नानारूपेण पश्यति ।
सच्छिद्रं यदि वा खण्डं तस्यायुर्वर्षमात्रतः ॥३२॥

जो कोई संसारमें चन्द्रमा और सूर्यको नाना रूपोंमें तथा छिद्रोंसे परिपूर्ण देखता है उसकी आयु एक वर्षकी होती है ॥३२॥

दीपशिखां बहुरूपां हिमदवदग्धां यथा दिशां सर्वाम् ।
यः पश्यति रोगस्थो लघुमरणं तस्य निर्दिष्टम् ॥३३॥

जो रोगी व्यक्ति दीपकके प्रकाशकी लौको अनेक रूपमें देखता है तथा दिशाओंको अग्नि या शीतसे जलते हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समयमें होती है ॥३३॥

बहुच्छिद्रान्वितं बिम्बं सूर्यचन्द्रमसोर्भुवि ।
पतन्निरीक्ष्यते यस्तु तस्यायुर्दशवासरम् ॥३४॥

जो रोगी पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमाके बिम्बको अनेक छिद्रोंसे युक्त भूमि पर गिरते हुए देखता है उसकी आयु ग्यारह (११) दिनकी होती है ॥३४॥

चतुर्दिक्षु रवीन्दूनां पश्येद् बिम्बं चतुष्टयम् ।
छिद्रं वा तद्दिनान्येव चत्वारश्च मुहूर्त्तकाः ॥३५॥

जो सूर्य या चन्द्रमाके चारों बिम्बोंको चारों दिशाओंमें देखे तो वह चार घटिका अर्थात् एक घण्टा छत्तीस मिनट (१-३६) जीवित रहता है ॥३५॥

तयोर्बिम्बं यदा नीलं पश्येदायुश्चतुर्दिनम् ।
तयोश्छिद्रे विशन्तं भ्रमरोच्चयं······॥३६॥

यदि रोगी सूर्य और चन्द्रमाके बिम्बको नील वर्णका देखता है तो उसकी आयु ४ चार दिनकी होती है। सछिद्र सूर्य और चन्द्रबिम्बमें भौंरोंके समूहको प्रवेश करते हुए देखनेसे भी चार दिनकी आयु होती है ॥३६॥

प्रज्वलद्वासधूमं वा मुञ्चद्वा रुधिरं जालम् ।
यः पश्येत् बिम्बमाकाशे तस्यायुः स्याद्दिनानि षट् ॥३७॥

जो कोई रोगी सूर्य और चन्द्र बिम्बमें से धूआँ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्रबिम्ब को जलते हुए देखे अथवा सूर्य चन्द्र बिम्बमें से रुधिर निकलते हुए देखे तो वह छह दिन जीवित रहता है ॥३७॥

बाणैर्भिन्नमिवालीढं बिम्बं कज्जलरेखया ।
यो वा पश्यति खण्डानि षण्मासं तस्य जीवितम् ॥३८॥

जो रोगी सूर्य और चन्द्र बिम्बको बाणोंसे छिन्न-भिन्न या दोनोंके बिम्बके मध्यमें काली रेखा देखता है अथवा दोनोंके बिम्बके टुकड़े होते हुए देखता है, उसकी आयु छह महीनेकी होती है ॥३८॥

रात्रौ दिनं दिने रात्रिं यः पश्येदातुरस्तथा ।
शीतलां वा शिखां दीपे शीघ्रं मृत्युं समादिशेत् ॥३९॥

जो रोगी रात्रिमें दिनका अनुभव करता है और दिनमें रात्रिका तथा दीपककी लौंको शीतल अनुभव करता है, उस रोगीकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥३९॥

तन्दुलैर्म्रियते यस्याञ्जलिस्तेषां भक्तं च पच्यते ।
अहीत्यधिकं तदा चूर्णं भक्तं स्याल्लघुमृत्यवः ॥४०॥

एक अञ्जलि चावल लेकर भात बनाया जाय यदि पक जानेके अनन्तर भात उस अञ्जलि परिमाणसे अधिक या कम हो तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥४०॥

अभिमन्त्र्यस्तत्र तनुः तच्चरणैर्मापयेच्च सन्ध्यायाम् ।
अपि ते पुनः प्रभाते सूत्रे न्यूने हि मासमायुष्कम् ॥४१॥

"ॐ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं कमले कमले विमले विमले उदरदेवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मंत्रसे सूतको मंत्रित कर उससे सायंकालमें रोगीके शिरसे लेकर पैर तक नापा जाय और प्रातःकाल पुनः उसी सूतसे शिरसे पैर तक नापा जाय, यदि प्रातःकाल नापने पर सूत छोटा हो तो वह व्यक्ति एक मास जीवित रहता है ॥४१॥

श्वेताः कृष्णाः पीताः रक्ताश्च येन दृश्यन्ते दन्ताः ।
स्वस्य परस्य च मुकुरे लघुमृत्युस्तस्य निर्दिष्टः ॥४२॥

यदि कोई व्यक्ति दर्पणमें अपने या अन्य व्यक्तिके दांतोंको काला, सफेद या पीले रंगका देखे तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥४२॥

द्वितीयायाः शशिबिम्बं पश्येत् त्रिशृङ्गपरिहीनम् ।
उपरि सधूमच्छायं खण्डं वा तस्य गतमायुः ॥४३॥

शुक्लपक्षकी द्वितीयाको यदि कोई चन्द्रमाके बिम्बको तीन कोणके साथ या बिना कोणके देखे या धूमिल रूपमें देखे तो उस व्यक्तिका शीघ्र मरण होता है ॥४३॥

अथवा मृगाङ्कहीनं मलिनं चन्द्रञ्च पुरुषसादृश्यम् ।
प्राणी पश्यति नूनं मासादूर्ध्वं भवान्तरं याति ॥४४॥

यदि कोई चन्द्रमाको मृगचिह्नसे रहित धूमिल और पुरुषाकारमें देखे तो वह एक मास जीवित रहता है ॥४४॥

इति प्रोक्तं पदार्थस्थमरिष्टं शास्त्रदृष्टितः ।
इतः परं प्रवक्ष्यामि रूपस्थञ्च यथागमम् ॥४५॥

इस प्रकार पदस्थ अरिष्टोंका शास्त्रानुसार निरूपण किया, अब रूपस्थ अरिष्टोंका आगमानुसार निरूपण करता हूँ ॥४५॥

स्वरूपं दृश्यते यत्र रूपस्थं तन्निरूप्यते ।
बहुभेदं भवेत्तत्र क्रमेणैव निगद्यते ॥४६॥

जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है, यह रूपस्थ अरिष्ट अनेक प्रकारका होता है, इसका अब क्रमशः कथन किया जायगा ॥४६॥

छायापुरुषं स्वप्नं प्रत्यक्षतया च लिङ्गनिर्दिष्टम् ।
प्रश्नगतं प्रभणन्ति तद्रूपस्थं निमित्तज्ञाः ॥४७॥

छाया पुरुष, स्वप्न दर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमान जन्य और प्रश्न द्वारा निरूपितको अरिष्ट वेत्ताओंने रूपस्थ अरिष्ट कहा है ॥४७॥

प्रक्षालितनिजदेहः सितवस्त्राद्यैर्विभूषितः ।
सम्यक् स्वच्छायामेकान्ते पश्यतु मन्त्रेण मन्त्रित्वा ॥४८॥

ॐ ह्रीं रक्ते २ रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनी देवि मम शरीरे अवतर २ छायां सत्यां कुरु २ ह्रीं स्वाहा ।

इति मन्त्रितसर्वाङ्गो मन्त्री पश्येन्नरस्य वरछायाम् ।
शुभदिवसे परिहीने जलधरपवनेन परिहीने ॥४९॥

समशुभतलेऽस्मिन् तोयतुषाङ्गारचर्मपरिहीने ।
इतरच्छायारहिते त्रिकरणशुद्ध्या प्रपश्यन्तु ॥५०॥

स्नान कर श्वेत और स्वच्छ वस्त्रोंसे सुसज्जित हो एकान्तमें "ॐ ह्रीं रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कुष्माण्डिनीदेवि मम शरीरे अवतर अवतर छायां सत्यां कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा" इस मंत्रसे शरीरको मंत्रित कर शुभ वारोंमें—अर्थात् सोम, बुध, गुरु और शुक्रवारके पूर्वाह्नमें वायु और मेघ रहित आकाशके होनेपर मन, वचन और कायकी शुद्धताके साथ समतल और जल, भूसा, कोयला, चमड़ा या अन्य किसी प्रकारकी छायासे रहित भू-पृष्ठ पर छायाका दर्शन करें ॥४८-५०॥

न पश्यति आतुरश्छायां निजां तत्रैव संस्थितः ।
दशदिनान्तरं याति धर्मराजस्य मन्दिरम् ॥५१॥

जो रोगी उक्त प्रकारके भू-पृष्ठ पर स्थित हो अपनी छायाको न देखे तो निश्चयसे वह दस दिनमें मरणको प्राप्त हो जाता है ॥५१॥

अधोमुखीं निजच्छायां छायायुग्मञ्च पश्यति ।
दिनद्वयञ्च तस्यायुर्भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥५२॥

जो रोगी व्यक्ति अपनी छायाको अधोमुखी रूपमें देखे तथा छायाको दो हिस्सोंमें विभक्त देखे तो उसकी दो दिनमें मृत्यु हो जाती है, ऐसा श्रेष्ठ मुनियोंने कहा है ॥५२॥

मन्त्री न पश्यति छायामातुरस्य निमित्तिकाम् ।
सम्यक् निरीक्ष्यमाणोऽपि दिनमेकं स जीवति ॥५३॥

यदि रोगी व्यक्ति उपर्युक्त मंत्रका जापकर छाया पर दृष्टि रखते हुए भी उसे न देख सके तो उसका जीवन एक दिनका समझना चाहिए ॥५३॥

वृषभकरिमहिषरासभमहिषादिकविविधरूपाकारैः ।
पश्येत् स्वछायां लघुमरणं तस्य सम्भवति ॥५४॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छायाको बैल, हाथी, कौआ, गधा, भेड़ा और घोड़ा इत्यादि अनेक रूपोंमें देखता है तो उसका तत्काल मरण जानना चाहिए ॥५४॥

छायाबिम्बं ज्वलत्प्रान्तं सधूमं वीक्ष्यते निजम् ।
नीयमानं नरैः कृष्णैस्तस्य मृत्युर्लघु मतः ॥५५॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छायाको अग्निसे प्रज्वलित धूमसे आच्छादित और कृष्णवर्णके व्यक्तियोंके द्वारा ले जाते हुए देखता है तो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥५५॥

नीलां पीतां तथा कृष्णां छायां रक्तां पश्यति ।
त्रिचतुःपञ्चषड्रात्रं क्रमेणैव स जीवति ॥५६॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छायाको नीली, पीली, काली और लाल देखता है तो वह क्रमशः तीन चार पाँच और छह दिन रात तक जीवित रहता है ॥५६॥

मुद्गरसबलछुरिकानाराचखड्गादिशस्त्रघातेन ।
चूर्णीकृतनिजबिम्बं पश्यति दिनसप्तकं चायुः ॥५७॥

जो कोई व्यक्ति अपनी छायाको मुद्गर, छुरी, बर्छी, भाला, बाण आदिसे टुकड़े किये जाते हुए देखता है उसकी आयु सात दिनकी होती है ॥५७॥

निजच्छाया तथा प्रोक्ता परच्छायापि तादृशी ।
विशेषोऽप्युच्यते कश्चिद्यो दृष्टः शास्त्रवेदिभिः ॥५८॥

इस प्रकार निजछाया दर्शन और उसके फलाफलका वर्णन किया है। परच्छाया दर्शनका फल भी निजच्छाया दर्शनके समान ही समझना चाहिए। किन्तु शास्त्रोंके मर्मज्ञोंने जो प्रधान विशेषताएँ बतलायी हैं उनका वर्णन किया जाता है ॥५८॥

रूपी तरुणः पुरुषो न्यूनाधिकमानवर्जितो नूनम् ।
प्रक्षालितसर्वाङ्गो विलिप्यते स्वेन गन्धेन ॥५९॥

एक अत्यन्त सुन्दर युवकको जो न नाटा हो न लम्बा हो, स्नान कराके उज्ज्वल सुगन्धित गन्ध लेपनसे युक्त करें ॥५९॥

अभिमन्त्र्य तस्य कायं पश्चादुक्ते महीतले विमले ।
छायां पश्यतु स नरो धृत्वा तं रोगिणं हृदये ॥६०॥

उस उत्तम पुरुषके शरीरको पूर्वोक्त—"ॐ ह्रीं रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कुष्माण्डिनीदेवि अस्य शरीरे अवतर अवतर छायासत्यां कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा" मंत्रसे मंत्रित कर स्वच्छ भूमिपर स्थित हो उस व्यक्तिसे रोगीका ध्यान कराते हुए छायाका दर्शन करे ॥६०॥

या वक्रा प्राङ्मुखीच्छायाऽर्द्धा वाधोमुखवर्तिनी ।
दृश्यते रोगिणो यस्य स जीवति दिनद्वयम् ॥६१॥

जिस रोगीका ध्यान कर छायाका दर्शन किया जाय, यदि छाया टेढ़ी, अधोमुखी, पराङ्मुखी दिखायी पड़े तो वह रोगी दो दिन जीवित रहता है ॥६१॥

हसन्ती कथयेन्मासं रुदन्ती च दिनद्वयम् ।
धावन्ती त्रिदिनं छाया पादैका च चतुर्दिनम् ॥६२॥

हँसती हुई छाया देखनेसे एक महीनेकी आयु, रोती हुई छाया देखनेसे दो दिनकी आयु, दौड़ती हुई छाया देखनेसे तीन दिनकी आयु और एक पैरकी छाया देखनेसे चार दिनकी आयु समझनी चाहिए ॥६२॥

वर्षद्वयं तु हस्तैका कर्णहीनैकवत्सरम् ।
केशहीनैकषण्मासं जानुहीना दिनैकयम् ॥६३॥

एक हाथसे हीन छाया दिखलायी पड़नेपर दो वर्षकी आयु, एक कानसे रहित छाया दिखलायी पड़नेपर एक वर्षकी आयु, केशसे रहित छाया दिखलायी पड़नेपर छह महीना और जानुसे रहित दिखलायी पड़नेपर एक दिनकी आयु होती है ॥६३॥

बाहुसितासमायुक्तं कटिहीना दिनद्वयम् ।
दिनार्धं शिरसा हीना सा षण्मासमनासिका ॥६४॥

श्वेत बाहुसे युक्त तथा कमरसे रहित छाया दिखलायी पड़े तो दो दिनकी आयु होती है। शिरसे रहित छाया दिखलायी पड़े तो आधे दिनकी आयु एवं नासिका रहित छाया दिखलायी पड़े तो छह महीनेकी आयु होती है ॥६४॥

हस्तपादाग्रहीना वा त्रिपक्षं सार्द्धमासकम् ।
अग्निस्फुलिङ्गान् मुञ्चन्ती लघुमृत्युं समादिशेत् ॥६५॥

हाथ और पाँवसे रहित छाया दिखलायी पड़े तो तीन पक्ष या डेढ़ महीनेकी आयु समझनी चाहिए। यदि छाया अग्नि स्फुलिंगोंको उगलती हुई दिखलायी पड़े तो शीघ्र मृत्यु समझनी चाहिए ॥६५॥

रक्तं मज्जाम्बु मुञ्चन्ती पूतितैलं तथा जलम् ।
एकद्वित्रिदिनान्येव दिनार्द्धं दिनपञ्चकम् ॥६६॥

रक्त, चर्बी, जल और तैलको उगलती हुई छाया दिखलायी पड़े तो क्रमशः एक दो तीन डेढ़ दिन और पाँच दिनकी आयु समझनी चाहिए ॥६६॥

परछायाविशेषोऽयं निर्दिष्टः पूर्वसूरिभिः ।
निजच्छायाफलं चोक्तं सर्वं बोद्धव्यमत्र च ॥६७॥
उक्ता निजपरच्छाया शास्त्रदृष्ट्या समासतः ।
इतः परं ब्रुवे छायापुरुषं लोकसम्मतम् ॥६८॥

पूर्वाचार्योंने परछायाके सम्बन्धमें ये विशेष बातें बतलायी हैं। अवशेष अन्य बातोंको निजच्छायाके समान समझ लेना चाहिए। संक्षेपमें शास्त्रानुसार निजपर छायाका यह वर्णन किया गया है, इसके अनन्तर लोकसम्मत छायापुरुषका वर्णन करते हैं ॥६७-६८॥

मदमदनविकृतिहीनः पूर्वविधानेन वीक्ष्यते ।
सम्यक् मन्त्री स्वपरच्छायां छायापुरुषः कथ्यते सद्भिः ॥६९॥

वह मंत्रित व्यक्ति निश्चयसे छाया पुरुष है जो अभिमान विषय-वासना और छल-कपटसे रहित होकर पूर्वोक्त कूष्माण्डिनी देवीके मंत्रके जाप द्वारा पवित्र होकर अपनी छायाको देखता है ॥६९॥

समभूमितले स्थित्वा समचरणयुगप्रलम्बभुजयुगलः ।
बाधारहिते घर्मे विवर्जिते क्षुद्रजन्तुगणैः ॥७०॥

जो समतल—बराबर चौरस भूमिमें खड़ा होकर पैरोंको समानान्तर करके हाथोंको लटकाकर, बाधा रहित और छोटे जीवोंसे रहित [सूर्यकी धूपमें छायाका दर्शन करता है] वह छायापुरुष कहलाता है ॥७०॥

नासाग्रे स्तनमध्ये गुह्ये चरणान्तदेशे ।
गगनतलेऽपि छायापुरुषो दृश्यते निमित्तज्ञैः ॥७१॥

निमित्तज्ञोंने उसे छायापुरुष कहा है जिसका सम्बन्ध नाकके अग्रभागसे, दोनों स्तनोंके मध्यभागसे, गुह्याङ्गोंसे, पैरके कोनेसे, आकाशसे, अथवा ललाटसे हो ॥७१॥

विशेष—छायापुरुषकी व्युत्पत्ति कोषमें 'छायायां पुरुषः दृष्टः पुरुषाकृतिविशेषः' की गई है अर्थात् आकाशमें अपनी छायाकी भाँति दिखायी देनेवाला पुरुष छायापुरुष कहलाता है। तंत्रमें बताया गया है—पार्वतीजीने शिवजीसे भावी घटनाओंको अवगत करनेके लिए उपाय पूछा, उसीके उत्तरमें शिवने छायापुरुषके स्वरूपका वर्णन किया है। बताया गया है कि मनुष्य शुद्ध चित्त होकर अपनी छाया आकाशमें देख सकता है। उसके दर्शनसे पापोंका नाश और छह मासके भीतर होनेवाली घटनाओंका ज्ञान किया जा सकता है। पार्वतीने पुनः पूछा-मनुष्य कैसे अपनी भूमिकी छायाको आकाशमें देख सकता है? और कैसे छह माह आगेकी बात मालूम हो सकती है? महादेवजीने बताया कि आकाशके मेघशून्य और निर्मल होनेपर निश्चल चित्तसे अपनी छायाकी ओर मुँहकर खड़ा हो गुरुके उपदेशानुसार अपनी छायामें कण्ठ देखकर निर्निमेष नयनोंसे संमुखस्थ गगनतलको देखनेपर स्फटिक मणिवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखलायी देता है, इस छायापुरुषके दर्शन विशुद्ध चरित्र वाले व्यक्तियोंको पुण्योदयके होने पर ही होते हैं। अतः गुरुके वचनोंका विश्वास कर उनकी सेवा-शुश्रूषा द्वारा छायापुरुष सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर उसका दर्शन करना चाहिए। छायापुरुषके देखनेसे छह मास तक मृत्यु नहीं होती, लेकिन छाया पुरुषके मस्तक शून्य देखनेसे छह मासके भीतर ही मृत्यु अवश्यम्भावी है ॥७१॥

छायाबिम्बं स्फुटं पश्येद्यावत्तावत् स जीवति ।
व्याधिविघ्नादिभिस्त्यक्तः सर्वसौख्याद्यधिष्ठितः ॥७२॥

छायापुरुषके स्पष्ट रूपसे देखने पर व्यक्ति दीर्घजीवी होता है तथा व्याधि, विघ्न इत्यादि से रहित होकर सुखी रूपमें निवास करता है ॥७२॥

आकाशे विमले छायापुरुषं हीनमस्तकम् ।
यस्यार्थं वीक्ष्यते मन्त्री षण्मासं सोऽपि जीवति ॥७३॥

यदि निर्मल आकाशमें मंत्रित व्यक्ति छायापुरुषको बिना मस्तकके देखे तो जिस रोगीके लिए छायापुरुषका दर्शन किया जा रहा है वह छह मास जीवित रहता है ॥७३॥

पादहीने नरे दृष्टे जीवितं वत्सरत्रयम् ।
जङ्घाहीने समायुक्तं जानुहीने च वत्सरम् ॥७४॥

मंत्रित पुरुषको छायापुरुष बिना पैरके दिखलायी पड़े तो जिसके लिए देखा जा रहा है वह व्यक्ति तीन वर्ष तक जीवित रहता है, जंघाहीन और घुटनेहीन छायापुरुष दिखलायी पड़े तो एक वर्ष तक जीवित रहता है ॥७४॥

उरोहीने तथाष्टादशमासा अपि जीवति ।
पञ्चदश कटिहीनेऽष्टौ मासान् हृदयं विना ॥७५॥

यदि छायापुरुष हृदय रहित दिखलायी पड़े तो आठ महीनेकी आयु, वक्षस्थल रहित दिखलायी पड़े तो अठारह महीनेकी आयु और कटिहीन दिखलायी पड़े तो पन्द्रह महीनेकी आयु समझनी चाहिए ॥७५॥

षड्दिनं गुह्यहीनेऽपि करहीने चतुर्दिनम् ।
बाहुहीने त्वहर्युग्मं स्कन्धहीने दिनैककम् ॥७६॥

यदि छायापुरुष गुप्ताङ्गोंसे रहित दिखलायी पड़े तो छह दिनकी आयु और हाथसे रहित दिखलायी पड़े तो चार दिनकी आयु और बाहुहीन दिखलायी पड़े तो दो दिनकी आयु और स्कन्ध हीन दिखलायी पड़े तो एक दिनकी आयु समझनी चाहिए ॥७६॥

यो नरोऽत्रैव सम्पूर्णः साङ्गोपाङ्गैर्विलोक्यते ।
स जीवति चिरं कालं न कर्त्तव्योऽत्र संशयः ॥७७॥

जो मनुष्य सम्पूर्ण अंगोपाङ्गोंसे सहित छायापुरुषका दर्शन करता है वह चिरकाल तक जीवित रहता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥७७॥

आस्तां तु जीवितं मरणं लाभालाभं शुभाशुभम् ।
यच्चिन्तितमनेकार्थं छायामात्रेण वीक्ष्यते ॥७८॥

जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, शुभाशुभ इत्यादि अनेक बातें छायापुरुषके दर्शनसे जानी जा सकती हैं ॥७८॥

स्वप्नफलं पूर्वगतं त्वध्याये चाधुना परः ।
निमित्तं शेषमपि तत्र किञ्चिन् प्रकथ्यते सूत्रतः क्रमशः ॥७९॥

यद्यपि स्वप्नफलका निरूपण पूर्व अध्यायमें हो चुका है फिर भी सूत्र क्रमानुसार फल ज्ञात करनेके लिए स्वप्नका निरूपण किया जा रहा है ॥७९॥

दशपञ्चवर्षैस्तथा पञ्चदशादिनैः क्रमतः ।
रजनीनां प्रतियामं स्वप्नः फलत्येवायुषः प्रश्ने ॥८०॥

आयुके विचार-क्रममें रात्रिके विभिन्न प्रहरोंमें देखे गये स्वप्नोंका फल क्रमशः दस वर्ष, पाँच वर्ष, पाँच दिन तथा दस दिनमें प्राप्त होता है ॥८०॥

शेषप्रश्नविशेषे द्वादशषट्त्र्येकमासकैरेव ।
स्वप्नः क्रमेण फलति प्रतियामं शर्वरी दृष्टः ॥८१॥

आयुके अतिरिक्त शेष प्रकारके प्रश्नोंका फल रात्रिके विभिन्न प्रहरोंके अनुसार क्रमशः बारह छह तीन और एक महीनेमें प्राप्त होता है ॥८१॥

करचरणजानुमस्तकजङ्घांसोदरविभङ्गिते दृष्टे ।
जिनबिम्बस्य च स्वप्ने तस्य फलं कथ्यते क्रमशः ॥८२॥

हाथ, पैर, घुटने, मस्तक, जंघा, कन्धा तथा उदरके स्वप्नमें भङ्गित होनेका फल तथा स्वप्नमें जिनबिम्बके दर्शनका फल क्रमशः वर्णन करेंगे ॥८२॥

करभङ्गे चतुर्मासैः त्रिमासैः पदभङ्गतः ।
जानुभङ्गे तु वर्षेण मस्तके दिनपञ्चभिः ॥८३॥

स्वप्नमें करभङ्ग (हाथका टूटना) देखनेसे चार महीनेमें मृत्यु, पदभङ्ग देखनेसे तीन महीनेमें, जानुभङ्ग देखनेसे एक वर्षमें और मस्तक भङ्ग देखनेसे ५ दिनमें मृत्यु होती है ॥८३॥

वर्षयुग्मेन जङ्घायामंसहीने द्विपक्षतः ।
ब्रूयात् प्रातः फलं मन्त्री पक्षेणोदरभङ्गतः ॥८४॥

स्वप्नमें समस्त जंघाका टूटना देखनेसे दो वर्षमें मृत्यु, और कन्धेका भङ्ग होना देखनेसे दो पक्षमें मृत्यु एवं उदर भङ्ग देखनेसे एक पक्षमें मृत्यु होती है। स्वप्नदर्शक मंत्रका प्रयोग कर तथा स्वच्छ और शुद्धतापूर्वक जब रात्रिमें शयन करता है तभी स्वप्नका उक्त फल घटित होता है ॥८४॥

छत्रस्य परिवारस्य भङ्गे दृष्टे निमित्तवित् ।
नृपस्य परिवारस्य ध्रुवं मृत्युं समादिशेत् ॥८५॥

स्वप्नमें राजाके छत्रका भंग देखनेसे राजाके परिवारके किसी व्यक्तिकी मृत्यु होती है ॥८५॥

विलयं याति यः स्वप्ने भक्ष्यते ग्रहवायसैः ।
अथ करोति यश्छर्दिं मासयुग्मं स जीवति ॥८६॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें अपना विलयन तथा गृद्ध और कौओं द्वारा अपना मांस भक्षण देखता है एवं चर्बीका वमन करते हुए देखता है उसकी दो महीनेकी आयु होती है ॥८६॥

महिषोष्ट्रखरारूढो नीयते दक्षिणं दिशम् ।
घृततैलादिभिर्लिप्तो मासमेकं स जीवति ॥८७॥

स्वप्नमें घृत और तैलसे स्नात व्यक्ति महिष (भैंसा), ऊँट और गधेके ऊपर सवार हो दक्षिण दिशाकी ओर जाता हुआ दिखलायी पड़े तो एक महीनेकी आयु समझनी चाहिए ॥८७॥

ग्रहणं रविचन्द्राणां नाशं वा पतनं भुवि ।
रात्रौ पश्यति यः स्वप्ने त्रिपक्षं तस्य जीवनम् ॥८८॥

यदि रात्रिके समय स्वप्नमें सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहोंका विनाश अथवा पृथ्वीपर पतन दिखलायी पड़े, तो तीन पक्षकी आयु समझनी चाहिए ॥८८॥

गृहादाकृष्य नीयेत कृष्णैर्मर्त्यैर्भयप्रदैः ।
काष्ठायां यमराजस्य शीघ्रं तस्य भवान्तरम् ॥८९॥

यदि स्वप्नमें कृष्णवर्णके भयङ्कर व्यक्ति घरसे खींचकर दक्षिण दिशाकी ओर ले जाते हुए दिखलायीं पड़े तो शीघ्र ही मरण होता ॥८६॥

भियते यस्तु शस्त्रेण स्वयं युद्धचति कोपतः ।
अथवा हन्ति तान् स्वप्ने तस्यायुर्दिनविंशतिः ॥६०॥

जो स्वप्नमें अपनेको किसी अस्त्रसे कटा हुआ देखता है अथवा अस्त्रद्वारा अपनी मृत्युके दर्शन करता है अथवा अस्त्रोंको ही तोड़ देता है उसकी मृत्यु बीस दिनमें ही हो जाती है ॥६०॥

यो नृत्यन् नीयते बद्ध्वा रक्तपुष्पैरलङ्कृतः ।
सन्निवेशं कृतान्तस्य मासादूर्ध्वं स नश्यति ॥६१॥

जो स्वप्नमें मृतकके समान लाल फूलोंसे सजाया हुआ नृत्य करते हुए दक्षिण दिशाकी ओर अपनेको बाँधकर ले जाते हुए देखता है वह निश्चित रूपसे एक मास जीवित रहता है ॥६१॥

तैलपूरितगर्तायां रक्तकीकसपूरिभिः ।
स्वं मग्नं वीक्ष्यते स्वप्ने मासार्द्धं म्रियते स वै ॥६२॥

जो स्वप्नमें रुधिर, चर्बी, पीप (पीव), चमड़ा, घी और तेलका गड्ढेमें गिरकर डूबता हुआ देखता है उसकी निश्चित १५ दिनोंमें मृत्यु हो जाती है ॥६२॥

बन्धनेऽथ वरस्थाने मोक्षे प्रयाणके ध्रुवम् ।
सौरभेये सिते दृष्टे यशोलाभं निरन्तरम् ॥६३॥

स्वप्नमें श्वेत गाय बँधी हुई, चलती हुई, ठहरी हुई तथा खूँटेसे खुली हुई दिखलायी पड़े तो हमेशा यश प्राप्ति होती है ॥६३॥

नदीवृक्षसरोभूभृत् गृहकुम्भान् मनोहरान् ।
स्वप्ने पश्यति शोकार्त्तः सोऽपि शोकेन मुच्यते ॥६४॥

स्वप्नमें नदी, वृक्ष, तालाब, पर्वत, घर तथा सुन्दर मनोहर कलश दिखलायी पड़े तो दुःखी व्यक्ति भी दुःखसे मुक्त हो जाता है ॥६४॥

शयनाशनजं पानं गृहं वस्त्रं सभूषणम् ।
सालङ्कारं द्विपं वाहं पश्यन् शर्मकदम्बभाक् ॥६५॥

जो स्वप्नमें सोना, भोजन, पान, घर, वस्त्राभूषण, अलङ्कार, हाथी तथा अन्य वाहन आदि का दर्शन करता है उसे सभी प्रकारके सुख उपलब्ध होते हैं ॥६५॥

पताकामसियष्टिं च पुष्पमालां सशक्तिकाम् ।
काञ्चनं दीपसंयुक्तं लात्वा बुद्धो धनं भजेत् ॥६६॥

यदि स्वप्नमें पताका, तलवार, लाठी, पुष्पमाला, आदिको स्वर्ण दीपकके द्वारा देखता हुआ दिखलायी पड़े तो धनकी प्राप्ति होती है ॥६६॥

वृश्चिकं दन्दशूकं वा कीटकं वा भयप्रदम् ।
निर्भयं लभते यस्तु धनलाभो भविष्यति ॥९७॥

जो स्वप्नमें बिच्छू, साँप तथा अन्य भयकारक जन्तुओंसे निर्भय अवस्थाको प्राप्त होते हुए देखे उसे धनलाभ होता है ॥९७॥

पुरीषं छर्दितं मूत्रं रक्तं रेतो वसान्वितम् ।
भक्षयेत् घृणया हीनस्तस्य शोकविमोचनम् ॥९८॥

जो स्वप्नमें टट्टी, वमन, मूल, रक्त, वीर्य, चर्बी इत्यादिक घृणित वस्तुओंको घृणा रहित भक्षण करते हुए देखे उसका शोक नष्ट होता है ॥९८॥

वृषकुञ्जरप्रासादक्षीरवृक्षशिलोच्चये ।
आरोहणं शुभस्थाने दृष्टमुन्नतिकारणम् ॥९९॥

जो स्वप्नमें बैल, हाथी, महल, पीपल, बड़, पर्वत एवं घोड़ेके ऊपर चढ़ता हुआ देखे उसकी उन्नति होती है ॥९९॥

भूपकुञ्जरगोवाहधनलक्ष्मीमनोभुवः ।
भूषितानामलङ्कारैर्दर्शनं विधिकारणम् ॥१००॥

जो स्वप्नमें राजा, हाथी, गाय, सवारी, धन, लक्ष्मी, कामदेव तथा अलङ्कार और आभूषणों से युक्त पुरुषका दर्शन करता है उसकी भाग्यकी वृद्धि होती है ॥१००॥

पयोधिं तरति स्वप्ने भुङ्क्ते प्रासादमस्तके ।
दैवतः लभते मन्त्रं तस्य वैश्वर्यमद्भुतम् ॥१०१॥

जो स्वप्नमें अपनेको समुद्र पार करते हुए, महलके ऊपर भोजन करते हुए तथा किसी अभीष्ट देवतासे मन्त्र प्राप्त करते हुए देखता है, उसे अद्भुत ऐश्वर्यकी प्राप्ति होती है ॥१०१॥

शुभ्रालङ्कारवस्त्राढ्या प्रमदा प्रियदर्शना ।
श्लिष्यति यं नरं स्वप्ने तस्य सम्पत्समागमः ॥१०२॥

जिसे स्वप्नमें स्वच्छ वस्त्रों और अलङ्कारोंसे युक्त सुन्दर स्त्रियाँ आलिङ्गन करती हुई दिखलाई पड़ें, उसे सम्पत्तिकी प्राप्ति होती है ॥१०२॥

सूर्यचन्द्रमसौ पश्येदुदयाचलमस्तके ।
स लात्यभ्युदयं मर्त्यो दुःखं तस्य च नश्यति ॥१०३॥

जो स्वप्नमें उदयाचल पर सूर्य और चन्द्रमाको उदय होते हुए देखे उस मनुष्यको धनकी प्राप्ति होती है तथा उसका दुःख नष्ट हो जाता है ॥१०३॥

बन्धनं बाहुपाशेन निगडैः पादबन्धनम् ।
स्वस्य पश्यति यः स्वप्ने लाति मान्यं सुपुत्रकम् ॥१०४॥

जो स्वप्नमें अपने हाथ और पाँवको बँधा हुआ देखता है उसे पुत्रकी प्राप्ति होती है ॥१०४॥

दृश्यते श्वेतसर्पेण दक्षिणाङ्गं पुमान् भुवि।
महान् लाभो भवेत्तस्य बुद्धयते यदि शीघ्रतः ॥१०५॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें अपनी दाहिनी ओर श्वेत साँपको देखता है और स्वप्न दर्शनके पश्चात् तत्काल उठ जाता है, उसे अत्यन्त लाभ होता है ॥१०५॥

अगम्यागमनं पश्येदपेयं पानकं नरः।
विद्यार्थकामलाभस्तु जायते तस्य निश्चितम् ॥१०६॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें अगम्या स्त्रीके साथ समागम करते हुए देखता है तथा अपेय वस्तुओंको पीते हुए देखता है, उसे विद्या, विषयसुख और अर्थलाभ होता है ॥१०६॥

सफेनं पिबति क्षीरं रौप्यभाजनसंस्थितम्।
धनधान्यादिसम्पत्तिर्विद्यालाभस्तु तस्य वै ॥१०७॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें चाँदीके वर्तनमें स्थित फेन सहित दूधको पीते हुए देखता है, उसे निश्चयसे धन-धान्य आदि सम्पत्तिकी प्राप्ति तथा विद्याका लाभ होता है ॥१०७॥

घटिताघटितं हेम पीतं पुष्पं फलं तथा।
तस्मै दत्ते जनः कोऽपि लाभस्तस्य सुवर्णजः ॥१०८॥

जो व्यक्ति स्वप्नमें स्वर्णाभूषण स्वर्ण, पीत पुष्प या फलको अन्य किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण करते हुए देखता है, उसे स्वर्णकी, स्वर्णाभूषणोंकी प्राप्ति होती है ॥१०८॥

शुभं वृषेभवाहानां कृष्णानामपि दर्शनम्।
शेषाणां कृष्णद्रव्याणामालोको निन्दितो बुधैः ॥१०९॥

स्वप्नमें कृष्णवर्णके बैल, हाथी आदि वाहनोंका दर्शन शुभकारक होता है तथा अन्य कृष्ण वर्णकी वस्तुओंका दर्शन विद्वानों द्वारा निन्दित कहा गया है ॥१०९॥

दध्नेष्टसज्जनप्रेमगोधूमैः सौख्यसङ्गमः।
जिनपूजा यवैर्दृष्टः सिद्धार्थैर्लभते शुभम् ॥११०॥

स्वप्नमें दधि—दहीके दर्शनसे सज्जन-प्रेमकी प्राप्ति, गेहूँके दर्शनसे सुखकी प्राप्ति, जौके दर्शनसे जिनपूजाकी प्राप्ति एवं पीली सरसोंके देखनेसे शुभ-फलकी प्राप्ति होती है ॥११०॥

शयनाशनयानानां स्वाङ्गवाहनवेश्मनाम्।
दाहं दृष्ट्वा ततो बुद्धो लभते कामितां श्रियम् ॥१११॥

स्वप्नमें शयन, आसन, सवारी और मकानका जलना देखनेके उपरान्त शीघ्र ही जाग जानेसे अभीष्ट वस्तुकी प्राप्ति होती है ॥१११॥

निजान्त्रै वेष्टयेद् ग्रामं स भवेन् मण्डलाधिपः।
नगरं वेष्टयेद्यस्तु स पुनः पृथिवीपतिः ॥११२॥

जो स्वप्नमें अपने शरीरकी नसोंसे गाँवको वेष्टित करते हुए देखे वह मंडलाधिप तथा जो नगरको वेष्टित करते हुए देखे वह पृथ्वीपति–राजा होता है ॥११२॥

सरोमध्ये स्थितः पात्रे पायसं यो हि भक्ष्यति ।
आसनस्थस्तु निश्चिन्तः स महाभूमिपो भवेत् ॥११३॥

जो स्वप्नमें तालाबमें स्थितको, बर्तनमें रखी हुई खीरको निश्चिन्त होकर खाते हुए देखता है, वह चक्रवर्ती राजा होता है ॥११३॥

देवेष्टा पितरो गात्रो लिङ्गिनो मुखस्थस्त्रियः ।
वरं ददति यं स्वप्ने सस्तथैव भविष्यति ॥११४॥

स्वप्नमें देवपूजिका, पितर-व्यन्तर आदिकी भक्ता, या देवका आलिगन करने वाली नारी जिस प्रकारका वरदान देती हुई दिखलायी पड़ें, उसी प्रकारका फल समझना चाहिए ॥११४॥

सितं छत्रं सितं वस्त्रं सितं कर्पूरचन्दनम् ।
लभते पश्यते स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥११५॥

जो स्वप्नमें श्वेत छत्र, श्वेत वस्त्र, श्वेत चन्दन एवं कपूर आदि वस्तुओंको प्राप्त करते हुए देखता है, उसे सभी प्रकारके अभ्युदय प्राप्त होते हैं ॥११५॥

पतन्ति दशना यस्य निजकेशाश्चमस्तकात् ।
स्वधनमित्रयोर्नाशो बाधा भवति शरीरके ॥११६॥

जो स्वप्नमें अपने दाँतोंको गिरते हुए तथा अपने सिरसे बालोंको गिरते या झड़ते हुए देखता है, उसके धन और बान्धव नाशको प्राप्त होते हैं और शारीरिक कष्ट भी उसे होता है॥११६॥

दंष्ट्री शृङ्गी वराहो वा वानरो मृगनायकः ।
अभिद्रवन्ति यं स्वप्ने भवेत्तस्य महद्भयम् ॥११७॥

जो स्वप्नमें अपने पीछे दाँतवाले और सींगवाले शूकर, बन्दर एवं सिंह आदि प्राणियोंको दौड़ते हुए देखता है, उसे महान् भय प्राप्त होता है ॥११७॥

घृततैलादिभिः स्वाङ्गे वाभ्यङ्गं निशि पश्यति ।
यस्ततो बुद्ध्यते स्वप्ने व्याधिस्तस्य प्रजायते ॥११८॥

जो स्वप्नमें अपने शरीरमें घी या तैलकी मालिश करते हुए देखता है तथा स्वप्न दर्शनके पश्चात उसकी निद्रा खुल जाती है, उसे रोगोत्पत्ति होती है ॥११८॥

रक्तवस्त्राद्यलङ्कारैर्भूषिता प्रमदा निशि ।
यमालिङ्गति सस्नेहा विपत्तस्य महत्यपि ॥११९॥

जो स्वप्नमें रात्रिके समय लालवर्णके वस्त्रालंकारोंसे युक्त नारीका सस्नेह आलिंगन करते हुए देखता है, उसे महती विपत्तिका सामना करना पड़ता है ॥११९॥

पीतवर्णप्रसूनैर्वालिङ्कृता पीतवाससा ।
स्वप्ने गृहति यं नारी रोगस्तस्य भविष्यति ॥१२०॥

जो स्वप्नमें पीतवर्णके पुष्पों द्वारा अलंकृत तथा पीतवर्णके वस्त्रोंसे सज्जित नारी द्वारा अपनेको छिपाया हुआ देखे तो वह शीघ्र ही रोगी होता है ॥१२०॥

पुरीषं लोहितं स्वप्ने मूत्रं वा कुरुते तथा ।
तदा जागर्ति यो मर्त्यो द्रव्यं तस्य विनश्यति ॥१२१॥

जो स्वप्नमें लालवर्णकी टट्टी करते हुए या लालवर्णका मूत्र करते हुए देखे तथा स्वप्न दर्शनके पश्चात् जाग जाय तो उसका धन नाश होता है ॥१२१॥

विष्ठां लोमानि रौद्रं वा कुङ्कुमं रक्तचन्दनम् ।
दृष्ट्वा यो बुद्ध्यते सुप्तो यस्तस्यार्थो विलीयते ॥१२२॥

जिसे स्वप्नमें विष्टा—टट्टी, रोंम, अग्नि, कुंकुम—रोरी एवं लालचन्दन दिखलायी पड़े और स्वप्न दर्शनके अनन्तर निद्रा टूट जाय, उसके धनका विनाश होता है ॥१२२॥

रक्तानां करवीराणामुत्पन्नानामुपानहम् ।
लाभे वा दर्शनं स्वप्ने प्रयातस्य विनिर्दिशेत् ॥१२३॥

यदि स्वप्नमें लाल-लाल तलवार धारण किये हुए वीर पुरुषोंके जूतेका दर्शन या लाभ हो तो यात्राकी सफलता समझनी चाहिए ॥१२३॥

कृष्णवाहाधिरूढो यः कृष्णवासो विभूषितः ।
उद्विग्नश्च दिशो याति दक्षिणां गत एव सः ॥१२४॥

स्वप्नमें कृष्ण सवारीके ऊपर आरूढ़ कृष्ण वस्त्रोंसे विभूषित एवं उद्विग्न दक्षिण दिशाकी ओर जाते हुए देखे तो मृत्यु समझनी चाहिए ॥१२४॥

कृष्णा च विकृता नारी रौद्राक्षी च भयप्रदा ।
कर्षति दक्षिणाशायां यं ज्ञेयो मृत एव सः ॥१२५॥

स्वप्नमें जिस व्यक्तिको काली कलूटी विकृतवर्णकी भयानक नारी दक्षिण दिशाकी ओर खींचती हुई दिखलायी पड़े तो उसकी मृत्यु समझनी चाहिए ॥१२५॥

मुण्डितं जटिलं रूक्षं मलिनं नीलवाससम् ।
रुष्टं पश्यति यः स्वप्ने भयं तस्य प्रजायते ॥१२६॥

जो स्वप्नमें मुण्डित, जटिल, रूक्ष, मलिन और नील वस्त्र धारण किये हुए रुष्ट रूपमें अपनेको देखता है उसे भयकी प्राप्ति होती है ॥१२६॥

दुर्गन्धं पाण्डुरं भीमं तापसं व्याधिविकृतिम् ।
पश्यति स्वप्ने ग्लानिं तस्य निरूपयेत् ॥१२७॥

स्वप्नमें दुर्गन्धयुक्त पीले एवं भयङ्कर व्याधि युक्त तपस्वीके देखनेसे ग्लानि होती है ॥१२७॥

वृक्षं वल्लीं क्षुपगुल्मं वाल्मीकिं निजाङ्कगाम् ।
दृष्ट्वा जागर्ति यः स्वप्ने ज्ञेयस्तस्य धनक्षयः ॥१२८॥

जो स्वप्नमें वृक्षलता, छोटे-छोटे वृक्ष गुल्म या वल्मीकि—वाम्बीको अपनी गोदीमें देखता है और स्वप्न दर्शनके पश्चात् जाग जाता है तो उसके धनका विनाश होता है ॥१२८॥

खर्जूरोऽप्यनलो वेणुगुल्मो वाप्यहितो द्रुमः।
मस्तके तस्य जायेत गत एव स निश्चितम् ॥१२९॥

स्वप्नमें जिसके मस्तकपर खजूर, अग्नि संयुक्त बाँस लता एवं वृक्ष पैदा हुए दिखलायी पड़े उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥१२९॥

हृदये वा समुत्पन्नात् हृद्रोगेण स नश्यति।
शेषाङ्गेषु प्ररूढास्ते तत्तदङ्गविनाशकाः ॥१३०॥

जो स्वप्नमें वक्षस्थलपर उपर्युक्त खजूर, बाँस आदिकको उत्पन्न हुआ देखे या जो देखता है उसको हृदय रोगसे मृत्यु होती है तथा शरीरके शेषाङ्गोंमेंसे जिस अङ्गपर उक्त पदार्थोंको उत्पन्न होते हुए देखता है उन-उन अङ्गोंका विनाश होता है ॥१३०॥

रक्तस्रवरसूत्रैर्वा रक्तपुष्पैर्विशेषतः।
यदङ्गं वेष्ट्यते स्वप्ने तदेवाङ्गं विनश्यति ॥१३१॥

जो स्वप्नमे अपने जिस अंगको लालसूत लालपुष्प, या रक्त लता, तन्तुओंसे वेष्टित देखता है उसके उस अंगका विनाश होता है ॥१३१॥

द्विपो ग्रहो मनुष्यो वा स्वप्ने कर्षति यं नरम्।
मोक्षं बद्धस्य बन्धे वा मुक्तिं च समादिशेत् ॥१३२॥

स्वप्नमें जिस मनुष्यको जो हाथी मगर या मनुष्यके द्वारा खींचते हुए देखता है उसकी कारागारसे मुक्ति होती है ॥१३२॥

मधु छत्रं विशेत् स्वप्ने दिवा वा यस्य वेश्मनि।
अर्थनाशो भवेत्तस्य मरणं वा विनिर्दिशेत् ॥१३३॥

स्वप्नमे जिसके घरमें दिनमें या रात्रि मधु-मक्खीका छत्ता प्रवेश होते हुए दिखलाई पड़े, उसका धन नाश अथवा मरण होता है ॥१३३॥

विरेचनेऽर्थनाशः स्यात् छर्दने मरणं ध्रुवम्।
वाहे पादपछत्राणां गृहाणां ध्वंसमादिशेत् ॥१३४॥

जो स्वप्नमें विरेचन अर्थात् दस्त लगते हुए देखता है उसके धनका नाश होता है। वमन करते हुए देखनेसे मरण होता है। वृक्षकी चोटीपर चढ़ते हुए देखनेसे घरका नाश होता है ॥१३४॥

स्वगाने रोदनं विद्यात् नर्तने वधबन्धनम्।
हसने शोकसन्तापं गमने कलहं तथा ॥१३५॥

स्वप्नमें अपनेको गाना गाते हुए देखनेसे रोना, नाचना देखनेसे वधबन्धन, हँसना देखनेसे शोक-सन्ताप एवं गमन देखनेसे कलह आदि फल प्राप्त होते हैं ॥१३५॥

सर्वेषां शुभ्रवस्त्राणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम्।
भस्मास्थितक्रकार्पासदर्शनं न शुभप्रदम् ॥१३६॥

स्वप्नमें स्वच्छ—श्वेत वस्त्रका देखना उत्तम फलदायक है किन्तु भस्म, हड्डी, मट्ठा और कपासका देखना अशुभ है ॥१३६॥

शुक्लमाल्यां शुक्लालङ्कारादीनां धारणं शुभम् ।
रक्तपीतादिवस्त्राणं धारणं न शुभं मतम् ॥१३७॥

स्वप्नमें शुक्ल माल्य और अलंकार आदिका धारण करना शुभ है। रक्त, पीत एवं नीलादि वस्त्रोंका धारण करना शुभ नहीं है ॥१३७॥

मन्त्रज्ञः पापदूरस्थो वातादिदोषजस्तथा ।
दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च चिन्तोत्पन्नः स्वभावजः ॥१३८॥
पुण्यं पापं भवेद्दैवं मन्त्रज्ञो वरदो मतः ।
तस्मात्तौ सत्यभूतौ च शेषाः षट्निष्फलाः स्मृताः ॥१३९॥

स्वप्न आठ प्रकारके होते हैं—पाप रहित मंत्र साधना द्वारा सम्पन्न मंत्रज्ञ स्वप्न, वातादि दोषोंसे उत्पन्न दोषज, दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, चिन्तोत्पन्न, स्वभावज, पुण्य-पापके ज्ञापक दैव। इन आठ प्रकारके स्वप्नोंमें मंत्रज्ञ और दैव स्वप्न सत्य होते हैं। शेष छह प्रकारके स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं ॥१३८-१३९॥

मलमूत्रादिबाधोत्य आधि-व्याधिसमुद्भवः ।
मालास्वभावदिवास्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलाः ॥१४०॥

मल-मूत्र आदिकी बाधासे उत्पन्न होनेवाले स्वप्न, आधि-व्याधि अर्थात् रोगादिसे उत्पन्न स्वप्न, आलस्य इत्यादिसे उत्पन्न स्वप्न, दिवा स्वप्न एवं जागृत अवस्थामें देखे गये पदार्थोंके संस्कारसे उत्पन्न स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं ॥१४०॥

शुभः प्रागशुभः पश्चादशुभः प्राक् शुभस्ततः ।
पाश्चात्यः फलदः स्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ॥१४१॥

उक्त स्वप्न शुभ, पूर्वमें शुभ पश्चात् अशुभ फल देते हैं, किन्तु जागृत अवस्थाके संस्कारसे उत्पन्न स्वप्न निष्फल होते हैं ॥१४१॥

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ।
शुभे जाते पुनः स्वप्ने सफलः स तु तुष्टिकृत् ॥१४२॥

अशुभ स्वप्नके आनेपर व्यक्ति स्वप्नके पश्चात् जगकर पुनः सो जाय तो अशुभ स्वप्नका फल नष्ट हो जाता है यदि अशुभ स्वप्नके अनन्तर पुनः शुभ स्वप्न दिखलायी पड़े तो अशुभ फल नष्ट होकर शुभ फलकी प्राप्ति होती है ॥१४२॥

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने जप्त्वा पञ्चनमस्क्रियाम् ।
दृष्टे स्वप्ने शुभेनैव दुःस्वप्ने शान्तिमाचरेत् ॥१४३॥

अशुभ स्वप्नके दिखलायी पड़नेपर जगकर णमोकार मंत्रका पाठ करना चाहिए। यदि अशुभ स्वप्नके पश्चात् शुभ स्वप्न आये तो दुष्ट स्वप्नकी शान्तिका उपाय करनेकी आवश्यकता नहीं ॥१४३॥

स्वं प्रकाश्य गुरोरग्रे सुधीः स्वप्नं शुभाशुभम् ।
परेषामशुभं स्वप्नं पुरो नैव प्रकाशयेत् ॥१४४॥

बुद्धिमान् व्यक्तिको अपने गुरुके समक्ष शुभ और अशुभ स्वप्नोंका कथन करना चाहिए, किन्तु अशुभ स्वप्नको गुरुके अतिरिक्त अन्य व्यक्तिके समक्ष कभी भी नहीं प्रकाशित करना चाहिए ॥१४४॥

निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा पूर्वशास्त्रानुसारतः ।
लिङ्गेन तं ब्रुवे इष्टं निर्दिष्टं च यथागमम् ॥१४५॥

पूर्व शास्त्रोंके अनुसार स्वप्न निमित्तका वर्णन किया गया है अब लिङ्गके इसके इष्टानिष्टका आगमानुकूल वर्णन करते हैं ॥१४५॥

शरीरं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं जलमध्यगम् ।
यथोक्तं गौतमेनैव तथैवं प्रोच्यते मया ॥१४६॥

प्रथम लिङ्ग शरीर है और द्वितीय लिङ्ग जल मध्यम जिस प्रकारका पहले गौतम स्वामीने वर्णन किया है वैसा ही मैं वर्णन करता हूँ ॥१४६॥

स्नातं लिप्तं सुगन्धेन वरमन्त्रेण मन्त्रितम् ।
अष्टोत्तरशतेनापि यन्त्री पश्येत्तदङ्गकम् ॥१४७॥

ॐ ह्रीं लाः ह्रः पः लक्ष्मी भवीं कुरु कुरु स्वाहा ।

स्नानकर सुगन्धित लेप लगाकर १०८ बार निम्न मंत्रसे मंत्रित होकर स्वप्नका दर्शन करें। इस प्रकार स्वप्नका देखना ही मंत्रज कहलाता है। "ॐ ह्रीं लाः ह्रः पः लक्ष्मीं भवीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्रका १०८ बार जाप करना चाहिए ॥१४७॥

सर्वाङ्गेषु यदा तस्य लीयते मक्षिकागणः ।
षण्मासं जीवितं तस्य कथितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥१४८॥

जिस व्यक्तिके समस्त शरीरपर अकारण ही अधिक मक्खियाँ लगती हों तो उसकी आयु ज्ञानियोंने छह महीने बतलायी है। यहाँसे प्रत्यक्ष अरिष्टोंका वर्णन आचार्य करते हैं ॥१४८॥

दिग्भागं हरितं पश्येत् पीतरूपेण शुभ्रकम् ।
गन्धं किञ्चिन्न यो वेत्ति मृत्युस्तस्य विनिश्चितम् ॥१४९॥

जिसको अकारण ही दिशाएँ हरी, पीली और शुभ्र रूपमें दिखलायी पड़ें तथा गन्धका ज्ञान भी जिसे न हो उसकी मृत्यु निश्चित है ॥१४९॥

शशिसूर्यौ गतौ यस्य मुखस्वात्योपशीतलौ ।
मरणं तस्य निर्दिष्टं शीघ्रतोऽरिष्टवेदिभिः ॥१५०॥

जिसे सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी न पड़े तथा जिसके मुखसे श्वाँस अधिक और तेजीसे निकलता हो उसका शीघ्र मरण विद्वानोंने कहा है ॥१५०॥

जिह्वामलं न मुञ्चति न वेत्ति रसना रसम् ।
निरीक्षते न रूपञ्च सप्तदिनं स जीवति ॥१५१॥

जिसकी जिह्वाके ऊपर सर्वदा अधिक मैल रहता हो तथा जिसे किसी भी रसका स्वाद न आता हो और न वस्तुओंके रूपको देख पाता हो उसकी आयु सात दिनकी होती है ॥१५१॥

वह्निचन्द्रौ न पश्येच्च शुभ्रं वदति कृष्णकम् ।
तुङ्गच्छायां न जानाति मृत्युस्तस्य समागतः ॥१५२॥

जिसे अग्नि और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ते हों और काली वस्तु श्वेत मालूम पड़ती हो, उन्नत छाया परिज्ञान न हो उसकी आसन्न मृत्यु रहती है ॥१५२॥

मन्त्रित्वा स्वमुखं रोगी जानुदघ्ने जले स्थितः ।
न पश्येत् स्वमुखच्छायां षण्मासं तस्य जीवितम् ॥१५३॥

जो रोगी मंत्रित होकर घुटने पर्यन्त जलमें खड़ा हो अपने मुखकी छाया—प्रतिबिम्ब न देख सके उसकी आयु छह महीनेकी होती है ॥१५३॥

ॐ ह्रीं ला: ह्वः पः लक्ष्मीं क्ष्वीं कुरु कुरु स्वाहा ।

भृतं मन्त्रिततैलेन मार्जितं ताम्रभाजनम् ।
पिहितं शुक्लवस्त्रेण सन्ध्यायां स्थापयेत् सुधीः ॥१५४॥
तस्योपरि पुनर्दत्वा नूतनां कुण्डिकां ततः ।
जातिपुष्पैर्जपेदेवं स्वष्टाधिकशतं ततः ॥१५५॥
क्षीरान्नभोजनं कृत्वा भूमौ सुप्येत मन्त्रिणा ।
प्रातः पश्येत्स तत्रैव तैलमध्ये निजं मुखम् ॥१५६॥
निजास्यं चेन्न पश्येच्च षण्मासं च जीवति ।
इत्येवं च समासेन द्विधा लिङ्गं प्रभाषितम् ॥१५७॥

अब आचार्य तैलमें मुख दर्शनकी विधि द्वारा आयुका निश्चय करनेकी प्रक्रिया बतलाते हैं कि "ॐ ह्रीं ला: ह्वः पः लक्ष्मी क्ष्वीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्र द्वारा मंत्रित हो और उत्तम तांबेके तैलसे युक्त एक सुन्दर साफ या स्वच्छ बर्तनको सन्ध्या समय शुक्ल वस्त्रसे ढँककर रक्खें पुनः उसके ऊपर एक नवीन कुण्डिका स्थापितकर उपर्युक्त मंत्रका जुहीके पुष्पोंसे १०८ बार जाप करें, तत्पश्चात् खीरका भोजन कर मंत्रित व्यक्ति भूमिपर शयन करें और प्रातःकाल उठकर उस तैलमें अपने मुखको देखे। यदि अपना मुख इस तैलमें न दिखलायी पड़े तो छह मासकी आयु समझनी चाहिए। इस प्रकार संक्षेपमें आचार्यने दोनों प्रकारके लिङ्गोंका वर्णन किया है ॥१५४-१५७॥

शब्दनिमित्तं पूर्वं स्नात्वा निमित्ततः शुचिवासा विशुद्धधीः ।
अम्बिकाप्रतिमां शुद्धां स्नापयित्वा रसादिकैः ॥१५८॥
अर्चित्वा चन्दनैः पुष्पैः श्वेतवस्त्रसुवेष्टिताम् ।
प्रक्षिप्य वामकक्षायां गृहीत्वा पुरुषस्ततः ॥१५९॥

शब्द निमित्तका वर्णन करते हुए आचार्यने बतलाया है कि शब्द दो प्रकारके होते हैं—दैवी और प्राकृतिक। यहाँ दैवी शब्दका कथन किया जा रहा है। स्नानकर स्वच्छ और शुभ्र वस्त्र धारण करे। अनन्तर अम्बिकाकी मूर्तिका जल, दुग्धादिसे अभिषेककर श्वेत वस्त्रोंसे उसे आच्छादित करे। पश्चात् चन्दन, पुष्प, नैवेद्य आदिसे उसकी पूजा करे। अनन्तर बायें हाथके नीचे रखकर [शब्द सुननेके लिए निम्न विधिका प्रयोग करे] ॥१५८-१५९॥

निशायाः प्रथमे यामे प्रभाते यदि वा व्रजेत् ।
इमं मन्त्रं पठन् व्यक्तं श्रोतुं शब्दं शुभाशुभम् ॥१६०॥

ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनी (नि) ब्राह्मणि वद वद वागीश्वरी (रि) स्वाहा ।

पुरवीथ्यां व्रजन् शब्दमाद्यं श्रुत्वा शुभाशुभम् ।
स्मरन् व्यावर्तते तस्मादागत्य प्रविचारयेत् ॥१६१॥

निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा पूर्वशास्त्रानुसारतः ।
लिङ्गेन तं ब्रुवे इष्टं निर्दिष्टं च यथागमम् ॥१४५॥

पूर्व शास्त्रोंके अनुसार स्वप्न निमित्तका वर्णन किया गया है अब लिङ्गके इसके इष्टानिष्टका आगमानुकूल वर्णन करते हैं ॥१४५॥

शरीरं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं जलमध्यगम् ।
यथोक्तं गौतमेनैव तथैवं प्रोच्यते मया ॥१४६॥

प्रथम लिङ्ग शरीर है और द्वितीय लिङ्ग जल मध्यम जिस प्रकारका पहले गौतम स्वामीने वर्णन किया है वैसा ही मैं वर्णन करता हूँ ॥१४६॥

स्नातं लिप्तं सुगन्धेन वरमन्त्रेण मन्त्रितम् ।
अष्टोत्तरशतेनापि यन्त्री पश्येत्तदङ्गकम् ॥१४७॥

ॐ ह्रीं लाः ह्वः पः लक्ष्मीं भवीं कुरु कुरु स्वाहा ।

स्नानकर सुगन्धित लेप लगाकर १०८ वार निम्न मंत्रसे मंत्रित होकर स्वप्नका दर्शन करें। इस प्रकार स्वप्नका देखना ही मंत्रज कहलाता है। "ॐ ह्रीं लाः ह्वः पः लक्ष्मीं भवीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्रका १०८ बार जाप करना चाहिए ॥१४७॥

सर्वाङ्गेषु यदा तस्य लीयते मक्षिकागणः ।
षण्मासं जीवितं तस्य कथितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥१४८॥

जिस व्यक्तिके समस्त शरीरपर अकारण ही अधिक मक्खियाँ लगती हों तो उसकी आयु ज्ञानियोंने छह महीने बतलायी है। यहाँसे प्रत्यक्ष अरिष्टोंका वर्णन आचार्य करते हैं ॥१४८॥

दिग्भागं हरितं पश्येत् पीतरूपेण शुभ्रकम् ।
गन्धं किञ्चिन्न यो वेत्ति मृत्युस्तस्य विनिश्चितम् ॥१४९॥

जिसको अकारण ही दिशाएँ हरी, पीली और शुभ्र रूपमें दिखलायी पड़ें तथा गन्धका ज्ञान भी जिसे न हो उसकी मृत्यु निश्चित है ॥१४९॥

शशिसूर्यौ गतौ यस्य मुखस्वात्योपशीतलौ ।
मरणं तस्य निर्दिष्टं शीघ्रतोऽरिष्टवेदिभिः ॥१५०॥

जिसे सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी न पड़े तथा जिसके मुखसे श्वाँस अधिक और तेजीसे निकलता हो उसका शीघ्र मरण विद्वानोंने कहा है ॥१५०॥

जिह्वामलं न मुञ्चति न वेत्ति रसना रसम् ।
निरीक्षते न रूपञ्च सप्तदिनं स जीवति ॥१५१॥

जिसकी जिह्वाके ऊपर सर्वदा अधिक मैल रहता हो तथा जिसे किसी भी रसका स्वाद न आता हो और न वस्तुओंके रूपको देख पाता हो उसकी आयु सात दिनकी होती है ॥१५१॥

वह्निचन्द्रौ न पश्येच्च शुभ्रं वदति कृष्णकम् ।
तुङ्गच्छायां न जानाति मृत्युस्तस्य समागतः ॥१५२॥

जिसे अग्नि और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ते हों और काली वस्तु श्वेत मालूम पड़ती हो, उन्नत छाया परिज्ञान न हो उसकी आसन्न मृत्यु रहती है ॥१५२॥

मन्त्रित्वा स्वमुखं रोगी जानुदघ्ने जले स्थितः ।
न पश्येत् स्वमुखच्छायां षण्मासं तस्य जीवितम् ॥१५३॥

जो रोगी मंत्रित होकर घुटने पर्यन्त जलमें खड़ा हो अपने मुखकी छाया—प्रतिबिम्ब न देख सके उसकी आयु छह महीनेकी होती है ॥१५३॥

ॐ ह्रीं ला: ह्रः पः लक्ष्मीं मत्वीं कुरु कुरु स्वाहा ।

भृतं मन्त्रिततैलेन मार्जितं ताम्रभाजनम् ।
पिहितं शुक्लवस्त्रेण सन्ध्यायां स्थापयेत् सुधीः ॥१५४॥
तस्योपरि पुनर्दत्वा नूतनां कुण्डिकां ततः ।
जातिपुष्पैर्जपेदेवं स्वष्टाधिकशतं ततः ॥१५५॥
क्षीरान्नभोजनं कृत्वा भूमौ सुप्येत मन्त्रिणा ।
प्रातः पश्येत्स तत्रैव तैलमध्ये निजं मुखम् ॥१५६॥
निजास्यं चेन्न पश्येच्च षण्मासं च जीवति ।
इत्येवं च समासेन द्विधा लिङ्गं प्रभाषितम् ॥१५७॥

अब आचार्य तैलमें मुख दर्शनकी विधि द्वारा आयुका निश्चय करनेकी प्रक्रिया बतलाते हैं कि "ॐ ह्रीं ला: ह्रः पः लक्ष्मीं मत्वीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्र द्वारा मंत्रित हो और उत्तम तांबेके तैलसे युक्त एक सुन्दर साफ या स्वच्छ बर्तनको सन्ध्या समय शुक्ल वस्त्रसे ढँककर रखे पुनः उसके ऊपर एक नवीन कुण्डिका स्थापितकर उपर्युक्त मंत्रका जुहीके पुष्पोंसे १०८ बार जाप करें, तत्पश्चात् खीरका भोजन कर मंत्रित व्यक्ति भूमिपर शयन करे और प्रातःकाल उठकर उस तैलमें अपने मुखको देखे। यदि अपना मुख इस तैलमें न दिखलायी पड़े तो छह मासकी आयु समझनी चाहिए। इस प्रकार संक्षेपमें आचार्यने दोनों प्रकारके लिङ्गोंका वर्णन किया है ॥१५४-१५७॥

शब्दनिमित्तं पूर्वं स्नात्वा निमित्ततः शुचिवासा विशुद्धधीः ।
अम्बिकाप्रतिमां शुद्धां स्नापयित्वा रसादिकैः ॥१५८॥
अर्चित्वा चन्दनैः पुष्पैः श्वेतवस्त्रसुवेष्टिताम् ।
प्रक्षिप्य वामकक्षायां गृहीत्वा पुरुषस्ततः ॥१५९॥

शब्द निमित्तका वर्णन करते हुए आचार्योंने बतलाया है कि शब्द दो प्रकारके होते हैं—दैवी और प्राकृतिक। यहाँ दैवी शब्दका कथन किया जा रहा है। स्नानकर स्वच्छ और शुभ्र वस्त्र धारण करे। अनन्तर अम्बिकाकी मूर्तिका जल, दुग्धादिसे अभिषेककर श्वेत वस्त्रोंसे उसे आच्छादित करे। पश्चात् चन्दन, पुष्प, नैवेद्य आदिसे उसकी पूजा करे। अनन्तर बायें हाथके नीचे रखकर [शब्द सुननेके लिए निम्न विधिका प्रयोग करे] ॥१५८-१५९॥

निशायाः प्रथमे यामे प्रभाते यदि वा व्रजेत् ।
इमं मन्त्रं पठन् व्यक्तं श्रोतुं शब्दं शुभाशुभम् ॥१६०॥

ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनी (नि) सत्यानि वद वद वागीश्वरी (रि) स्वाहा ।

पृथ्वीव्यां व्रजन् शब्दमाद्यं श्रुत्वा शुभाशुभम् ।
स्मरन् व्यावर्तते तस्मादागत्य प्रविचारयेत् ॥१६१॥

रात्रिके प्रथम प्रहरमें या प्रातःकालमें "ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनि ब्राह्मणि देवि वद वद वागीश्वरि स्वाहा" इस मंत्रका जापकर शुभाशुभ शब्द सुननेके निमित्त नगरमें भ्रमण करे। इस प्रकार नगरकी सड़कों और गलियोंमें भ्रमण करते समय जो कोई शुभ या अशुभ शब्द पहले सुनाई पड़े, उसे सुनकर वापस लौट आवे और उसी शब्दके अनुसार शुभाशुभ फल अवगत करे। अर्थात् अशुभ शब्द सुननेसे मृत्यु, वेदना, पीड़ा आदि फल तथा शुभ शब्द सुननेसे नीरोगता, स्वास्थ्यलाभ एवं कार्यसिद्धि आदि शुभ फल प्राप्त होते हैं ॥१६०-६१॥

अर्हदादिस्तवो राजा सिद्धिर्बुद्धिस्तु मङ्गलम् ।
वृद्धिश्री जयऋद्धिश्च धनधान्यादिसम्पदः १६२॥
जन्मोत्सवप्रतिष्ठाद्याः देवेष्टयादिशुभक्रियाः ।
द्रव्यादिनामश्रवणाः शुभाः शब्दाः प्रकीर्तिताः ॥१६३॥

नगरमें भ्रमण करते समय प्रथम शब्द अर्हन्त भगवान्का नाम, उनका स्तवन, राजा, सिद्धि, बुद्धि, जय, वृद्धि, चन्द्रमा, श्री, ऋद्धि, धन-धान्य, सम्पत्ति, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठोत्सव, देव-पूजन, द्रव्यादिका नाम आदि शब्दोंका सुनना शुभ बतलाया गया है ॥१६२-१६३॥

अम्बिकाशब्दनिमित्तं छत्रमालाध्वजागन्धपूर्णकुम्भादिसंयुतः ।
वृषाश्च गृहिणः पुंसः सपुत्राः भूषितास्त्रियः ॥१६४॥

अम्बिका देवी, छत्र, माला, ध्वज, गन्ध संयुक्त कलश, बैल, गृहस्थ, पुत्र सहित अलंकृत स्त्री इत्यादिका दर्शन सभी कार्योंमें शुभ होता है। शब्दप्रकरण होनेसे उक्त वस्तुओंके नामोंका श्रवण भी शुभ माना जाता है ॥१६३३-१६४॥

इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठं सर्वकार्येषु सिद्धिदम् ।
छत्रादिपातभङ्गादि दर्शनं शोभनं न हि ॥१६५॥

किसी भी कार्यके आरम्भमें छत्रभंग, छत्रपात आदिका दर्शन और शब्दश्रवण अशुभ समझा जाता है। अर्थात् उक्त वस्तुओंके दर्शन या उक्त वस्तुओंके नामोंको सुननेसे कार्यसिद्धिमें नाना प्रकारकी बाधाएँ आती हैं ॥१६५॥

विशेष—वसन्तराज शकुनमें शुभ-शकुनोंका वर्णन करते हुए बताया है कि दधि, घृत, दूर्वा, तण्डुल-चावल, जल पूर्ण कुम्भ, श्वेत सर्षप, चन्दन, दर्पण, शंख, मत्स्य, मृत्तिका, गोरोचन, गोधूलि, देवमूर्ति, फल, पुष्प, अञ्जन, अलंकार, ताम्बूल, भात, आसन, मद्य, ध्वज, छत्र, माला, व्यञ्जन, वस्त्र, पद्म—कमल, भृंगार, प्रज्वलित अग्नि, हाथी, बकरी, कुश, चामर, रत्न, सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, औषधि, पल्लव, एवं हरित घासका दर्शन किसी भी कार्यके आरम्भमें सिद्धिदायक बताया गया है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु-रस्सी, कीचड़, कार्पास-कपास, दाल या फलोंके छिलके, अस्थि, मूत्र, मल, मलिन व्यक्ति, अपांग या विकृत व्यक्ति, लोहा, काले वर्णका अनाज, पत्थर, केश, साँप, तेल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तक्र, शृंखला, रजस्वला स्त्री, विधवा स्त्री एवं दीना, मलिन-वदन, मुक्तकेशा स्त्रीका दर्शन किसी भी कार्यमें अशुभ होता है।

नष्टो भग्नश्च शोकस्थः पतितो लुञ्चितो गतः ।
शान्तितः पातितो बद्धो भीतो दष्टश्च घूर्णितः ॥१६६॥
भग्नो बद्धो हतः कालः प्रदग्धः खण्डितो मृतः ।
उद्वासितः पुनर्ग्राम इत्याद्याः दुःखदाः स्मृताः ॥१६७॥

नष्ट, भग्न, दुःखी, मुण्डित शिर, गिरता-पड़ता, बद्ध, भयभीत, दन्तहीन, चोर, रस्सी या शृंखलासे जकड़ा, घायल, वेदनाग्रस्त, जला हुआ, खण्डित, मुर्दा, गाँवसे निष्कासित होनेके पश्चात् पुनः गाँवमें निवास करनेवाला इत्यादि प्रकारके व्यक्तियोंका दर्शन दुःखप्रद होता है ॥१६६-१६७॥

इत्येवं निमित्तकं सर्वं कार्यं निवेदनम् ।
मन्त्रोऽयं जपितः सिद्धयेद्वीरस्य प्रतिमाग्रतः ॥१६८॥

इस प्रकार कार्यसिद्धिके लिए निमित्तोंका परिज्ञान करना चाहिए। निम्न मन्त्रकी भगवान् महावीरकी प्रतिमाके सम्मुख साधना करनी चाहिए। मन्त्रजाप करनेसे ही सिद्ध हो जाता है ॥१६८॥

अष्टोत्तरशतैर्पुष्पैः मालतीनां मनोहरैः ।
ॐ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा ।
मन्त्रेणानेन हस्तस्य दक्षिणस्य च तर्जनी ।
अष्टाधिकशतं वारमभिमन्त्य मषीकृतम् ॥१६९॥

भगवान् महावीर स्वामीकी प्रतिमाके समक्ष उत्तम मालतीके पुष्पोंसे "ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा" इस मन्त्रका १०८ बार जाप करनेसे मन्त्र सिद्ध हो जायगा। पश्चात् मन्त्र साधक अपने दाहिने हाथकी तर्जनीको एक सौ आठ बार मन्त्रितकर रोगीकी आँखोंपर रखे ॥१६९॥

तर्जन्यां स्थापयेद्भूमौ रविबिम्बं सुवर्तुलम् ।
रोगी पश्यति चेद्बिम्बमायुःषण्मासमध्यगम् ॥१७०॥

उपर्युक्त क्रियाके अनन्तर रोगीको भूमिकी ओर देखनेको कहे। यदि रोगी भूमिपर सूर्यके गोलाकार बिम्बका दर्शन करे तो छः महीने की आयु समझनी चाहिए ॥१७०॥

इत्यङ्गुलिप्रश्ननिमित्तं शतवारं सुधीमन्त्यपावनम् ।
कांस्यभाजने तेन प्रक्षाल्य हस्तयुगलं रोगिणः पुनः ॥१७१॥
एकवर्णाजदुग्धक्षीराष्टाधिकैः शतबिन्दुभिः ।
प्रक्षाल्य दीयते लेपो गोमूत्रक्षीरयोः क्रमात् ॥१७२॥
प्रक्षालितकरयुगलश्चिन्तय दिनमासक्रमशः ।
पञ्चदशवामहस्ते पञ्चदशतिथिश्च दक्षिणे पाणौ ॥१७३॥

इस प्रकार अँगुली प्रश्नका वर्णन किया। अब अलक्त और गोरोचन प्रश्नविधिका निरूपण करते हैं। विद्वान् व्यक्ति 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' मन्त्रका जापकर किसी काँसेके वर्तनमें अलक्त—लाक्षाको भरकर मन्त्रित करे। अनन्तर रोगीके हाथ, पैर आदि अंगोंको धोकर शुद्ध करे। पश्चात् गोमूत्र, दूध और सुगन्धित जलसे रोगीके हाथोंका प्रक्षालन करे। अनन्तर दिन, महीना और वर्षका चिन्तन करे। पन्द्रहकी संख्याको बायें हाथमें और पन्द्रहकी संख्याको दाहिने हाथमें कल्पना करे ॥१७१-१७३॥

शुक्लं पक्षं वामे दक्षिणहस्ते च चिन्तयेत् कृष्णम् ।
प्रतिपत्प्रमुखास्तिथय उभकरयोः पर्वरेखासु ॥१७४॥

बायें हाथमें शुक्लपक्षकी और दाहिने हाथमें कृष्णपक्षकी कल्पना करे। प्रतिपदादि तिथियोंकी दोनों हाथकी पर्वरेखाओं—गाँठ स्थानोंपर कल्पना करे ॥१७४॥

एकद्वित्रिचतुःसंख्यमरिष्टं तत्र चिन्तयेत् ।

यदि उक्त क्रियाके अनन्तर पर्व रेखाओंमें एक, दो, तीन और चार संख्यामें कृष्ण रेखाएँ दिखलायी पड़े तो अरिष्ट समझना चाहिए ॥१७५½॥

हस्तयुगलं तथोद्वर्त्य प्रातः गोरोचनरसैः ॥१७५॥
अभिमन्त्रितशतवारं पश्येच्च करयुगलम् ।
करे करपर्वणि यावन्मात्राश्च बिन्दवः कृष्णाः ॥१७६॥
दिनानि तावन्मात्राणि मासान् वा वत्सराणि वा ।
स्वस्थितो जीवति प्राणी वीक्षितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥१७७॥

प्रातःकाल लाक्षा प्रश्नके समान स्नानादि क्रियाओंसे निवृत्त होकर उपर्युक्त मन्त्रसे मन्त्रित हो सौ बार मन्त्रित गोरोचनरससे हाथोंका प्रक्षालनकर दोनों हाथोंका दर्शन करे। उक्त क्रिया करनेवाला रोगी व्यक्ति उतने ही दिन, मास और वर्ष तक जीवित रहता है, जितने कृष्णबिन्दु उसके हाथके पर्वोंमें लगे रहते हैं, इस प्रकारका कथन ज्ञानियोंका है ॥१७५½–१७७॥

विशेष—अलक्त प्रश्नकी विधि यह है कि किसी चौरस भूमिको एक वर्णकी गायके गोबरसे लीपकर उस स्थानपर 'ओं ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्रको १०८ बार जपना चाहिए। फिर काँसेके वर्तनमें अलक्तको भरकर सौ बार मन्त्रसे मन्त्रित कर उक्त भूमि पर उस वर्तनको रख देना चाहिए, पश्चात् रोगीके हाथोंको गोमूत्र और दूधसे धोकर दोनों हाथोंपर मन्त्र पढ़ते हुए दिन, मास और वर्षकी कल्पना करनी चाहिए। अनन्तर पुनः सौ वार उक्त मन्त्रको पढ़कर उक्त अलक्तसे रोगीके हाथ धोने चाहिए। इस क्रियाके पश्चात् रोगीके हाथ धोना चाहिए। उसके हाथोंके सन्धि स्थानोंमें जितने बिन्दु काले रंगके दिखलायी पड़ें, उतने ही दिन, मास और वर्षकी आयु समझनी चाहिए।

गोरोचन प्रश्नकी विधि यह है कि अलक्त प्रश्नके समान एक वर्णकी गायके गोबरसे भूमिको लीपकर उपर्युक्त मन्त्रसे १०८ बार मन्त्रित कर काँसेके वर्तनमें गोरोचनको रखकर सौ बार मन्त्रसे मन्त्रित करना चाहिए। पश्चात् रोगीके हाथ गोमूत्र और दूधसे धोकर मन्त्र पढ़ते हुए हाथोंपर वर्ष, मास और दिनकी कल्पना करनी चाहिए। पुनः सौ बार मन्त्रित गोरोचनसे रोगीके हाथ धुलाकर उन हाथोंसे रोगीके मरण-समयकी परीक्षा करनी चाहिए। रोगीके हाथोंके सन्धि स्थानोंमें जितने काले रंगके बिन्दु दिखलायी पड़ें, उतने ही संख्यक दिन, मास और वर्षमें उसकी मृत्यु समझनी चाहिए।

रोचनाकुङ्कुमैर्लाक्षानामिकारक्तसंयुता ।
षोडशाक्षरं लिखेत्पद्मं तद्वहिश्चैव तत्समम् ॥१७८॥
षोडशाक्षरतो बाह्ये मूलबीजं दले दले ।
प्रथमे च दले वर्षान्मासांश्चैव वहिर्दले ॥१७९॥

दिवसान् षोडशीरेव साध्यनामसुकर्णिके ।
सप्ताहं पूजयेच्चक्रं तदा तं च निरीक्षयेत् ॥१८०॥

छाया, कुंकुम, गोरोचना इत्यादि विधियोंसे आयुकी परीक्षा करनेके उपरान्त चक्र द्वारा आयु परीक्षाकी विधिका निरूपण करते हैं ॥१७७½॥

सोलह दलका एक कमल भीतर तथा इस कमलके बाहर भी सोलह दलका एक दूसरा कमल बनाना चाहिए। बाह्य कमलके पत्तों पर अ आ आदि मूल स्वरोंको स्थापना करनी चाहिए। भीतरवाले कमलके पत्तों पर वर्षोंकी तथा बाहरवाले कमलके पत्तों पर महीनोंको स्थापना करनी चाहिए। कर्णिकाओंमें दिवसोंकी स्थापना करनी चाहिए। इस प्रकार निर्मित चक्रकी एक सप्ताह तक पूजा करनी चाहिए, पश्चात् उसका निरीक्षण कर शुभाशुभ फलकी जानकारी प्राप्त करनेकी चेष्टा करनी चाहिए ॥१७७½-१८०॥

यद्दले चाक्षरं लुप्तं तद्दिने म्रियते ध्रुवम् ।
वर्षं मासं दिनं पश्येत् स्वस्य नाम परस्य वा ॥१८१॥

निरीक्षण करने पर जिस तिथि, मास या वर्षकी स्थापनावाले दलका स्वर लुप्त हो, उसी तिथि, मास और वर्षमें अपनी या अन्य व्यक्तिकी—जिसके लिए परीक्षा की जा रही है, मृत्यु समझनी चाहिए ॥१८१॥

यदा वर्णं न लुप्तं स्यात्तदा मृत्युर्न विद्यते ।
वर्षं द्वादशपर्यन्तं कालज्ञानं विनोदितम् ॥१८२॥

यदि कोई भी स्वर लुप्त न हो तो जिसके सम्बन्धमें विचार किया जा रहा है, उसकी मृत्यु नहीं होती। इस चक्र द्वारा बारह वर्षकी आयुका ही ज्ञान किया जाता है ॥१८२॥

प्रभूतवस्त्रदाश्विनी भरण्यर्थापहारिणी ।
प्रदह्याग्निदैवते प्रजेश्वरेऽर्थसिद्धये ॥१८३॥

अश्विनी नक्षत्रमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे बहुत वस्त्र मिलते हैं, भरणीमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे अर्थकी हानि होती है, कृत्तिकामें वस्त्र धारण करनेसे वस्त्र दग्ध होता है, रोहिणीमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे धन प्राप्ति होती है ॥१८३॥

मृगे तु मूषकाद्भयं व्यसुत्वमेव शाङ्करे ।
पुनर्वसौ शुभागमस्तदग्रभे धनैर्युतिः ॥१८४॥

मृगशिरामें नवीन वस्त्र धारण करनेसे वस्त्रोंको चूहोंके काटनेका भय, आर्द्रामें नवीन वस्त्र धारण करनेसे मृत्यु, पुनर्वसुमें वस्त्र धारण करनेसे शुभकी प्राप्ति और पुष्यमें वस्त्र धारण करनेसे धनलाभ होता है ॥१८४॥

भुजङ्गमे विलुप्यते मघासु मृत्युमादिशेत् ।
भगाह्वये नृपाद्भयं धनागमाय चोत्तरा ॥१८५॥

आश्लेषामें पहननेसे वस्त्रका नष्ट हो जाना, मघा नक्षत्रमें मृत्यु, पूर्वाफाल्गुनीमें राजासे भय एवं उत्तराफाल्गुनीमें वस्त्रधारण करनेसे धनकी प्राप्ति होती है ॥१८५॥

करेण धर्मसिद्धयः शुभागमस्तु चित्रया ।
शुभं च भोज्यमानिले द्विदैवते जनप्रियः ॥१८६॥

हस्तमें वस्त्र धारण करनेसे कार्यसिद्धि होती है, चित्रामें शुभकी प्राप्ति, स्वातीमें उत्तम भोजनका मिलना एवं विशाखामें जनप्रिय होता है ॥१८६॥

सुहृद्युतिश्च मित्रभे पुरन्दरेऽम्बरक्षयः ।
जलाप्लुतिश्च नैऋते रुजो जलाधिदैवते ॥१८७॥

अनुराधामें वस्त्र धारण करनेसे मित्र समागम, ज्येष्ठामें वस्त्रका क्षय, मूलमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे जलमें डूबना और पूर्वाषाढ़ामें रोग होता है ॥१८७॥

मिष्टमन्नमथ विश्वदैवते वैष्णवे भवति नेत्ररोगता ।
धान्यलब्धिमपि वासवे विदुर्वारुणे विषकृतं महद्भयम् ॥१८८॥

उत्तराषाढ़ामें मिष्टान्नकी प्राप्ति, श्रवणमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे नेत्ररोग, धनिष्ठामें नवीन वस्त्र धारण करनेसे अन्नलाभ एवं शतभिषामें विषका बहुत भय होता है ॥१८८॥

भद्रपदासु भयं सलिलोत्थं तत्परतश्च भवेत्सुतलब्धिः ।
रत्नयुतिं कथयन्ति च पौष्णे योऽभि नवाम्बरमिच्छति भोक्तुम् ॥

पूर्वाभाद्रपदामें जलभय, उत्तराभाद्रपदामें पुत्रलाभ और रेवती नक्षत्रमें नवीन वस्त्र धारण करनेसे रत्नलाभ होता है ॥१८९॥

वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति देवा नराश्च पाशान्तशान्तमध्ये ।
शेषास्त्रयश्चात्र निशाचरांशास्तथैव शयनासनपादुकासु ॥१९०॥

नवीन वस्त्र धारण करते समय उसके शुभाशुभत्वका विचार निम्न प्रकार करना चाहिए। नये वस्त्रके नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्रके कोणोंके चार भागोंमें देवता, पाशान्तके दो भागोंमें मनुष्य और मध्यके तीन भागोंमे राक्षस निवास करते हैं। इसी प्रकार शय्या, आसन और खड़ाऊँके नौभाग करके फलका विचार करना चाहिए ॥१९०॥

लिप्ते मषीकर्दमगोमयाद्यैश्छिन्ने प्रदग्धे स्फुटिते च विन्द्यात् ।
पुष्टं नवेऽल्पाल्पतरं च भुक्ते पापं शुभं चाधिकमुत्तरीये ॥१९१॥

यदि धारण करते ही नये वस्त्रमें स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लग जाय, फट जाय, जल जाय या तो अशुभ फल होता है। यह फल उत्तरीय वस्त्रमें विशेषरूपसे घटित होता है ॥१९१॥

रक्षोभागांशेष्वथ वापि मृत्युः पुंजन्मतेजश्च मनुष्यभागे ।
भागेऽमराणामथ भोगवृद्धिः प्रान्तेषु सर्वत्र वदन्त्यनिष्टम् ॥१९२॥

राक्षसोंके भागोंमें वस्त्रमें छेद हो तो वस्त्रके स्वामीको रोग या मृत्यु हो, मनुष्य भागोंमें छेद आदि हो तो पुत्रजन्म और कान्तिलाभ, देवताओंके भागोंमें छेद आदि हो तो भोगोंकी वृद्धि एवं सभी भागोंमें छेद हो तो अनिष्टफल होता है। समस्त नवीन वस्त्रमें छिद्र होना अशुभ है ॥१९२॥

कङ्कप्लवोलूककपोतकाकक्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पाः ।
छेदाकृतिर्दैवतभागगापि पुंसां भयं मृत्युसमं करोति ॥१६३॥

कंक पक्षी, मेढक, उल्लू, कपोत, मांसभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्पके आकारका छेद देवताओंके भागमें भी हो तो भी मृत्युके समान व्यक्तियोंको पीड़ा एवं भयप्रद होता है। वस्त्रके छिद्रके आकार पर ही फल निर्भर करता है ॥१६३॥

छत्रध्वजस्वस्तिकवर्द्धमानश्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतोरणाद्याः ।
छेदाकृतिर्नैऋतभागगापि पुंसां विधत्ते न चिरेण लक्ष्मीम् ॥१६४॥

छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, वर्धमान—मिट्टीका सकोरा, वेल, कलश, कमल, तोरणादिके आकारका छिद्र राक्षस भागमें हो तो मनुष्योंको लक्ष्मीकी प्राप्ति होती है। अन्य भागोंमें होने पर तो अत्यन्त शुभफल प्राप्त होता है ॥१६४॥

भोक्तुं नवाम्बरं शस्तमृक्षेऽपि गुणवर्जिते ।
विवाहे राजसन्माने प्रतिष्ठामुनिदर्शने ॥१६५॥

विवाहमें, राज्योत्सवमें या राजाके सम्मानके समय, प्रतिष्ठोत्सवमें, मुनियोंके दर्शनके समय निन्द्य नक्षत्रमें भी वस्त्र धारण करना शुभ है ॥१६५॥

इति वस्त्रविच्छेदननिमित्तम् ।

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायां निमित्तनामाध्यायो त्रिंशत्तमोऽयम् ३० सम्पूर्णः ॥

श्लोकानामकाराद्यनुक्रमः

[प]

[र]